इकाई 1
सामाजिक शोध का तर्क

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 समाज का विज्ञान
1.3 समाजशास्त्र के स्वरूप पर कॉम्टे के विचार
1.4 सामाजिक विज्ञानों में प्रेक्षण
1.5 सामाजिक यथार्थ का तार्किक बोध
1.6 निष्कर्ष
1.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपको सामाजिक शोध के तर्क से जुड़ी निम्नलिखित विषयवस्तुओं पर चर्चा करना सरल लगेगाः

- विज्ञान पर बहस;
- वैज्ञानिक विधि का महत्व; तथा
- समाज के विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र का स्वरूप।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

1.1 प्रस्तावना

शोध पद्धतियाँ (पुस्तक 1) की यह प्रथम इकाई है। वर्णनात्मक शैली में लिखी गई इस इकाई में समाज के विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र की प्रकृति पर चर्चा की गई है और विज्ञान को अपने आसपास के जगत को समझने के एक तरीके के रूप में देखा गया है। कॉम्टे के विचारों की चर्चा करते हुए यह इकाई सामाजिक विज्ञान में प्रेक्षण और उसकी विधियों की ओर अग्रसर होती है। वैज्ञानिक अवलोकन से उच्च-स्तरीय सामान्यीकरण प्रस्तुत करने या सिद्धांत निर्मित करने की संभावना मिलती है (इकाई 3 में सिद्धांत निर्माण के विषय पर विस्तार से चर्चा की गई है)। सामाजिक विज्ञान में व्यक्ति आनुभविक (अनुभवजन्य) जानकारी कैसे एकत्रित करें और सामाजिक वास्तविकता के समझने में 'आनुभविक दृष्टिकोण' किस आधार पर बनता है, इस संबंध में विस्तार से इकाई 2 में बताया जाएगा। आइए, सामाजिक विज्ञान में विज्ञान पर विचार-विमर्श से शुरुआत करें।

1.2 समाज का विज्ञान

सामाजिक विज्ञान शोध को मानव विचारधारा के विकास के इतिहास की पृष्ठभूमि के सहारे समझा जा सकता है। आइए, पहले समाजशास्त्र की दार्शनिक बुनियादों की जानकारी प्राप्त करें। समाजशास्त्र पश्चिम में प्रारंभ हुआ और उसकी जड़ें यूरोप या प्रारंभिक यूनानी दार्शनिक विचारों में व्याप्त थीं। अरस्तू प्रथम तार्किक था, जिसने विरासत में प्राप्त परंपरा या रीतिरिवाज से अधिक मान्यता मनुष्य की तर्क क्षमता को दी (देखें कोष्ठक 1.1 अरस्तू)। हमारा यह प्रयास नहीं है कि हम समाजशास्त्र की उत्पत्ति प्लैटो या कन्फ़्यूशस से अथवा महाभारत काल से या हम्मुराबी के कूटों में दिखायें (देखें बेकर तथा बार्न्स 1961)। हमारा प्रयत्न तो केवल इतना है कि सामाजिक शोध के तर्क को समझें और केवल इसी संदर्भ में हमने अरस्तू की चर्चा की है।

कोष्ठक 1.1: अरस्तू

प्लैटो के विद्यार्थी और सिकन्दर महान के शिक्षक, अरस्तू का जीवन काल 300 ईसा पूर्व था। उन्होंने प्रधान आधारिका (premised), गौण-आधारिका (premise) और निष्कर्ष नामक तार्किक शोध के सबसे प्रारंभिक रूप को प्रस्तुत किया। यदि प्रथम दो अर्थात् प्रधान-आधारिका और गौण-आधारिका सही हैं या तथ्यों पर आधारित हैं तो निष्कर्ष भी सही होगा। उदाहरण के लिए प्रधान-आधारिका है कि मानव जाति नश्वर है और गौण-आधारिका है कि हरि एक मानव है तो इसका निष्कर्ष होगा कि हरि नश्वर है। तर्क का यह रूप अरस्तू का न्यायवाक्य का सिद्धांत या आगमनात्मक◎ तर्क के विपरीत होते हुए निगमनात्मक◎ तर्क कहलाता है।

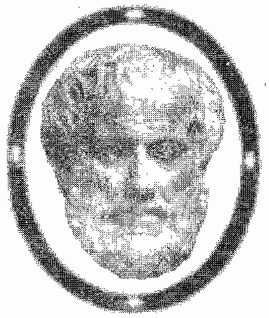

अरस्तू
(384-322 बी.सी.)

पश्चिमी वैचारिकी के इतिहास में 1600 ईसवीं तक अरस्तू के तर्क का प्रभुत्व बना रहा और यह अरबी और मध्यकालीन लैटिन परंपराओं में भी प्रचलित हुआ। लगभग दो हज़ार वर्षों के पश्चात् इटली में गैलीलियो गैलीली (जीवन-काल 1564-1642), इंग्लैंड में फ्रांसिस बेकन (जीवन-काल 1561-1620) और डेनमार्क में टाइको ब्राह (जीवन काल 1546-1601) तथा अन्य विचारकों ने पाया कि भले ही अरस्तू की तर्क की निगमनात्मक विधि में किसी भी प्रकार की तार्किक त्रुटियाँ नहीं थीं फिर भी यह प्रकृति के बारे में वैज्ञानिक खोज से मेल नहीं खाता था। परिणामस्वरूप, आगमनात्मक नामक तर्क की नई वैज्ञानिक विधि के अनुयायिओं ने निगमनात्मक विधि को अस्वीकार कर दिया।

काफी लंबे समय तक तर्क के समर्थकों को अलौकिक सत्ता या ईश्वर की इच्छा के परे मानव तर्क और बौद्धिकता की सर्वोच्चता को स्थापित करने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा।

MAADHYAM IAS

अट्ठारहवीं शताब्दी आने तक तो पश्चिमी जगत में तर्क और बौद्धिकता की जीत नहीं हो पाई थी। केवल पुनर्जागरण◎ के साथ (चौदहवीं शताब्दी से इटली में प्रारंभ हुई ओजस्वी कलात्मक और बौद्धिक गतिविधि वाला वह आंदोलन अथवा जो युग सत्रहवीं शताब्दी में समाप्त हुआ) आखिरकार यह स्वीकार किया गया कि समाज दिव्य शक्ति द्वारा नियंत्रित भगवान की रचना नहीं है बल्कि समाज मानव जाति द्वारा सृजित एक सृष्टि है जिसका एक निष्पक्ष और परिवर्तनशील अस्तित्व है और ऐसे समाज का अध्ययन बाहर से किया जा सकता है (देखें कोष्ठक 1.2: समाजों का क्रमिक विकास)।

कोष्ठक 1.2: समाजों का क्रमिक विकास

सत्रहवीं और अट्ठारहवीं शताब्दी के उतरार्द्ध के वॉल्टेयर (जीवन-काल 1694-1778), मान्टेस्क्यू (जीवन-काल 1689-1758), ह्यूम (जीवन-काल 1711-1776) इत्यादि जैसे इतिहासकारों और दार्शनिकों ने सामाजिक अस्तित्व की सच्चाई के बारे में कुछ मूलभूत आधारिकाओं (Premises) को प्रस्तुत किया। ये आधारिकाएं सार्वभौमिक इतिहास के रूप में थीं। इनमें उस मूलभूत मान्यता को स्थान दिया गया जिसके अनुसार सभी समाजों का विकास होता है और जिस रूप में आज वे हैं उस तक पहुँचने के दौरान वे विभिन्न परिवर्तनों से गुज़रे हैं। इस मान्यता में प्रगति के विचार समाहित हैं। इसके अनुसार चीज़ें बेहतर की ओर अग्रसर हैं और मानवजाति का चरम लक्ष्य तर्क की विजय है।

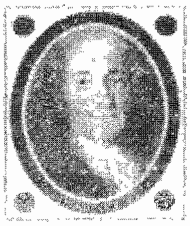

वॉल्टेयर (1694-1778)

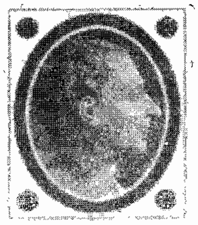

मान्टेस्क्यू (1689-1758)

ह्यूम (1711-1776)

कोष्ठक 1.3: कॉम्टे का प्रत्यक्षवाद का विचार

प्रत्यक्ष अवस्था में, चरमसत्य की धारणाओं, ब्रह्मांड के स्रोत व गंतव्य और प्रत्यक्षवस्तुओं के कारणों की खोज के स्थान पर उनके अनुक्रमण और समरूपता के स्थायी संबंधों के अध्ययन पर ध्यान दिया जाता है। एक साथ भलीभांति जोड़े गये तर्क और अवलोकन इस ज्ञान को हासिल करने के साधन हैं। तथ्यों की व्याख्या करने की बात की जाती है तो उसका अर्थ है कि गोचर विषय या प्रत्यक्ष वस्तु तथा कुछ सामान्य तथ्यों के बीच एक संबंध स्थापित किया गया है। विज्ञान की प्रगति के साथ सामान्य तथ्यों की संख्या कम होती जाती है।

यह कहा जा सकता है कि कॉम्टे की दृष्टि में विज्ञान का लक्ष्य यह पता लगाना नहीं था कि कोई भी चीज़ें अस्तित्व में क्यों आईं या उनके अस्तित्व का क्या कारण था। उसका मत था कि विज्ञान का लक्ष्य यह व्याख्या करना था कि स्थायी और सर्वव्यापी नियमों के प्रसंग में चीज़ें एक दूसरे के साथ कैसे संबद्ध हैं। इस भाव में, अवलोकनीय गोचर विषय या वस्तुएं ही प्रत्यक्ष विज्ञान के प्रमुख उपादान हैं और प्रत्यक्ष विज्ञान का लक्ष्य है कि तथ्यात्मक ज्ञान को इकट्ठा करने के माध्यम से गोचर विषयों या वस्तुओं के बीच नियमानुगत संबंधों को स्थापित किया जा सके। अवलोकन या प्रेक्षण, प्रयोग, तुलना और पूर्वानुमान के माध्यम से तथ्यात्मक ज्ञान एकत्रित किया जाता है। यहाँ भाव यह है कि व्यापक सीमा वाले नियमों को खोजने के बाद ही यह संभव होगा कि एक दूसरे के साथ इन नियमों के आपसी संबंध की व्याख्या की जा सके।

कॉम्टे के प्रत्यक्षवाद ने इस बात का समर्थन किया कि विज्ञान का तात्पर्य है कि नियमों की क्रमिक खोज की जाये और उनके परस्पर संबंध खोजे जायें ताकि विज्ञान एक दिन एक ऐसा सामान्य नियम प्रतिपादित कर सके जिससे सभी नियम उदित होते हैं। कॉम्टे का पूर्वाग्रह था कि सामाजिक जगत उतना ही नियमित और निरपेक्ष है जितना प्राकृतिक जगत है। उसके लिए सामाजिक कानून सामाजिक जगत को वैसे ही नियंत्रित करते हैं जैसे प्राकृतिक नियम प्राकृतिक जगत को नियंत्रित करते हैं। इस तरह कॉम्टे ने सामाजिक जगत को संचालित करने वाले नियमों को खोजने के लिए प्राकृतिक विज्ञानों की शोध पद्धति को एक आदर्श तरीका बताया। उसने प्राकृतिक विज्ञान की शोध पद्धति के आधार पर एक नए प्रत्यक्षवादी दृष्टिकोण को विकसित करने पर ज़ोर दिया। कॉम्टे के अनुसार, समाजशास्त्र का प्रमुख कार्य सामाजिक विकास के सामान्य नियमों को खोजना था। उसने सामान्य नियमों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त किया।

i) सह-अस्तित्व या सामाजिक स्थैतिकी के नियम – ये नियम समाज के विभिन्न अंगों के बीच संबंध को संचालित करते थे। इसी अर्थ में इन नियमों से समाज के विभिन्न अंगों के बीच परस्पर संबंध एंव प्रकार्यों का निर्धारण होता था।

ii) अनुक्रम या सामाजिक गतिकी के नियम – ये नियम सामाजिक परिवर्तन को संचालित करते थे और सामाजिक संस्थाओं के स्वरूप और प्रकार्य में कालांतर के दौरान बदलाव का पता लगाना ज़रुरी था।

उपरोक्त को कॉम्टे का प्रत्यक्षवाद कहा जा सकता है। चूँकि प्रत्यक्षवाद के अनेक प्रकार हैं अतः कॉम्टे के प्रत्यक्षवाद में अंतर्निहित शोध पद्धति या वैज्ञानिक खोज के मूलभूत तर्क को समझना ज़रुरी है। जैसा कि आपको मालुम है मानवीय सामाजिक विकास का अध्ययन करने हेतु प्राकृतिक विज्ञान के सिद्धांतों को मानने वाली उन्नीसवीं सदी के प्राकृतिक विज्ञानों की शोध पद्धति का कॉम्टे ने अनुसरण किया। इस प्रक्रिया में ऑगस्ट कॉम्टे ने सामाजिक विकास के बारे में कुछ पूर्वाग्रह और प्रेक्षण निष्पादित किए। उसके पूर्वाग्रह और प्रेक्षण उन्नीसवीं सदी के विज्ञान के अनुरूप थे।

MAADHYAM IAS

समाज का विज्ञान तभी संभव हो पाया जब सभी ने स्पष्ट तौर से यह समझा व माना कि समाज का निर्माण भगवान ने नहीं अपितु मनुष्य ने किया है। जिस सीमा तक वैज्ञानिक विधा के रूप में समाजशास्त्र को देखा जा सकता है, उसमें विज्ञान का मार्गदर्शी सिद्धांत यह है कि केवल प्रमाण के विश्वसनीय और कड़े नियमों से ही वैध ज्ञान प्राप्त हो सकता है। इस अर्थ में, विज्ञान में अन्य विषयों के साथ समाजशास्त्र विषय भी सम्मिलित है। प्राकृतिक विज्ञानों द्वारा मान्य वैज्ञानिक क्रियापद्धति और समाजशास्त्र के बीच संबंध का पता लगाकर यह समझा जा सकता है कि समाजशास्त्र भी प्राकृतिक विज्ञानों की भांति एक वैज्ञानिक विषय है। यह पता लगाना भी संभव है कि यदि समाजशास्त्र प्राकृतिक विज्ञानों की शोध-पद्धति और विधियों का अनुसरण नहीं भी करते तो भी क्या यह वैज्ञानिक हो सकता है। इसके लिए, हमें उन विभिन्न क्रियाविधियों का पता लगाना होगा जिनका अनुसरण समाजशास्त्रियों द्वारा अपने-अपने कार्य के लिए किया जाता है और तत्पश्चात ही समाजशास्त्र को वैज्ञानिक विषय कहने के दावे को पूरी तरह समझा जा सकता है।

हमारे सभी के मन में वैज्ञानिक ज्ञान की धारणा की विशेष प्रस्थिति होती है क्योंकि विज्ञान विश्व को उसके वास्तविक रूप में नियंत्रित करता है न कि उस रूप में जिसमें कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार देखना चाहता है। इस तरह वैज्ञानिक ज्ञान हमें सामाजिक और प्राकृतिक विश्व के स्वरूप की सही जानकारी पाने की संभावना प्रदान करता है। यह जानकारी आम राय या अप्रमाणित विश्वास और अन्धविश्वास पर आधारित नहीं होती। समाजशास्त्र के बारे में इस प्रकार की धारणा के आरम्भिक विकास को ऑगस्ट कॉम्टे की कृतियों में देखा जा सकता है। यह संयोग नहीं है कि ऑगस्ट कॉम्टे को समाजशास्त्र का संस्थापक माना जाता है। यदि हम समाजशास्त्रीय क्रियाविधि में हुए प्रारंभिक विकासों को देखें तो ज्ञात होता है कि 'समाजशास्त्र' शब्द भी ऑगस्ट कॉम्टे के लेखन से लिया गया है। समाजशास्त्र को समाज के विज्ञान के रूप में समझने के लिए समाजशास्त्र के स्वरूप के बारे में कॉम्टे के विचारों का सारांश प्रस्तुत करना काफ़ी उपयोगी अभ्यास है। इस अभ्यास से हमें प्रारंभिक समाजशास्त्रियों द्वारा अपनाए वैज्ञानिक दृष्टिकोण के बारे में पूरी जानकारी मिलेगी।

ऑगस्ट कॉम्टे
(1798-1857)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

1.3 समाजशास्त्र के स्वरूप पर कॉम्टे के विचार

उन्नीसवीं शताब्दी में लिखित कॉम्टे की रचनाओं में वैज्ञानिक वैचारिकी की क्रिया-विधि में उसकी रुचि साफ़ झलकती है। उसने तर्क प्रस्तुत किया कि जिस तरह वैज्ञानिकों ने प्राकृतिक जगत का अध्ययन किया और भौतिक जगत में पदार्थ के व्यवहार को निर्धारित करने वाले प्राकृतिक नियमों की खोज की, उसी तरह ऐसे नियमों की खोज करना भी संभव है जो सामाजिक जगत में लोगों के व्यवहार को निर्धारित करते हैं। कोर्स आफ़ पॉज़िटिव फिलॉसफ़ी नामक (1839-1842 में प्रकाशित) अपनी पुस्तक में कॉम्टे ने यह विचार रखा कि सामाजिक जगत में लोगों के व्यवहार का संचालन करने वाले नियमों की मानवीय सामाजिक विकास के सकारात्मक दर्शन के विकास के ज़रिए खोज की जा सकती है। दूसरे शब्दों में, कॉम्टे का कहना था कि प्राकृतिक विज्ञानों की शोध-पद्धति और जानकारी का सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा सामाजिक भौतिकी या समाजशास्त्र के विकास के लिए मॉडल के रूप में प्रयोग किया जा सकता था। कॉम्टे ने प्रत्यक्षवाद का विचार प्रस्तुत किया जिसे कोष्ठक 1.3 में दिया गया है।

कॉम्टे का प्रथम पूर्वाग्रह था कि सभी समाज विकास की प्रक्रिया से होकर गुजरते हैं और उनके विकास की अवस्थाएं सरल से जटिल होती हैं। इस तरह समाज क्रमशः अधिकाधिक जटिल और संस्थागत रूप से विभिन्न होते जाते हैं और विशिष्ट प्रकार्य सम्पन्न करते हैं।

इसके बाद अपने दूसरे पूर्वाग्रह के रूप में कॉम्टे ने यह प्रश्न उठाया कि यदि समाजों में अधिकाधिक अन्तर होते जाते हैं, तो ऐसा क्या है जो इन्हें विखंडित नहीं होने देता। इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कॉम्टे ने कहा कि सामाजिक एकता लाने वाली कार्यविधियों के लिए किसी न किसी रूप वाली पारस्परिक निर्भरता की ज़रुरत होती है।

उपरोक्त दो पूर्वाग्रहों से कॉम्टे ने यह निकाला कि विकास प्राकृतिक और प्रमाणित करने योग्य तथ्य है और यह विकास के नियमों द्वारा संचालित होता है। कॉम्टे का मानना था कि: i) व्यवस्थित प्रेक्षण, ii) विषय-सामग्री या तथ्यों को एकत्रित करना और iii) तथ्यों की व्याख्या करने के लिए सिद्धांतों को विकसित करके विकास के नियमों को खोजना ही समाजशास्त्र का काम है।

कॉम्टे के विचारों का तर्क आगमनवाद (inductivism) कहलाता है। (देखिए कोष्ठक 1.4 तर्क के आगमनात्मक और निगमनात्मक रूपों के बीच भेद)

कोष्ठक 1.4: तर्क के आगमनात्मक और निगमनात्मक रूपों के बीच भेद

निगमनात्मक विधि में अन्य प्रमेयों या सत्यमान कथनों को सिद्ध करने के लक्ष्य से कुछ स्वतःसिद्ध कथनों का प्रयोग किया जाता है। तार्किक रूप में अन्य सत्यमान कथन भी स्वतः सिद्ध कथनों से ही उदित होते हैं। दूसरी ओर, आगमनात्मक तर्क विधि में प्रकृति के बारे में प्रेक्षण किया जाता है। ऐसा करने के पीछे उद्देश्य यह है कि केवल कुछ ही किंतु दृढ़ कथन खोजे जा सकें ताकि मालूम हो पाये कि प्रकृति कैसे कार्य करती है या प्रकृति हमें किस प्रकार दिखती है, इसके पीछे कौन से सिद्धांत या नियम हैं।

निगमनात्मक विधि में तर्क ही प्रमुख क्रियाशील साधन है। यदि कथन तार्किक रूप से स्वतः सिद्ध कथनों से निकलता है तो यह सत्य ही होगा। आगमनात्मक विधि (जिसे आमतौर पर वैज्ञानिक विधि कहा जाता है) में प्रकृति का अवलोकन प्रमुख क्रियाशील साधन है। यदि कोई विचार या भाव प्रकृति में घटित होने वाले तथ्य से प्रतिकूल है तो उस विचार को निरर्थक (अनुपयोगी) मानकर छोड़ देना चाहिए।

परंपरागत तर्क को मानने वाले अरस्तूवादी तर्क के वंशज उनके प्रतिद्वन्द्वी हो गए जो तर्क की विभिन्न धारणाओं वाले प्राकृतिक विज्ञानों में मानी जाने वाली आगमनात्मक विधि का अनुसरण कर रहे थे। आपको यह जानकर रोचक लगेगा कि भले ही परिभाषा के अनुसार विज्ञान आगमनात्मक है (इस अर्थ में कि सच्चाई का वैध प्रमाण केवल प्रेक्षण से ही मिलता है) फिर भी विज्ञान की प्रक्रिया निगमनात्मक हो सकती है। अरस्तु के तर्क पर चर्चा करते हुए स्टैनफ़र्ड इन्साइक्लोपीडिया आफ़ फ़िलोसिफ़ी (23 अगस्त, 2004 तक की जानकारी के आधार पर) में बताया गया है कि 'अत्याधुनिक विद्वानों ने अगस्त के सिद्धांतों पर गणितजनक तर्क की तकनीकों को लागू किया और उनके (तथा अन्य बहुतों के) विचार में आधुनिक तर्कविदों और अरस्तू के दृष्टिकोण और रुचि में काफ़ी समानताएँ हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कॉम्टे के तर्क को आगमनात्मक प्रत्यक्षवाद भी कहा जा सकता है। इसे उन्नीसवीं सदी का प्रत्यक्षवाद भी कहा जाता है। (बीसवीं सदी में शोध पद्धति के रूप में विकसित प्रत्यक्षवाद उस प्रत्यक्षवाद से बिल्कुल भिन्न था जिसके बारे में हमने अभी पड़ा है। इस पुस्तक की अगली इकाइयों में आपको प्रत्यक्षवाद के बारे में और अधिक जानकारी हासिल होगी i) आगमनात्मक प्रत्यक्षवाद के अपने तर्क पर आधारित करके कॉम्टे ने मानव समाज के विकास की तीन अवस्थाएं बताईं जो इस प्रकार हैं: i) धर्म का युग, ii) तत्वमीमांसा का युग iii) तर्क का युग।

कॉम्टे द्वारा मानव समाज के विकास की उपरोक्त अवस्थाओं का विचार यूरोप की धार्मिक संस्था 'चर्च' की मान्यताओं के बिल्कुल विपरीत था। चर्च का दावा था कि सृष्टि के प्रारंभ में समाज का सर्वोत्तम स्वरूप विद्यमान था और धीरे-धीरे मानव जाति पतन की ओर अग्रसर हो गई है और दुनिया ईसाइयों और ग़ैर-ईसाइयों में बँट गई है और ग़ैर-ईसाई जंगली तथा मानवजाति से इतर प्राणी हैं।

आगे दिए गए 'सोचें और करें' अभ्यास में हमें आगमनात्मक प्रत्यक्षवाद में अंतर्निहित शोध पद्धति से जुड़ी समस्याओं को आलोचनात्मक रूप से देखने का प्रयास करना है।

सोचें और करें 1.1

हमें कॉम्टे की इस धारणा का आधार समझना है कि सामाजिक नियमों को उसी तरह खोजा जा सकता है जिस तरह प्राकृतिक विज्ञानों में प्राकृतिक नियमों की खोजबीन की जाती है। इसके बाद कॉम्टे के विचारों के उदाहरण के ज़रिए हमें उन्नीसवीं सदी के समाजशास्त्र के वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर विचार करना है। इस अभ्यास के चार भाग हैं। 'सोचें और करें 1.1 में प्रथम दो भाग (क और ख) और सोचें और करें 1.2 में अन्य दो भाग (ग और घ) आपको पूरे करने हैं।

भाग क

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देते हुए मानव विकास के विषय में कॉम्टे के पूर्वाग्रहों को स्पष्ट करें। एक अलग कागज़ पर नीचे दिए गए प्रश्नों का उत्तर लिखें।

प्रश्न

- सामाजिक जगत को संचालित करने वाले विकास के नियम क्यों विद्यमान होते हैं? क्या कॉम्टे ने इस प्रश्न का उत्तर दिया है? क्या कॉम्टे इस प्रश्न का उत्तर देने से कतराता रहा? इस प्रश्न को नज़रअंदाज करने का निहितार्थ क्या है?
- क्या यह कॉम्टे का पूर्वाग्रहमात्र है कि सामाजिक विकास उद्‌विकासीय (evolutionary) होता है? इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए क्या कॉम्टे ने कोई प्रभाग प्रस्तुत किया?
- क्या यह कॉम्टे का पूर्वाग्रह है कि सामाजिक जगत का एक विवेकपूर्ण क्रम है, जिसे बदलना मानव चेतना की क्षमता से परे है?
- क्या कॉम्टे का यह भी पूर्वाग्रह है कि ब्रह्मांड में एक प्रकार का प्राकृतिक क्रम है जिसे समाजशास्त्रियों के रूप में हमें खोजना है?

MAADHYAM IAS

भाग ख

अपने उत्तरों के आधार पर स्पष्ट करें कि यदि कॉम्टे की रचनाओं से प्रमाणित उन्नीसवीं सदी का समाजशास्त्र एकदम अमूर्त स्तर पर तथ्यों को एकत्रित करने और उन्हें सैद्धांतिक रूप देने पर केंद्रित था तो उसे आगमनात्मक प्रत्यक्षवाद में अंतर्निहित शोध पद्धति संबंधी त्रुटि के तार्किक रूप का शिकार होना पड़ा। अभ्यास के इस भाग का उत्तर पाने हेतु आपको निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देना होगा।

प्रश्न

- आपके विचार में क्या तथ्य स्व-प्रमाणित चीज़ें हैं? क्या ऐसा नहीं है कि जिसे मैं तथ्य मानूँ? वह आपके लिए तथ्य न होकर कुछ और हो?
- क्या कॉम्टे का प्रत्यक्षवाद हमें यह बताता है (या नहीं बताता है) कि तथ्य को कैसे पहचाना जाये?
- हम इस सामान्य समझ तक कैसे पहुँचें कि क्या तथ्य है या कौन सा तथ्य नहीं है।
- क्या उपरोक्त प्रश्नों के उत्तरों से मालूम पड़ता है कि तथ्यों की व्याख्या की जानी है और उनकी खोज मात्र नहीं। यह स्पष्ट है कि प्रायः हमारी आत्मपरक निर्णय लेने की प्रकृति होती है। ऐसी स्थिति में क्या आपका यह मानना नहीं है कि यह वैज्ञानिक शोध की निरपेक्ष विधि नहीं है? क्या आपका यह भी कहना है कि शोध की ऐसी अवैज्ञानिक विधि के आधार पर सिद्धांतीकरण करना संभव नहीं है?

उपर्युक्त अभ्यास से यह मुद्दा उठता है कि सामाजिक तथ्य की पहचान कैसे की जाती है और प्राकृतिक तथ्य से यह किस प्रकार अलग या समान है। सामाजिक विज्ञान की प्राकृतिक विज्ञान से तुलना करने पर एक स्पष्ट समस्या उठ खड़ी होती है क्योंकि प्राकृतिक विज्ञानों में तो अध्ययन के विषयों का निश्चित भौतिक अस्तित्व होता है परंतु सामाजिक विज्ञानों में केवल मनुष्यों और उनके गोचर व्यवहार को ही साक्षात रूप में देखा जा सकता है। बाहर से व्यवहार का अवलोकन करने से व्यवहार की व्याख्या के बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त हो पाती है। तार्किक दृष्टि के अनुसार निगमनात्मक निरपेक्ष यथार्थ का अस्तित्व दार्शनिक रूप से द्वैत की धारणा से जुड़ा हुआ है। डेस्कार्ट की दार्शनिक धारणाओं में दृष्टांतों द्वारा द्वैत की धारणा को समझाया गया है और यह कार्टेज़ियन द्वैत के नाम से प्रसिद्ध है (देखिए कोष्ठक 1.5 रेने डिकार्ट जीवन-काल 1596-1650)।

कोष्ठक 1.5: रेने डेस्कार्ट (जीवन-काल 1596-1650)

मार्च 31, 1596 को टूरेन, फ्रांस में जन्मा, रेने डेस्कार्ट मानव इतिहास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली चिंतकों में से था। वह एक उत्कृष्ट गणितज्ञ भी था। तथ्य की बाहरी निरपेक्ष यथार्थता और प्रेक्षक की आंतरिक आत्मपरकता के बीच विभाजन को कार्ट का द्वैत पूर्वमान्यता देता है। आधारिका यह है कि वैज्ञानिक प्रेक्षण के लिए दोनों को अलग ही रहना है और साथ में निरपेक्ष जगत की अपनी तार्किक यथार्थता होती है जो गणितजनक सत्य के सदृश है। स्पिनोज़ा (जीवन-काल 1632-1677) और लेबनिज़ (जीवन-काल 1646-1716) के साथ डेस्कार्ट ने "तर्कबुद्धिवादी" विचारपद्धति में भागीदारी की।

डेकार्ट (1596-1650)

स्पिनोज़ा (1632-1677)

लेबनिज़ (1646-1716)

आइए अब सोचें और करें 1.2 को पूरा करें जिसमें पिछले पहले अभ्यास के अन्य दो भाग दिये गये हैं। इन अभ्यासों में दिये गये प्रश्नों के उत्तर सही हैं या ग़लत, इस बारे में आपको चिंता करने की ज़रुरत नहीं हैं। अभ्यास को पूरा करने के पीछे विचार है कि हम वह क्षमता विकसित करें जिससे यह समझ में आये कि जानने और समझने में हम तर्क का प्रयोग कैसे और किस आधार पर करें।

सोचें और करें 1.2

भाग ग

यदि तथ्य सिद्धांतों का आधार हैं, अर्थात् यदि हमें तथ्यों के बीच संबंध की व्याख्या करने के लिए सिद्धांतों का विकास करना है तो वैज्ञानिकों के रूप में अच्छे और बुरे या सच्चे और झूठे सिद्धांतों के बीच अंतर करने का हमारे पास कोई तर्कसंगत आधार नहीं है। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे सिद्धांत तथ्यों के संग्रहण पर आधारित हैं और हमने तथ्यों की पहचान अपने आत्मपरक (subjective) निर्णयों के आधार पर की है। ऐसी स्थिति में पूरी प्रक्रिया अकाट्य तथ्यों के आधार पर प्राप्त वैध ज्ञान के उत्पादन में सहायक नहीं है।

उपरोक्त विचार को नीचे दिये कथन पर चर्चा करके आप अधिक स्पष्ट करें। यह एक तथ्य है कि सामाजिक दृष्टि से महिलाओं से पुरुष श्रेष्ठतर होते हैं।

- किस साक्ष्य के आधार पर हम यह निर्णय करें कि यह बात सही है या नहीं?
- क्या आपके लिये इस तथ्य को किसी और तरीके से समझाना संभव है, यदि हाँ तो कैसे?
- यह सुझाव दीजिए कि तथ्यों के विभिन्न अर्थों के बीच अंतर कर पाना किस प्रकार संभव है?

भाग घ

अभी अभी आपने जो अभ्यास किया उसकी चर्चा के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

- यदि कोई समाजशास्त्री ऊपर दिये कथन से सहमत है तो श्रेष्ठ सामाजिक स्तर और महिला-पुरुष के सामाजिक भेदभाव के बीच व्याख्या करने हेतु उसे किस प्रकार के सिद्धांत को विकसित करना होगा?
- यदि कोई समाजशास्त्री उपरोक्त कथन से सहमत नहीं है तो श्रेष्ठ सामाजिक स्तर और महिला-पुरुष में सामाजिक भेदभाव के बीच संबंध को सुस्पष्ट करने के लिए उसे किस प्रकार के सिद्धांत को विकसित करना होगा?
- हम यह कैसे बतायें कि पहले प्रश्न में विकसित सिद्धांत दूसरे प्रश्न में विकसित सिद्धांत से कम या अधिक वैध है?

कालांतर में अवलोकन या प्रेक्षण की कला समाज वैज्ञानिकों के लिए शोध पद्धति का एक केन्द्रीय मुद्दा बन गई। विशेषतौर से व्यक्तियों का अध्ययन (जैसा मनोविज्ञान में होता है) करने वालों की तुलना के विपरीत में समाज का अध्ययन करने वालों के लिये अवलोकन की कला को एक केंद्रीय शोध पद्धति का दर्जा मिला। अनुभववादी विचारधारा को मानने वाले दार्शनिकों ने तर्कबुद्धिवादियों के तार्किक ज्ञान के विपरीत आनुभविक तथ्यों को प्रमुखता दी। अनुभववादी विचारधारा के दार्शनिकों में लॉक (जीवन-काल 1632-1704, बर्कले (जीवन-काल 1685-1753) और ह्यूम (जीवन-काल 1711-1776) को गिना जा सकता है। सामाजिक विज्ञानों में अनुभववाद और तर्क के बीच प्राथमिकता का दर्जा पाने की लड़ाई को यह समझ कर सुलझाया जा सकता है कि दोनों को सामाजिक यथार्थ के बारे में एक निष्कर्ष पर पहुँचना है। सामाजिक यथार्थ को समझने की दो विधियाँ है आगमन प्रणाली और निगमन प्रणाली (एक बार फिर देखें कोष्ठक 1.4)। अब अधिकांश समाज वैज्ञानिक इससे सहमत हैं कि आगमन और निगमन तर्क की प्रक्रियाएं एक साथ चलती हैं। जब कोई आनुभविक रूप से देखे जाने वाले किसी तथ्य का अर्थ निकालने का प्रयास करे तो उसे तर्क पर निर्भर करना पड़ता है। तर्क को शून्य में तो प्रयुक्त नहीं किया जा सकता, इसे किसी न किसी प्रकार के ठोस आधार की ज़रुरत होती है; कल्पना की भी अपनी सीमाएं होती हैं। तर्क भी मानव बोध की सीमाओं के परे नहीं जा सकता क्योंकि अंततः यह हमारे अवलोकन से जुड़ा हुआ है। आइए समाज विज्ञानों में प्रचलित प्रेक्षण के कौशल की चर्चा करें।

1.4 सामाजिक विज्ञानों में प्रेक्षण

यह सुस्पष्ट है कि प्राकृतिक विज्ञानों में केवल प्रेक्षक की इंद्रियों पर निर्भर प्रेक्षण किए जाते हैं, जबकि, सामाजिक विज्ञानों में प्रेक्षण की प्रक्रिया में उसकी सहभागिता की ज़रुरत होती है जिसका प्रेक्षण किया जा रहा है। क्या हो रहा है यह देखने के लिए तो प्रेक्षक की इंद्रियों पर निर्भर रहा जा सकता है लेकिन अर्थ विशेष को जानने के लिए कर्ताओं (जिनका प्रेक्षण किया जा रहा है) से पूछना जरूरी होता है कि उनके कार्यों का क्या अर्थ है। आइए इसका एक उदाहरण लें। यदि किसी ऐसे व्यक्ति को क्रिकेट मैच देखने के लिए ले जाया जाए जो इस खेल से पूरी तरह से अनभिज्ञ है तो वह एकदम भौंचक्का हो जाएगा। ऐसे व्यक्ति

MAADHYAM IAS

को केवल देखने मात्र से तो यही लगेगा कि वयस्क व्यक्तियों की यह क्रिया निरर्थक है जिसमें वे एक गोल वस्तु को मारते हुए इधर उधर बिना किसी कारण के दौड़ रहे हैं और इससे भी अर्थहीन बात यह है कि हज़ारों दर्शक ऐसी बेकार की क्रिया को देखकर इतने भावविभोर हो रहे हैं। क्रिकेट के खेल से अनभिज्ञ निरपेक्ष प्रेक्षक को क्रिकेट का खेल बिल्कुल तर्कसंगत नहीं लगेगा। क्रिकेट का खेल क्या है यह क्यों खेला जाता है? एक खेल और राष्ट्रीय शान के बीच क्या संबंध है आदि के बारे में बड़ी मात्रा में अवधारणात्मक सामग्री की जानकारी और खेल के दौरान होने वाली क्रियाओं को प्रेरित करने वाली अर्थ प्रणालियों की जानकारी नहीं प्राप्त हो तो प्रेक्षक को यही लगेगा कि पूरा दर्शक समूह पागलपन से ग्रस्त है। अतः समाज के प्रेक्षण की प्रत्येक प्रक्रिया के साथ यह ज़रूरी है कि हमें उस समाज में मान्य सामान्य अवधारणाओं और कर्ताओं की अर्थ प्रणालियों के बारे में ज्ञान हो।

इसका मतलब यह नहीं है कि कर्ताओं द्वारा दी गई व्याख्याओं पर ही हमें निर्भर रहना है। सामाजिक विज्ञानों में सही व्याख्या तभी होगी जब प्रेक्षणों का, अर्थों का और कर्ता के प्रसंग के ढांचे से जुड़ी अवधारणाओं और संबंधों का अधिक व्यापक और सामान्य प्रणाली के साथ संदर्भीकरण किया जाये। इस प्रकार आगमनात्मक सामग्री का एक तार्किक प्रक्रिया या निगमन द्वारा संदर्भीकरण किया जाता है। सामाजिक वैज्ञानिकों ने प्रेक्षण को अधिक अर्थवान या अधिक वैज्ञानिक बनाने के तरीके खोज लिए है।

इस बात को बेहतर ढंग से समझने के लिए हमें इसके इतिहास की ओर जाना होगा कि समाज और संस्कृति का अध्ययन करने वाले समाजशास्त्रियों और नृविज्ञानियों के लिए अध्ययन में विषय की सामग्री कैसे तैयार होती है। यह सुस्पष्ट है कि प्राकृतिक विज्ञानों की सामग्री से सामाजिक विज्ञानों की सामग्री काफ़ी अलग है क्योंकि हमें जो कुछ भी दिखता है वह एक व्याख्या है (क्या देखें और करें 1.1 और 1.2 अभ्यास पूरा करते समय आपको ऐसा ही नहीं महसूस हुआ था?)।

इस प्रकार जब कोई क्रिकेट मैच देखा जा रहा है तो 'खेल' शब्द एक परिकल्पना है और यदि इस परिकल्पना का प्रयोग हमने भौतिक रूप से जो कुछ देखा है उसको बताने के लिए नहीं किया जाता है तो पूरा प्रेक्षण निरर्थक हो जाएगा। इसी भाँति डैन स्पर्बर (1982) ने भी तर्क दिया था कि सांस्कृतिक (और सामाजिक तथ्य) को वर्णित करने का एक ही तरीका है और वह है व्याख्या द्वारा। लेकिन व्याख्या की समस्या में उलझने से पहले ही हमको इस बारे में सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि हमें जिसकी व्याख्या करनी है वह क्या है अर्थात् प्रेक्षण का स्वरूप क्या है जिस पर हम अपनी आधार सामग्री के रूप में निर्भर हैं।

प्रारंभ में, सामाजिक वैज्ञानिकों ने किसी के भी द्वारा किए गए आधार प्रेक्षण या सामग्री की व्याख्या की। अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में, पर्यटकों, मिशनरियों और प्रशासकों ने बड़ी मात्रा में जानकारी इकट्ठी की थी। यह सच है कि इनमें से कुछ अभी भी सामाजिक सिद्धांत का आधार हैं, खासतौर से वे विवरण जिनका दुबारा कभी भी प्रेक्षण नहीं किया जा सका क्योंकि उनमें चित्रित सामाजिक स्थितियाँ और संस्कृतियाँ कब की लुप्त हो चुकी है। उन्नीसवीं शताब्दी में, विशुद्ध वैज्ञानिक शोध पद्धति या नियमान्वेषी सामान्यीकरण का प्रचलन था (देखें कोष्ठक 1.6 नियमान्वेषी और भावलेखात्मक व्याख्याएं)।

कोष्ठक 1.6: नियमान्वेषी और भावलेखात्मक व्याख्याएं

विन्डलबैंड (1914) के अनुसार, सभी व्याख्याएं दो प्रकार की होती हैं, नियमान्वेषी और भावलेखात्मक। नियमान्वेषी व्याख्या से तात्पर्य है सामान्यीकृत नियम और भावलेखात्मक से तात्पर्य है व्यक्तिगत तथ्य। उदाहरणतः विकास के नियमों को नियमान्वेषी और इतिहास की विशिष्ट घटनाओं को भावलेखात्मक कहा जा सकता है।

MAADHYAM IAS

चूँकि समाजशास्त्र को समाज का विज्ञान माना जाता है अतः भावलेखात्मक की बजाय नियमान्वेषी होना इसकी आकांक्षा है। इसलिए शास्त्रीय समाजशास्त्रियों का प्रयास उन नियमों को तलाशने का होता है जो समाज को चलाते हैं। साथ में यह पूर्वाग्रह था कि सभी प्राकृतिक वस्तुओं के समान समाज का भी निरपेक्ष अस्तित्व होता है और सभी प्राकृतिक वस्तुओं के समान समाज भी उन्हीं नियमों या सिद्धांतों का पालन करता है। समाज को प्रकृति के नियमों का पालन करने वाले प्राकृतिक तथ्य के रूप में मानने के पीछे यह विचार निहित था कि समाज को अलौकिक आदेशों का पालन करने वाली दैवीय सत्ता के रूप में मानने की प्राचीन अवधारणा से इसे अलग किया जाए। साथ में समाज को वैज्ञानिक विश्लेषण का विषय बनने के योग्य विषय बनाने के लिए वैज्ञानिक विश्लेषण का दूसरा मानदंड भी पूरा किया जाना था। इसे नैतिक तटस्थता कहते हैं। समाज और इसके प्रतिमान काफ़ी समय तक धर्म और ब्रह्मांड शास्त्र से घिरे रहे थे जिससे समाज के अधिकांश नियमों को मनुष्यों के सृजन की बजाय दैवीय अनुज्ञाप्ति (sanction) के रूप में देखा जाता था; जैसे कौटुम्बिक व्यभिचार निषेध, नारीत्व और पुरुषत्व के प्रतिमान आदि। इसलिए दैवीय अनुज्ञप्ति की बजाय समाज के विज्ञान को कार्यकारण-भाव के कुछ सिद्धांतों को मानना होगा। दूसरे शब्दों में कहें तो समाज के सभी पहलुओं का सोद्देश्य अस्तित्व होता है जिसकी तार्किक रूप से व्याख्या की जा सकती है।

यहाँ पर हम स्मरण करें कि टर्नर (2000) ने क्या कहा था। टर्नर ने बताया था कि समाज के अध्ययन में एक ओर, पूर्वाग्रहों, अवधारणाओं, प्रतिज्ञप्तियों (propositions) और नियमों के साथ औपचारिक सिद्धांत का प्रयोग किया जाता है और इस अर्थ में यह प्राकृतिक विज्ञान के समान है और इस तरह समाज के अध्ययन में अनुभवजन्य सामग्री, प्रचलित व्यवहार और संस्थाओं की विवेचना होती है और कारणवाचक तथा सामान्यीकरणयोग्य कथनों को ढूँढने की कोशिश होती है (उदाहरण के लिए देखें, रड्नर 1966: 59-67, ब्रेब्रुक 1987: 21-29, हेम्पेल 1942, किनसेड 1990, मेकेइनटायर ली 1991)। दूसरी ओर, अनेकों समाजशास्त्रियों और नृशास्त्रियों (उदाहरणार्थ, गर्ट्ज़ 1983, मेकेइनटायर अल्सडेयर 1973, टर्नर 1974, सॉलिन्स 1976) ने तर्क प्रस्तुत किया कि सामाजिक जगत की विविधता और बहुलता को देखते हुए यह संभव नहीं है कि सामान्यीकरण योग्य और कारणात्मक व्याख्याएं विकसित की जा सकें। उनका मानना है कि स्थानीय कार्य और अंतःक्रिया के प्रेक्षण पर समाजशास्त्र के ध्यान को केन्द्रित करने से विविध सामाजिक संदर्भों का विश्लेषण विकसित करने में मदद मिलती है। किस परिप्रेक्ष्य को स्वीकार या अस्वीकार किया जाये इस पर ध्यान न देकर टर्नर (2000:12) के शब्दों में हम समझें कि "सामाजिक सिद्धांत सर्वोत्तत रूप में तभी सफल होता है और आगे तक चलता है जब यह अनुभवजन्य शोध और/या सार्वजनिक मुद्दों से जुड़ा होता है।" वस्तुतः उन्नीसवीं शताब्दी का समाजशास्त्र भी उस समय के सामाजिक यथार्थ की एक विचारशील कार्यसूची के साथ जुड़ा हुआ था, उदाहरणार्थ, ऑगस्ट कॉम्टे भी "राजनीतिक क्रिया के कार्यक्रम" (देखें बार्न्स 1977: 42) के साथ जुड़ा था।

MAADHYAM IAS

1.5 सामाजिक यथार्थ का तार्किक बोध

यह प्रश्न उठता है कि हमारे पास सामाजिक यथार्थ को तार्किक रूप से समझने के लिए आख़िर क्या वसीयत है? एक तरीक़ा यह है कि समाजशास्त्रियों के विचारों की चर्चा के साथ अपना विचार विमर्श जारी रखा जाए (जैसे इस इकाई में हमने ऑगस्ट कॉम्टे के बारे में किया है)। सामाजिक यथार्थ में इन सभी विद्वानों को जो नयी और अनोखी बात लगी उसकी व्याख्या के अनुसार उन्होंने अपने सिद्धांतों की रचना की। यदि हमने सभी के विचारों पर विस्तार से चर्चा की तो यह इकाई असाधारण रूप से बड़ी हो जाएगी। अतः केवल कॉम्टे का उदाहरण देकर समाप्त करते हुए हमें आपसे कहना है कि खंड 1 की

अगली इकाइयों और एम एस ओ-001 (समाजशास्त्रीय सिद्धांतों और अवधारणाओं पर पाठ्यक्रम) की इकाइयों में जब और जिस रूप में ऐसी चर्चाएं आएं तो आप उन्हें ध्यानपूर्वक और सजग होकर पढ़ें। अपनी चर्चा के इस बिंदु पर केवल इतना ही कहना पर्याप्त है कि सामाजिक यथार्थ में वैज्ञानिक खोजबीन की महत्वपूर्ण विशेषताओं में विषय-सामग्री के प्रासंगिक अनुभवजन्य स्रोतों, प्रेक्षण और सिद्धांत के बीच सीमांकन की सामान्य रेखा, तार्किक संगतता पर ध्यान और निगमनात्मक विधि शामिल हैं। ऐल्सटर (1989) और लिटिल (1991) के कथनानुसार, सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए समाज विज्ञान शोध को सामाजिक तथ्यों में अंतर्निहित कारणात्मक गुणों से प्राप्त नियमितताओं को खोजने की ज़रुरत है। सामाजिक जगत में नियमितताओं को खोजने के व्याख्यात्मक महत्व पर बल देने के लिए समाज विज्ञानों और प्राकृतिक विज्ञानों के बीच अनुरूपता प्राप्त करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है। अब तक सभी को यह स्पष्टरूप से समझ में आ चुका है कि जिस तरह से प्राकृतिक वैज्ञानिकों को भौतिक परिघटना के गुणों से नियम प्राप्त होते हैं, समाज विज्ञान उस विधि का अनुकरण नहीं कर सकते। इसी बात को यों कहें कि समाज विज्ञानों को नियमगत निरन्तरता के शब्दों में की गई वैज्ञानिक व्याख्याओं की ज़रुरत नहीं होती। हाँ अवश्य ही, अनुभवजन्य विषय-सामग्री द्वारा अभिपुष्ट कारणात्मक परिकल्पनाएं सामाजिक विज्ञान शोध का अभिन्न अंग है। शोध पद्धति की दृष्टि से अन्य समाजविज्ञानों की भाँति समाजशास्त्र काफ़ी निर्बल सामान्यीकरणों को प्रस्तुत करता है, जिनकी केवल अंतरिम पुर्वानुमेयता होती है।

यहाँ किस प्रकार के सामान्यीकरण और नियमितताओं की चर्चा की जा रही है? प्रकृति का नियम संचालन करने वाली निरन्तरता को बताता है अर्थात् प्रकृति के एक विशिष्ट नियम के अनुसार, हमेशा एक विशिष्ट प्रकार के व्यवहार की उत्पत्ति होगी। उदाहरणार्थ यह नियमगत निरंतरता है कि विद्युतगतिकी की शक्तियाँ प्रोटोन और इलैक्ट्रोन को प्रभावित करती हैं। दूसरी ओर गोचरीय या इंद्रिय ग्राह्य (कार्टराइट 1983 के अनुसार फेनोमेनोलोजी में भी) नियमितताओं से अभिप्राय है सामाजिक तत्वों की सामान्य विशेषताएं और व्यक्तिगत कृतत्त्व या क्रियाशक्ति (agency) पर उनके प्रभाव। इस विषय पर स्पष्टीकरण के लिए देखें कोष्ठक 1.7 लिटिल (1992: 6) के लेख से गोचरीय या इंद्रियग्राह्य नियमितता का उदाहरण।

MAADHYAM IAS

कोष्ठक 1.7: लिटिल (1992:6) के लेख से गोचरीय या इंद्रियग्राह्य (phenomenal) नियमितता का उदाहरण

उदाहरणार्थ यह देखा गया है कि विशिष्ट संरचना वाली भूमि पट्टेदारी पद्धतियाँ जहाँ भी कार्यान्वित की जाती हैं व्यक्तियों के लिए सामान्य प्रोत्साहनों का सर्जन करती हैं। इन पद्धतियों की यह नियमितता है कि उनकी सामान्य विशेषताएं होती हैं (जैसे, पूंजी सुधारों में अल्प निवेश)। लेकिन ये नियमितताएं व्यक्तिगत क्रियाशीलता की विशेषताओं से उदित होती हैं और वे विशेष प्रकार की सामाजिक संस्था विशेष की संचालन करने वाली नियमितताओं को प्रस्तुत नहीं करतीं।

1.6 निष्कर्ष

चूंकि सामाजिक यथार्थ अत्यधिक विविधतापूर्ण है और निरंतर कार्य-कारण के नाना प्रकारों का अनुभव करता है, इसलिए यह संभव है कि "अपवाद-युक्त गोचरीय या इंद्रियग्राह्य नियमितताओं" और "संस्थात्मक – तर्कविश्लेषण से प्राप्त अत्यधिक सूक्ष्म नियमितताओं" के संदर्भ में वैज्ञानिक रूप से वैध ज्ञान उत्पन्न किया जाये (लिटिल 1992:20)। शोध पद्धति के अर्थों में, समाज विज्ञानों में (इसमें समाजशास्त्र भी शामिल है) हमें अपनी विषयवस्तु के स्वरूप के प्रकाश में संभव सामान्यीकरणों के क्षेत्र और सीमाओं के बारे में सजग होने की

ज़रूरत है। इस टिप्पणी के साथ इस बिंदु पर इकाई को समाप्त करते हुए शोध विधियों के संदर्भ में विज्ञान के ऊपर अपनी बहस को विराम दिया जा रहा है। इकाई 2 में हमने इस बहस को अनुभवजन्य उपागम (दृष्टिकोण) की विषयवस्तु की चर्चा के माध्यम से पुनः जारी किया है। इस दृष्टिकोण का वैज्ञानिकों ने अपने शोधकार्यों में बहुत प्रयोग किया है और उस आधार पर अपने प्रयास के वैज्ञानिक होने का दावा किया है।

1.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Worsley, Peter et al (ed) 1970. *Introducing Sociology*. Penguin Books: Harmondsworth (Unit 1 on 'Sociology as a Discipline', especialy pp. 19-38 for sociology's main concern with 'learnt' behavior/culture, interface between bilogy and culture, divisions of social sciences, relationships between sociology and other social sciences, scope of sociology and what sociologists do.

Giddens, Anthrony 1987. *Social Theory and Modern Sociology*. Polity Press: Cambridge (Unit 1 on What do Sociologists Do?, especially pp. 1-21 about sociology and lay knowledge and current issues

Aaron, Raymond 1965. *Main Currents in Sociological Thought*. 2 vols. Harmondsworth: Penguin

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अनुभववाद में यह माना जाता है कि अनुभव, विशेष रूप से इंद्रिय-जनित अनुभव, ही ज्ञान का एकमात्र स्रोत है। अनुभववाद का यह विचार तर्कवाद से मेल नहीं खाता। तर्कवाद में यह माना जाता है कि समग्र ज्ञान अंतदर्शन, पूर्वसिद्ध (a prior या अपने ज्ञान की सीमा के अंदर) और निगमनात्मक तर्क पर आधारित होता है। इस प्रकार की विरोधात्मक बहस में कई विचारकों और शास्त्रीय समाजशास्त्रियों की काफ़ी समय तक दिलचस्पी बनी रही। चाहे अनुभववाद को पूर्वतः मानें या न मानें लेकिन सामाजिक वैज्ञानिकों ने सामाजिक शोध में अनुभवजन्य उपागम में अपनी स्थायी रुचि को कभी भी नहीं त्यागा। इसलिये इकाई 2 में हमने चर्चा की है कि अनुभवजन्य उपागम (दृष्टिकोण) से क्या अभिप्राय है और कुछ नियमों को ध्यान में रखकर सामाजिक शोध हेतु विषय-सामग्री को कैसे एकत्रित किया जाए। इसके आगे, हमने अनुभवजन्य उपागम के अनुप्रयोग के दौरान आने वाली विभिन्न कठिनाइयों की चर्चा की है और इकाई के निष्कर्ष में यह बिंदु सामने रखा है कि जहाँ एक ओर सामाजिक वास्तविकता की ओर ध्यान देना ज़रूरी है वहीं दूसरी ओर यह भी पता लगाना महत्वपूर्ण है कि सामाजिक यथार्थ का मौजूदा रूप कैसे अस्तित्व में आया।

जब अध्ययन का ध्येय निर्धारित करने की बात आती है तो सामाजिक वैज्ञानिकों ने यह मान लिया है कि हमें शक्ति संबंधों और उनके निर्माण की प्रक्रिया को समझना होगा। साथ में यह भी देखना होगा कि शोधकर्ता का उस शक्ति तंत्र में क्या स्थान है। इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आपको स्पष्ट होगा कि कैसे अपरिहार्य (inevitable) रूप से सामाजिक विज्ञान में अनुभवजन्य शोध को स्वीकारा गया है और साथ ही साथ यह भी स्पष्ट होगा कि कैसे ऐसे शोध में विविध दृष्टिकोणों को समाहित करने की ज़रूरत पड़ी है।

2.2 अनुभवजन्य उपागम

आइए शुरू में ही स्पष्ट कर दें कि आपको अनुभववाद के अनेक समर्थक मिलेंगे और ऐसे अनेक समाज विज्ञानी हैं जिन्होंने अनुभववाद का समर्थन तो नहीं किया परंतु अनुभवजन्य उपागम का अनुसरण किया है। इसका तात्पर्य है कि उन्होंने अनुभववाद की सैद्धांतिक आधारिकाओं को अस्वीकारा है और एक सिद्धांत या 'वाद' के रूप में उन्होंने अनुभववाद का समर्थन नहीं किया है। लेकिन इसके साथ एक शोध पद्धति के रूप में अनुभवजन्य उपागम का अनुसरण करने में उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। इस चर्चा से आपको स्पष्ट हो गया होगा कि शोध पद्धति की दृष्टि से अनुभववाद (empiricism) और अनुभवजन्य (empirical) उपागम में अंतर है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अनुभवजन्य उपागम◎ से अभिप्राय है विषय-सामग्री एकत्रित करने हेतु प्रेक्षण व अपने आप की गई अन्य विधियों वाली शोध-पद्धति। इस बात पर अलग-अलग राय है कि शोधकार 'वैज्ञानिक' विधि से सामग्री इकट्ठी करे या किसी भी व्यक्ति द्वारा तैयार सामग्री पर निर्भर हो। सामाजिक विज्ञान के विकास की प्रारंभिक अवस्था में हरबर्ट स्पेंसर (जीवन-काल 1820-1903), ऑगस्ट कॉम्टे (जीवन-काल 1798-1857) और यहाँ तक कि एडवर्ड बर्नेट टाइलर (जीवन-काल 1832-1919) और लुइस हेनरी मॉर्गन (1818-1881) जैसे विद्वान विभिन्न भूभागों से गुज़रने वाले यात्रियों, मिशनरियों और प्रशासकों द्वारा एकत्रित की गई सामग्री पर अधिकांशतः आश्रित थे। उस समय विश्लेषण की तार्किक प्रक्रिया पर विशेष बल दिया जाता था और उनके अपने मस्तिष्क से उपजे विचारों की पुष्टि के लिये उदाहरण के तौर पर विषय सामग्री का उपयोग किया जाता था।

विद्वान अपने-अपने अंतर्ज्ञानात्मक विवेक के आधार पर पहले से उपलब्ध सामग्री में से अपने काम की सामग्री का चयन करते थे तथा तुलना करने के लिये उसको काम में लाते थे। इस प्रकार की शोध पद्धतियों के विरुद्ध वैज्ञानिक ढंग से सामग्री एकत्रित करने पर ज़ोर दिया गया। विषय-सामग्री की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए सामग्री एकत्रित करने के 'वैज्ञानिक' नियमों का कठोरता से पालन करने को ज़रूरी माना गया।

इकाई 2
अनुभवजन्य उपागम

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 अनुभवजन्य उपागम
2.3 विषय-सामग्री (data) एकत्र करने के नियम
2.4 सांस्कृतिक सापेक्षवाद
2.5 विषय-सामग्री एकत्रित करने में आने वाली समस्याएँ
2.6 सामान्य बोध और विज्ञान के बीच अंतर
2.7 नैतिक क्या है?
2.8 प्रतिमानक (normal) क्या है?
2.9 एकत्रित विषय-सामग्री को समझना
2.10 सामाजिक शोध में विविधताओं का प्रयोग करना
2.11 अध्ययन के उद्देश्य को समस्या के रूप में रखना
2.12 निष्कर्ष
2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद आपके लिये निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देना सरल हो जाएगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

- अनुभवजन्य शोध क्या है?
- नियमों को ध्यान में रखकर विषय-सामग्री कैसे एकत्रित करें?
- सांस्कृतिक सापेक्षवाद की अवधारणा की व्याख्या कैसे करें?
- विषय-सामग्री एकत्रित करते समय कौन-कौन सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है?
- सामाजिक शोध में नैतिक और प्रतिमानक दृष्टिकोणों के मुद्दे कौन से हैं?
- एकत्रित किए गए तथ्यों को कैसे समझा जा सकता है।
- अध्ययन के उद्देश्य को समस्या के रूप में कैसे रखा जाये?
- सामाजिक शोध में विविधताओं का कैसे प्रयोग किया जाये?

2.1 प्रस्तावना

इकाई 1 में हमने समाज को समझने के बारे में विचारों तथा तार्किक समझ को प्रमुखता देने तथा अवलोकनीय तथ्यों पर आश्रित अनुभववाद के बीच तनाव की चर्चा की थी। जैसा कि इकाई 1 में उल्लेख किया गया है जिस सीमा तक समाजशास्त्रीय सिद्धांत सामाजिक जगत के प्रेक्षण पर आधारित होने चाहिए, उस सीमा तक हमें अनुभववाद को आधुनिक वैज्ञानिक विधि का केन्द्र मानना होगा। इकाई 5 और 6 में आपको फ्रांसिस बेकन (जीवन-काल 1561-1626), जॉन लॉक (जीवन-काल 1632-1704), जार्ज बर्कले (जीवन-काल 1685-1753) और डेविड ह्यूम (जीवन-काल 1711-1770) जैसे अनुभवजन्य शोध के समर्थकों के बारे में अधिक जानकारी हासिल होगी।

फ्रांसिस बेकन (1561-1626)

2.3 विषय-सामग्री एकत्र करने के नियम

दुर्खाइम (जीवन-काल 1858-1917) ने अपनी पुस्तक सोशियोलिजिकल मैथड (1964, 1895 में प्रथम बार प्रकाशित) में बताया कि विषय सामग्री को जैसे भी चाहें जहाँ कहीं भी, ऐसे-वैसे ढंग से एकत्रित नहीं करना चाहिए बल्कि सामग्री एकत्रित करते समय कुछ नियमों को ध्यान में रखना चाहिए। दुर्खाइम की दृष्टि में सामाजिक प्रतिरूपों (phenomena) के बाहरी अस्तित्व होते हैं और इन्हें मानस में बसे प्रतिरूपों से अलग रखना चाहिए। डेस्कार्ट (जीवन-काल 1596-1650) ने अपनी पुस्तक, मैडीटेशन ऑन फ़र्स्ट फ़िलोसोफ़ी (1641 में प्रथम बार प्रकाशित, 1991 में अंग्रेज़ी अनुवाद का प्रकाशन) में, डेस्कार्ट ने शंका करने के साधारण नियम द्वारा वैज्ञानिक विधि की नींव रखी। उसने हर बात की सत्यता के बारे में संदेह करने की युक्ति (strategy) का समर्थन किया। इसी भाव के अनुसार, यह भी कहा जा सकता है कि सच्चे अर्थों वाले वैज्ञानिक उपागम में बिना प्रमाण के कुछ भी स्वीकार नहीं किया जाता। इस विचार के तहत् आरामकुर्सी पर बैठे शोधकर्ता यदि किसी दूसरे द्वारा इकट्ठी की गई सामग्री को स्वीकार करें तो इसे उचित नहीं माना जाता है। वैज्ञानिकों द्वारा केवल वही सामग्री स्वीकार की जाती है जो स्पष्ट रूप से वैज्ञानिक शोध पद्धति के लक्ष्यों के अनुरूप इकट्ठी की गई है। विषय सामग्री को एकत्रित करना और विषय को समझना अलग-अलग बातें नहीं हैं और वास्तव में विषय-सामग्री इक्ट्ठा करना वैज्ञानिक शोध पद्धति का एक अंग है। चर्चा का यह बिंदु हमें यह विचार करने की ओर ले जाता है कि अपने पूर्वाग्रहों से परे हमारे लिये यह कैसे संभव है कि हम निरपेक्ष (objective) रूप से सामग्री एकत्रित करें।

इमाइल दुर्खाइम (1858-1917)

MAADHYAM IAS

2.4 सांस्कृतिक सापेक्षवाद

आत्मपरक जानकारी और पक्षपात से मुक्त होकर सामग्री को इकट्ठा करना चाहिए और वैज्ञानिकों को भावात्मक और नैतिक रूप से तटस्थ बने रहना चाहिए। सांस्कृतिक सापेक्षवाद का नियम इसी मानसिकता का परिणाम है। हमें यह मानना होगा कि जो हमारी अपनी संस्कृति में विद्यमान नहीं है, वह 'ग़लत' या 'अजीब' है – ऐसा कदापि नहीं है। 'नृजातिकेंद्रिकता' या अपनी अवधारणाओं और मूल्यों को ही सही मानने की भावना से ऊपर उठने का पाठ सामाजिक विज्ञान के सभी छात्र-छात्राओं को पढ़ाया जाता है परंतु ऐसा कर पाना सबसे कठिन काम है। मैं अपने क्षेत्रीय शोध के अनुभव को आपके सामने रखती हूँ। क्षेत्रकार्य के दौरान विद्यार्थियों के समूह के साथ राजस्थान के एक गांव में हमें मालूम चला कि इस क्षेत्र में जितने विवाह हुए हैं उनमें दुल्हन की उम्र दूल्हे से अधिक थी। एक व्यक्ति से बात करने पर पता चला कि उसकी पत्नी उससे उम्र में आठ वर्ष बड़ी थी और ऐसा प्रतीत होता था कि वह अपनी पत्नी को अत्यधिक चाहता है। मैंने उससे बेवकूफ़ी भरा एक प्रश्न पूछा जो हालांकि उस समय मुझे एकदम सटीक लगा था, "यहाँ महिलाएं अपने पतियों से उम्र में बड़ी क्यों होती हैं?" उस व्यक्ति ने हैरान होकर मेरी ओर देखा और मेरे प्रश्न के जवाब में मुझ से प्रश्न पूछा, "क्या आपके समुदाय में ऐसा नहीं होता?" और उसे यह बहुत अचरजपूर्ण लगा जब मैंने उसे बताया कि हमारे यहाँ लगभग सभी महिलाएं अपने पति से उम्र में छोटी होती हैं। उसकी हैरानगी ने मुझे आभास दिलाया कि हमारे मूल्य किस सीमा तक हम पर हावी रहते हैं और इनसे परे जाकर दूसरे लोगों को उनके मूल्यों के अनुसार समझ पाना कितना कठिन है। हमें अवश्य हमेशा ही अपनी संस्कृति की आम बातें सामाजिक न होकर 'प्राकृतिक' लगती हैं। इसी तरह मारग्रेट मीड (जीवन-काल 1901-1978) ने अपनी पुस्तक, सेक्स एंड टेंपरामेंट इन थ्री प्रिमिटिव सोसायटीज़ (1935) में पश्चिमी समाजों में 'प्राकृतिक' मानी जाने वाली नारीत्व और पुरुषत्व की सभी

धारणाओं का भंडाफोड़ किया है। मेरी अपनी कक्षा में छात्र-छात्राओं के बीच हंसी का फव्वारा छूट गया जब मैंने उन्हें बताया कि न्यू गिनी के एक क्षेत्र में सजे-धजे घुँघराले बालों वाले पुरुष कैसे वहाँ की सादी वेशभूषा वाली औरतों को रिझाने में लगे रहते हैं (देखें कोष्ठक 2.1)। न्यू गिनी के टकाम्बुली क्षेत्र के मीड के ये विवरण सही थे या नहीं परंतु इन्होंने 'क्या प्राकृतिक है' के मिथक को निश्चित रूप से पूरी तरह से ध्वस्त कर दिया।

कोष्ठक 2.1: मारग्रेट मीड द्वारा टकाम्बुली संस्कृति का अध्ययन

दिसंबर 1931 में मारग्रेट ने अरापेश का और बाद में मुडुगमोर और टकाम्बुली संस्कृतियों का अध्ययन करने के लिए न्यू गिनी की यात्रा की। मीड ने पाया कि अरापेश संस्कृति में पुरुषों और महिलाओं को समान दर्जा दिया जाता था। यह संस्कृति अत्यधिक सरल प्रकार की थी। इसमें महिला और पुरुष दोनों सक्रिय रूप से बच्चों का लालन-पालन करते थे। दूसरी ओर, मुडुगमोर संस्कृति अत्यधिक उग्र थी। इस समुदाय के महिला और पुरुष क्षुद्र और लड़ाकू थे। बच्चों को अपनी सुरक्षा स्वयं करने के लिए छोड़ दिया जाता था और दोषपूर्ण लिंग वाले शिशुओं को मरने के लिए नदियों में बहा दिया जाता था। यह मारग्रेट के लिए एक अत्यधिक भयावह अनुभव था।

मारग्रेट मीड
(1685-1753)

टकाम्बुली संस्कृति में, मारग्रेट ने पाया कि महिला-पुरुष की भूमिकाएं विपरीत थीं। महिलाएं फुर्तीली और ज़िंदादिल व उत्साहपूर्ण थीं जबकि पुरुषों पर घरेलू कामकाज का दायित्व था। ये सांस्कृतिक असमानताएं एक अन्य पुस्तक 'सेक्स एंड टैंपरामेंट इन थ्री प्रिमिटिव सोसायटीज़' में प्रकाशित की गई थीं।

स्रोत: यह जानकारी www.mnsu.edu/emuseum/information से उद्धृत है।

MAADHYAM IAS

सामाजिक विज्ञान में दुर्खाइम ऐसी निरपेक्षता को लाना चाहता था, जिसके तहत् बाहर से दिखने वाली विशेषताओं के अनुसार चीज़ों को पहचाना जा सके और एक प्रकार की गोचर वस्तुओं को वर्गीकृत किया जा सके। वर्गीकृत करने का महत्वपूर्ण आयाम था कि कैसे संस्था या लक्षण विशेष को परिभाषित किया गया था। केवल ऊपरी या सतही रूप से दृश्यमानता (visibility) को लेने पर संभव था कि गुण विशेष अदृश्य ही हो जाये। इस अर्थ में, बाहरी दृश्यमानता (external visibility) की परिभाषा बहुत सावधानीपूर्वक की जानी चाहिए। उदाहरण के लिए शुरू-शुरू के नृशास्त्री तथाकथित आदिम समाजों में राजनीतिक संस्था जैसी किसी चीज़ का पता नहीं लगा सके थे। लेकिन बाद में अपनी पुस्तक, अफ़्रीकन पोलिटिकल सिस्टम्स में फोर्टिस और इवंस प्रिचर्ड (1940; 6-7) ने दिखाया कि आदिम समाजों में नातेदारी जैसी सामाजिक संस्थाओं में राजनीति अन्तर्निहित होती है और उन्होंने राजनीति को प्रत्यक्ष रूप से नहीं बल्कि इसके प्रकार्यों से अस्मिता प्रदान की।

दुर्खाइम ने वर्गीकरण की प्रणाली को पहचानने का वैश्लेषिक कार्य अपने हाथ में लिया। अपने निबंध प्रिमिटिव क्लासीफ़िकेशन, में दुर्खाइम एवं मॉस (1963; प्रथम और 1903 में प्रकाशित) ने प्रौद्योगिकीय विशेषताओं के व्यावहारिक प्रारूपों और नैतिक या धार्मिक स्वरूप के प्रतीकात्मक वर्गीकरण में अंतर किया (देखें नीधम 1963: xi)। दुर्खाइम और मॉस के निबंध (अंग्रेज़ी में उदित) की प्रस्तावना के अंत में नीधम ने कहा, "अपनी सभी त्रुटियों के बावजूद दुर्खाइम और मॉस के निबंध की यह प्रमुख उपलब्धि है कि उन्होंने समाजशास्त्रीय शोध में 'वर्गीकरण' की विश्लेषणात्मक धारणा को जन्म दिया।

2.5 विषय-सामग्री एकत्रित करने में आने वाली समस्याएँ

यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक उपागम (और सामाजिक वैज्ञानिकों का उपागम भी) यह है कि किसी चीज़ को उसके अन्तर्जात गुणों के आधार पर स्वीकार किया जाये न कि उससे जुड़े विचारों के आधार पर। लेकिन सामाजिक विषय-सामग्री के बारे में अब यह

साथ में उन्हें ऐसे विषयों का भी अध्ययन करना होता है जो न ही प्रतिमानक हैं और न ही नैतिक। क्या नैतिक है और क्या प्रतिमान है – इसकी सुस्पष्ट परिभाषा देना आसान नहीं है। आइए, पहले नीतिशास्त्र (नैतिकता या आचरण से संबंधित) के मुद्दे पर चर्चा करें और फिर प्रतिमानक मुद्दों को लें।

2.7 नैतिक क्या है?

समाज में हर चीज़ एक ही विन्यास का अनुसरण नहीं करती। सामाजिक वैज्ञानिक का काम वास्तविक मानव व्यवहार और गतिविधियों का अवलोकन करना है। क्या ग़लत है और क्या सही – इसके बारे में हमेशा ही कुछ न कुछ अंतर पाये जाते हैं। हमने पहले चर्चा की है कि एक वैज्ञानिक ही है जो नैतिक पक्षपात से परे होता है। इसका अर्थ है कि अपनी मूल्य पद्धति से सही या ग़लत का निर्धारण नहीं किया जा सकता है। इसके लिये हमें सार्वभौमिक प्रसंगार्थ (referent) की ज़रूरत होती है। खुशहाल जीवन हेतु स्वास्थ्य, आयु आदि की विश्वव्यापी कसौटियों का होना परमावश्यक है जिनके आधार पर सही/ग़लत का निर्णय किया जा सके। लेकिन इस प्रश्न ने सामाजिक विज्ञान को आक्रान्त किया हुआ है। कौन से मानदंड से हम नैतिकता या आचारनीति की सर्वव्यापी संहिता (code) निर्मित करें? नृजातिकेंद्रिकता की बहुचर्चित की भावना का सांस्कृतिक सापेक्षवाद के विचार से कैसे सामंजस्य बिठाया जाये? उदाहरण के लिए नृशास्त्रियों को प्रायः दोषी ठहराया जाता है कि उन्होंने तो मानव बलिदान और शिशुहत्या सहित समाज विशेषों में पाए जाने वाले प्रत्येक रीति-रिवाज को सांस्कृतिक सापेक्षवाद की छाया में सही ठहरा दिया है। यह अभी भी बहुत बड़ा प्रश्न चिन्ह खड़ा करने वाला मुद्दा है कि जब कोई चीज़ हमारी अपनी संस्कृति की न हो तो हम उसे कैसे सही या ग़लत ठहरायें। बार्न्स ने (1979;2) इस विचार को निम्नलिखित शब्दों में प्रस्तुत किया है,

> प्राकृतिक वैज्ञानिक का बौद्धिक कार्य अत्यधिक सरल होता है क्योंकि तुलनात्मक दृष्टि से उसकी विषय-सामग्री ठोस और विश्वसनीय होती है। वैज्ञानिक तथा उसके शोध के विषय वाली प्राकृतिक गोचर वस्तुओं के बीच काफ़ी अंतराल होता है। दूसरी ओर सामाजिक वैज्ञानिकों को काफ़ी अविश्वसनीय तथा अस्पष्ट विषय-सामग्री के साथ काम करना होता है। इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि सामाजिक वैज्ञानिक का अपने अध्ययन की विषय-सामग्री से दो तरफ़ा संबंध होता है। जिन लोगों से सामाजिक वैज्ञानिकों की विषय-वार्ता होती है, वे लोग सामाजिक वैज्ञानिक से बहस-मुबाहसा करते हैं। यदि हम काम की दृष्टि से भौतिकविदों या रसायनविदों से सामाजिक वैज्ञानिकों की तुलना करें, तो कहना होगा कि प्राकृतिक वैज्ञानिकों से कहीं अधिक सामाजिक वैज्ञानिकों का काम काफ़ी दुष्कर होता है। निश्चित रूप से प्राकृतिक विज्ञान की तुलना में सामाजिक विज्ञान ने अब तक जो थोड़ी बहुत सफलता हासिल की है, इससे भी पता लगता है कि सामाजिक विज्ञान का अध्ययन सचमुच बड़ा कठिन है। इस कठिनाई का सबसे बड़ा हिस्सा नैतिकता या आचारशास्त्र से सम्बद्ध समस्याएं है।

नीति विषयक सवाल प्राकृतिक विज्ञानों के संदर्भ में भी उठते हैं। उदाहरण के लिए व्यापक विनाश और आनुवंशिक इंजीनियरी के हथियारों से जुड़े नैतिक प्रश्नों से हम सभी परिचित हैं। लेकिन जैसा कि लाज़लों और विलबर (1970) ने बताया जब वैज्ञानिक खोजों ने मानवजाति को प्रभावित किया तो बाद में प्राकृतिक विज्ञान के बारे में नैतिकता के प्रश्न उठाए गए हैं। अन्यथा भौतिकशास्त्र के सिद्धांतों में कहीं भी मानव नहीं शामिल हैं। इस स्थिति के विपरीत सामाजिक विज्ञानों में हमारी चर्चा हर समय मानवजाति से ही जुड़ी होती है और इसीलिए सामाजिक विज्ञानों में हमें निरंतर आचारशास्त्र से जुड़े प्रश्नों का सामना करना पड़ता है और उनकी उपेक्षा करना संभव ही नहीं है।

MAADHYAM IAS

समझ में आ चुका है ।के व्याख्याओं अथवा भावार्थों के बिना प्रेक्षण या केवल अंतर्जात गुणों की पिपासा केवल एक मृगमरीचिका या दृष्टिभ्रम है। समाज के बारे में प्रत्येक चीज़ संस्कृति या मानवों द्वारा प्रदान किए गए अर्थ-तंत्र का अनुसरण करती है। उदाहरण के लिए नारीत्व, पुरुषत्व इत्यादि जैसी अवधारणाएं समाज के अर्थ-तंत्र (meaning system) का एक हिस्सा हैं। कई ऐसे समाज हो सकते हैं जहाँ इन शब्दों का एक अर्थ हो और दूसरे समाजों में इनका अर्थ बिल्कुल ही अलग हो।

आत्मपरकता (subjectivity) का भी प्रश्न उठता है कि प्रेक्षणकर्ता की तरह किस सीमा तक निरपेक्ष हो पाना संभव है जबकि जो हमारे सामने जो हो रहा है उससे मानव होने के नाते हमारे अंदर तीव्र भावनाएं पैदा होती ही हैं। सामाजिक विज्ञान में अभी तक इस प्रश्न का पूर्णतया समाधान नहीं हो पाया है। निश्चित रूप से अनेक सामाजिक विज्ञानियों ने तटस्थता को तिलांजलि दे दी है और ऐसे कई विद्वान सक्रियताकारी विद्वान हैं जो मानवीय संस्थाओं के बारे तटस्थ और भावहीन होने को नैतिक रूप से ग़लत मानते हैं। ऐसे विद्वानों का मानना है कि मानवाधिकार जैसी सार्वभौमिक अवधारणा के आधार पर सर्वव्यापी मानदंड निर्धारित करना संभव है और जिन स्थितियों में हमारी प्रेक्षक की भूमिका है, उनमें इन मानदंडों के सहारे हस्तक्षेप किया जा सकता है। प्रायः सामाजिक वैज्ञानिकों को सलाहकार या परामर्शदाता के रूप में बुलाया जाता है या विकास अध्ययनों में विशिष्ट प्रयोजन के लिये समाज विज्ञानी को हस्तक्षेप का अवसर मिलता है। लेकिन कब हस्तक्षेप करें और कब न करें – इस मुद्दें पर वाद-विवाद कभी भी समाप्त नहीं हो पाया है।

2.6 सामान्य बोध और विज्ञान के बीच अंतर

यदि अंतिम विश्लेषण में हमें 'सामाजिक' को समझने के लिए प्रत्यक्ष बोध पर निर्भर रहना है तो मुख्य प्रश्न उठता है कि संवेदी (sensory) का प्रयोग कितनी सतर्कता के साथ करें ताकि किसी भी विचार का निर्माण इंद्रियजन्य प्रत्यक्ष ज्ञान से परे जा कर नहीं हो पाये। सामान्य बोध और विज्ञान के बीच मूल अंतर को समझने में यही बात प्रमुख है। प्रायः सामान्य बोध उस ज्ञान पर आधारित होता है जिसमें कार्य-कारण के वैज्ञानिक संदर्भ का नितान्त अभाव होता है। प्राकृतिक विज्ञानों और सामाजिक विज्ञानों में सतही समरूपता के होने या न होने को महत्व नहीं दिया जाता है। उनमें अंतर्निहित कार्य-कारण पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। वैज्ञानिक का काम है कि वह गोचर वस्तुओं की एकल अभिव्यक्तियों से परे उन्हें व्यापक रूप से देखे, पहचाने और वर्गीकृत करे।

सामाजिक जगत के बारे में आम लोगों के मनों में बसी भ्रमात्मक धारणाओं को सामने लाने में सामाजिक विज्ञान में हुए शोध के महत्वपूर्ण योगदान पर हमें विचार करने की ज़रूरत है। ऐसे विचार अक्सर पूर्वाग्रहों के रूप में व्यक्त होते हैं और अनावश्यक सामाजिक संघर्ष का स्रोत बन जाते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सामाजिक विज्ञान में हुए शोध के निष्कर्ष सामान्य बोध से मेल खाते हों और तब ऐसा लगता है कि सामाजिक वैज्ञानिकों ने समाज की यथार्थ के बारे में सामान्य बोध की दृष्टि से चर्चा की है क्योंकि प्रायः उनके शोध के निष्कर्ष रोज़मर्रा के ज्ञान-भंडार का एक अभिन्न हिस्सा बन जाते हैं। हमने 'राजनीतिकी' का उदाहरण पहले ही लिया था। यह दर्शाया जा सकता है कि जहाँ तक राजनीति का प्रकार्य शक्ति का प्रयोग या शक्ति-विभेदों के बारे में परक्रामण (negotiate) करना है, तो यह काम उन संस्थाओं और तंत्र के माध्यम से हो सकता है जिन्हें सामान्यतः परिवार, नातेदारी या धार्मिक अनुष्ठानों के रूप में मान्यता मिली होती है। साथ में हमें यह भी स्पष्ट कर देना होगा कि सामाजिक विज्ञानी को सामाजिक यथार्थ के बारे में मिथ्यात्वपूर्ण भ्रांतियों को दूर करने के काम से परे जाना होता है। सामाजिक विज्ञानियों के सामने ऐसे कई जटिल मुद्दे हैं जो दिन-ब-दिन के, बड़े स्पष्ट और ख़ूब जाने-पहचाने हैं।

MAADHYAM IAS

करता है। हमारे सामने काम है कि यह निर्णय लें कि क्या प्रतिमानजन्य है और क्या विकृतिपूर्ण (pathological) है। दुर्खाइम (1964; 47-75) के अनुसार प्रतिमानक (normal) क्या है – इसका निर्णय लेना एक ऐसे तर्क का विषय है जिस पर सामाजिक विज्ञान की आधारशिला कायम है। सामाजिक विज्ञान शोध के प्रारंभिक चरण में यह मान लिया गया था कि हर समाज सजातीय (homogenous) होता है उसमें समान प्रकार के मूल्य तथा प्रतिमान होते हैं। लेकिन धीरे-धीरे यह महसूस किया गया कि ऐसा समाज तो केवल नृजातिविवरणशास्त्रियों का स्वप्न मात्र था। यथार्थ के जगत में ऐसा कोई मानव समाज नहीं है जिसमें विभेद न हों और इसका अभिप्राय है कि समाज के भिन्न-भिन्न वर्गों के भिन्न-भिन्न मूल्य और नज़रिए हो सकते हैं। महिलावादियों और तीसरी दुनिया के परिप्रेक्ष्यों के उभरने से सामाजिक विभेदों की उपस्थिति अधिक स्पष्ट होकर सामने आई है। धीरे-धीरे सामाजिक विज्ञान के पाठकों को यह स्पष्ट हो गया है कि जिसे प्रतिमानक और नियमित चित्रित किया जाता रहा था वह समाज के केवल एक वर्ग पर लागू होता था। प्रायः यह चित्रण केवल पुरुषों की दुनिया के लिये ही सटीक था (देखें कोष्ठक 2.2, वीनर द्वारा पुनः अध्ययन (1976 ओर 1977)।

कोष्ठक 2.2: ऐनट बी. वीनर द्वारा पुनः अध्ययन (1976 और 1977)

एक महिला नृशास्त्री, ऐनट बी. वीनर (1976 और 1977 में) द्वारा मालिनोस्की के क्षेत्र, ट्रोब्रिएंड द्वीपों का पथप्रदर्शक पुनः अध्ययन दर्शाता है कि मालिनोस्की ने जिसे सारे ट्रोब्रिएंड समाज के सत्य के रूप में चित्रित किया था वह केवल वहाँ के पुरुष जगत के लिए ही सत्य था। महिला जगत को तो पूरी तरह से छोड़ ही दिया गया था जैसे उसका कोई अस्तित्व ही न हो। लेकिन यथार्थ में महिला जगत था और इन द्वीपों के जीवन का वह महत्वपूर्ण आयाम था।

इन विचारों के चलते सैद्धांतिक अवस्थिति में अनेक बदलाव सामने आए। ऐसे बदलावों में एक "बहुसंस्कृतिवाद" है जो अब एक देश से दूसरे देश में जाकर बसने वाले लोगों के विश्वव्यापी गमनागमन के संदर्भ में सामाजिक शोध का एक महत्वपूर्ण आयाम बन गया है।

MAADHYAM IAS

आइए, अब समाज के वैज्ञानिक अध्ययन और उसमें निहित पूर्वाग्रहों एवं स्पष्टीकरणों पर पुनः ध्यान दें। प्रारंभ में, विकासवादी सामाजिक वैज्ञानिकों का पूर्वाग्रह था कि प्रतिमानक (normal) को तय करने के लिये सार्वभौमिक प्रसंगार्थ पाना संभव था और उनका यह भी मानना था कि ऐसा कुछ है जो विकृतियों की तुलना प्रतिमानक है। प्रतिमानक तय करने की विधि सांख्यिकीय (statistical) हो सकती थी, किंतु अन्ततः जैसा कि दुर्खाइम (1964; 53-54) ने अनुभव किया था कि हमें निगमनात्मक तर्क का ही सहारा लेना होगा।

एक प्रतिमानक सामाजिक प्रतिरूप (phenomenon) को देखने का एक तरीका था कि मानव जाति के विभिन्न समाजों में इसके वितरण का पता लगाया जाये। अभिव्यक्तियों की भिन्नताओं के बावजूद यदि एक प्रकार का प्रतिरूप अधिकांश समुदायों में पाया जाये तो इसे प्रतिमानक के रूप में लिया जा सकता है। उदाहरण के लिए, लगभग सभी मानव समाजों में छोटे-छोटे समूह होते हैं जिन्हें परिवार कहा जा सकता है। इस प्रकार परिवार को चाहे वह किसी भी रूप में हो, प्रायः सभी मानवीय समाजों का प्रतिमानक कहा जा सकता है। इस संस्था का किसी समाज में न होना या भंग हो जाना विकृति का चिन्ह होता है। इस बात से भी यही स्पष्ट होता है कि यदि विभिन्न समाजों में प्रतिमानकता को संदर्भ विशेष में रखकर ही देखा जाये तो प्रतिमानकता की कोई निरपेक्ष व बाह्य दशाएं नहीं होतीं। इसके अतिरिक्त स्थान विशेष में प्रतिमानकता का वितरण देखते हुए हमें साक्षात विषय का कालपरक वितरण भी देखना होगा। जो एक काल विशेष में प्रतिमानक की तरह देखा जाये वह ज़रूरी नहीं है कि दूसरे काल में भी वैसा ही समझा जाये। उदाहरण के

अपने चारों ओर की सामाजिक वास्तविकता का अध्ययन करने हेतु आचार-शास्त्र से जुड़ी समस्याओं को समझने के लिए सोचें और करें 2.1 को इस बिंदु पर पूरा करना एक अच्छा विचार प्रतीत होता है।

सोचें और करें 2.1

थापन (2004:253) ने 1981 में ऋषि वैली स्कूल में क्षेत्र कार्य किया एवं उस काम पर आधारित थापन के एक लेख से लिया एक उद्धरण नीचे दिया गया है। इसे आप ध्यानपूर्वक पढ़ें। थापन के क्षेत्रीय कार्य में आई कठिनाइयों के स्वरूप को पहचानिये।

'सहभागियों को धोखा न देना एवं शोध-क्षेत्र में उनके सद्भाव और विश्वसनीयनता को न खोना' और 'नृजातिविवरणशास्त्री में पैदा हो गये उनके विश्वास और भरोसे को मानव अर्थों में धोखा देना संभव ही नहीं है' – इन संदर्भों वाले नीचे दिए उद्धरण में नैतिक तथा आचारशास्त्रीय दोनों पहलुओं पर चर्चा की गई है। इस उद्धरण पर आप चर्चा करें तथा अपनी चर्चा के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर एक अलग पृष्ठ पर लिखें।

थापन (2004:253) से लिया गया उद्धरण

नृजातिविवरणशास्त्री (ethnographer) को ही सहभागियों के सहयोग से निष्कर्ष प्राप्त करने की आवश्यकता होती है और इसके लिए उसे वार्तालाप करने के लिए पहल करनी पड़ती है, लोगों से हँसी-मज़ाक करना पड़ता है और गुप्त एवं बाधित जानकारी पाने के लिये वैकल्पिक युक्तियों का प्रयोग करना पड़ता है। इसमें विभिन्न प्रकार के सहभागियों के सामने भिन्न-भिन्न रूपों में अपने आपको प्रस्तुत करना पड़ता है जैसा कि मैंने स्वयं को समुदाय द्वारा स्वीकार कराने के लिए किया और इस तरह मैंने अपने को गुप्त जानकारी पाने का पात्र बनाया। सहभागियों के साथ सफल हो पाना नृजातिविवरणशास्त्री की इस क्षमता पर निर्भर करता है कि वह अंतःक्रिया इस तरीके से करे कि जो विश्वास ओर भरोसा पैदा कर सके। कुछ सहभागी अंतक्रिया करने के लिए मना भी कर सकते हैं और नृजातिविवरणशास्त्री के पास कोई शक्ति नहीं है जिससे उन्हें अंतःक्रिया में भाग लेने के लिए विवश किया जा सके। एक बार मित्र और जानकारी प्रदान करने वाले बन गये लोगों से जब नृजातिविवरणशास्त्री को जानकारी मिल जाती है तब शक्ति का संतुलन सहभागियों की दिशा से नृजातिविवरणशास्त्री की दिशा की ओर चला जाता है और ऐसी अवस्था में नृजातिविवरणशास्त्री किसी भी वांछित तरीके से जानकारी का प्रयोग करने के लिये स्वतंत्र है।

MAADHYAM IAS

प्रश्न

i) 'क्षेत्र में मुझे जानकारी देने वालों' की भावनाओं को आदर देने के कारण शोध से प्राप्त कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्षों को न देना क्या सही है?

ii) क्या शोधकर्ता के पास वस्तुतः इस प्रकार की शक्ति होती हैं कि वह जानकारी देने वालों से मिली संवेदनात्मक और महत्वपूर्ण जानकारी का किसी भी वांछित तरीके से प्रयोग करे?

iii) क्या व्यवहारिक, नैतिक एवं मानवीय पहलुओं से नृजातिविवरणशास्त्री द्वारा शोध से प्राप्त सामग्री का उपयोग निर्धारित होता है?

शैक्षिक परामर्शदाता से अनुरोध है कि वह सामाजिक शोध के आचारशास्त्रीय और नैतिक मुद्दों पर वाद-विवाद आयोजित करें और छात्र-छात्राओं को इस विषय पर अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करें। साथ में चर्चा को ज्ञानवाणी पर प्रसारित करने के लिए रिकार्ड करने हेतु प्रयास करें।

2.8 प्रतिमानक क्या है?

सामाजिक जगत का अध्ययन करने का एक अन्य आयाम इस बात से जुड़ा है कि कौन सा प्रतिमानजन्य व्यवहार है जो मानकी/नियमित/सामान्य/विशिष्ट विन्यास को पुष्ट

लिए आधुनिक विश्व में 'परिवार' शब्द का अर्थ एकल अभिभावक वाले परिवार या समलिंगी माता-पिता वाले परिवार को भी सूचित करता है; निश्चित रूप से ऐसे परिवारों को कुछ दशकों पहले तक विकृतिपूर्ण माना जाता था। दुर्खाइम के समय में, उद्विकास (evolution) की अवधारणा से समय और स्थान दोनों की दृष्टि से परिवर्तनशीलता का वर्णन किया जाता था लेकिन आज इतिहास ने उद्विकास का स्थान ले लिया है, और एक महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रगति को अब रूपांतरण की आंतरिक क्रिया-विधि के रूप में नहीं देखा जाता। वस्तुतः जैसे स्थान के संदर्भ में सांस्कृतिक सापेक्षता को समझा था, उसी तरह अब समय के संदर्भ में भी सांस्कृतिक सापेक्षता को समझा जा सकता है। भले ही हम भूतकाल में घटी और भविष्य में घटने वाली बातों के बारे में निरपेक्ष हो सकें। किंतु जो वर्तमान में घटित हो रहा है उसके बारे में निरपेक्ष हो पाना मनुष्य के बस की बात नहीं है। सामाजिक विज्ञान में मानवीय आत्मपरकता की स्वीकृति ने अन्ततः आधुनिकोत्तर सिद्धांत के उदय को प्रोत्साहन दिया है, इसके बारे में आपको पुस्तक 1 की आगामी इकाइयों में पढ़ने का अवसर मिलेगा।

दुर्खाइम (1964: 54) ने जिस तार्किक प्रतिमानकता के बारे में कहा था, उसकी आलोचना करते हुए उसे विशिष्ट प्रेक्षक तर्क कहा गया। लेकिन दुर्खाइम ने सावधानीपूर्वक कॉम्टे जैसे अपने पूर्ववर्तियों द्वारा प्रतिपादित उद्विकास के सार्वभौमिक नियम का विरोध करने के लिए 'सांस्कृतिक सापेक्षवाद' की विद्यमानता की चर्चा की थी। दुर्खाइम ने चतुराईपूर्वक प्रतिरूप के अस्तित्व के कारण को उसके प्रकार्य से अलग किया। इस प्रकार की हेतुविद्या (teliology) ने आगे आने वाली पीढ़ी के प्रकार्यवादियों को बहुत प्रभावित किया। चर्चा में इस बिंदु से यह सवाल भी उपजता है कि शोध के दौरान एकत्रित तथ्यों का अर्थ कैसे निकाला जाये।

2.9 एकत्रित विषय-सामग्री को समझना

सामाजिक विज्ञान के छात्र-छात्राओं के लिये अनुभवजन्य उपागम का अर्थ है विषय-सामग्री एकत्रित करना जिसका सैद्धांतिक विश्लेषण किया जा सके। जब प्राकृतिक विज्ञान और सामाजिक विज्ञान के बीच सादृश्यता पर बल दिया जाता था उस समय वैज्ञानिक उद्देश्यों के लिए कुछ प्रकार की विषय-सामग्री को अनुपयोगी मान लिया जाता था। उदाहरण के लिए पर्यटकों और मिशनरियों द्वारा एकत्रित सामग्री को रद्द कर दिया गया, ऐसे ही तर्क के आधार पर ऐतिहासिक सामग्री को भी रद्द किया गया। ऐसी सामग्री की विश्वसनीयता को स्वतः सिद्ध नहीं माना जा सकता था। यह एक पूर्वधारणा थी कि समाज को एक प्रकार्यात्मक निकाय के रूप में देखा जा सकता था और समाज की प्राकृतिक अवयव-संस्थान (organism) के प्रकार्यात्मक जैसे शाश्वत नियमों की भाषा में व्याख्या की जा सकती थी। सामाजिक व्यवस्था® का विचार एक ऐसी अवधारणा थी जिससे कई चीज़ों की व्याख्या की जा सकती थी। इसी प्रकार प्रणाली (system) और संतुलन (equilibrium) की अवधारनाएं भी थीं। केवल वही सामग्री विश्वसनीय थी जिसे प्रशिक्षित सामाजिक विज्ञानियों ने स्वयं शोध क्षेत्र में एकत्रित किया हो।

तुलना के उद्देश्यों के लिए भी वैध रूप से, केवल अन्य सामाजिक वैज्ञानिकों के शोध-कार्यों की चर्चा मान्य थी। अन्य आम व्यक्तियों तथा इतिहासकारों के शोध-कार्यों का उल्लेख मान्य नहीं था। साथ में, जैसे-जैसे अधिक संख्या में 'प्रेक्षक' क्षेत्र में प्रवेश करने लगे यह स्पष्ट हो गया कि 'निर्वैयक्तिक' (impersonal) प्रेक्षक की भूमिका लगभग एक मिथक ही थी। मार्गरेट मीड और डेरेक फ्रीमैन के बीच समोआ से प्राप्त सामग्री के ऊपर होने वाली आवेशपूर्ण बहस इस बारे में एक प्रासंगिक उदाहरण है (देखें क्लूस 2004: 140)।

MAADHYAM IAS

संघर्ष (conflict) सिद्धांतवादियों के प्रवेश ने संतुलन और सामाजिक व्यवस्था की अवधारणाओं के आधार पर बने सिद्धांतों के समक्ष चुनौती खड़ी कर दी। उत्तरोत्तर यह महसूस किया जाने लगा कि प्रेक्षक का अवलोकन अचेतन और 'आंतरिक' विश्लेषण की उसी समय चल रही प्रक्रिया के अनुसार ही होता है।

इतिहास की अवहेलना करना भी एक मुद्दा बन गया क्योंकि यह सुस्पष्ट हो गया कि कोई भी समाज बिना इतिहास के नहीं होता। प्रेक्षक की आत्मपरकता (subjectivity) पर काबू पाने के लिए ऐतिहासिक दस्तावेज, जीवन वृत्त, आख्यान और जिनका प्रेक्षण किया जा रहा है उनके कथन भी प्रेक्षित सामग्री के बड़ा हिस्सा बनते चले गए। वैज्ञानिक प्रेक्षण की प्रक्रिया में 'तर्क' के बजाय अंतर्दृष्टि की भूमिका को अधिक मान्यता प्राप्त होने लगी (देखें कोष्ठक 2.3 अंतःप्रज्ञात्मक बोध पर डैन स्पर्बर की टिप्पणी)।

> **कोष्ठक 2.3: अंतःप्रज्ञात्मक बोध पर डैन स्पर्बर की टिप्पणी**
>
> स्पर्बर (1982) ने कहा कि क्षेत्र में अर्जित ज्ञान को डायरियों, फिल्मों, रिकार्ड किए गए साक्षात्कारों, भरी गई अनुसूचियों, मानचित्रों, ऐतिहासिक दस्तावेजों, जीवन वृत्तों, चित्रों और वंशावलियों की तरह ढेर सारी सामग्री के रूप में घर लाया जाता है। लेकिन इसके साथ-साथ शोधकार को शोध क्षेत्र में वहाँ की संस्कृति से हुए दीर्घकालिक संपर्क से अंतःप्रज्ञात्मक बोध भी प्राप्त होता है।

यह मान लिया गया है कि अंतःप्रज्ञात्मक (intuitive) बोध प्राप्त करने के लिए शोधकर्ता को उन लोगों या स्थितियों के बीच काफी समय बिताना होगा जिनका उसे अध्ययन करना है। शोधकार्य पूरा होते-होते तक तथ्यात्मक या भौतिक सामग्री के साथ-साथ यह संभव है कि उसे समानुभूतिपरक बोध भी मिल जाए जिसके माध्यम से वह उन लोगों की आँखों से दुनिया को देखना, समझना शुरू करे जिनके साथ उसने इतना लंबा समय गुज़ारा है। जो बातें शुरू में अजीब लगती थीं अब वे समझ में आने लगती हैं। सामग्री प्रस्तुत करते समय सामाजिक वैज्ञानिक को अपनी सामग्री अवधारणात्मक बोध के उस सामान्य स्तर पर ढालनी होती है जो समाजशास्त्र में सभी को मान्य हो। इस तरह विशुद्ध रूप से व्यक्तिगत स्तर पर अर्जित अंतःप्रज्ञात्मक बोध और एकत्रित सामग्री की व्यापक व्याख्या के बीच का मध्यम मार्ग पकड़ना होता है।

MAADHYAM IAS

महत्वपूर्ण बात यह है कि मात्र सामग्री का एकत्रीकरण या प्रेक्षण ही बोध के उद्देश्य को पूरा नहीं करता। अच्छे काम और मामूली काम के बीच निर्णायक अंतर करने वाला तथ्य है अंतःप्रज्ञात्मक बोध का वह स्तर जिसे एक शोधकर्ता ने एकत्रित की गई सामग्री में जोड़ा है।

विश्लेषण के लिए सामग्री के एकत्रीकरण का एक महत्वपूर्ण आयाम यह है कि भरसक प्रयास करने के बावजूद क्षेत्र स्थिति में प्रत्येक वस्तु को देखना और प्रेक्षण करना किसी के लिए भी संभव नहीं है। जिन शोधकर्ताओं ने अपने कार्य के वैज्ञानिक और निरपेक्ष स्वरूप में विश्वास किया उन्होंने विशिष्ट से व्यापक के लिए लागू होने वाला भावार्थ निकाला और निष्कर्षतः कहा कि संसार में समरूपी (homogenous) समाज विद्यमान था। इस अर्थ में, शोध से निकले निष्कर्ष पूरे समाज के लिए समग्र रूप में लागू किए जाते थे। काफ़ी हद तक इस विधि का आज भी पालन किया जाता है। लेकिन अब समूहों और संस्कृतियों के बीच पाई जाने वाली विभिन्नताओं को पहचानने के लिए प्रयास भी हो रहे हैं। इसलिए, वह प्रत्येक विन्यास जिसमें एक निर्धारित प्रतिमान का पालन होता हो उसे विकृतिपूर्ण न मानकर विभिन्न माना जाता है। सांख्यिकीय आवृत्ति (frequency) की अक्सर प्रयुक्त की जाने वाली विधि से भी सदैव ऐसे परिणाम नहीं निकलते जो स्थिति का सही प्रतिनिधित्व

करते हों। सांख्यिकीय आवृत्ति से अक्सर केवल ऐसे परिणाम निकलते है जिसके कारणों का पता अधिक गुणात्मक और अंतःप्रज्ञात्मक – निगमनीय विश्लेषण से ही लग पाता है।

आइए, लिंग दर से संबंधित सांख्यिकीय सामग्री को उदाहरण के तौर पर लें। मात्र यह कहना कि भारत की जनसंख्या में महिलाओं की कमी हो गई है हमें यह नहीं बताता कि भारत के पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं को किस तरह उपेक्षित करके नगण्य दर्जा दिया गया है। इसके अलावा कार्य-कारण का पता लगाने का प्रयास भी हमें उसी प्रतिरूप (phenomenon) के एक से कारणों की ओर नहीं ले जाता, जैसे उदाहरणार्थ देखें कि बालिकाओं और वयस्क महिलाओं की उपेक्षा तथा जानबूझ कर की गई हत्या के भी अनेक गहराई तक जमे और तात्कालिक कारण होते हैं और ये सभी परंपराओं से उत्पन्न नहीं होते। वस्तुतः भारत जैसे-जैसे अधिक आधुनिक और सार्वभौमिक होता जा रहा है उसकी लिंग दर (sex ratio) में चिंताजनक गिरावट आ रही है। इसको देखकर अनेकों विद्वानों को यह समझ में आया है कि इस गिरावट का कारण अतीत में नहीं बल्कि वर्तमान में ही निहित है।

अधिकांश समाजों में, चाहे वे कितने ही छोटे और सीमित हों अनेकों मत पाए जाते हैं। रोज़मर्रा की ज़िंदगी में लोग पूर्व निर्धारित नियमों के अनुसार कार्य नहीं करते। प्रतिमानकों को अक्सर शब्दों में व्यक्त किया जाता है लेकिन व्यवहार में उसका पालन नहीं होता। जैसा कि बार्थ (1987) ने अपनी पुस्तक, कॉस्मॉलॉजीज़ इन द मेकिंग, में दर्शाया है कि प्रतिमानकों में भी निरंतर हेरफेर और परिवर्तन किया जाता रहा है, जिसके पास मौखिक ज्ञान का भंडार है उसके पास इसको परिवर्तित करने के साधन भी होते हैं। इस भाँति मौखिक परंपराएं जब एक से दूसरे मुँह में और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ियों में जाती है और एक क्षेत्र तथा समय से दूसरे में यात्रा करती हैं तो उनका रूप बदल जाता है। विषयांतर की क्रिया का एक अन्य कारण मात्र व्यक्तिगत सुविधा या आपात्कालीन ज़रूरत हो सकता है। हममें से कौन नहीं दैनिक जीवन के कार्यों और अनुष्ठानों और यहाँ तक कि जीवन चक्र की गतिविधियों जैसे विवाह आदि में ऐसे 'समायोजनों' (adjustments) से परिचित है? तीसरे प्रकार का मौखित ज्ञान में बदलाव सोद्देश्य भी हो सकता है यानी विद्रोह या अवज्ञा की क्रिया से बदलाव हुआ हो। ऐसे आचरणों का संस्कृति विरोध लेबल के अंतर्गत अध्ययन किया गया है। अक्सर ऐसा 'संस्कृति विरोध समाज के उपेक्षित समूहों जैसे महिलाओं और सुविधावंचित लोगों के प्रतिघाती व्यवहार के संदर्भ में होता है।

2.10 सामाजिक शोध में विविधताओं का प्रयोग करना

सामाजिक शोध के लिए सामग्री एकत्रित करते समय हमारे लिये यह पहचान लेना ज़रूरी है कि बिविधताओं को स्वीकार कर उनके माध्यम से जो अर्थ अभिव्यक्त होता है उसके संदर्भ में सामग्री की व्याख्या करनी है। सामाजिक विज्ञान प्रेक्षण में काफ़ी समय लगता है और सामग्री इकट्ठा करने में श्रमसाध्य ईमानदारी की अपेक्षा होती है। सामाजिक तथ्यों की वास्तविक समझ प्राप्त करने हेतु दूसरा सुगम मार्ग नहीं है क्योंकि सभी सामाजिक तथ्य जटिल होते हैं और इनके अनेक कार्य-कारणभाव और प्रभाव होते हैं। होम्सवुड और स्टुअर्ट (1991) ने इस बात को स्पष्ट करते हुए बताया है कि जब सामाजिक विज्ञानों में व्याख्याएं समस्यामूलक होने लगें तो ज़रूरी है कि उनकी अवहेलना करने या उन्हें त्याग देने की बजाय हम उनके अस्तित्त्व को मानें। इसके अलावा सांगोपांग व्याख्या की खोज करना ही भ्रामक है और हमें स्वीकार करना है कि सृजनात्मक होने के साथ-साथ लोगों को अभिव्यक्तिकरण की स्वतंत्रता होती है अतः यतांतर होना अनहोनी बात नहीं है। यहाँ कहने का यह अर्थ नहीं है कि नियमितताएं होती ही नहीं या व्यापकीकरण (generalisation) स्थापित नहीं किया जा सकता, क्योंकि यदि ऐसा होता तो सामाजिक विज्ञान संभव ही नहीं

MAADHYAM IAS

होता। सामाजिक वैज्ञानिकों को प्रायः वास्तविक नियमितताओं और जो उनकी अपनी इच्छानुसार होना चाहिये के बीच एक नाजुक संतुलन रखना होता है। संरचना और क्रिया के बीच इस पुरातन द्वैत से सामाजिक विज्ञानों को हमेशा जूझना पड़ा है। आपका यह तर्क हो सकता है कि सामाजिकी वैज्ञानिकों द्वारा निरूपित सामान्यीकरण को जितना अधिक लागू किया जायेगा उतना ही वह विशिष्ट स्तर वाली घटनाओं की व्याख्या करने में असफल होगा। दूसरी ओर, विशिष्ट की व्याख्या के लिए सामान्यीकरण प्रायःएक अनिवार्य दशा है।

अनुभवजन्य प्रेक्षणों और व्याख्याओं को एक और समस्या से निपटना पड़ता है। जब हमारी अपनी इन्द्रियों के बोधों से परे कुछ वस्तुएं दूसरों के इन्द्रिय बोध के काफ़ी करीब लगती हैं या कम से कम उनका ऐसा दावा होता है तो हमें क्या करना होगा ? हम कैसे व्याख्या करें जब क्षेत्र में जानकारी देने वाले लोग कहें कि उनका नियमित रूप से आत्माओं से साक्षत्कार होता हैं या मृतात्माओं से उनकी बातचीत इस तरह होती है जैसे जीवित व्यक्तियों से होती है। उनके पति/पत्नी और बच्चे यद्यपि परलोक सिधार गये हैं परंतु उनकी मृत लोगों से कुछ लोगों की हर समय बातचीत होती है (देखें कोष्ठक 2.4 सावरा उदाहरण)।

कोष्ठक 2.4: सावरा उदाहरण

सावरा उड़ीसा की एक जनजाति है। सावरा लोगों में मृत और जीवित व्यक्तियों के बीच कोई विभाजन नहीं देखा जाता। उनके अनुसार उनके निवास स्थान के काफ़ी नज़दीक ही एक दूसरी जगह मृत व्यक्ति रहने चले गये हैं। वे लोग मृत लोगों से नियमित रूप से मिलते और बातचीत करते हैं। सावरा जनजाति के लोगों के लिए यह कोई समस्यामूलक बात नहीं है। वे अक्सर किसी भी व्यक्ति के बारे में बात करते हुए कहते हैं कि वह उन्हें बाज़ार या खेत जाते समय मिला था, लेकिन सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए बड़ी समस्या यह होगी कि वे जिस व्यक्ति के बारे में बता रहे हैं उसकी काफ़ी पहले मृत्यु हो चुकी हैं। उनके पति/पत्नी और बच्चे भी यद्यपि परलोक में होते हैं परंतु उनके साथ सावरा लोगों का संपर्क बराबर बना रहता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कोष्ठक 2.4 में दिए गए सावरा उदाहरण की किस तरह व्याख्या की जा सकती है? यदि हमें केवल अपनी इन्द्रियों पर विश्वास करने की 'वैज्ञानिक' तार्किकता का अनुपालन करना है तो इसकी व्याख्या करने का एकमात्र तरीका यह होगा कि हम कहें कि या तो इस संस्कृति में प्रत्येक व्यक्ति मतिभ्रम से पीड़ित है या झूठ बोलने का आदी है।

इसकी व्याख्या करने का दूसरा तरीका यह होगा कि यह कहा जाये कि विभिन्न संस्कृतियों के व्यक्तियों की संज्ञानात्मक (cognitive) क्षमताएं भिन्न-भिन्न होती हैं और वे वास्तव में उन चीज़ों को देख सकते हैं जो हमें नहीं दिखाई देती। यह तरीका कुछ कुछ कास्तानेदा (1970) की व्याख्याओं के समान होगा जिन्हें अधिकांश लोगों ने नहीं माना था लेकिन अन्य कई लोगों ने मान्यता दी थी। ऐसी सामग्री की व्याख्या करने का तीसरा तरीका यह होगा कि यह कहा जाए कि दृष्टिगत और अन्य इन्द्रिय बोधों से अर्थ निकालने की सांस्कृतिक रूप से सीखी गई ऐसी युक्तियाँ हैं जो हमारी समझ से परे हैं। उदाहरणार्थ, एक पर्वतीय समुदाय के साथ काम करते समय मुझसे कहा गया कि जब एक व्यक्ति मृत्यु के समीप था तब शरीर से आत्मा के जाने का मार्ग देखने हेतु एक लामा को बुलाया गया। मैंने सहजतापूर्वक पूछा कि एक लामा यह मार्ग कैसे देख सकता है? मुझे उसी सहज विश्वास से यह उत्तर दिया गया कि वह क्यों नहीं देख सकता। इस भाँति जो बात हमें अविश्वसनीय लगती है वह दूसरों को बहुत सहज और सामान्य लग सकती हैं। यदि ऐसी बातें हमारी विश्वसनीयता की सीमाएं लाँघ जाएं तो क्या किया जा सकता है?

दूसरी ओर, इवान्स-प्रिचर्ड (1937) ने अज़ान्दे में प्रचलित जादू-टोने की प्रत्यक्षवादी व्याख्या की। उन्होंने समूचे अनुभव को प्रत्यक्षवादी रूप में लिया और इसे तार्किक प्रत्यक्षवादी तथा प्रकार्यवादी विश्लेषण के माध्यम से समझाया। उसने इस व्याख्या के दौरान अनुभवकर्ताओं के प्रकट रूप से आत्मपरक अनुभव पर ध्यान न देकर उन अनुभवों द्वारा निष्पादित व्यक्त और अव्यक्त प्रकार्यों की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया। उसने जादू-टोने को उस समाज के प्रदत्त लक्षण की तरह लेकर उस पर कोई टीका नहीं की। विश्लेषक के लिए यह बात मायने नहीं रखती कि अज़ान्दे को जादू-टोने के बारे में भावनात्मक या अनुभवात्मक रूप से कैसा लगा। विश्लेषक ने सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में जादू-टोने की भूमिका पर अपना ध्यान केन्द्रित किया।

इवान्स-प्रिचर्ड
(1902-1973)

कुछ अन्य उदाहरणों में आपको मिलेगा कि विश्लेषक ने इस बात पर अपना ध्यान केन्द्रित किया कि इन अनुभवों का अनुभवकर्ताओं के लिए क्या अर्थ है। तत्पश्चात् उसने व्यक्तिगत अनुभवों को समाज के महत्वपूर्ण तंत्रों में समेकित किया। इस दृष्टिकोण को गर्ट्ज़ (1975) ने अपनाया है। लेकिन अधिकांश वैज्ञानिकों ने अनुभवों के सत्य और अनुभवकर्ताओं के "देखने" और "अनुभव करने" के मुद्दे को दरकिनार ही किया है।

कुछ नये विद्वानों ने शोध क्षेत्र की स्थिति में अनुभवकर्ताओं के साथ भागीदारी करने के मुद्दों को टाला नहीं है। उदाहरणतः गढ़वाल में पांडव लीला की अभिनय प्रस्तुति में भाग लेने वाले साक्स (2002) ने बताया कि नृत्य में भाग लेते समय वह एक असाधारण अनुभव की दुनिया में पहुँच गया था। संस्कृति के अध्ययन का एक और आयाम है – मौखिक व्यवहार और अमौखिक व्यवहार का सापेक्षिक महत्व। संस्कृति के विद्वानों ने प्रायः संस्कृति और भाषा को बराबरी का दर्जा दिया है और अवाचनिक (non-verbal) के ऊपर वाचनिक (verbal) को इस तर्क द्वारा वरीयता दी है कि मनुष्यों का व्यवहार मौखिक संचार वाला होता है और अमौखिक व्यवहार अधिक "स्वाभाविक" होने के कारण मानव व्यवहार की अपेक्षा "पशु" जगत के व्यवहार के दायरे में आता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

परंतु विद्वानों की एक अन्य श्रेणी जैसे इनगोल्ड (1986) और जैल (1992) ने संस्कृति को विश्व के साथ संबद्ध होने के एक तरीके के रूप में देखा है। उनके अनुसार पर्यावरण के साथ एक दूसरे पर निर्भरता से यह सम्बद्धता बनती है। मनुष्य अपने पर्यावरण के साथ अंतःक्रिया के परिणामस्वरूप स्वयं ही अर्थ निरूपित करते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि हमारी अंतःक्रिया हमेशा पर्यावरण के सांस्कृतिक रूप से निर्मित अर्थों के हिसाब से नहीं ाती है। बल्कि होता यह है कि प्रारंभिक रूप से स्वाभाविक होने वाली हमारी शारीरिक अंतःक्रियाएं पर्यावरण को अर्थ से भर देती हैं और तब वह अर्थ पर्यावरण में अंकित हो जाता है। लिखे हुए रिकॉर्डों के अभाव में, ऐसे अर्थ केवल आंशिक रूप से ही अगली पीढ़ी को हस्तांतरित किये जा सकते हैं और आंशिक रूप से ही हर बार पुनःनिर्मित होते हैं जब-जब व्यक्ति विशेष का अपने पर्यावरण से जुड़ाव होता है। इस तरह, आखेटक-संग्रहक समूह में पैदा हुए बालक-बालिकाएं जंगलों में घूम फिर कर, फल तोड़ कर और जानवर पकड़ कर अपनी क्षुधा शांत करते हुए जीवित रहने का और अपनी राह तलाशने का प्रयास करके अपने पर्यावरण के बारे में सीखता है। इस तरह के अध्ययन का एक उदाहरण है निसा : द लाइफ एंड वर्ड्स ऑफ़ ए कंग वुमन। इसमें एक ऐसी आखेटक-संग्रहक महिला के वास्तविक जीवन का वर्णन है जो झाड़ियों में रहती थी। शोस्ताक (1981) ने इस जीवनी को इकट्ठा किया था।

सामाजिक शोध में विविधताओं के प्रयोग करने के लंबे विवरण के बाद आइए अब अगले भाग में सामाजिक विज्ञान में शोध के मूल लक्ष्य को समझने के विषय में चर्चा करें।

2.11 अध्ययन के उद्देश्य को समस्या के रूप में रखना

हमें अपने अध्ययन के उद्देश्य को समस्या के रूप में रखने के लिए तैयार होना होगा। अपने अध्ययन के मूल लक्ष्य को हम कैसे समझें, संस्कृति और समाज की अवधारणा किस तरह व्यक्त करें? प्राकृतिक विज्ञानों की तरह हमारे सामने कोई ठोस वस्तु नहीं होती जिसे हम समाज या संस्कृति के रूप में देखें। हमें तो वस्तुतः अपने प्रेक्षणों और पूर्वनिर्मित धारणाओं के आधार पर अनुमान लगाना होता है। अनुमान लगाने की प्रक्रिया काफ़ी विवादास्पद हो सकती है। उदाहरणार्थ, भौगोलिक परिभाषा द्वारा समाज को अपने अध्ययन की विषय-वस्तु बनाया जा सकता है। जैसे मलिनॉस्की (जीवन-काल 1884-1942) ने 1922 ने ट्रोब्राएंड द्वीपसमूहों का एक इकाई के रूप में अध्ययन किया था। मीड (जीवन-काल 1901-1978) ने 1928 में समोआ का अध्ययन किया और रैडक्लिफ़-ब्राउन (जीवन-काल 1881-1955) ने 1922 में अंडमान द्वीपसमूहों में अपना प्रमुख अनुसंधान कार्य किया। यह मानना होगा कि इन सभी मनोरम स्थलों में प्रत्येक की एक विशिष्ट संस्कृति होगी। समाज को अन्य सीमाओं जैसे विवाह के संदर्भ में भी परिभाषित किया जा सकता है। ऐसे ही एक जाति को अंतर्जातीय विवाह की सीमाओं द्वारा परिभाषित किया जा सकता है। सदस्यता के अन्य मानदंड भी हो सकते हैं। लेकिन समाज की सभी इकाइयों की ऐसी सीमाएं नहीं होती; मान लीजिए कि यदि कोई हिंदूधर्म जैसे धर्म का अध्ययन करना चाहे तो उसके सामने विशाल और असीमित क्षेत्र मौजूद होगा। कभी-कभी अध्ययन करने के लिये चुने विषय को जगह के संदर्भ में परिभाषित नहीं किया जा सकता; जैसे प्रवासी समूह का केवल एक स्थान के संदर्भ के तहत अध्ययन नहीं किया जा सकता। यदि कोई समूह स्थान विशेष से प्रतिबंधित भी हो तो यह ज़रूरी नहीं है कि सामाजिक तथ्य स्थान विशेष से बद्ध हो। जैसे, ग्रामीण भारत में गाँव विशेष का अध्ययन उस पर जनसंचार ओर राष्ट्रीय राजनीति के प्रभावों को समझे बिना नहीं किया जा सकता। सीमित दायरे में परिभाषित समाज के अस्तित्व की वास्तविकता के बारे में प्रश्न उठाएं जाने का सिलसिला बढ़ता जा रहा है। शोध पद्धति की पुरानी अवधारणा की जगह अब बहु-स्थलीय (multi-sited) नृजातिशास्त्र (ethnographics) विवरण और तंत्रव्यवस्था (networks) की अवधारणा है।

इ वी मलिनॉस्की
(1884-1942)

प्रायः समाज शब्द को एक वस्तुपरक इकाई की बजाय आत्मपरक समझ लिया जाता है। एक समुदाय या समाज एक इकाई होता है क्योंकि उस इकाई के सारे कर्ता या भागीदार उसे एक इकाई के रूप में व्यक्त करते हैं। इस अर्थ में हिंदू धर्म के अध्ययन का सरल तरीक़ा यह होगा कि इसके लिए कोई बाह्य परिभाषा ढूँढने की बजाय उन लोगों का अध्ययन किया जाए जो स्वयं को हिंदू कहते हैं। इस प्रकार संस्कृति वह है जिसमें संसार के बारे में मानव समूह की इकाई में महत्तम संख्या में साझे प्रतिरूप मौजूद हों। प्रायः साझे प्रतिरूपों के तथ्य की मौजूदगी के कारण ऐसे समूह को समाज की संज्ञा दे दी जाती है। प्रतिरूपों की ऐसी साझेदारी या संस्कृति कठोर या शाश्वत न होकर बदलती रहती है और यत्र-तत्र प्रसारित होती है। साथ में एक स्थान से दूसरे स्थापन में प्रतिरोपित भी हो जाती है। भारत में समाज की इकाई विशेष, जैसे युवा वर्ग, का अध्ययन करते समय संयुक्त राज्य अमरीका और जापान की विभिन्न संस्कृतियों के प्रभाव को अनदेखा नहीं किया जा सकता है। अवश्य ही इस स्थिति में हमें आरोपित को मूल से अलग करना होगा, लेकिन यह कार्य भी काफ़ी जटिल सिद्ध हो सकता है क्योंकि इसको करते समय हमें

एआर रैडक्लिफ़ ब्राउन
(1881-1955)

MAADHYAM IAS

दुनिया के अन्य समाजों के बारे में व्याख्याओं और विचारों के ऐतिहासिक विकास को ध्यान में रखना होगा।

अधिक पारंपरिक अर्थ में, एन्थनी गिडन्स (1984: 163) ने द कॉन्स्टीट्यूशन ऑफ़ सोसाइटी में समाज की अवधारणा के निम्नलिखित दो प्रमुख भावों का उल्लेख किया है।

i) सामाजिक संबंध या परस्परक्रिया का व्यापक गुणार्थ (सामाजिक कर्ताओं के बीच परस्परक्रिया के विन्यास या तंत्रव्यवस्था के बारे में कक्षाओं में दी गई यह आदर्श परिभाषा है)

ii) स्वयं को अन्य प्रणालियों से अलग करती हुई अंतःनिर्भरता की प्रणाली से बनी सामाजिक संबंधों की अपेक्षाकृत सीमित इकाई (यह वह तरीका था जिसमें प्राचीन ग्रीक व लैटिन युगीन समय में समाजों में अंतर किया जाता था। लेकिन आज ऐसी सीमित इकाइयों को ढूँढ पाना और परिभाषित करना मुश्किल है और अब तो यह माना जाने लगा है कि ऐसी इकाइयां केवल नृशास्त्री की कोरी कल्पना रही होंगी।)

अध्ययन के लिए समाज के रूप में परिभाषित की जाने वाली इकाई को ढूँढने का प्रयास करते समय सामाजिक विज्ञानी को किन बातों का ध्यान रखना होगा? या तो भाषायी बोध की सीमाओं को लें ताकि अध्ययन की इकाई संस्कृति के समानार्थी बन जाए या अध्ययन की इकाई स्वतः परिभाषित जनजाति हो सकती है या कोई जाति अथवा गाँव विशेष जैसी भौगोलिक इकाई भी हो सकती है।

समाज को समस्या की तरह समझ पाने में दुर्खाइम (1964: 4) की तरह व्यक्ति से समाज को अलग करना हमारी मदद करता है। सामाजिक वैज्ञानिकों को शोध क्षेत्र में समाज का नहीं बल्कि व्यक्तियों का प्रेक्षण करना होता है और उनके साथ अंतःक्रिया करनी होती है। यदि विश्लेषणात्मक रूप से व्यक्ति को समाज के विपरीत देखा जाता है तो अपने जाँच-परिणामों का अर्थ निकालने के लिए सामाजिक वैज्ञानिकों को कर्ताओं को तो पूरी तरह उपेक्षित करना होगा और अमूर्तीकरण की प्रक्रिया द्वारा संरचना के बारे में अपना ही प्रतिरूप बनाना होगा। लेकिन यदि समाज सिद्धांत बनाने की प्रक्रिया का उत्पाद है तो अन्य सभी सिद्धांतों की भाँति इसकी रचना भी देश -काल के संदर्भ में करनी होगी। तब समाज क्या है – यह भी शक्ति के नियमों से संचालित सामाजिक क्रिया बन जाता है। उदाहरण के लिए देखें कि कैसे उपनिवेशकाल में प्रशासकों ने भारत के सामाजिक विशिष्ट वर्गों जैसे ब्राह्मणों और शासकों की सहायता से भारतीय समाज को परिभाषित किया था। भारतीय समाज और इतिहास का जो प्रतिरूप इस तरह निर्मित हुआ उसमें ब्राह्मणवाद और पितृसत्ता दोनों को वरीयता मिली। असंगति यह है कि ऐसी संरचना न केवल अमूर्त होती है बल्कि यदि इन्हें शक्ति के स्रोतों द्वारा बनाया गया हो तो यह सचमुच ही ठोस रूप ले लेती है। सामाजिक इतिहासकारों ने दिखाया है कि उपनिवेशी शासन ने भारतीय समाज को अपनी कल्पना वाले रूप में ही पुनःनिर्मित कर लिया। परंतु इस पुनःनिर्माण के बावजूद भारतीय समाज की ऐसी वास्तविकता भी थी जो सरकारी विवरण का हिस्सा कभी नहीं बनी। काफी बाद में सब-ऑल्टर्न इतिहासकारों ने इस [illegible] को पुनःनिर्मित करने का प्रयास किया।

MAADHYAM IAS

2.12 निष्कर्ष

एकत्रित सामग्री का अर्थ निकालने का प्रयास करते समय सामने आने वाली विविध समस्याओं पर विचार करते हुए, समाज और संस्कृति के संदर्भ में बार-बार हमें अनुभवजन्य यथार्थ की अलंघ्यता (sanctity) पर लौटना पड़ता है। सबसे अधिक उलझन व्यक्ति और समाज के बीच संबंध को समझने में व्याप्त है। हमारे लिए सैद्धांतिक विषमता यह रहती है कि हम व्यक्ति के ऊपर समाज के अस्तित्व को मंजूरी देने वाली प्रत्यक्षवादी विचारधारा

को स्वीकारें या आत्मपरक उत्तर आधुनिकतावादी व्याख्या के तहत् दोनों को मिला दें।

मूलपाठ में यथार्थ का निरूपण आता है या प्रेक्षक तथा जिसका प्रेक्षण किया जा रहा है के बीच आत्मपरक अंतःक्रिया आती है – इस विषय पर वाद-विवाद ही चल रहा है।

यदि हम मानें कि समस्त यथार्थ व्याख्यात्मक है और आत्मपरक चिंतन (reflexivity) का एक रूप है तो भी सामग्री के सफल प्रस्तुतीकरण के लिए निर्देश प्रतिरूप की सच्चाई पर आकर टिकेगा। वस्तुतः आत्मपरक चिंतन वाले दृष्टिकोण के समर्थकों का प्रत्यक्षवादियों पर यह आरोप हैं कि प्रत्यक्षवादी सामग्री का व्यवस्थीकरण करते समय अपने खुद के नियमों को थोपते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर बड़ी सफ़ाई से अलग-अलग ख़ानों में सजा दिया जाता है। जबकि यथार्थ कभी भी इतना नहीं साफ़-सुथरा होता। नियमितताओं और व्यवस्थित विन्यासों की बात करने वाले विद्वानों ने अनियमितता की वैधता को नज़रअंदाज कर दिया था। वस्तुतः नियमित और अनियमित की परिभाषाएं प्रेक्षक की पूर्वकल्पित धारणाओं के अनुकूल बना ली गई थीं। अंत में कुछ चुनी हुई सामग्री के आधार पर व्यवस्थित रूप से वैध बनाए प्रेक्षक के परिप्रेक्ष्य ही सामने उभर कर आए। फॉस्टर (1965) ने यूकाटान के गाँव का पुनःअध्ययन करते हुए रॉबर्ट रैडफ़ील्ड पर यह आरोप लगाया कि उसने वहाँ सामंजस्य और सामाजिक व्यवस्था देखी जबकि यथार्थ में वह गाँव संदेह, असामंजस्य और अप्रकट संघर्ष से ओत-प्रोत था।

रार्बट रैडफील्ड (1897-1958)

शोधकारों के पास एकमात्र तरीका यह है कि जितना संभव हो वे प्रेक्षित यथार्थ के क़रीब रहें और सामग्री के व्याख्याकार के रूप में नहीं बल्कि एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करें। नई वर्तमान पीढ़ी के सामाजिक वैज्ञानिकों ने विशेष रूप से जिनका शोध क्षेत्रीय यथार्थ पर आधारित है, अपनी शैली में अधिक से अधिक वर्णनात्मक (narrative) विधा का प्रयोग किया है और इस भाँति उनकी भूमिका अपने क्षेत्र के लोगों की ओर से बोलने वालों की है। सर्वोत्तम विधि है कि यह माना जाये कि क्षेत्र में लोगों के पास वास्तविक जानकारी है न कि व्याख्याकारों के पास। आखिरकार संसार में गतिशील होने के लिये ज़रूरी अंतःक्रियाओं के परिणामस्वरूप ही लोगों के द्वारा समाज का निर्माण किया जा है। दुर्खाइम द्वारा निरूपित कर्ता और समाज के बीच पारस्परिक संवाद अब प्रायः वैध नहीं माना जाता क्योंकि समाज को अब साझे प्रतिरूपों के व्यवस्थित और प्रतिबंधित यथार्थ के रूप में नहीं देखा जाता, जैसा कि पहले ज़माने के प्रत्यक्षवादी विद्वानों द्वारा माना जाता था।

अब यह प्रयास भी किया जाता है कि वस्तुओं को केवल उस रूप में न देखा जाए जैसी वे हैं बल्कि यह भी विचार किया जाए कि वे ऐसी कैसे हुईं। अतः सामाजिक विज्ञान की व्याख्याओं एवं शक्ति संबंधों और उनकी संरचना को समझने में इतिहास की अहम् भूमिका हो गई है। शक्ति संबंधों का अध्ययन करने का एक हिस्सा शोधकार की अपनी अवस्थिति (location) भी है। जहाँ से उसे दुनिया को देखना है और अपने शोध के बारे में बोलना-लिखना है। यह दिन-ब-दिन ज़्यादा महसूस किया जा रहा था कि शोधकार तो केवल 'गोरी चमड़ी के' और 'पुरुष' ही होगा। इस तरह के महिला वर्ग के एवं काले वर्ण वाले शोधकारों को "अन्य" की श्रेणी में डाल दिया गया। अनेकों नृजातिशास्त्रविवरणों में "मैं" शब्द हमेशा पुरुष और 'गोरी चमड़ी वाले शोधकार और उसकी पाश्चात्य' वैज्ञानिक तार्किकता की छवि सामने लाया। उदाहरण के लिए, लगभग सभी पुरुष, श्वेत शोधकारों ने विश्व को पितृसत्तात्मक और पुरुष प्रधान माना जबकि महिला शोधकारों ने दुनिया को विपरीत संस्कृतियों वाला माना, जहाँ पुरुष प्रभुत्व का मुक़ाबला करने और अपनी ताकतों और आवाज़ों का प्रदर्शन करने के उनके अपने तरीक़े और विधाएं थीं। प्रतिकूल रूप से, पुरुष

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

शोधकारों ने अक्सर उत्पीड़न के उन रूपों और तरीक़ों को नहीं देखा जो महिला शोधकारों को दिखाई दिये। यहाँ हमने सोचें और करें 2.2 के अभ्यास में केवल एक उदाहरण लिया है। अन्य उदाहरणों में दूसरे परिप्रेक्ष्य भी हो सकते हैं जैसे जाति प्रणाली का नीचे की ओर से अध्ययर्न, काली महिलाओं के नज़रिये से महिलावाद का अध्ययन, देशी विद्वानों द्वारा देशी समाजों के अध्ययन आदि।

आइए, इस इकाई में अपनी चर्चा का समापन करते हुए सोचें और करें 2.2 अभ्यास को पूरा करें और शोधकार और शोध की गई सामग्री के बीच अंतरों से निपटने के तरीक़ों की जाँच परख करें।

सोचें और करें 2.2

कार्लेकर (2004: 378-379) के लेख से लिये गया निम्नलिखित उद्धरण महिलाओं की आवाज़ों के लिये खोज के विषय पर है। इस उद्धरण को पढ़िए। भारतीय समाज में सामाजिक रूप से उपेक्षित समूह पर शोध करने की अपनी संभावना पर भी विचार कीजिए। यदि आपने ऐसा शोध किया तो उस स्थिति में आपको व्यक्तिगत स्तर पर और सामाजिक विज्ञान की शोध पद्धति के पूर्वाग्रहों के स्तर पर अपने लिंग/ वर्ग/ जाति वाली सामाजिक प्रस्थिति के बीच अंतरों का सामना करने के असमंजस और उसके परिणामस्वरूप होने वाली व्याकुलता की भावना का सामना कैसे करना होगा? इस प्रश्न का उत्तर कागज़ की एक अलग शीट पर लिखिए और निम्नलिखित उद्धरण में उठाए गए मुद्दों के बारे में अपने अध्ययन केंद्र में सहपाठियों के साथ विचार विमर्श कीजिये।

कार्लेकर के लेख से उद्धरण (2004: 378-379)

जब क्षेत्रकार्य के अंत में मैंने अपनी उत्तरदाताओं (respondents) से कहा कि उन्होंने मेरी बहुत मदद की है तो मेरी घनिष्ठ मित्र बन गई शांता ने कहा कि "बीबीजी, आप तो अपनी किताब लिखेंगी, पर हमारा क्या होगा"? मेरे पास शांता को देने के लिए कोई सच्चा उत्तर नहीं था। इसी प्रकार मैं सचमुच ही अनेकों महिलाओं के बार बार पूछे गए इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ रही थी कि "बीबीजी, हमें इससे क्या मिलेगा?.... कॉलोनी में जाने के दौरान मैंने खुद को इन तकलीफ़देह प्रश्नों के बारे में अधिक सोचने-विचारने से दूर रखा था।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जब मैं अपनी रिपोर्ट लिखने बैठी तो मेरे दिमाग़ में अनेकों आकृतियाँ उभरने लगीं। मुझे इस बारे में कभी भी स्पष्टता नहीं हो पाई थी कि जिन महिलाओं के साथ मैंने इतने दिन गुज़ारे हैं उनकी ज़िन्दगियों के बारे में मैं किस तरह लिखूँ। यह मैं जानती थी कि मैं जो भी लिखूँगी वह व्याख्यात्मक होगा। परंतु मैं इस बारे में भी कुछ कम चिंतातुर नहीं थी कि मुझे अपनी उत्तरदाताओं की वास्तविकता के बारे में यथासंभव 'सच' कहना चाहिए। मैं यह भी जानती थी कि जिन महिलाओं का अध्ययन किया जा रहा है, समाज और पुरुषों द्वारा शारीरिक और मानसिक रूप से उनका दमन होता रहा है। एक क्षेत्रीय शोधकार के हस्तक्षेप और जाँच-पड़ताल में नैतिक अधिस्वर का एक अलग ही प्रकार का प्रभाव होता है। अनजाने में, शोधकार ने महिलाओं के इस समूह में आत्म-विश्लेषण और चेतना जागृत करने की प्रक्रिया शुरू कर दी परंतु इन महिलाओं को अपने दैनिक जीवन की बेड़ियों से मुक्त होने की आशा बहुत कम है। इसके परिणामस्वरूप पैदा होने वाले असंतोष, कुंठा और आक्रोश का दायित्व सीधे रूप से शोधकार के कंधे पर आता है और इस तरह शोधकार भी शोषण का एजेंट ही बन जाता है।

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Glaser, Barney and L. Anselm 1968. *THe Discovery of Grounded Theory.* Weidenfeld & Nicolson: London (For its focus on developing theory in the process of doing research

Winch, Peter 1958. *The Idea of Social Science. Routledge*: London (For its argument regarding subjectivist version of what social science should be about)

इकाई 3
सिद्धांत निर्माण के विविध तर्क

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 समाजशास्त्र में सिद्धांत का महत्व

3.3 अवधारणाएं: सिद्धांतों के मूल तत्व

3.4 हमें सिद्धांतों की आवश्यकता क्यों है?

3.5 प्राक्कल्पना, विवरण और प्रयोग

3.6 नियंत्रित प्रयोग

3.7 प्रयोग का रूपांकन

3.8 प्राक्कल्पना प्रमाणित करना

3.9 प्राक्कल्पना प्रमाणीकरण की सामान्य विधियाँ

3.10 वैकल्पिक व्याख्याओं के प्रति संवेदनशीलता

3.11 प्रतिद्वन्द्वी प्राक्कल्पना निर्माण

3.12 सामाजिक विज्ञान सिद्धांत का उपयोग और कार्य-क्षेत्र

3.13 सिद्धांत निर्माण और शोधकार के मूल्य

3.14 निष्कर्ष

3.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

यह आशा की जाती है कि इकाई 3 के पढ़ने के बाद आपके लिए निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देना संभव होगा:

- सिद्धांत से क्या अभिप्राय है?
- सिद्धांत के घटक क्या हैं?
- हमें सिद्धांत की ज़रूरत क्यों है?
- सिद्धांत का निर्माण कैसे होता है?
- सामाजिक सिद्धांत का प्रयोग और क्षेत्र क्या है? तथा
- शोधकार के मूल्यों से सिद्धांत निर्माण कैसे प्रभावित होता है?

3.1 प्रस्तावना

इकाई 2 में अपने इर्दगिर्द के सामाजिक यथार्थ को अनुभवजन्य परीक्षण के संदर्भ में समझने के आधारभूत तर्क पर चर्चा करने के पश्चात् इकाई 3 में हमारी यह चर्चा का विषय है कि सामाजिक जगत के बारे में अपनी प्रतिज्ञप्तियों को पर्याप्त रूप से ठोस सिद्धांतों में समाजशस्त्रियों ने कैसे और क्यों व्यवस्थित किया है।

इकाई 3 को पढ़ने से पहले, यह जान लेना अच्छा रहेगा कि अनुभवजन्य शोध में सैद्धांतीकरण और शोध-पद्धतिजनक दृढ़ता साथ-साथ चलते हैं और किसी भी रूप में एक दूसरे के ऊपर प्रभुत्व की समस्या नहीं खड़ी करते। सिद्धांत निर्माण का शोधकार का तर्क उसकी अपनी परिसंपत्ति है जिससे उसके लिये उपयोगी अनुभवजन्य परीक्षण करना संभव है और इसका दूसरा पक्ष है कि शोध पद्धति की दृष्टि से तर्कसंगत सामाजिक शोध

ओर ले जाता है।

इकाई 3 को उपर्युक्त स्पष्टीकरण के प्रकाश में पढ़ना अधिक सार्थक होगा। इस इकाई में सिद्धांत निर्माण की प्रक्रिया अर्थात् प्राक्कल्पना (hypothesis), विवरण और प्रयोग (experimentation) का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त, इसमें सामाजिक सिद्धांत के उपयोग और क्षेत्र तथा सिद्धांत निर्माण को प्रभावित करने वाले समाज वैज्ञानिकों के मूल्यों की चर्चा की गई हैं। इकाई 1 और 2 की ही भाँति इकाई 3 में भी अनौपचारिक और वर्णनात्मक शैली में समाजशास्त्रीय लेखनों से उदाहरणों सहित विषय की चर्चा की गई है।

3.2 समाजशास्त्र में सिद्धांत का महत्व

सिद्धांत से अभिप्राय है ज्ञान की ऐसी व्यवस्था जिससे तथ्य सामान्य सिद्धांतों में समाहित हो जायें। सामान्यबोधात्मक (commonsensical) ज्ञान और वैज्ञानिक ज्ञान के बीच अंतर यह है कि वैज्ञानिक ज्ञान सुव्यवस्थित और वर्गीकृत होता है। लेकिन केवल वर्गीकरण ही किसी ज्ञान को वैज्ञानिक नहीं बनाता। वास्तविकता में ज्ञान को वैज्ञानिक बनाने के लिये हमें समझना है कि सामान्यबोधात्मक ज्ञान तो अधिकांशतः वांछित प्रभावों से संतुष्ट हो जाता है जबकि विज्ञान में हर तथ्य/परिघटना (phenomenon) के कारणों की खोजबीन होती है। सिद्धांत का काम है कि कार्य-कारणात्मक संबंधों को प्रेक्षणीय बारम्बार घटित होने वाली या वर्गीकृत हो सकने वाली निरंतरताओं में व्यवस्थित करें ताकि हम ऐसे व्यापक प्रेक्षण कर सकें जिसमें विविध लेकिन संबंधित तथ्य सम्मिलित हों। साथ में, केवल एकल और विशिष्ट संबंधों द्वारा ही नहीं बल्कि उच्चतर और अमूर्तरूपी व्यापक संबंध के संदर्भ में हम उनकी व्याख्या कर सकें।

प्रेक्षणीय तथ्यों में अंतर्निहित कारणों का पता लगाना विज्ञान का प्रथम कार्य है क्योंकि अन्यथा सामान्य बोध के बारे में जैसा अक्सर होता है, बिना यह समझे कि ऐसा हो रहा है लोगों द्वारा विरोधी लक्ष्यों की मांग अथवा अपेक्षा होने लगती है। तथ्यों के बीच सही कार्य-कारणात्मक संबंध स्थापित करने के पश्चात् कार्य-कारणात्मकता के एक ही ढांचे के अंतर्गत विभिन्न तथ्यों को एक साथ लाया जाता है। जिस प्रक्रिया द्वारा ऐसा किया जाता है उसे सिद्धांत निर्माण कहते हैं क्योंकि इस तरह से निकले संबंध को ही प्रायः सिद्धांत कहा जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

दूसरे शब्दों में, हमारे लिये यह कहना संभव है कि सिद्धांत के तीन संघटक या गुण हैं – i) व्याख्या, ii) पुर्वानुमान, और iii) सत्यापन। विभिन्न संदर्भों में प्रयुक्त व्यवस्थित रूप से परस्पर संबद्ध समाजशास्त्रीय प्रतिज्ञप्तियों (prepositions) से सिद्धांतों की रचना होती है। आप इनमें से प्रत्येक प्रतिज्ञप्ति का परीक्षण कर सकते है जिससे मालूम हो सके कि विषय-सामग्री से हर प्रतिज्ञप्ति का कितनी अच्छी तरह से ताल-मेल है। यह भी पता लगता है कि एक दूसरे से संबंध में ये प्रतिज्ञप्तियाँ कितनी अच्छी तरह परिवेश विशेष में कार्यकारण की कड़ियों को बताती हैं। यदि ऐसा पूर्वानुमान संभव है तो हमारे लिये यह कहना भी संभव है कि परिणाम की व्याख्या ज्ञात प्रतिज्ञप्तियों के संदर्भ में की गई है। समाजशास्त्रीय प्रतिज्ञप्तियों का सत्यापन करते समय तार्किक संबंध एवं अनुभवजन्य संबंध दोनों का ध्यान रखना पड़ता है। इस प्रकार आपकी समझ में आ चुका होगा कि समाजशास्त्रीय सिद्धांत निर्माण में व्याख्या, पूर्वानुमान और सत्यापन घनिष्ठ रूप से परस्पर संबद्ध तत्व हैं। आइए अब इनके बारे में विस्तार से चर्चा करें।

चर्चा करने से पहले इकाई के इस बिंदु पर ही सोचे और करें अभ्यास 3.1 को पूरा करना अच्छा रहेगा। उससे पूरी तरह से आपकी समझ में आ जायेगा कि हमारे इस सुझाव का

क्या आशय है कि प्रेक्षणीय तथ्यों के अंतर्निहित कारणों का पता लगाना ही सामाजिक वैज्ञानिकों का पहला कार्य है।

सोचें और करें 3.1

हमने यहाँ शहरों में बढ़ती आबादी के अंतर्निहित कारण का शहरवासियों के आमतौर पर दिये जाने वाले नज़रिये के एक उदाहरण से दिया है। आपको अपने अनुभव पर आधारित ऐसा ही कोई दूसरा उदाहरण देना होगा।

उदाहरण

यह उदाहरण उन शहरवासियों का है, जो शहरों में रहते हैं और अक्सर उन मलिन बस्तियों (slums) की शिकायत करते रहते हैं जिनकी मात्रा बढ़ती जा रही है और जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाले प्रवासी भरे हुए हैं। वे अपर्याप्त बिजली की भी शिकायत करते हैं परंतु वे यह नहीं समझते कि बड़े शहरों की बिजली की अतिशय आवश्यकताओं को पूरा करने के कारण ही यह समस्या हो रही है। बिजली की पूर्ति करने के लिये विशाल हाइड्रो-इलेक्ट्रिक परियोजनाएं बन रहीं हैं जिनके कारण बड़ी संख्या में लोग विस्थापित हो रहे हैं। इन विस्थापितों के पास शहरों की मलिन बस्तियों में ठसाठस भर कर रहने के अलावा और कोई चारा नहीं हैं, जिसकी वजह से शहरों के संसाधनों पर भार और बढ़ रहा है।

पहले भी यह कहा जा चुका है कि सिद्धांत दुनिया का वह विवरण है जो हमारे देखने और माप करने परे जाता है। सिद्धांत परस्पर संबद्ध परिभाषाओं और संबंधों का एक ऐसा पुंज है जो अनुभवजन्य जगत के बारे में व्यवस्थित तरीक़े से हमारी अवधारणाओं और बोध को सुगठित करता है (ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी ऑफ़ सोशयोलोजी 1998: 666)A इस अर्थ में, हमारी वॉटर्स (1994:3) के साथ सहमति है कि सामाजिक सिद्धांत अमूर्त हो और उन सामाजिक प्रचलनों (practices) से पृथक हो जिनकी व्याख्या सिद्धांत द्वारा की जा रही है। ऐसा सिद्धांत विशिष्ट विषयपरक तर्क पर ध्यान केन्द्रित करता है। सुसंगति एवं बल प्रदान करने वाली प्रज्ञप्तियों के पुंज से यह तर्क स्पष्ट किया जाता है। साथ में, सिद्धांत को तार्किक रूप से सुसंगत और व्याख्यात्मक होना होता है अर्थात् इसमें सामाजिक तथ्यों के अस्तित्व या स्वरूप का विवरण प्रदान करने हेतु उनके बारे में एक पूर्वपक्ष (thesis) होना ज़रूरी है। इसके अतिरिक्त, सिद्धांत को पर्याप्त रूप से व्यापक होना चाहिए ताकि सामाजिक तथ्यों के उन सभी दृष्टांतों का कारण बताया जा सके जिनकी यह सिद्धांत व्याख्या करने जा रहा है। सिद्धांत को मात्र उन व्याख्याओं तक ही सीमित नहीं किया जा सकता, जो जानकारी देने वालों या भागीदारों ने अपने व्यवहार की व्याख्या करने के लिए खुद ही दी हों। अंत में, सिद्धांत का पर्याप्त रूप से वैध होना ज़रूरी है अर्थात् यह सामाजिक जगत के बारे में पहले से ही ज्ञात ऐसी जानकारी के अनुरूप हो जिसे दुनिया के लोग और समाजशास्त्रियों सहित सामाजिक वैज्ञानिक जानते हों। इसका तात्पर्य है कि यह संभव होना चाहिये कि सिद्धांत को ज्ञान के अन्य निकायों के साथ संबद्ध किया जा सके।

थोर्सटिन वेब्लेन
(1857-1929)

सिद्धांत की पूर्वानुमेयता की जाँच करना ही इसकी सच्चाई या वैधता की जाँच करने का सर्वोत्तम तरीक़ा है। उदाहरणार्थ, थोर्सटिन वेब्लेन (जीवन-काल 1857-1929) ने समाज में संभ्रांत वर्ग की विशिष्टताओं के बारे में जानकारी एकत्रित की थी और अपनी जानकारी की व्याख्या को वेब्लेन (1899) ने वर्ग के सिद्धांत का नाम दिया था। इस सिद्धांत की वैधता इसमें निहित है कि कितनी बार और कितने पूर्वानुमानतः संभ्रांत वर्ग के व्यक्ति इस सिद्धांत में दी विशिष्टताओं को दर्शाते हैं।

परिभाषा से ही अपने सिद्धांतों के आधार पर विज्ञानों को भविष्यसूचक होना आवश्यक है। प्राकृतिक या तथाकथित 'विशुद्ध' विज्ञानों में, सिद्धांत विशेष को तभी नकारा जाता है जब उसकी पूर्वानुमेयता एक पूर्व-निर्धारित सीमा के दायरे में नहीं होती। सामाजिक विज्ञानों के सिद्धांतों में पूर्वानुमेयता की ऐसी क्षमता तो कदाचित ही मिलती है लेकिन किसी कथन को सिद्धांत के स्तर पर ले जाने के लिए स्थिति विशेष के सत्य का अभिनिश्चयन करने की कुछ मात्रा तो निर्धारित करनी ही होगी। समाजशास्त्र में सिद्धांतों की पूर्वानुमान करने की क्षमता की जानकारी हेतु आइए अब सोचें और करें 3.2 को पूरा कर लिया जाये।

सोचें और करें 3.2

नीचे हमने एक ऐसे सिद्धांत का उदाहरण दिया है जिसकी अन्य परिवर्तियों (variables) के कारण पूर्वानुमेयता की सीमित क्षमता है। एम एस ओ-001 में आपने जिन सिद्धांतों के बारे में पढ़ा है उनमें ऐसे ही कुछ उदाहरणों का चयन कीजिए। आपके अध्ययन केंद्र में आने वाले एम. ए. समाजशास्त्र के अन्य विद्यार्थियों के उदाहरणों से अपने उदाहरणों की तुलना कीजिए और ऐसे सिद्धांतों के पाँच सर्वोत्तम उदाहरण छाँटिए और पूर्वानुमेयता के लिए उनकी क्षमता के बारे में और उनमें ऐसे अन्य परिवर्तियों (variables) की मौजूदगी की चर्चा कीजिए जो बड़े पैमाने वाले पूर्वानुमान करने में बाधा डालते हैं। चार या पाँच विद्यार्थियों के पैनल का गठन करिए। तथ्य/परिघटना (phenomenon) विशेष के बारे में सामान्यता प्रचलित विचारों और वैज्ञानिक रूप से विश्लेषित तर्कों के बीच अंतर दिखाने के लिए यह पैनल चयनित पाँच उदाहरणों को प्रस्तुत करे और उन पर चर्चा करे।

उदाहरण

विनिमय सिद्धांत का एक उदाहरण है जिसके अनुसार विनिमय या लेन-देन में समतुल्यता का सिद्धांत बच्चों के पालन पोषण तथा विवाह आदि के सहित सारे मानवीय व्यवहार में काफ़ी व्याप्त है। समतुल्यता (equivalence) के सिद्धांत से बारम्बार हटने वाली परिस्थितियों की व्याख्या करने में शक्ति एवं परार्थवाद (altruism) जैसे परिवृत्य अंतःक्षेप (intervene) करते हैं। इसके अतिरिक्त, यह भी माना जाता है कि मानवीय संबंधों में विनिमय के आयामों का निर्धारण करने में आदर-सम्मान और प्रतिष्ठा जैसे अभौतिक विचारों के आधार भी शामिल हैं। जैसे निम्न से उच्च स्तर के व्यक्तियों की दिशा में वस्तुओं का प्रवाह। हमने पाया है कि सामाजिक विज्ञानों में मानव जीवन और व्यवहार की जटिलता के कारण कारकों की बड़ी संख्या पूर्वानुमेयता की स्थितियों में अंतःक्षेप करती है। एक जमा एक, बराबर दो जैसी गणितीय विज्ञानों और प्राकृतिक विज्ञानों में पाई जाने वाली कार्य-कारणता सामाजिक विज्ञानों में दुर्लभ है।

MAADHYAM IAS

एम.ए. समाजशास्त्र कार्यक्रम के शैक्षिक परामर्शदाता से अनुरोध है कि अपने क्षेत्र में इग्नू क्षेत्रीय केंद्र के सहयोग से सोचें और करें 3.2 के पैनल की चर्चा की दृश्य या श्रव्य (audio/video) रिकॉर्डिंग करवायें।

समाजशास्त्र में सिद्धांत के महत्व पर इस भाग को पूरा करने के पश्चात् आइए अब सिद्धांतों के तत्वों या खंडों के निर्माण पर विचार किया जाये।

3.3 अवधारणाएं: सिद्धांतों के मूल तत्व

जब भी सिद्धांत के बारे में चर्चा होती है तो ऐसे शब्द भंडार (vocabulary) का प्रयोग आवश्यक है जो प्रायः विषय विशेष में विशिष्टतः काम में आता है और उसमें वे शब्द-समूह होते हैं जिन्हें अवधारणा कहा जाता है। ये अवधारणाएं और कुछ नहीं बस तमाम प्रकार के तथ्यों को एक शीर्षक में वर्णन करने हेतु आशुलिपिकरण (shorthand version) है। अवधारणाएं सिद्धांतों के मूल तत्व हैं और परिभाषा की प्रक्रिया द्वारा उन्हें विकसित किया जाता है। सिद्धांत का काम मूलतः अवधारणाओं को तार्किक रूप में एक दूसरे से जोड़ना है। उदाहरण के लिए संस्कृति की अवधारणा को लें। जब सामाजिक विज्ञानी द्वारा

'संस्कृति' शब्द का लिखित निबंध या मौखिक भाषण में प्रयोग किया जाता है तो समाजशास्त्र या नृशास्त्र को जानने वाले किसी भी व्यक्ति को मोटे तौर पर इसका अर्थ समझ में आ जाता है। सामान्यतः प्रत्येक अवधारणा के साथ उसका मानकीकृत वर्णन होता है जिसे उसकी परिभाषा कहते है।

प्राकृतिक विज्ञानों में ऐसी परिभाषाएं बहुत सुनिश्चित (precise) होती हैं लेकिन सामाजिक विज्ञानों में परिभाषाएं ऐसी नहीं होती। समाजशास्त्र की पढ़ाई शुरू करने के पहले साल में जिसने संस्कृति की परिभाषा समझने का प्रयास किया होगा उसे पता होगा कि संस्कृति की एक पंक्ति वाली परिभाषा ढूँढना कितना कठिन है। आज भी सामाजिक विज्ञान पढ़ने-पढ़ाने वाले लोग संस्कृति की किसी भी परिभाषा से पूरी तरह सहमत नहीं हैं। परंतु संस्कृति शब्द प्रयुक्त किए जाने पर अधिकांश सामाजिक वैज्ञानिकों को उसका अर्थ भली-भाँति समझ में आ जाता है। इस भाँति सभी वैज्ञानिक विषयों में अवधारणाओं की अपनी पारिभाषिक शब्दावली होती है जिसे वैज्ञानिक विशिष्ट-शब्दावली (jargon) की तरह जाना जाता है।

अवधारणाएं अमूर्त (abstract) होती हैं और उनका अमूर्तकरण (abstraction) बेतरतीब ढंग से न होकर अध्ययनाधीन तथ्य में दिखने वाली गोचर विशेषताओं में से मेहनत के बाद चुने गए संरचनात्मक गुणों का अभिलेखन (recording) करने के बाद होता है। यद्यपि ऐसा चयन सांख्यिकी (statistics) के आधार पर हो सकता है परंतु अंततः केवल सहजानुभूति से या निगमनात्मक रूप से ही अवधारणा का निर्माण किया जाता है। जहाँ तक संभव है यह सुनिश्चित किया जाता है कि चुने गए संरचनात्मक गुण सर्वव्यापी रूप से पाए जाते हों।

आइए 'संस्कृति' की अवधारणा का एक और उदाहरण लें। यह सार्वभौमिक रूप से माना जाता है कि यद्यपि संस्कृति निर्माण की क्षमता आनुवंशिक प्रक्रिया होती है, संस्कृति स्वयं में एक सीखा हुआ व्यवहार है। यह बात उन मानवीय बालकों के उदाहरण द्वारा सिद्ध हो चुकी है जो मानवीय वयस्कों द्वारा पोषित किए जाने से वंचित रहे हैं और उन्हें पशुओं ने पाला-पोसा तो वे पशुओं जैसा ही व्यवहार करने लगे। सीखा हुआ व्यवहार पीढ़ी दर पीढ़ी संचारित होता है लेकिन इसमें (अर्थात् संस्कृति में) अन्य समूहों में अंतरित होने की और कुछ समयांतर पर परिवर्तित होने की क्षमता भी होती है। संस्कृति की अवधारणा की परिभाषा में प्रायः सम्मिलित होने वाली वास्तविकताएं मानव समूहों और उनके व्यवहार के अभिलेखन (recording) और वास्तविक प्रेक्षणों से पाई जाती हैं। इस बात की भी काफ़ी संभावना है कि समय विशेष में सही मानी जाने वाली संस्कृति की अनेक विशेषताएं नवीन साक्ष्य के सामने आने पर बदल जाती हैं या त्याग दी जाती है। उदाहरणार्थ ग़ैर-मानव प्रजातियों पर हुए नूतन अनुसंधानों के साक्ष्यों के परिणामस्वरूप अब यह धारणा बदल रही है कि केवल मानव जाति ही संस्कृति विकसित करने में सक्षम है।

सभी विज्ञानों में प्रज्ञप्तियों (propositions) की सदैव ही पुनः छानबीन की जा सकती है और वैज्ञानिक तरीके से किए जाने वाले सतत शोध का अर्थ ही है कि हम पुराने कथनों की वैधता के लिए बराबर परीक्षण करते रहें। यही वजह है कि विज्ञान को एक अंतहीन प्रक्रिया माना जाता है और इसी लिए सामाजिक विज्ञानों में बहुत थोड़ी सी अवधारणाओं को विश्वव्यापी और कालातीत सत्यों का दर्जा प्राप्त हो पाता है, जबकि गणित में ऐसा होना सामान्य बात है। 'दो जमा दो चार होता है' जैसा संपूर्ण वैधता का कथन सामाजिक विज्ञानों में शायद ही कभी संभव हो सकता है। सामाजिक विन्यासों पर आधारित "सिद्धांतों" और भौतिक तथ्यों पर आधारित "प्रयोगात्मक नियमों" के बीच हमेशा एक अंतर है। इस अर्थ में सामाजिक विज्ञान कुल मिला कर सैद्धांतिक हैं न कि प्रयोगात्मक। अभी तक हमने चर्चा की कि सामाजिक विज्ञानों में सिद्धांतों का निर्माण किस तरह होता है। अब प्रश्न उठता है, हमें सिद्धांतों की आवश्यकता क्यों है? आइए इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास करें।

MAADHYAM IAS

3.4 हमें सिद्धांतों की आवश्यकता क्यों है?

सिद्धांतों की आवश्यकता सबसे पहले इस कारण होती है कि यत्र-तत्र बिखरे, असम्बद्ध तथ्यों को एक क्रम में व्यवस्थित रूप से रखने का काम सिद्धांत करते हैं। सिद्धांत की सहायता से हमारे लिये तथ्यों के बीच संबंध के स्वरूप को संक्षेप में कुछ सूत्रों के रूप में प्रस्तुत करना संभव है। जो सिद्धांत जितना अमूर्त होगा उसका अर्थ होगा कि उसकी व्यवहार्यता (applicability) उतनी ही व्यापक है और वास्तविक स्थितियों से उसका हू-बहू मिलना संभव नहीं है। आपका यह कहना सटीक होगा कि दो प्रकार के सिद्धांत होते हैं: i) औपचारिक (formal) और ii) यथार्थमूलक (substantive)।

औपचारिक सिद्धांत इस अर्थ में सर्वाधिक समावेशी और आधारभूत है कि इसका उद्देश्य सिद्धांतों के ऐसे एकल पुंज (set) को विलग करना होता है जो सामाजिक जीवन की आधारशिला हैं। इन सिद्धांतों के माध्यम से आपके लिये प्रत्येक सामाजिक तथ्य की व्याख्या करना संभव है। इनके निदर्शनों (paradigms) से ही विशाल (grand) सिद्धांतों का जन्म होता है। विकासवादी सिद्धांत विशाल सिद्धांतों का एक उदाहरण है। इस सिद्धांत में हमें समाज के स्वरूप और हमारी अपेक्षा के अनुरूप रूपांतरणों के स्वरूप से जुड़े व्यापकीकरण की चर्चा मिलती है। इस सिद्धांत का जीवन की दैनिक यथार्थता से मिलान किया जाये तो एक मोटे-मोटे भाव के अलावा इसमें किसी प्रकार भविष्यवाचिता नहीं दिखाई देती। विशाल सिद्धांत के बनाने का अंतिम महत्वपूर्ण प्रयास सोरोकिन (1962) ने किया था। सोरोकिन के सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन के सिद्धांत में दो मूल नियमवत व्यापकीकरणों को स्थापित करने का प्रयास किया गया था (देखें सोरोकिन के विशाल सिद्धांत (grand theory) की विस्तृत जानकारी के लिए ज़ेटरबर्ग 1965: 15-16)।

पिटरिम सोरोकिन
(1910-2003)

MAADIYAM IAS

विशाल सिद्धांत बनाने की प्रतिक्रिया स्वरूप, पिट्रिम सोरोकिन के विद्यार्थी, रॉबर्ट के मर्टन (1957: 5-10) ने मध्यम श्रेणी के यथार्थमूलक सिद्धांतों की रचना की। आप कह सकते हैं कि ये लघु सिद्धांत या आंशिक सिद्धांत हैं। इन सिद्धांतों में विशिष्ट लेकिन मोटेतौर से एक में से निकली दूसरी, तीसरी घटनाओं या विशिष्ट प्रकारों वाली सामाजिक प्रक्रिया को समझाने का प्रयास किया जाता है। जब सिद्धांत विशिष्ट को आंशिक या मध्यम श्रेणी या लघु का नाम दिया जाता है तो हमारा आशय है कि यह सिद्धांत अन्य मान्य सिद्धांतों का खंडन नहीं करता। ऐसे मध्यम श्रेणी के सिद्धांतों के उदाहरण हैं परेटो का संभ्रांतवर्ग का सिद्धांत (देखें फ़ाइनर 1966), मर्डक (1975) का नातेदारी संरचनाओं का सिद्धांत, होमान्स (1950) का प्रारंभिक सामाजिक व्यवहार का सिद्धांत।

राबर्ट के. मर्टन
(1910-2003)

पर सिद्धांत चाहे विशाल हो या मध्यम श्रेणी का हो, यह एक आवश्यकता है क्योंकि सिद्धांत यथार्थ को समझने के काम को सरल बनाता है। सिद्धांत यथार्थ को समझने का माध्यम है। अर्थात् इसमें ऐसी सुस्पष्ट और सुसम्बद्ध (compact) व्याख्याएं होती हैं जिन्हें ज्ञात व्याख्यात्मक (known explanatory) ढांचे में रखा जा सकता है। इस संदर्भ में आप ज़िमेल (1898: 829-836) के कथन का उदाहरण लें। ज़िमेल ने कहा था कि "... केवल अत्यधिक विविध विषय वस्तुओं के ऐसे सामाजिक तथ्यों

जार्ज सिमेल
(1858-1918)

को एकत्रित करके, और यह निर्धारित करके कि उनमें विविधता के बावजूद सामान्य क्या है, सामाजिक तथ्यों के नियमों की खोज की जा सकती है।" ज़िमेल (1858-1918) का पूर्वाग्रह है कि समाजशास्त्र के लिये छोटी संख्या में प्रज्ञप्तियों की खोज करना संभव है। विविध संदर्भों में इन प्रज्ञप्तियों को सत्यापित किया जा सकता है। इस अर्थ में, समाजशास्त्रीय सिद्धांतवादियों का काम है सामान्य प्रज्ञप्तियों की खोज करना। ऐसे प्रयास से व्यवस्थित रूप से परस्पर सम्बद्ध प्रज्ञप्तियों की उत्पत्ति होती है। केवल ऐसी प्रज्ञप्तियों को अस्तित्त्व में लाने के बाद ही सिद्धांत विशेष की जाँच हो सकती है। सिद्धांत विशेष की जाँच के लिए हमें यह जाँचना होगा कि सिद्धांत की प्रत्येक प्रज्ञप्ति कितनी अच्छी तरह से विषय-सामग्री की पुष्टि करती है (देखें प्राक्कल्पना, विवरण और प्रयोग पर आगे दी गई चर्चा)। मज़े की बात यह है कि अक्सर बात बिल्कुल उल्टी होती है और सामाजिक शोध में अधिकांश शोधकारों द्वारा सामग्री पहले इक्ट्ठी की जाती है और बाद में अपनी सामग्री का अर्थ निकालने के लिए सिद्धांतों की तलाश की जाती है।

वस्तुतः, बहुधा अनुभवजन्य सामग्री एकत्रित करने के कार्य का चरमोत्कर्ष तब होता है जब शोधकार का प्रयास होता है कि वह उपलब्ध सिद्धांतों के मद्देनज़र अपनी सामग्री का अर्थ निकाले। यदि यह कार्य सफलतापूर्वक पूरा हो जाये तो समझा जाता है कि सामग्री की व्याख्या हो गई। परंतु, यदि सामग्री सिद्धांत को नकारती या उसका खंडन करती है तो विद्यमान सिद्धांत की पुनर्रचना या पूर्णतः नवीन सिद्धांत की रचना के लिए ऐसी सामग्री से आधार मिल जाता है। उदाहरणार्थ नव-विकासवादी सिद्धांत जैसे लेज़ली व्हाइट (1945, 1947 और 1959) के सिद्धांत में हमें विकासवादी सिद्धांत का रूपांतर देखने को मिलता है। पहले तो प्रकार्यात्मक सिद्धांत ने विकासवादी सिद्धांत का खंडन किया, उसके बाद प्रकार्यवादी सिद्धांत का खंडन नवविकासवादी सिद्धांत ने किया।

लेज़ली व्हाइट
(1900-1975)

MAADHYAM IAS

यथार्थ की व्याख्या वाले पहले काम के अलावा सिद्धांत का दूसरा कार्य है, ऐसी प्राक्कल्पनाएं (hypotheses) बनाना जिनका परीक्षण किया जा सके। आइए अब इस प्रक्रिया की विस्तार से चर्चा करें क्योंकि यह जानकारी सभी नये शोधकारों को अपनी शोध परियोजना प्रारंभ करने में सहायक होगी।

3.5 प्राक्कल्पना, विवरण और प्रयोग

सिद्धांत विशेष अपने आप में ही एक अमूर्त प्रज्ञप्ति है जिसका परीक्षण नहीं किया जा सकता। यह भी सच है कि आगमनात्मक प्रक्रिया से ही सिद्धांत का निर्माण होता है, भले ही यह सिद्धांत निगमनात्मक अनुभवजन्य पद्धति पर आधारित हो। सिद्धांत का काम होता है परीक्षणीय (testable) प्राक्कल्पना की उत्पत्ति करे। सिद्धांत की विश्वसनीयता उसकी प्राक्कल्पनाओं की परीक्षणीयता में निहित है। विकासवादी सिद्धांत के बारे में संदेह तब शुरू हुआ जब यह अनुभव किया गया कि इसके द्वारा उत्पन्न प्राक्कल्पना, को अनुभवजन्य रूप से सिद्ध नहीं किया जा सकता था उदाहरणार्थ मातृसत्ता पहले थी या पितृसत्ता थी – इसे अनुभवजन्य रूप से सिद्ध करना असंभव है। इसके अलावा, इन प्राक्कल्पनाओं को सिद्ध करने के लिए प्रयुक्त शोध पद्धति भी संदेहजनक थी। सिद्धांत द्वारा प्रजनित प्राक्कल्पना वास्तविकता के जितने निकट हो वह सिद्धांत उतना ही बेहतर माना जाता है।

सारे शोधों का लक्ष्य प्राक्कल्पना परीक्षण नहीं होता। सामाजिक विज्ञानों में तो ख़ासतौर से वर्णनात्मक शोध भी होता है जिसका लक्ष्य अभी तक अज्ञात क्षेत्रों की खोज करना होता है।

एक प्राक्कल्पना अध्ययन किए जाने वाले तथ्यों के बीच केवल तार्किक संबंध स्थापित करती है और यह खुद में यथार्थ का विवरण नहीं है। प्राक्कल्पना हरेक मौजूदा वास्तविक तथ्य से मेल नहीं खाती है। उदाहरणार्थ, शहरीकरण के कारण संयुक्त परिवार का विघटन होता है – यह प्राक्कल्पना परिवार के विशिष्ट रूप और शहरीकरण के बीच एक तार्किक संबंध है जो केवल यह व्यक्त करता है कि शहरीकरण अपनी यथातथ्य परिभाषा के संदर्भ में जिन बातों का पक्षधर है वह उन सभी बातों के विरुद्ध है जिनका संयुक्त परिवार समर्थन करता है, अतः यह मानना तर्कपूर्ण है कि बढ़ते शहरीकरण के साथ-साथ संयुक्त परिवारों के टूटने की काफ़ी संभावना है। लेकिन यह कथन सभी संयुक्त परिवारों के वास्तविक रूप से टूटने के बारे में निर्धारणात्मक कथन नहीं है। यह केवल इस यथार्थ को व्यक्तिवाद और प्रतियोगिता जैसे मूल्यों या मनःस्थितियों को पोषित करता है। ये मूल्य उन भावनाओं से कांफ़ी भिन्न हैं जो परिवारों को एक साथ बांधे रखती हैं। इस अर्थ में, प्राक्कल्पना एक निगनात्मक (deductive) कथन होता है जिसे आगनात्मक (inductive) रूप से सिद्ध किए जाने की ज़रूरत होती है।

सिद्धांतों को निर्मित किए जाने के विविध तरीक़े पूछे गए प्रश्नों के प्रकार और उन मूल धारणाओं या आधारिकाओं पर निर्भर करते हैं जिन्हें हर प्रकार की स्थिति में नियत या प्रदत्त (given) सत्य के रूप में माना जाता है। ऐसे कोई निर्धारित नियम या विधियाँ नहीं हैं जिनके द्वारा हम वैज्ञानिक् जाँच पड़ताल प्रारंभ कर सकें और अक्सर अपनी आवश्यकताओं के अनुसार विधियों को निर्मित करना पड़ता है। उदाहरणार्थ, जिन विद्वानों ने संस्कृति और व्यक्तित्व उपागम (approach) का विकास किया था उन्हें अपनी खुद की तकनीकें विकसित करनी पड़ीं, जैसे बच्चों की चित्रकारी का संग्रहण, सपनों की रिकॉर्डिंग, (Rorschach ink-blot) परीक्षण आदि। ये विधियाँ समाजशास्त्रीय या मानवशास्त्रीय क्षेत्र कार्य में पहले कभी भी प्रयुक्त नहीं की गई थीं।

MAADHYAM IAS

सामाजिक विज्ञानों में सिद्धांत निर्माण के मोटे रूप से दो तरीक़े हैं। एक तरीक़ा है जो समाजशास्त्रों में सिद्धांत निर्माण के लिए प्राकृतिक विज्ञानों को आदर्श (मॉडल) के रूप में मानता है, अर्थात् इसमें समाज और मानवीय व्यवहार के बारे में सर्वव्यापी नियमों और अपरिवर्ती सत्यों की प्रत्याशा की जाती हैं। दूसरा दृष्टिकोण मानव के सृजनात्मक और विविध स्वभाव के कारण ऐसे 'सत्यों' को कभी भी स्थापित करने की संभावना से ही इन्कार करता है। यह दृष्टिकोण इस विचार का समर्थक है कि समाज और मानवीय व्यवहार से संबंधित सभी प्रेक्षण ऐतिहासिक रूप से मौजूदा मानव समूहों के संदर्भ में किये जाते हैं और इन्हें कभी भी सार्वभौमिक नहीं कहा जा सकता है। यद्यपि प्रथम दृष्टिकोण का एक यह रूपांतर (modification) है कि सामाजिक विज्ञान उतने ही निर्दिष्ट या अनिर्दिष्ट हैं जितने प्राकृतिक विज्ञान क्योंकि प्राकृतिक विज्ञानों द्वारा बनाई गई प्रतिज्ञप्तियों का भी अक्सर सीमित उपयोग ही होता है और उनमें भी समय-समय पर रूपांतर होता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि खुद विज्ञान की परिभाषा की समीक्षा का प्रयास होता रहता है।

सामाजिक विज्ञान प्रयोगात्मक किस्म के सार्वभौमिक नियमों को प्रस्तुत के लायक़ क्यों नहीं हैं? इस प्रश्न का उत्तर देने हेतु अनेकों समस्याओं को सूचीबद्ध किया जा सकता है। इनमें से एक है – नियंत्रित प्रयोग करने में समाजशास्त्रियों के सामने आने वाली कठिनाई। आइए इस समस्या पर विचार करें।

3.6 नियंत्रित प्रयोग

प्राक्कल्पना का परीक्षण करने हेतु नियंत्रित प्रयोगों की व्यवस्था करने की संभावना का अभाव पहली समस्या है। वास्तविक रूप से नियंत्रित स्थिति वह है जिसमें शोधकार जब चाहें परिवर्तियों (variables) को इधर-उधर कर सकें। सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए

नैतिक और आचारशास्त्रीय प्रतिबंधों के कारण इस तरह परिवर्तियों को इधर-उधर करना संभव नहीं है। लेकिन कभी-कभार ऐसी मौजूदा स्थितियों में प्रयोग करने का प्रयास किया गया है जो नियंत्रित तुलनाओं की विशेषताओं को प्रदर्शित करती हैं (देखें अभ्यास सोचें और करें 3.3 में इसका एक उदाहरण)।

सोचें और करें 3.3

नियंत्रित तुलना का एक उदाहरण ऐप्सटाइन (1979) द्वारा किया गया दक्षिण भारत में दो गाँवों का अध्ययन है। निम्नलिखित अनुच्छेद में यह वर्णन किया गया है कि ऐप्सटाइन ने समरूप स्थितियों के अध्ययन में केवल एक परिवर्ती के सिवाय हर तरह से तुलना करने की शोध पद्धति का उपयोग कैसे किया।

नियंत्रित तुलना का वर्णन

वंगाला और डलेना नामक दोनों गाँव संस्कृति, सामाजिक प्रतिमानों और सामाजिक संबंधों की संरचना की दृष्टि से समरूपी थे। ऐप्सटाइन की प्राक्कल्पना उस समय प्रचलित संरचनात्मक प्रकार्यवादी मॉडल पर आधारित थी। यह मॉडल सामाजिक संरचना के विविध अंगों के बीच अन्योन्याश्रयता (interdependence) को मान्यता देता था। ऐप्सटाइन ने प्राक्कल्पना दी कि बाहरी प्रौद्योगिकी को लाने से आर्थिक आयाम प्रभावित होगा और फलस्वरूप समाज के विभिन्न भागों के बीच पहले से स्थापित समन्वयपूर्ण अन्योन्याश्रयता विचलित हो जाएगी। चुने गए दोनों गाँवों के प्रौद्योगिकीय आधार अलग-अलग थे। एक सूखा गाँव था जो सिंचाई के लिए पूरी तरह से बारिश पर निर्भर था और दूसरे गाँव में सिंचाई हेतु तालाबों और कुँओं के स्थायी जल स्रोत थे। 1931 में बने कृष्णराज सागर बाँध से जल प्राप्त होने से दोनों गाँवों में परिवर्तन आए। पहले से जल-स्रोत युक्त गाँव वंगाला में बेहतर सिंचाई सुविधाओं और नक़दी फसल को ज़्यादा उगाने से नगदी आगत बढ़ गई और फलत: उस गाँव की सामाजिक संरचना के पूर्व स्वरूप और अधिक सुदृढ़ हो गए। बढ़ते आर्थिक निवेश के फलस्वरूप पुराने संरचनात्मक तत्व जैसे जाति, तमाम अनुष्ठानों का निष्पादन और जाति तथा ग्राम पंचायतों की भूमिका का प्रबलीकरण क़ायम रहे। लेकिन इस गाँव में नूतन कुछ भी नहीं हुआ, यहाँ तक कि बिजली भी नहीं आई। दूसरी ओर सूखे गाँव डलेना की आर्थिक भूमिकाओं और संबंधों में अधिक क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। यद्यपि यह गाँव नक़दी फसल उगाने की ओर नहीं बढ़ सका, परंतु यहाँ के लोग ग़ैर-कृषिक गतिविधियों की ओर अग्रसर हुए। वे नौकरियों और शिक्षा के लिए पास के शहरों में जाने लगे और संरचनात्मक रूप से गाँव अपने पुराने स्वरूप से भिन्न हो गया। अपने अनुसंधान में ऐप्सटाइन यह दिखा सकीं कि एक से आर्थिक परिवर्तन, अर्थात् बांध से सिंचाई, से दो गाँवों में (जो वैसे तो समरूपी हैं परंतु जिनके संसाधन आधार अलग-अलग हैं) एकदम अलग-अलग परिणाम सामने आये। दोनों गाँव तुलनीय हैं क्योंकि वे एक ही क्षेत्र के हैं, उनकी संस्कृति समान है और प्रारंभ में उनकी सामाजिक संरचना भी एक ही प्रकार की थी। परिवर्तन का बाहरी स्रोत भी समरूपी है, केवल प्रौद्योगिकी का एकमात्र परिवर्ती भिन्न था।

आपको क्या करना है?

ऊपर दिये उदाहरण को ध्यानपूर्वक पढ़िए और सामाजिक विज्ञानों में ऐसी ही एक और नियंत्रित तुलना का चयन करिये। एक अलग कागज़ पर अपनी चयनित नियंत्रित तुलना का विवरण लिखिए। यह विवरण उपर्युक्त उदाहरण के समान हो ताकि अध्ययन किए जा रहे सामाजिक प्रतिरूपों की व्याख्याएं प्रदान करने में प्रयुक्त सैद्धांतिक संदर्भ और प्राक्कल्पना की विशिष्टताएं ज्ञात हो सकें। इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली (15 जून 1996) और द ईस्टर्न एन्थ्रोपोलॉजिस्ट 53 (1-2) 2000 के विशेष अंकों में दिए गए लेखों में से संभव उदाहरण की खोज करिए।

एक परिवर्ती के सिवाय हर तरह से समरूपी दो क्षेत्र-स्थितियों के अध्ययन में कुछ समय तक नियंत्रित तुलना करने की शोध पद्धति काफ़ी लोकप्रिय रही। इन तुलनाओं में उस

MAADHYAM IAS

विधि का अनुपालन किया गया जिसे जॉन स्टुअर्ट मिल (जीवन-काल 1806-1873) ने **सहमति की विधि** या **भिन्नता की विधि** कहा था। इस विधि में दो स्थितियाँ एक परिवर्ती को छोड़कर हर तरह से भिन्न थीं या एक को छोड़कर हर तरह से एकसमान थीं। मिल (1930) के अनुसार ऐसी स्थितियाँ कभी भी स्वाभाविक रूप से या अनचाहे रूप से कभी नहीं पैदा हो सकतीं और चूंकि व्यापकीय नियमों के बनाने हेतु ऐसी स्थितियाँ ज़रूरी थीं, सामाजिक विज्ञान में इस तरह की तुलनाएं संभव नहीं हो पाईं। मिल की आलोचना यह है कि सर्वाधिक कठोर प्रयोगात्मक स्थिति के अंतर्गत भी ऐसी आदर्श स्थिति प्राप्त ही नहीं की जा सकती क्योंकि हर स्थिति में कुछ परिवर्ती ऐसे जुड़े हो सकते हैं कि यदि एक में बदलाव होगा तो दूसरा स्वतः ही बदलेगा।

जॉन स्टुअर्ट मिल (1806-1873)

3.7 प्रयोग का रूपांकन

प्रयोगशाला में वास्तविक प्रयोग का उपयोग करके सिद्धांत निर्माण प्रक्रिया भी प्रचलित थी। ऐसी विधियां अक्सर मनोविज्ञान और यहाँ तक कि संस्कृति व्यक्तित्व, समाजीकरण और बाल-पोषण जैसे विषयों के अध्ययनों में आमतौर पर प्रयुक्त होती हैं। प्रयोग वाले समूह में जो घटता है उसकी तुलना नियंत्रण (control) समूह में घटित से की जाती है। यहाँ 'नियंत्रण' से तात्पर्य है कि एक तत्व स्थायी रूप से हो जबकि दूसरे भले ही बदल जायें। बस इसमें कमी यह है कि प्रयोगशाला स्थितियों में अधिकांश सामाजिक परिस्थितियों को दुबारा नहीं पैदा किया जा सकता है। कभी-कभी प्राकृतिक स्थितियों से पैदा होने वाले परिवर्तन प्रयोगशाला में कृत्रिम रूप से तैयार की गई स्थितियों की तुलना में कहीं ज़्यादा विशाल होते हैं। प्रयोग की स्थितियों की तुलना में वास्तविक जीवन में भावप्रवणता बहुत तीव्र होती है। ऐसी परिस्थितियों में अभिनय का घटक भी प्रवेश कर सकता है। शोध क्षेत्र में ऐसी प्रयोगशालाजनक स्थिति देखी जा सकती है जहाँ वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में परिवर्तियों की जाँच हो सकती है, जैसे कक्षा में या फ़ैक्टरी में।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

लेकिन सामाजिक विज्ञान में सिद्धांत अधिकांशतः तथ्य विशेष का दूसरे पर या सामान्यतः समाज पर पड़ने वाले प्रभावों को देखने की दिशा में ही होता है। एक विशिष्ट परिवर्ती को चुना जा सकता है जैसे दहेज या फ़ैक्टरी का निर्माण (भवन) या क्षेत्र विशेष में टेलीविज़न का आगमन। तदुपरान्त इस समाज में परिवर्ती के प्रवेश से हुए प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। कुछ अन्य प्रकार के अध्ययन प्रतिरूप विशेष के प्रभावों की बजाय उसके कारणों की ओर निर्दिष्ट हो सकते हैं। जैसे बालिका-हत्या के कारणों का पता लगाने का प्रयास करना। प्राक्कल्पना की सहायता से ऐसे अध्ययनों को दो प्रकारों से प्रस्तुत किया जा सकता है। एक है जिसमें अध्ययन किये जाने वाले प्रतिरूप तथा कारण की तरह प्रस्तुत परिवर्तियों (variables) के बीच संबंध को बताया जाता है। दूसरा प्रकार है कि यह पूर्णतः अन्वेषणात्मक अध्ययन हो सकता है जिसमें क्षेत्र विशेष में पहली बार जाकर अध्ययन किया जा रहा है। ऐसा अध्ययन प्रायः मार्गदर्शी (pilot) अध्ययन के प्रकार का होता है जो प्राक्कल्पना निर्धारित करने से पूर्व किया जाता है। लेकिन अन्वेषणीय (exploratory) विवरणात्मक प्रकार की पूरी शोध-कृति भी हो सकती है। उदाहरण के लिए, देखें एम. एन. श्रीनिवास की रचना, द रिम्मेंबर्ड विलेज (1976)।

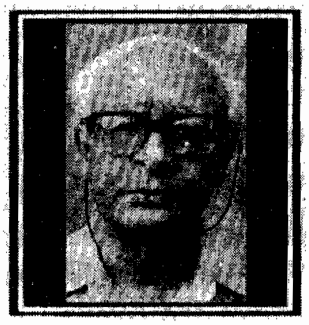

एम एन श्रीनिवास (1916-2000)

3.8 प्राक्कल्पना प्रमाणित करना

प्राक्कल्पना प्रमाणीकरण शोध के लिये हमारे पास सर्वप्रथम एक सिद्धांत का होना अनिवार्य है क्योंकि प्रस्तावित संबंध का स्वरूप अंततः सिद्धांत से ही निकलता है। सिद्धांत भिन्न-भिन्न प्रतिरूपों के बीच आधारभूत तर्क प्रदान करता है। इन संबंधों के बीच सत्य की प्रामाणिकता हेतु प्राक्कल्पनाएं सृजित की जाती है। इसलिए तार्किक प्रक्रिया की विशुद्धता अर्थात् उस सिद्धांत की ज़रूरत होती है जिसने प्राक्कल्पनाओं को जन्म दिया है।

प्रत्येक प्राक्कल्पना में कम से कम दो प्रतिरूपों के बीच संबंध के बारे में कथन होता है। इनमें से एक प्रतिरूप वह है जिसका कारण बताने का प्रयास हो रहा है, जैसे कि बालिका हत्या। दूसरा प्रतिरूप है जो अध्ययनगत प्रतिरूप को प्रभावित करता है या उत्पन्न करता है। पहले प्रतिरूप को पराधीन परिवर्ती (variable) और दूसरे प्रतिरूप को स्वतंत्र परिवर्ती कहते हैं।

उदाहरण के लिए यदि हम यह प्राक्कल्पना प्रतिपादित करें कि बालिका हत्या का कारण माँ की निरक्षरता है तो बालिका हत्या पराधीन परिवर्ती है और माताओं की साक्षरता का स्तर स्वतंत्र परिवर्ती है। प्राक्कल्पना को प्रमाणित करने हेतु इस प्राक्कल्पना को हमें ऐसी स्थिति में जाँचना होगा जो इसे झुठला सकती हो। यदि इसे झुठलाने के प्रयास में सफलता नहीं मिलती तो प्राक्कल्पना सच्ची प्रमाणित होती है। उपर्युक्त उदाहरण में हमें प्रशिक्षित महिलाओं की जनसंख्या विशेष में बालिका हत्या की दर का अध्ययन करना होगा। यदि चुनी हुई प्रशिक्षित महिलाओं की जनसंख्या हमारे उदाहरण में भी तक़रीबन उतनी बालिका-हत्याएं पाई जाती हैं जितनी निरक्षर महिलाओं की जनसंख्या में तो कहना होगा कि प्राक्कल्पना सही नहीं है। दूसरे शब्दों में कहें कि जहाँ तक बालिका हत्या का संबंध है महिलाओं की साक्षरता एक महत्वपूर्ण परिवर्ती नहीं है। दूसरी ओर यदि शिक्षित महिलाओं के उदाहरण में बालिका हत्या की दर बहुत कम है तो कहा जायेगा कि इस अध्ययन में प्राक्कल्पना प्रमाणित है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

उपर्युक्त उदाहरण में आधारभूत सामग्री के लिये सांख्यिक़ी का सहारा लिया जा सकता है। लेकिन सामाजिक विज्ञान के सारे परिवर्ती सांख्यिकीय रूप से नहीं मापे जाते। इसके लिये हमें सामग्री को निगमनात्मक प्रक्रिया से मापना होगा और अपने लिए एक मानदंड निर्धारित करना होगा अथवा अन्य अध्ययनों से प्राप्त मानदंड पर आश्रित होना होगा।

आइए अब परिवर्तियों और सिद्धांतों के बीच संबंध को समझने के लिए सोचें और करें 3.4 का अभ्यास पूरा करें। अभ्यास के उपरांत, हम प्राक्कल्पना का परीक्षण करने की सामान्य विधियों की चर्चा करेंगे।

सोचें और करें 3.4

अब महिलाओं को प्रस्थिति की परिवर्ती का उदाहरण लें। इस परिवर्ती के लिये संख्यागत माप है। लेकिन अन्य समाजशास्त्रियों द्वारा वर्णित सैद्धांतिक कथनों से भी इसे मापा जा सकता है। अपने प्रेक्षणों के आधार पर या प्रश्नावली में दिये प्रश्नों के उत्तरों या अधिक व्यावहारिक रूप में विभिन्न तकनीकों को मिला-जुलाकर भी इस परिवर्ती को मापते हैं। उदाहरण के लिए महिलाओं की प्रस्थिति का निर्धारण इस पर निर्भर करेगा कि हमने किस सिद्धांत को लिया है।

आपको क्या करना है?

नीचे दिये युग्मों (pairs) में मिलान करें और बतायें कि कौन सा सिद्धांत किस परिवर्ती पर बल देकर महिलाओं की प्रस्थिति निर्धारित करता है?

	सिद्धांत		जिस पर बल दिया गया है
i)	मार्क्सवादीय महिलावादी सिद्धांत	क)	लैगिकता, व्यक्तिगत स्वतंत्रताएं, चयन के अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता इत्यादि
ii)	क्रांतिकारी महिलावादी सिद्धांत	ख)	प्रतीकात्मक और आनुष्ठानिक अभिव्यक्तियाँ
iii)	व्याख्यात्मक सिद्धांत	ग)	आर्थिक परिवर्तियाँ जैसे सम्पति का उत्तराधिकार, स्वामित्व के विन्यास इत्यादि।

3.9 प्राक्कल्पना प्रमाणीकरण की सामान्य विधियाँ

यहाँ हमने प्राक्कलन को प्रमाणित करने की तीन विधियों का अवलोकन किया है।

i) परीक्षणोतर निदर्शन (paradigm) का पूर्व-परीक्षण करना

प्राक्कल्पना प्रमाणीकरण की एक आम विधि है कि परीक्षणोत्तर (post-testing) निदर्शन का पूर्व परीक्षण किया जाये। (यदि आप जानना चाहें कि निदर्शन का क्या मतलब है तो कोष्ठक 3.1 देखें)।

कोष्ठक 3.1: निदर्शन क्या है?

निदर्शन अंग्रेज़ी शब्द पैराडाइम का हिंदी रूपांतरण है। पैराडाइम शब्द का शब्दकोश में दिया गया अर्थ है उदाहरण (example) या विन्यास (pattern)। हमने यहाँ रिटज़र (1983: 432) की तरह बताए गए अर्थ का उपयोग किया है। रिटज़र का कथन है "विज्ञान के अंतर्गत विषय-वस्तु की मूल छवि को निदर्शन कहते हैं।

- किस चीज़ का अध्ययन करना चाहिए। निदर्शन से निम्नलिखित को परिभाषित किया जाता है।
- कौन से प्रश्न पूछने हैं?
- किस तरह प्रश्न पूछने हैं?
- प्राप्त उत्तरों की व्याख्या हेतु किन नियमों का पालन किया जाये?

निदर्शन विज्ञान के तहत् सर्वसम्मति की सबसे व्यापक इकाई है और यह एक वैज्ञानिक समुदाय को दूसरे समुदाय से अलग करने का कार्य करता है। विज्ञान में पाई जाने वाली मिसालों, सिद्धांतों और विधियों तथा उसके उपकरणों को निदर्शन समाहित करता है, परिभाषित करता है और उन्हें परस्पर संबंद्ध करता है।"

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

हम पूर्व-परीक्षण पर अपनी चर्चा को जारी रखें। हमें परिवर्ती का सूत्रपात करने से पहले और सूत्रपात के बाद क्षेत्र का अध्ययन करना है। उदाहरणार्थ सड़क के निर्माण अथवा चुनाव या महामारी जैसी किसी घटना के पश्चात गांव का अध्ययन। ऐसे निदर्शन में ख़तरा यही है कि बदलावों के लिए उत्तरदायी होने वाली विचाराधीन परिवर्ती के बारे में सुनिश्चित नहीं हुआ जा सकता है। उसमें सदैव अन्य कारकों के होने की समस्या बनी रहती है। अध्ययन के 'पूर्व और पश्चात' उदाहरणों के लिए कोष्ठक 3.2 देखें।

कोष्ठक 3.2: श्रीवास्तव (2004: 10-11) में दिए गए 'पूर्व और पश्चात' अध्ययनों के उदाहरण

तथाकथित 'पूर्व और पश्चात' अध्ययनों को शास्त्रीय प्रायोगिक रूपांकन (design) का विकल्प माना जाता है। ऐसे अध्ययनों में स्वतंत्र परिवर्ती के सूत्रपात से पहले और बाद में एक प्रतिरूप का अध्ययन किया जाता है। दोनों स्थितियों की तुलना से हमें परिवर्तन के बारे में पता लगता है। एफ़ स्टुअर्ट चैपिन्स (1963) ने मिन्नेपोलिस में सार्वजनिक आवास के अध्ययन में ऐसे अध्ययनों को 'पश्चाददर्शी (ex-post facts) शोध' की संज्ञा दी। भारतीय संदर्भ में, कई शोधकारों ने ऐसे समुदायों पर काम किया है जो विकास परियोजनाओं के (बांध निर्माण, खनन, उद्योग जैसे परियोजनाओं) के फलस्वरूप विस्थापित हो गए हैं। उन्होंने पश्चाद्दर्शी शोध के दृष्टिकोण को अपनाया है (देखें द ईस्टर्न एन्थ्रोपॉलजिस्ट के सन 2000 53 (1-2) के 53वें खंड के 1 तथा 2 अंक।)

ii) स्थैतिक समूह तुलना निदर्शन

स्थैतिक (static) समूह तुलना निदर्शन में, एक ही क्षेत्र की पहले और बाद की स्थिति का अध्ययन करने की बजाए दो मिलती-जुलती क्षेत्र-स्थितियों का वर्णन किया जाता है। एक तो स्वतंत्र परिवर्ती के सूत्रपात के साथ और दूसरा स्वतंत्र परिवर्ती के सूत्रपात के बिना। उदाहरण के लिए दो समरूपी पड़ोसी गांवों में से एक में टेलिविजन की पहुँच है लेकिन दूसरे में नहीं है। ऐसे गांवों की तुलना करके टेलिविजन देखने के प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है। क्या आपको यह उदाहरण पहले उद्धृत स्कार्लेट ऐप्स्टाइन के शोध की याद दिलाता है?

iii) असमान नियंत्रण समूह निदर्शन

असमान नियंत्रण समूह निदर्शन में परिवर्ती के सूत्रपात के पहले और बाद की एक ही क्षेत्र स्थिति में तुलना की जाती है। लेकिन उस क्षेत्र से भी तुलना की जाती है जिसमें परिवर्ती का सूत्रपात नहीं हुआ, परंतु जो अन्य सभी पक्षों में समान है।

MAADHYAM IAS

उदाहरण के लिए जब दो समरूपी गांवों का अध्ययन किया गया हो और फिर उनमें से एक में स्कूल जैसी महत्वपूर्ण सुविधा आ गई हो तो स्कूल का प्रभाव देखने के लिए दोनों गांवों का फिर से अध्ययन किया जाये। इस बार देखना होगा कि बिना स्कूल वाले गाँव की तुलना में स्कूल वाले गांव में स्कूल का क्या प्रभाव पड़ा।

लेकिल यहाँ ग़लती होने का सबसे आम स्रोत होगा यह न पहचानना कि बाह्य परिवर्ती का सूत्रपात करने हेतु चयनप्रक्रिया तो पहले से ही चालू हो जाती है। उदाहरण के लिए, जनसंख्या का माप विशेष या जाति संघटन इस बात के लिए उत्तरदायी हो कि एक गांव में स्कूल आया और उन तत्त्वों के अभाव में दूसरे गांव में स्कूल न आया हो। ऐसी ग़लती की संभावना को दूर करने के लिए चौथे निदर्शन का सहारा लेना होगा और इसको ही असमानीय नियंत्रण समूह निदर्शन कहते हैं।

यहाँ हर चीज़ तीसरे निदर्शन की भांति होती है सिवाय इसके कि क्षेत्र स्थितियों को बेतरतीब ढ़ंग से चुना जाता है और न कि चुन करके। परंतु ऐसा करना तभी संभव है जब बेतरतीब चयन करने की संभावना पर्याप्त क्षेत्र स्थितियों में मौजूद हो और शोधकार की ऐसी क्षेत्र स्थिति के चयन तक पहुंच हो। ऐसे निदर्शन को तभी लिया जा सकता है जब स्थितियों की संख्या अधिक हो और वे समान रूप से उपलब्ध हों। मान लीजिए आपको दिल्ली के सैकेंडरी स्कूलों में कम्प्यूटरों की शुरुआत करने के प्रभावों का अध्ययन करना है। बेतरतीब रूप से प्रतिदर्श (sample) चुनने में सबसे प्रत्यक्ष हानि यह है कि शोधकार को संभवतः अपेक्षित परिणाम नहीं मिल पाता। वस्तुतः ऐसी विधियां मात्रात्मक शोध के लिए ज़्यादा उपयोगी होती है।

3.10 वैकल्पिक व्याख्याओं के प्रति संवेदनशीलता

शोध करते समय इकाई के पिछले भागों में चर्चित अनेक निदर्शनों का उपयोग करते हुए एक तथ्य अवश्य ध्यान में रखना आवश्यक है कि सामाजिक विज्ञानी को वैकल्पिक व्याख्याओं की विद्यमानता के प्रति संवेदनशील होना है। भले ही शोध की प्राक्कल्पना प्रमाणित हो चुकी हो तब भी अपनी दृष्टि में लचीलेपन की जगह कठोरता रखना किसी भी प्रकार का सदगुण नहीं है क्योंकि जीवन के यथार्थ की स्थितियों का सामाजिक विज्ञान शोध जटिल और बहुपक्षीय ही होता है।

3.11 प्रतिद्वन्द्वी प्राक्कल्पना निर्माण

शोध को प्रभावशीलता का परीक्षण करने के लिये प्रतिद्वन्द्वी प्राक्कल्पना निर्माण एक मानकीय क्रिया विधि है। चार मुख्य प्रतिद्वंद्वी प्राक्कल्पनाओं के आधारस्वरूप निम्नलिखित चार कारक हैं।

i) चयन के प्रभाव

ii) प्रतिक्रियात्मक माप प्रभाव

iii) अनियंत्रित बाह्य परिवर्तियों के प्रभाव

iv) चयन को सम्मिलित करने वाले अंतःक्रिया प्रभाव

आइए अब प्रत्येक कारक की चर्चा करें।

i) चयन के प्रभाव

चयन का प्रभाव तब पड़ता है जब परिवर्ती का सूत्रपात करने के लिये अध्ययनगत समूह तुलना करने वाले समूह से उसी आधार पर भिन्न हो जिस पर उसे परिवर्ती के लिये चुना गया है या नहीं चुना गया है। जैसा कि हमने स्कूल वाले उदाहरण में देखा कि प्रभुत्व जाति/वर्ग के लोगों और उनके विशिष्ट प्रभाव के कारण गांव विशेष में स्कूल खुल गया हो। इस तरह यह वर्ग-लाभ का बिंदु स्थिति में पहले से ही मौजूद था, न कि स्कूल आने के प्रभाव को केवल बेहतर स्वच्छता के प्रति जागरूकता या चिकित्सा सुविधाओं के बेहतर उपयोग इत्यादि के रूप में देखा जाये।

MAADIYAM IAS

ii) प्रतिक्रियात्मक माप प्रभाव

दूसरी प्रतिद्वंद्वी प्राक्कल्पना स्थिति तब हो सकती है जब माप प्रक्रिया मात्र से क्षेत्र में परिवर्तन आने लगें। उदाहरण के लिए जैसे जब दिल्ली के छात्र-छात्राओं को गांवों में क्षेत्र आधारित सामाजिक शोध के लिए जाना होता है तो पता चलता है कि शहरी अभिजात्य अथवा मध्य वर्ग से आने वाले इन छात्र-छात्राओं के प्रति गांव वालों के अपने परिप्रेक्ष्य होते हैं और गांव वालों के उत्तर इन परिप्रेक्ष्यों से प्रभावित हो सकते हैं। और कभी-कभी गांव वालों का व्यवहार विन्यास भी प्रभावित हो जाता है। उदाहरण के लिए जब शोधकार वहाँ मौजूद है तो संभवतः ग्रामीण शहरी कपड़े पहनें या आधुनिक औषधियों में ज़्यादा विश्वास प्रदर्शित करें।

iii) अनियंत्रित बाह्य परिवर्तनों के प्रभाव

तीसरी प्रकार की ग़लती अनियंत्रित बाह्य परिवर्तियों के सूत्रपात से होती है अर्थात वे परिवर्तियाँ जो अनदेखी कर दी गई थीं अथवा शोध के दौरान उनका सूत्रपात हुआ था।

iv) चयन को संम्मिलित करने वाले अंतःक्रिया प्रभाव

चौथे प्रकार की ग़लती तब होती है जब चयन प्रक्रिया और बाह्य परिवर्तियाँ दोनों एक साथ विद्यमान होते हैं।

प्राक्कल्पना परीक्षण की हमारी चर्चा वह प्रक्रिया है जो शोधकार्य में शोधकार को एक कदम आगे ले जाती है। यह विज्ञान के संगठित संशयवाद का एक उदाहरण है। दूसरे शब्दों में आपका कहना हो सकता है कि यह अनुभवजन्य सत्यापन के बिना ही किसी भी कथन को रद्द किए जाने को दर्शाता है। कई शोधकार्य प्राक्कल्पना परीक्षण की प्रक्रियाओं पर आधारित हैं और आगमनात्मक विश्लेषण के परिणामस्वरूप को मध्यम श्रेणी के कई सिद्धांत उभरे हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण रॉबर्ट के मर्टन (1950) की "द अमेरिकन सोलजर" रचना है जिसमें मर्टन ने व्यक्त और अव्यक्त प्रकार्य के सिद्धांत को विकसित किया।

सामाजिक विज्ञानों में प्रबल सैद्धांतिक विश्लेषण प्रस्तुत करने के प्रयासों को हालांकि सदैव संशयवाद का सामना करना पड़ा क्योंकि परिणाम विरले ही नियम की प्रस्थिति प्राप्त कर पाते हैं। लेकिन ऊपर उद्धत मर्टन के मध्यम श्रेणी के सिद्धांत सामाजिक व्यवहार के बारे में भले ही पूर्वानुमान न लगा पायें परंतु सामाजिक व्यवहार की व्याख्या करने में अत्यधिक प्रभावशाली हो सकते हैं।

3.12 सामाजिक विज्ञान सिद्धांत का उपयोग और कार्य-क्षेत्र

सामाजिक विज्ञान शोध का अत्यधिक उल्लेखनीय पहलू यह है कि अक्सर शोध अपने आप में मानव व्यवहार को परिवर्तित करने का एक माध्यम रहा है। यदि लोगों को विनाशकारी या संभवतः विघटनकारी व्यवहार के प्रति सचेत किया जाए तो उनके द्वारा अपने व्यवहार को सचेतन रूप से बदला जाता है (देखें पाठ्यक्रम परिचय में वर्णित एम.एस.ओ.-002 का तर्काधार और उद्देश्य)। इस तरह, सामाजिक विज्ञानों में अध्ययन करने वालों तथा जिनका अध्ययन किया जा रहा है उनके बीच एक सक्रिय अंतःक्रियात्मक संबंध होता है। उदाहरण के लिए यदि बच्चे के लालन-पालन की कुछ पद्धतियों को बच्चे के सामान्य विकास के लिए हानिकारक दर्शाया जाता है तब तर्क करके उनको बदला जा सकता है अथवा उनका परित्याग किया जा सकता है। पद्धति विशेष के कुप्रभावों पर अध्ययन के पूर्वानुमानों को कभी-कभी शोध दौरान ही पलटा भी जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

समाजशास्त्र और नृशास्त्र में हुए अनेकों शोध व्यक्त एवं अव्यक्त प्रकार्यों या मानव क्रियाओं के अनचाहे परिणामों को उजागर करने की दिशा में किये गए हैं। एक बार लोगों के सामने आने के बाद प्रकार्य अव्यक्त या अनचाहे नहीं रहते और प्रायः कर्ता स्वयं ही पुराने सोचने के तरीक़ों को विस्थापित कर देते है। उदाहरण के लिए, भारत के शहरों में अब विवाह उतना धार्मिक व पवित्र अनुष्ठान नहीं माना जाता है जितना पिछली पीढ़ी में माना जाता था। अधिकांश लोगों द्वारा विवाह को परिवार के एकत्रित होने या सामाजिक संबंधों को मज़बूत बनाने, सामाजिक भाईचारा बढ़ाने का अवसर माना जाता है। पहले ज़माने में, विवाह के ये प्रकार्य केवल सामाजिक विश्लेषणकर्ताओं को ही अधिक दृष्टिगोचर होते थे किंतु अब आम लोगों में भी ये विचार काफ़ी सामान्य रूप से प्रचलित हो गये हैं।

कई विद्वानों को अब यह संभव लगता है कि मानव व्यवहार के आत्मपरक (subjective) आयाम जैसे मनःस्थितियाँ, मनोभाव, भावनाएं और मूल्य आदि संवेदी (sensory) अनुभूति के लिए सुलभ हैं और इसीलिए ये बाहर से प्रेक्षित सामग्री का हिस्सा बन जाते हैं। ऐसे विषयों के बारे में हमारे निष्कर्ष या तो जानकारी देने वालों की बातों पर आधारित होते हैं अथवा स्वयं को लोगों की जगह रखकर समझने की प्रक्रिया पर आधारित होते हैं। रोसाल्डो (1984) ने अपने लेख "दि रेज ऑफ हैड हंटर" में बताया है कि कैसे अपनी पत्नी मिशैल रोसाल्डो की मृत्यु पर महसूस की मनोव्यथा का विश्लेषण करने हेतु स्वयं को उसने नरशिकारी (headhunter) के स्थान पर रखा। इस प्रकार सामाजिक वैज्ञानिक ने मानव होने के नाते आत्मपरक अनुभवों की भाषा में सामाजिक क्रिया की व्याख्या की और दूसरों की भावनाओं तथा अभिप्रेरणाओं को समझा है।

दूसरी ओर यह भी अनुभव किया गया कि तथ्य विशेष को समझने के लिए मानसिक रूप से स्वयं को कर्त्ताओं या करने वालों की जगह रखना ज़रूरी नहीं है। उदाहरण के लिए आत्महत्या का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करने के लिये किसी भी बिंदु पर शोधकार को आत्मघाती होने की कोई ज़रूरत नहीं है। परंतु तथ्य का बाहरी रूप से देखकर विश्लेषण करने और ज़्यादा आत्मवाचक प्रकार के विवरणात्मक कार्य करने में निश्चित रूप से गुणात्मक अंतर है।

सभी प्रकार के मानव व्यवहार आत्मपरक नहीं होते और व्यवहार के कई मूर्त और दृष्टिगोचर परिणाम हैं जिन्हें मापा जा सकता है और जिनका अध्ययन किया जा सकता है। सिद्धांत निर्माण का एक वैकल्पिक ढंग व्यवहारवादियों ने प्रस्तुत किया। व्यवहारवादियों ने आत्मपरक समझ में अंतर्निहित अस्पष्टता के कारण उसे भ्रामक ठहराया। एक चरम व्यवहारवादी भले ही सभी आत्मपरक और आंतरिक मनःस्थितियों का खंडन करे लेकिन अधिकांश शोधकारों ने संवर्धित (modified) रूप को वरीयता दी है। यहाँ लोगों द्वारा दी गई अंतर्दर्शनीय (introspective) सामग्री को सामग्री मानकर उसका विश्लेषण किया जाता है। यह उस उपागम के समान है जिसमें क्षेत्र में विभिन्न जानकारी देने वालों के परस्पर विरोधी विचारों का सामग्री के रूप में विश्लेषण किया जाता है, जैसे विभिन्न शक्तिमानतापूर्ण पद जिनपर संघर्षरत अस्मिताएं विराजमान हों। अपनी चर्चा के इस बिंदु पर, हमें इस प्रश्न पर भी ग़ौर करना है कि शोधकार के मूल्यों का सिद्धांत निर्माण पर क्या प्रभाव पड़ता है?

3.13 सिद्धांत-निर्माण और शोधकार के मूल्य

इस इकाई के अंतिम बिंदु पर हमारी चर्चा केंद्रित होगी कि सिद्धांत निर्माण की प्रक्रिया में सामाजिक विज्ञानी के मूल्य किस सीमा तक प्रवेश करते है या दूसरे शब्दों में हमें सामाजिक विज्ञानपरक शोध के मूल्योन्मुखी स्वरूप पर विचार करना है। निम्नलिखित चार बिंदुओं के स्तर पर मूल्यों का प्रवेश होता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

i) समस्याओं का चयन

ii) निष्कर्षों के विचार तत्वों का निर्धारण

iii) तथ्यों को पहचानना

iv) प्रमाण का निर्धारण

आइए, सामाजिक शोध में शोधकारों के मूल्यों के प्रत्येक प्रवेश बिंदु पर चर्चा करें।

i) समस्याओं का चयन

विषय-वस्तु का चुनाव करने में कई विचार सामाजिक वैज्ञानिक का मार्गदर्शन करते हैं, जिनमें से उसका अपना मूल्य अभिविन्यास (value orientation) एक विचार है, जैसे एक महिलावादी की रुचि महिलाओं की समस्याओं पर शोध करने में होगी या एक मार्क्सवादी की रुचि कृषि संबंधों या कारखानों में श्रमिक के शोषण जैसे विषयों पर शोध में होगी। इसके साथ जिस ढंग से अवधारणा निर्मित की जाती है वह भी शोधकार के आत्मपरक अभिविन्यास पर निर्भर करता है, जैसे संस्कृति की अवधारणा या महिलाओं की प्रस्थिति किस आत्मपरक अभिविन्यास पर निर्धारित की जाये ये शोधकार पर ही निर्भर करता है।

ii) निष्कर्षों के विचार तत्वों का निर्धारण

निष्कर्षों के विचार तत्वों का निर्धारण एक ऐसी चीज़ है जिस पर लगभग सभी सिद्धांतों की समीक्षा आधारित होती है। यह देखा गया है कि अधिकांश सामाजिक वैज्ञानिकों के वास्तविकता के स्वरूप के बारे में सुनिर्मित विचार होते हैं और उन्हीं विचारों को सिद्ध करने

का उनका प्रयास होता है। अधिकांश शोध का लक्ष्य वह सही या ग़लत सिद्ध करना है जो शोधकार को सहजबोध रूप से पहले ही मालुम है।

इसके अलावा समाज के संबंध में व्यापक हितों और अक्सर आचार-विचार संबंधी तथा नैतिक दृष्टिकोणों का उस सिद्धांत में प्रवेश हो जाता है जिसे सही या ग़लत सिद्ध करने का प्रयास हो रहा है। उपनिवेशी शासन के दौरान अधिकांश नृशास्त्रियों ने साम्यवस्था (equilibrium) को समाजों की स्वाभाविक दशा के रूप में लिया और उनके सिद्धांत यह प्रदर्शित करने की दिशा में लगे थे कि ऐसी साम्यवस्था को कैसे बनाए रखा जाता है। साम्यवस्था में किसी भी प्रकार के विघटन को उन्होंने विकृत दशा के रूप में लिया। समाजशास्त्रियों और नृशास्त्रियों और प्रशासकों के मूल्य-अभिविन्यास एक ही हो गये और प्रायः नृशास्त्री व प्रशासक एक ही व्यक्ति भी होते थे। अन्यथा नृशास्त्री प्रशासक के अधीन काम करता था। प्रशासकों का लक्ष्य अपने-अपने उपनिवेशों में साम्यावस्था स्थापित करना था। इसलिए साम्यवस्था एक वांछित दशा भी थी और विद्वानों ने भी इसे इसी दृष्टि से देखा।

iii) तथ्यों को पहचानना

तथ्यों और मूल्यों के बीच अंतर करना असंभव नहीं है और भले ही सामाजिक वैज्ञानिकों के मूल्यों में असंगति हो तब भी सैद्धांतिक समझ को बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, मार्क्सवादियों जैसे कट्टर विचारधारा वाले सामाजिक वैज्ञानिकों के योगदान को अभी भी पर्याप्त सैद्धांतिक महत्व प्राप्त है। विशेषतः यदि उन्होंने अपने मूल्य-अभिविन्यासों को तर्क की सीमाओं के भीतर रखा हो।

समकालीन सिद्धांत में एक अन्य उपाय का सहारा लिया जाता है। वह है किसी भी कार्य के मूल्य-अभिविन्यास पूर्वतः स्पष्ट कर दिए जायें ताकि पाठक भ्रम में न पड़े और सिद्धांत के अभिविन्यास के संदर्भ को समझ सके। उदाहरणार्थ इस उपाय से प्रयुक्त शब्दों और अवधारणाओं की मूल्यांकनगत विशेषता के कारण सामाजिक विज्ञानों में आने वाली कठिनाईयों का ध्यान भी रखा जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

यह सदैव स्पष्ट नहीं होता कि तथ्यों और मूल्यों के बीच सुनिश्चित रूप से क्या अंतर है। उदाहरण के लिए 1970 के दशक में एक विशेष प्रकार के पारिस्थितिकी उपागम के तहत् समुदाय और उसके आवास के बीच संबंधों का पता लगाने के लिए संसाधन-उपयोग के अध्ययन पर अत्यधिक ध्यान केंद्रित किया गया। प्रायः इसके पीछे संसाधन उपयोग को अधिक से अधिक बढ़ाने का लक्ष्य था। लेकिन पर्यावरणविद्ों की अन्य विचारधारा ने आवास के लिए प्रयुक्त हो रहे 'संसाधन' शब्द का ज़ोरदार खंडन किया क्योंकि यह शब्द अपने आप में पर्यावरण के प्रति शोषित रवैये को प्रतिबिंबित करता है। ऐसे व्यक्ति पर्यावरण को मानव समुदायों द्वारा उपयोग के लिए संसाधन के रूप में भले ही न मानें, लेकिन उसे ऐसी वस्तु के रूप में अवश्य देखते हैं जिसे स्वयं अपने लिये अस्तित्व में रहने का अधिकार है। इस दूसरी विचारधारा के अनुसार संसाधन उपयोग को अधिक से अधिक बढ़ाना सकारात्मक लक्ष्य होने की जगह नकारात्मक लक्ष्य हो जाता है। इसके अलावा नृजातिविवरण लिखते समय लेखक को दयालु या क्रूर जैसे शब्दों का प्रयोग करने का प्रलोभन हो सकता है हालांकि दोनों शब्दों को मूल्य-संरचना के संदर्भ के बिना नहीं समझा जा सकता। समकालीन नृजातिविवरणों में सामान्यतः सचेतन रूप से ऐसे शब्दों का प्रयोग न करने की प्रवृति है। प्रयास होता है कि क्रियाओं का विस्तृत विवरण देने की जगह इसे पाठक पर छोड़ दिया जाये ताकि पढ़ने वाले अपने निर्णय स्वयं लें या ऐसे शब्दों का प्रयोग करें जिन्हें काम करने वालों ने अपने कार्यों के लिये निर्धारित किया है।

iv) प्रमाण का निर्धारण

सदैव यह अंदेशा रहता है कि केवल निष्कर्ष ही नहीं बल्कि सामग्री के मूल्यांकन की प्रक्रिया भी प्रायः मूल्यों से लदी होती है। कुछेक प्रकार की सामग्री को सामाजिक विज्ञानियों ने केवल अंतर्निष्ठ (innate) मूल्य-अभिविन्यासों (value orientations) के कारण पूर्णतः अनदेखा कर दिया हे। उदाहरण के लिए महिलावादी विद्वानों का आरोप था कि पुरुष विद्वानों ने महिलाओं की गतिविधियों और समाज में उनकी भूमिका को केवल अपने पितृतंत्रात्मक नज़रिये के कारण अनदेखा किया। क्या आपको यह उदाहरण इकाई 2 में वर्णित वीनर के ट्रोब्रिएंड आग्लैंडर्स के अध्ययन की याद नहीं दिलाता? इसी तरह दलित विद्वानों ने अक्सर यह आरोप लगाए हैं कि उच्च जाति के विद्वानों ने प्रायः भारत में समाज को हिंदू दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया और ऐसा करने के लिए उन्होंने चयनात्मक रूप से अध्ययन सामग्री का उपयोग किया।

यहाँ तक कि सांख्यिकीय विश्लेषण में मूल्य-प्रतिबद्धताओं को नकारा नहीं जा सकता। लेकिन मूल्य-प्रतिबद्धताएं भी दो प्रकार की हैं – छिपी हुई और प्रकट। उदाहरण के लिए मलिनॉस्की ने भले ही जानबूझ कर यह ग़लती न की हो लेकिन कुछ शोधकारों ने उन पर एक परिणाम विशेष के लिए सामग्री में जोड़-तोड़ करने का आरोप लगाया है।

जिससे बिल्कुल बचा नहीं जा सकता वह है सामाजिक शोधकार के लिये अपने देश-काल के ऐतिहासिक तथा तात्कालिक प्रभावों से अछूता रहना संभव नहीं है। अगली इकाई में काफ़ी विस्तार से हमारी चर्चा मानव समाज के इतिहास की देन अर्थात् वैज्ञानिक विचारधारा के विकास पर होगी। विश्व की घटनाएं और बौद्धिक वातावरण के स्वरूप में बदलाव वे निर्धारक कारक हैं जिन्हें सिद्धांत-निर्माण के तरीके में शामिल करना ही होगा।

3.14 निष्कर्ष

MAADHYAM IAS

मानव इतिहास और मानव-ज्ञान जटिल रूप से एक दूसरे से जुड़े हुए है और इसी तरह हमें ज्ञान का समाजशास्त्र मिला है। इसी कारण विषय विशेष का इतिहास सदैव पाठ्यचर्चा का अभिन्न अंग रहा है।

यदि हमने समाजशास्त्रीय ज्ञान के आत्मपरक स्वरूप को माना है तो क्या यह समझा जाये कि केवल विचारधारा को प्रस्तुत करने वालों के अनुयायियों को ही सिद्धांत को समझने की क्षमता मिलती है? समस्या का आंशिक समाधान संबंधात्मक निरपेक्षता या संबंधवाद (relationalism) की अवधारणा से हुआ। इसमें सामाजिक विज्ञानियों ने शुरू में ही विश्लेषण के लिए प्रयुक्त अपने नज़रिए को स्पष्ट कर दिया है ताकि पाठकों के लिए निष्कर्षों को संदर्भ के अंतर्गत रखना संभव हो सके और वे अपने-अपने निष्कर्ष निकाल सकें। यहाँ बात यह है कि उस मूल मान्यता को स्पष्ट किया गया है जिस पर सिद्धांत निर्मित हुआ है। अन्य विद्वानों पर है कि वे सामग्री को इस आधार पर स्वीकार या अस्वीकार करें कि मूलभूत आधारिकाएं स्वीकार्य हैं या नहीं। उदाहरण के लिए मातृतंत्र या पितृतंत्र मानव समाज की प्रारंभिक अवस्था थी या नहीं इस पर समग्र विवाद केवल तभी सार्थक है जब हम मानव समाजों के क्रमिक विकास की मूलभूत आधारिका (premise) को स्वीकार करें। यदि हमें यह आधारिका ही स्वीकार नहीं तो समूचा विवाद ही निरर्थक हो जाता है।

यदि हमें उपर्युक्त मार्ग को स्वीकार नहीं है तो सामाजिक विज्ञानों में केवल वही व्यापक मान्यता वैध हो सकती है जो सांख्यिकीय व्यापकीकरण (generalisation) वाली है। उदाहरण के लिए यह तथ्य लें कि बालिका हत्या दरों में 1950 से 2004 के बीच बढ़ोतरी

हुई है। लेकिन ऐसे व्यापकीकरण को सिद्धांत नहीं कहा जाता। ये केवल सिद्धांत का आधार निर्मित करते हैं और जब सांख्यिकीय व्यापकीकरणों से सिद्धांत निर्मित होता है तब भी विभिन्न व्याख्याओं की पर्याप्त संभवना मौजूद रहती है।

हमारी चर्चा में समाजशास्त्र के सैद्धांतिक विश्लेषण का अब इकाई 4 में विहंगम अवलोकन होगा। यह देखा जायेगा कि कालांतर प्रमुख आधारिकाओं में क्या-क्या बदलाव हुए हैं।

3.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

कैप्लन, अब्राहम 1964, *दि कन्डक्ट ऑफ इन्क्वायरी* / चैंडलरः लंदन। (सामाजिक प्रतिरूप पर शोध के तर्क के विस्तृत अध्ययन के लिए)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 4
सैद्धान्तिक विश्लेषण

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 विकासवादी और प्रकार्यवादी सिद्धांतों की आधारिकाएँ

4.3 विकासवादी और प्रकार्यवादी सिद्धांतों की मीमांसा

4.4 प्रकार्यवाद से मुँह मोड़ना

4.5 प्रकार्यवाद के बाद क्या

4.6 उत्तर-आधुनिकतावाद

4.7 उत्तर-आधुनिकतावाद के अतिरिक्त अन्य प्रवृत्तियां

4.8 निष्कर्ष

4.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपके लिये निम्नलिखित विषयों पर चर्चा करना संभव होगाः

- विकासवादी और प्रकार्यवादी आधारिकाओं और उनकी मीमांसा के संदर्भ में एकत्रित सामग्री का सैद्धांतिक विश्लेषण;
- उन्नीस सौ अस्सी और नब्बे के दशकों में आत्मपरकता और आत्मवाची चिंतन के पक्ष में अनुभवजन्य दृष्टिकोण का परित्याग; तथा
- उत्तर-आधुनिकतावाद का उद्भव परंतु भारत सहित अधिकांश क्षेत्रों में तथ्यान्वेषण की पुरानी शोध-पद्धति का अनुपालन।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

4.1 प्रस्तावना

इकाई 3 में हमने चर्चा की थी कि सिद्धांतों में उन मूल या प्रमुख आधारिकाओं के अनुसार अंतर होता है जिन पर वे टिके होते हैं। आधारिकाएँ ऐसी नियत दशाएं या सार्वभौमिक सत्य हैं जिन्हें शोध समस्या का निर्माण करते समय या सामाजिक तथ्य विशेष हेतु व्याख्या की तलाश करते समय हमने पहले से ही मान लिया होता है। सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए दृष्टिकोणों की इकाई 3 में की सामान्य चर्चा को जारी रखते हुए हमने इकाई 4 में सामाजिक विज्ञानों में मोटे-मोटे रूप से और समाजशास्त्र में विशिष्ट रूप से सैद्धांतिक विश्लेषण की वृद्धि के बारे में विवेचना करते हुए इस वर्णन का समापन किया है।

इस कथा का प्रारंभ हमने विकासवादी सिद्धांत से किया है और तत्पश्चात् प्रकार्यवादी और संरचनात्मक प्रकार्यवादी उपागमों की ओर क़दम बढ़ाये हैं। विकासवादी और प्रकार्यवादी सिद्धांतों की संक्षिप्त मीमांसा के पश्चात् हमने समाजशास्त्र और नृशास्त्र के विषयों में उत्तर-आधुनिकतावाद के उदय का "प्रस्तुतीकरण के संकट" के संदर्भ में निरूपण किया है। बीसवीं शताब्दी के अस्सी और नब्बे के संशयग्रस्त दशकों में अमेरिकी और यूरोपीय सामाजिक विज्ञानों में शोधग्रंथ रचयिता और ग्रंथ की प्रामाणिकता के बीच संबंध पर गहन चिंतन शामिल किया गया था और साथ में अनुभवजन्य उपागम का परित्याग करते हुए आत्मपरकता और आत्मवाची चिंतन पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया गया।

इकाई 4 में दिए गए विवरण से आपको उत्तर-आधुनिक विद्वानों और उनके विचारों से परिचय का अवसर मिलेगा। अंत में, हमने भारत में समाजशास्त्र में शोधपद्धतिगत वर्तमान रुझानों पर संक्षेप में जानकारी प्रस्तुत की है।

4.2 विकासवादी और प्रकार्यवादी सिद्धांतों की आधारिकाएँ

एक ओर यह माना गया कि समस्त उन्नीसवीं शताब्दी में मानव जाति समान गुणों वाली है तो दूसरी ओर स्थानिक (spatial) अंतर को कालिक (temperal) अंतर में परिवर्तित करके मानवीय सामाजिक संस्थाओं और संस्कृतियों में विभिन्नताओं की समस्या की व्याख्या दी गई। दूसरे शब्दों में कहा गया कि विभिन्न समाज इसलिए भिन्न-भिन्न थे क्योंकि विकास की सीढ़ी में उनके स्थान अलग-अलग अवस्थाओं में थे। यही विकासवादी सिद्धांत था जिसका पूर्वाग्रह था कि क्रमिक रूप से प्रगति होती है और मानव समाज का सीढ़ी दर सीढ़ी विकास होता है। इस सिद्धांत के अनुसार समाज को मानव अस्तित्व की एकीकृत वास्तविकता के रूप में देखा गया। साथ में संस्कृति का भी समस्त मानवता के लिए एक समान स्वरूप माना गया। विविध समयों और क्षेत्रों में बदलती संस्कृतियाँ केवल विकास के क्रम में एक पिछड़ी या उन्नत अवस्था मात्र मानी गईं। इस दृष्टिकोण से सभी मानव समाज एक समान हैं। जो अंतर हमें दिखाई देता है वह एक सांयोगिक कारक है जहाँ कुछ समाजों का विकास अवरुद्ध है तो कुछ का अधिक प्रगतिशील है। कुछ समाज दूसरे समाजों का अतीत हैं और कुछ सभी का भविष्य हैं। प्रगति के इस अंतर्निहित विचार के कारण सामाजिक विज्ञानों में "आदिम समाज" जैसी शब्दावली प्रारंभ हुई। जिन समाजों को 'आदिम' कहा गया वे शब्दशः आधुनिक कहे जाने वाले समाजों का अतीत माने जाते थे। इस प्रकार अन्य संस्कृतियों के अध्ययन से अभिप्राय था अपने अतीत में झाँकना।

विकासवादी सिद्धांत इस आधारिका पर बना था कि सामाजिक तथ्य विशेष के घटित होने की प्रक्रिया को मानव समाजों के अतीत के संदर्भ में रखकर समझाया जा सकता है। यह पूर्वाग्रह था कि इस अतीत को उन समाजों में खोजा जा सकता था जो भौतिक रूप से तो वर्तमान में मौजूद थे लेकिन सांस्कृतिक रूप से किसी पहली समय अवधि में अवरुद्ध थे। "हमारे आदिम समकालीन" शब्दावली का प्रयोग सांस्कृतिक रूप से अवरुद्ध समाजों के लिए किया गया था।

उपरोक्त सिद्धांत के बाद अठारहवीं शताब्दी के प्रत्यक्षवाद और जैव सादृश्य से उद्जनित प्रकार्यवाद का सिद्धांत सामने आया। मानव समाज और संस्कृति के एकीकृत रूप में बोध और परिवर्तन में न होकर प्रकार्यवाद सिद्धांत की मूल आधारिकाएं सापेक्षवाद (relativism) और अन्योन्याचितता (interdependence) में थीं। प्रकार्यवादी सिद्धांत के अनुसार यह माना गया कि संस्कृतियाँ बहुल हैं और प्रत्येक संस्कृति अपने आप में अद्भुत है। अब पूछे जाने वाले प्रश्न उद्गम और प्रगति के बारे में नहीं थे बल्कि ये प्रश्न सारे समाज के संचालन में समाज के हर अंग के प्रकार्य तथा योगदान के बारे में थे। सारे समाज तथा संस्कृति को सम्पूर्ण (whole) की संज्ञा दी गई और इस समग्र का अध्ययन इतिहास के संदर्भ के बिना ही केवल वर्तमान के संदर्भ में किया जाता था।

प्रकार्यवादी उपागम में सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए दिया सिद्धांत निश्चल या गतिहीन है। निश्चल या गतिहीन व्याख्या वह है जिसमें सामाजिक परिवर्ती की व्याख्या केवल उसी समयावधि वाले अन्य परिवर्तियों के संदर्भ में की जाती है। यह प्रकार्यवादी सिद्धांत की आधारिका नहीं है कि विचाराधीन तथ्य वस्तुतः गैर-ऐतिहासिक है, बल्कि इस पूर्वाग्रह पर टिकी है कि किसी भी प्रतिरूप को पर्याप्त रूप से समझना तभी संभव है जब स्थितिपरक जानकारियों को इक्ट्ठा किया जाये। प्रकार्यवादी सिद्धांत में पूछे गये प्रश्न

MAADHYAM IAS

विकासवादी प्रश्नों से भिन्न थे। विकासवादी सिद्धांत में मानव समाज की प्रगति को विकास के पैमाने में क अवस्था से ख अवस्था में जाने की तरह देखा गया था। प्रकार्यवादियों ने प्रायः यह बताया कि संस्कृति विशेष में विशिष्ट समयावधि विशेष में समाज के अंग विशेष द्वारा क्या प्रकार्य सम्पन्न होते हैं। जबकि विकासवादी सिद्धांत में, व्याख्या में प्रयुक्त कुछ परिवर्ती उन परिवर्तियों के समय की अपेक्षा पिछली समयावधि वाले होते थे। इस अर्थ में विकासवादी सिद्धांत में उद्गमों और विकास और सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या की गई थी।

कॉम्टे जैसे प्रारंभिक फ्रांसीसी दार्शनिकों की तथा दुर्खाइम से ले कर टाल्कट पार्सन्स तक अनेक समाजशास्त्रियों की रचनाओं से स्पष्ट था कि समाजशास्त्रीय सिद्धांत पर प्रकार्यवाद की गहरी पकड़ हो गई थी। प्रकार्यवाद ने उस समय की मांग को पूरा किया और यह उस जैव सादृश्य (organic analogy) के अनुकूल था जिसका सामाजिक विचारकों, समाजशास्त्रियों और नृशास्त्रियों द्वारा अक्सर समाज और संस्कृति के अध्ययन के लिए उपयोग किया था।

4.3 विकासवादी और प्रकार्यवादी सिद्धांतों की मीमांसा

अक्सर ऐतिहासिक दशाओं के साथ-साथ, विषय विशेष में मान्य आधारिकाओं को समय-समय पर तत्कालीन दार्शनिक विचारों में परिवर्तन की चुनौती का सामना करना पड़ा है। उदाहरणार्थ, 'आदिम' की अवधारणा को चुनौती दी गई और 'सांस्कृतिक सापेक्षवाद' की अवधारणा ने इसका स्थान ले लिया। सभी संस्कृतियों को प्रतिष्ठा और वैधता प्रदान करने में सांस्कृतिक सापेक्षवाद की अवधारणा भले ही प्रशंसनीय थी किंतु अनेकों विद्वानों ने इस अवधारणा पर यह आक्षेप किया कि सापेक्षवाद के नाम पर इस सिद्धांत में यथापूर्व दशा को ही बनाए रखना है। यदि प्रत्येक संस्कृति को कार्य-संचालन की दृष्टि से सम्पूर्ण माना जाये तो इसका आशय निकलेगा कि सभी संस्कृतियों को अकेला छोड़ देना चाहिए। कई विद्वानों ने इस दृष्टिकोण की इस आधार पर आलोचना की कि इस नीति से तो संसार में विद्यमान असमानताएं और अमान्य रूप वाले शक्ति समीकरण स्थायी हो जाएंगे। दूसरी ओर, यह तर्क दिया गया कि प्रत्येक जन समूह को यह अधिकार है कि वह अपनी जीवन यापन की दशाओं में परिवर्तन और सुधार करे तथा बेहतर जीवन की आकांक्षाएं रखे। पारंपरिक असमानताओं और सीमांतीकरण की दशाओं के संदर्भ में तो यह ख़ासतौर से सच है। उदाहरणार्थ क्या अस्पृश्यता की संस्था को इस आधार पर बनाए रखने का समर्थन किया जा सकता है कि इसके कारण स्थायी और प्रकार्यात्मक प्रणाली का संचालन होता है? हेतुवाद (teleology) के शोधपद्धतिगत आधारों (इसका अर्थ जानने के लिए कोष्ठक 3.1 देखिए) और सामाजिक न्याय के नैतिक आधार पर प्रकार्यात्मकता और समन्वय की समूची अवधारणा पर ही प्रश्न उठाए गए। किसी भी प्रतिरूप की प्रकार्यात्मकता से हमें न्याय की गारंटी नहीं मिलती। उदाहरण के लिए, दासप्रथा एक प्रकार्यात्मक प्रणाली ज़रूर थी क्योंकि उसमें बहुत उत्पादकता थी और वह काफ़ी समय सफल भी रही थी, लेकिन केवल प्रकार्यात्मकता के आधार पर दासप्रथा को न्यायपूर्ण कहना अतिशयोक्ति ही कहलायेगी।

कोष्ठक 4.1: हेतुवाद

हेतुवाद से अभिप्राय है प्रतिरूप विशेष के अस्तित्व को इसके द्वारा निष्पादित प्रकार्य के आधार पर न्यायसंगत ठहराना। हेतुवाद का निहितार्थ है कि प्रतिरूप के परिणाम को उस प्रतिरूप के कारण के रूप में समझाने का प्रयास किया जा रहा है। प्रकार्यवादियों ने सामाजिक प्रतिरूपों की व्याख्याएं प्रस्तुत करके बिल्कुल यही काम किया था।

यह बिलकुल स्पष्ट हो गया कि प्रकार्यवादियों द्वारा समाज के बारे में निश्चल या गतिहीन विचार को मानने के सामाजिक नीति की दृष्टि से दूरगामी परिणाम हुए। यह बाद विवाद हुआ कि प्रशासन अपने न्याय क्षेत्र में आने वाले तथाकथित उपेक्षित लोगों के प्रति क्या

MAADHYAM IAS

उपागम अपनाएं। बहुत से विद्वान "परिरक्षण" (preservation) दृष्टिकोण के विरुद्ध थे और अन्य बहुत से "आत्मसात्करण" (assimilation) उपागम के खिलाफ़ थे। यह प्रश्न भी उठाया गया कि सांस्कृतिक सापेक्षवाद की अवधारणा वर्णनात्मक प्राक्कल्पना है या मूल्य-सिद्धांत है। प्राक्कल्पना के रूप में इसका कहना है कि कोई भी मूल्य निर्णय (value judgement) विशिष्ट संस्कृतियों से परे जाकर निरपेक्ष रूप से न्यायसंगत नहीं होते। लेकिन इससे यह संभावना समाप्त नहीं होती कि कुछ मूल्य सभी संस्कृतियों में समान हो सकते हैं। इस अर्थ में, सामाजिक वैज्ञानिकों का कार्य केवल तथ्यों का उल्लेख करना हो जाता है और वे संस्कृतियों के बारे में कोई मूल्य-निर्णय नहीं देते। अधिकांश समाजशास्त्रियों और नृशास्त्रियों द्वारा सामग्री का तथ्यों के रूप में उल्लेख करते समय बहुत सावधानी के साथ 'क्या है' का ही वर्णन किया जाता है और 'क्या होना चाहिए' का नहीं। इस प्रकार की आम रीति के कारण अकसर यह नैतिक प्रश्न उठता है कि क्या जब एक शोधकार के लिये बालिका शिशु हत्या जैसे घृणित प्रचलनों का अध्ययन करते समय उसके लिये मात्र शोधकार रह पाना संभव है? कुछ लोगों की दृष्टि में वैज्ञानिक और शोधकार की भूमिकाओं को अलग-अलग रखना ज़रूरी है और अन्य कुछ लोगों के विचार में वैज्ञानिक की भूमिका के अंतर्गत सक्रियतावाद (activism) की भूमिका को शामिल करना ज़रूरी होता है। समाजशास्त्रीय और नृशास्त्रीय अध्ययन के क्षेत्र में ऐसे प्रश्न विद्यार्थियों को हमेशा ही परेशान करते रहे हैं।

मानव समाजों का अध्ययन करने वाले लोगों के लिये सिद्धांत और आचरण के बीच का अंतराल अक्सर तनाव से भरा होता है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब अधिकांश विद्वानों ने मानव अधिकार और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों पर ध्यान दिया तो काफ़ी हद तक मूल्य तटस्थ सिद्धांतों की जगह समीक्षात्मक सिद्धांत (critical theory) ने ले ली। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि प्रारंभिक सामाजिक चिंतकों के समक्ष भी ये सरोकार नहीं थे। उदाहरण के लिए मार्क्स और अन्य विद्वानों के विचारों में सिद्धांत के सामाजिक आधारों में सामाजिक न्याय से जुड़ा चिंतन भी शामिल था (इसके बारे में इकाई 6 में आपको और अधिक जानकारी मिलेगी)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सामाजिक विज्ञानों के सिद्धांत में बदलती सामाजिक स्थितियों का चित्रण लगातार मिलता रहा है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में परिवर्तन की अवधारणा प्रमुख सैद्धांतिक और नैतिक मुद्दा बन गई थी क्योंकि यह महसूस किया गया कि परिवर्तन हमारी ज़िन्दगियों का अनिवार्य आयाम है। दो विश्व युद्धों, उपनिवेशों से मिली स्वतंत्रता, तीव्रता से होते औद्योगीकरण और पूँजीवादी विस्तार – इन सभी का समाजशास्त्रीय सिद्धांत पर भारी प्रभाव पड़ा। केवल परिवर्तन ही नहीं बल्कि संघर्ष भी सामाजिक विज्ञानों की एक प्रमुख अवधारणा बन गया और इस विषय पर लगातार विवाद बढ़ता गया कि कौन सी दशा मानव समाज की अधिक स्वाभाविक दशा कहलाएगी – समन्वय की या संघर्ष की? डैविड लॉकवुड जैसे आलोचकों की शिकायत थी कि प्रकार्यवाद से तो मानव जगत की केवल काल्पनिक छवि ही अधिक उजागर हुई।

प्रकार्यवादी की एक और आलोचना विज्ञान के स्वरूप और स्वयं यथार्थ के बारे में थी। इसके अनुसार वैज्ञानिक निरपेक्षता का कोई भी दावा खुद ही एक परिनिर्मित प्रतिरूप है और ऐसे परिनिर्माण निरपवाद रूप से कुछ लोगों के शक्ति हितों (power interests) की पूर्ति करते हैं। फूको और ग्राम्सकी के कार्य इस दिशा में अधिक प्रभावशाली थे। दोनों ने शक्तिशाली लोगों द्वारा किये जाने वाले प्रभुत्त्व के विषय पर शोध किया।

4.4 प्रकार्यवाद से मुँह मोड़ना

कार्ल मार्क्स (1818-1883) वह व्यक्ति था जिसके प्रभाव स्वरूप प्रकार्यवादी सिद्धांत से मुँह मोड़ना प्रारंभ हुआ। समाज के स्वरूप के बारे में उसकी मूल धारणा थी कि समाज खुद ऐतिहासिक भौतिकतावाद का उत्पाद है। समाज के बारे में यह धारणा उस विचार के विरुद्ध थी जो समाज को ऐसी समन्वयपूर्ण प्रणाली मानता था जिसका स्थायी विश्लेषण किया जा सकता था। शोध पद्धति के रूप से इतिहास और गतिशील परिप्रेक्ष्य को समाजशास्त्रीय विश्लेषण के लिए अब अनिवार्य समझा जाने लगा था। मार्क्स की रचनाएं (1844, 1857-8, 1859, 1861-79) सामाजिक यथार्थ के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण के विकास हेतु प्रमुख उद्दीपक (stimulant) थीं।

कार्ल मार्क्स
(1818-1883)

बीसवीं शताब्दी के मध्य में सामाजिक वैज्ञानिक सिद्धांत बनाने वाले विद्वानों ने जॉर्ज ज़िमेल (1858-1918) और मैक्स वेबर (1864-1920) के विचारों से प्रेरणा ली। ध्यान रखें कि इतिहास का सही वैज्ञानिक अध्ययन माने जाने वाले मार्क्सवादी सिद्धांत के मूलतः प्रत्यक्षवाद रूप का वेबर ने प्रतिरोध किया था।

मार्क्स का योगदान था – मनुष्यों के कार्यों को प्रदान किए गए यांत्रिक स्वरूप को परे करना और उन्हें अपने भाग्यों को बनाने वाले सक्रिय कर्ताओं या एजेन्टों के रूप में दिखाना लेकिन केवल अपने खुद के इतिहासों के उत्पादों के रूप में। मार्क्स ने इस बात पर दृढ़ता से विशेष बल दिया कि भौतिक जगत में मानव अस्तित्व सामाजिक कार्य का सहायक था न केवल इतिहास बनाने वाले विचारों का ही।

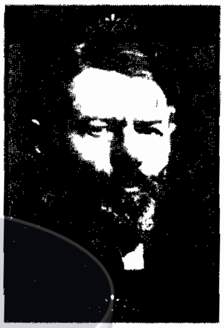

मैक्स वेबर
(1864-1920)

MAADHYAM IAS

आर्थिक संगठनों के महत्व और समाज को आकार देने में धन-संपदा संबंधों और सामाजिक संघर्षों के द्विध्रुवीकरण (bipolarisation) के बारे में प्रत्यक्ष व्यापकीकरण के आधार पर समाज के बारे में मार्क्स की धारणाओं की आलोचना की गई। यह भी माना गया कि समाज में शक्ति आ एकमात्र आधार संपदा नहीं है। उदाहरणार्थ दुमों का मत था कि भारत में जाति प्रथा के संदर्भ में पुजारी की पवित्र शक्ति को राजा की सांसारिक शक्ति से श्रेष्ठ माना जाता था। इसके अतिरिक्त यह भी विवाद का विषय था कि क्या संघर्ष के कारण सदैव सामाजिक परिवर्तन होता है। ग्लकमैन (1965) का उदाहरण लें जिसने यह निष्कर्ष निकाला था कि संघर्ष के प्रकार्य को सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के आधार के रूप में भी देखा जा सकता है। मार्क्स के विचारों के विरुद्ध इन तर्कों के बावजूद, समाज के स्वरूप के बारे में मार्क्स की मुख्य प्रतिज्ञप्तियों का सामाजिक चिंतन पर स्थायी प्रभाव हुआ (देखें इकाई 7)।

मैक्स ग्लुकमैन
(1911-1975)

यह कहा जा सकता है कि उन्नीस सौ साठ के दशक तक समाजशास्त्र एक विषय के रूप में अधिकतर प्रकार्यवाद की छाया में रहा और इसमें दो प्रकार के सिद्धांतों का विकास हुआ। एक थे विशाल (grand) सिद्धांत और दूसरे थे मध्यम श्रेणी के सिद्धांत। विशाल सिद्धांतों में समाज के स्वरूप और इतिहास के बारे में व्यापक सामान्यीकरण थे और मध्यम श्रेणी के सिद्धांतों का स्वरूप अधिक आगमनात्मक था और ये प्रेक्षित तथ्यों के सीमित पुंज के इर्दगिर्द बने थे। मार्क्स का सिद्धांत विशाल प्रकार का उदाहरण है जिसने विश्व की

दशा के बारे में भविष्यवाणी की। बीसवीं शताब्दी के मध्य में टाल्कट पार्सन्स (1902-1979) के प्रकार्यवाद के विशाल सिद्धांत ने समाजशास्त्रीय विचारधार पर प्रभुत्व स्थापित किया। पार्सन्स की रचना स्ट्रक्चर आफ़ सोशल ऍक्शन (1937) बीसवीं शताब्दी की सर्वाधिक प्रभावशाली सैद्धांतिक रचनाओं में से एक है (पार्सन्स के मुख्य तर्क के सार संक्षेप के लिए कोष्ठक 4.2 और उसके कार्य सिद्धांत के सारांश के लिए कोष्ठक 4.3 देखें)।

कोष्ठक 4.2: टाल्कट पार्सन्स का मुख्य तर्क

टाल्कट पार्सन्स (1973) का मत था कि समाजशास्त्र में सिद्धांत की रचना ऐसी महत्वपूर्ण अवधारणाओं की सीमित संख्या के इर्दगिर्द करनी चाहिए जो उद्‌देश्य और बाहरी सामाजिक यथार्थ को गृहण करने में पर्याप्त हों। ये अवधारणाएं विश्लेषणात्मक परिनिर्माण हैं जिन्हें अनुभवजन्य यथार्थ से निकाला जाता है। इस भाँति पार्सन्स ने प्रकृतिवादी/प्रत्यक्षवादी अवधारणात्मक योजनापट को विकसित करने का प्रयास किया। पार्सन्स के सैद्धांतिक विश्लेषण की निर्माण विधि में अंतनिर्हित पूर्वाग्रह यह था कि सामाजिक यथार्थ की व्यवस्थिति नियमितताएं होती हैं जिन्हें विश्लेषणात्मक रूप से समझा जा सकता है। इस के साथ-साथ पार्सन्स ने मानव मस्तिष्क की जटिल प्रतीकात्मक प्रकार्यात्मकता के अस्तित्व का समर्थन किया।

टाल्कट पार्सन्स (1902-1979)

पार्सन्स के कार्य सिद्धांत (कोष्ठक 4.3 देखें और इग्नू के बी.ए. कार्यक्रम के ई.एस.ओ. 13 का खंड 7 भी देखें) का स्वरूप समाकलनात्मक है और उसकी कार्यपरक पूर्वापेक्षाओं की अवधारणाएं देशकाल से मुक्त हैं। वे व्यापक और ऐतिहासिक हैं अर्थात् वे सभी समाजों में हर समय पाई जाती हैं।

कोष्ठक 4.3: टाल्कट पार्सन्स का कार्य सिद्धांत

पार्सन्स द्वारा प्रतिपादित कार्य के संकल्पपरक (voluntaristic) सिद्धांत के मूल में विचारशील और वैयक्तिक कर्ता है जिसकी इच्छा लक्ष्य प्राप्त करना है। लक्ष्य प्राप्ति की इच्छा वाले इस व्यवहार के समक्ष वैकल्पिक साधन हैं और यह व्यवहार अलग-अलग जीवन स्थितियों में होता है। अलग-अलग जीवन स्थितियाँ लक्ष्य प्राप्ति की इच्छा वाले व्यवहार पर प्रतिबंध के रूप में काम करती हैं। कर्ता सदैव मूल्यों, प्रतिमानों और उन विचारों से संचालित होते हैं जो लक्ष्यों के चयन एवं उनको प्राप्त करने के यथोचित माध्यमों को भी प्रभावित करते हैं। अंततः कार्य में कर्ताओं को प्रतिबंध की नियत स्थितियों के अंतर्गत लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनों का चयन आत्मपरक निर्णयों को लेना शामिल होता है। इस सिद्धांत के कई अनुप्रयोग हुए जैसे स्वास्थ्य से जुड़े व्यवहार को समझने में इस सिद्धांत का उपयोग किया गया।

MAADHYAMIAS
'way to achieve your dream'

पार्सन्स के दृष्टिकोण की आलोचना करते हुए गिडन्स (1979: 112) ने टिप्पणी करते हुए कहा कि अल्थज़र के मार्क्सवाद और पार्सन्स के समाजशास्त्र दोनों में समाज का पुनरुत्पादन अभिकर्ताओं (agents) के 'पीठ पीछे' होता है जबकि उन्हीं के आचरण से ही तो समाज का गठन होता है। दोनों के सिद्धांतों में कर्ताओं द्वारा कार्य के तर्क के साथ अपने सोद्‌देश्य आचरण में लगे होने का अभाव है। पार्सन्स के समाजशास्त्र में मूल्य-मतैक्य-प्रतिमान-अंतर्विकसित आवश्यकता-पूर्ति प्रमेय के परिणामस्वरूप ऐसा होता है और अल्थज़र की रचनाओं में उसके एजेन्सी के पूर्वनिर्धारित विवरण के फलस्वरूप ऐसा होता है। इस प्रकार पार्सन्स के उदाहरण में प्रणाली का हेतुवाद कर्ताओं को संचालित करता है या अल्थज़र के उदाहरण में प्रणाली का हेतुवाद खुद ही कर्ताओं का स्थान ले लेता है।

रैडक्लिफ़-ब्राउन (1952) और मलिनॉस्की (1944) के प्रकार्यात्मक सिद्धांतों (इन सिद्धांतों के विस्तृत विवरण के लिए इग्नू के बी ए कार्यक्रम के ई एस ओ-13 के खंड 6 और 7 देखें) की आलोचना यह कहकर की गई कि उनके सिद्धांत सामाजिक यथार्थ को वस्तुतः प्रतिबिम्बित नहीं करते। उन्नीस सौ साठ के दशक में प्रकार्यात्मक उपागम के बारे में दिन प्रतिदिन आलोचना बढ़ती जा रही थी। इस आलोचना के अनुसार समस्थिति (स्थिर स्तर पर बने रहने की दशा) समाज की प्रणाली को प्रकार्यात्मक सिद्धांत का आधार माना गया था और यह केवल कल्पना में हो सकने वाली संभावना थी।

रेमण्ड फर्थ
(1901-2002)

मर्टन, फ़र्थ और लीच द्वारा की गई प्रकार्यवाद की आलोचनाएं प्रकार्यवाद की सीमाओं के अंदर से ही आईं। इन आलोचनात्मक दृष्टिकोणों ने सिद्धांत में अधिक लचीलापन लाने हेतु अवधारणाओं की पुनः व्याख्या की। उदाहरणार्थ मर्टन (1968) ने प्रकार्यात्मक विकल्प, और प्रकार्यात्मक स्थानापन्नता की अवधारणाओं का सूत्रपात किया। इसी प्रकार फ़र्थ (जीवन-काल 1901-2002) ने सामाजिक संगठन की अवधारणा प्रस्तुत की और लीच (जीवन-काल 1910-1989) ने गतिकीय संतुलन की अवधारणा की चर्चा की। इन सभी में व्यापकीकरण की मध्यम श्रेणी पर बल दिया गया था।

ऐडमंड लीच
(1910-1989)

सिद्धांत में दूसरी प्रवृत्ति थी समाज के गतिकीय अवधारणीकरण या विकास की ओर वापसी। निश्चल या गतिहीन को सामाजिक यथार्थ की व्याख्या करने हेतु पूर्णतः अपर्याप्त माना जाने लगा। सामाजिक यथार्थ तो निरंतर बदलता दिखाई दे रहा था। तेज़ी से होते सार्वभौमिक परिवर्तन के युग में समाज की गतिशीलता का विचार पूरी तरह से संस्थापित हो गया।

समाज विज्ञानों में नव-विकासवादी सिद्धांतों के रूप में विकास का पुनःप्रवर्तन हुआ और समाजशास्त्र में निकलस लहमन (जीवन-काल 1927-1998) के लेखनों में सामाजिक प्रणालियों के अध्ययन में पर्यावरण की भूमिका पर विशेष बल दिया गया। ऐसे सभी सिद्धांतों में हमने देखा कि अत्यधिक व्यापकीकरण से हट कर अधिक ठोस और भौतिक दशाओं पर पुनः आने का प्रयास किया गया लेकिन साथ ही साथ मानव समाज के प्रतीकात्मक आयामों को नहीं भुलाया गया। सांस्कृतिक पारिस्थितिकी और लहमन (1998) के सामान्य प्रणाली दृष्टिकोण दोनों में सामाजिक यथार्थ को समझने हेतु पर्यावरण को एक परिवर्ती के रूप में शामिल किया गया। पर्यावरण के प्रति अनुकूलन (adaptation) मुख्य अवधारणा बन गई और दुरनुकूलन (mal-adaptation) को विश्लेषण में शामिल किया गया।

निकलस ल्यूमान
(1910-1989)

सैद्धांतिक विश्लेषण में एक अन्य प्रमुख परिवर्तन इस विचारकी में था कि सामाजिक विज्ञान कभी भी सचमुच प्रत्यक्षवादी नहीं हो सकते। मेक्स वेबर तर्क की इस विधि का एक प्रमुख अनुयायी था (देखें इकाई 7)। प्रत्यक्षवाद से ऊपर उठने के प्रयासों के बावजूद वेबर ने अपने विश्लेषण में व्यापकीकरण को शामिल किया जो इस ओर इंगित करता है कि वेबर को सामाजिक जीवन की नियमितताओं में विश्वास था। नेतृत्व पर वेबर की चर्चाओं और पारंपरिक से तार्किक विधिक नेतृत्व के विकास पर उसकी चर्चाओं में स्पष्ट रूप से ऐसी नियमितताएं मौजूद हैं। आधुनिक समाज की ओर विकास की प्रक्रिया में उसकी आलोचनात्मक

MAADHIYAM IAS
'way to achieve your dream'

अंतदृष्टि - वेबर का एक महत्वपूर्ण योगदान था। विकास के बारे में वेबर का विचार एकपक्षीय प्रगति का काल्पनिक विचार नहीं था। परंपरा के ह्रास को वेबर मानवजीवन के लिए समान रूप से लाभदायक नहीं मानता था। बेते (2004) ने एक ओर वेबर और दूसरी ओर दुर्खाइम और रैडक्लिफ़ ब्राउन के दृष्टिकोणों के बीच उपयोगी तुलना की है जिसमें वेबर (1978: 15) के इन शब्दों को उद्धृत किया है, "हमारे लिये ऐसी चीज़ उपलब्ध करना संभव हैं जो प्राकृतिक विज्ञानों में कभी भी प्राप्त नहीं की जा सकती अर्थात् घटक व्यक्तियों का आत्मपरक बोध"। बेते (2004: 121-122) ने निम्नलिखित टिप्पणी की।

> लेकिन समाज के तुलनात्मक अध्ययन के प्रति उसका दृष्टिकोण दुर्खाइम और रैडक्लिफ़-ब्राउन के दृष्टिकोण से भिन्न था क्योंकि समाज के बारे में उसकी भिन्न अवधारणा थी और समाजशास्त्रीय शोध की सीमाओं और संभावनाओं के बारे में उसका आकलन भी भिन्न था। उसके विचार से समाजशास्त्रीय शोध कारणों और प्रकार्यों से जुड़ा होने के साथ अर्थ से भी जुड़ा था और इस दृष्टि से पर जैव सादृश्य सहायक होने की अपेक्षा बाधक अधिक था।

अब हमारी चर्चा में स्पष्ट किया जायेगा कि यथार्थ को समझने के लिए प्रकार्यवादी दृष्टिकोण का स्थान किसने लिया।

4.5 प्रकार्यवाद के बाद क्या

यह पहले भी बताया जा चुका है कि प्रकार्यवाद से हट कर एक प्रमुख क़दम जो उठाया गया वह था संघर्ष को समाज के केन्द्रीय आयाम के रूप में मानना। उत्तरोत्तर यह पाया गया कि समाज की अवधारणा समन्वय और प्रकार्य की अपेक्षा संघर्ष और प्रतियोगिता के संदर्भ में अधिक परिभाषित होने लगी। शक्ति और व्यक्तिगत तथा समूह हित समाज के अग्रणी बलों के रूप में सहयोग और परोपकारिता से कहीं अधिक महत्वपूर्ण माने जाने लगे।

MAADHYAM IAS

बीसवीं शताब्दी की उत्पीड़क घटनाओं जैसे विश्व युद्धों, उपनिवेशी शासन में जनसंहार, सर्वनाश और सीमांतीकरण, वियतनाम और कोरिया सभी ने मिल कर समाज के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न किया जिसमें कल्पनालोक (utopia) की कोई जगह नहीं थी। जॉर्ज लुकाक्स (1923) और जुगेन हेबरमास (1985) के विचारों वाले सिद्धांत अत्यधिक चिंतनशील थे और इनमें अंतर्आत्मपरकता जैसी प्रक्रियाओं पर विशेष बल दिया गया था। वे विश्व में हो रही अपमानवीकरण प्रक्रियाओं और मानवीय आयाम को नष्ट कर देने में सिद्धांत की भूमिका से अत्यधिक जुड़े हुए थे। विश्व के विभिन्न हिस्सों में दमन और मानव संघर्ष विश्लेषण के मुख्य विषय बन गए (देखें कोष्ठक 4.5 गिडन्स (1978) में उद्धृत लुकाक्स के विचार)।

कोष्ठक 4.5: गिडन्स (1987:235) में उदधृत लुकाक्स के विचार

वेबर और पार्सन्स के बीच में लुकाक्स (जीवन-काल 1885-1971) और फ्रैंकफर्ट स्कूल आते हैं और हेबरमास ने प्रकार्यवादी तर्क की मीमांसा के माध्यम से पार्सन्स के विचारों का विश्लेषण किया। वेबर की तार्किकता की व्याख्या, लुकाक्स की कार्यान्वयन (reification) की चर्चा और होर्खाइमर और एडोर्नो द्वारा रचित साधनस्वरूप (instrumental) तर्क की मीमांसा के बीच स्पष्ट संबंध हैं। ये सभी इस बात से सहमत हैं कि पाश्चात्य समाज के विकास की समग्र प्रवृत्ति में एक प्रसरणशील तार्किकता अंतर्निहित है। तार्किकता की विशेषता पर अलग-अलग बल देने की बजाए इन लेखकों, जैसे वेबर, ने माना कि आधुनिक संस्कृति में उद्देश्यात्मक तर्क किया को प्राथमिकता देने से दैनिक जीवन में नैतिक अर्थ की क्षति और स्वतंत्रता का ह्रास दोनों उत्पन्न होते हैं।

जॉर्ज लुकाक्स
(1885-1971)

हैबरमास (1975) के योगदान का सारांश इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है कि उसने विज्ञान के मानक को उपलब्ध ज्ञान के एकमात्र स्वरूप के तौर पर नकारा। उसके अनुसार तीन प्रकार के ज्ञान हैं: i) अनुभवाश्रित वैश्लेषिक ज्ञान, ii) व्याख्यात्मक ऐतिहासिक ज्ञान और iii) समीक्षात्मक ज्ञान। प्रथम प्रकार के ज्ञान को प्राकृतिक विज्ञान और पारंपरिक समाजशास्त्र में प्रतिपादित किया गया है। दूसरा वह प्रकार है जिसमें ऐतिहासिक पुस्तकों का विश्लेषण करके अर्थ प्रणालियों की व्याख्या करने का प्रयास किया जाता है और तीसरा अर्थात् समीक्षात्मक ज्ञान दमन की स्थितियों को समझने के हमारे प्रयास के फलस्वरूप उभरता है।

सिद्धान्ततः प्रत्यक्षवाद "उच्च आधुनिकवाद" के युग में भी जारी रहा और फ़्रांसीसी संरचनावाद में यह स्पष्ट रूप से विद्यमान है। फ़्रांसीसी संरचनावाद में लेवी-स्ट्रॉस (जीवन-काल 1908-) की रचनाओं का सामाजिक विज्ञान पर स्थायी प्रभाव पड़ा। लेवी-स्ट्रॉस ने अपनी पुस्तक, द ऐलिमैंट्री स्ट्रक्चर्स आफ़ किनशिप में (1949, अंग्रेज़ी अनुवाद 1969 में) संरचनात्मक भाषा विज्ञान के सिद्धांतों से लिए गए चिंतन की संरचनाओं और मानव-मस्तिष्क की आंतरिक संरचना के बीच संबंध को बताया। संरचनात्मक मार्क्सवाद का फ़्रांसीसी रूप मियासु (1981), टेरे (1972), गोदेलियर (1977 और 1986) और अन्य विद्वानों के प्रयास से लोकप्रिय हुआ।

सी लैवी स्ट्रॉस
(1908-)

वस्तुतः सामाजिक सिद्धांत में संरचनावाद बौद्धिक परंपरा के रूप में उभरा। प्रकार्यवाद की भांति संरचनावाद ने दुर्खाइम से प्रेरणा ली। जहाँ प्रकार्यवाद ने जीव-विज्ञान की आधारिकाओं को स्वीकार किया वहीं संरचनावाद ने सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिरूपों की व्याख्या करने के लिए भाषा-विज्ञान के मॉडलों का उपयोग किया।

MAADHYAM IAS

लेवी-स्ट्रॉस की रचनाओं में संरचनावाद और प्रकार्यवाद का मिला-जुला रूप मिलता है। उसने नातेदारी प्रणालियों, टोटेमवाद (कुलचिन्हवाद) और मिथक पर पर्याप्त रूप से लिखा। लेवी-स्ट्रॉस के मिथक के तर्क से जुड़े विश्लेषण ने सामाजिक विज्ञान पर गहरा प्रभाव डाला। विशेष रूप से उसकी संरचना की धारणा की समझ को, अचेतन की अवधारणा और इतिहास के प्रति दृष्टिकोण को सामाजिक यथार्थ समझने हेतु एक प्रमुख नए तरीके के रूप में लिया गया। लेकिन लेवी-स्ट्रॉस (1969: 98) ने अपने शोध-कार्य को केवल एक 'प्रारंभिक प्रयास' की तरह बताया।

अमेरीका में, आधुनिकतावाद की पराकाष्ठा तक पहुंचते-पहुंचते संस्कृति की अवधारणा को सार्वजनिक रूप से साझी प्रतीकात्मक व्यवस्था, वैध और आन्तरिक रूप से अर्थवान समझा गया। गर्ट्ज़ (1975) ने सांस्कृतिक व्यवस्थाओं के अवधारणात्मक निर्माण में घनी विवरण वाली शोधपद्धति अपनाई और यह पद्धति नृशास्त्र में काफ़ी छायी रही। संस्कृति की अवधारणा के प्रति अपने व्याख्यात्मक दृष्टिकोण में गर्ट्ज़ विस्तृत प्रेक्षण और वर्णनात्मक विवरण में जाते हुए नृशास्त्र को कर्ता की दृष्टि से देखने के लिये प्रेरित करता रहा। गर्टज़ ने स्पष्टतः निरपेक्षता और आत्मवाची चिंतन के बीच दोनों की तरफ़ ध्यान देने का समर्थन किया। दूसरों के अनुभवों में गहराई तक जाने के नृजातिशास्त्रीय अनुभव ने उसके विश्लेषण को वह समृद्धता दी जिसने नृशास्त्र पर अत्यधिक प्रभाव डाला।

सी गर्ट्ज़
(1926-)

ऊपर वर्णित प्रवृत्तियों ने सामाजिक यथार्थता के सैद्धांतिक विश्लेषणों को और अधिक बदलाव लाने की ओर बढ़ाया। इस समय सामाजिक जगत को समझने के उत्तर आधुनिकतावादियों के तरीकों में गुणात्मक अंतर दिखाई दिया। अगले भाग में, हमने संक्षेप में उत्तर-आधुनिकतावाद की मुख्य धाराओं को देखा है। अगले भाग में बढ़ने से पहले, आइए सोचें और करें 4.1 को पूरा करें।

सोचें और करें 4.1

हैबरमास (1985) और भाग 4.5 (प्रकार्यवाद के बाद क्या) में वर्णित ज्ञान के तीन प्रकारों को एक बार पुनः पढ़ें और इस पाठ्यक्रम की इकाइयों में वर्णित समाजशास्त्रियों के कार्यों में से ज्ञान के प्रत्येक प्रकार के कम से कम दो उदाहरण दें। इन समाजशास्त्रियों की विभिन्न रचनाओं के शीर्षकों के लिए आपको इस पुस्तक के अंत में दी गई संदर्भ सूची को ध्यानपूर्वक देखना होगा। अपने अध्ययन केंद्र के छात्र-छात्राओं द्वारा दिये गये उदाहरणों के साथ अपने उदाहरणों की तुलना करें और अपने उदाहरणों के चयन के सही होने की जाँच करने के लिए अपने अध्ययन केंद्र में शैक्षिक परामर्शदाता के साथ चर्चा करें।

4.6 उत्तर-आधुनिकतावाद

'श्वेत और पुरुष' के रूप में वैज्ञानिक की छवि (देखें इकाई 2 का अंतिम भाग) के विनिर्मितीकरण (deconstruction) के साथ विश्व भर के सिद्धांत और सामाजिक विज्ञान के सिद्धांत में एक प्रमुख बदलाव आया। वस्तुतः उत्तर-आधुनिकतावाद के रूप के नज़रिए में अभूतपूर्व बदलाव हुआ। इस बदलाव ने क्षेत्र से मिली जानकारी के विवरण को ऐसी आत्मवाची चिंतनपरक समीक्षा का विषय बनाया जो हर विवरण को तैयार करने की भी राजनीति में पाई जाती है। अब तक जो लिखा जा चुका था उन कृतियों को सच्चा विवरण नहीं मानकर, बल्कि इतिहास, राजनीति और लेखक के कृतित्व की युक्ति पर आधारित निर्मितियों (constructions) की तरह उन पर विचार किया गया। आधुनिकवादी युग में मान्य प्रत्येक अवधारणा अब समीक्षा का विषय बन गई। उदाहरण के लिए एक नियत इकाई, अपनी एक पहचान वाले लोगों के मानस के प्रतीकात्मक प्रस्तुतीकरण की तरह न मानकर, संस्कृति को अब परिवर्तनशील और ऐसी प्रतिद्वन्द्वमय प्रक्रिया के रूप में देखा गया जिससे नई अस्मिताएँ बनती हैं।

MAADHYAM IAS

"निर्माण" (construction) की प्रक्रिया की मान्यता विनिर्माण (deconstruction) की प्रक्रिया से जुड़ी थी। 1970 के बाद से विनिर्माण (deconstruction) और विसंरचनीकरण (destructuralisation) की धारणाएं मानविकी, साहित्य एवं कला के सभी क्षेत्रों में व्याप्त हो गई थीं। पाश्चात्य विज्ञान से उद्जनित ज्ञान की परिभाषा में स्थायी आस्था को चुनौती और पाश्चात्य सभ्यता में लिप्त तथाकथित 'प्रगति' को भी चुनौती दी गई। इस सम्पूर्ण धारणा की ही आलोचना की गई कि ज्ञान 'तथ्यों' के रूप में विद्यमान है, जिसे पश्चिमी वैज्ञानिक विधियों की सहायता से स्थापित किया जा सकता है और इसकी भी आलोचना की गई कि एक नियत यथार्थ का कहीं कोई अस्तित्व है। आधुनिकतावाद से ऐसी क्रांतिकारी विदाई लेने का कारण पाश्चात्य विज्ञान और ज्ञान की प्रणालियों की असफलता थी। पर्यावरणीय आपदाओं से आक्रांत दुनिया, एड्स जैसी बीमारियों, नागर समाज (civil society) की अस्सहायता और दुनिया भर में अन्याय एवं असमानता की जड़ें और गहरी होना आदि इस असफलता के द्योतक हैं। विभिन्न जाति, वर्ग, नृजाति और महिला-पुरुष श्रेणियों से अब विद्वानों का आविर्भाव होना एक और कारण था। पहले की श्वेत और पुरुष विद्वान की केंद्रीय छवि अब विस्थापित हो गई थी और उसकी जगह पर अन्य विभिन्न लोग आ गए थे। इन लोगों ने अपने समय में हो रहे शोध कार्यों के निष्कर्षों की सच्चाई पर प्रश्न उठाए। इन प्रश्न उठाने वालों में उपनिवेशी समीक्षा और महिलावादी समीक्षाएं सबसे आगे थीं।

विद्वानों की नई पीढ़ी ने "उपनिवेशीय ज्ञान" को राजनीतिक और आर्थिक यथार्थ का सामना किया। ऐसे ज्ञान के उत्पादन में शामिल शक्ति समीकरणों तथा उत्प्रेरणाओं की ऐतिहासिक जड़ों तक जाकर नई पीढ़ी के विद्वानों ने यथार्थ को समझा (भारत से उदाहरण के लिए कोष्ठक 4.6 देखें)।

> **कोष्ठक 4.6: इतिहास**
>
> सैद्धांतिक उपागम में क्रांतिकारी मोड़ की मुख्य प्रस्तुति इतिहास का पुनर्लेखन था। इतिहास के पुनर्लेखन का भारत में सबसे बढ़िया उदाहरण हमें दि न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ़ इंडिया सिरीज़ की पुस्तकों और रंजीत गुहा (1982) के संपादकीय नेतृत्व के अंतर्गत इतिहास की पुस्तकों की सिरीज़ में मिलते हैं। पार्थ चटर्जी (1993), बर्नड कॉन (1996), निकोलस डर्क (1992) और इसी प्रकार के अन्य लेखकों की कृतियों में उपनिवेशी समीक्षा के उदाहरण और इतिहास का मध्यवर्ती उपागम प्रतिबिंबित होते हैं। एडवर्ड सईद (1977) की कृतियों ने उपरोक्त कई रचनाओं को प्रेरित किया।

स्टेन्ले और वाइज़ (1983) की महिलावाद की परिभाषा में महिलावाद की सबसे शक्तिशाली समीक्षात्मक विचारों की झलक मिलती है। इस परिभाषा में प्रत्यक्ष रूप से इस विचार का विरोध किया गया है कि एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को दूसरों पर यथार्थता की परिभाषाएं थोपने का अधिकार है। यह परिभाषा यथार्थ की उत्तर-आधुनिक अवधारणा के स्थितिपरक रूप से मेल खाती है।

उत्तर-आधुनिकतावाद द्वारा स्वीकृत एक और बात थी कि शोधकार और जिन लोगों पर शोध किया जा रहा है वे समतुल्य स्तर के माने गये। जिन पर शोध किया जा रहा है वे शोध की वस्तु-मात्र न होकर अब ज्ञान के उत्पादन में बराबर के साझेदार हो गए थे। महिलावादियों द्वारा घोषित बहनापा (sisterhood) समानता के ऐसे बोध का निरूपण करता है। यह बोध केवल तभी संभव है जब ख़ामोश (silenced) समूह भी मुखर होकर ज्ञान के उत्पादन में शामिल हो। प्रमुख महिलावादी ऑड्रे लॉर्ड (1934-1992) के अनुसार महिलावाद का वह सिद्धांत शैक्षिक अहंकार से ग्रस्त है जो निर्धन, काले रंग वाली महिलाओं और समलिंगीय महिलाओं के परिप्रेक्ष्यों को नज़रअंदाज करता है (देखें लॉर्ड 1989)।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

उत्तर-आधुनिकतावादियों, विशेष रूप से महिलावादियों, ने मूल्य-निरपेक्ष, शोधकार को ऊँची हैसियत के विशषाधिकारों वाले और क्रिया से विमुख ज्ञान की प्रस्थिति पर प्रश्न उठाए। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आंदोलनों में सक्रिय विद्वान शैक्षिक जगत के एक अभिन्न हिस्सा बन गये। अंततः सिद्धांत विद्वत्ता के प्राचीरों से मुक्त होकर सड़कों पर आ गया।

4.7 उत्तर-आधुनिकतावाद के अतिरिक्त अन्य प्रवृत्तियां

लेकिन उत्तर-आधुनिकतावाद अपने चरम आत्मवाची चिंतन से मानवीय असमानता के वास्तविक आधार का भंडाफोड़ नहीं कर पाया। विविधता और वास्तविक असमानता की मानवीय दशाओं की समीक्षा करने वाली मानव व्यथाओं और शोषण से जुड़ी शोध समस्याएं अभी भी इक्कीसवीं शताब्दी में सैद्धांतिक रूप से वैध हैं। उत्तर-आधुनिकतावाद के आविर्भाव से पहले, 1990 के दशक में दृश्यप्रपंचशास्त्र (phenemenology) देखें इकाई 5), अस्तित्ववाद और ज्ञानमीमांसा (देखें इकाई 8) से जुड़े दर्शनशास्त्रों में रुचि की वृद्धि हुई। बॉड्रिलार्ड (1968) ने संकेतकों (signifiers) को अंतःसंरचनात्मक प्रस्थिति प्रदान करके मार्क्सवादी सिद्धांत को झिंझोड़ा। उसके अनुसार उत्तर-पूंजीवाद के युग में संकेतकों में अंधश्रद्धा से उपभोग वस्तुओं की ज़रूरतें बढ़ीं और इस प्रक्रिया के चलते उत्पादन में वृद्धि हुई। मार्क्सवादी नज़रिए में पहले जो संकेत अधिरचना (superstructure) का अंग माने जाते थे उनसे आर्थिक प्रक्रिया को बल मिला। आज के आधुनिक जगत में वर्ग संबंधों की अपेक्षा

विज्ञापन का महत्व बढ़ गया है और उपभोग तो सचमुच ही वास्तविक ज़रूरतों की बजाय अमूर्त ज़रूरतों से जुड़ गया है। वस्तु के भौतिक आयाम की जगह उसकी छवि को ऊंचा स्थान दिया जाने लगा है जैसे नामी-गिरामी लेबलों वाले कपड़े और जूते इत्यादि पहनना।

इस युग में जिस अवधारणा ने विशिष्टता प्राप्त की है वह है ग्रामस्की (1891-1937) द्वारा प्रस्तुत प्रभुत्त्व (hegemony) की अवधारणा। अपने राजनीतिक लेखों में ग्रामस्की (1921-1926) ने प्रभुता की अवधारणा को पाश्विक शक्ति की बजाय सांस्कृतिक प्रक्रिया में रखा और दिखाया कि लोग एक बार समाज के प्रभावी समूहों के वैचारिक दृष्टिकोण को स्वीकार कर लेने के बाद किस प्रकार अपने सामूहिक हितों के विरोध में कार्य करते हैं।

एन्टोनियो ग्रामस्की (1891-1937)

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विद्वानों प्रभुत्व के सूक्ष्मतर आयामों में गये और फूको (1961, 1973 और 1979) की रचनाओं को स्थापित हो चुके ज्ञान की समीक्षा के रूप से व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। फूको ने ज्ञान और शक्ति और प्रभुत्व की अपने को मनवाने की शक्ति के बीच संबंध दिखाया है। इस संदर्भ में लिखित शब्दों और कला व लोकसंस्कृति की शक्ति को सांस्कृतिक अध्ययन के क्षेत्र के रूप में सैद्धांतिक रूप से स्थापित किया जा चुका है। संस्कृति को अब प्रदत्त दशा के रूप में नहीं देखा जाता। यह नहीं माना जाता है कि संस्कृति का कोई निरपेक्ष अस्तित्व है जिसका क्रमबद्ध अध्ययन किया जाये। संस्कृति को अब विवादास्पद अस्मिताओं का स्थल, प्रभुता और प्रतिरोध के वाहन के रूप में देखा जाता है। संस्कृति एक अंतिम उत्पाद या प्रदत्त दशा होने के बजाय एक साधन बन गई है और अब यह लोगों की आंकाक्षाओं में स्वयं को व्यक्त करती है (लोगों की आंकाक्षाओं के रूप में संस्कृति की अवधारणा का प्रयोग देखें नाथन 2001 में)।

MAADHYAM IAS

सामाजिक विज्ञान में अब विश्व को भौतिक दृष्टि से देखते हुए अस्तित्व की दशाओं को में समझने उत्तर-आधुनिक अजीबोग़रीब मत की बजाए मार्क्सवादी मत के अनुसरण की प्रवत्ति है। विनिर्माण (deconstruction) की आलोचना रही है कि नितांत विनिर्माण (deconstruction) अस्तित्व के अर्थ को इस हद तक दूर ले जाएगा कि सामाजिक विज्ञान के लिए तर्काधार का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। बीसवीं शताब्दी में पहले भी संरचनावादियों और मार्क्सवादियों के बीच मतों में भिन्नता विद्यमान थी, जबकि संरचनावादी लक्षणीय संरचनाओं या मानसिक संरचनाओं के पक्ष में था वहीं मार्क्सवादी भौतिक संरचनाओं और आर्थिक शोषण के रूप यथार्थ को देखते थे।

पियरे बोर्दो (जीवन-काल 1930-2004) शायद समकालीन समय के सर्वोतम चिंतकों में से एक था जिसने लेवी स्ट्रॉक्स के संरचनावाद और मार्क्सवाद के बीच मतभेदों वाले बौद्धिक विवादों को सुलझाने का प्रयास किया। बोर्दो ने एक ओर यथार्थ के निश्चल या गतिहीन, न बदलने वाले, समसामयिक स्वरूप को देखा जो गहरी अंतर्निहित और अचेत मानसिक संरचनाओं से बना था। ये संरचनाएं अपने सहज रूप में मानव संकल्पशक्ति की गतिकी का विषय नहीं थीं, जैसा कि लेवी-स्ट्रॉक्स ने प्रस्तुत किया था। दूसरी ओर, बोर्दो ने कहा कि मार्क्सवाद द्वारा निरूपित सचेत मानव इतिहास का उत्पाद है। फिर बोर्दो ने इन दोनों मतों के बीच भिन्नता की व्याख्या की। वस्तुतः बोर्दो (1977) ने क्रिया पर वैचारिक संरचनाओं से उद्जनित प्रभाव को दिखाने का प्रयास किया। बोर्दो के आचार के सिद्धांत (देखें कोष्ठक 4.7) में दर्शाया गया है कि किस प्रकार लोगों में वास्तविक असमानताएं उत्पन्न करने के लिए वास्तविक आचारण और वास्तविक समय में अमूर्त प्रतिमान दृष्टिगोचर होते हैं।

कोष्ठक 4.7: बोर्दो का आचार (practice) का सिद्धांत

बोर्दो ने स्वाभाविक बन गई विचारधाराओं के अचेतन आयाम को डोक्सा (doxa) की संज्ञा दी। जो हम पहले से ही मान लेते है और जो बातचीत में कभी भी स्थान नहीं पाता, ऐसे डोक्सा में संसार के बारे में अवधारणीकृत गहरे तक जड़े जमाई हुई आदतें शामिल हैं। बोर्दो की दृष्टि में हैबीतस (habitus) व्यक्तिगत कर्ताओं के लिए एक प्रकार की बुनियाद है, आत्मपरक दशाओं के रूप में लिये गये मनोभावों की अचेतन अभिव्यक्ति है। किंतु यह अभिव्यक्ति क्रियाओं के रूप में मूर्त रूप में प्रकट होती है जो अपने अस्तित्व के लिए स्थितियाँ स्वयं निर्मित करती हैं। बोर्दो के लिये सभी असमानताएं सांस्कृतिक मनमानापन है क्योंकि वे आंतरिक रूप से आत्मपरक स्थितियों में उत्पन्न और पुनःउत्पन्न होती हैं। लेकिन उनके अस्तित्व का कोई निरपेक्ष तर्काधार नहीं होता है। बोर्दो के सिद्धांत में मानवीय सृजनशीलता और एजेंसी के विचारों का विशेष रूप से अभाव है।

पियरे बोर्दो
(1930-2004)

आज के वैश्वीकरण के संदर्भ में संस्कृति और समाज अवधारणाओं के रूप में दिनों-दिन आकारहीन हो रहे हैं। अस्मिताओं को अब स्थायी रूप में नहीं देखा जाता है बल्कि इन्हें स्थानीय और सार्वभौमिक रूप से चुने गए विवादास्पद, बेमेल और अलग-अलग अवयवों के रूप में देखा जाता है। अब परंपराओं को प्रदत्त नहीं बल्कि हर समय पुनःनिर्मित होने के रूप में देखा जाता है।

फूको ने ज्ञान के पाश्चात्य रूपों का खंडन किया और बताया कि ये रूप प्रभुता का साधन हैं और सच्चाई का साधन नहीं हैं। विज्ञान के नाम पर जो भी स्वीकृत किया जाता रहा है, उस सब पर फूको ने जम कर प्रहार किया। अब विज्ञान को सच्चाई की निरपेक्ष व्यवस्था नहीं माना जाता। विज्ञान अब ज्ञान का क्षेत्रीय रूप है जो तर्क की बजाए मात्र शक्ति के ज़ोर पर ज्ञान के सभी अन्य रूपों से भी ऊपर हो जाना चाहता है। सामाजिक विज्ञानियों के लिए इसका अभिप्राय है कि प्रेक्षक और प्रेक्षित के बीच असमानता की स्थितियों को ध्यान में रखकर शोध किए जाने वाले विषय की सर्जन पर नई दृष्टि से ध्यान दिया जाये। मनोवैज्ञानिकों के लिए इसका अभिप्राय है कि सामान्य और असामान्य की अपनी धारणा पर पुनःविचार किया जाये और स्वतंत्र दशाओं की बजाए सांस्कृतिक दशाओं के रूप में उन पर विचार करें। लेकिन सच्चाई को विसंरचित करने की इस प्रक्रिया में इसकी सबसे बड़ी विजय यह रही है कि लोगों के पास स्वयं को पुनः निर्मित करने के विकल्प है और सामान्य या प्रदत्त के नाम पर कुछ भी लागू किए जाने का विरोध करने की क्षमता है। विविधता की स्वीकृति और असमानता को अस्वीकार करना और बेहतर विश्व को प्रतिबिंबित करना और उसके प्रयास करना समकालीन सिद्धांत के प्रमुख प्रयास रहे है। यही वह बिंदु है जब यथार्थ को समझने की प्रक्रिया में सक्रिय सहभागिता की मांग और इसके परिणामस्वरूप इक्कीसवीं सदी के आरंभ में अपने इर्द-गिर्द के यथार्थ को गढ़ने के लिये मान्यता प्राप्त हो रही है। (ध्यान दें कि इस पुस्तक की अंतिम इकाई भी सहभागी उपागम पर है।)

माइकल फुको
(1926-1984)

MAADHYAM IAS

4.8 निष्कर्ष

सामाजिक विज्ञान में सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों की लंबी यात्रा के इस पड़ाव तक पहुँचने पर आइए भारत में समाजशास्त्र के वर्तमान रूप को देखें। शोध पद्धति की दृष्टि से कहें तो यूरोपीय और अमरीकी समाजशास्त्र में उभरने वाले परिप्रेक्ष्यों की बहुलता के प्रकाश में, भारत में समाजशास्त्रियों और नृशास्त्रियों ने बिना किसी बहाव में आए प्रतिबद्धता के साथ आत्मवाची चिंतन और प्रत्यक्षवादी विरासत में मिली तथ्यनिरूपणता को मिश्रित किया है।

यहाँ महात्मा गांधी के इस कथन का उल्लेख करना ग़लत नहीं होगा कि चारों ओर से प्रभावों को प्राप्त करने के लिए सभी खिड़कियाँ खुली रखो किंतु सावधानीपूर्वक अपने पाँवों को मज़बूती से ज़मीन पर टिकाए रखो। काफ़ी समय पहले 1938 में शरद चन्द्र राय ने मैन में लिखा था

सांस्कृतिक सामग्री पर शोध की निरपेक्ष विधि को न केवल ऐतिहासिक कल्पना और ऐतिहासिक व भौगोलिक तथ्यों की पृष्ठभूमि में बल्कि पूरी तन्मयता या ध्यान की आत्मपरक प्रक्रिया की मदद से करना ज़रूरी है। इसमें शोध के लिये चुने समाज के प्रति सहानुभूतिमय तल्लीनता से जनित आत्मदृष्टि भी आवश्यक है।

राय के ही उपागम का लगभग अनुसरण करके मदन (2004: 200-202) ने 'मध्यवर्ती मार्ग' लिया जिसका अभिप्राय है अमूर्त और सामान्य अवधारणाओं की सहायता से 'मूर्त' और 'विशेष' का वर्णन व व्याख्या करना है। ऐसा करते समय जो उपयुक्त और संभव प्रतीत होता है उसकी कार्यकारणात्मक व्याख्या करनी है।

भारत में सामाजिक शोध की पद्धति में परंपरा के साथ जुड़ाव वास्तव में बोध प्राप्त करने की एक शैली की तरह उभरा। सिंह (1979: 291) के अनुसार "क्या समाजशास्त्र शोध की तकनीकों और श्रेणियों के विश्वव्यापी पुलिंदे वाला विज्ञान है अथवा प्रेक्षण में आत्मवाची चिंतन के भाव और विचारों, सामाजिक संबंधों, संरचनाओं के बीच तुलना से अंकित बोध शैली है? ये ऐसे प्रश्न हैं जो भारत में समाजशास्त्र के प्रारंभ होने के समय से ही विवाद का विषय रहे हैं।"

MAADHYAM IAS

ऐसा नहीं है कि भारत में सामाजिक विज्ञान शोधकार विचारों की विश्वव्यापी धाराओं से कटे रहे हैं और उन्होंने समय-समय पर अपने स्पष्ट सैद्धांतिक चयनों को अभिव्यक्त नहीं किया है। पार्थ नाथ मुखर्जी ने भारत में शोधकारों के बीच हुई बहसों की विस्तार से चर्चा की है। मुखर्जी ने अपने लेख में एक ओर तो ऐसे विद्धानों को लिया जैसे राधाकमल मुखर्जी (1889-1968) जिन्होंने भौतिक विज्ञानों दर्शनशास्त्र और सामाजिक विज्ञानों के बीच एक मेल बिठाया (देखें मुकर्जी 1960), धूजर्टि प्रसाद मुकर्जी (1894-1962) जिसने समाजशास्त्रीय विधि के मुख्य सिद्धांतों के रूप में समग्रवाद और संदर्भीकरण पर बल दिया (देखें मुकर्जी 1972), और ए. के. सरन (1962) ने पश्चिमी समाजशास्त्र और मूल्यों पर आधारित और भारतीय परिवेश से मेल न खाने वाले समाजशास्त्र/ समाजविज्ञानों को अस्वीकार किया। दूसरी ओर, मुखर्जी ने अपने लेख में ऐसे शोधकारों को लिया जिन्होंने क्षेत्र कार्य की विधि का सुझाव दिया और जिन्होंने सर्वेक्षण आधारित शोध को चुना। भारतीय सामाजिक अनुसंधान परिषद द्वारा भारत में समाजशास्त्र और सामाजिक नृशास्त्र में रुझानों पर लिखी गई रिपोर्ट में विद्वानों के झुकावों और रुचियों का विस्तृत विवरण उपलब्ध है (देखें मदन 1972, दाम्ले 1986, जैन 1986 और बोस 1995)। मुखर्जी ने (1998: 27-28) ने कहा "शोध के स्तर पर, तार्किक रूप से सटीक श्रमसाध्य, शैक्षिक रूप से प्रतिबद्ध शोध का पतन हो गया है – समाजशास्त्र और दक्षिण एशियाई समाजों में सामाजिक विज्ञान संघर्ष,

संरचना और परिवर्तन की प्रक्रियाओं के बारे में सामाजिक वैज्ञानिक ज्ञान उत्पन्न करने में काफ़ी पिछड़ गए हैं। अधूरा ज्ञान, उधार ली गई बेमेल यूरोकेन्द्रित अवधारणाएं हमारी अत्यधिक जटिल सामाजिक यथार्थताओं का मूल्यांकन करने में तनिक भी मदद नहीं करते।"

मर्टन के "अनुशासित सर्वग्राहीवाद (edecticism)" का सुझाव देते हुए मुकर्जी (2000: 59) ने उस दृष्टिकोण को वरीयता दी जिसमें समानांतर आधारिकाओं की दक्षता के बारे में विचारों का खुलापन अपेक्षित होता है। न ही किसी भी आधारिका को अस्वीकृत किया जाना है और न ही किसी का समर्थन किया जाना है क्योंकि ऐसा नहीं है कि स्वीकारने या अस्वीकारने में ही बुद्धि का सार है जिससे सामाजिक विज्ञान की सभी पहेलियों को हल किया जा सकता है। अतः चाहे यह महात्मा गांधी का अपने धरातल को पकड़े रखने का दृष्टिकोण हो या मदन का मध्य मार्ग या मुकर्जी की मर्टन के अनुशासित सर्वग्राहीवाद की स्वीकृति हो, लगता है कि भारत में सामाजिक विज्ञानियों द्वारा ज्ञान उत्पादन अभी भी प्रतीक्षा में है कि कब हमारे यहाँ शोध के तर्क के प्रश्नों के प्रति गहरी तन्मयता से कार्य हो।

एम एस ओ-002 के छात्र-छात्राओं हेतु यह प्रासंगिक अभ्यास होगा कि वे दिल्ली से प्रकाशित होने वाली अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका, कन्ट्रीब्यूशंस टू इंडियन सोशियोलॉजी के विशेष अंकों को पढ़ें। इन अंकों में श्रम, प्रवास, जाति और वर्ग, परंपरा और आधुनिकता इत्यादि जैसे विषयों पर लेख हैं। लेखों को पढ़ने के बाद लेखों में ली गई शोध पद्धतियों का वे परीक्षण करें। इसी तरह लेखकों के सैद्धांतिक अभिविन्यासों का पता लगाने के लिए आप इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली तथा सोशियोलिनिकल बुलेटिन में प्रकाशित लेखों को भी देखें। अवकाश के समय में यह आपके समय का सदुपयोग करने में उपयोगी तरीका सिद्ध हो सकता है। दलित आंदोलन और महिला-पुरुष में सामाजिक भेदभाव पर अध्ययन (gender studies) आपको आत्मवाची चिंतन वाले समाजशास्त्र के उदाहरण प्रदान कर सकते हैं (इकाई 7 भी देखें)। सोचें और करें 4.2 के लिए आपको केवल दो लेखों में अपनाई गई शोध-पद्धति को पहचान कर, उनपर संक्षिप्त टिप्पणी लिखनी है।

MAADHYAM IAS

सोचें और करें 4.2

निम्नलिखित दो लेखों को पढ़ें और प्रत्येक लेख में लेखक के सैद्धांतिक अभिविन्यास को पहचानें। इसके बाद इन दोनों लेखों में उपयोग की शोधपद्धतियों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

- फ़ज़लभॉय, नसरीन 2000. रिचुअल्स ऑफ प्रोटेक्शन इन ए मुस्लिम कम्युनिटी, दि इस्टर्न एंथ्रोपोलोजिस्ट 53(4): 443-455
- शर्मिला रेगे 2000. अंडरस्टेंडिंग पापुलर कल्चर, दि सत्यशोधक एंड गणेश मेला इन महाराष्ट्र सोशियोलोजिकल बुलेटिन 127: 193-210

4.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बोस, प्रदीप कुमार, 1995. *रिसर्च मेथोडोलॉजी*। भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषदः नई दिल्ली (भारत में समाजशास्त्रियों द्वारा शोध विधियों और पद्धतियों पर रचनाओं के व्यापक सर्वेक्षण के लिए)।

खंड 2 की प्रस्तावना
सामाजिक शोध के दार्शनिक आधार

'सामाजिक शोध के दार्शनिक आधार' विषयक खंड 2 आपको सामाजिक विज्ञानों में सिद्धांत निर्माण पर दर्शनशास्त्र के प्रभाव से परिचित कराता है। सामाजिक विज्ञानों के एक प्रमुख विषय, समाजशास्त्र ने सीखने की एक विशिष्ट परम्परा स्थापित की है क्योंकि इसमें एक विधि होती है, एक सिद्धांत समूह या फिर दिशानिर्देश होते हैं। यह कहा जा सकता है कि इसका एक दर्शन है या प्रेक्षण, सत्य तक पहुँचने व उसकी व्याख्या करने का एक तरीक़ा है। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञानों के दर्शन को समझने की कोशिश करना अत्यावश्यक है।

आधुनिक विज्ञान के दार्शनिक मूलों अथवा प्रतिरूप विशेष को समझने की विधि पर अपनी पकड़ बनाने के लिए हमें प्रमुख सामाजिक विचारकों की चर्चा की आवश्यकता पड़ती है। खंड 2 में सत्रहवीं शताब्दी से लेकर इक्कीसवीं शती आरंभ तक विवादित रही धारणाओं के प्रमुख धाराओं का समावेश किया गया है। बेकन की 'विचार-मूर्ति' और डेस्कार्ट के तर्क से लेकर हमने कॉम्टे के प्रत्यक्षवाद का जन्म होने तथा सामाजिक शोध में प्रयुक्त प्रकार्यावाद की विधि पर चर्चा की है।

आगे के सवालों और बहस ने अन्ततोगत्वा ऐसी विचारधाराओं का उदय देखा जैसे प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद और नृजाति शोध पद्धति। आधुनिकता के उदय ने सकारात्मक परम्परा और व्याख्यात्मक परम्परा दोनों को जन्म दिया। बाद में विज्ञान के दार्शनिकों ने विज्ञान के प्रबोधन दृष्टिकोण को चुनौती दी तो सामाजिक विज्ञान के दर्शन में तद्जनित परिवर्तन आए। कार्ल पॉपर के आलोचनात्मक तर्कवाद ने सकारात्मकवादी निश्चितताओं पर प्रश्न उठाएं और असाधारण विज्ञान की थॉमस कुन की अवधारणा ने निदर्शनात्मक परिवर्तनों एवं अधिक नवीनतापरक विज्ञान की दिशा दी। वैज्ञानिक विधि के सरदारी पर पॉल फेयर बॉड की समालोचना ने ज्ञान प्रणालियों की, विधियों तथा खोज-बीन की परम्पराओं की बहुलता का मार्ग प्रशस्त किया। विज्ञान के दर्शन में इन विकासों ने सामाजिक विज्ञानों को प्राकृतिक विज्ञानों की परछाई से बाहर आने का रास्ता दिखाया।

MAADHYAM IAS

इस प्रकार की बहसों के विकास में अगले पड़ाव को सामाजिक विज्ञान के दार्शनिक आधारों में एक संकट की संज्ञा दी जा सकती है क्योंकि आधुनिकता के अंत एवं आधुनिकोत्तरता के आगमन के साथ सारी दार्शनिक जड़ों का विनिर्माण किया गया।

सत्यार्थ निष्पक्ष खोज स्वरूप स्वयं ज्ञान के लिए आधार पर ही जब सवाल उठे तो हमें कहाँ जाना होगा? वास्तव में आधुनिकता और विज्ञान की समस्याओं से जूझते हुए भी सभी समाज-वैज्ञानिकों ने आधुनिकोत्तरवाद का अनुसरण नहीं किया। प्रत्यक्षवाद की समालोचना पर हुए विवाद बहुत ही अभिवृद्धिदायक रहे हैं। इनसे आत्मचिंतनपरक समाजशास्त्र को बढ़ावा मिला है। सामाजिक कर्ता की सृजनात्मकता से जुड़े वैकल्पिक समाजशास्त्र का उदय हुआ है। अब सामाजिक वैज्ञानिकों को वास्तव में उससे सरोकार है जो हमारी और आपकी सोच है। यह बात सामाजिक विज्ञानों के अंतर्गत आने वाले विषयों को वास्तव में बहुत रुचिकर बना देती है। समाजशास्त्र विषय के दायरे में जब हमारी और आपकी पूछ होने लगे तो हमें न सिर्फ़ अपने आसपास के सामाजिक यथार्थ को समझने में बल्कि उसे अपने सचेत प्रयासों के माध्यम से बदल डालने में भी भागीदारी निभाने में सक्षमता मिलती है।

इकाई 5: ज्ञानमीमांसा के मुद्दे में ज्ञान प्राप्ति की नितांत आधारभूत विधियों की चर्चा की गई है। किसी भी चीज़ को जानने के हमारे पास क्या आधार हैं? इस प्रश्न के स्पष्ट उत्तर के साथ हमारे लिये अपने शोध की वस्तु को समझने की दिशा में बढ़ना संभव होता है।

इकाई 6: सामाजिक विज्ञान का दर्शनशास्त्र का आरंभ प्रबोधन के दार्शनिकों के विचारों, डेस्कार्ट के मानसिक पर बल देने तथा बेकन द्वारा निष्पक्ष ज्ञान पर ज़ोर देने से होता है। यह इकाई सामाजिक जगत् के अवलोकनार्थ नए रास्ते खोजने में लगने के लिए आपको एक आधार प्रदान करती है। उपरोक्त विचारकों ने इस अवधारणा को बढ़ावा दिया कि समाज का अस्तित्व ऐसा है कि इसका प्रत्यक्षवादी प्रेक्षण सरलता से किया जा सकता है।

इकाई 7: प्रत्यक्षवाद तथा इसकी मीमांसा समाजशास्त्र की आरंभिक अवधारणा की विरासत पर नज़र डालती है। प्राकृतिक विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान के उद्देश्यों एवं तर्क के बीच एक समीकरण दावे की प्रमुखता ने, सामाजिक वैज्ञानिकों को इस मतिभ्रम में नहीं रखा कि सामाजिक भौतिकी अथवा समाजशास्त्र विज्ञान के रूप में तभी जीवित रह सकता है जब सामाजिक प्रणालियों की अनुक्रियाओं को जैविक व्यवस्थाओं की यांत्रिकी से जोड़ा जायेगा।

इकाई 8: भाष्यशास्त्र में समाजशास्त्रीय शोध के दार्शनिक आधारों को प्रस्तुत किया गया है। यह भाष्यशास्त्र और समाजशास्त्र के बीच संबंध को स्पष्ट करती है तथा अनेक विद्वानों के विचारों का विश्लेषण करती है, यथा विल्हेन डिल्थी, हैन्स-जॉर्ज गडमान, जॉर्जन हैबरमास और पॉल रिकर।

लंबे समय तक लोकप्रिय रहकर और आज भी अनेक सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए नितांत स्वीकार्य होते हुए समाजशास्त्र और जैविक विज्ञान के बीच गठजोड़ (प्रधर्मावाद के नाम से अधिक मशहूर) को मुख्यधारा वाले सामाजिक विज्ञान की प्रस्थिति को छोड़ देना ही पड़ा। इन घटनाक्रमों ने नए घटनाक्रमों हेतु मार्ग प्रशस्त किया, जिस पर हमने खंड 2 में चर्चा की है और आगे खंड 3 में हमने सम-सामयिक परिदृश्य का निरूपण किया है।

MAADHYAM IAS

इकाई 5
ज्ञानमीमांसा के मुद्दे

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 ज्ञानमीमांसा के प्रमुख मुद्दे

5.3 बुद्धिवाद

5.4 अनुभववाद

5.5 आदर्शवाद

5.6 दृश्यप्रपंचशास्त्र अनुभव निहतपरकता

5.7 निष्कर्ष

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 5 को पढ़ने के बाद आपमें निम्नलिखित कार्यों के प्रति सक्षमता हो जायेगी:

- ज्ञानमीमांसा के मुद्दों से अवगत होना; तथा
- दशर्नशास्त्र की विविध धाराओं अर्थात बुद्धिवाद, अनुभववाद, आदर्शवाद और दृश्यप्रपंचशास्त्र से अपने आसपास की सामाजिक यथार्थ की समझ को जोड़ना।

5.1 प्रस्तावना

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ज्ञानमीमांसा दर्शनशास्त्र की वह शाखा है जो ज्ञान की प्रकृति, स्रोत और सीमाओं को समझने का प्रयास करती है। आपका प्रश्न हो सकता है कि समाजशास्त्र पाठ्यक्रम में हम दर्शनशास्त्र की शाखा के बारे में क्यों बातचीत करें? इकाई 5 को पढ़ते समय आपको स्पष्ट होगा कि यहाँ चर्चित दार्शनिक मुद्दे सामाजिक जगत के बारे में सिद्धांतों में की जाने वाली व्याख्याओं की आधारशिला गठित करते हैं। इकाई 6 और 7 में आपको समाजशास्त्रियों के लेखन पर दार्शनिक विचारों का प्रभाव को स्पष्ट रूप से दिखाई देगा। इन इकाइयों की विषयवस्तु को बेहतर ढंग से समझने के लिए ज्ञानमीमांसा के मुद्दों को अच्छे तरह से समझना एक अच्छा विचार है।

मनुष्यों की ऐसी प्रवृत्ति रही है कि उन्होंने सदैव अपने आसपास की दुनिया को व्यक्त करना और समझना चाहा है और इसी से आगे चलकर बहुत सी व्याख्याएं उभरी हैं। आजकल मानव समाज के एक बड़े वर्ग के लिए यह एक आम बात है कि वे ऐसे स्पष्टीकरणों की खोज करें जो वैज्ञानिक सत्यों पर आधारित हैं। लेकिन एक समय था ऐसे स्पष्टीकरण प्राधिकारियों, आमतौर पर धार्मिक प्राधिकारियों, के रोष का कारण बन जाते थे। जैसे-जैसे विज्ञान में तेज़ी से होने वाली प्रगति ने प्रकृति के उन रहस्यों को खोलना शुरू किया जिन पर मनुष्य ने नियंत्रण जमाने की चेष्टा थी, प्राकृतिक और भौतिक विज्ञानों द्वारा अपनाई गई पद्धति इस बात पर दृड़ हो गई कि ज्ञान प्राप्त करने की श्रेष्ठ विधियाँ क्या होनी चाहिए। ज्ञान प्राप्ति के लिए इस खोज के पीछे ऐसे बहुत से मुद्दे थे जिन पर न केवल वैज्ञानिकों और ज्ञानप्रेमियों ने बल्कि दार्शनिक प्रश्न उठाने वालों ने भी चिंतन-मनन किया।

जैसा कि यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने सही ही कहा था कि हर तरह के तत्व-ज्ञान का उद्भव आश्चर्य की ऐसी बुनियादी भावना से होता है जिसे मनुष्य अनुभव करते हैं और यही आश्चर्य-भावना आगे विविध व्याख्याओं या सिद्धांतों को जन्म देती है। इसलिए यह आश्चर्यजनक नहीं है कि ज्ञान के प्रश्न पर अनेक प्रतिस्पर्धी दृष्टिकोण मिलते हैं, यह प्रश्न ही कि सच्चाई या पर्याप्त ज्ञान क्या है, एक प्रकार से वैज्ञानिक पद्धति का मुद्दा बन जाता है। इकाई 5 में विभिन्न विचारधाराओं के संदर्भ में कुछ विशिष्ट दार्शनिकों के प्रसंग सहित अपने आसपास सामाजिक वास्तविकताओं की समझ से जुड़े कुछ व्यापक मुद्दों पर विचार किया जायेगा।

भाग 5.2 में ज्ञानमीमांसा के प्रमुख संदर्भों की प्रस्तावना के बाद हम भाग 5.3, 5.4 और 5.5 में क्रमशः बुद्धिवाद, अनुभववाद और आदर्शवाद के सिद्धान्तों की चर्चा करेंगे। ये सिद्धान्त सामाजिक तथ्यों को समझने के सकारात्मक दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करते हैं। बुद्धिवाद अनुभववाद और आदर्शवाद नामक इन तीन विचार की शाखाओं में चर्चित मान्यताओं से हरेक व्यक्ति सहमत नहीं था। बहुत से विद्वानों ने अपने बनाये प्रेक्षणों की अर्थ ढूंढ़े। उन्होंने प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र अथवा दृश्यप्रपंचशास्त्र पर ध्यान केन्द्रित किया जो विचार की ऐसी शाखा है जो हमे सामाजिक सत्यों को समझने की नई दिशाओं में लेकर जाती है। नवीन विकासों के बारे में भाग 5.6 में चर्चा की गई है।

5.2 ज्ञानमीमांसा के प्रमुख मुद्दे

इस भाग में ज्ञानमीमांसा के प्रमुख मुद्दों में से कुछ पर चर्चा की जा रही है। ज्ञान का स्रोत क्या है, ज्ञान क्या है, हमें कैसे मालुम होता है कि क्या सच है और क्या दोष-शुद्धि (justification) आदि प्रश्न इन मुद्दों से जुड़े हैं। दूसरे शब्दों में ज्ञानमीमांसा मुख्यतः ज्ञान की प्रकृति, स्रोत, क्षेत्र और सीमाओं से संबंधित है। विभिन्न विचारधाराओं में अपनाए गए दृष्टिकोण हर विचारधारा विशेष के समग्र तत्व विज्ञान (metaphysics) के झुकाव से जुड़े होते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

आपका प्रश्न हो सकता है कि तत्व विज्ञान क्या है? तत्व विज्ञान दर्शनशास्त्र की वह शाखा है, जो सभी प्रकार की वास्तविकताओं के मूल स्वरूप को समझने का प्रयास करती है, चाहे वह स्वरूप दृश्य हो अथवा अदृश्य। इसमें बहुत ही बुनियादी सरल और अंतर्विष्ट (inclusive) वर्णन खोज होती है जिसे प्रत्येक वस्तु पर लागू किया जा सकता है चाहे वह दैवीय हो अथवा मानवीय या कुछ और। तत्व विज्ञान यह बताता है कि कोई भी वस्तु कैसी होती है। इस प्रकार एक तत्व विज्ञानी का यह पता लगाने का प्रयास होता है कि वस्तु का मूलाधार क्या है। यद्यपि समाजशास्त्र में तत्वविज्ञान संबंधी प्रश्नों से हमारा कोई संबंध नहीं है, लेकिन ज्ञानमीमांसा या ज्ञान से संबंधित पहलुओं पर चर्चा करते समय यह ध्यान में रखना ज़रूरी है कि ज्ञान के बारे में अनेक दार्शनिक विचारों का तत्वविज्ञानी महत्व है। उदाहरण के लिए कांट की यह मान्यता थी कि "एक व्यक्ति की चेतना की मौजूदगी उसके आसपास की वस्तुओं की मौजूदगी को सिद्ध करता है", यह स्पष्टतः तत्वविज्ञानी झुकाव दिखाता है (देखें आदर्शवाद पर इस इकाई का भाग 5)।

यदि हम ज्ञानमीमांसा के इतिहास पर नज़र डालें तो हमें अनेक एक जैसी किंतु परस्पर-विरोधाभासी स्थितियों से उत्पन्न भ्रम के बावजूद एक ओर झुकाव स्पष्ट दिखाई देता है। यह झुकाव इंगित करता है कि ज्ञान के सिद्धांत अपने शुद्ध और स्थायी स्वरूप पर बल देते हैं। हमें जो वस्तुएं अनुभूतिजन्य अवधारणाओं से परे लगती हैं, कुछ दार्शनिकों के लिए वे मन अथवा मस्तिष्क में चलने वाली परस्पर सक्रियता का परिणाम हैं।

पुनर्जागरण (चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दी में शास्त्रीय (classical) मॉडल के प्रभाव के अंतर्गत यूरोप में कला और साहित्य का पुनरुत्थान) के पश्चात ज्ञान की दो प्रमुख ज्ञान-

मीमांसात्मक स्थितियों या सिद्धांतों ने दार्शनिक-शोध पर आधिपत्य कर ज्ञान-सिद्धांत अर्थात अनुभववाद और बुद्धिवाद दिये। अनुभववाद की नज़र में ज्ञान संवेद-बोध (sensory peruption) का परिणाम है। इस सिद्धांत का मानना है कि समस्त ज्ञान संवेदी अनुभव से ही उपजता है। इसका संबंध प्राकृतिक विज्ञानों में प्रयुक्त प्रेक्षणों और अनुभवों की विधि से भी है।

प्रायः बुद्धिवाद और अनुभववाद को एक-दूसरे के प्रतिकूल माना जाता है। बुद्धिवाद वह सिद्धांत है, जो मानता है कि मस्तिष्क बिना संवेद के माध्यम से सीधे तौर पर सच्चाई को समझ सकता है। आइए, पहले हम बुद्धिवाद के सिद्धांत की चर्चा करें। तिथिक्रम (chronology) के अनुसार भी पहले बुद्धिवाद का और बाद में अनुभववाद का बोलबाला हुआ।

5.3 बुद्धिवाद

ग्रीक दार्शनिकों ने तार्किक-चिंतन की नींव रखी। इनमें पैथागोरस, प्लैटो और अरस्तू प्रमुख हैं। बुद्धिवाद या तार्किक-चिंतन का प्रमुख सिद्धांत है कि सच की सर्वश्रेष्ठ खोज तर्क और तार्किक सोच से ही की जा सकती है। बुद्धिवादियों का मानना है कि यह संसार नियतिवादी है और कार्य-कारण सभी घटनाओं का जनक है उनका यह भी मानना है कि इन्हें पर्याप्त समझ और चिंतन से अच्छी तरह जाना जा सकता है। कार्यकारण (apriori) या तार्किक अंतःदृष्टि पर्याप्त ज्ञान का एक अच्छा स्रोत है। दूसरी तरफ़, संवेदी अनुभव को अत्यधिक भ्रामक और अस्थायी/प्रायोगिक माना जाता है।

दर्शनशास्त्र की तरह ही तर्क और गणित भी शास्त्रीय प्रकार के तार्किक संकाय हैं। बौद्धिक तर्कण विशेषरूप से आकर्षक होता है क्योंकि इसमें उच्चतर बौद्धिकता होती है और नियमित रूप से हम सभी के द्वारा इसका उपयोग होता है जबकि हमारे कथनों की सच्चाई प्रायः संदेहास्पद होती है।

MAADHYAM IAS

प्रमुख बुद्धिवादियों में डेस्कार्ट, स्पिनोज़ा और लेबनिज़ शामिल हैं (इकाई 1 देखें)। आइए, इनमें सबसे प्रमुख बुद्धिवादी, डेस्कार्ट के विचारों पर चर्चा करें।

डेस्कार्टः मैं सोचता हूँ, इसलिए मेरा अस्तित्व है।

डेस्कार्ट को ऐसा पहला "आधुनिक" विचारक माना जाता है, जिसने प्राकृतिक विज्ञान के लिए एक दार्शनिक रूपरेखा प्रदान की। डेस्कार्ट ने ऐसे मूल-सिद्धांतों का पता लगाने का प्रयास किया जिनसे किसी भी संशय के परे जाकर सत्य को जाना जा सके। इसे प्राप्त करने के लिए उसने पद्धतिमूलक संशयवाद (methodological skepticism) का उपयोग किया। उसने ऐसे सभी विचारों के प्रति संशय व्यक्त किया जिन पर संशय किया जा सकता है। इस संदर्भ में उसने स्वप्न देखने का उदाहरण दिया। सपने में व्यक्ति की संवेदनशीलता उन वस्तुओं का दर्शन करती है, जो वास्तविक दिखाई देती हैं लेकिन वे वास्तव में नहीं होती हैं। उसका तर्क था कि इसी प्रकार संवेदी विषय-सामग्री को सच्चा मानकर व्यक्ति को उनपर विश्वास नहीं करना है। अथवा, उसका कहना है कि शायद एक "दुर्देव" (evil genius) है जो सर्वोच्च शक्ति संपन्न और चालाक है और वह वास्तविकता के सत्य-स्वरूप को जानने से डेस्कार्ट को रोकता है। इन संभावनाओं का उल्लेख करते हुए, डेस्कार्ट पूछता है, निश्चित रूप से क्या जाना जा सकता है?

इस प्रश्न के बारे में डेस्कार्ट का उत्तर जानने से पहले आइए उसके बारे में और जानकारी प्राप्त करें (देखें कोष्ठक 5.1)।

कोष्ठक 5.1: रेने डेस्कार्ट (जीवन-काल 1596-1650)

रेने डेकार्ट
(1596-1650)

डेस्कार्ट (कोष्ठक 1.4 भी देखें) का जन्म 1596 में फ़्रांस के एक गाँव में हुआ था। उन्होंने जेसुइट स्कूल में अनेक विषयों का अध्ययन किया और गणित में विशेषज्ञता प्राप्त की। डेस्कार्ट ने गणित और भौतिक-विज्ञान में अनेक महत्वपूर्ण योगदान दिए। उसके योगदानों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान (गैलीलियों गैलिली के साथ) को आजकल विश्लेषणात्मक रेखागणित के नाम से जाना जाता है। सन् 1649 में स्वीडन की महारानी क्रिस्टिना के अनुरोध पर डेस्कार्ट स्टॉकहोम गया। महारानी ने उसे दर्शनशास्त्र का शिक्षक नियुक्त किया। क्रिस्टिना ने व्याख्यान का समय प्रातः 5 बजे निर्धारित किया। सुबह जल्दी उठने और कठोर जलवायु ने डेस्कार्ट के कमज़ोर स्वास्थ्य को और अधिक क्षीण कर दिया। शीघ्र ही 1650 में उसका देहांत हो गया। अपने जीवन में डेस्कार्ट का यश इतना अधिक बढ़ा कि अनेक कैथलिकों ने उसे सन्त के रूप में देखना शुरू कर दिया। जब उसके प्राणहीन शरीर (शव) को स्वीडन से फ़्रांस वापस लाया जा रहा था तो अनेक आतुर स्मृतिशेष (relics) संग्रहकों ने रास्ते में उसके शरीर के अंश निकाल लिए। फ़्रांस पहुँचने तक उनका शरीर बहुत छोटा रह गया था। डेस्कार्ट के दर्शनशास्त्र का विकास पुनर्जागरण और प्रारंभिक आधुनिक दर्शनशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में हुआ। मानवतावादियों की तरह वैज्ञानिक और दार्शनिक ज्ञान की खोज में उसने भी धार्मिक प्राधिकार को अस्वीकार किया।

गणितज्ञ विश्लेषणात्मक रेखागणित की खोज के लिए डेस्कार्ट को बहुत महत्व देते हैं। डेस्कार्ट के समय तक रेखागणित का संबंध रेखाओं और आकार से था तथा बीजगणित का संबंध अंकों से था, और दोनों विषय एक दूसरे से एकदम भिन्न थे। डेस्कार्ट ने बताया कि रेखागणित के लगभग सभी प्रश्नों को किस प्रकार बीजगणित के प्रश्नों में बदला जा सकता है। इसके लिए रेखांश की लंबाई के बारे में प्रश्न पूछकर और विषय का वर्णन करने के लिए उसने अक्षांक प्रणाली (coordinate system) को अपनाया।

डेस्कार्ट के सिद्धांत ने न्यूटन और लेबनिज़ के कैलकुलस के लिए आधार प्रदान किया और इस तरह से उसने आधुनिक गणितज्ञों के लिए आधारशिला बनाई। यह तब और भी अधिक हैरत भरा नज़र आता है जब यह मालुम चले कि विधि (method) पर चर्चा के दौरान डेस्कार्ट ने गणित में अपना योगदान मात्र उदाहरण की तरह दिया था।

मन और शरीर के अलग होने और शुद्ध तर्क पर आधारित डेस्कार्ट की पद्धति एक ऐसी समस्या थी जो सामाजिक विज्ञान की पद्धतियों पर निरंतर हावी रही। दरअसल, कांट (Kant) ने अपनी पुस्तक क्रिटीक ऑफ़ प्योर रीज़न (Critque of Pure Reason) में इस बुनियादी द्वैतवाद (dualism) पर प्रश्नचिन्ह लगाया। यद्यपि कांट ने द्वैतवाद को दूर करने का प्रयास किया लेकिन पूरी तरह वह सफल नहीं हो पाया। आदर्शवाद पर आधारित भाग 5.5 में हमने इस मुद्दे पर चर्चा की है। यहाँ, अब आपका ध्यान डेस्कार्ट के योगदानों के एक अन्य पहलू पर केंद्रित किया जा रहा है। यह पक्ष वैज्ञानिक और दार्शनिक ज्ञान प्राप्ति के तरीक़ों के लिए डेस्कार्ट की खोज से जुड़ा है।

डेस्कार्ट के इस प्रश्न पर वापस आएं कि निश्चित रूप से क्या जाना जा सकता है और देखें कि डेस्कार्ट इस प्रश्न के उत्तर में क्या कहना चाहता है। प्रारंभ में डेस्कार्ट सिर्फ़ एकल सिद्धांत पर आता है और वह है कि यदि कोई मुझे धोखा दे रहा है तब निश्चित रूप "मैं" हूँ या मेरा अस्तित्व है। डेस्कार्ट की यह बात सुप्रसिद्ध है और इसे कहते है कोजिटो एर्गो सम (Cogito, Ergo Sum) जिसका अर्थ है ("मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ")। इस तरीक़े से डेस्कार्ट का निष्कर्ष है कि उसे निश्चित रूप से मालूम हो सकता है कि उसका अस्तित्व

है। लेकिन किस रूप में? हमें अपने शरीर के बारे में ज्ञानेंद्रियों के उपयोग से पता लगता है परंतु डेस्कार्ट के तर्क में, ज्ञानेंद्रियों के उपयोग को तो पहले ही अविश्वसनीय सिद्ध कर दिया गया था। इसलिए डेस्कार्ट ने इस बिंदु पर केवल यह कहा कि वह एक सोचने वाली चीज़ है। सोचना ही उसका सत्त्व है क्योंकि उनके विषय में केवल यही संशय के परे है।

ज्ञानेंद्रियों (senses) की सीमाओं को और अधिक प्रदर्शित करने के लिए डेस्कार्ट ने तर्क दिया जिसे मोम तर्क (wax argument) कहा जाता है। मोम के टुकड़े को लें। ज्ञानेंद्रियों के उपयोग से हमें पता चलता है कि इसकी कुछ विशिष्ट विशेषताएं हैं जैसे उसकी शक्ल, बनावट, आकार, रंग, गंध आदि। मोम को आग के पास लाने पर ये विशेषताएं पूरी तरह बदल जाती हैं। फिर भी अभी भी यह वही पुरानी चीज़ है। अभी भी यह मोम का टुकड़ा है, जबकि ज्ञानेंद्रियों के आधार पर मिली जानकारी से स्पष्ट हो जाता है कि मोम की सारी विशेषताएं अब नया रूप धारण कर चुकी हैं। इसलिए, मोम की प्रकृति को ठीक से समझने के लिए हमें ज्ञानेंद्रियों के उपयोग की जगह अपने दिमाग का प्रयोग करना होगा। डेस्कार्ट का निष्कर्ष है, "जैसा कि मैंने सोचा वही मैंने अपनी आंखों से देखा, वास्तव में मैंने पूरी तरह से अपनी निर्णय शक्ति (faculty of judgement) से उसे समझा था और यह शक्ति मेरे मस्तिष्क में है।"

इस प्रकार, प्रत्यक्ष ज्ञान (perception) को अविश्वसनीय कह कर अस्वीकार करते हुए और निगमन (deduction) को विधि की तरह मानकर डेस्कार्ट ने ज्ञान की प्रणाली का निर्माण किया। द मैथड (1637 में प्रकाशित) में इसके अर्धांश के बाद डेस्कार्ट ने कृपालु ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करने का दावा भी किया। डेस्कार्ट के अनुसार ईश्वर दयालु है और जिसकी कृपा से उसे क्रियाशील दिमाग़ और संवेदी तंत्र (sensory system) मिले हैं और जो उसे धोखा देने की इच्छा नहीं कर सकता। इस प्रकार अंततः डेस्कार्ट निगमन (deduction) और प्रत्यक्ष ज्ञान (perception) के आधार पर जगत के बारे में ज्ञान प्राप्त करने की संभावना को स्थापित करता है। अतः ऐसा लगता है कि डेस्कार्ट के लिये अंतिम निश्चितता भगवान/ईश्वर से प्रकट होती है। डेस्कार्ट की यही प्रतिज्ञप्ति (proposition) इंग्लैंड में अनुभववादियों को ठीक नहीं लगी। वे शुद्ध तात्त्विक (metaphysical) तथ्यों के विरुद्ध थे। ज्ञान के स्रोत के रूप में उन्होंने शरीर और अनुभव पर ध्यान केंद्रित किया। आइए, भाग 5.4 में प्रत्यक्षवाद या अनुभववाद (empiricism) से जुड़े विचारों के बारे में विस्तृत चर्चा करें।

MAADHYAM IAS

5.4 अनुभववाद

बुद्धिवादी तर्कों की प्रतिक्रिया के रूप में अनुभववाद उभरा और ब्रिटिश समाज में बदलाव लाने वाली घटनाओं ने उस तरीके को प्रभावित किया जिससे एंग्लो-सैक्सन (Anglo-Saxons) लोगों ने सामाजिक यथार्थ को समझा था। इनमें सबसे पहली घटना थी – ब्रिटेन का गृह युद्ध (English Civil War) जिसमें राजतंत्र (monarchy) और सामंतवाद को चुनौती दी गई थी। दूसरी घटना थी, सारी मानवता में निजी अधिकारों और समानता की बढ़ती माँग। तीसरी थी, वाणिज्य और विज्ञान की अभूतपूर्व वृद्धि जो आविष्कारों और खोजों पर पूरी तरह आधारित थी जैसे गैसों के बुनियादी ज्ञान को समझने में बोयल (Boyle) के प्रयोग, जीवाणु (bacteria) जगत की खोज में लिवेनहॉक (Leeuwenhock) द्वारा अणुवीक्षक यंत्र (microscope) का उपयोग और विलियम हार्वे की रुधिर परिसंचरण की खोज। अपने कैल्कुलस में डेस्कार्ट के सिद्धांत का प्रयोग करने वाले न्यूटन ने गति के नियमों को स्थापित किया। इन नियमों ने अनुभववादियों के तर्क विकसित करने के तरीके को प्रमाणित किया। यह तरीका डेस्कार्ट के बुद्धिवाद से भी परे निकल गया। या यों कहें कि जॉन लॉक जैसे अनुभववादियों ने अनुभव और चिंतन के बलों को जोड़ा। दूसरी तरफ़ डेविड ह्यूम के संशयवाद (skepticism) और प्रश्न पूछने ने सामाजिक शोध में अनुभववादी परंपरा को स्थापित करने का मार्ग खोला। विज्ञान के दर्शनशास्त्र में उठने वाले तमाम शोधपद्धतिगत

प्रश्नों के लिये आधारशिला तैयार करने में लॉक ने जो काम शुरू किया उसका डेविड ह्यूम ने समापन किया। इसी वजह से इन चिंतकों के विचारों पर हमने इस अनुभाग में चर्चा की है। आइए, अनुभववाद को पेश करने से पूर्व कुछ शब्द कहें।

अनुभववाद का मुख्य सिद्धांत है कि सच की प्राप्ति केवल प्रत्यक्ष अनुभव से होती है। शब्दों को तभी समझा जा सकता है जब इनका उपयोग करने वालों द्वारा असली अनुभव से इन शब्दों को जोड़ा जाता है। 'आनुभविक' (empirical) शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द एम्पीरिया (empeiria) से हुई है जिसका अर्थ है अनुभव और इसका इतिहास प्लैटो और प्राचीन ग्रीक के दर्शशास्त्रियों (sophists) के समय से जुड़ा है। ब्रिटिश अनुभववाद (British empiricism) से आशय ग्रेट ब्रिटेन में अठारहवीं शताब्दी के दार्शनिक आंदोलन (movement) से है जो इस बात पर ज़ोर देता है कि हर तरह का ज्ञान अनुभव से प्राप्त होता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अनुभववादियों की तुलना में बुद्धिवादियों का मानना था कि ज्ञान तर्क द्वारा अंतर्ज्ञान के रूप में ज्ञात बुनियादी अवधारणाओं से मिलता है जैसे अंतर्जात या सहज विचार (innate ideas)। अन्य अवधारणाओं की प्राप्ति इनके निगमन से कर ली जाती है।

ब्रिटिश अनुभववादियों ने अंतर्जात या सहज विचारों के सिद्धांत का कड़ाई से खंडन किया और उनका तर्क था कि ज्ञानेंद्री अनुभव और अंदरुनी मानसिक अनुभवों जैसे संवेदनाओं और आत्म-चिंतन दोनों पर ज्ञान आधारित होता है। आइए ब्रिटिश अनुभववाद के प्रमुख प्रतिनिधियों के रूप में जॉन लॉक और डेविड ह्यूम के कुछ मूल विचारों की चर्चा करें।

जॉन लॉकः संवेदन से चिंतन की ओर (from sensation to reflection)

लॉक (उसकी जीवनी पर आधारित नोट के लिए कोष्ठक 5.2 देखें) का ध्यान ऐसी सामग्रियों (materials) पर केंद्रित था जिनसे हमारा ज्ञान निर्मित होता है। वह मानव ज्ञान की प्रकृति और सीमाओं की जाँच करना चाहता था। अपनी पुस्तक, ऐन ऐस्से कान्सर्निंग ह्यूमन अंडरस्टैंडिंग (1690) में, लॉक ने अपने प्रमुख विचारों को व्यक्त किया था।

MAADHYAM IAS

कोष्ठक 5.2: जॉन लॉक (जीवन-काल 1632-1704)

जॉन लॉक सर्वाधिक प्रतिष्ठित ब्रिटिश दर्शनशास्त्रियों में से एक था। वह ऑक्सफर्ड का शिक्षाविद् और चिकित्साशास्त्र का शोधकर्ता था। वह शैफ़्टसबरी के अर्ल लार्ड ऐश्ले कूपर का चिकित्सक था और लॉर्ड ऐश्ले के जिगर (liver) से वस्ति (cyst) हटाने का आपरेशन भी उसकी निगरानी में ही हुआ था। यह आपरेशन सफल रहा। व्यापार और उपनिवेशों के बारे में जानकारी एकत्र करने हेतु सरकारी प्रभारी के रूप में लॉक ने कार्य किया था। वह अर्थशास्त्र का लेखक, राजनीतिक कार्यकर्ता और क्रांतिकारी भी था। यह क्रांति 1688 की गौरवमय क्रांति (Glorius Revolution) के रूप में सफल हुई। लॉक का अधिकांश काम सत्तावाद का खंडन करने के रूप में देखा गया। यह विरोध न केवल व्यक्तिगत स्तर पर बल्कि सरकार और चर्च जैसे संस्थानों के स्तर पर भी दिखाई दिया था। उसका मानना था कि राजाओं को हुक्म चलाने के अधिकार भगवान से नहीं मिले थे और सभी मनुष्य स्वतंत्र हैं और इस दशा में सभी मनुष्य एक समान हैं।

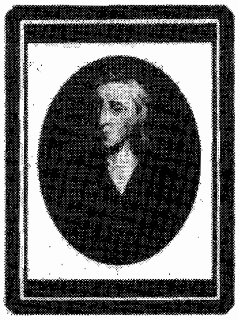

जॉन लॉक
(1632-1704)

लॉक के मत में बच्चे का दिमाग कोरे कागज़ की तरह होता है और सभी विचार असली अनुभव से ही उद्भूत होते हैं। मस्तिष्क में कोई भी अंतर्जात या सहज विचार नहीं होते लेकिन इसमें अंतर्जात या सहज शक्तियों (faculties) का समावेश होता है अर्थात दिमाग या मन किसी बात का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है, उसे याद करता है और मन में आने वाले विचारों को इससे जोड़ता है। मन में इच्छा उत्पन्न होती है, वह विचार-विमर्श करता है और निश्चय करता है और ये मानसिक गतिविधियाँ स्वयं विचारों के नये वर्ग का स्रोत

हैं। अनुभव इसलिए दोहरा होता है। एक तरफ़ देखने, सुनने, छूने आदि के संवेदन के विचार हैं और दूसरी तरफ़ चिंतन के विचार होते हैं, जैसे सोचना, विश्वास करना आदि। पहले विचार सरल हैं जहाँ मन निष्क्रिय है और चिंतन संबंधी दूसरे प्रकार के विचार अधिक जटिल और सक्रिय होते हैं। ऐसे विचार हमारे अपने मानसिक अनुभवों (introspection) की हमारी जागरुकता को प्रतिबिंबित करते हैं।

जहाँ तक हमारे विचार और अनुभव की गई वस्तु (object) के बीच संबंध का प्रश्न है, लॉक ने इस अंतर को अधिक स्पष्ट किया है। उसका तर्क है कि वस्तुओं (objects) की कुछ विशेषताएं होती हैं जो मस्तिष्क में विचार उत्पन्न करती हैं।

लॉक का मानना है कि विशेषताएं प्राथमिक और गौण प्रकार की होती है। प्राथमिक विशेषताएं वे हैं जो गंध, रंग, स्वाद और ध्वनि जैसी ज्ञानेंद्रियों द्वारा पैदा होती हैं। गौण विशेषताएं वे हैं जिनसे भार (bulk), कठोरता (hardness), आयतन (volume) आदि का आभास होता है।

लॉक के अनुसार, प्रकृति का काम करने का तरीक़ा सदैव हम से छिपा रहता है। आमतौर पर हमें नज़र आने वाली बहुत सी वस्तुओं की शक्ल के बारे में विश्वसनीय विचार गठित करने में सावधानी से गौर करना और प्रयोग सहायक सिद्ध हो सकते हैं लेकिन उनकी वास्तविक प्रकृतियों के बारे में हमारे लिये सोच पाना भी संभव नहीं होता। लॉक के अनुसार हमें तो विचार या वस्तु विशेष का केवल नाममात्र का सारतत्व मालुम होता है। अतः पदार्थों के साधारण नाम आमतौर पर उन अर्थों पर आधारित हैं जिनका प्रेक्षण करके उन्हें वर्गीकृत किया जाता है। ऐसे शब्दों के अर्थ पर भले ही हमारे बीच सहमति होती है भले ही इन शब्दों के वास्तविक सारतत्व के प्रति हमारे बीच अनभिज्ञता ही हो। लॉक का मानना है कि हमारे ज्ञान का विस्तार काफ़ी सीमित होता है, अधिक से अधिक हमारे लिये प्रसंभाव्य ज्ञान (probable knowledge) की अपेक्षा करना ही संभव है।

लॉक इस तर्क को ज्ञान की सामान्य प्रकृति तक ले जाता है और विचारों पर सहमति या असहमति के दृष्टिकोण के रूप में ज्ञान के अति सरल दिखने वाले भाव (deceptively simple notion) को प्रस्तुत करता है। इन सभी का परिणाम है कि हमारा ज्ञान सीमित होता है। लॉक की परिभाषा के अनुसार हमें तभी वास्तविक ज्ञान प्राप्त हो सकता है जब हमारे विचार स्पष्ट हों और हमें इनके बीच संबंध मालुम हों ताकि उनमें मौजूद सहमति या असहमति का पता लग सके। अक्सर ऐसा नहीं होता विशेष रूप से जब असली मतलब ही मुद्दा हो।

लॉक के प्रयासों से यह संयत निष्कर्ष निकलता है कि निश्चितता पर हमारी पहुँच काफ़ी मुश्किल है और इसलिए अक्सर हमें प्रसंभाव्य ज्ञान या मात्र राय से ही संतुष्ट रहना होगा। आखिर में लॉक का सुझाव है कि मुख्य रूप से हम न्यूनीकृत (reduced) ज्ञानमीमांसीय अपेक्षाओं को ही अपनाएं। ह्यूम ने इस निष्कर्ष से आगे बढ़ते हुए प्रारंभ में ही संशयवादी रुख़ अपनाया और ज्ञान की निश्चितता की अपेक्षाओं को और भी न्यून कर दिया।

जॉन लॉक ने अपने समसामयिकों द्वारा मानवीय बोध की प्रक्रिया को समझने के तरीके पर काफ़ी प्रभाव डाला था। उनमें से बहुत उसके विचारों से असहमत थे। उसका प्रमुख समालोचक जॉर्ज बर्कले (जीवन-काल 1685-1753) था। जॉन लॉक के विचारों पर अपना पक्ष रखते हुए बर्कले ने ट्रीटाइज़ेस कंसर्निंग द प्रिंसिपल्स ऑफ़ ह्यूमन नॉलेज (1710) एवं थ्री डायलॉगन बिटबीन हेलास *(Hylas)* एंड फिलोनस (1734) नामक पुस्तकों की रचना की। विश्व का मूलभूत सार पदार्थ है और मस्तिष्क केवल एक निष्क्रिय साधन है, लॉक के इस सिद्धांत के विपरीत जॉर्ज बर्कले ने मस्तिष्क को पहले रखा और दावा किया कि पदार्थों का अस्तित्व तभी होता है जब मस्तिष्क उन पर विचार करता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, जॉन लॉक के भी काफ़ी समर्थक थे। उनमें से एक स्कॉटिश दर्शनशास्त्री डेविड ह्यूम था जिसने लॉक के विचारों को तार्किक ढंग से लागू किया और यह तर्क रखा कि हर तरह की सोच साधारण और अलग-अलग प्रभावों से बनती है। आइए ह्यूम विचारों की थोड़ी और चर्चा करें।

डेविड ह्यूमः विश्वास का एक आदत बन जाना (beliefAsA habit) डेविड ह्यूम (उनके योगदान पर आधारित नोट के लिए कोष्ठक 5.3 देखें) का तर्क है कि चूंकि मनुष्यों का जीवन-यापन और कामकाज दरअसल भौतिक जगत में होता है इसलिए हमें यह प्रेक्षण करना चाहिए कि ऐसा किस प्रकार होता है। ह्यूम के अनुसार, दर्शनशास्त्र का सही उद्देश्य मात्र यह व्याख्या करना है कि हमने जो किया उस पर हमें विश्वास क्यों है।

कोष्ठक 5.3: डेविड ह्यूम (जीवन-काल 1711-1776)

डेविड ह्यूम को सामान्यतया अंग्रेज़ी में लिखने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण दार्शनिक के रूप में माना जाता है। ए ट्रीटाइज़ ऑफ़ ह्यूमन नेचर (1739-1740), द एंक्वारिस कंसर्निंग ह्यूमन अंडरस्टैंडिंग (1748), और कंसर्निंग द प्रिंसिपल्स ऑफ़ मौरल्स (1751) और इसके साथ-साथ मरणोपरांत प्रकाशित डायलॉग्स कंसर्निंग नैचुरल रिलिजन (1779) - ह्यूम की ये कृतियाँ सदा सदा के लिए प्रभावशाली बनी हुई हैं भले ही उसके बहुत से समसामयिकों ने इन्हें संशयवाद और अनीश्वरवाद की रचनाओं के रूप में उपेक्षित किया था। ह्यूम की रचनाओं का प्रभाव नैतिक दर्शनशास्त्र और उसके घनिष्ठ मित्र ऐडम स्मिथ की आर्थिकी पर कृतियों में साफ़ नज़र आता है। ह्यूम ने इमैनुअल कांट को भी उसकी सैद्धान्तिक निद्रा से जगाया है और "जेरेमी बैंथम के नज़रिये को झकझोरा। चार्ल्स डार्विन ने ह्यूम की गिनती प्रमुख प्रभावशाली व्यक्ति के रूप में की थी।

डेविड ह्यम (1711-1776)

MAADHYAM IAS

छवियों की हमारी मानसिक विषयवस्तुओं में सावधानीपूर्वक किये गये अंतर से ह्यूम मानव आस्था का विश्लेषण शुरू करता है। ये छवियाँ तत्काल अनुभव की प्रत्यक्ष, जीवंत और प्रभावशाली उपज हैं। विचार इन मौलिक छवियों की प्रतिलिपियाँ मात्र हैं। जैसे जिस पेड़ को मैंने अभी देखा उसका रंग एक छवि है जबकि मेरी माँ के बालों के रंग की मेरी स्मृति मात्र एक विचार है। चूंकि हरेक विचार की व्युत्पत्ति पहले हुई छवि में होती है, ह्यूम का मानना है कि यह हमेशा सार्थक है कि विचार विशेष के मूल में जाने के लिये पूछा जाये कि इस विचार की व्युत्पत्ति कौन सी छवि पर आधारित है।

एक विचार का दूसरे विचार से सीधा जोड़ सदैव ऐसे तालमेल का परिणाम है जो हमने खुद ही बनाया है। हमारी अपनी मानसिक प्रक्रिया का उपयोग तीन तरीक़ों में से किसी एक द्वारा विचारों को एक दूसरे से जोड़ने के लिए किया जाता है। ये तरीक़े हैं: समरूपता (resemblance), समीपता (contiguity), या कारण और प्रभाव (cause and effect)। (उदाहरणार्थ यह पशु उस पशु जैसा दिखता है (समरूपता), यह पुस्तक उस मेज़ पर है (समीपता), इस बटन को घुमाने से बत्ती बुझ जायेगी (कारण और प्रभाव, आदि)। अनुभव से हमें विचार और उनसे जुड़ावों या तालमेलों के बारे में हमारी जागरुकता का पता लगता है। तमाम मानव आस्थाएं इन साधारण तालमेलों के बारम्बार लागू किये जाने से पैदा होती है। कारण और प्रभाव के अनुमानित संबंधों को आकर्षित करके ऐसी आस्थाएं हमारी वर्तमान संवेदी छवियों और स्मृति के परे तक जा सकती हैं। लेकिन, चूंकि प्रत्येक विचार विशिष्ट और हर दूसरे विचार से अलग होता है इसलिए विचारों के बीच कोई स्वतः सिद्ध संबंध दृष्टिगोचर नहीं होता है। ये संबंध केवल उसी प्रकार के हमारे अनुभवों से निकाले

जा सकते हैं। ह्यूम का तर्क है कि कार्यकारण वाले तर्क को बौद्धिक स्तर पर कभी भी प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। सीखने के उद्देश्य से, हमें अवश्य मान लेना चाहिए कि हमारे पिछले अनुभव हमारे वर्तमान और भविष्य के लिये प्रासंगिक (relavent) होते हैं। यद्यपि दरअसल यह तो हम सभी का मानना है कि भविष्य भी भूतकाल की भांति ही होगा, परंतु उस विश्वास की सच्चाई स्वतः सिद्ध नहीं है। दरअसल, प्रकृति के बदलने की संभावना हमेशा बनी रहती है इसलिए भूतकाल से भविष्य के लिए निष्कर्ष निकालना बौद्धिक रूप से कभी भी निश्चित नहीं होता है। अतः ह्यूम के विचार में दरअसल बुनियादी तौर पर सभी आस्थाएं ग़ैर-बौद्धिक होती हैं।

हमारा विश्वास कि कल सूरज उगेगा, इस संदर्भ में आप ह्यूम के मनपसंद उदाहरण पर विचार करें। स्पष्ट रूप से यह यथार्थ की बात है और हमारा दृढ़ विश्वास है कि ऐसा पृथ्वी के परिक्रमण के परिणामस्वरूप होता है। यह कार्यकारण का संबंध हमारे पूर्व प्रेक्षणों पर आधारित है। परंतु कल भी ऐसा ही होगा हमारा यह विश्वास केवल पूर्व अनुभव के संदर्भ में प्रमाणित किया जा सकता है। अतः हमारे पास कोई बौद्धिक आधार नहीं है कि हम यह मानते रहें कि कल सूरज उगेगा ही, परंतु फिर भी हमारा ऐसा मानना चलता रहता है।

हमारे मौजूदा अनुभव और स्मृति की विषयवस्तु के परे जाकर कल्पना जगत में विचरने से संशयवाद (skepticism) का हमे रोकना सही है। लेकिन फिर भी स्वभावतः ही हमारे मानने की या विश्वास करने की सीमा और बढ़ जाती है। ह्यूम का मानना है कि आदत या प्रथा के संदर्भ से ऐसे अप्रमाणित विश्वासों की व्याख्या की जा सकती है। इसी तरह अनुभवों से सीखने की हमारी प्रक्रिया चलती रहती है। जब अपने अनुभव के दौरान मुझे घटनाओं में निरंतर परस्पर तालमेल दिखाई देता है तो आगे भी इन्हें एक-दूसरे से जोड़ने की मुझे आदत पड़ जाती है। यद्यपि सूरज उगने के पिछले बहुत से अनुभव प्रकृति के भावी रूप की कोई गारंटी नहीं देते। लेकिन इन विचारों का आदी होने का मेरा अनुभव मुझ में एक ऐसी अपेक्षा पैदा कर देता है कि कल फिर सूरज उगेगा। ऐसा ही होगा, इस बात को सिद्ध करना मेरे लिए संभव नहीं है लेकिन फिर भी मुझे लगता है कि ऐसा अवश्य होगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

याद रखें कि विचारों का आपसी तालमेल एक ऐसी प्रबल प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसमें अलग-अलग विचार मस्तिष्क में एक-दूसरे से जुड़े हुए नज़र आते हैं। निस्संदेह, तर्कपूर्ण माध्यमों से ही ये एक-दूसरे से जुड़े हो सकते हैं जैसा कि गणितीय ज्ञान वाले विचारों के जुड़ावों में होता है। लेकिन ह्यूम का तर्क है कि जहाँ ऐसा संभव होता है, वहाँ भी तर्क (reason) केवल एक मंद और असक्षम मार्गदर्शक है, जबकि बारम्बार दुहराने से अर्जित आदतें एक दृढ़ विश्वास पैदा कर सकती हैं जो तर्क से स्वतंत्र होता है।

असल में हमारे विश्वास तर्क की बजाए, हमारी अनुभूति या भावना से उत्पन्न होते हैं। ह्यूम के लिए दृढ़ विश्वास (conviction) की कोटि के संदर्भ में ही कल्पना और विश्वास एक-दूसरे से भिन्न हैं। विश्वास की कोटि के आधार पर ही वस्तुओं का पूर्वानुमान किया जाता है। यद्यपि यह सकारात्मक उत्तर निराशाजनक प्रतीत होता है परंतु ह्यूम इस बात पर कायम है कि प्रथा या आदत ही जीवन का एक महान मार्गदर्शक है और सभी प्राकृतिक विज्ञानों की आधारशिला है।

ह्यूम ने पाया कि आद्य मानवीय विश्वास वही है जो हमें दिखाई देता है, सुनाई पड़ता है अर्थात् भौतिक वस्तुएं स्वयं ही। किंतु आधुनिक दर्शनशास्त्र और विज्ञान ने हमें विश्वास दिलाने का प्रयास किया है कि शाब्दिक रूप से ऐसा नहीं है। प्रतिनिधानात्मक (representationlist) दर्शनशास्त्र के अनुसार, हमें अनुमानित कारण का कोई सीधा अनुभव नहीं होता है। यदि हमें वस्तुओं का केवल विचारों के माध्यम से ही पता लगता है तो

कार्यकारण संबंध स्थापित करने के लिए उन्हीं विचारों का उपयोग नहीं किया जा सकता है।

दरअसल, ह्यूम का मानना है कि बाहरी जगत की वास्तविकता में हमारा विश्वास पूरी तरह से विवेकहीन है। इसे न ही विचारों के संबंध की तरह और न ही वास्तविकता की तरह माना जा सकता है। यद्यपि यह पूरी तरह अनुचित है, फिर भी बाहरी जगत में विश्वास सहज और अपरिहार्य (unavoidable) है। हमें यह मानने की आदत पड़ गई है कि हमारे विचार बाहरी घटनाओं पर बनते हैं, चाहे ऐसा करने के लिए हमारे पास कोई असल प्रमाण नहीं है।

यह बात हमें कहाँ पहुँचाती है? ह्यूम का मानना था कि वह बड़े दृढ़ रूप से अनुभववादी कार्यक्रम को पूरा करने में लगा हुआ था। लॉक ने बड़ी ईमानदारी के साथ अनुभव से प्राप्त होने वाले ज्ञान की संभावना को प्रस्तावित किया था लेकिन इस दिशा में वह अधिक आगे नहीं बढ़ सका था। बर्कले ने इस प्रस्ताव के भावी निहितार्थों पर ग़ौर किया था। इसके साथ, ह्यूम ने दर्शाया कि अनुभववाद अनिवार्य रूप से निरे संशयवाद को जन्म देता है।

ह्यूम के अनुसार, शुद्ध गणित का ज्ञान सुरक्षित है क्योंकि संसार के बारे में बिना किसी पूर्वाग्रह के गणित विचारों के संबंधों पर ही निर्भर करता है। भौतिक वस्तुओं की मौजूदगी की कोई भी पूर्व धारणा क़ायम न करते हुए उपयोगी आदतों के रूप में अपने अनुभव का उपयोग करने में हमें प्रायोगिक प्रेक्षणों से सहायता मिल जाती है। उपयोगी अमूर्त ज्ञान प्राप्ति का दावा करने वाला कोई भी अन्य ज्ञानमीमांसीय प्रयास निरर्थक और अविश्वसनीय ही होता है।

ह्यूम ने न्यूनीकृत संशयवाद को सर्वाधिक उचित स्थिति माना है। गणित और विज्ञान के वैध उद्देश्यों का अनुसरण करते समय न्यूनीकृत (mitigated) संशयवाद मानव ज्ञान की सीमाओं को नम्रतापूर्वक स्वीकारता है। अपने ग़ैर-दर्शनशास्त्रीय पलों में, निःसंदेह रोज़ाना के जीवन से जुड़ी स्वाभाविक आस्था की ओर पुनः हमारा आकर्षण हो जाता है, ऐसे समय में इस बात से कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि ऐसी आस्था में विवेकशीलता का नितान्त अभाव होता है।

ह्यूम का मानना था कि मनुष्य विभिन्न दृष्टिकोणों का पुंज है और उस अर्थ में मनुष्य की कोई निश्चित अस्मिता नहीं है। उसने इस विचार की आलोचना की कि हर चीज़ का एक कारण होता है। दरअसल, उसमें हर ऐसी चीज़ पर शंका जताई जिसे अपनी सामान्य बुद्धि के आधार पर और वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर भी मान लिया जाता है। दर्शनशास्त्रियों के लिए ह्यूम की तीखी शंकाओं का जवाब देना काफ़ी मुश्किल रहा है। ज्ञान के सिद्धांतों के बारे में दर्शनशास्त्रीय वादविवादों पर ह्यूम का काफ़ी प्रभाव पड़ा।

जैसा कि पहले कहा गया है, कांट को उसकी सैद्धान्तिक निद्रा से जगाने के रूप में ह्यूम का वर्णन किया जाता है। ह्यूम के विचारों पर प्रतिक्रिया के रूप में कांट ने ज्ञान के सिद्धांत को समझने का प्रयास किया। ह्यूम के संशयवाद से ऊपर उठकर लॉक निश्चितताओं की खोज में लगा था। परंतु लॉक फिर भी डेस्कार्ट के शुद्ध बुद्धिवाद के पक्ष में नहीं था। इमैन्युअल कांट मानव मस्तिष्क की विवेकपूर्णता को एक मीमांसात्मक स्तर तक ले गया और इस प्रयास ने उसे आदर्शवादियों की श्रेणी में रख दिया।

अगले भाग में अपने आसपास की सामाजिक वास्तविकता को समझने के लिए हमने आदर्शवादी उपागम की चर्चा की है। अगले भाग पर जाने से पहले यह अच्छा होगा कि ज्ञान प्राप्त करने की विभिन्न विधियों के बारे में जॉन लॉक और डेविड ह्यूम के कथनों को आत्मसात करने के लिए हम सोचें और करें 5.1 अभ्यास पूरा कर लें।

MAADHYAM IAS

सोचें और करें 5.1

लॉक के अनुसार अनुभूमि और चिंतन से जुड़े हमारे अनुभवों से वस्तुओं के बारे में हमारे विचार उत्पन्न होते हैं। ह्यूम ने इस चर्चा को आगे बढ़ाते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि ऐसा बहुत कुछ जिनके बारे में हम निश्चितताओं के रूप में सोचते हैं केवल आदते है।

आपको क्या करना है?

उपर्युक्त कथनों को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिक व्याख्याओं से अपरिचित किन्हीं पाँच व्यक्तियों से बातचीत करके पता लगायें कि वे सूर्य की गति की व्याख्या किस प्रकार करेंगे और उनका कैसे यह मानना है कि पृथ्वी गोल है? उनकी व्याख्या के आधार पर लगभग 500 शब्दों में संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए और अपने अध्ययन केंद्र के सहपाठी विद्यार्थियों तथा शैक्षिक परामर्शदाताओं के साथ इस विषय पर चर्चा करें।

5.5 आदर्शवाद

दर्शनशास्त्र में आदर्शवाद का अर्थ विचारों की एक ऐसी पद्धति से है, जिसमें वस्तु के बाह्य बोध को विचारों से निर्मित माना जाता है। आदर्शवाद की मान्यता है कि अनुभव किये जाने वाले संसार की रचना करने में मस्तिष्क की महत्वपूर्ण भूमिका है। विचारों के इतिहास में हमें आदर्शवाद के विभिन्न रूप और विभिन्न अनुप्रयोग दिखाई देते हैं। इसके सबसे क्रांतिकारी रूप को अस्वीकार किया जा चुका है क्योंकि वह अहंवाद के समकक्ष है। अहंवाद (solipsism) का तात्पर्य है कि सारी वास्तविकताएँ कुछ और न होकर व्यक्ति के मस्तिष्क के क्रियाकलाप हैं और यथार्थ में व्यक्ति के आत्मत्व के अलावा और कुछ भी नहीं होता है। आदर्शवादियों ने आमतौर पर बाहरी या प्राथमिक संसार के अस्तित्व को स्वीकार किया है और उन्होंने यह दावा नहीं किया है कि बाह्य जगत मात्र चिंतन है। उनका मानना है कि मस्तिष्क सक्रिय होता है और तत्त्व के ऐसे रूप को सृजित करने तथा उसे बनाए रखने में सक्षम होता है, जिसका अस्तित्व नहीं होता जैसे क़ानून, धर्म, कला और गणित (जॉर्ज बर्कले के विचारों के लिए कोष्ठक 5.4 देखें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 5.4: आदर्शवाद और जॉर्ज बर्कले

अठारहवीं शताब्दी का आइरिश दार्शनिक जॉर्ज बर्कले प्रसिद्ध आदर्शवादी दार्शनिक था। उसका मत था कि हम जिन वस्तुओं से परिचित हैं, उनके सभी पहलुओं को मस्तिष्क में मौजूद विचारों की परिधि में सीमित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कुर्सी या गाय का विचार हमारे मस्तिष्क में पहले से ही मौजूद होता है इसलिए कुर्सी या गाय को देखते ही हमारे लिये तुरंत उन्हें पहचानना संभव होता है। इस तरह देखने वालों ने बाहरी वस्तु (कुर्सी या गाय) के अस्तित्व को जादू से पैदा नहीं किया है। वास्तव में, बर्कले का मानना था कि बाहरी वस्तुओं के बारे में सही विचार मनुष्य के मस्तिष्क में सीधे भगवान द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं।

जार्ज बर्कले
(1685-1753)

आदर्शवाद का विरोध यथार्थवाद से किया जा सकता है। यथार्थवाद इस सिद्धांत पर आधारित है कि सार्वभौमिक या सामान्य विचारों का वस्तुगत अस्तित्व होता है और बोध की वस्तु के रूप में पदार्थ का वास्तविक अस्तित्व होता है। दूसरी ओर, आदर्शवाद वह सिद्धांत है, जिसमें पदार्थ के ऊपर आत्मा (spirit), मस्तिष्क या भाषा की प्रधानता को माना गया है। इसमें यह दावा शामिल है कि विश्व जिस स्वरूप में है, उसे उस रूप में बनाने में विचारों की अहम् भूमिका होती है। दूसरे शब्दों में, विचार और दुनिया दोनों एक-दूसरे के लिए बने हैं अथवा वे एक-दूसरे का सर्जन करते हैं।

अठारहवीं शताब्दी के जर्मन दार्शनिक इमैनुल कांट ने संभावित ज्ञान की सीमा में अपनी समालोचनात्मक खोज से आदर्शवाद को और अधिक परिष्कृत किया। कांट का मानना था कि मस्तिष्क के प्रभाव के वशीभूत हमें दुनिया काल और स्थान के रूप में दिखाई देती है। हीगल (जीवन-काल 1770-1831) का विचार था कि विज्ञान की तरह इतिहास को भी यथासंभव तार्किक (rational) होना चाहिए। यह कहा जा सकता है कि "आदर्शवाद" इस मान्यता को प्रकट करता है कि अमूर्त या मानसिक सत्ताएं (entities) संसार से स्वतंत्र वास्तविकता वाली होती हैं। प्लैटो का विचार था कि जिन भी लक्षणों और वस्तुओं के बारे में (properties and objects) सोचा जा सकता है उनका एक स्वतंत्र अस्तित्व होना आवश्यक है। भ्रमवश, इस प्रकार के आदर्शवाद को एक समय में यर्थाथवाद कह दिया गया था।

इमैनुअल कांट: पूर्व सिद्ध (a priori) श्रेणियाँ

जैसा कि पहले कहा गया है, कांट (उनकी संक्षिप्त जीवनी के लिए कोष्ठक 5.5 देखें) का उद्देश्य बुद्धिवाद और अनुभववाद के बीच के परंपरागत द्विभाजन से ऊपर जाकर आगे बढ़ने का था। बुद्धिवादियों ने यह दिखाने का प्रयास किया था कि तर्क का सावधानी से उपयोग करने से विश्व को समझा जा सकता है; इससे हमारे ज्ञान को संदेह मुक्त होने की गारंटी मिलती है। लेकिन इसकी व्यावहारिक विषयवस्तु के बारे में बुद्धिवादियों ने कुछ गंभीर प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया। दूसरी तरफ़ अनुभववादियों ने तर्क दिया कि हमारा समस्त ज्ञान अनुभव पर आधारित होना आवश्यक है, इस प्रकार व्यावहारिक विषयवस्तु को तो सुनिश्चित कर लिया गया लेकिन हुआ यह कि हमें अपने ज्ञान के बारे में सुनिश्चितता बहुत ही कम सीमा तक मिल पाई। दोनों ही उपागम असफल रहे। असफलता के बारे में कांट का तर्क था कि इन दोनों की बुनियाद समान और ग़लत पूर्वाग्रह पर आधारित थी। इसे ठीक करने के लिए कांट ने द क्रिटीक ऑफ़ प्योर रीज़न (The Critique of Pure Reason) (1781) नाम से एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में कांट ने भौतिक संसार के बारे में हमारे ज्ञान की बुनियाद के बारे में अपने विचारों को स्पष्ट किया। नैतिक स्वतंत्रता और सही को चुनने की मानवीय क्षमता में उसका अटूट विश्वास था।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 5.5 इमैनुअल कांट (जीवन-काल 1724-1804)

इमैनुल कॉंट का जन्म कोनिस्बर्ग, जर्मनी में हुआ था। वह जिस छोटे से क़स्बे में रहता था, उसने उसे कभी नहीं छोड़ा। पवित्र धार्मिक वातावरण में उसका पालन-पोषण हुआ। यद्यपि अपने जीवन के अंतिम वर्षों में वह चर्च नहीं जाता था, लेकिन उसने अपने जर्मन शुचितावादी (puritanical) संस्कारों को बनाए रखा। फिर भी वह अपने को उसे समय की संशयवादी विचारधारा से अलग नहीं रख पाया। हयूम ने कांट को सबसे ज़्यादा प्रभावित किया बाद में कांट ने उसी का खंडन किया। डूरंट (1961: 261-262) नामक एक जीवनी लेखक ने कहा कि "कांट का जीवन महा नियमित ढंग से चलता था। उठना, कॉफ़ी पीना, लिखना, व्याख्यान देना, खाना, टहलना उसकी नियमित क्रियाएँ थीं।" अपने जीवन के इन शांतिपूर्ण वर्षों में उसने अनेक विषयों पर लिखा जिनमें भौतिक और तात्त्विक लेखन दोनों शामिल थे। उसने ग्रह-उपग्रहों, पृथ्वी, ज्वालामुखी, नृशास्त्र और यहाँ तक कि शिक्षाशास्त्र के बारे में लिखा।

इमैनुअल कांट
(1724-1804)

अपनी पुस्तक, 'द क्रिटीक ऑफ़ प्योर रीज़न' में कांट ने शुद्ध तर्क पर अधिक ध्यान न देकर इसकी सीमाओं पर प्रकाश डाला है। वास्तव में चेतना (senses) के तत्वों को अशुद्ध किए बिना वह शुद्ध तर्क को अनुभवातीत (transcendental) स्तर तक ले जाना चाहता था। वह

समग्र रूप से उस भूमिका का विरोधी नहीं था जिसे चेतना द्वारा निभाया जाता है और न ही वह तर्क को अस्वीकार कर रहा था। उसने अनुभववादी और बुद्धिवादी तत्वों को आपस में मिला दिया। यह कार्य उसने कैसे किया? ज्ञान की उत्पत्ति कहाँ से होती है और यह किस प्रकार का ज्ञान है – इन दोनों में कांट ने विभेद किया। कांट की व्याख्याओं का अनुसरण करने के लिए इन विभेदों (कोष्ठक 5.6 देखें) को समझना महत्वपूर्ण है।

कोष्ठक 5.6: विश्लेषणात्मक और संश्लेषणात्मक प्रतिज्ञप्तियाँ और पूर्वसिद्ध तथा कार्यकारण अनुमान पद्धतिपरक ज्ञान

विश्लेषणात्मक प्रतिज्ञप्ति में विषय में विधेय समाहित होता है। उदाहरण के लिए क्रिकेट की गेंदें गोल होती हैं।

संश्लेषणात्मक प्रतिज्ञप्ति में, विषय और विधेय एक दूसरे से स्वतंत्र होते हैं।

इसे और स्पष्ट करते हुए कांट का मानना था कि पूर्वसिद्ध ज्ञान अनुभव से स्वतंत्र तर्क से आता है। उदाहरण के लिए, 2+2 = 4 यह एक पूर्व-सिद्ध ज्ञान का उदाहरण है। उत्तरकालीय या बाद का (posteriori) ज्ञान इंद्रियजनित अनुभवों पर आधारित होता है। उदाहरण के लिए, चिड़िया पेड़ पर बैठी है, यह कथन इंद्रियजन्य अनुभव पर आधारित है।

कांट ने आगे यह स्पष्ट किया कि चिंतन-प्रक्रिया किस प्रकार होती है। उसके अनुसार हमारे पास स्थान (space) और समय जैसी कुछ अंतर्ज्ञानीय (intuitive) श्रेणियाँ होती हैं, जो इंद्रियजन्य छवियों से पहले आने वाली स्वतंत्र एवं स्वयंभूत (absolute) हैं। बर्कले की समस्या के प्रश्न पर कि क्या हमें कभी वास्तविकता या वस्तुओं के सत्व का ज्ञान हो पायेगा, कांट को वस्तुओं के अस्तित्व के बारे में कोई शिकायत ही नहीं हुई। ऑस्बर्न (1991: 103) ने कांट की स्थिति को व्यक्त करते हुए कहा, "मेरी अपनी चेतना के अस्तित्व मात्र से मेरे आसपास की वस्तुओं का अस्तित्व सिद्ध होता है"। लेकिन कांट ने ज्ञान की सीमा का निर्धारण किया और तथ्यों/परिघटनाओं (phenomena) तथा प्रकृति-तत्वों (noumena) के बीच अंतर किया (देखें कोष्ठक 5.7)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 5.7: तथ्य और प्रकृति तत्त्व या सद्बुद्धि द्वारा कल्पित वस्तु

कांट के अनुसार तथ्यों एवं प्रकृति तत्वों के क्षेत्रों में अंतर करना निहायत ज़रूरी है। हमारे सारे संश्लेषणात्मक पूर्व-सिद्ध निर्णय तथ्यों के क्षेत्र में आते हैं। तथ्य वे छवियां हैं जिनसे हमारे अनुभव रचित होते हैं। दूसरी ओर, प्रकृति तत्व वे चीज़ें हैं जिनसे यथार्थता का निर्माण होता है। इसे कांट ने "डिंग" और "सिच" (स्वयं चीज़ ही) कहा है। चूंकि स्वयं चीज़ तो हमारे अनुभव से स्वतंत्र ही होती है, इसलिये हमें प्रकृति तत्वों के क्षेत्र का ज्ञान ही नहीं होता है।

कांट के अनुसार, प्रकृति के सर्वाधिक मूल नियम, गणित की सत्यता की भांति, विशेष रूप से इसलिए ज्ञात हैं क्योंकि वे विश्व जैसा है, उसका वर्णन नहीं करते बल्कि वे उस विश्व की संरचना नियत करते हैं, जिसका हमें अनुभव होता है। संवेदनात्मक अंतर्बोध के शुद्ध रूप और समझ की शुद्ध अवधारणा को लागू कर हमें तथ्यों क्षेत्र के बारे में क्रमबद्ध दृष्टिकोण प्राप्त होता है लेकिन हमें प्रकृति तत्व के विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं होता है। गणित और विज्ञान निश्चित रूप से प्रतिरूपों की सत्यता को बताते हैं, केवल तत्वमीमांसा में ही हमें प्रकृति-तत्वों के विषय में सिखाने का दावा मिलता है।

आइए इस बिंदु पर हम कांट की प्रकृति तत्वों की विचारधारा को पूर्णतः समझने के लिए सोचें और करें 5.2 को पूरा कर लें।

सोचें और करें 5.2

कांट के अनुसार, प्रकृति तत्त्व (noumena) हमारे ज्ञान-क्षेत्र से बाहर हैं। इस कथन के परिदृश्य में निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

प्रश्न

- क्या आपके विचार में धर्म को प्रकृति तत्त्व माना जा सकता है; क्योंकि यह व्याख्या के क्षेत्र से परे है?
- क्या आपको महसूस होता है कि धार्मिक प्रतिरूपों की व्याख्या करने के लिए वैज्ञानिक स्पष्टीकरण अपर्याप्त है?
- क्या वैज्ञानिक स्पष्टीकरण और विश्वास की विषय-वस्तुओं में कोई विरोधाभास है?
- एक ऐसे वैज्ञानिक की स्थिति को कैसे स्पष्ट किया जा सकता है जिसे चमत्कार जैसी अलौकिक घटनाओं में विश्वास है?

अब तक हमने ऐसी विचारधाराओं का अध्ययन किया जो सामाजिक वास्तविकता को समझने के लिए प्रत्यक्षवादी दृष्टिकोण में शामिल हैं। जैसा कि पुस्तक के खंड 1 की इकाइयों में आपने पढ़ा है, हरेक को ऊपर वर्णित मान्यताएं स्वीकृत नहीं हुई। अनेक दार्शनिकों ने अपने प्रेक्षणों में अर्थ को खोजने का प्रयास किया। उन्होंने उन प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित किया जिससे हमें प्रतिरूपों में अर्थ स्थापित करने की संभावना मिले। उनके लिये महत्वपूर्ण मुद्दे उस विधि से जुड़े हैं जिससे हमें बाह्य जगत में होने वाली चीज़ों का ज्ञान प्राप्त होता है। दृश्यप्रपंचशास्त्र (phenomenology) वह विचारधारा है, जिसने सामाजिक वास्तविकता की चेतना के बारे में नए दृष्टिकोणों के विकास को प्रभावित किया है। अगले अनुभाग में हमने इस सिद्धांत के दर्शन में आने वाले प्रमुख विचारों की चर्चा की है।

5.6 दृश्यप्रपंचशास्त्र अनुभव की निहितपरकता

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अब तक इस इकाई के विभिन्न भागों में वर्णित उपागमों से प्राप्त प्रतिरूपीय विश्व की सीमित समझ ने हमें नये उपागमों की खोज करने के लिए उकसाया। प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र ने ऐसे शोधकर्ताओं को प्रेरणा दी है। प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र में चेतना को एक पहले से दिया आधार माना है जिसकी सहायता से ज्ञान का दावा करने के लिए नींव का निर्माण किया जा सकता है। यहाँ यह मान लिया गया है कि चेतना तक पहुँच के लिए मध्यस्थ की ज़रूरत नहीं है। बल्कि व्यावहारिक चेतना की प्रकृति की व्याख्या करने पर ध्यान केंद्रित किया गया है। इसका उद्देश्य है कि पूर्व सिद्ध संरचना को अस्वीकारा जाये और अनुभव-विवरण पर ध्यान दिया जाये। इसमें व्यक्तियों (actors) की भौतिक क्रियाओं के वर्णन के साथ-साथ उनके आशय और उद्देश्य, वर्गीकरण करने की उनकी विधि, अपने जगत को अर्थ तथा भाव देने के तरीके शामिल हैं। अनेक प्रकार से प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र के ये विचार नृजातिशोधपद्धति (ethnomethodology) में पूरी तरह से अभिव्यक्त हुए हैं। आइए, अब यह पता लगाएं कि ये विचार कहाँ से आए हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में, उत्तरकालीन जर्मन आदर्शवादियों की दार्शनिकता में मौजूद अत्यधिक आत्मपरकता (subjectivity) के प्रति ऑस्ट्रिया के दार्शनिकों के एक समूह ने बहुत अधिक असंतोष व्यक्त किया। ऑस्ट्रिया के दार्शनिक अनुभव के अत्यधिक विश्लेषण के खिलाफ थे। कारणों और सिद्धांतों पर विचार करने के स्थान पर उन्होंने स्वयं की चेतना से प्राप्त अनुभवों पर ध्यान केंद्रित किया। ऐसा करते समय उन्होंने प्राकृतिक विज्ञान जैसे अन्य विषयों से सिद्धांत, निगमन (deduction) अथवा मान्यताओं का सहारा नहीं लिया।

फ्रैंज़ ब्रेंटानो (1838-1917) प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र के आधारभूत उपागम का विकास करने वाला पहला विद्वान था। ब्रेंटानो का दावा था कि दर्शनशास्त्र का केंद्र बिंदु जागरूकता की प्रकृति और विषयवस्तु को इस प्रकार समझना था जिससे मानसिक और गैर-मानसिक के बीच विभेद को स्पष्ट किया जा सके।

अपनी पुस्तक साइकॉलॉजी फ्रॉम ऐन इम्पिरिकल स्टैंडपॉइंट (Psychology from Empirical Stand Point) (1874) में ब्रेंटानो ने सुझाव दिया कि प्रत्येक मानसिक क्रिया के दोहरे रूप से महत्वपूर्ण प्रतिनिधानात्मक प्रकार्य होते हैं। ये प्रकार्य हैं – स्वयं को चिन्तनशील बताना और जानबूझकर प्रतिरूपक वस्तु की तरह स्थापित करना। वास्तव में, कार्य और उनके उद्देश्यों के बीच यह भेद ब्रेंटानो के लिए महत्वपर्णू विभेद है क्योंकि "अभिप्रायपूर्ण होना मानसिक का एक लक्षण है"। एक और उसी प्रकार की प्रतिरूपीय वस्तु को विश्वास, कल्पना आदि विभिन्न रूपों वाली मानसिक क्रियाओं द्वारा अभिव्यक्त किया जा सकता है। ब्रेंटानो का मत था कि यद्यपि प्रत्येक अभिप्रायपूर्ण क्रिया स्वयं में आत्मपरक होती है, इसका अभिप्राय (intention) संसार में पदार्थनिष्ठ (objective) या तथ्यात्मक होता है।

ब्रेंटानो के एक शिष्य, एडमंड हुसर्ल ने ब्रेंटानो की विचारधारा को आगे बढ़ाया। आइए, अब हम नये उपागम के विकास में हुसर्ल के योगदान की चर्चा करें।

एडमंड हुसर्ल

ब्रेंटानो ने जर्मन दार्शनिक एडमंड हुसर्ल (1859-1938) को बहुत अधिक प्रभावित किया। हुसर्ल ने अपनी पुस्तक, ए जनरल इंट्रोडक्शन टु प्योर फेनोमिनोलॉजी (General Introduction to Pure Phenomenology) (1913; अनुवाद 1931) में प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र शब्द का परिचय दिया और कहा कि प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र का कार्य अनिवार्य गुण (essence) का अध्ययन करना था जैसे मनोभावों के अनिवार्य गुण। हुसर्ल ने कहा कि केवल चेतन संरचनाओं के अनिवार्य गुण ही प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र की उचित विषयवस्तु हैं। चेतन संरचनाएं ही चेतना को इसके बाहर की वस्तुओं से संबंध स्थापित करने में सक्षम बनाती हैं। इस प्रकार के अध्ययन में प्रत्येक वस्तु को परे हटाकर केवल मस्तिष्क की विषय-वस्तु पर चिंतन की आवश्यकता होती है। हुसर्ल ने इस प्रकार के चिंतन को प्रत्यक्षज्ञानशास्त्रीय लघुकरण (reduction) कहा है। क्योंकि मस्तिष्क को चाहें तो अस्तित्वविहीन और चाहें तो वास्तविक वस्तुओं की ओर मोड़ा जा सकता है, अतः हुसर्ल ने महसूस किया कि प्रत्यक्षज्ञानशास्त्रीय चिंतन यह पहले से नहीं मान लेता है कि प्रत्येक वस्तु का अस्तित्व होता है बल्कि यह अस्तित्व की निहितपरकता (bracketing) को मानता है यानि इसमें विचाराधीन वस्तु के वास्तविक अस्तित्व के प्रश्न को एक तरफ़ उठाकर रख दिया जाता है।

हुसर्ल ने सोचने पर पाया कि उसके मस्तिष्क के अंतर्विषय में ऐसी क्रियाएं थीं जैसे याद करना, इच्छा करना और प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करना (perceiving)। इन कार्यों की संक्षिप्त विषयवस्तु को हुसर्ल ने अर्थ की संज्ञा दी। उसने इन अर्थों को पहलू विशेष के अंतर्गत एक वस्तु को कार्य विशेष के प्रति निर्देशित करने में सक्षम माना है। इस प्रकार की निर्देशिता को हुसर्ल ने साभिप्रायता (intentionality) माना है और यही चेतना का सत्त्व या अनिवार्य गुण है। हुसर्ल के अनुसार अनुभवातीत प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र उन अर्थों के बुनियादी अंगों का अध्ययन है जिनसे साभिप्रायता संभव हो पाती है।

यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि क्या ऐसे विद्वान भी थे जिन्होंने प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र का उपयोग किया है? आइए, इस प्रकार के एक शोधकर्ता का उदाहरण लें। इस शोधकर्ता का नाम मार्टिन हाइडेगर है।

मार्टिन हेगर (जीवन-काल 1889-1976)

मार्टिन हेगर एक जर्मन दार्शनिक था। उसने तत्वमीमांसा के व्यापक लक्ष्यों के परिधि में प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र की विधियों का उपयोग किया। हाइडेगर के घोर अस्तित्ववाद में, दर्शनशास्त्र के बुनियादी कार्य के रूप में जीव के बारे में ज्ञान मात्र अर्जित करना ही नहीं वरन् उसे समझना भी शामिल है। अनेक विद्वानों का मानना है कि दार्शनिक प्रतिज्ञप्तियों से अधिक हेगर की दार्शनिकता आधुनिक विमुखीय मानव जाति के अस्तित्व के बारे में कथन है। उसका मानना था कि परम्परागत शिक्षा में "क्या है" पर अधिक ज़ोर दिया जाता है जबकि "क्या नहीं है" के अध्ययन का प्रयास कर सामान्य ज्ञान की सीमाओं का परीक्षण करना कहीं ज़्यादा लाभकारी है।

मार्टिन हेगर
(1889-1976)

हेगर (1963) का मत था कि अनस्तित्व के अनुभव से ही आपको अस्तित्व या कुछ है का बोध हो सकता है। उसके अनुसार, परंपरागत तर्क से कोई मदद नहीं मिल सकती क्योंकि ऐसे तर्क में सभी प्रकार की नकारात्मकता (negation) को किसी न किसी सकारात्मकता से व्युत्पन्न माना जाता है। हेगर का प्रस्ताव था कि अनस्तित्व की पृष्ठभूमि में ही प्रत्येक वस्तु का उद्भव होता है। अनस्तित्व की प्रकृति को समझने हेतु हमें तर्क करना छोड़ देना होगा। अनस्तित्व पर स्वयं में सावधानी के साथ विचार करते समय ही हमें अपनी स्वयं की मानसिक दशा के महत्व और ओज का भाव होने लगता है। इन सबसे ऊपर, अनस्तित्व या "कुछ नहीं" का भाव हमारे अंदर आशंका या भय की भावना उत्पन्न करता है। आशंका की इस गहरी अनुभूति को हेगर ने अनस्तित्व की यथार्थता व प्रकृति के प्रति मानव का सर्वाधिक बुनियादी संकेत (clue) माना है। वास्तव में हेगर ने ज्ञान के संबंध में सिद्धांत की अपेक्षा अस्तित्व या सत्तामीमांसा (ontology) पर अपने विचार व्यक्त किए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

दर्शनशास्त्र में प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र आंदोलन ने समाजशास्त्र पर बहुत अधिक प्रभाव डाला है। अल्फ्रेड शुज़ की तरह के समाजशास्त्रियों ने व्यक्ति की चेतना और सामाजिक जीवन के बीच के संबंध को समझने के लिए इसका अनुसरण किया। समाजशास्त्र में एक उपागम की तरह प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र यह बताने का प्रयास करता है कि सामाजिक-क्रिया, सामाजिक-स्थितियों और सामाजिक-विश्व के उत्पादन में मानवीय चेतना किस प्रकार लिप्त होती है। अल्फ्रेड शुज़ ने सृजनशीलता को मथा और उसमें से हुसर्ल की गहन कृतियों में से समाजशास्त्र के लिये उपयुक्त उपागमों को निकाला। शुज़ (1972) ने यह बताया कि किस प्रकार आत्मपरक अर्थों से प्रत्यक्षतः निरपेक्ष सामाजिक जीवन हमारे सामने उभर कर आता है जिसमें दिन-ब-दिन की गतिविधियों की अवधि निहित होती है। इसमें एक निरंतरता होती है जो व्यक्ति के साथ आजीवन बनी रहती है। शुज़ के अनुसार अपनी समग्र प्राथमिकताओं के अनुरूप हमारे कार्यों की साभिप्रायता गठित होती है।

अल्फ्रेड शुज़
(1899-1959)

इस इकाई में प्रत्यक्षज्ञानशास्त्र पर दी गई संक्षिप्त टिप्पणी का उद्देश्य आपको केवल इस तथ्य से परिचित कराना है कि अनुभववाद, बुद्धिवाद और आदर्शवाद के मुद्दों के अलावा ज्ञान की खोज में और किस तरफ़ शोधकों का ध्यान गया।

5.7 निष्कर्ष

इस इकाई में हमने ज्ञान से जुड़े सिद्धांतों के कुछ प्रमुख विचारों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इन दार्शनिक विचारों का काफ़ी व्यापक प्रभाव हुआ है। इस पुस्तक के खंड 1 की इकाइयों से आपको पहले ही इनका संदर्भ मिल गया होगा और आने वाली इकाइयों में भी ये विचार आपके सम्मुख आएंगे।

अपने आसपास की दुनिया को समझने की खोज से संबद्ध कुछ प्रमुख विचारों पर ध्यान केंद्रित करने से आशा है कि आपको सामाजिक विज्ञान की शोध पद्धतियों के लिये महत्वपूर्ण ज्ञानमीमांसीय मुद्दों का कुछ परिचय मिला होगा।

5.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

नाजेल, अर्न्स्ट, 1961, *द स्ट्रक्चर ऑफ साइंस,* रटलेजः लंदन (ज्ञानमीमांसापरक समस्याओं के लिये)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 6
सामाजिक विज्ञान का दर्शनशास्त्र

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 विज्ञान की आधारशिला
6.3 विज्ञान, आधुनिकता और समाजशास्त्र
6.4 विज्ञान पर पुनःचिंतन
6.5 मूलाधार में संकट
6.6 निष्कर्ष
6.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 6 पढ़ने के बाद, आपमें निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देने की योग्यता हो जायेगी:

- समाजशास्त्र पर पड़ने वाले विविध दार्शनिक प्रभाव कौन-कौन से थे?
- समाजशास्त्र में प्रत्यक्षवादी परंपरा (positivist tradition) और व्याख्यापरक (interpretative) चिंतन जैसी प्रमुख विचारधाराएं कौन-कौन सी हैं?
- प्रबोधन (enlightment) और आधुनिकता के प्रक्षेप (project) को किस प्रकार समाजशास्त्र में आदर्श रूप में प्रस्तुत किया गया?
- उत्तर-आधुनिकतावादी आलोचना से आधुनिकता किस प्रकार झकझोर दी गई?

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

6.1 प्रस्तावना

सामाजिक विज्ञान, अधिक विशिष्ट रूप में, समाजशास्त्र ज्ञान का एक औपचारिक निकाय है जो फला-फूला है, जिसका उद्विकास हुआ है, जिसने बुद्धिजीवियों के समुदाय को सृजित किया है और जिसने प्राज्ञता अथवा सीखने (learning) की विशिष्ट परंपरा को स्थापित किया है। यह संभव हुआ है क्योंकि सामाजिक यथार्थत्ता का प्रेक्षण करने और ज्ञान के सुव्यवस्थित निकाय के निर्माण के लिए इसमें एक विधि है और सिद्धांतों या मार्गदर्शिकाओं का एक समुच्चय है। अन्य शब्दों में, इसका अपना एक दर्शनशास्त्र है।

आपको स्पष्ट हो कि हमने यहाँ दर्शनशास्त्र शब्द का प्रयोग तात्विक या आध्यात्मिक रूप में नहीं किया है। दर्शनशास्त्र से हमारा अभिप्राय देखने और प्रेक्षण करने के तरीके से है, सोचने के ढंग से है और तर्क करने तथा सच्चाई तक पहुँचने से है। इसलिए सामाजिक विज्ञान के दर्शनशास्त्र को समझना बेहद ज़रूरी है। इसे समझकर ही आपको स्पष्ट होगा कि समाज विज्ञानियों की क्या सोच है, उनकी तर्क-विधि क्या है और समाज के बारे में ज्ञान का निर्माण कैसे होता है और साथ में समाजशास्त्र किस प्रकार ज्ञान की अन्य शाखाओं से भिन्न है। कुछ उदाहरण इस बात को और स्पष्ट कर देगें।

आपने रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों को पढ़ा होगा। ये अत्यधिक समृद्ध वृत्तांत हैं जिनमें हमें सामाजिक इतिहास की झलक मिलती है। लेकिन जब आधुनिक इतिहासकारों द्वारा प्राचीन काल का इतिहास लिखा जाता है तो इतिहास निर्मित करने का उनका तरीका ऐसे महाकाव्यों की तुलना में गुणात्मक रूप से भिन्न होता है। इन महाकाव्यों का प्रयोग

उन्होंने शायद संभावित स्रोतों के रूप में किया होगा लेकिन इतिहासकार कोई कथाकार नहीं हैं, उनका उद्देश्य किन्हीं विशिष्ट चरित्रों की सराहना करना, उन्हें गौरवमय बनाना या उनकी भर्त्सना करना या भूतकाल को मिथकीय रूप में प्रस्तुत करना नहीं है। उनका प्रयास 'तटस्थ' बने रहना और सभी संभावित तथ्यों पर निर्भर करके राजनीतिक-आर्थिक जीवन और सामाजिक गठन और उस काल में प्रयुक्त उपकरणों और प्रौद्योगिकियों के बारे में लिखना है। इसलिए यह तर्क दिया जाता है कि आधुनिक इतिहास कोई कल्पना, या वृत्तांत या पौराणिक कथा नहीं है। यह ऐसे प्रकार का विज्ञान है जो ठोस तथ्यों और आनुभविक साक्ष्यों पर आधारित है।

इसी तरह, जब एम.एन. श्रीनिवास (1966) ने संस्कृतिकरण की वह धारणा सामने रखी, जिस प्रक्रिया में निम्न जातियाँ प्रभुत्वशाली जातियों के मानक, मूल्यों और व्यवहारों की बराबरी करने की चेष्टा करती हैं, तो यह ठोस आनुभविक साक्ष्य पर आधारित तथ्य था। इसलिए यह रूढ़िगत और गतिहीन जाति व्यवस्था के किताबी वर्णन से भिन्न था। अन्य शब्दों में क्षेत्रीय अनुभवपरक ज्ञान पर आधारित जाति की समाजशास्त्रीय समझ गुणात्मक रूप से उस तरीके से अलग है जो धर्मग्रंथों में पाई जाती है।

दरअसल, पौराणिक कथाएं, लोक कथाएं, महाकाव्य, यात्रावृत्त और साहित्य, ऐसे अनगिनत स्रोत हैं जिनसे हमें मानव समाज के बारे में ज्ञान मिलता है। लेकिन आधुनिक सामाजिक विज्ञान को जो एक विशिष्ट पहचान देते हैं, वे हैं - इसका दर्शनशास्त्र, इसकी शोध-विधि और ज्ञान प्राप्त करने के इसके तरीके। इसमें कोई हैरानी की बात नहीं है यदि हम कहें कि इतिहास पुराण नहीं है, सांस्कृतिक नृशास्त्र को यात्रावृत्त नहीं कहा जा सकता है, समाजशास्त्र को पत्रकारिता नहीं माना जा सकता है और राजनीति विज्ञान कोई चुनावी भाषण नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं कि पौराणिक गाथाएं और यात्रावृत्त या पत्रकारिता और चुनावी भाषण मिथ्या क्षेत्र हैं। कहने का आशय है कि समाज विज्ञान की पद्धति गुणात्मक से भिन्न है। यह एक औपचारिक और ज्ञान का संरचनात्मक निकाय है, जिसके अपने निजी तकनीकी वाक्यांश और शब्दावली हैं और सामान्यीकरण पर पहुँचने के लिए जिसके विशय-सामग्री इकट्ठे करने के अपने विशिष्ट तरीके हैं। यह तर्क दिया जाता है कि सामाजिक वैज्ञानिक 'निष्पक्ष' और 'मूल्य-तटस्थ हैं', उन्हें ठोस आनुभविक तथ्यों पर विश्वास होता है और इसलिए सामाजिक विज्ञान के विवरण में सामाजिक यथार्थ का विचारधारागत, आत्मपरक तिरस्कार या गौरवगान नहीं होता। यह माना जाता है कि इस पद्धति को समझने का अर्थ है कि आधुनिक विज्ञान के दर्शनशास्त्र को ही समझ लिया है। इसने ही सामाजिक विज्ञान को एक पहचान दी है। इस इकाई में इसी बौद्धिक गतिरेखा (trajectory) अर्थात् आधुनिक सामाजिक विज्ञान की वृद्धि एवं उद्विकास के बारे में चर्चा की जायेगी।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

6.2 विज्ञान की आधारशिला

फ्रांसिस बेकन
(1561-1626)

सामाजिक विज्ञान की चर्चा करने हेतु पहले समझें कि विज्ञान क्या है? माना जाता है कि विज्ञान निष्पक्ष है। विज्ञान तथ्यों पर आधारित है, विज्ञान को भावनात्मक या मनोभावात्मक निर्णय के स्थान पर तार्किक और निष्पक्ष विश्लेषण की आवश्यकता होती है। आधुनिक विज्ञान की दर्शनशास्त्रीय जड़ों को समझने के लिए हमने दो जाने-माने विचारकों, फ्रांसिस बेकन (जीवन-काल 1561-1626) और रेने डेस्कार्ट (जीवन-काल 1564-1650) पर ध्यान केंद्रित किया है, क्योंकि आमतौर पर इस बात पर सहमति है कि सत्रहवीं शताब्दी में इनके योगदान ने आधुनिक विज्ञान की आधारशिला स्थापित की।

बेकन ने हमें निष्पक्षता का पहला महत्वपूर्ण पाठ पढ़ाया कि बिना किसी पूर्वाग्रह या पक्षपात के किस प्रकार प्रकृति की पुस्तक को उसके यथार्थ रूप में कैसे समझें। बेकन के अनुसार ऐसे बहुत से भ्रम हैं जो हमें सत्य से दूर करते हैं और अवरोधों के रूप में काम करते हैं। परिणामस्वरूप, हमें सच्चाई अपने आत्मपरक विचार रूप में दिखाई देती है। हमें इन भ्रमों को अवश्य ही दूर करना चाहिए जिन्हें बेकन ने 'मस्तिष्क की प्रतिमाओं' (idols of mind) के रूप में व्यक्त किया है। बेकन (1970: 89-96) के अनुसार ऐसी प्रतिमाओं के चार प्रकार हैं।

- **जनजाति की प्रतिमाएं:** ये मानव समूहों में समान रूप से पाई जाती हैं तथा मानवीय दुर्बलता से उत्पन्न होती हैं जैसे हमारी वह देखने की इच्छा जो हमें संसार में देखना अच्छा लगता है या नियमितता के लिए हमारी खोज और अपनी स्वयं की विश्वास पद्धति के प्रति हमारी मनोग्रस्ति (obsession)। बेकन (1970: 92) का तर्क है कि मानव मस्तिष्क "टेढे-मेढे दर्पण" की भांति है जो सच्चाई को भ्रमित करता है। इन प्रतिमाओं की वजह से अंधविश्वास और पूर्वाग्रह (prejudices) निरंतर मौजूद रहते हैं। दरअसल, मनुष्य की भावनायें अतिसूक्ष्म तरीक़ों से और अनगिनत रूप में समझ को भ्रष्ट करती रहती हैं।

- **निजी कक्ष की प्रतिमाएं:** ये जनजातिगत प्रतिमाओं की भांति न हो कर, विशिष्ट व्यक्तियों के लिए अनोखी होती हैं। हर व्यक्ति की अपनी ही निजी मनोवृत्ति और प्रतिमाएं होती हैं। उदाहरण के तौर पर, स्वाभाविक रूप से कुछ व्यक्ति आशावादी तो कुछ निराशावादी हैं, और कुछ पुरातनता के लिए प्रयासरत हैं तो कुछ परिवर्तन और नवीनता के हामी हैं। ये सभी व्यक्तिगत विशिष्टताएं (अनूठापन) व्यक्ति के देखने के ढंग को प्रभावित करती हैं और इस तरह सच्चाई को भ्रमित करती हैं।

- **क्रय-विक्रय की प्रतिमाएं:** वे हैं जो मानव अंतःक्रिया से उत्पन्न होती हैं और गंभीर भाषायी उलझनें पैदा करती हैं। बहुधा हमारी भाषायथार्थता को व्यक्त करने में अपर्याप्त सिद्ध होती है। कोई हैरानी की बात नहीं है कि बेकन (1970: 94) ने कहा कि "विद्वत्जनों के महान और विचारशील तर्कवितर्क बहुआ शब्दों और नामों से जुड़े शास्त्रार्थों में समाप्त हो जाते हैं।"

- **नाटकगृह की प्रतिमाएं:** वे हैं "जो दर्शनशास्त्र की विशिष्ट पद्धतियों के विविध सिद्धांतों से मनुष्यों के मस्तिष्कों में घर कर चुकी हैं" (बेकन 1970: 90)।

बेकन के लिए, ये प्रतिमाएं अनिवार्यतया अवरोध हैं और इन्हें दूर करना अत्यावश्यक है। तभी बिना किसी पक्षपात के जगत को देखना और इसका प्रेक्षण करना संभव है। अन्य शब्दों में प्रकृति का अस्तित्त्व तो है ही, और हमारी भावनाओं और संवेदनाओं से असंदूषित मात्र शुद्ध अनुभववाद से ही प्रकृति को समझा जा सकता है। बेकन के मत में यह निरपेक्ष ज्ञान मनुष्यों को प्रकृति पर प्रभुत्व स्थापित करने के योग्य बनाएगा। इस दृष्टिकोण के अनुसार ज्ञान वास्तव में शक्ति है और ज्ञाता और ज्ञान के बीच का संबंध तटस्थ और अव्यैक्तिक हो जाता है। ज्ञाता की अपनी दुर्बलता नियंत्रित हो जाती है और जानने का कार्य क्रिया निष्पक्ष बन जाता है।

यदि फ्रांसिस बेकन ने अनुभववाद की आधारशिला रखी या आगमनात्मक (induction) की विधि प्रदान की तो रेने डेस्कार्ट ने हमें बुद्धिवाद (rationalism) या निगमनात्मक तर्क (deductive reasoning) के मूलपाठ सिखाए हैं। डेस्कार्ट ने मानसिक और बुद्धिजीविता को विशेष माना और तर्क दिया कि केवल स्पष्ट विचारों या शुद्ध विवेकशीलता (rationality) ही है जिससे मनुष्य के लिये सच तक पहुँचना संभव है और सभी अनिश्चितताओं और दोषों से मुक्त होना संभव है। उसके लिए इंद्रिय ज्ञान का विश्वसनीय स्रोत नहीं है, इंद्रियों

से धोखा भी मिल सकता है। परिणामस्वरूप मनन के रूप में, डेस्कार्ट (1641: 439-440) ने उन सभी बातों पर शंका व्यक्त की जिन्हें उसने इंद्रियों के माध्यम से सीखा था। डेस्कार्ट के शब्दों में,

मैं इसलिए मान लूंगा कि जो सर्वोच्च रूप से दयावान और सत्यता का स्रोत भगवान नहीं वरन् कोई महाशक्तिमान और चालाक दुर्दैव है जिसने मुझे धोखा देने के लिए अपनी सारी ताकत लगा दी है। मैं सोचूँगा कि आकाश, वायु, धरती, रंग, आकार, ध्वनियाँ, और समस्त बाहरी वस्तुएं मात्र स्वप्न से उत्पन्न भ्रम हैं जिनका उस दुर्दैव ने मेरी निर्णय शक्ति को बहकाने करने के लिए प्रयोग किया है। मैं सोचूँगा कि मेरे हाथ या नेत्र, या माँस या रक्त या इंद्रियाँ नहीं हैं लेकिन फिर भी मुझे मिथ्या ही यह विश्वास होगा कि मेरे पास ये सभी हैं।

फिर भी एक चीज़ थी जिसके बारे में डेस्कार्ट को निश्चितता थी। यदि दुर्दैव उससे छल भी करता है, तो यह तथ्य कि उससे छल किया जा रहा है, चिंतक के रूप में उसकी मौजूदगी की पुष्टि करता है। डेस्कार्ट (1641: 440) ने लिखा,

मैंने खुद को यह यकीन दिला दिया है कि संसार में कुछ भी नहीं है, न आकाश, न धरती, न मस्तिष्क और न देह। क्या इसका अर्थ है कि मैं भी मौजूद नहीं था? लेकिन सर्वशक्तिमान और चालाक एक छलिया है जो जानबूझकर और निरंतर मुझसे छल कर रहा है। इस स्थिति में निःसंदेह मेरा अस्तित्व है भले ही वह मुझसे छल कर रहा है, और जितना वह छल सकता है उसे मुझे छलने दीजिए। जब तक मैं सोचता हूँ कि मैं कुछ हूँ तब तक वह यह नहीं कर पाएगा कि मेरा अस्तित्व ही नहीं है। इसलिए हर बात पर पूरी तरह ध्यान देने के बाद, मैं अंत में इस परिणाम पर पहुँचता हूँ कि मैं हूँ, मेरा अस्तित्व है – यह प्रतिज्ञप्ति निश्चित रूप से सच है, जब भी मेरे द्वारा यह बात रखी जाती है या मेरे मस्तिष्क में ऐसा विचार आता है।

MAADHYAM IAS

अन्य शब्दों में, जैसा कि डेस्कार्ट का तर्क है कि "मनुष्य ऐसी वस्तु है जो सोचती है", इससे उसने एक ऐसे अविभाज्य मस्तिष्क को विशेष मान्यता दी जिससे मनुष्य को चिंतन शक्ति प्राप्त होती है और जो उसको अचिंतनशील देह से अलग करता है। मनुष्य के लिये मन से विलग होना संभव नहीं है जबकि मनुष्य का अस्तित्व देह के बिना भी संभव है। डेस्कार्ट (1641: 467) ने कहा कि

जिस सीमा तक शरीर अपनी प्रकृति के आधार पर विभाजित किया जा सकता है, मन और शरीर में काफ़ी अंतर होता है। जब मैं मन या स्वयं पर विचार करता हूँ तो मैं मात्र विचार करने वाली वस्तु हूँ, मैं स्वयं को टुकड़ों में बाँटने में असमर्थ हूँ। मैं खुद को एकदम एक और पूर्ण समझता हूँ। यद्यपि पूरा मन पूरे शरीर से जुड़ा हुआ लगता है, मैं मानता हूँ कि यदि पाँव, बाजू या शरीर का कोई अन्य भाग अलग हो जाता है तो भी मस्तिष्क से कुछ भी अलग नहीं होता है।

डेस्कार्ट के लिए, मन और देह का यह द्वैतवाद पूर्णतया महत्वपूर्ण है। उसने जो संदेश दिया, वह स्पष्ट था कि ठोस आधार प्रदान करने वाला है: अविभाजित, समेकित, सामंजस्यपूर्ण मस्तिष्क से निकलने वाला पूर्णतया स्पष्ट/तर्कसंगत विचार। इस तर्कसंगत सोच का रूप शुद्ध, अमूर्त, देहहीन और ज्ञानेंद्रियों, पीड़ा और हर्ष अनुभूति और संवेग से पूर्णतया असम्बद्ध है।

यहाँ यह जोड़ने की ज़रूरत नहीं है कि दो मूलों अर्थात निरपेक्ष अनुभववाद और अमूर्त विवेकशीलता ने आधुनिक विज्ञान को गतिमानता दी। लेकिन फिर अठारहवीं शताब्दी में

प्रबोधन के युग (जो यूरोपीय पुनर्जागरण, पुनःगठन और औद्योगिक क्रांति का तार्किक उत्कर्ष था, अधिक जानकारी के लिए इग्नू के बी.ए. कार्यक्रम के ई एस ओ-13 के खंड 1 तथा इस इकाई के कोष्ठक 6.1 को देखें) में एक नया मोड़ आया जिसने देखने के एक नये ढंग को जनित किया और बेकन, डेस्कार्ट और न्यूटन के विज्ञान को ज्ञान के वैध निकाय और अतिश्रेष्ठ कोटि के रूप में सराहा।

कोष्ठक 6.1: प्रबोधन

प्रबोधन से आशय ऐसे बौद्धिक आंदोलन से है जो मुख्यतया फ़्रांस और ब्रिटेन में हुआ और जो 1680 से 1789 अर्थात लगभग 100 वर्षों तक चलता रहा। प्रबोधन के लिये मंच तैयार करने वाले वे लेखक और वैज्ञानिक थे जिन्होंने प्राकृतिक जगत और विचार प्रणालियों का परीक्षण किया। ऐसे लेखकों में शामिल थेः गैलीलियो गैलिलि, आइज़क न्यूटन, फ़्रांसिस बेकन और रेने डेस्कार्ट। प्रबोधन के लेखकों में हॉब्स, लॉक, दिदरॉट, मॉंटेस्क्यू और रूसो के नाम शामिल थे। फ़्रांसीसी लेखकों को कभीकभार दर्शनशास्त्री भी कहा जाता था। इन सबके अगुवा प्रतिनिधियों में धार्मिक शंकालुजन, राजनीतिक सुधारक, सांस्कृतिक समालोचक, इतिहासकार और सामाजिक सिद्धांतवादी थे। (जैटलिन 1990:1)

विचार प्रणालियों की तुलना में जहाँ पवित्र का वर्चस्व छाया था और जहाँ प्रश्न पूछने को हतोत्साहित किया जाता था, प्रबोधन विचारकों ने मानव तर्क को वर्चस्वकारी रूप में देखा। प्रबोधन के युग में अध्ययन के किसी भी विषय की मनाही नहीं थी। जाँच और अध्ययन के लिए उपयुक्त मानव जीवन के सभी पहलुओं के संदर्भ में ऐसे कोई प्रश्न नहीं थे जिन्हें पूछा नहीं जा सकता था। प्रबोधन विचारकों ने डेस्कार्ट और अन्य विचारकों की अमूर्त विवेकशील चिंतन (abstract rational thought) की दार्शनिक परंपरा को गैलिली, न्यूटन, बेकन और अन्य चिंतकों की अनुभवजन्य या प्रयोग की परंपरा से जोड़ा जिसके फलस्वरूप मानवीय शोध की नई पद्धति का उदय हुआ जिसने पुरानी व्यवस्था और विशेषाधिकारों पर प्रहार किया। इस पद्धति ने विज्ञान, वैज्ञानिक विधि और शिक्षा पर ज़ोर दिया और इसके प्रति आस्था दिखाई और मौजूदा संस्थाओं के बारे में आलोचनात्मक प्रश्न पूछ कर व्यावहारिक प्रकार्य की प्राप्ति की। साथ में यह मांग भी की कि मानव प्रकृति के विरुद्ध जाने वाली अतर्कसंगत संस्थाओं को बदल दिया जाए। मानव उत्कृष्टता की राह में आने वाली सभी सामाजिक बाधाओं को धीरे-धीरे समाप्त किया जाना था (ज़ेटलिन 1990: 2)।

प्रबोधन लेखन ने गूढ़ रूप से राजनीति और समाजशास्त्र के विकास को प्रभावित किया। फ़्रांसीसी क्रांति (1789) और अमेरिकी क्रांति (1776) के बहुत से कारण थे लेकिन साथ में बहुत से प्रबोधन के विचारों और चिंतन प्रणालियों का राजनीति और सामाजिक बदलावों पर गहरा प्रभाव पड़ा। "स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व" और "जीवन, स्वतंत्रता और प्रसन्नता की चाहना" के नारों ने इन क्रांतियों के राजनीतिक आदर्शों को व्यक्त किया और प्रबोधन के चिंतन को प्रतिबिंबित किया।

संभवतया प्रबोधन के एकीकृत (unifying) कार्यक्रम पर बात करना कठिन है क्योंकि वॉल्टेयर (जीवन-काल 1694-1778), मॉंटेस्क्यू (जीवन-काल 1698-1755), इमैनुल कांट (जीवन-काल 1724-1804) और एडम स्मिथ (जीवन-काल 1723-1790) जैसे दार्शनिकों ने अनिवार्यतया एक समान भाषा नहीं बोली। फिर भी प्रबोधन के इन दर्शनशास्त्रियों में नये चिंतन की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताओं की श्रृंखला की पहचान करना नितान्त असंभव नहीं है।

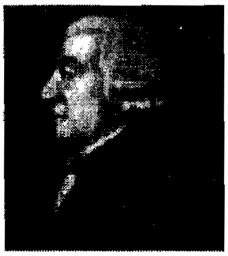

एडम स्मिथ (1723-1790)

- भगवान के बनाए समाज की बजाए, प्रबोधन तो तर्क की प्रमुखता की बात करता है। इसने ईसाई धर्म के साथ विशेष रूप से ईसाई धर्म में निहित प्रथम पाप की धारणा

तथा अपूर्णता के साथ भारी लड़ाई लड़ी। वॉल्टेयर का दावा था कि मनुष्य अपने आप में न अच्छे हैं और न बुरे। बल्कि परिस्थितियों के आधार पर मनुष्य की क्षमता का पता चलता है जैसा कि मेरी (1996) में उल्लिखित है। दूसरे शब्दों में, मनुष्यों के लिए अपनी तक़दीर को रूपरेखा देना और बेहतर जगत बनाना संभव है। इस नज़रिए से प्रबोधन का कार्यक्रम भविष्योन्मुख और आशावादी था।

- प्रबोधन के आशावाद को इसकी ज्ञान-मीमांसा तथा आलोचनात्मक शोध की स्फूर्ति द्वारा क़ायम रखा गया। इमैनुल कांट (1783) ने लिखा कि "हमारा युग एक विशेष कोटि में है, यह समालोचना का युग है और हर बात की समालोचना होनी चाहिए।" किसी भी बात को यों ही मान नहीं लेना है। इस समालोचनात्मकता ने एक नई गति प्रदान की और मनुष्यों को बंद या रूढ़िगत सोच के पिंजरे से बाहर निकलने में सक्षम किया और अंत में, तर्क और स्वतंत्रता, विज्ञान और सच्चाई के बीच के सकारात्मक संबंध को प्रत्यक्ष किया।

- इस समालोचनात्मकता की प्रकृति अनिवार्यतया नकारात्मक नहीं थी। दरअसल, जहाँ इसने तोड़ा, वहीं इसने जोड़ा भी। इसने ईसाई धर्म की गूढ़ आध्यात्मिकता और नीतिशास्त्रीयता का खंडन नहीं किया। इसने केवल ईसाई धर्म की बंद और रूढ़िगत विशेषता का ही खंडन किया और धर्मनिरपेक्ष/ उदारवादी विश्वदृष्टि के आधार पर नये विश्व की नींव डाली। दूसरे शब्दों में, आधुनिकता की जड़ें यानि वैज्ञानिकता, तर्कसंगतता और व्यक्तिगत विशेषताओं का सम्मान करने वाला प्रकल्प प्रबोधन के कार्यक्रम में शामिल था। यह प्रगतिशील था। इसकी आस्था रैखिक/ ऐतिहासिक प्रगति में थी, जिसने ज्ञान, नवीनताओं और प्रयोगों की खोजबीन के लिए नई गतिकी प्रदान की।

- जहाँ तक मानव समाज के ज्ञान का संबंध है, प्रबोधन के दर्शनशास्त्र ने एक नई दिशा दी, जैसा कि नीचे रेखांकित है:

  i) समाज का अस्तित्व होता है, जिसका सदा ही अनुभवजंन्य प्रेक्षण से परीक्षण संभव है।

  ii) समाज का यह ज्ञान निष्पक्ष और सार्विकीय हो सकता है और इसलिए यह संचयी और प्रगतिशील होता है।

  iii) यह ज्ञान विचारधारात्मक विकृतियों और धार्मिक आस्थाओं से भिन्न और श्रेष्ठतर है।

  iv) मानव समाज के पुनः निर्माण के लिए सकारात्मक रूप से यह ज्ञान उपयोगी है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

आइए अब विज्ञान, आधुनिकता और समाजशास्त्र के मध्य अंतःसंबंधों की विस्तृत चर्चा करें।

6.3 विज्ञान, आधुनिकता और समाजशास्त्र

यह कहना ग़लत नहीं होगा कि आधुनिक सामाजिक विज्ञानों की उत्पत्ति इस ज्ञानमीमांसीय आशावाद से हुई। उदाहरणार्थ यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि प्रारंभिक दौर से ही आधुनिक समाजशास्त्र का दो दार्शनिक आधारों (क) निष्पक्ष/सार्विकीय विज्ञान, और (ख) प्रगतिशील और ऐतिहासिक रूप से अपरिहार्य आधुनिकता ने मार्गदर्शन किया। समाजशास्त्र ने स्वयं अपने को एक विज्ञान के रूप में देखा अर्थात् समाज का वैज्ञानिक अध्ययन ही समाजशास्त्र है। वस्तुनिष्ठ, मूल्य तटस्थ और आनुभविक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र ने स्वयं को धर्म, तत्त्वशास्त्र और सामान्यबोध से भिन्न रखा। जैसा कि आपने प्रत्यक्षवाद और यहाँ तक कि शास्त्रीय समाजशास्त्र के बारे में अभी तक जाना है और आपने यह भी पढ़ा

है कि किस प्रकार दोनों उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में और बीसवीं शताब्दी के आरंभ में विकसित हुए, उससे आपको समाजशास्त्र और इसकी पद्धति पर प्रबोधन दर्शनशास्त्रियों का गूढ़ प्रभाव स्वतः ही विदित हो जायेगा। यों कहें कि नये युग को समझने के उद्देश्य से समाजशास्त्र का उदय हुआ। अक्सर यह कहा जाता है कि समाजशास्त्र प्रबोधन से जुड़ी आधुनिकता का उत्पाद था (निस्बत 1967)। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत के और बीसवीं शताब्दी के आरंभ के समाजशास्त्री, ऑगस्ट कॉम्टे से लेकर कार्ल मार्क्स सभी आधुनिकता की ही संतानें हैं। अपने विशिष्ट तरीकों में उन्होंने नव युग का सम्मान किया और इसके बारे में काफ़ी कुछ प्रभावशाली लिखा। इस बिंदु को स्पष्ट करने के लिए हमने कुछ उदाहरण लिये हैं (उदाहरणों के लिए कोष्ठक 6.2 देखें)।

कोष्ठक 6.2: एमिल दुर्खाइम और कार्ल मार्क्स के उदाहरण

एमिल दुर्खाइम

पहले याद करें एमिल दुर्खाइम (जीवन-काल 1858-1917) को जिसने द रूल्स ऑफ़ सोशेलॉजिकल मैथड (1895, अंग्रेजी अनुवाद 1938/1964 में प्रकाशित) नामक पुस्तक की रचना की। दुर्खाइम की समाज के वैज्ञानिक अध्ययन में आस्था थी और वह राजनीतिक/पक्षपाती विचारधारा की बजाए सामाजिक तथ्यों के विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र को सामने लाना चाहता था। उसकी महान रचनाओं में से एक द डिवीज़न ऑफ़ लेबर (1893 और 1964 में अंग्रेजी में प्रकाशित) एक ऐसा प्रयास था जिसमें उसने आधुनिक औद्योगिक समाजों के गठन को अवधारणाकृत करने का प्रयास किया था। इन औद्योगिक समाजों की विशेषताओं में उच्चतर विभेदीकरण, विशेषीकरण और श्रम विभाजन के जटिल रूप थे। उसने अवयवी एकता वाले आधुनिक समाज और यांत्रिक एकता वाले सरल और/या पारंपरिक समाज के बीच अंतर किया।

कार्ल मार्क्स

आइए अब कार्ल मार्क्स (जन्म-काल 1818-1883) पर विचार करें जिसका वैज्ञानिक तर्कसंगता की प्रबोधन अभिपुष्टि में विश्वास था। प्रतीत होता है कि वह न्यूटन (जीवन-काल 1642-1727) और डार्विन (जीवन-काल 1809-1882) से काफ़ी प्रभावित था। और यह तो सभी जानते हैं कि उसने अपनी पुस्तक कैपिटल (1867) के दूसरे खंड को चार्ल्स डार्विन को समर्पित करने का प्रयास किया था। पूंजीवादी विकास के 'लौह नियमों' की खोज, और सार्विकीय सामान्यीकरण के लिए उसके झुकाव में मार्क्स की वैज्ञानिकता को देखा जा सकता है। सार्विकीय सामान्यीकरण के उदाहरण हैं, मार्क्स का कहना कि "अब तक के मौजूदा समाजों का इतिहास वास्तव में 'वर्ग संघर्ष' का इतिहास है" और मार्क्स ने ऐतिहासिक भौतिकवाद और विचारधारा के बीच अंतर किया। फ्रांसिस बेकन की तरह मार्क्स का तर्क था कि विचारधारा यथार्थ को विकृत और मिथ्या बना देती है जबकि ऐतिहासिक भौतिकवाद का विज्ञान हमें यथार्थता जैसी है वैसा ही देखने के लिये सक्षम करता है। इससे पता लगता है कि उत्पादन का ढंग किस प्रकार सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन को चलाता है और परिणामस्वरूप कैसे समाज में संघर्ष तथा विरोधाभास पैदा होते हैं।

मार्क्स के आधुनिकता से प्रेम को ऐतिहासिक प्रगति, विज्ञान, शहरीकरण में उसकी आस्था के रूप में देखा जा सकता है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि मार्क्स ने एशियाई उत्पादन प्रणाली या प्राच्यदेशीय निरंकुशता को कतई नहीं सराहा और उसने भारत पर अंग्रेज़ी शासन में अनेक संभावनाओं को देखा क्योंकि इसने हमें एकाकीपन और अवरुद्धता से बाहर निकलने का और आधुनिक सभ्यता को अनुभव करने का अवसर दिया।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

यह कोई विवाद का बिंदु नहीं है कि ये विचारक आधुनिकता के परम भक्त थे। वे महान बुद्धिजीवी और गूढ़ रूप से संवेदनशील थे। वे आधुनिकता की विकृतियों को भी देख सकते

थे। जैसा कि आपको मालुम ही है दुर्खाइम आधुनिक समाजों में बढ़ती प्रतिमानहीनता के बारे में चिंतित था (देखें इग्नू के बी.ए. कार्यक्रम के ई एस ओ-13 का खंड 3)। आपको यह भी पता है कि मार्क्स एक महान मानवतावादी था जिसने पूंजीवाद के स्वरूप और इसके पैदा होने वाले अलगाव की आलोचना की। आपको यह भी अवश्य मालुम ही है कि शास्त्रीय (classical) युग के एक अन्य समाजशास्त्री, मैक्स वेबर ने आधुनिक समाज में निहित मोहभंग (disenchantment) की मनोवेदना पर विचार व्यक्त किए। परंतु इस बिंदु पर हमें मुख्य तत्व को समझना है कि यद्यपि इन सभी मनीषियों ने आधुनिकता में समस्याओं को देखा, वे ग़ैर-आधुनिक समाज की ओर वापस नहीं जाना चाहते थे। बल्कि उन्होंने आधुनिकता और विज्ञान की आधारशिला में अपना विश्वास क़ायम रखा और इसे और अधिक मानवतावादी और समतावादी बनाते हुए उन्होंने आधुनिकता के कार्यक्रम को पूरा करने का प्रयास किया।

जैसा कि आपको स्पष्ट है, वस्तुनिष्ठता, सार्विकीकरण और कार्य-कारणपरक व्याख्या के अपने केंद्रीय सिद्धांतों के साथ विज्ञान का आधुनिक सामाजिक विज्ञान के गठन पर विशेष प्रभाव पड़ा। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है सभी को एक ही प्रकार की विधि मान्य थी। यह सच है कि उन्नीसवीं शताब्दी और बीसवीं शताब्दी के आरंभ में समाजशास्त्रीय शोध के मुख्य रूप अर्थात् प्रत्यक्षवाद ने प्राकृतिक और सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र के अध्ययन में बहुत अधिक गुणात्मक अंतर नहीं देखा। लेकिन उस समय भी ऐसे बहुत से विद्वान थे जिनके मत अलग-अलग थे और जिन्होंने सामाजिक और सांस्कृतिक विज्ञानों में शोध के लिये अलग विधियों की दलील दी। इसकी जड़ों को जाने-माने प्रबोधन दार्शनिकों में से इमैनुल कांट (जीवन-काल 1724-1804) की कृतियों में देखा जा सकता है। प्रकृति पर मनन करते समय उसने दो विशिष्ट सिद्धांतों की चर्चा की। पहला था, ज्ञानेंद्रियों द्वारा समझा जाने वाला शारीरिक घटक और दूसरा था, सत्य, न्याय और सौंदर्य के लिए प्रयासरत नैतिक घटक (साइडमैन 1983)। कोई आश्चर्य नहीं कि प्रबोधन सामाजिक सिद्धांत के एक पहलू में मनुष्यों की आदतों की बात गई जिससे भौतिक/ संरचनात्मक विश्लेषण का जन्म हुआ। इसी सिद्धांत के दूसरे पहलू में मनुष्यों की स्वतंत्रता की चर्चा की गई जिसने स्वेच्छावाद (voluntarism), मानवीय कर्तत्त्व (agency), सृजनात्मकता और विचारशीलता को महत्व दिया।

MAADHYAM IAS

इस बिंदु पर नया मोड़ आता है। ऐसे सामाजिक विज्ञानी भी हैं जो तर्क देंगे कि भौतिक-रासायनिक या जैविक जगत की वस्तु की तरह नहीं, बल्कि मनुष्य एक सृजनात्मक/ विचारशील प्राणी है और इसलिये मानव समाज विविध अर्थों का क्षेत्र है और केवल एक 'बाह्य वस्तु' नहीं है जो हमें सीमित करती है। दूसरे शब्दों में, तर्क दिया जाता है कि मानव समाज सामाजिक अभिकर्ताओं (actor) की सृजनात्मक उपलब्धियों का उत्पाद है। सामाजिक विज्ञान का कार्य इन अर्थों को समझना और इनकी व्याख्या करना है। जैसा कि आपको इकाई 7 में स्पष्ट होगा, मैक्स वेबर इसी दार्शनिक परंपरा से प्रस्फुटित हुआ था। वेबर (1949) के लिए समाजशास्त्र सामाजिक कार्यों के आत्मपरक अर्थपुंज का व्याख्यात्मक अध्ययन है। उसने इसे वर्स्टेहन (verstehen) कहा अर्थात् सामाजिक कर्ताओं द्वारा दिये गये जगत के बारे में चेतन/ आत्मपरक अर्थों को समझने की विधि। इसी अर्थ में वेबर ने अर्थशास्त्रवाद से परे जाकर प्रारंभिक पूंजीवाद की व्याख्या की जिसमें उसने पूंजीवाद को अर्थों का ऐसा क्षेत्र बताया जिसे प्रोटेस्टेंट या काल्विनवाद के अनुयायी दुनिया से जुड़ा मानते थे। अधिक विस्तार से ज्ञान हेतु इग्नू के बी. ए. के अध्ययन कार्यक्रम के पाठ्यक्रम ई एस ओ-13 के खंड 4 को देखें)।

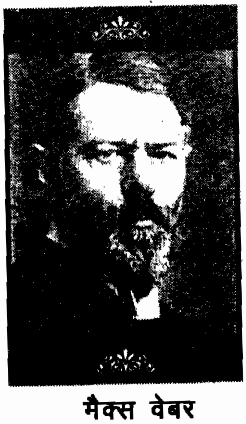

मैक्स वेबर
(1864-1930)

हाँ, वेबर ने मानव अभिकर्तत्त्व (agency) की बात की लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उसके समाजशास्त्र की प्रकृति आत्मपरक थी। इसके स्थान पर, उसने निष्पक्ष कार्यकारण विश्लेषण से आत्मपरक अर्थों के व्याख्यात्मक अध्ययन को जोड़ने के लिए कहा। वह विज्ञान के बुनियादी नियमों अर्थात् निरपेक्षता, मूल्य-तटस्थता और कार्य-कारण व्याख्या के विरुद्ध नहीं था। अर्थों के क्षेत्र को कम महत्त्व देने का तथा प्रकृति व समाज को एकदम समान मानने की प्रत्यक्षवादी वृत्ति का वेबर ने विरोध किया। इसलिए उसने "आदर्श प्ररूप"" की बात की, जो शुद्ध वैज्ञानिक नियमों की अपेक्षा मॉडल की तरह थे।

बीसवीं शताब्दी में व्याख्यावादी समाजशास्त्र की परंपरा को प्रत्यक्षज्ञानशास्त्रीय (phenemenological) और नृजातिविधिशास्त्रीय (ethnomethodological) परंपराओं के माध्यम से और विकसित किया गया। इन परंपराओं का प्रमुख भाव यह है कि विश्व [illegible] रूप से मानव द्वारा महसूस किया गया विश्व है और सामाजिक विज्ञान का कार्य इस विश्व का वर्णन करना, इसे समझना और इसके अर्थ जानना है कि लोग स्वयं कैसे इसे परिभाषित करते हैं और इसकी रचना करते हैं। अल्फ्रेड शुज़ (जीवन-काल 1899-1959) प्रत्यक्षज्ञानशास्त्रीय परंपरा का प्रमुख समर्थक था। उसने अंतःविषयक विश्व के बारे में चर्चा की जिसमें लोग एक दूसरे से संवाद करते हैं और प्ररूपण (typification) की प्रक्रिया से एक-दूसरे को समझते हैं।

अल्फ्रेड शुज़
(1899-1959)

प्ररूपण एक प्रक्रिया है जिससे लोगों को तय करने और एक-दूसरे को परिभाषित करने में सक्षमता प्राप्त होती है और उन्हें परस्पर सहभागी-भूमिका की अपेक्षा करने की संभावना मिलती है। प्ररूपण की इस प्रक्रिया से अर्थपूर्ण और स्थायी सामाजिक-व्यवस्था क़ायम करना संभव है। जिसमें लोग एक-दूसरे से अंतःक्रिया करते हैं ऐसा दैनिक संसार ही शुज़ (1972) के लिए एक 'सर्वोच्च यथार्थ' है। यह निश्चित है और इससे ही समाज बनता है। लेकिन इसके साथ ही अन्य क्षेत्र भी हैं जैसे स्वप्न लोक, या वैज्ञानिक सिद्धांत का क्षेत्र, जिसमें लोग विश्व की अनुभूति करते हैं, अर्थ के इन सब निश्चित क्षेत्रों की समय और स्थान के बारे में अपनी अलग-अलग मान्याताएं हैं, और एक क्षेत्र से दूसरे सम्मिलित समूह में अंतरण से 'आकस्मिक क्षोभ' (shock) भी होता है। लेकिन शुज़ (1972) के लिए 'सर्वोच्च यथार्थ' ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है और हम सब को इस पर वापस आना पड़ता है और विश्व को प्रत्यक्ष/ वास्तविक अभिकर्ता (actor) की तरह अनुभव करना पड़ता है। शुज़ (1972) के अनुसार समाजशास्त्र को यह वर्णन करना और समझना है कि लोग दुनिया को किस तरह से अनुभव करते हैं। इसका अर्थ है कि समाजशास्त्र को लोगों द्वारा दिये गये विवरणों और परिभाषाओं को गंभीरता से लेना है।

MAADHYAM IAS

इस अर्थ में समाजशास्त्रीय-निर्मितियाँ (constructs) "द्वितीय क्रम की निर्मितियाँ" हैं। इसी तरह से हैरॉल्ड गारफ़िन्कल (1967) ने नृजातीय शोधपद्धतिशास्त्र (ethno-methodology) या "लोगों के शोधपद्धतिशास्त्र" पर चर्चा की। इसमें प्रमुख ध्येय है यह वर्णन करना कि लोग स्वयं अपने संसार को किस तरह परिमाणित करते हैं, न कि संदर्भमुक्त (context free) अमूर्त (abstract), सार्विकीय व्यापकीकरण अर्थों में इसकी व्याख्या करना है। दूसरे शब्दों में इन परंपराओं में हमें स्पष्ट दिखाई देता है कि व्याख्या के स्थान पर अर्थपूर्ण समझ, सार्विकीयता के स्थान पर विशिष्टता, सिद्धांत के स्थान पर विवरण, संरचनात्मक कारणों के स्थान पर लोगों के जीवन्त अनुभवों की ओर ध्यान दिया गया है।

अर्थ के निर्माण की धारणा को भलीभांति समझने के लिए आइए हम पहले सोचिये और करिये 6.1 को पूरा करें।

सोचिये और करिये 6.1

स्वास्थिकी (hygiene) सामाजिक-निर्माण का एक उदाहरण है। जिसे एक संस्कृति में स्वास्थ्यप्रद, शुद्ध और उचित माना जाता है, उसे दूसरी संस्कृति में अस्वास्थ्यप्रद या अनुचित समझा जा सकता है। जिसे कुछ लोग परंपरा मानें संभव है, उसी को दूसरे लोग अपराध मानें। उदाहरण के लिए अफ़्रीका के कुछ भागों में महिला-परिच्छेदन (खतना) कुछ संस्कृतियों के अनुसार एक रीति-रिवाज है, लेकिन बहुत-सी संस्कृतियाँ इसे हिंसा मानती है। दूसरा उदाहरण है कि भारत में राजस्थान में, जब 1986 में सती (विधवा का आग में जलना) की घटना हुई तो राजस्थान में समाज के एक वर्ग द्वारा इसे नारीत्व का महिमामंडन एवं परंपरा माना गया जबकि भारत में राज्य तंत्र ने इसे एक अपराधिक कार्रवाई की संज्ञा दी।

यद्यपि अपनी संस्कृति की भाँति हमें कई अनूठी सामाजिक निर्मितियाँ दृष्टिगोचर हो सकती हैं और उनकी व्याख्या करते समय संभव है कि हम उन्हें अपनी संस्कृति के सांचे में ही समझ लें। समाज के कुछ ऐसे पहलू भी हैं जो सारे विश्व और सभी संस्कृतियों में पाये जाते है।

उपर्युक्त उदाहरणों और कथनों के प्रकाश में एक अलग कागज़ पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

प्रश्न

- क्या किसी भी व्यक्ति के लिये मादा-भ्रूणहत्या और सती जैसी स्थितियों में तटस्थ हो सकना संभव है?
- यदि अर्थ इसकी संरचना करने वाली संस्कृति के संदर्भ में ही निर्धारित होते हैं, तो क्या दो भिन्न रूप से विन्यासित संस्कृतियों की तुलना करना संभव है?
- अर्थों की सापेक्ष निर्मितियों के ऊपर दिये उदाहरणों की भाँति अन्य उदाहरण दीजिये।

सामाजिक विज्ञान की दोनों परंपराओं (प्रत्यक्षवाद और व्याख्यावाद) में संगति पाई जाती है, क्योंकि ये दोनों परंपराएं प्रबोधन की आधुनिकता से उदित हुई हैं। प्रत्यक्षवादी परंपरा में आपने वैज्ञानिक व्याख्याओं की वैधता की बोध की पुष्टि देखी। व्याख्यात्मक परंपरा में प्रबोधन के आशावाद की पुष्टि देखी जो मानवीय अभिकर्तत्त्व (agency) और उनमें अपना संसार बनाने की उनकी क्षमता पर केंद्रित है।

MAADHYAM IAS

लेकिन आगे आपको स्पष्ट होगा कि समाजशास्त्र की नींवें ही संकट से जूझ रही हैं, क्योंकि आधुनिक सिद्धांत, वैज्ञानिक निरपेक्षता, ऐतिहासिक प्रगति, सुसंगत/ तार्किकता और अभिकर्ता के अभिकर्तत्त्व की स्वतंत्रता इत्यादि आज संदेहास्पद हो रहे हैं, विशेष रूप से उत्तर-आधुनिकता के आगमन के साथ इस संदेह में और वृद्धि हुई है। इसके फलस्वरूप गंभीर दार्शनिक संकट उत्पन्न हुआ है और समाजशास्त्र को इसका सामना करना है।

6.4 विज्ञान पर पुनःचिंतन

उत्तर-आधुनिकतावादियों द्वारा समाजशास्त्र को दी गई चुनौतियों उनके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने से पहले विज्ञान के दर्शनशास्त्र की ओर कुछ ध्यान देना महत्वपूर्ण है (इकाई 1 भी देखें)। जैसाकि आपको पहले ही मालुम हो चुका है, विज्ञान ने आधुनिक सामाजिक विज्ञान की नींव डाली है। लेकिन इसके बाद हमारे युग में विज्ञान की मूल अवधारणा में बहुत अधिक परिवर्तन आया है और विज्ञान के दार्शनिकों ने हमें विज्ञान पर फिर से विचार करने पर मज़बूर कर दिया है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि विज्ञान की

प्रकृति पर छिड़ी गहन बहस का सामाजिक विज्ञान की दार्शनिकता पर भी प्रभाव पड़ा है। अतः इस वाद-विवाद के बारे में आपके लिये अर्थपूर्ण ढंग से जानना महत्वपूर्ण है।

आइए, हम बीसवीं शताब्दी के प्रमुख वैज्ञानिक दार्शनिक कार्ल पॉपर (जीवन-काल 1902-1994) से शुरू करें, जिसने विज्ञान और समाज के बारे में हमारी समझ में बदलाव किया है। पॉपर का पालन-पोषण वियना में हुआ और उसने न्यूज़ीलैंड और इंग्लैंड में अध्यापन किया था। पॉपर (1972) ने प्रत्यक्षवाद और मार्क्सवाद को मथा और विज्ञान की अपनी विशिष्ट विचारधारा को हमारे सामने रखा। आइंस्टीन के सापेक्षतावाद के सिद्धांत से पैदा हुए भौतिकशास्त्र में आए परिवर्तनों से वह बहुत प्रभावित था। उसका मानना था कि दो सौ से अधिक वर्षों तक प्रभावशाली रहे न्यूटनवादी भौतिकशास्त्र पर अनेक प्रश्न उठाए जा सकते हैं। इस आधार पर उसने विज्ञान की सापेक्ष प्रकृति की चर्चा की। विज्ञान कोई ठोस और स्थायी चिरंतन रूप से मान्य वस्तु नहीं है। पॉपर ने कहा कि उसके लिए विज्ञान अटकलों का विषय है जिसमें मिथ्यासिद्धीकरण और खंडन का बोलबाला है। जैसा कि पॉपर (1972: 37) ने कहा था, एक सिद्धांत की वैज्ञानिक प्रस्थिति इसके मिथ्यासिद्ध होने, या खंडन के योग्य होने, या परीक्षण योग्य होने पर निर्भर करती है। ऐसा सिद्धांत जिसका किसी संकल्पनीय घटना से खंडन नहीं किया जा सकता, वह पॉपर के अनुसार अवैज्ञानिक है। आम धारणा के विपरीत, अखंडनीयता विज्ञान की विशेषता नहीं है। वैज्ञानिक समुदाय के लिये चुनौती यह नहीं है कि विद्यमान सिद्धांत की पुष्टि/ सत्यापन हो, बल्कि यह है कि उसका मिथ्यासिद्धीकरण और खंडन हो सकता है या नहीं। ज्ञान के किसी विशेष स्रोत की अखंडता या पवित्रता को सिद्ध करना ज़रूरी नहीं है, चाहे यह बेकन का अनुभववाद हो या डेस्कार्ट का बुद्धिवाद हो और यह तो कभी न सोचा जाये कि इसके द्वारा अर्जित ज्ञानपूर्ण निश्चितता का क्षेत्र है। इससे हठधर्मी विचारधारा का विकास होता है और एक मिथ्यापूर्ण विश्वास पैदा हो जाता है कि संसार विद्यमान सिद्धांत के सत्यापन से परिपूर्ण है। पॉपर ने इस हठधर्मी विचारधारा की आलोचना की और तर्क दिया कि विज्ञान केवल खुली या मुक्त संस्कृति के साथ ही प्रगति कर सकता है, जिसमें हमें उसकी खंडनीयता (refutability) और मिथ्यासिद्धीकरण (falsifiability) की स्फूर्ति को बढ़ावा देना होगा। नीचे पॉपर के ही शब्दों को पढ़िये (1972: 27)।

कार्ल पॉपर
(1902-1994)

> आपको कैसे मालूम है? आपके कथनों का स्रोत या आधार क्या है? किन प्रेक्षणों के कारण आप इस पर पहुँचे? इन प्रश्नों का मेरा उत्तर होगा : मैं नहीं जानता: मेरा कथन मात्र एक अनुमान था। जिससे इसका उद्भव हुआ है, उसका स्रोत या उसके स्रोत, इसके अनेक संभावित स्रोत हैं और हो सकता है कि इनमें मुझे कुछ स्रोतों की जानकारी भी न हो, और उद्भव अथवा वंशावली (pedigrees) का सच्चाई पर थोड़ा ही प्रभाव होता है। लेकिन यदि आपकी उस समस्या में रुचि है जिसका मैंने अपने अनुमानित कथन द्वारा समाधान करने का प्रयास किया है तो मेरी मदद होगी यदि आप यथासंभव इसकी कड़ी से कड़ी आलोचना करें और यदि आप कुछ ऐसे प्रयोगात्मक परीक्षण करें जो मेरे कथनों का खंडन कर सके तो मैं सहर्ष और अपनी पूरी ताक़त से इसका खंडन करने में आपकी मदद करूँगा।

केवल समालोचनात्मकीय बुद्धिवाद की संस्कृति से ही विज्ञान प्रगति करता है। विज्ञान स्वयं में समालोचनात्मक और लोकतांत्रिक होता है। परीक्षण और त्रुटि, अनुमान और खंडन से ही विज्ञान हमेशा प्रगति करता है। लेकिन नक़ली विज्ञान◎ (puseudo-science) हठधर्मी होता है, यह अपनी व्याख्यात्मक शक्ति के प्रति आश्वस्त होता है, यह केवल पुष्टि और

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सत्यापन की अपेक्षा करता है। विज्ञान की इस समझ से पॉपर ने तार्किक प्रत्यक्षवाद, निश्चयवाद और मार्क्सवाद की आलोचना की। उदाहरण के लिए, पॉपर ने आरोप लगाया कि मार्क्सवाद वस्तुतः यथार्थ रूप से मिथ्यात्व को सिद्ध करने में इच्छुक ही नहीं था। इसके स्थान पर मार्क्सवाद हठधर्मी है और पुष्टि तथा सत्यापन के लिए भरसक प्रयास करता है। पॉपर (1972: 35) ने कहा:

> मार्क्सवादी के लिये अख़बार को खोलना संभव ही नहीं है जब तक वह हर पृष्ठ पर इतिहास की अपनी व्याख्या की पुष्टि का प्रमाण न ढूँढ ले। न केवल समाचार में बल्कि इस बात में भी कि समाचार कैसे प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुतीकरण में और जो प्रस्तुत नहीं किया गया उसमें भी (मार्क्सवादी को) वर्ग से जुड़ा झुकाव दिखाई देता है।

जैसा कि पॉपर ने तर्क दिया इतिहासवाद® के सिद्धांत के रूप में मार्क्सवाद बड़े पैमाने पर ऐतिहासिक भविष्यवाणियों के प्रति झुका हुआ था। लेकिन तब "मार्क्सवाद द्वारा की गई भविष्यवाणियां तार्किक दृष्टि से आधुनिक भौतिकशास्त्र की भाँति न होकर बाइबिल के पुराने टेस्टामेंट के पुराने दृष्टिकोण के अधिक समान हैं।" इस प्रकार की भविष्यवाणी केवल ऐसे क्षेत्र में ही संभव है जो पूरी तरह से सौरमंडल की तरह अलग-थलग, स्थिर और बारम्बार वही चक्कर लगाने वाला आवृत्तिमूलक है। लेकिन सौरमंडल से भिन्न, मानव समाज को हमारे कार्यों से अलग नहीं किया जा सकता। समाज आवृत्तिमूलक (repetitive) होने से बहुत दूर, लगातार परिवर्तनशील, विकासशील और वृद्धिशील है। यदि सूर्य ग्रहण का पूर्वानुमान किया जा सकता है इससे यह वैध तर्क नहीं मिलता कि क्रांतियों की भी भविष्यवाणी की जा सकती है (पॉपर 1970: 340)।

दूसरे शब्दों में, कार्ल पॉपर ने विज्ञान को एक नया अर्थ प्रदान किया। उसने विज्ञान को प्रत्यक्षवादी निश्चितताओं से मुक्त करने का प्रयास किया। उसके लिए विज्ञान सापेक्ष (relative) हैं, विज्ञान मिथक बनाने जैसा है। संज्ञानात्मक निश्चितता से उत्पन्न घंमड विज्ञान का संवर्द्धन नहीं करता है, बल्कि विज्ञान की वृद्धि विनम्रता की उस भावना से होती है जो मिथ्यासिद्धीकरण और खंडनीयता की संभावनाओं को प्रोत्साहित करे।

MAADHYAM IAS

थॉमस कुन (Thomas Kuhn) (जीवन-काल 1922-1996) विज्ञान का दूसरा प्रमुख दार्शनिक था जिसने हमें सामान्य विज्ञान और इसमें निहित रूढ़िवादिता तथा वैज्ञानिक क्रांति से जनित असामान्य विज्ञान के बारे में बताया। कुन के लिए, सामान्य विज्ञान ऐसे निदर्शन (paradigm) की केंद्रीयता पर निर्भर करता है जिसे कोई विशेष वैज्ञानिक समुदाय सत्य मानता है। कुन के (1970: 10) शब्दों में, "निदर्शन तो वास्तविक वैज्ञानिक आचार (practice) के कुछ स्वीकृत उदाहरण हैं जैसे क़ानून, सिद्धांत, अनुप्रयोग और क्रियान्वन आदि। ये निदर्शन एक ऐसा मॉडल प्रदान करते हैं, जिनसे वैज्ञानिक अनुसंधान की सुसम्बद्ध परंपरा विशेष का विकास होता है। दूसरे शब्दों में एक निदर्शन (paradigm) पृष्ठभूमि प्रदान करता है और सामान्य विज्ञान का गतिमार्ग दर्शन करता है। वैज्ञानिक कार्यों के प्रतियोगी मॉडलों से दूर कर अनुयायियों के एक स्थायी समूह को आकर्षित करने की योग्यता में निदर्शन की शक्ति मालुम पड़ती है। इस अर्थ में न्यूटन के प्रिंसिपा और ऑप्टिक्स, फ्रैंकलिन के विद्युत (electricity) और आइंस्टीन के सापेक्षवाद के सिद्धांत (थ्योरी ऑफ़ रिलेटिविटी) ने वैज्ञानिक इतिहास के विभिन्न कालों में निदर्शन के रूप में काम किया। कुन के लिए, सामान्य विज्ञान में खंडन करने या मिथ्या सिद्ध करने या मौजूदा निदर्शनों के प्रति सवाल

थॉमस कुन
(1922-1996)

उठाने के काम नहीं किये जाते हैं। इसके स्थान पर वास्तव में सामान्य विज्ञान तो निदर्शन की संभावित क्षमताओं को वास्तविक रूप देता है तथा और अधिक व्यापकीकरण, प्रयोग तथा तथ्य इक्ट्ठा करने की गतिविधियों के माध्यम से शेष संदेहार्थो (ambiguities) का समाधान करता है। कुन (1970: 23-24) ने कहा,

> निदर्शन के पूर्वानुमानों और तथ्यों के बीच सामंजस्य की सीमा को बढ़ाकर स्वयं निदर्शन को और भी स्पष्टतः अभिव्यक्त करके सामान्य विज्ञान उस वादे को वास्तविक रूप देता है, जो उन तथ्यों के ज्ञान से प्राप्त होता है, जिन्हें निदर्शन विशेष रूप से प्रकट करता है। सामान्य विज्ञान के द्वारा तीव्र प्रगति की लालसा का एक कारण यह है कि इसके कर्त्ता समस्याओं पर ध्यान देते हैं जिसके समाधान में उनकी स्वयं की विदग्घता (ingenuity) बाधा पैदा करती है।

कुन ने इस संपूर्ण प्रक्रिया को "पहेली-हल करने" का कार्य बताया है, इसका कारण यह है कि सामान्य विज्ञान द्वारा जिन समस्याओं की जाँच-पड़ताल की जाती हैं, वे पहेली के समान होती हैं, जिनका हल केवल निदर्शन के नियमों से ही निकाला जा सकता है। जो कुछ भी निदर्शन में सही नहीं बैठता है, उसे छोड़ दिया जाता है। कुन (1970:37) ने विस्तार से कहा,

> एक निदर्शन में संभव है कि समुदाय को उन महत्वपूर्ण सामाजिक समस्याओं से अलग कर दिया जाये जिनका पहेली के रूप में न्यूनीकरण नहीं किया जा सकता क्योंकि इन्हें निदर्शन द्वारा प्रदत्त अवधारणात्मक और उपकरणात्मक साधनों की भाषा में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। सामान्य विज्ञान में तेज़ी से प्रगति क्यों की जाती है? इसका एक कारण यह है कि इसके प्रयोगकर्ताओं का ध्यान उन समस्याओं पर केंद्रित होता है जिन्हें वे अपनी प्रवीणता की कमी से हल नहीं कर पाते हैं।

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि निदर्शन की केंद्रीयता, इसके प्रति प्रतिबद्धता और इसकी विशिष्टता विज्ञान को ठोस दिशा प्रदान करते हैं। अपने विशिष्ट अनुयायियों तथा विशेषज्ञों, पत्र-पत्रिकाओं और प्रकाशनों के कारण विज्ञान एक व्यवसाय बन गया है और विरोधाभासी रूप में, इस संरक्षणवाद से ही सामान्य विज्ञान की संचयी प्रगति होती है। लेकिन तब ऐसी स्थितियां भी हैं, जब वैज्ञानिक समुदाय में आपदा या अनियमितता (anomaly) सिर उठाने लगती है। नये तथ्य (phenomenon) विशेष को समझने में सामान्य विज्ञान की लगातार असफलता के कारण यह स्थिति पैदा हो सकती है। संकट की इस स्थिति से असामान्य विज्ञान का उद्‌भव होता है। यह असामान्य है, क्योंकि सामान्य विज्ञान के विपरीत, यह आपदा या संकट को अंगीकार करता है, स्थापित निदर्शन से सवाल-जवाब करता है और नई पद्धति स्थापित करने का साहस दिखाता है। कुन (1970: 90-91) ने कहा,

> जब भी अनियमितता अथवा संकट से सामना करने के लिये वैज्ञानिकों ने विद्यमान निदर्शनों के प्रति एक भिन्न अभिवृत्ति ली तो उनके शोध की प्रकृति में बदलाव आया। प्रतियोगी अभिव्यक्तियों का प्राचुर्य, किसी भी चीज़ को परखने की इच्छा, स्पष्ट असंतोष का प्रकटीकरण, दर्शनशास्त्र का सहारा लेना और बुनियादी मुद्‌दों पर वाद-विवाद करना, ये सब सामान्य से असामान्य शोध में संक्रमण के लक्षण हैं। अंत में असामान्य विज्ञान के कारण ही "निदर्शन में बदलाव" के साथ वैज्ञानिक क्रांतियाँ हुई हैं।

एक विशेष उदाहरण लें, यह वह रास्ता था, जिससे आंइसटाइन ने भौतिक विज्ञान में क्रांति का सूत्रपात किया। क्रांतिकारी अथवा नया निदर्शन पहले के निदर्शन से हमेशा असंगति वाला होता है। वास्तव में कुन ने बार-बार "निदर्शनों की अतुलनीयता" पर ज़ोर दिया। एक के बाद दूसरे क्रमिक निदर्शनों में सदैव पर्याप्त अंतर पाया जाता है। उदाहरण के लिए, एक घोल (solutions) में यौगिक होते हैं तो दूसरे में मिश्रण होते हैं। एक सपाट होता है, तो दूसरा अंतराल के वक्र व्यूह सा। इसका परिणाम होता है कि वैज्ञानिकों के दो समूह जब एक ही बिंदु से और एक ही दिशा में देखते हैं तो उन्हें भिन्न-भिन्न चीज़ें दिखाई देती हैं।

जैसा कि कुन ने हमें स्मरण कराया है कि वैज्ञानिक समुदाय के लिए नए निदर्शन को स्वीकार करना आसान नहीं है, क्योंकि सामान्य वैज्ञानिक समुदाय में व्यापक रूप से संरक्षणवाद/ हठधर्मिता की विशेषताएँ पाई जाती हैं। लेकिन यह महसूस करना महत्वपूर्ण है कि इस विरोध के बावजूद, नए निदर्शन अधिक से अधिक अनुगामियों को आकर्षित करने में सफल होते हैं और अंत में नये निदर्शन का आधिपत्य क़ायम हो जाता है। तुलना में नया निदर्शन 'अधिक साफ़-सुथरा', 'अधिक उपयुक्त' और 'अधिक आसान' माना जाता है।

हमारे लिए विज्ञान की इस समझ का क्या महत्व है? निदर्शन के केंद्र में होने के कारण सामान्य विज्ञान पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। सामान्य विज्ञान संकुचित और संरक्षणवादी है क्योंकि यह निदर्शन से परे नहीं झाँकना चाहता है। लेकिन अन्य सर्जनात्मक क्षेत्रों, जैसे संगीत, ग्राफ़िक आर्ट, साहित्य और यहाँ तक कि सामाजिक विज्ञान में बात दूसरी है। प्राकृतिक विज्ञान से विपरीत, इन क्षेत्रों में ऐसा कोई अतिशक्तिशाली निदर्शन नहीं है जिसका अनुसरण किया जाये। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि इन क्षेत्रों में शिक्षार्थियों को प्रतियोगी और प्रायः अतुलनीय उपागमों से परिचित कराया जाता है और अंत में उन्हें अपने लिए विकल्प का चयन करना पड़ता है। एक उदाहरण से इस अंतर को स्पष्ट किया जा सकता है। ऑप्टिक्स पर काम करने वाले भौतिक-विज्ञान के छात्र-छात्राओं को अपने क्षेत्र के अतिशक्तिशाली निर्दशन के बारे में इतना अधिक विश्वास है कि उनके लिये किसी भी अन्य सिद्धांत को मानना आसान नहीं। यही किसी निदर्शन की सफलता का रहस्य है कि यह सभी प्रतियोगी उपागमों को पीछे छोड़ने में पूर्णतः सक्षम है। लेकिन धर्म का अध्ययन करने वाले समाजशास्त्र के छात्र-छात्राओं के बारे में कल्पना कीजिए। उनके लिए कोई अतिशक्तिशाली निदर्शन नहीं है। इसकी जगह उन्हें धर्म के संबंध में नाना प्रकारीय, प्रतियोगी और यहाँ तक कि अतुलनीय उपागमों जैसे दुर्खाइम के, वेबर के और मार्क्स के उपागमों से परिचित होना पड़ता है। इससे समाजशास्त्र अधिक खुला और प्रवाहमान बना रहता है।

MAADHIYAM IAS

पॉल फ़ेरबैन्ड (1924-1999) एक और प्रमुख विचारक था जिसने वैज्ञानिक विधि के अधिपत्य की आलोचना की। फ़ेरबैंड (1982) के लिए कोई भी विधि, यहाँ तक कि सर्वाधिक सफल विधि भी, दूसरी विधियों को अपने अधीन नहीं कर सकती और उनको हाशिये पर नहीं रख सकती है। इसमें आश्चर्य नहीं कि उसने वैज्ञानिकवाद◎ (scientism) को अपनी स्वीकृति देने से इंकार कर दिया था, जिसकी यह मान्यता है कि विज्ञान ही ज्ञान का वैध रूप है। इसके स्थान पर उसने विज्ञान की राजनीति, शक्ति के साथ इसके संबंध और प्रचार तथा अन्य युक्तियों से इसके द्वारा ज्ञान के सभी वैकल्पिक रूपों की हत्या करने का रहस्योद्घाटन किया। उसने ज़ोरदार ढंग से कहा कि वैज्ञानिकवाद लोकतांत्रिक समाज की भावना के विरुद्ध काम करेगा क्योंकि लोकतंत्र में ज्ञान पद्धतियों, विधियों और शोध की परंपराओं में बहुलता होती है। फ़ेरबैंड के अनुसार, प्रत्येक परंपरा, प्रत्येक दंत कथा, प्रत्येक कथा की अपनी वैधता होती है। कुछ भी मृत अथवा अर्थहीन नहीं है। यह महत्वपूर्ण है कि हम "ज्ञान के अराजकतावादी सिद्धांत" को यह मानकर स्वीकार करें कि सब कुछ संभव है।

पाल फेरबैन्ड
(1924-1994)

आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि हमने विज्ञान के दर्शनशास्त्र पर इतनी चर्चा क्यों की है। यदि आप गहराई से सोचें तो आपको महसूस होगा कि यह समाज विज्ञान के लिए अति महत्वपूर्ण है। इस चर्चा से हमें दो प्रमुख पाठ सीखने के लिये मिलते हैं।

i) प्रत्यक्षवाद जो विज्ञान की "निश्चितता" को मान्य बनाना चाहता है, वह अप्रभावी हो चुका है। पॉपर के लिए विज्ञान उस अनुमान की भांति है जिसका खंडन हो, कुन के लिए विज्ञान संरक्षणवादी है और यह इसलिए व्याप्त है क्योंकि लोगों के अन्य समूहों की तरह वैज्ञानिकों पर समकक्ष समूह और अन्य समाजीकरण की शक्तियों का दबाव पड़ता है। फ़ेरबैंड के लिए विज्ञान के आधिपत्य और हिंसा का अपना इतिहास है। दूसरे शब्दों में इस सबसे सामाजिक विज्ञान के प्रत्यक्षवादी आधार को अमान्य बनाने की प्रक्रिया तेज़ हो गई है।

ii) विज्ञान को अरहस्यवादी (demystification) बनाने से समाजशास्त्र भी विधियों और परंपराओं के बाहुल्य के प्रति अधिक संवेदनशील हो गया है। इससे सामाजिक विज्ञान को प्राकृतिक विज्ञान की छाया से बाहर निकलने का साहस मिलता है।

उपर्युक्त तर्कों को पूरी तरह से आत्मसात करने के लिए आइए हम सोचिये और करिये 6.2 को पूरा करें और उसके बाद सामाजिक विज्ञान के मूलभूत संकटों पर चर्चा को आगे बढ़ाएं।

सोचिये और करिये 6.2

एकमात्र वैध व्याख्या के रूप में विज्ञान दिन-प्रतिदिन आलोचना का विषय बनता जा रहा है। जबकि यह माना जाता है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने व्यापक प्रगति की है और इसने भुखमरी और बीमारी जैसी मानवीय समस्याओं का समाधान करने और एक सीमा तक प्रकृति के तत्वों के रोष को कम करने का प्रयास किया है, लेकिन फिर भी सभी मानवीय समस्याओं, प्रश्नों और अर्थों की खोज करने में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी सफल नहीं हुए हैं। विश्व भर में दिन-प्रतिदिन के जीवन में धर्म की उपस्थिति में वृद्धि का कारण विज्ञान की इस असमर्थता को बताया जाता है। यदि विज्ञान ही एकमात्र वैध व्याख्या का स्रोत नहीं है तो इसके विकल्प क्या हैं?

ईसाई धर्म को मानने वाले कुछ निष्ठावान धर्मावलम्बियों का मानना है कि "उद्विकास एक सनक है जिसमें वैज्ञानिकों और अन्य धर्मनिरपेक्ष लोगों की निष्ठा है क्योंकि यह मानवता की उस प्रक्रिया से व्याख्या करता है जो ईश्वर की दैवीय शक्ति से भिन्न है। धर्मावलम्बियों की इच्छा है कि "दूसरी संभावित व्याख्या की तरह स्कूल की पाठ्यचर्या में सृष्टि के कोण को किसी भी तरह शामिल कर दिया जाए। इसे एक "सिद्धांत" के रूप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है." (स्रोतः http//lashawnbarber.com)।

उपर्युक्त कथन के संदर्भ में अलग कागज़ पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

प्रश्न

- क्या आपके विचार में लोगों में धर्म के प्रति बढ़ती आस्था का इस तथ्य से कोई संबंध है कि विज्ञान सभी प्रश्नों और आवश्यकताओं का समाधान नहीं कर पाता है?
- क्या हमें अपनी स्कूली पाठ्यचर्या में अस्तित्व से जुड़े गूढ़ प्रश्नों को समझने के लिए वैकल्पिक व्याख्याएं देनी चाहिये, जैसाकि कुछ ईसाइयों ने तर्क दिया है?
- आपके अनुसार समुचित व्याख्या क्या है, जिसे सिद्धांत अथवा सामाजिक विज्ञान विषय के एक भाग के रूप में उपयुक्त समझा जा सकता है?

*परामर्श सत्र के दौरान एम.ए. समाजशास्त्र की एक गतिविधि हेतु परामर्शदाता के लिए विशेष टिप्पणीः कृपया अपने अध्ययन केंद्र के एम.ए. समाजशास्त्र के विद्यार्थियों का एक समूह बनाइए और अंतिम प्रश्न पर सामूहिक चर्चा कीजिए। इस शीर्षक पर वाद-विवाद का आयोजन कीजिए और अपने क्षेत्र में स्थित इग्नू के क्षेत्रीय केंद्र के सहयोग से ज्ञानवाणी के प्रसारण के लिए इस विषय पर एक कार्यक्रम तैयार कीजिए।

MAADHYAM IAS

6.5 मूलाधार में संकट

आधुनिकोत्तर काल के आगमन ने सामाजिक विज्ञान के दार्शनिक आधार को बुरी तरह से संकट में डाल दिया है। जैसा कि आपको मालुम है, सामाजिक विज्ञान या समाजशास्त्र को प्रबोधनजनक आधुनिकता की उपज माना जाता है। इसका आधार वैज्ञानिक निरपेक्षता को मानने, तर्क और प्रगति में विश्वास करने और पाश्चात्य आधुनिकता की सर्वोच्चता को स्वीकृति देने में निहित है। आधुनिकोत्तरता इन सब आधारों को नहीं मानती है और इस बात पर ज़ोर देती है कि दुनिया में कोई सार्विकीय सच्चाई नहीं होती है, ऐसी कोई संस्कृति नहीं है, जो अपने को अन्य संस्कृतियों से उच्चतर होने का दावा कर सकती है और संसार तो मतभेदों की स्थली है। दूसरे शब्दों में आधुनिकोत्तरवादियों के लिए विज्ञान, प्रगति और आधुनिकता में कोई महान सत्य नहीं है। बल्कि विविध प्रकार के स्वर हैं और एक तार्किक सुसम्बद्ध विषय की अवधारणा मात्र पर भी सवाल उठाया गया है (हार्वे 1989)।

आधुनिकता के कार्यक्रम के बारे में मोह-भंग के कई कारण हैं। बीसवीं शताब्दी में युद्ध, हिंसा और सर्वसत्तावाद के अनुभव, औपनिवेशिक लोगों की बढ़ती दावेदारी और परिणामस्वरूप पश्चिमी शक्ति की वैधता में ह्रास, शक्तिहीन वर्गों की आवाज़ों का उदय, संचार की नई प्रौद्योगिकियों का प्राचुर्य और बढ़ती उपभोक्ता संस्कृति द्वारा "उच्च" और "निम्न" की अर्थहीनता – इन सभी कारकों ने पश्चिम के संवेदनशील चिंतकों को पुनर्विचार करने और आधुनिकता की नींवों पर सवाल उठाने के लिए विवश किया। यह प्रश्न उठता है कि समाजशास्त्र के लिये इस आंदोलन के निहितार्थ क्या हैं? एम.एस.ओ.-001 में आपने आधुनिकोत्तर काल के बारे में विस्तार से अध्ययन किया होगा। आधुनिकोत्तर काल के कुछ निहितार्थों की पहचान करना मुश्किल नहीं है, जैसाकि कोष्ठक 6.3 में दिया गया है।

कोष्ठक 6.3: समाजशास्त्र के लिए आधुनिकोत्तर◎ काल के निहितार्थ

कॉम्टे से लेकर मार्क्स तक समाजशास्त्र पर विज्ञान और इसकी निरपेक्षता, सार्विकीयता और व्याख्यात्मक शक्ति का बहुत अधिक प्रभाव रहा। इसीलिए समाजशास्त्र को विचारधारा/ विवरण/ कथा-साहित्य/ तत्वमीमांसा से अलग देखा गया। समाज के विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र को अधिक निरपेक्ष और सत्य, और विश्वसनीय ज्ञान का एक अंग माना गया। लेकिन इसके बाद आधुनिकोत्तरवादियों के लिए विज्ञान ने एकमात्र सच्चाई होने के अपने दावे को खो दिया है, विज्ञान को एक विवरण, एक कहानी और एक विचारधारा के रूप में देखा जाने लगा है और इस प्रकार विज्ञान को एक संपूर्ण वर्णन के रूप में नहीं देखा जा सकता। संसार में न ही कोई परम सत्य है और न ही कोई समग्र सिद्धांत है। बल्कि विविध स्वरों वाली इस दुनिया में भिन्न-भिन्न कहानियाँ और सच्चाईयाँ हैं। यह बिना आम-सहमति की दुनिया है, इसमें सुसंगति नहीं है और न ही कोई महा-सिद्धांत है।

- अतः सभी आधुनिक समाजशास्त्र, अपनी समग्रता के दावों के साथ, तीन अवस्थाओं के कॉम्टे के नियम, दुर्खाइम का श्रम-विभाजन जिससे अवयवी (organic) एकात्मकता पैदा होती है, व्यापक तार्किकता के रूप में वेबर की आधुनिकता और वर्ग-विश्लेषण के मार्क्स के सिद्धांत ने अपनी पहचान खो दी है। ज़िगमंट बॉमन (1987) के शब्दों में समाजशास्त्र अब "महान सत्य को वैध करने के दावे" के बिना लेवल विविध परंपराओं का अनुवाद करने वाला विषय हो गया है। जैसे-जैसे विज्ञान को उसकी मान्यता के दावे से वंचित किया जा रहा है, आधुनिकोत्तर काल के समाजशास्त्रियों ने असंख्य स्रोतों जैसे विवरण जीवनवृत्त, कथा-साहित्य, लोकप्रिय सिनेमा और संगीत का अध्ययन करने की स्वतंत्रता हासिल कर ली है।

MAADHYAM IAS

- आधुनिकोत्तरवादियों ने निरपेक्ष सत्य के रूप में ज्ञान की पवित्रता पर प्रश्न उठाए। माइकल फूको ने तर्क दिया कि कभी भी ज्ञान को शक्ति से और शक्ति को ज्ञान से अलग नहीं किया जा सकता है (शेरिडन 1980 में चर्चित)। उदाहरण के लिए, मनोरोग-चिकित्सा को अनुशासित समाज के एक अभिन्न घटक के रूप में देखा जा सकता है। "सामान्यता" की ऐसे समाज की अपनी धारणा के अनुसार, मनोरोग चिकित्सा यौन अथवा उन्माद को नियंत्रित करने का प्रयास है। यह विमर्श (discourse)◎ जैसी अवधारणा को बनाने जैसा है जिसमें शक्ति और ज्ञान दोनों का समावेश होता है और इसमें निष्कासित करने और सम्मिलित करने का सिद्धांत होता है। इस तरह उन्माद अथवा यौन पर विमर्श में मनोचिकित्सक, डॉक्टर और अन्य "सामान्यीकरण के निर्णायक" का काम लोगों को पागल अथवा यौनग्रस्त के रूप में वर्गीकृत करना है, दूसरे शब्दों में, प्रत्येक वस्तु का निर्माण किया जाता है और कोई भी प्राकृतिक/स्थायी सच्चाई नहीं होती है। इससे अतिरिक्त, सर्वबंधनमुक्त आधुनिक समाज के विचार को चुनौती दी जाती है और हमें ऐसे अनुशासित समाज के बारे में बताया जाता है जिसमें लोगों पर नज़र रखने वाली कार्यप्रणाली का व्यापक नेटवर्क या संजाल होता है।

हाँ, आधुनिकोत्तरवादियों के कारण गंभीर संकट पैदा हुए हैं। उनके लिए कोई आधारिक सच्चाई नहीं होती (जैसा कि बेकन और डेस्कार्ट ने अभिव्यक्त किया था) जिसे निरपेक्ष माना जा सके, ऐसा कोई सार्विकीय सिद्धांत नहीं है (मार्क्सवाद की तरह), जो स्थानीय संदर्भों और विषमांगता से उबर सके और ऐसी कोई "सर्वोच्च" विधि (विज्ञान अथवा प्रत्यक्षवाद की तरह) भी नहीं है। यहाँ पर एक ऐसी स्थिति है, जो ऐसी आधुनिकोत्तर स्थिति विशेष है, जिससे सापेक्षवाद, असंगतता और विभक्तमनस्कता उत्पन्न होते हैं।

लेकिन, ऐसे भी सामाजिक वैज्ञानिक हैं जो आधुनिकोत्तरवाद को स्वीकार नहीं करते हैं, भले ही उन्हें आधुनिकता एवं विज्ञान में समस्याएं नज़र आती हैं। और, यह वाद-विवाद चालू है। जैसे-जैसे आपको इस पाठ्यक्रम में आगे बढ़ने का अवसर मिलेगा, आपकी भी इस वाद-विवाद में सहभागिता होगी।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

6.6 निष्कर्ष

इस इकाई में हमने सामाजिक विज्ञान के दार्शनिक आधार को समझने का प्रयास किया है और चर्चा की है कि किस प्रकार दर्शनशास्त्र के अंतर्गत आने वाले विभिन्न ज्ञान-मीमांसा और तत्वमीमांसागत मुद्दों का सामाजिक विज्ञान के विभिन्न परिदृश्यों और शोध पद्धतियों पर प्रभाव पड़ता है। जैसा कि आपने इस इकाई में की गई चर्चा से देखा है कि ऐसा कोई एकमात्र निदर्शन या सिद्धांत नहीं है, जिसका समाजशास्त्र सहित सामाजिक विज्ञान पर आधिपत्य हो। यद्यपि समाजशास्त्र पर विशेषरूप से इसकी प्रारंभिक अवस्था में प्राकृतिक विज्ञान और इसकी शोध पद्धतियों का प्रभाव पड़ा, इसने अपने को एक विषय के रूप में स्थापित करने के प्रयास के दौरान यह महसूस किया कि समाजशास्त्र की विषयवस्तु (subject matter) में मानव जगत है जिसे सामान्यीकरण और न्यूटन के नियमों के सांचों में नहीं ढाला जा सकता है। विभिन्न प्रकार की व्यापक विश्वदृष्टियों और विशिष्ट संस्कृतियों की खोज से समाजशास्त्रियों के लिए सार्विकीय व्याख्याएं देना अत्यधिक कठिन हो गया। यदि उन्होंने ऐसा किया भी तो उसकी कड़ी आलोचना की गई। बाहुल्य को प्रस्तुत करने की बढ़ती आवश्यकता ने समालोचना की एक नई धारा को जन्म दिया जिससे आधुनिकोत्तर विद्वानों द्वारा विभिन्न विधियों का गौरव बढ़ा और उसमें प्रायः सभी चीज़ें स्वीकार्य हैं।

6.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

फ़िलिप, डेरक एल. 1973, *अबंडनिंग मैथड.* जोसे-ब्रासः न्यूयॉर्क (साधारण शोध की ज्ञानमीमांसीय आधार की समालोचना के लिये)

कोज़र, लेविस ए. 1969, *सोशियालॉजिकल थियरी.* मैक्मिलनः लंदन (समाजशास्त्रीय सिद्धांत में शास्त्रीय लेखन से कुछ मुख्य परिच्छेदों के सामान्य संग्रह के लिये)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 7
प्रत्यक्षवाद तथा इसकी मीमांसा

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 ओजस्वी और प्रत्यक्षवाद का उद्भव

7.3 प्रारंभिक प्रत्यक्षवाद

7.4 प्रत्यक्षवाद का समेकन

7.5 प्रत्यक्षवाद की समीक्षा

7.6 निष्कर्ष

7.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा है कि इकाई 7 के अध्ययन के बाद आपके लिये निम्नलिखित विषय वस्तुओं का अध्ययन और इनकी चर्चा करना संभव होगाः

- प्रत्यक्षवाद और समाजशास्त्र पर इसका प्रभाव;
- कॉम्टे और एमिल दुर्खाइम के योगदान;
- प्रत्यक्षवाद की मीमांसा; तथा
- चिंतनपरक (reflexive) समाजशास्त्र का उदय।

7.1 प्रस्तावना

MAADHYAM IAS

इकाई 6 में आपने पहले ही सामाजिक विज्ञान के दर्शनशास्त्र पर दृष्टिपात कर लिया है। इस बिंदु पर आपके लिए शोध के विशिष्ट मुद्दों तथा प्रकारों पर ध्यान केंद्रित करना अच्छा रहेगा। इकाई 7 में प्रत्यक्षवाद का अध्ययन और किया जायेगा। यह शोध की वह विधि है जिसने समाजशास्त्र को गूढ़ संज्ञानात्मक गौरव दिया और समाजशास्त्रियों को विश्वास दिलाया कि समाजशास्त्र भी विज्ञान है और आनुभविक प्रेक्षण, निगमनात्मक तर्क और नियमों के सूत्रीकरण या सार्विकीय सामान्यीकरणों की वैज्ञानिक पद्धतियों से जुड़े सिद्धांतों का अनुसरण करता है (प्रत्यक्षवाद की मुख्य विशेषताओं के लिए कोष्ठक 7.1 देखें)। दरअसल, विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र का यह आत्म-दर्शन निम्नलिखित तीन उद्देश्यों की पूर्ति करता है।

- इसने समाजशास्त्र को मानविकी या शास्त्रों और दर्शनशास्त्र से अलग किया एवं इस प्रकार आनुभविक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र को अपनी विशिष्ट अस्मिता या पहचान दी।

- इसने समाजशास्त्री को व्यावसायिक (professional) छवि दी। जाति, वर्ग और महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से उत्पन्न सीमित पहचानों से परे जाकर ऐसे व्यावसायिक (professional) समाजशास्त्रियों के लिये अपेक्षाकृत अधिक निष्पक्ष/ तर्कसंगत/ सार्विकीय शैली में चिंतन करना संभव होता है।

- प्रत्यक्षवादी परिप्रेक्ष्य से प्राप्त ज्ञान समाज के पुनःनिर्माण और उसे बेहतर बनाने में हमारे लिए सहायक होगा।

कोष्ठक 7.1: प्रत्यक्षवाद की मुख्य विशेषताएं

प्रत्यक्षवाद की मुख्य विशेषताओं को इस प्रकार लक्षणबद्ध किया जा सकता है:

- प्रत्क्ष्यवाद का शोध पद्धति की उसी प्रणाली में विश्वास है जिसे प्राकृतिक विज्ञानों में अपनाया जाता है।
- इसका यह निष्पक्षता और मूल्य-तटस्थता में विश्वास है। यही कारण है कि प्रत्यक्षवाद में ज्ञान से ज्ञाता, आत्मपरकता से निष्पक्षता और मूल्य से तथ्य को अलग माना जाता है।
- समाजशास्त्र और सामान्य बोध एक ही नहीं हैं। समाजशास्त्र व्याख्यात्मक सिद्धांतों पर आधारित है जिनके आधार पर इस विषय को सार्विकीय प्रस्थिति मिलती है।
- प्रत्यक्षवाद ज्ञान का एक सुव्यवस्थित सुसंगठित पुंज है जिसे विशिष्ट प्रवीणताओं या कौशलों और प्रौद्योगिकीय-वैज्ञानिक शब्दावली से बनाया गया है।
- समाजशास्त्र अमूर्तता और सामान्यीकरण के लिए प्रयास करता है और इसमें सामान्यीकरण जैसे नियमों से मानव अनुभवों की व्याख्या की जाती है।

7.2 ओजस्वी और प्रत्यक्षवाद का उद्‌भव

महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं कि प्रत्यक्षवाद इतिहास के निश्चित बिंदु विशेष पर ही क्यों विकसित हुआ और समाजशास्त्र में इसने किस प्रकार अग्रणी स्थान हासिल किया? आपको मालुम ही है कि कैसे आधुनिक विज्ञान का उद्‌विकास हो रहा था और इससे असीम आशावाद पनप रहा था और विज्ञान का प्रभुत्व क़ायम होना शुरू हो गया था। बेकन, डेस्कार्ट और न्यूटन से निर्गमित वैज्ञानिक चिंतन और वैज्ञानिक अविष्कार और खोजों ने यूरोप के सांस्कृतिक/बौद्धिक परिदृश्य को बदल दिया था। अंततः जैसा कि आपको पहले से मालूम है अठारहवीं शताब्दी में प्रबोधन (देखें कोष्ठक 7.2) एक नया मोड़ था।

इसका अर्थ था तर्क, निष्क्षता और आलोचनात्मकता के नव युग का शुभारम्भ। मध्यकालीन व्यवस्था, धार्मिक प्रभावों से बाहर आकर इस समय यह दावा किया गया कि वैज्ञानिक सोच हमें बेहतर दुनिया बनाने के योग्य बनाएगी। इस नवयुग के प्रभाव से कोई भी अछूता नहीं था।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

विज्ञान की अपार सफलता से अप्रभावित रहना कठिन था। विज्ञान स्वयं ही ज्ञान बन गया जो वास्तविक, निष्पक्ष और आधारमूलक था। ऐसे परिवेश में अस्तित्व बनाये रखने के लिये विज्ञान और उसकी बढ़ती ताकत को स्वीकार करना ही श्रेयस्कर था।

कोष्ठक 7.2: अट्‌ठारहवीं शताब्दी में प्राकृतिक विज्ञानों की विजय

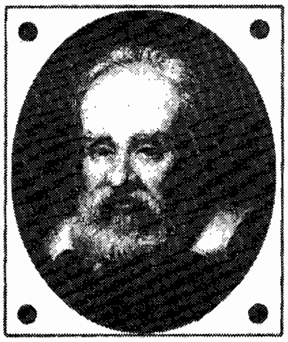

गैलीलियो गैलिलि
(1564-1642)

प्रबोधन युग वास्तव में प्राकृतिक विज्ञानों में शानदार सफलता के काल का साक्षी है। आइज़क न्यूटन (जीवन-काल 1642-1727) और गैलीलियो गैलिलि (जीवन-काल 1564-1642) से शुरुआत करके, प्राकृतिक विज्ञान ने प्राकृतिक दुनिया पर विजय हासिल की और यह एक अमूतपूर्व सफलता थी। सामाजिक विज्ञान भी इस सफलता से अछूते नहीं रहे।

जैसा कि बहुत से टीकाकारों ने कहा है, इन्हीं सफलताओं की छाया में ही सामाजिक विज्ञानों का उदय हुआ। साथ में, प्राकृतिक विज्ञानों द्वारा सिखाए जाने वाले शोध पद्धति के पाठ बहुत स्पष्ट हो रहे थे कि यदि प्राकृतिक विज्ञान की विधियों को निष्ठापूर्वक अपनाया जाये तो सामाजिक विज्ञानों में भी प्राकृतिक विज्ञानों जैसी शानदार सफलता मिल सकती है। सामाजिक विज्ञानों को केवल अपने न्यूटन के आने का इंतज़ार था (देखें हैकमैन 1986: 5)।

कोष्ठक 7.2 में दिये विवरण से प्रत्यक्षवाद के उद्भव की व्याख्या होती है यहाँ पूर्वाग्रह था कि प्राकृतिक विज्ञानों की विधि अपनाए बिना "सच्चे ज्ञान" के रूप में समाजशास्त्र की पहचान स्थापित करना संभव नहीं था। इसके अलावा एक और महत्वपूर्ण कारक था। औद्योगिक क्रांति, व्यापार और वाणिज्य के प्रकार और नवोदित मध्य वर्ग से प्रभावित नवयुग ने पाश्चात्य जगत में शक्ति के समीकरणों को बदल दिया था। इस युग में प्रौद्योगिकीविदों, वैज्ञानिकों और पूंजीपतियों से बने नये कुलीन वर्ग ने अपने अधिकार सामने रखे। इन लोगों को विज्ञान में असीम संभावनाएं नज़र आईं और ये लोग प्रत्यक्षवाद/वैज्ञानिक संस्कृति और शोध की इस शैली के दृढ़ समर्थक थे। हाँ, इस समय विरोधी पक्ष की आवाज़ें भी उठी थीं, जैसे उन रोमांटिकवादियों के स्वर जिन्होंने विज्ञान और तर्क की पूजा की आलोचना की और जिन्होंने कल्पना, आत्मपरकता और सृजनशीलता की दलील दी (जैसा कि गोल्डनेर 1970 ने दर्शाया है)। लेकिन फिर भी विज्ञान की भाषा का आकर्षण रोक पाना संभव नहीं था। समस्या राजनीतिक - आर्थिक संरचना ने इसे समर्थन दिया हुआ था। विज्ञान के तो पैर जमने ही थे और प्रत्यक्षवाद इसका अपरिहार्य परिणाम था।

इसाक न्यूटन
(1642-1727)

यदि हम विज्ञान के आत्म-दर्शन पर चिंतन करें तो समग्र तथ्य (phenomenon) को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। उदाहरणतः तर्क यह है कि सामान्य बोध से विज्ञान एकदम भिन्न है (देखें नाजेल 1961:1-14)। हाँ, यह ज़रूरी नहीं है कि सामान्य बोध हमेशा ग़लत हो। लेकिन विज्ञान की तुलना में सामान्य बोध में तथ्यात्मक प्रमाण पर आधारित सुव्यवस्थित व्याख्याओं के लिए शोध कभी-कभार ही होता है। उदाहरणार्थ, आधुनिक विज्ञान के उदय से पहले लोगों को पहिए के प्रकार्य के बारे में मालूम था। लेकिन केवल आधुनिक विज्ञान ने ही यह बताया कि संघर्षण बल (frictional force) के व्याख्यात्मक सिद्धांत से पहिये के घूमने की प्रक्रिया को समझा तथा समझाया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इसी तरह, न्यूटॅन द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों से भी असंख्य तथ्यों को समझा तथा समझाया जा सकता है (जैसे समुद्री लहरों का व्यवहार, तोप के गोले (projectiles) का मार्ग और चंद्रमा की गति आदि तथ्य)। यह तर्क भी है कि सामान्य बोध की अनिश्चयात्मकता की तुलना में विज्ञान की भाषा अधिक निश्चयात्मक है, केंद्रित और सटीक है। इसमें नाना प्रकार की अस्पष्टताओं की कोई जगह नहीं है। भले ही कविगण अनगिनत तारों की बाते करें परंतु खगोलशास्त्री आकाश में तारें की सही संख्या की गणना तथा माप में लगे रहते हैं। इसके अलावा, सामान्य बोध से विपरीत विज्ञान दूरदर्शी, निष्पक्ष और अमूर्त अध्ययन है। जबकि सामान्यबोध का हमारे रोज़ाना के जीवन से घनिष्ठ संबंध है, विज्ञान अनिवार्यतया निरपेक्ष है। हम भले ही सूर्यास्त के मनभावन रंगों का आनंद उठायें, लेकिन प्रकाश विज्ञान का व्यवस्थित विवरण देने वाला विद्युतचुंबकीय (electromagnetic) अपनी सूक्ष्मता व सिद्धांत अमूर्तता को बनाए रखता है। वास्तव में विज्ञान निश्चित रूप से वस्तुओं के तत्काल मूल्यों पर ध्यान नहीं देता है। यही कारण है कि तर्क की दृष्टि से विज्ञान को मूलतः सच्चे अर्थों में गुण-दोष की खोज करने वाला अध्ययन माना जाता है। सामान्य विज्ञान में जैसी दिख रही हैं उसी रूप में वस्तुओं को मान लिया जाता है जबकि विज्ञान हमारी सर्वप्रिय आस्थाओं पर भी प्रश्नचिन्ह लगा देता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि सामान्यबोध अनिवार्यतया मिथ्या है और विज्ञान ही सत्य है। विज्ञान को जो अलग बनाता है वह हैं विज्ञान की गुण-दोष देखने की, खोजने की सोच और आनुभविक साक्ष्यों पर विशेष ज़ोर देना। नाजेल (1971: 13) के शब्दों में इसी बात को निम्न उद्धरण से समझा जा रहा है।

विज्ञान के संज्ञानात्मक दावों और सामान्य बोध की मान्यताओं में अंतर है। इस अंतर का यह तात्पर्य नहीं है कि विज्ञान की मान्यताएं सदैव सत्य हों। परंतु दोनों के बीच अंतर इस बात पर आधारित है कि विज्ञान की मान्यताएं वैज्ञानिक शोध विधि से निर्मित होती हैं। यह ज़रूर है कि आमतौर पर उपलब्ध साक्ष्य के आलोचनात्मक मूल्यांकन के बिना ही सामान्य बोध की आस्थाओं को मान लिया जाता है, जबकि विज्ञान के निष्कर्षों के लिए साक्ष्य ऐसे मानकों के अनुरूप होते हैं जो समान संरचनागत साक्ष्यों द्वारा समर्थित निष्कर्षों से मेल खाते हैं और जब नयी तथ्यात्मक सामग्री प्राप्त होती है तो उससे भी मेल खाते हैं।

बहुत से विचारकों ने विज्ञान की इस वरीयता को अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय, निष्पक्ष और आलोचनात्मक ज्ञान के रूप में स्पष्ट किया। उदाहरणार्थ, कोष्ठक 7.3 में मर्टन (1972) द्वारा निरूपित विज्ञान के चार संस्थागत अनिवार्य तत्त्वों को दिया जा रहा है।

कोष्ठक 7.3: मर्टन द्वारा निरूपित विज्ञान के चार संस्थागत आवश्यक तत्त्व

- विज्ञान/सार्विकीय (universal) है। वैज्ञानिक कथन की वैधता मानक विशेष पर निर्भर नहीं करती। विज्ञान सभी तरह के नृजातीयवाद (ethnocentrism) के विरुद्ध है। विज्ञान सभी के लिए वैध है।
- विज्ञान का आशय है ज्ञान का साम्यवाद (communism)। तर्क दिया जाता है कि वैज्ञानिकों को आत्मसम्मान और मान्यता से अधिक और कुछ नहीं चाहिये। वैज्ञानिकों के निष्कर्ष और अनुसंधान निजी संपत्ति बनने के बजाय सामूहिक विरासत बन जाते हैं। इसी साझी संस्कृति की बदौलत विज्ञान अदभुत रूप से फल-फूल रहा हैं।
- विज्ञान निरपेक्षता की मांग करता है जिसमें बिना किसी पूर्वाग्रह के निष्कर्षों का तीव्र समीक्षा के साथ परीक्षण किया जाता है।
- विज्ञान संगठित संशयवाद है जो इसकी विशिष्टता है। विज्ञान के लिए हर चीज़ आलोचनात्मक शोध का विषय है। यहाँ पवित्र या अपवित्र जैसा कुछ भी नहीं। विज्ञान में हर चीज़ को अन्वेषण, परीक्षण और समस्यामूलक दृष्टि से देखा जाता है। यही विज्ञान की सफलता की कहानी है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

जैसा कि कोष्ठक 7.3 में दिया गया है, विज्ञान के आत्म-दर्शन में आपको एक सकारात्मक कथा दृष्टिगोचर होती है अर्थात् विज्ञान के गुणों की एक सकारात्मक अभिपुष्टि (affirmation) है और निजी/ राजनीतिक पक्षपातों और पूर्वाग्रहों से मुक्त, निष्पक्ष, आनुभविक, समीक्षात्मक और सार्विकीय ज्ञान को निर्मित करने की विज्ञान में सामर्थ्य है। यूँ कहें कि यही विज्ञान की शौर्य-गाथा है। प्रत्यक्षवाद भी इस सकारात्मक विजयी विज्ञान की अभिपुष्टि ही था। यह सकारात्मक था क्योंकि इससे विज्ञान की निश्चिताओं का आभास होता था। साथ में जीवन के प्रति सकारात्मक रवैया अपना कर अपनी अधिकाधिक बेहतरी के लिए विज्ञान का प्रयोग करना भी प्रत्यक्षवाद में निहित था।

7.3 प्रारंभिक प्रत्यक्षवाद

प्रत्यक्षवाद, जैसा कि आपको समझ में आ चुका होगा, ऐसी स्थिति से उभरा जिसमें विज्ञान की संज्ञानात्मक (cognitive) शक्ति पर केंद्रित असीम आशावाद पनप रहा था। जैसा कि इकाई 6 में पहले ही कहा जा चुका है, आपको यह भी पता है कि आधुनिक समाजशास्त्र का उदय यूरोपीय इतिहास के उस विशिष्ट बिंदु पर हुआ जब समग्र सामाजिक परिदृश्य में वैज्ञानिक क्रांति, प्रबोधन और फ़्रांसीसी क्रांति की वजह से बदलाव आ गया था। यह वास्तव में एक नया युग था और औपचारिक/ शैक्षणिक विषय के रूप में समाजशास्त्र में इस बदलाव को समझने का प्रयास चल रहा था। असल में, फ़्रांस में उन्नीसवीं शताब्दी के

प्रथम अर्ध में प्रारंभिक प्रत्यक्षवाद की जड़ें पाई जा सकती हैं। फ़्रांस की क्रांति के बाद की अवस्था की कल्पना करें। इस समय ज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। विज्ञान और दर्शनशास्त्र का विभाजन अवश्यभावी हो गया। नये वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाएं नज़र आने लगे और विज्ञान तथा उद्योग के बीच घनिष्ठ कड़ी स्थापित हुई। यह महसूस किया गया कि केवल एकमात्र वैज्ञानिक विधि को अध्ययन के सभी क्षेत्रों पर लागू किया जा सकता था। संभवतया प्रारंभिक समाजशास्त्रियों में सेंट सिमों (जीवन-काल 1760-1825) ने इस आकांक्षा को तीक्ष्णता से सामने रखा। उसका मानना था कि वैज्ञानिक वही है जो पूर्वानुमान कर सके और पूर्वानुमान कर पाने की शक्ति ही वैज्ञानिक को बल देती है। यही कारण है कि उसने भौतिक विज्ञानों से प्राप्त किये वैज्ञानिक दृष्टिकोण को मानव समाज के अध्ययन हेतु अपनाने की ज़ोरदार दलील दी। सामाजिक भौतिकी के एक प्रकार को सृजित करने की यह एक प्रेरणा थी ताकि समाजशास्त्र अपने ऐतिहासिक मिशन को अर्थात् औद्योगिक क्रांति की अधूरी कहानी को पूरा कर सके।

वास्तव में, विज्ञान के साथ इस घनिष्ठता ने प्रत्यक्षवाद को जन्म दिया। आधुनिक समाजशास्त्र के संस्थापक ऑगस्ट कॉम्टे ने समाजशास्त्र के सर्वाधिक श्रेष्ठ सिद्धांत के रूप में प्रत्यक्षवाद को स्थापित किया (इकाई 1 भी देखें)। लेकिन सेंट सिमों की तरह कॉम्टे भी समाज में क्रांतिकारी रूपांतरण का साक्षी था। एक तरह से, उसने दो सामाजिक बलों अर्थात् ईश्वरीय/ सैन्य और वैज्ञानिक/ औद्योगिक के बीच प्रतिवादों को देखा। एक युगदृष्टा (visionary) की तरह उसने महसूस किया कि सिर्फ़ वैज्ञानिक/औद्योगिक समाज कह जीत द्वारा ही इस प्रतिवाद का हल किया जा सकता है। उसकी दृष्टि में धर्मविज्ञानियों की जगह अब वैज्ञानिक नयी सामाजिक व्यवस्था के नैतिक संरक्षकों के रूप में सामने आ रहे थे और योद्धाओं की जगह उद्योगपति आ रहे थे। केवल यही ही नहीं, कॉम्टे ने भी प्रबोधन के दावे पर हामी भरी कि विज्ञान के लिए ही संसार की कार्यप्रणाली पर पकड़ स्थापित करना संभव है। उसका मानना था कि प्रत्यक्षवाद या वैज्ञानिक ज्ञान वास्तव में व्यक्ति के मस्तिष्क और इसके साथ-साथ मानव ज्ञान के ऐतिहासिक विकास की सतत वृद्धि का अपरिहार्य परिणाम था।

सेंटसाइमन
(1760-1825)

MAADHYAM IAS

1871 से 1823 तक, कॉम्टे और सेंट सिमों ने घनिष्ठता से एक-दूसरे को इतना सहयोग दिया कि दोनों के योगदानों को अलग रूप से देखना लगभग असंभव था। इस बिंदु पर उन्होंने सामाजिक भौतिकी की बात की और कहा कि प्रगति के उन प्राकृतिक और अपरिवर्तनीय नियमों को खोजा जाये जो गुरुत्वाकर्षण के नियम की भाँति ही अति महत्वपूर्ण थे। लेकिन तभी वे एक-दूसरे से अलग हो गए और अंततः कॉम्टे स्वतंत्र बुद्धिजीवी के रूप में उभर कर सामने आया। 1830-1892 के दौरान उसने कोर्स ऑफ़ पॉज़िटिव फ़िलोसफ़ी के छह खंडों को प्रकाशित किया और 1851-1854 के दौरान उसने सिस्टम ऑफ़ पॉज़िटिव पॉलिटिक्स के चार खंडों को प्रकाशित किया। लॉ ऑफ़ थ्री स्टेजेस या ती चरणों के सिद्धांत ने समाजशास्त्र में कॉम्टे को अमर बना दिया (इकाई 1 भी देखें)। पहले उसने धर्म की अवस्था की चर्चा की अर्थात् ऐसा चरण जिसमें देवी-देवताओं के अजेय रूप से जोड़कर तथ्यों (phenomena) या दिन-प्रतिदिन की साधारण घटनाओं की व्याख्या की जाती थी। सत्य यह है कि बिना मार्गदर्शन के तो कोई भी क्रमबद्ध प्रेक्षण का काम शुरू हो ही नहीं सकता है। अपनी शैशवास्था में तथ्यों के मूल सार से जुड़े प्रश्नों और उनके अंतिम मूल बिंदुओं को समझने के लिए विज्ञानों के पास कोई चारा नहीं था सिवाय इसके कि उन्हें उस समय धर्मशास्त्रीय उत्तर ही सर्वाधिक उपयुक्त पाए लगे। द्वितीयतः

कॉम्टे ने तत्त्वशास्त्रीय चरण द्वितीयतः की बात की जिसमें धार्मिक या आध्यत्मिक बलों की तुलना में अमूर्त बल, शक्तियाँ और सार को सांसारिक प्रतिरूपों के लिए ज़िम्मेवार माना गया। अंत में जैसा कि कॉम्टे ने तर्क दिया एक ऐसा प्रत्यक्ष या वैज्ञानिक चरण आया जिसमें उद्भवों, उद्देश्यों या अमूर्त बलों की खोज में पड़ने की जगह प्रतिरूपों के बीच संबंधों का प्रेक्षण किया गया और नियमों की खोज की गई क्योंकि सभी प्रतिरूपों को प्राकृतिक नियमों के संदर्भ में समझना ही प्रत्यक्ष दर्शनशास्त्र का उद्देश्य है (कोष्ठक 7.4 में उदाहरण देखें)।

कोष्ठक 7.4: कॉम्टे के त्रि-चरण नियम को समझने हेतु एक उदाहरण

आइए ज्ञान के इन तीन चरणों के अर्थ को गहराई से समझने के लिए एक साधारण उदाहरण पर नज़र डालें। एक तथ्य की तरह अग्नि की कल्पना कीजिए। वैदिक ऋचाओं में अग्नि को एक शक्तिशाली देवता के रूप में चित्रित किया गया है। कॉम्टे की दृष्टि में अग्नि को देवता के रूप में व्यक्त करना धर्मशास्त्रीय व्याख्या है। वैदिक अनुष्ठानों से परे जाकर यदि मनन/ अमूर्त चिंतन के उच्च्य चरण में जायें और अग्नि को सत्यता और पवित्रता के उस मानवीय प्रतीक के रूप में देखें जिसमें हर तरह के अहंकार और क्रोध का नाश हो जाता है तो यही कॉम्टे के अनुसार तात्त्विक (metaphysical) व्याख्या है।

लेकिन यदि आप मात्र भौतिक-रासायनिक प्रतिरूप के रूप में ही अग्नि को समझें तो अग्नि की प्राकृतिक नियम की तरह व्याख्या की जा सकती है। कॉम्टे की दृष्टि में यही तीसरा चरण है जिसमें प्रत्यक्ष ज्ञान आनुभविक एवं सार्विकीय है, यह ठोस होने के साथ-साथ निदर्शनीय (demonstrable) भी है, तात्त्विक अथवा धर्मशास्त्रीय महत्त्व के बिना ही यह प्रत्यक्ष ज्ञान संसार के रहस्यों को खोलता है। यही कारण है कि जब वर्षा हो रही हो तो इंद्र देवता के आशीर्वाद के रूप में उसकी व्याख्या करने की ज़रूरत नहीं है। न ही मानव जीवन की रुक्षता दूर करने हेतु रची मनोहारी कविता के रूप में वर्षा को देखने की ज़रूरत है। प्रत्यक्षवादी चरण में गर्मी, बादल बनने और जल चक्र के वैज्ञानिक सिद्धांतों के रूप में वर्षा की व्याख्या की जाती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कॉम्टे का तर्क है कि ज्ञान की सभी शाखाएं एक साथ ही प्रत्यक्षवाद के चरण तक नहीं पहुँचतीं। खगोलशास्त्र, यांत्रिकी, रसायन और जीवविज्ञान जैसे 'निम्न श्रेणी' के विज्ञान तेज़ी से विकसित होते हैं। ये निम्न श्रेणी के विज्ञान हैं क्योंकि ये अन्य विज्ञानों पर अपेक्षाकृत कम निर्भर हैं, कम जटिल हैं और मानवीय कार्यकलापों से इनकी दूरी भी अपेक्षाकृत काफ़ी अधिक है। लेकिन समाजशास्त्र काफ़ी जटिल और रोज़ाना के जीवन से बहुत जुड़ा है और इस कारण से प्रत्यक्षवाद के चरण में देर से ही पहुँचता है। परंतु कॉम्टे के अनुसार समाजशास्त्र के लिए भी प्रत्यक्षवाद के चरण में प्रवेश करने का समय आ चुका था। अब समाजशास्त्र को प्रत्यक्षवादी विज्ञान के रूप में लिया जा सकता था और सामाजिक प्रतिरूपों का विश्लेषण करने और उनके बीच के संबंधों को स्थापित करने के नियमों की खोज की जा सकती थी। कॉम्टे के लिए समाजशास्त्र तो विज्ञानों की रानी है, क्योंकि इसके नियमों के मार्गदर्शन के बिना, निम्न श्रेणी के विज्ञानों की खोजों को मानवता के संदर्भ में अधिकाधिक लाभ के लिए प्रयोग में नहीं लाया जा सकता था।

विज्ञान की दो किस्में हैं: i) वैश्लेषिक, और ii) सांश्लेषिक। भौतिकी और रसायन विज्ञान को वैश्लेषिक कहा जा सकता है क्योंकि ये विभिन्न प्रतिरूपों के बीच नियमों को स्थापित करते हैं। जीवविज्ञान सांश्लेषिक है क्योंकि किसी भी अंग विशेष की व्याख्या तब तक नहीं की जा सकती है जब तक पूरे जीव को सर्वांगीण रूप से न देखा जाये। इसी तरह, कॉम्टे के अनुसार, समाजशास्त्र भी सांश्लेषिक है क्योंकि हर तथ्य का अध्ययन (यह चाहे धर्म हो या राज्य) संपूर्ण समाज के संदर्भ में ही हो सकता है। प्रत्यक्षवाद के निहितार्थ निकालना

कठिन नहीं है। गणित और भौतिकी में किसी के लिए भी अपनी मनमानी से व्याख्या करना संभव नहीं है। इसी तरह, कॉम्टे के अनुसार समाजशास्त्र में भी मनमानी संभव नहीं है। उसका मानना था कि क्या है, क्या होगा और क्या होना चाहिए – इस सभी का निर्धारण करने की क्षमता समाजशास्त्र में है। अन्य शब्दों में सामाजिक प्रतिरूपों को पूर्णतः निर्धारित किया जाता है।

आइए समझें कि इसका क्या अर्थ है। प्रारंभिक गणित सीखने वाले बालक-बालिकाओं को यह स्पष्ट होता है कि 2+2 = 4 होते हैं। यदि आप और हम चाहें कि 2+2 = कुछ भी और हो तो यह संभव ही नहीं है। दूसरे शब्दों में 2+2 = 4 एक प्रकार का लौह नियम है, ऐसा ही नियम है जैसा गुरुत्वाकर्षण का नियम है। हमारे मन की स्थिति चाहे जैसी भी हो ये नियम तो ज्यों के त्यों ही रहते हैं।

प्रत्यक्षवाद भी इसी प्रकार के ज्ञान को पाने के लिये प्रयासरत है। यदि मार्क्सवादी के रूप में आप समाजशास्त्रीय नियम को रखें कि समाजवाद अपरिहार्य है क्योंकि इतिहास ऐसे ही आगे बढ़ता है, तो यह प्रत्यक्षवादी तर्क कहलायेगा। इस तरह की व्याख्या में मार्क्सवाद को गुरुत्वाकर्षण के नियम की भाँति अपरिवर्तनीय प्राकृतिक नियम की तरह लिया जा रहा है जिसमें इस बात से कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि हमारी ज़िंदगी कैसी है या हम किन विचारधाराओं का समर्थन करते हैं।

कॉम्टे वास्तविक अर्थों में विज्ञान का महान प्रतिपादक था और प्रगति की प्रबोधन युगीय धारणाओं में आस्था रखता था। वैज्ञानिक निरपेक्षता के नवयुग के उदय में उसका अटूट विश्वास था। दूसरी ओर, हमें यह भी नहीं भूलना है कि कॉम्टे एक महान नैतिकता प्रेमी था। सामाजिक व्यवस्था और इसकी नैतिक आधारशिला के प्रति वह काफ़ी चिंतित था। वास्तव में वह प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र का उपयोग अपने समाज के पुनर्निर्माण हेतु करना चाहता था। हैरानी की बात नहीं है कि उसके लिए प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र धर्म की तरह काम करता है, मानवजाति के लिये एक धर्मनिरपेक्ष भूमिका निभाता है। इस पर निस्बेत (1967: 58) ने टिप्पणी दी कि कॉम्टे के लिए प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र मात्र ऐसा मध्यकालीनतावाद है जिसमें से ईसाई धर्म को निकाल दिया गया है।

MAADHYAM IAS

कॉम्टे जिस फ्रांसीसी समाज से जूझ रहा था यदि हम उसकी दशा पर एक नज़र डालें तो स्पष्ट होगा कि उस समय हो रही क्रांति परिवर्तन लाने वाला वह मोड़ थी जिससे बहुत सी नयी समस्याएं भी पैदा हुई थीं। ये समस्याएं काफ़ी चिंता का विषय बन चुकी थीं। उदाहरणार्थ, कॉम्टे उस समय प्रचलित अराजकता को अपनी सहमति नहीं दे पाया जिससे असीम व्यक्तिवादिता को बढ़ावा मिल रहा था। उसके अनुसार इस प्रकार का व्यक्तिवाद आधुनिक सभ्यता की एक व्याधि था। इसके अलावा उसने तलाक़ के अधिकारों को मांगने वालों को भी समर्थन नहीं दिया क्योंकि उसको चिंता थी कि इससे परिवार की क्रेंदीयता समाप्त हो जायेगी और इससे समुदाय कमज़ोर हो जायेगा। इस नैतिक संकट या व्यवस्था के संकट का निराकरण करना आवश्यक था।

कॉम्टे का यह विश्वास था कि प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्रीय ज्ञान इस कमी को पूरा कर सकता था और धर्म की उपचारात्मक रूपी भूमिका को निभा सकता था। इसी लिये कॉम्टे सामाजिक स्थायित्व या व्यवस्था की बहाली के प्रति बहुत चिंतित था। दरअसल, यदि हम गहराई से सोचें तो महसूस होगा कि कॉम्टे के प्रत्यक्षवाद में यह रोचक संदेश था, कि अपनी प्रगतिशील भूमिका के बावजूद विज्ञान संस्थापित व्यवस्था का महत्वपूर्ण घटक था अर्थात् 'मौजूदा व्यवस्था की ही एक विचारधारा' था।

7.4 प्रत्यक्षवाद का समेकन

ऑगस्ट कॉम्टे ने प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र की बौद्धिक नींव डाली और संभवतया फ्रांसीसी परंपरा थी जिसने सर्वाधिक प्रतिष्ठित शास्त्रीय (classical) समाजशास्त्रियों में सबसे श्रेष्ठ समाजशास्त्री यानि एमिल दुर्खाइम (जीवन- काल 1858-1917) को जन्म दिया। दुर्खाइम ने प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र को समेकित और विस्तृत किया। उसके द्वारा 1895 में प्रकाशित द रूल्स ऑफ़ सोशलोजिक्ल मैथड ने समाजशास्त्र को नया संवेग दिया। उसने बार-बार ज़ोर दिया कि समाजशास्त्र की विषयवस्तु सामाजिक तथ्यों का वह क्षेत्र है जिसे कोई भी अन्य विषय नहीं समझा जा सकता है। इसलिए यह जानना ज़रूरी है कि दुर्खाइम ने सामाजिक तथ्यों को किस प्रकार परिभाषित किया।

दैनिक जीवन के एक उदाहरण से इसे बेहतर ढंग से समझा जा सकता हैं। मान लीजिए एक सुबह आपने नंगे-पाँव सैर करने की सोची। इसके लिए किसी ने भी आपको बाधित नहीं किया; यह आपका अपना स्वतंत्र निर्णय है। लेकिन इसके बाद मान लीजिए एक शाम आपने मंदिर जाकर पूजा करने का मन बनाया और मंदिर में प्रवेश से पहले आपने अपने जूते उतारे, हाथ धोये और मंदिर में आप नंगे पाँव चले। क्या आपको इन दोनों अनुभवों में कोई गुणात्मक अंतर दिखाई दिया? दोनों में भारी अंतर है। दूसरे उदाहरण में आप सही मायने में स्वतंत्र नहीं हैं। हो सकता है कि मंदिर में जाने से पहले आपको किसी ने नंगे पाँव चलने के लिये बाधित नहीं किया और अपने स्वतः ही ऐसा किया। लेकिन ऐसा इसलिए है क्योंकि आपने मंदिर में प्रवेश करने के नियमों को पहले से ही अपने समाजीकरण के दौरान आत्मसात कर लिया है। अतः आपको मंदिर में प्रवेश करने से पूर्व जूते उतारना लगभग प्राकृतिक और सहज दिखता है। कल्पना कीजिए कि क्या होता यदि आपने बिना जूते उतारे मंदिर में जाने का प्रयास किया होता। इस पर आपको रोका जा सकता था या आपको भारी मुश्किल का सामना करना पड़ सकता था। मंदिर के प्राधिकारियों से लेकर बाकी अन्य सभी श्रद्धालुओं ने आपके ऐसे व्यवहार पर आपत्ति जताई होती और पवित्र जगह की इसे अवमानना माना होता। अन्य शब्दों में नंगे पाँव मंदिर में प्रवेश करना ऐसा तथ्य है जो वहाँ नियम के रूप में मौजूद रहता है। यह एक ऐसी स्वतंत्र शक्ति है जो आपकी खुद की इच्छाशक्ति से परे है। यदि आपने इस नियम को नहीं माना तो आपको नियम उल्लंघन करने से रोका जायेगा, आपको नियम मानने के लिए विवश किया जायेगा, आपको अलग-थलग कर दिया जायेगा। नियम न मानने पर आपका बहिष्कार किया जायेगा, या आपका मज़ाक उड़ाया जायेगा। दुर्खाइम के अनुसार ऐसे तथ्य सामाजिक तथ्य कहलाते हैं।

MAADHYAM IAS

हम सभी खाते, पीते और सोते हैं। लेकिन इन सभी तथ्यों को सामाजिक नहीं कहा जा सकता। यदि ऐसा होता तो जैविक शरीर-क्रियात्मक तथ्यों और सामाजिक तथ्यों के बीच कोई अंतर नहीं होता। दरअसल सामाजिक तथ्यों की कुछ अपनी विशेषताएं हैं। पहली, सामाजिक तथ्यों का आपसे बाहर स्वतंत्र अस्तित्त्व होता है। मान लीजिए आपने अपनी खिड़की से कोई पेड़ देखा। पेड़ की अपने आप में एक हकीक़त है। यदि आप आँखें बंद भी कर लें और इसे देखने से मना करें, तब भी पेड़ तो मौजूद ही रहेगा। इसी तरह दुर्खाइम (1964: 1) ने निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया,

> जब मैंने भाई, पति या नागरिक के रूप में अपने कर्तव्य पूरे किये, अपने वचनों को पूरा किया तो मैंने ऐसे कर्तव्यों को निभाया जो मेरे और मेरे कार्यकलापों से परे समाज में नियमों तथा रीतियों में परिभाषित है। यदि ये नियम एवं रीतियां मेरी अपनी संवेदनाओं के अनुरूप भी है और मुझे उनका यथार्थ आत्मपरक रूप से महसूस होता है तब भी इस प्रकार का यथार्थ वास्तव में वस्तुगत है क्योंकि मैंने इनका सृजन नहीं किया, मैंने तो केवल अपनी शिक्षा के माध्यम से उन्हें ग्रहण किया है।

ये तथ्य वास्तव में भिन्न हैं। जिस मुद्रा का प्रयोग लेनदेन में किया जाता है, संप्रेषण के लिए जो भाषा बोली जाती है, धार्मिक समुदाय के सदस्यों के रूप में जिन अनुष्ठानों को पूरा किया जाता है, ये सभी सामाजिक तथ्य हैं। इनका अस्तित्व आपकी या मेरी इच्छा पर निर्भर नहीं है। जैसा कि दुर्खाइम (1964: 2) ने कहा काम करने, सोचने और महसूस करने के ऐसे तरीक़े हैं जिनका विशेष गुण है कि इनका अस्तित्व वैयक्तिक चेतना से बाहर होता है।

दूसरा, सामाजिक तथ्यों में दमनकारी शक्ति निहित होती है। भले ही दैनिक जीवन में हमें सामाजिक तथ्यों की दमनकारी शक्ति महसूस नहीं होती है क्योंकि आदत, समाजीकरण और आत्मसातीकरण की वजह से हमें सामाजिक तथ्य स्वाभाविक और नैसर्गिक नज़र आते हैं। परंतु दुर्खाइम (1964: 2-3) के शब्दों में, "यदि मैं अपने समाज की परंपराओं का अनुसरण नहीं करूँ, यदि मैं अपने देश और वर्ग द्वारा स्वीकृत रीति के अनुसार कपड़े नहीं पहनूँ, तो इससे एक हास्यास्पद स्थिति उत्पन्न होगी, मुझे समाज में अलग-थलग कर दिया जाएगा और यह बिल्कुल दंड भुगतने के बराबर ही होगा।"

तीसरा, सामाजिक तथ्यों को वस्तुओं की भाँति देखते समय हमें उन्हें उनकी व्यक्तिगत अभिव्यक्ति से पृथक कर देखना होगा। वास्तव में, दुर्खाइम का मानना था कि सामाजिक तथ्यों का शरीर होता है, एक मूर्त रूप होता है और उनका स्वतंत्र अस्तित्व होता है जो उन व्यक्तिगत तथ्यों से एकदम भिन्न होता है, जो सामाजिक तथ्यों को जन्म देते हैं। उदाहरण के लिए, कूटबद्ध क़ानूनी और नैतिक नियम या वे धर्मसिद्धांत, जिनके अंतर्गत धार्मिक समूह अपने विश्वासों को संक्षिप्त रूप देते हैं – ये सभी लोगों के व्यवहार में शब्दशः दुहराये नहीं जाते हैं। फिर भी समाजशास्त्रीय दृष्टि से सामाजिक तथ्यों की व्यक्तिगत अभिव्यक्ति के बजाय उनके मूर्त और स्थायी पहलुओं को श्रेणीकृत करना ही महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार, सामाजिक तथ्यों में "सामाजिक" का अर्थ स्पष्ट है। जैसा कि दुर्खाइम (1964: 3) ने कहा था, "इनका स्रोत व्यक्ति में नहीं है, इनका आधार समाज के अलावा कुछ और हो नहीं सकता, या तो समग्र रूप से राजनीतिक समाज होगा अथवा इसमें शामिल आंशिक समूह में से कोई एक होगा, जैसे धार्मिक इकाइयां, राजनीतिक, साहित्यिक और व्यावसायिक संघ आदि।"

MAADHYAM IAS

संक्षेप में, दुर्खाइम (1964: 13) के ही शब्दों में इस चर्चा का समापन इस प्रकार किया जा सकता है,

> सामाजिक तथ्य कार्य करने का हर तरीक़ा है, चाहे वह निर्धारित हो या नहीं, यह बाहरी दबाव के रूप में व्यक्ति को प्रभावित करने में सक्षम होता है; या कहें कि काम करने का हर तरीक़ा जो समाज विशेष में सामान्य रूप से पाया जाता है और साथ में अपनी व्यक्तिगत अभिव्यक्ति से परे स्वतंत्र अस्तित्व वाला होता है।

सामाजिक तथ्यों के अध्ययन हेतु दुर्खाइम द्वारा निर्धारित 'नियमों' को देखने से आपको दुर्खाइम के वैज्ञानिक समाजशास्त्र की अच्छी पकड़ मिल सकती है। एक बहुचर्चित नियम है कि सामाजिक तथ्यों को वस्तु के रूप में देखना नितान्त आवश्यक है। इसका क्या तात्पर्य है? एक वस्तु को वस्तु की तरह देखना इसलिये आवश्यक है क्योंकि इसकी तथ्यता, मेरे या आपके चाहने पर भी, नकारी नहीं जा सकती है। इसी अर्थ में कुर्सी जैसी बाह्य पदार्थों का वस्तुओं के रूप में अस्तित्व होता है। यदि आपको वस्तु विशेष को उसके अपने रूप में देखना हो, तो आप उस पर अपने विचारों और भावनाओं को न लादें। पेड़ को तो पेड़ के रूप में ही देखना होगा, भले आपको पेड़ तनिक भी न भाते हों। दूसरे शब्दों में, फ़्रांसिस बेकन की ही तरह, दुर्खाइम ने तर्क दिया कि वस्तु विशेष को उसके तथ्यात्मक

रूप में देखने के रास्ते में हमें अपने विचारों और भावनाएं अथवा, इष्ट (idols) को नहीं आने देना है (बेकन के विचारों पर चर्चा के लिए इकाई 6 देखें)। एक समाजशास्त्री को वैज्ञानिक निष्पक्षता के मूल पाठ को सदैव ध्यान में रखना है। उदाहरण के लिए, विवाह को सामाजिक तथ्य के रूप में लें। एक व्यक्ति के रूप में भले ही आप विवाह की संस्था को पसंद न करें लेकिन यदि एक समाजशास्त्री के रूप में विवाह को एक सामाजिक तथ्य के रूप में देखना हो तो आपको अपनी निष्पक्षता को क़ायम रखते हुए अपनी पसंद और नापसंद को तथ्यों से अलग करना होगा और इसे विवाह से जुड़े क़ानूनों, धार्मिक परंपराओं और सामाजिक रीति-रिवाजों के रूप में तथ्यात्मक रूप से देखना होगा। दूसरे शब्दों में, ऐसा करना जानने वाले तथा जानकारी से जुड़े तथ्यों को मूल्यों से पृथक करने के बराबर है। भौतिक विज्ञानियों द्वारा अणुओं के व्यवहार के अध्ययन से अथवा भूविज्ञानियों द्वारा पर्वतों के निर्माण से इसकी तुलना की जा सकती है। दुर्खाइम ने (1964: 30) इसका वर्णन करते हुए कहा था,

> सामाजिक तथ्य... वस्तुओं के समान होते हैं। क़ानून का निर्माण कोड या संहिता के रूप में होता है; दैनिक जीवन के प्रवाहों को सांख्यिकीय अंकों और ऐतिहासिक-स्मारकों में रिकॉर्ड किया जाता है; फैशन को परिधानों में संरक्षित किया जाता है और रुचि को कला कार्यों के रूप में। अपने प्रकृतिगत रूप से ही तथ्यों का व्यक्तिगत चेतना से परे स्वतंत्र अस्तित्व होता है और वास्तव में तथ्य व्यक्तिगत चेतना पर प्रभुत्त्व जमाए रहते हैं। वस्तु के रूप में उनकी विशिष्टता को प्रदर्शित करने के लिए उन्हें हमारी अपनी मर्ज़ी से इधर-उधर करना बिल्कुल ज़रूरी नहीं है।

इसी तरह से, दुर्खाइम ने रेने डेस्कार्ट की विचारधारा को याद करते हुए हमें सभी पूर्वधारणाओं को त्याग देने की आवश्यकता का स्मरण कराया है। दुर्खाइम (1964: 32) के लिए, यह भावनाओं, मनोभावों और अनुभूति जैसी "निम्न" प्रकार की मनोदशाओं से ऊपर उठने के बराबर है। केवल तब ही एक समाजशास्त्री के लिए "उन भ्रामक विचारों से स्वयं को बंधनमुक्त करना संभव है, जो आम व्यक्ति के दिमाग़ पर हावी रहते हैं"। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि दुर्खाइम (1964: 35) ने समाजशास्त्र के लिए वैज्ञानिक शब्दावली की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। समाजशास्त्रियों को सामान्य बोध वाली भाषा की अनिश्चितता से दूर रहना होगा और अपने द्वारा प्रयुक्त अवधारणा की निश्चितता के बारे में बहुत ही स्पष्ट होना होगा। दुर्खाइम (1964: 35) ने कहा,

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

> प्रत्येक समाजशास्त्रीय अध्ययन की विषयवस्तु में तथ्यों के समूह को शामिल कर उनको समानरूपीय बाह्य विशेषताओं के अनुसार पहले ही से परिभाषित करना चाहिये। इस प्रकार से परिभाषित सभी तथ्यों को अध्ययन हेतु निश्चित किये समूह में शामिल किया जाना चाहिए।

वस्तु विशेष का अध्ययन या प्रेक्षण करते समय सभी प्रकार की अनिश्चितता से दूर रहना भी अति महत्वपूर्ण है। भौतिक विज्ञानियों ने तापमान और विद्युत के अनिश्चित अनुमान की जगह थर्मोमीटर और इलेक्ट्रोमीटर से देखे जा सकने वाले परिमाण की खोज की है। इसी तरह से, जब समाजशास्त्रियों को सामाजिक तथ्यों का अध्ययन करना हो तो उनके अध्ययनों पर उनके निजी गुणों-भावों का प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। इसके स्थान पर, सामाजिक तथ्यों को उनके मूर्त और पारदर्शी रूप में व्यक्त करना अधिक महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए ये रूप क़ानूनी संहिताओं, नैतिक नियमनों, प्रचलित कहावतों, सांख्यिकीय आंकड़ों और धार्मिक सम्मेलनों में पाए जाते हैं। हम भी इसका एक उदाहरण लें। मान लीजिए कि सामाजिक तथ्य की तरह आपने भारत में जाति का अध्ययन किया और संभवतः यह पाया कि अम्बेडकर और गांधी ने जाति-क्रम को भिन्न-भिन्न प्रकार से अनुभव किया है और इसके संबंध में अलग-अलग ढंग से अपने विचार प्रकट किए हैं। लेकिन यदि

आपका समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण दुर्खाइम के प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र से प्रभावित है तो आपको इन व्यक्तिगत अभिव्यक्तियों को तूल देने की आवश्यकता नहीं है। बल्कि आपका कार्य जाति को एक वस्तु अर्थात् कूटबद्ध क़ानून में जड़ पकड़े हुई संरचना में, धार्मिक मान्यताओं और सामाजिक रीति-रिवाजों के रूप में देखना है।

विज्ञान की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसकी व्याख्यात्मक शक्ति है। चूंकि समाजशास्त्र वैज्ञानिक है, इसलिए इसे सामाजिक तथ्यों की व्याख्या करनी होगी। दुर्खाइम के लिए समाजशास्त्रीय व्याख्याएं निष्पक्ष और स्वतंत्र होती हैं और इन्हें मनोवैज्ञानिक रूप में नहीं देखा जा सकता। इस अर्थ में दुर्खाइम (1964: 102) ने एक रुचिकर बिंदु पर प्रकाश डाला कि "एक संपूर्ण वस्तु इसके विभिन्न भागों के योग के समान नहीं होती है।" इसका अपना स्वतंत्र अस्तित्व होता है जो गुणात्मक दृष्टि से इसके घटकीय अंगों से भिन्न होता है। इसी तरह समाज भी व्यक्तियों के योग के बराबर नहीं होता। यह निस्संदेह सत्य है कि व्यक्ति के बिना समाज नहीं होता है। लेकिन समाज का अस्तित्व व्यक्ति से परे होता है। सामाजिक तथ्यों की व्याख्या करते समय व्यक्ति से परे समूह की सर्वोच्चता को समझना महत्वपूर्ण है। इसी बात को दुर्खाइम (1964: 104) ने स्पष्ट करते हुए कहा कि

> अलग-अलग व्यक्ति जो सोचें, उनसे एकदम भिन्न रूप से समूह सोचता है, महसूस करता है और काम करता है। ऐसी स्थिति में यदि हमने व्यक्ति की सोच से शुरू किया तो हमें समूह में होने वाली बातों के बारे में कुछ नहीं पता लगेगा। संक्षेप में मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के बीच सततता (continuity) में वही अंतर है जो जीव-विज्ञान और भौतिक रसायन (physiochemical) विज्ञान के बीच है। इसके परिणामस्वरूप हर बार जब सामाजिक प्रतिरूप को सीधे ही मनोवैज्ञानिक प्रतिरूप की तरह समझा-समझाया जाता है तो हमें समझ लेना चाहिये कि यह व्याख्या मिथ्यापूर्ण है।

MAADHYAM IAS

अपने अन्य सारगर्भित कार्यों में इसी अर्थ में दुर्खाइम ने आत्महत्या, श्रम-विभाजन और नैतिक शिक्षा जैसे सामाजिक तथ्यों के लिए समाजशास्त्रीय व्याख्याएं दी हैं। वास्तव में, दुखाईम (1964: 110) ने स्पष्ट रूप से कहा था, "सामाजिक तथ्य विशेष का निर्धारक कारण व्यक्ति की चेतना की दशाओं में न खोजकर उससे पहले के सामाजिक तथ्यों में खोजना चाहिए। इसी तरह से, सामाजिक तथ्य के प्रकार्य को सामाजिक उद्देश्य के संदर्भ में ढूँढने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, सामाजिक तथ्य के रूप में दंड को लें। दुर्खाइम के लिए, इसका कारण सामूहिक भावनाओं की यह सघनता है कि अपराध बुरा होता है। इसी तरह से इसका प्रकार्य इन भावनाओं की सघनता को उसी स्तर पर बनाए रखना है। उसका मानना था कि अध्यापक द्वारा बच्चे को दंड देने का प्रकार्य बच्चे को शारीरिक पीड़ा पहुंचाना न होकर कक्षा में नैतिक व्यवस्था की पवित्रता को बनाए रखना होता है। दुर्खाइम के अनुसार एक सामाजिक प्रतिरूप की व्याख्या करने के लिए उसके कारण के साथ-साथ उसके प्रकार्य के बारे में जानकारी हासिल करना ज़रूरी है और कारण तथा कार्य दोनों ही स्वभावतः सामाजिक होते हैं और इन्हें व्यक्तिगत मानस तक सीमित नहीं किया जा सकता।

दुर्खाइम द्वारा निर्मित वैज्ञानिक समाजशास्त्र ने इस विषय को एक नई गति प्रदान की उसने कहा कि समाजशास्त्र को दर्शनशास्त्र के प्रभाव से बाहर आना होगा और स्वयं को विज्ञान के रूप में स्थापित करना होगा। उसका मानना था कि कार्य-कारण के सिद्धांत को सामाजिक प्रतिरूपों पर लागू किया जा सकता है और इसके परिणामस्वरूप, समाजशास्त्र विचारधाराग्रस्त विश्लेषण से मुक्त हो जाएगा, यह न तो व्यक्तिवादी होगा और न हीं समाजवादी। बल्कि समाजशास्त्र सामाजिक तथ्यों के अध्ययन का एक निष्पक्ष विषय होगा। यह निष्पक्षता इस विषय की "लोकप्रियता" को भले ही कम कर दे, लेकिन साथ ही एक पैगम्बर (prophet) की तरह प्रेरणात्मक शब्दों में दुर्खाइम (1964: 146) ने कहा,

> इसके विपरीत, हमारा विश्वास है कि समाजशास्त्र के लिए अब वह समय आ गया है कि वह अपनी लोकप्रियता की परवाह किये बिना विज्ञान के उच्चस्तरीय कड़े स्वरूप को अपनाए। इससे समाजशास्त्र को वह गरिमा और प्राधिकार मिलेंगे जो लोकप्रियता के चक्कर में खो गए हैं। निस्संदेह समाजशास्त्र को सफलतापूर्वक इस भूमिका को निभाने के लिए सक्षम होने में समय लगेगा। फिर भी, हमें अभी से अपना काम शुरू कर देना है ताकि समाजशास्त्र एक न एक दिन इस भूमिका को निभाना शुरू कर सके।

हमें यह नहीं भूलना है कि वैज्ञानिक समाजशास्त्र के समर्थन में दिए गए अपने दृढ़ विचारों के बावजूद, दखाईम समाज की नैतिक आधारशिला, इसके स्थायित्व और व्यवस्था के बारे में गूढ़ रूप से चिंतित था। संभवतः आधुनिक/ औद्योगिक समाजों और उनमें निहित अंतरों, श्रम-विशिष्टता और विभाजन ने उसे एक नई समस्या से जूझने के लिए विवश किया। यांत्रिक एकता युक्त सरल समाजों के दिन अब लद गए हैं। लेकिन अब यह प्रश्न उठता है कि क्या आधुनिक समाज केवल अहंकारी व्यक्तिवाद और स्वार्थ के बलबूते आगे बढ़ सकते हैं? इसमें कोई आश्चर्य नहीं, दुर्खाइम ने उपयोगितावाद और हर व्यक्ति द्वारा अपनी सुख-सुविधा को अधिकतम करने के उत्साह की कठोर आलोचना की। इसके स्थान पर दुर्खाइम ने सामूहिकता की नैतिक सर्वोच्चता में आस्था रखने वाले अपने विचारों को बनाए रखा और उसने पाया कि आधुनिक समाज में बढ़ते हुए अंतर दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई पारस्परिक निर्भरता को बढ़ावा देंगे और "आंगिक या अवयवी एकता" का निर्माण होगा। नैतिक व्यवस्था के आधार की इस निरंतर खोज ने दुर्खाइम को पवित्रता तथा धर्म के क्षेत्र और विद्यालय एवं नैतिक शिक्षा के बारे में अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया। एक प्रकार से अगस्त कॉम्टे और एमिल दुर्खाइम दोनों में हमें सामाजिक व्यवस्था और स्थिरता के साथ प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र का सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास दिखाई देता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यक्षवाद में एक ओर विज्ञान के निश्चय कथन और दूसरी ओर व्यवस्था तथा स्थायित्व की खोज है। क्या इसका यह अर्थ है कि विज्ञान भी एक तरह की विचारधारा ही है? (इकाई 1 देखें, जहाँ भी इसी प्रकार के प्रश्न का सकारात्मक उत्तर दिया गया है)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

आइए, अब हम सामाजिक तथ्य के बारे में दुर्खाइम के विचारों पर अपनी समझ की जाँच करने हेतु सोचें और करें 7.1 को पूरा कर लें।

सोचें और करें 7.1

दुर्खाइम के अनुसार सामाजिक तथ्य बाह्य एवं दमनीय या बाध्यकारी होते हैं और सामाजिक तथ्यों को वस्तुओं की तरह समझ कर उनका अध्ययन क़ानूनी संहिताओं (codes), धार्मिक अभिव्यक्तियों, कहावतों, रीति-रिवाजों आदि में प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति के माध्यम से किया जाना अपेक्षित है। सामाजिक तथ्यों की उपर्युक्त अवधारणा के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक अलग कागज़ पर लिखिए।

प्रश्न

i) 'सामाजिक वास्तविकताएं दमनीय या बाध्यकारी (coercive) होती हैं।' दुर्खाइम के इस कथन का आपके अनुभव के आधार पर क्या उदाहरण हो सकता है?

ii) क्या आपका यह विचार है कि क्या मनुष्य निरंतर समाज के बंधनकारी पहलुओं से मुक्त होने का प्रयास करता रहता है; यदि ऐसा होता है, तो किस प्रकार ऐसा कर पाना संभव है? उदाहरण सहित उत्तर दीजिए।

iii) महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभावों से जुड़े संबंधों के संदर्भ में कुछ कहावतों को इकट्ठा करने के पश्चात बताइये कि ये कहावतें किस तरह से महिलाओं की प्रस्थिति (status) पर प्रकाश डालती हैं?

7.5 प्रत्यक्षवाद की समीक्षा

अभी तक फ्रांस की समाजशास्त्रीय परंपरा में आपने प्रत्यक्षवाद की उत्पत्ति और समेकन (consolidation) को देखा। इसके बाद यह परंपरा विश्व के अन्य भागों में फैली और एक शक्तिशाली समाजशास्त्रीय विधि बन गई। प्रत्यक्षवाद का अपना एक आकर्षण था। इसने समाजशास्त्र को 'वैज्ञानिक प्रस्थिति' प्रदान की। परिशुद्धता (precision), निष्पक्षता, कार्य-कारणत्व और मूल्य-तटस्थता की खोज ने समाजशास्त्र को मान्यता दी। संख्याओं में आस्था सामाजिक तथ्यों के गणितीकरण, गुणात्मक मानवीय अनुभवों का मात्रात्मक सांख्यकीय अंकों में अल्पीकरण करने में प्रत्यक्षवादी सामाजिक विज्ञान ने अपनी तार्किक पराकाष्ठा को पाया। इस तरह प्रत्यक्षवाद ने विशेष सफलताएं हासिल कीं। लेकिन जैसा कि अनुमान लगाया जा सकता है कि हरेक का प्रत्यक्षवाद से लगाव नहीं हो पाया। पहला, यह कहना संभव है कि जो प्रकृति के प्रभाव क्षेत्र (domain) में लागू है, वही मानव समाज के प्रभाव क्षेत्र में लागू होना ज़रूरी नहीं है। क्योंकि प्रकृति से भिन्न समाज में आत्मचिंतन करने वाले कर्ता होते हैं, जो अपनी सोच, तर्क और समस्याओं से जूझने की शक्ति से संसार में बदलाव लाते हैं। इसलिए समाज को अमूर्त/ सार्वभौमिक सामान्यीकरण का विषय नहीं बनाया जा सकता। यह आरोप लगाया जाता है कि प्रत्यक्षवाद प्रायः सृजनात्मकता, चिंतनशीलता और सामाजिक जीवों के कर्तत्त्व को महत्व नहीं देता है। जैसा कि आपने इकाई 6 में पढ़ा है कि व्याख्यात्मक समाजशास्त्र ने प्रत्यक्षवादी परंपरा से विदाई लेकर नई दिशा पकड़ी थी।

दूसरा, यह तर्क दिया जाता है कि प्रत्यक्षवाद की तथाकथित "नीतिशास्त्रीय तटस्थता" के कारण यह मात्र तकनीक बन कर रह गया और नैतिक/ राजनीतिक मुद्दों से अछूता रहा। और मज़े की बात है कि यही प्रत्यक्षवाद की राजनीति है। ज़मी-जमाई व्यवस्था प्रायः अपनी वैधता सिद्ध करने हेतु प्रत्यक्षवाद की वैज्ञानिक प्रकृति का सहारा लेती है। दूसरे शब्दों में, प्रत्यक्षवाद मौजूदा व्यवस्था का समर्थक, यथास्थिति को मानने वाला, आलोचना-शून्य और चिंतनरहित सिद्ध हो सकता है। बीसवीं शताब्दी में समीक्षा सिद्धांतवादियों, या कहें कि फ्रैंकफर्ट विचारधारा के मार्क्सवादियों ने अपेक्षाकृत अधिक ज़ोरदार ढंग से प्रत्यक्षवाद की इसी प्रकार की समालोचना की, उन्होंने कहा कि विज्ञान ने मुक्त करने की अपनी शक्ति खो दी है। इसके स्थान पर विज्ञान स्वयं मौजूदा व्यवस्था का एक अभिन्न घटक बन गया है। वास्तव में, महायुद्धों के अनुभव, व्यापक स्तर पर हिंसा, फासीवाद की बढ़त, "संस्कृति उद्योग" का प्रसार और "प्राधिकारी व्यक्तित्व" के उदय, दूसरे शब्दों में बीसवीं शताब्दी के अंधकारमय परिवेश ने इन विचारकों को "प्रबोधन की वाद-संवादात्मकता (dialectic)" के बारे में आवाज़ उठाने के लिए विवश किया। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि अडोर्नो से लेकर हौरखेमर ओर मारक्यूज़ तक, सबके तर्क का मुख्य विषय यह था कि प्रत्यक्षवादी विज्ञान और कुछ न होकर, केवल मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों पर प्रभुत्व जमाकर उन्हें हासिल करने वाली साधनस्वरूपा तार्किकता (instrumental retionality) का ही एक रूप है। उन्होंने इस साधनस्वरूप तार्किकता की समीक्षा की और अधिक समीक्षात्मक, चिंतनशील, गुणात्मक और मन, वाचा, कर्मणा से स्वतंत्र होने वाले समाज विज्ञान की वकालत की।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

तीसरा, जैसा कि आपने इकाई 6 में पढ़ा है, उत्तर आधुनिकतावादी विद्वानों ने विज्ञान के मूल आधार का ही विनिर्माण (deconstruction) किया। अचरज नहीं कि इनके लिए प्रत्यक्षवाद ने अपनी संज्ञानात्मक शक्ति और वैधता को खो दिया है। एक प्रकार से निष्पक्ष विज्ञान और आत्मवाची विवरणों के बीच का अंतर लुप्त हो गया है, समाजशास्त्र एक और विवरणात्मक विषय बन गया है जो जीवनियों और जीवन-वृत्तों से भरा है। इस तरह अब ग़ैर-प्रत्यक्षवादी/आधुनिकोत्तर समाजशास्त्र मूलतः सांस्कृतिक अध्ययनों से भिन्न नज़र नहीं आता।

जैसा कि आपको मालूम है कि प्रत्यक्षवाद का उदय एक ऐसे समय में हुआ था जब समाजशास्त्र अपने को विज्ञान के रूप में स्थापित करने का प्रयास कर रहा था। प्रत्यक्षवाद का आकर्षण अभी भी बना हुआ है (जैसा कि इकाई 4 के अंत में इंगित किया चुका है)। लेकिन कालांतर के साथ विज्ञान की तथाकथित 'तटस्थता' के भ्रम को जताने वाले नूतन अनुभवों और आत्म-चिंतनशीलता तथा सृजनात्मकता की नई संवेदनशीलता से प्रत्यक्षवाद की दिन-ब-दिन बढ़ती हुई समालोचना हमारे सामने स्पष्ट रूप से मुखर हो रही है। सचमुच ही प्रत्यक्षवाद का पुराना आकर्षण अब समाप्तप्राय हो गया है। आपको यह बदलता हुआ बौद्धिक परिवेश भलीभांति हृदयंगम होगा, यदि आप प्रत्यक्षवाद की नीचे दी गई दो विशेष समीक्षाओं पर पूरी तरह से ध्यान दें।

क) **शोध-विधि परक द्वैतवाद का प्रतिरोध करने वाला आत्म-चिंतनशील समाजशास्त्र**

एल्विन डब्ल्यू. गोल्डनर (जीवन-काल 1920-1980) द्वारा प्रस्तुत आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र को प्रत्यक्षवाद का एक अर्थवान् विकल्प माना जा सकता है। अमेरिकन समाजशास्त्री, गोल्डनर (1970) ने अत्यधिक उच्च कोटि की नैतिक-संवेदनशीलता के साथ किये अपने लेखन में प्रत्यक्षवाद की समीक्षा दी। उसने शोध पद्धतिपरक (methodological) द्वैतवाद ही प्रति हमें सजग किया। यह द्वयात्मकता या द्वैतवाद ज्ञाता को ज्ञान कर्ता को कर्म (object) से, तथ्य को मूल्य से पृथक करता है। केवल यही नहीं वरन् यदि समाजविज्ञानी राजनीतिक, भावनात्मक और सौंदर्यशास्त्रीय रूप से अपनी शोध के उद्देश्य से जुड़ने लगें तो इस प्रकार की द्वयात्मकता (dualism) के अनुसार समाजशास्त्र की "वैज्ञानिक प्रकृति" को आघात पहुंचता है। जैसा कि गोल्डनर (1970: 496) ने तर्क दिया था, यह ठंडी निष्पक्षता केवल एक प्रकार का अलगाव पैदा करती है अर्थात् यह समाजशास्त्री का अपने से ही अलगाव है। यह शोधपद्धति समाजशास्त्रीय ज्ञान को मात्र एक निर्नैतिक (amoral) तकनीक के एक हिस्से की तरह देखने के बराबर है। गोल्डनर (1970: 496) के शब्दों में,

MAADHYAM IAS

> शोध-विधिपरक द्वयात्मकता केवल भय पर आधारित है, लेकिन यह भय समाजशास्त्रियों के अध्ययन के विषय के कारण नहीं है। बल्कि यह भय उनका अपने स्व से ही है। शोध-पद्धतिपरक यह द्वयात्मकता मूलतः शोध करने वालों की अपनी भयग्रस्त दुर्बलताओं से भरपाई करने की एक युक्ति है। यह उन्हें घृणा, दया, क्रोध, अहम् अथवा नैतिक अपमान, अपनी लालसाओं और सरोकारों से मुक्त करने का प्रयास है। इस द्वयात्मकता की धारणा है कि रक्तहीन और देहमुक्त मस्तिष्क ही सर्वोत्तम ढंग से काम करता है। यह द्वयात्मकता शोधकारों को उनकी अन्य भूमिकाओं और प्रतिबद्धताओं के मूल्यों ओर सरोकारों से बचाने का भी प्रयास करती है। यहाँ मूलतः यह भ्रामक पूर्वाग्रह काम कर रहा है कि शोधकारों के अपने मूल्य तथा सरोकार उन्हें निष्पक्ष नहीं रहने देते। इस द्वयात्मकता के अनुसार अनुभूति तो बुद्धि का जानी-दुश्मन है और ज्ञानी व्यक्ति अनुभूतिरहित और असंवेदनशील का होना संभव है।

गोल्डनर (1970: 493) ने शोध-पद्धति को अद्वैती बनाने के पक्ष में लिखा और कहा कि ज्ञाता और ज्ञान के बीच के पृथक्करण को समाप्त करना ज़रूरी है क्योंकि स्वयं को जाने बिना दूसरों के बारे में जानकारी हासिल करना संभव नहीं है। इसीलिए आत्मचिंतनशीलता नितान्त महत्वपूर्ण है। दूसरों के बारे में जानने के लिए समाजशास्त्री को केवल उनके बारे में अध्ययन ही नहीं करना है, बल्कि उसको अपनी आवाज़ को भी सुनना और उससे तर्क-वितर्क करना है। जानकारी प्राप्त करना एक अवैयक्तिक प्रयास नहीं है बल्कि यह संपूर्ण, संदेहीय शोधकारों द्वारा किया गया अपनेपन से भरा आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र शोध-पद्धति में अद्वैतीकरण को आमंत्रित करता है और इस प्रकार ज्ञान के मूल अर्थ को ही बदल देता है। यह केवल जानकारी के एक अंश के रूप में नहीं होता है, बल्कि यह जागृति का

रूप ग्रहण कर लेता है। यह स्व-जागरुकता और संवेदनशीलता उत्पन्न करता है। आपको आगे की पाठ्यसामग्री पढ़ने से समझ में आएगा आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र से बहुत सी अपेक्षाएं हैं। प्रत्यक्षवादी समाजशास्त्र से अलग, जिसमें आपके लिये 'तटस्थ' और 'अराजनीतिक' (apolitical) रहना संभव है, आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र आपसे नैतिक प्रतिबद्धता और नीतिपूर्वक कार्यरत होने की मांग करता है। शोधकार के लिये अपने जीवन से अपने शोध को अलग करना संभव नहीं होता है। गोल्डनर (1970:495) ने लिखा,

> आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र का लक्षण वह नहीं है जिसका उसमें अध्ययन किया जाता है। इसे न ही उन व्यक्तियों और समस्याओं से परिभाषित किया जा सकता है जिनका अध्ययन किया जा रहा है और न ही उन तकनीकों और उपकरणों से जिनका उपयोग शोध के लिये किया जा रहा है। बल्कि समाजशास्त्री होने और एक व्यक्ति होने के बीच में तथा भूमिका और भूमिका को निभाने वाले के बीच में जो संबंध स्थापित होता है उससे आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र को चित्रित किया जाता है। आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र में शोधकार की भूमिकाओं की अलग अलग की गई परंपरागत अवधारणाओं की समीक्षा की जाती है और इसमें विकल्प का दर्शन होता है। समाजशास्त्री का उसके अध्ययन से संबंध को बदलना ही आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र का लक्ष्य है।

एक उदाहरण लीजिए, मान लीजिए आपकी इच्छा "मलिनबस्तियों की संस्कृति" नामक तथ्य का अध्ययन करने की है। इस शोध की एक विधि सरासर प्रत्यक्षवादी/ तकनीकी हो सकती है। इसमें आपको शोध-सहायकों की सेवाएं लेनी होंगी, उन्हें प्रश्नावली के साथ मलिन बस्ती में भेजना होगा और यत्र-तंत्र प्रतिचयन (random sampling) करने के बाद प्रश्नावली की प्रतियां बस्ती में बांटने का निर्देश देना होगा, इकट्ठी की गई जानकारी को वर्गीकृत और परिमाणीकृत करना होगा। तत्पश्चात आपको निष्कर्ष निकालने होंगे। ये निष्कर्ष 'ठोस' तथ्यों पर आधारित होंगे। इस प्रकार के शोध में आपको ऐसी ज़रूरत नहीं महसूस होगी कि आप बस्ती में एक सहृदय व्यक्ति की भांति शोधकार्य करें। दूसरे शब्दों में, आपका निष्पक्ष शोध एक गणितज्ञ द्वारा गणित की पहेली को हल करने या वैज्ञानिक द्वारा प्रयोगशाला में काम करने से बिल्कुल भी अलग नहीं होगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

गोल्डनर का आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र इस प्रकार के शोध का विरोध करता है। आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र अपने बारे में, अपनी राजनीति तथा नैतिकता के बारे में चिंतन करने की अपेक्षा करता है। संभवतः आप शहरी हैं, उच्च वर्गीय हैं, अंग्रेज़ी भाषी हैं और दूसरों की तुलना में अधिक संपन्न हैं। आपके लिये मलिन बस्ती की संस्कृति को समझने का क्या अर्थ है? क्या यह एक वास्तविकता नहीं है कि उनकी समस्याओं को आपकी संपन्नता से पृथक नहीं किया जा सकता? इस ऊंची-नीची प्रस्थिति पर सवाल उठाए बिना क्या आपके लिये मलिन बस्ती वासियों की समस्याएं समझ पाना संभव है? आत्मचिंतन से उत्पन्न ये प्रश्न संभवतः एक नये समाजशास्त्र की रचना करेंगे, जो विश्व को निष्पक्ष बनाने की बजाए, उसे नया बनाने का प्रयास करेगा। महिलावाद और दलित आंदोलनों से उत्पन्न समाजशास्त्र आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र के संभवतः सटीक उदाहरण हैं, क्योंकि शोध की इन प्रवृत्तियों में न केवल तकनीकी निष्पक्षता दिखाई देती है बल्कि ऊंची मात्रा में समानुभूति, उत्पीड़न को समझने की इच्छा और वैकल्पिक आचार-विचार के लिए किए जाने वाले प्रयास भी दृष्टिगोचर होते हैं।

ख) कृतत्त्वशीलता और संरचनाः संरचनाकरण (structuration) की प्रक्रिया

प्रत्यक्षवाद की एक और समीक्षा हमारे समय के अग्रणी समाजशास्त्री एंथनी गिडन्स ने प्रस्तुत की है। गिडन्स (1976) की पुस्तक, न्यू रूल्स ऑफ़ सोशियोलाजिकल मैथड, ने एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। अपनी इस पुस्तक में उसने समाजशास्त्र की बौद्धिक

गतिरेखा (trajectory) का अध्ययन किया और व्याख्यात्मक (interpretive) परंपराओं से वाद-संवाद कर नये नियमों के पुंज पर चिंतन किया। इस कृति ने प्रत्यक्षवादी/वैज्ञानिक समाजशास्त्र का विकल्प प्रस्तुत किया। गिडन्स ने इस तथ्य को स्पष्ट किया कि प्रकृति और मानव समाज शोध के दो अलग-अलग क्षेत्र हैं। प्रकृति को मानव ने नहीं बनाया है लेकिन समाज का निर्माण, पुनर्निर्माण और इसमें बदलाव हमेशा मनुष्य द्वारा ही किया जाता रहा है। यही कारण है कि समाजशास्त्र में प्राकृतिक विज्ञान की क्रियाविधि की उपयोगिता सीमित है। गिडन्स (1976: 13) के अनुसार समाजशास्त्र में 'जो भी न्यूटन की प्रतीक्षा कर रहे हैं, वे एक ऐसी रेलगाड़ी की प्रतीक्षा में है, जो कभी नहीं आएगी, और वे एक ग़लत स्टेशन पर खड़े हैं।' यही कारण है कि गिडन्स ने अपनी बौद्धिक चर्चा प्रत्यक्षज्ञानशास्त्रीय (phenomenological) नृजातीय शोध पद्धति परंपराओं से शुरू की। गिडन्स ने देखा कि किस तरह इन "व्याख्यात्मक" (interpretive) समाजशास्त्रों में अर्थों को समझने का प्रयास किया जाता है अर्थात् ऐसा अर्थ जिससे चेतन मानव अभिकर्ता संसार को समझते हैं और जिसके आधार पर अपने संसार के दैनिक जीवन के बारे में ज्ञान का निर्माण करते हैं। यद्यपि गिडन्स को इन परंपराओं में संभावनाएं नज़र आती हैं लेकिन उसके अनुसार हमें इससे भी आगे देखने की आवश्यकता है क्योंकि जिस भी अर्थ में हम और आप संसार को लें उसे सामाजिक संदर्भ में ही समझा जा सकता है। प्रायः असमान संसाधन तथा क्षमताएं इस संदर्भ को स्वरूप प्रदान करती हैं। एक उदाहरण लीजिए। कल्पना कीजिए कि आप कक्षा में बैठे छात्र या छात्रा हैं। निसंदेह यह सत्य है कि आपकी भूमिका कठपुतली की तरह चुपचाप बैठने की नहीं है। एक सृजनात्मक कृतत्वशील व्यक्ति की तरह आपका काम अर्थ देना है और कक्षा के अंतःविषयी संसार की रचना करना है। लेकिन इसमें भी एक समस्या है। चूंकि कक्षा में भिन्न तथा असमान संसाधन होते हैं जैसे अध्यापक बनाम विद्यार्थी इसलिये आपकी कृतत्वशीलता (एजेंसी) स्वतंत्रता असीमित नहीं होती है। यहां तक कि कक्षा जैसी सरल जगह वास्तव में द्वंद्व और प्रतियोगिता का स्थान है। अतः गिडन्स (1976) का तर्क है कि केवल व्याख्यात्मक समाजशास्त्र पर्याप्त नहीं है, कृतत्वशीलता और संरचना के बीच के जटिल संबंध को जानना भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। शोधपद्धति के मुद्दों से जुड़े इस समीक्षात्मक/ रचनात्मक अध्ययन ने गिडन्स को नियमों के एक पुंज का निर्माण करने के लिए प्रेरित किया। ये नियम संक्षेप में नीचे दिये जा रहे हैं।

MAADHYAM IAS

पहला, समाजशास्त्र वस्तुओं के "पूर्व-निर्धारित" (pre-given) विश्व का अध्ययन नहीं करता है। बल्कि समाजशास्त्र ऐसे संसार का अध्ययन करता है, जो करने वालों या अभिकर्ताओं के सक्रिय कार्यों से निर्मित होता है। इसी अर्थ में गिडन्स (1976: 160) ने कहा कि समाज का निर्माण और पुनर्निमाण समाज के सदस्यों द्वारा दक्ष कार्य सम्पन्न करने की प्रक्रिया की तरह देखना उचित है। आइए, हम इस बात को पूरी तरह से समझें। मान लीजिए कि आपको जाति नामक प्रतिरूप का अध्ययन करना है। आपको मालूम ही है कि जाति जैसी जटिल प्रणाली भी पूर्व-निर्धारित तथ्य नहीं है। बल्कि जिसे जाति-समाज कहा जाता है उसका निर्माण एवं रूपांतरण मानवकर्ता द्वारा निरंतर किया जाता है। इसीलिए, निम्न जाति आंदोलन अथवा दलित आंदोलन अथवा सुधार के अनेक रूप सामने आते हैं और सामाजिक यथार्थ जिसका समाजशास्त्र में अध्ययन होता है, वह निरंतर दोलायमान और जीवंत रहता है, समाज की संरचना एक दक्षतापूर्ण कार्य है जो सदैव परिवर्तनों के निरंतर क्रम में रहता है।

दूसरा, यद्यपि समाज का निर्माण दक्ष कार्य है, सामाजिक अभिकर्ता की सृजनात्मकता असीमित नहीं है, क्योंकि हम सभी अपनी-अपनी सृजनात्मकता के बावजूद ऐतिहासिक रूप से स्थान विशेष में रहने वाले सामाजिक अभिकर्ता हैं और विशेष दशाओं के तहत् अपना काम करते हैं। इस संदर्भ में हमारे लिये सामाजिक संरचना द्वारा प्रदत्त अपनी सीमाओं/

बाधाओं के प्रति सचेत होना आवश्यक है। लेकिन यहां पर गिडन्स (1876: 161) के संदर्भ में रोचक तथ्य यह है कि गिडन्स ने संरचना की द्वयात्मकता की चर्चा की है। 'संरचना की अवधारणा को मानवीय कृतत्वशीलता' के ऊपर बाधा के रूप में ही न देखकर इसके सामर्थ्यदायी रूप को भी देखना होगा। एक उदाहरण से इस बात को और स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए कि आपको भाषा विशेष में बोलना है। चाहे आपमें कितनी भी सृजनात्मकता क्यों न हों, आपके मन में जो आये, जैसे भी आये, सब वैसे का वैसा बोलना संभव नहीं होता है। आपको व्याकरण के नियमों का पालन करना पड़ता है। लेकिन यह एक बाधा नहीं है। भाषा और उसके नियम आपको बोलने में समर्थ बनाते हैं। कोई भी सजीव भाषा जड़ नहीं होती। भाषाई अभिव्यक्तियों और व्यवहार विन्यासों के माध्यम से इसके बोलने वाले लोगों के द्वारा भाषा की संरचना में परिवर्तन होता रहता है। इसे गिडन्स (1976: 161) ने संरचनाकरण की प्रक्रिया कहा है। उसके अनुसार, "सामाजिक आचार-विचारों के संरचनाकरण के बारे में जानकारी लेने का अर्थ है यह व्याख्या करने का प्रयास कि कैसे कार्य के माध्यम से संरचनाओं का निर्माण होता है। इस तरह संरचनाकरण की प्रक्रिया के माध्यम से गिडन्स को संरचना और कार्य की द्वयात्मकता की समस्या से उबरने में सफलता मिली है। अवश्य ही, संरचना द्वारा उपलब्ध कराये 'नियमों' के बिना आपके लिये अपने अस्तित्व की कल्पना करना संभव नहीं है। लेकिन साथ ही आप कठपुतली भी नहीं है। आपके लिये नित-नूतन बनाना, प्रयोग करना और संरचना को बदलना संभव है।

तीसरा, गिडन्स का कहना है कि समाजशास्त्री के लिए उस भाषा की अनदेखी करना संभव नहीं है जिसका आम अभिकर्ताओं द्वारा संसार को अर्थमय बनाने के लिये प्रयोग किया जाता है। इसीलिए, अर्थपूर्ण समाजशास्त्रीय शोध को जीवन के उस रूप में तल्लीन होने की आवश्यकता होती है, जिसका उसे अध्ययन करना है। लेकिन, तल्लीन होने का यह अर्थ नहीं है कि समाजशास्त्री को उस समुदाय का "पूर्ण रूप से सदस्य" बनना होगा। इसका अर्थ केवल आचार-विचारों की समष्टि के रूप में उसमें भागीदारी करने की सामर्थ्य से है। और अंत में, गिडन्स के अनुसार समाजशास्त्रीय अवधारणाएं दोहरी व्याख्यात्मकता पर आधारित हैं। इसका कारण यह है कि सामाजिक अभिकर्ताओं ने तो स्वयं ही समाज की व्याख्या दक्ष कार्यनिष्पादन के रूप में कर ली है और इसके बाद सामान्य और तकनीकी भाषा के सहारे अपने सैद्धांतिक विचारों के अंतर्गत समाजशास्त्रियों द्वारा फिर से व्याख्या की जाती है। व्याख्यात्मकता (hermeneutics) के बारे में आपको इकाई 8 में पढ़ने का अवसर मिलेगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इन वाद-विवादों और चर्चाओं ने समाजशास्त्र को समृद्ध किया है और यह महत्वपूर्ण है कि समाजशास्त्र के अंतर्गत बहुमुखी स्वरों या मतों के बारे में आपको जानकारी प्राप्त हो।

अपनी चर्चा के अंत में, आइए हम सोचें और करें 7.2 अभ्यास को पूरा करें।

सोचें और करें 7.2

"संरचनाएं जितनी बाधक होती हैं उतनी ही साधक भी। लोग निरंतर नई खोज करते हैं और दी गई संरचनाओं की व्याख्या करते हैं।" समकालीन परिवेश से उदाहरण लेते हुए उपर्युक्त कथन की व्याख्या कीजिए और संरचना करण की प्रक्रिया पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। अपनी टिप्पणी पर अपने अध्ययन केंद्र के एम.ए. समाजशास्त्र के विद्यार्थियों से चर्चा कीजिए।

*शैक्षिक परामर्शदाता से सोचें और करें 7.2 में चर्चित विषय पर एक निबंध प्रतियोगिता आयोजित करने का अनुरोध है और चुने गए 10 अच्छे निबंधों को एम एस ओ-002 के संयोजक पास भेजें। सर्वोत्तम निबंध को विस्मयपूर्ण स्थान मिलने की संभावना है।

7.6 निष्कर्ष

इकाई 7 में विज्ञान में की गई विस्मयकारी प्रगति और प्रबोधन के सामान्य परिवेश के संदर्भ में प्रत्यक्षवाद के पूर्ववृत्त की हमने चर्चा की। ऑगस्ट कॉम्टे को समाजशास्त्र का संस्थापक माना जाता है क्योंकि उसने सामाजिक विज्ञानों और समाज के अध्ययन के लिए एक-समान शोध पद्धति को जन्म दिया। जैसा कि हमने देखा प्रत्यक्षवाद ने समाजशास्त्र को एक विषय के रूप में स्थापित करने में महती सहायता की। लेकिन कॉम्टे की प्रतिज्ञप्तियों (propositions) और सिद्धांतों को काफ़ी परिष्कृत किया गया। विशेषतः दुर्खाइम ने यह काम किया। समाजशास्त्र की विषयवस्तु को परिभाषित करने और समाज का अध्ययन करने के लिए नियम बनाने का श्रेय दुर्खाइम को जाता है। उसके बाद के समाजशास्त्रियों ने समाज के सर्वोपरि होने की तथा कई प्रकार से लोगों को बाह्य करने वाली दुर्खाइम की अवधारणा की आलोचना की। लेकिन फिर भी यह कहा जायेगा कि दुर्खाइम ने हमारे अनुसरण के लिए एक ख़ाका हमारे सामने रखा और व्यक्ति की भूमिका को समाज की भूमिका से अलग रखने के लिये हमें निर्देशित किया। समाजशास्त्र की उतरोत्तर शोध पद्धतियों और परिप्रेक्ष्यों ने व्यक्ति की कृर्तत्त्वशीलता को प्राथमिकता देने का प्रयास किया। इस उपागम के एक उदाहरण के रूप में हमने गिडन्स के विचारों की चर्चा की। प्रत्यक्षवाद के विरुद्ध दूसरी कड़ी समालोचना गोल्डनर की तरफ़ से हुई, जिसने महसूस किया कि अपने शोधपद्धतीय ठंडेपन से प्रत्यक्षवाद ने ज्ञाता को ज्ञान से अलग कर दिया है और प्रत्यक्षवाद के विकल्प की तरह गोल्डनर ने आत्मचिंतनशील समाजशास्त्र पर ज़ोर दिया। समाज विज्ञानों के अनेक विद्वानों ने, विशेष रूप से सामाजिक नृशास्त्र में, आत्मचिंतनशीलता का गुणगान किया गया है। यह मुद्दा कि किसने किसका प्रतिनिधित्व किया – इस पर न केवल नृशास्त्र में बल्कि सामाजिक विज्ञानों में भी व्यापक चर्चा की गई। एकरेखीय सिद्धांतों की आधुनिकोत्तर-समीक्षा के फलस्वरूप बहु-स्वरीयता में वृद्धि हुई है। इस संदर्भ में यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि भूमंडलीकरण में सामान्यीकरण की प्रवृत्तियों का समर्थन करने वाले सिद्धांतों की प्रासंगिकता क्या है?

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

7.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऐलन, कैनेथ 2005, *एम्सप्लोरेशन्स इन क्लासीकल सोशियोलॉजिकल थियरी, सीइंग द सोशल वर्ल्ड.* ऐज पब्लिकेशनः न्यूयॉर्क

इस पुस्तक में आधुनिकता एवं उत्तर आधुनिकता के नियमों पर चर्चा की गई है जिससे छात्र छात्राओं को समझ में आएगा कि सैद्धान्तिक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य कैसे उनके अपने समय में लागू होते हैं।

गिडन्स, एंथनी 1984, *द कॉन्सटीट्यूशन ऑफ सोसाइटी, आउट लाइन ऑफ थियरी ऑफ स्ट्रक्चरेशन,* पॉलिटी प्रैसः कैम्ब्रिज

(अध्याय 1 और अध्याय 6 विशेष रूप से पढ़ें)।

इकाई 8

भाष्यशास्त्र

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 सामाजिक विज्ञान में पद्धति से संबंधित विवाद

8.3 भाष्यशास्त्र के इतिहास का रेखांकन

8.4 भाष्यशास्त्र और समाजशास्त्र

8.5 दार्शनिक भाष्यशास्त्र

8.6 संदेह का भाष्यशास्त्र

8.7 दृश्यप्रपंचशास्त्र और भाष्यशास्त्र

8.8 निष्कर्ष

8.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 8 को पढ़ने के बाद आपके लिए सामाजिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य के निम्नलिखित मुद्दों पर चर्चा करना संभव होगा :

- सामाजिक विज्ञान में पद्धति से जुड़े विवादों में भाष्यशास्त्र का स्थान;
- भाष्यशास्त्र का इतिहास;
- भाष्यशास्त्र और समाजशास्त्र में संबंध;
- परंपरा की व्याख्या करने में अन्वेषक का स्थान;
- भाष्यशास्त्र में स्पष्टीकरणात्मक समझ; तथा
- आलोचनात्मक अथवा गहन व्याख्या।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

8.1 प्रस्तावना

पुस्तक 1 के खंड 2 की अंतिम इकाई भाष्यशास्त्र (Hermeneutics) है। खंड 2 सामाजिक अनुसंधान के दार्शनिक आधार से संबद्ध है। जैसा कि इकाई 5 में बताया जा चुका है, इकाई 8 में हमने भाष्यशास्त्र पर विस्तृत चर्चा की है। भाष्यशास्त्र (परंपरा की व्याख्या) सामाजिक यथार्थ को सिलसिलेवार समझने के प्रयास का हिस्सा है। चूँकि समाजशास्त्र की एक पद्धति के रूप में इसका प्रयोग किया जा चुका है, हमें सामाजिक विज्ञान में पद्धति से जुड़े विवादों के संदर्भ में भाष्यशास्त्र का स्थान देखने और समाजशास्त्रीय खोज में इसके महत्व को समझने के लिए इसका इतिहास ढूँढने की आवश्यकता है।

आपको पता लगेगा कि भारत में समाजशास्त्र में किए गए प्रायोगिक अथवा व्यवहारिक भाष्यशास्त्र उपागम (applied hermeneutics approach) का अधिक प्रयोग नहीं किया गया है। किंतु इस उपागम का अनुप्रयोग उन क्षेत्रों में काफी प्रचलित है जहाँ लोगों के जीवन में परंपरा का महत्व होता है। जहाँ भी परंपरा की नई व्याख्या होती है वहाँ भाष्यशास्त्र का अनुप्रयोग आवश्यक हो जाता है। इकाई 8 आपके हाथों में एक नया उपकरण देगी। आशा है अपने शोध में आप इसका उपयोग करने का अवसर मिलेगा।

भाग 8.2 में सामाजिक विज्ञान में शोध पद्धति से जुड़े विवादों का परिचय देने के बाद इकाई के भाग 8.3 और 8.4 में क्रमशः भाष्यशास्त्र के इतिहास को रेखांकित किया गया है और समाजशास्त्र के साथ इसके संबंध को दर्शाया गया है। इकाई के भाग 8.5 में भाष्यशास्त्र संबंधी दार्शनिक विचारों पर चर्चा की गई है। भाग 8.6 में संदेह के भाष्यशास्त्र की चर्चा के बाद भाग 8.7 में प्रतिरूपशास्त्र तथा भाष्यशास्त्र के बीच अंतःसंबंधों के निरूपण उपरांत इकाई का निष्कर्ष दिया गया है।

8.2 सामाजिक विज्ञान में पद्धति से संबंधित विवाद

सामाजिक विज्ञान के दर्शन में, काफ़ी समय से दो मुख्य परंपराओं का वर्चस्व रहा है। इनमें मुख्य अंतर उनमें रहा है वे परंपराएँ जिनके लिए कारणों की खोज के माध्यम से सामाजिक विज्ञान कार्य सामाजिक तथ्यों का स्पष्टीकरण है और वे परंपराएँ जिनके लिए सामाजिक विज्ञान से हमारा आशय सामाजिक क्रिया के अर्थ की व्याख्या और उसकी समझ है। सामाजिक विज्ञान की प्रकृति पर इस विवाद का लंबा इतिहास है जिसके दौरान यह अनेक रूपों में व्यक्त हुआ है।

जर्मनी में अर्थशास्त्र में 1890 के दशक में प्रयुक्त पद्धतियों पर विवाद था और एक नवशास्त्रीय ऑस्ट्रियाई अर्थशास्त्री कार्ल मेंगर (जीवनकाल 1841-1921) ने इस बात पर बल दिया कि सैद्धांतिक अर्थशास्त्र के सटीक सिद्धांत यांत्रिकी जैसे प्राकृतिक विज्ञान के सिद्धांतों के समान थे। जर्मनी के युवा आर्थिक इतिहास विद्यापीठ के गुस्ताव श्मोलर (जीवनकाल 1838-1917) ने कार्ल मेंगर का विरोध किया (देखें ब्रायंट 1985)। श्मोलर सोसाइटी ऑफ़ सोशल पॉलिसी का भी सदस्य था जिसकी स्थापना सुधार आंदोलन के रूप में आइज़नक (Eisenach) में 1872 में की गई थी। सोसाइटी ने ठोस राजनीतिक कार्यक्रम कभी नहीं चलाए बल्कि इसने सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में विशिष्ट ठोस समस्याओं पर अनेक अध्ययनों का प्रकाशन किया। इन अध्ययनों के लिए श्मोलर ने मेंगर के निगमनात्मक (deductive) और भाववाचक दृष्टिकोण के स्थान आगमनात्मक, अनुभववादी और ऐतिहासिक दृष्टिकोण का समर्थन किया।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इस बिंदु पर कुछ नवकांटवादी दार्शनिक इस विवाद से जुड़ गए और वह विवाद अर्थशास्त्र की शोध-पद्धति पर विवाद से सामाजिक विज्ञान की प्रकृति पर विवाद में व्यापक रूप में बदल गया (देखिए बॉक्स 8.1) :

बॉक्स 8.1: सामाजिक विज्ञान की शोध-पद्धति पर संघर्ष

हाइडलबर्ग नव-कांटवादी विचारधारा के विंडलबैंड (जीवनकाल 1848-1915) ने 1894 के अपने रेक्टर की तरह दिए गए भाषण में विधिपरक प्राकृतिक विज्ञान को भावसूचक मानव विज्ञान से भिन्न बताया (इकाई 1 का कोष्ठक 1.5 भी देखिए)। उसके अनुसार, यह अंतर इन विज्ञानों के अध्ययन का विषय होने के समाज या प्रकृति के कारण नहीं था, बल्कि यह अंतर इन विज्ञानों के विशिष्ट ज्ञानात्मक रुचियों तथा लक्ष्यों के कारण था। प्राकृतिक विज्ञानों के लक्ष्य तथा रुचि तकनीकी होते हैं जबकि मानव विज्ञानों में ज्ञानात्मक रुचि तथा व्यावहारिक लक्ष्य होते हैं।

जर्मनी में सामाजिक विज्ञान की शोध-पद्धति पर एक अन्य महत्वपूर्ण बहस थी जो वैज्ञानिक शोध के मूल्य तथा उद्देश्य पर थी। यह बहस 1903 में आरंभ हुई और एक दशक से अधिक समय तक जारी रही। इस बहस में भाग लेने वाला एक प्रसिद्ध व्यक्ति मैक्स वेबर था। वेबर ने अपने अंदाज़ में बहस की, हालाँकि वह स्वयं को ऐतिहासिक विचारधारा (श्मोलर, विंडलबैंड) का वंशज मानता था। उसके लिए, सामाजिक जगत विशिष्ट वस्तुओं तथा

एकाकी संरचनाओं से बना हुआ था। सामाजिक विज्ञान के लिए कारणात्मक विश्लेषण को उसने अनुपयुक्त नहीं माना। सभी सामाजिक क्रियाओं के 'मूल्य महत्व' (value relevance) में विश्वास करते हुए वेबर ने 'व्याख्यात्मक समझ' को सामाजिक विज्ञान के लिए एक आवश्यक पद्धति माना। किंतु वेबर ने यह भी कहा कि कारणात्मक विश्लेषण को इसका पूरक होना चाहिए। वेबर की 'मूल्य महत्व' की श्रेणी में न केवल कारणात्मक विश्लेषण शामिल था बल्कि उसमें मूल्य-मुक्त सामाजिक विज्ञान का समर्थन भी शामिल था और इसी विषय पर उसने बीसवीं सदी के आरंभ में श्मोलर से बहस की (वेबर 1949)।

अंत में, जर्मनी में प्रत्यक्षवाद (Positivism) अथवा प्रत्यक्षवादी (Positivist) विवाद पर द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात बहस हुई जो 1961 में ट्युबिंगन में जर्मन सोशोलॅजिकल एसोसिएशन को दिए सर्वप्रथम भाषण में पॉपर ने शुरू की (देखें ब्रायंट 1985 तथा एडोर्नो और अन्य 1976)। पॉपर ने सामाजिक विज्ञान के तर्क पर सत्ताईस प्रतिवेदनों प्रस्तुत किए और ऐडोर्नो ने उनके उत्तर दिए। यह बहस पॉपर द्वारा समर्थित प्रत्यक्षवादी शोध-पद्धति और ऐडोर्नो के प्रत्यक्षवाद-विरोधी दृष्टिकोण के बीच होनी थी किंतु पॉपर ने स्वयं को प्रत्यक्षवाद का आलोचक बताकर उस बहस को बेकार बना दिया। इसके बावजूद ऐडोर्नो (जीवनकाल 1903-1969) की तरफ़ से हेबरमास के आने से यह विवाद जारी रहा और उसने प्रत्यक्षवादी शोध-पद्धति में पॉपर की प्रत्यक्षवादी शोध-पद्धति पर प्रहार किए तथा हैंस एल्बर्ट (जीवनकाल 1904-1973) द्वारा इस शोध-पद्धति के समर्थन को भी लताड़ा। इस बहस में भी, पहले की तरह, एक पक्ष ने प्राकृतिक विज्ञान से भिन्न, मानव/ऐतिहासिक/सांस्कृतिक/सामाजिक विज्ञानों में अपनी शोध-पद्धति के होने पर ज़ोर दिया। मानव विज्ञानों की इस विशिष्ट शोध-पद्धति को भाष्यशास्त्र (hermeneutics) का नाम दिया गया।

8.3 भाष्यशास्त्र के इतिहास का रेखांकन

एक प्रकार से भाष्यशास्त्र की कहानी इन शोध-पद्धतियों संबंधी विवादों से अधिक पुरानी है। हर्मीस के चरित्र के साथ सामाजिक विज्ञानों की शोध-पद्धति के रूप में हरमिन्यूटिक (भाष्यशास्त्र) की क्या हम इस कहानी को हर्मीस से शुरू करें? प्रश्न है कि यूनानी देवताओं के संदेशों को मनुष्यों तक किसने पहुँचाया? संदेशवाहक के रूप में क्या हर्मीस ने देवताओं के संदेश को मनुष्य के सामने शब्दशः केवल दोहराया अथवा देवताओं की कही बात के 'अर्थ' को मनुष्यों तक पहुँचाने से पहले उन शब्दों को 'समझने' के लिए क्या उसे उनकी 'व्याख्या' करनी पड़ी? (यूनानी शब्द हर्मेनियस का अर्थ भाष्यकार या टीकाकार होता है।)

दैवी बातों के साथ यह संबंध बना रहा और जब व्याख्या के शास्त्र 'भाष्यशास्त्र' का पुनर्निर्माण (Reformation, ईसाई धर्म में सुधार-आंदोलन) के दौरान दोबारा उदय हुआ। पुनर्निर्माण के दौरान अपनी वास्तविकता में भाष्यशास्त्र तब आया जब धार्मिक ग्रंथों को समझने और उनकी व्याख्या करने हेतु प्रोटेस्टेंट सुधारकों को गिरजाघर प्राधिकारी और परंपरा पर कैथोलिक दबाव के विरोध में बाइबिल की व्याख्या के वैकल्पिक सिद्धांतों की दुहाई देनी पड़ी। ईसाई धर्म ग्रंथों के अर्थ के मध्यस्थों के रूप में कार्य करने वालों पर गिरजाघर के दबाव का क्या यह अर्थ था कि ये धार्मिक ग्रंथ अपने आप में अपूर्ण थे और किसी व्यक्ति को उनका अर्थ खोजने के लिए उनके बाहर किसी पादरी के पास जाना पड़ता था? पुनर्निर्माण के दौरान शास्त्रीय ग्रंथों के मिलने से भी मानववादी भाष्यशास्त्र (humanist hermeneutics) का उदय हुआ और बारहवीं शताब्दी में जस्टीनियाई (Justinian) विधिक कोड में रुचि ने अपने ही विवेकपूर्ण भाष्यशास्त्र को जन्म दिया। इन सभी तत्वों को एकीकृत करने वाले और आधुनिक भाष्यशास्त्र का जनक कहलाने वाले व्यक्ति का नाम स्क्लेयरमैकर (जीवनकाल 1768-1834) था। स्क्लेयरमैकर (देखें भाष्यशास्त्र पर स्क्लेयरमैकर

के विचारों के लिए कोष्ठक 8.2)। स्क्लेयरमैकर 1810 और 1834 के बीच बर्लिन विश्वविद्यालय में प्रोटेस्टेंट धर्मशास्त्र का अध्यक्ष था और भाष्यशास्त्र पढ़ाता था।

कोष्ठक 8.2: भाष्यशास्त्र पर स्क्लेयरमैकर के विचार

स्क्लेयरमैकर का मानना था कि मनुष्यों का भाषात्मक रुझान होता है और उनकी भाषा संबंधी योग्यता उन्हें दूसरों के कहे हुए शब्दों को समझने में मदद करती है। स्क्लेयरमैकर भाष्यशास्त्र को कला मानता था और उसका यह मानना था कि कही अथवा लिखी हुई और समकालीन अथवा ऐतिहासिक हर बात को व्याख्या द्वारा समझा जा सकता था। हर उद्‌गार उसके वक्ता के विचार का मूर्त रूप था और इस विचार को केवल भाषा द्वारा मूर्त रूप दिया जा सकता था। अतः समझ और व्याख्या के सदैव दो पक्ष अथवा तत्व थे, अर्थात् व्याकरण अथवा भाषाई तत्व और मनोवैज्ञानिक अथवा दिव्यात्मक तत्व। स्क्लेयरवैमकर (1819: 74) के अनुसार, 'जिस प्रकार बोलने की प्रत्येक क्रिया भाषा की संपूर्णता और वक्ता के विचारों की संपूर्णता से जुड़ी होती है उसी प्रकार बोलने को समझने में दो क्षण होते हैं –– पहला है भाषा और उसकी संभावनाओं के संदर्भ में कही गई बात को समझना तथा दूसरा है वक्ता की सोच के संदर्भ में उसे तथ्य के रूप में समझना।

स्क्लेयरमैकर (1768-1834)

स्क्लेयरमैकर (1819 : 75) का मानना था कि 'ये दोनों भाष्यशास्त्र संबंधी कार्य पूरी तरह से बराबर हैं और व्याकरण संबंधी व्याख्या को 'निम्न' और मनोवैज्ञानिक व्याख्या को 'उच्च' मानना गलत होगा। 'व्याकरणिक व्याख्या, समझ के भाषा संबंधी पक्ष से जुड़ी हुई है। यह आयाम पूर्ण तथा आंशिक भाष्यशास्त्र संबंधी वृत्त से जुड़ा हुआ है क्योंकि इसमें एकाकी अभिव्यक्ति या कार्य और भाषा अथवा साहित्य की पूर्व-प्रदत्त संपूर्णता के बीच संबंध का विचार भी आता है। दूसरी ओर, मनोवैज्ञानिक व्याख्या वह दिव्यात्मक आयाम है जो सृजनात्मक कार्य के पुनर्निर्माण के लिए वक्ता अथवा लेखक की वैयक्तिकता तथा मौलिकता को खोजने का प्रयास करता है।

हर्मस, एक ग्रीक देवता

समझने का उद्देश्य 'मूल पाठ को पहले स्वयं समझना और फिर उसे लेखक से बेहतर समझना' होता है। चूँकि हमें इस बात का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता कि लेखक के मस्तिष्क में क्या था तो हमें ऐसी अनेक बातों के विषय में जागरूक होना होगा जिनके बारे में लेखक को चेतना न हो, सिवाय उस सीमा तक ही जब लेखक स्वयं अपने काम पर चिंतन करे और अपने काम को खुद ही पढ़े। इसके अतिरिक्त, वस्तुनिष्ठ पक्षों के संदर्भ में, लेखक के पास ऐसी कोई सामग्री नहीं होती जो हमारे पास न हो।' (स्क्लेयरमैकर 1819: 83)

8.4 भाष्यशास्त्र और समाजशास्त्र

व्याख्या के नियमों की अवस्था तक पहुँचने के बाद, ठीक से व्याख्या करने के लिए हमें लेखक की बातों को भाषा की दृष्टि से संदर्भित करना है तथा लेखक को ऐतिहासिक दृष्टि से संदर्भगत करना है। हम अब भी दुविधा में हैं। मूल पाठों की व्याख्या के नियमों का समाजशास्त्र से क्या संबंध है? क्या वे साहित्यिक आलोचना जैसे अध्ययन के विषयों से

MAADHYAM IAS

संबद्ध नहीं हैं? टॉम्प्सन (1981: 37) के शब्दों में, इन प्रश्नों का उत्तर है — 'उनके कार्य की रोशनी में, व्याख्या किया जाने वाला मूल पाठ अब केवल शास्त्रीय अथवा ईसाई धर्म के साहित्य का अंश नहीं था बल्कि वह मानवता की उपलब्धियों और विफलताओं का दस्तावेज रूपी इतिहास था।' टॉम्प्सन के शब्द महान जर्मन इतिहासकारों — लियोपोल्ड वॉन रेंक (जीवनकाल 1795-1886) और गुस्ताव ड्रॉयसन (जीवनकाल 1808-1884) के विचारों को प्रतिध्वनित करते हैं। जब इतिहास ही स्वयं अध्ययन-विषयक कथा या मूल पाठ बन गया तो पाठ तुल्यरूप के रूप में सामाजिक प्रचलनों और सामाजिक संस्थाओं का अवलोकन करना स्वाभाविक ही था क्योंकि इन्हीं के अर्थ की व्याख्या की जानी थी।

हालाँकि, इस प्रकार समाजशास्त्र को परिभाषित करना तो समाजशास्त्र के संस्थापक ऑगस्ट कॉम्टे (जीवनकाल 1798-1857) को निरर्थक लगता था। कॉम्टे ने 1830 और 1842 के बीच प्रत्यक्षवादी दर्शनशास्त्र के छह भाग प्रकाशित किए (समाजशास्त्र पर कॉम्टे के विचारों को जानने के लिए कोष्ठक 8.3 देखिए)। कॉम्टे के लिए, सभी तथ्य अपरिवर्ती प्राकृतिक नियमों के अधीन होते हैं, जहाँ तक मानवीय तथ्यों का प्रश्न है, मनुष्यों के बौद्धिक इतिहास, स्वयं तथा अपने आस-पास के जगत के विषय में मनुष्यों के सोचने से जुड़े नियम ही मूलभूत नियम हैं।

कोष्ठक 8.3: समाजशास्त्र के बारे में कॉम्टे के विचार

कॉम्ट ने समाजशास्त्र को बौद्धिक इतिहास के चरम उत्कर्ष के रूप में देखा, जो धर्मशास्त्र से तत्वविज्ञान और उससे समाजशास्त्र तक चला। गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत की भाँति, तीन चरणों का यह सिद्धांत तब से चला आ रहा था जब से पृथ्वी पर मनुष्यों का जीवन है। हमारे ज्ञान की प्रत्येक शाखा एक के बाद एक तीन भिन्न सैद्धांतिक दशाओं से गुजरी है। ये दशाएँ हैं धर्मशास्त्रीय अथवा कल्पित दशा, तत्वविज्ञान संबंधी अथवा अमूर्त दशा और वैज्ञानिक अथवा प्रत्यक्षवादी दशा। धर्मशास्त्रीय दशा में, मस्तिष्क सभी प्रतिरूपों को अलौकिक जीवों की तात्कालिक क्रियाओं का परिणाम मानता है। तत्वविज्ञानी दशा में, मस्तिष्क सभी जीवों को अमूर्त बलशाली और वास्तविक इकाइयाँ मानता है। प्रत्यक्ष दशा में, मस्तिष्क ने परम बोध की ब्रह्मांड के उद्‌गम तथा अंत की ओर तथ्यों के कारणों की निरर्थक खोज को छोड़कर उनके नियमों के अध्ययन यानी अनुक्रम और समानता के उनके अपरिवर्ती संबंधों को खोजने में लग जाता है (गॉर्डन 1991 देखिए)। भौतिकी तथा जीवविज्ञान जैसे अध्ययन के अनेक विषय धर्मशास्त्र तथा तत्वविज्ञान की अवस्थाओं से गुज़रकर अब वैज्ञानिक हो गए हैं। यदि समाजशास्त्र भी इन विज्ञानों के मार्ग पर चले तो उसे भी वैज्ञानिक प्रस्थिति मिल सकती है।

कॉम्टे के उपर्युक्त विचारों के विरुद्ध, विल्हेम डिल्थी (जीवनकाल 1833-1911) ने 1883 में अपनी पुस्तक इंट्रोडक्शन टू दि ह्यूमन साइंसिस प्रकाशित की। इसमें डिल्थी ने कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि मानव विज्ञान ने स्वयं को सफलतापूर्वक धर्मशास्त्र और तत्वविज्ञान के वर्चस्व से मुक्त कर लिया था किंतु प्राकृतिक विज्ञान के वर्चस्व के आगे उसने घुटने टेक दिए थे। डिल्थी ने प्राकृतिक विज्ञान और मानव विज्ञान (जिसमें सामाजिक विज्ञान भी शामिल होता है) के बीच शोध-पद्धतिमूलक भेद डालकर कॉम्टे का विरोध किया। मनुष्य निश्चित रूप से प्रकृति का हिस्सा हैं परंतु पत्थर, वायु और वृक्षों जैसी अन्य प्राकृतिक वस्तुओं से अलग उनमें चेतना होती है। उनका एक अंतर्मन होता है और जब उनके कुछ भी करने में उस कुछ का उनके लिए एक अर्थ होता है जैसे जब कोई लेखक कुछ लिखते तो अपने लेखन द्वारा उसे कुछ कहने की इच्छा होती है। सामाजिक कार्य के कर्ताओं के लिए उसके अर्थ को जाने बिना हमें सामाजिक कार्य का बोध कैसे हो सकता है? जब डिल्थी ने यह प्रश्न पूछा तो भाष्यशास्त्र ने एक छलाँग लगाई और वह मूल पाठ की व्याख्या करने की पद्धति से बदलकर सामाजिक विज्ञान की पद्धति बन गया। इस छलाँग ने एक

प्रश्न प्रस्तुत किया कि वह क्या है जिसे सामाजिक क्रिया को मूल पाठ के रूप में अवधारणीकृत करने के लिए पहले से ही मान लिया जाता है। उसके बाद कार्य यह था कि मूल पाठ की व्याख्या की जाए और उसके अर्थ को समझा जाए।

डिल्थी के अनुसार, 'समझना' मानव जीवन की एक श्रेणी है। जब मनुष्यों के हर कार्य उनकी अपनी परिस्थिति को समझने के अनुसार ही किए जाते हैं। उनके कार्यों को समझने के लिए, हमें पहले यह समझना होगा कि अपनी परिस्थिति की उनकी समझ क्या है। डिल्थी ने कहा कि मानव और सामाजिक विज्ञानों में व्याख्या की औपचारिक विधियाँ 'समझ के इन्हीं प्राथमिक 'पों' से मिलती हैं जो प्रतिदिन के मानव-जीवन और सामाजिक अंतःक्रियाओं की विशिष्टता है। डिल्थी (1883: 154) के अनुसार, 'सबसे पहले व्यावहारिक जीवन की रुचियों में समझ पैदा होती है। व्यांवहारिक जीवन में एक-दूसरे के साथ संपर्क करने में लोग परस्पर निर्भर होते हैं। उन्हें एक-दूसरे के साथ संपर्क करना ही पड़ता है। पहले को पता होना पड़ता है कि दूसरे को क्या चाहिए। इस प्रकार समझ के प्राथमिक रूप विकसित होते हैं।

डिल्थी के लिए समझने का उद्देश्य सदैव 'जीवन की अभिव्यक्ति' होता है। जीवन की अभिव्यक्तियाँ तीन प्रकार की होती हैं, अर्थात

- इन प्रकारों में पहली हैं अवधारणाएँ, निर्णय और बृहत् विचार संरचनाएँ।
- जीवन अभिव्यक्तियों के दूसरे प्रकार हैं कार्य।
- तीसरा प्रकार 'भोगा हुआ अनुभव' है।

जीवन की किसी भी अभिव्यक्ति की समझ 'निष्पक्ष मस्तिष्क' के माध्यम में होती है। 'निष्पक्ष मस्तिष्क' की हीगल की श्रेणी के परे जाते हुए डिल्थी (1883 : 155) ने लिखा, 'मेधावी से मेधावी व्यक्ति का कार्य भी उसके युग तथा परिवेश में व्याप्त विचारों, भावनाओं और आदर्शों को दर्शाता है। निष्पक्ष मस्तिष्क का जगत व्यक्ति को शैशवावस्था से ही पोषित करता रहता है। यह वह माध्यम है जिससे अन्य लोगों और उनके जीवन की अभिव्यक्तियों को समझा जाता है।

MAADHYAM IAS

समझ के प्राथमिक रूप इसके उच्चतर रूपों को जन्म देते हैं। हालाँकि यह समझ निष्पक्ष मस्तिष्क के माध्यम से होती है, 'समझने की विषय-वस्तु सदैव व्यक्तिनिष्ठ होती है....मनुष्य के उदाहरण के रूप में ही नहीं बल्कि व्यक्ति विशेष के समग्र रूप से हमारा संबंध होता है '(डिल्थी 1883: 158)। यदि हमें व्यक्ति के 'आंतरिक मूल्य' पर डिल्थी द्वारा दिए गए बल को स्वीकार करें तो हमें यह दुविधा होगी कि 'निष्पक्ष मस्तिष्क' की हमारी श्रेणी किस प्रकार व्यक्ति पर ज़ोर देने के साथ मेल खाती है। निष्पक्ष मस्तिष्क की और मनुष्य के समग्र रूप की डिल्थी द्वारा प्रस्तुत श्रेणियाँ स्क्लेयरमैकर द्वारा बताए गए ज्ञान के भाषाई और मनोवैज्ञानिक तत्वों के बीच भेद के समान हैं। इन दोनों विचारकों के लिए केंद्रीय मुद्दा यह है कि समझ के दोनों पक्ष एक-दूसरे के साथ किस प्रकार मेल खाते हैं।

यह रोचक है कि डिल्थी के भाष्यशास्त्र की यह दुविधा संरचनात्मक प्रकार्यवाद द्वारा चलाए संरचना-एजेंसी विवाद से मेल खाती है। 1960 के दशक तक संरचनात्मक प्रकार्यवाद के पार्सन्स के मॉडल का समाजशास्त्र पर, विशेष तौर पर समाजशास्त्र के अंग्रेज़ी-अमेरिकी प्रकार, पर वर्चस्व रहा। 1960 के दशक में नृजाति शोध-पद्धति, प्रतीकात्मक अंतक्रियावाद और भाष्यशास्त्र के रूप में इस मॉडल के विरुद्ध एक आंदोलन हुआ। नृजाति शोध-पद्धति और भाष्यशास्त्र दोनों का कहना था कि सामाजिक क्रिया को संरचनाओं अथवा कारणों के रूप में इरादों द्वारा समझाने की अपेक्षा सामाजिक वैज्ञानिक को कार्य का अर्थ समझने की

जरूरत है। नृजाति शोध-पद्धति के लिए अर्थ का मार्ग यदि इरादों में से निकलता है तो भी इसका अर्थ यह है कि इरादे कारण नहीं होते हैं बल्कि वे अर्थ को जन्म देने होते हैं। दूसरी ओर, भाष्यशास्त्र के लिए ये अर्थ इरादों से इतने नहीं मिलते जितने सामाजिक और सांस्कृतिक प्रचलनों से मिलते हैं। (एलेक्ज़ेंडर 1987)

8.5 दार्शनिक भाष्यशास्त्र

आइए अब हम अपनी मुख्य कहानी पर वापस आएँ जहाँ डिल्थी के शोध-पद्धतिपरक मुद्दों को एनरिको बेट्टी (जीवनकाल 1823-1892) ने आगे विकसित किया, वहीं हैंस जॉर्ज गेडमर (जीवनकाल 1900-2002) भाष्यशास्त्र की चर्चा को भिन्न स्तर पर ले गया। गेडमर का कहना था कि यदि समझ को जीवन की श्रेणी होने के दावे को गंभीरता से लिया जाए तो भाष्यशास्त्र को शोध-पद्धति के उपकरण की तरह संकुचित रूप में नहीं देखा जा सकता। तब तो हमें 'सार्वभौमिक' भाष्यशास्त्र के बारे में चर्चा करनी होगी क्योंकि प्रत्येक मानव अनुभव का एक भाष्यशास्त्रीय आयाम होता है। बिना स्वचेतनामय हुए हमें हर समय समझने के भाष्यशास्त्रीय कार्य में लगे रहना होता है, किंतु हमें उसकी जागरूकता तभी होती है जब हमें ग़लतफ़हमी का अनुभव होता है। तब हमें ऐसा महसूस होता है कि हमने स्थिति को ठीक से नहीं समझा है। जिस प्रकार जीवन-भर श्वास लेना हमारा एक सतत कार्य है उसी प्रकार 'समझ' जगत में हमारे अस्तित्व का ही एक हिस्सा है। ट्रुथ एंड मैथड' नामक पुस्तक की प्रस्तावना में गेडमर (1975) ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जिस भाष्यशास्त्र को वह विकसित कर रहा था, वह मानव विज्ञानों की शोध-पद्धति नहीं था। ट्रुथ एंड मैथड' के दार्शनिक प्रश्न थे — समझ क्या होती है और यह किस प्रकार संभव है? गेडमर (समझ पर गेडमर के विचार के लिए कोष्ठक 8.4 देखिए) ने भाष्यशास्त्र को 'वहाँ होने की मूलभूत अस्तित्ववान गति के रूप में परिभाषित किया जिसमें उसकी परिमितता और ऐतिहासिकता है तथा इसलिए उसमें जगत के अनुभव का समग्र रूप शामिल है'। इस प्रकार भाष्यशास्त्र अस्तित्व का अध्ययन और अंत में भाषा का अध्ययन है क्योंकि समझ में आने वाला अस्तित्व भाषा ही है (हेकमैन 1986: 94 में यथा-उद्धृत)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 8.4: समझ के बारे में गेडमर के विचार

'ट्रुथ एंड मैथड' में गेडमर को समझ की प्रबोधन तथा रोमानी अवधारणा, दोनों में त्रुटि दिखाई दी कि दोनों ही तर्क और परंपरा के बीच अथवा निर्णय और पूर्वाग्रह के बीच झूठे विपक्ष पर आधारित थे। समझ का आशय केवल निर्णयों से नहीं है, और न ही पूर्वाग्रहों के कारण सदैव ग़लतफ़हमी होती है। इसी प्रकार यदि तर्कयुक्तता के नियम व्यक्ति को कुछ परंपराओं के संदर्भ में आशय समझने में मदद करते हैं तो परंपरा साधारण जड़ता का विषय नहीं है। इसके स्थान पर परंपरा ...... सदैव स्वतंत्रता का तत्व और स्वयं इतिहास का तत्व है। यहाँ तक कि सर्वाधिक सत्यनिष्ठ और ठोस परंपरा स्वभावतः ही कभी पहले मौजूद जड़ता के कारण जारी नहीं रहती। परंपरा को निश्चयपूर्वक कहने, अपनाने तथा विकसित करने की आवश्यकता होती है। परंपरा वास्तव में ऐसा संरक्षण है जैसा सारे ऐतिहासिक बदलावों में क्रियाशील रहता है।.....किसी भी दर से, संरक्षण उतनी ही मुक्त रूप से चुनी गई क्रिया है जितनी कि क्रांति और पुनर्निर्माण (गेडमर 1975)।

भाष्यशास्त्र पर अपने विचारों में गेडमर ने डिल्थी और स्क्लेयरमैकर से कहीं अधिक, शोधकार की अवस्थिति को भी समस्या के रूप में प्रस्तुत किया। गेडमर के लिए, 'अतीत की कोई भी व्याख्या चाहे वह किसी इतिहासकार, दार्शनिक अथवा भाषाशास्त्री की हो, व्याख्याकार के अपने समय और स्थान के अनुसार उसी प्रकार रचित होती है जिस प्रकार शोधगत तथ्य इतिहास में अपने काल के अनुसार होता है। अतीत के बारे में अपनी समझ में शोधकारों को सदैव अपने पूर्वाग्रहों से मार्गदर्शन मिलता है। समझने की क्रिया अथवा

व्याख्या के लिए समझे जाने वाले तथ्य के अपरिचित रूप को पार कर उसे परिचित वस्तु में बदलने की ज़रूरत होती है, जिसमें ऐतिहासिक तथ्य का क्षितिज तथा व्याख्याकार का क्षितिज मिल जाते हैं। अध्ययन की वस्तु और विषय के क्षितिजों का विलय इसलिए हो पाता है क्योंकि ऐतिहासिक वस्तु तथा व्याख्याकार का भाष्यशास्त्र प्रचालन (operation), दोनों ही उस अभिभावी (overriding) ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक परंपरा या नैरंतर्य का हिस्सा होते हैं जिसे गेडमर प्रभावी इतिहास कहता है (क्षितिजों के विलय तथा प्रभावी इतिहास पर अधिक जानकारी के लिए डोस्टल 2002 देखिए)।

8.6 संदेह का भाष्यशास्त्र

भाष्यशास्त्र के क्षेत्र में योगदान देने वाला अगला प्रमुख विचारक है -- जॉर्गन हेबरमास (जीवनकाल 1929-)। चूँकि हेबरमास भाष्यशास्त्र के क्षेत्र में फ़्रेंकफ़र्ट स्कूल द्वारा आरंभ किए गए मार्क्सवाद से आया था, उसके शोध-पद्धति वर्गीकरण के सिद्धांत मार्क्सवादी तथा फ़्रायड, दोनों के सिद्धांतों के प्रभाव को दर्शाते हैं। हेबरमास के लिए, मानव विज्ञानों का इतिहास दर्शाता है कि मनुष्यों ने रुचियों को हासिल करने के लिए ज्ञानार्जन किया। ये हैं:

- अनुभववादी-विश्लेषणात्मक विज्ञानों की ज्ञानपरक रुचि जो तकनीकी नियंत्रण में होती है
- सांस्कृतिक विज्ञानों की ज्ञानपरक रुचि जो व्यावहारिक होती है
- आलोचनात्मक विज्ञानों की ज्ञानपरक रुचि जो मुक्ति या स्वतंत्रता में होती है।

विज्ञान के तर्कसंगत शोध-पद्धतिजनक नियमों तथा उसकी ज्ञानपरक रुचियों में संबंध स्थापित करके हेबरमास कहता है कि समाज के आलोचनात्मक विज्ञान के लिए फ़्रायड के मनोविश्लेषण की वर्गीकरणात्मक संरचना निदर्शनात्मक है। हेबरमास मनोविश्लेषण की पद्धति को 'गहन भाष्यशास्त्र' का वह स्वरूप मानता है, जो शोध-पद्धतिपरक आत्म-चिंतन उन्मुख विज्ञान में स्पष्टीकरण और समझ का समावेश करता है। (हमें थोड़ी ही देर बाद पता चलेगा कि रिकर ने हेबरमास के मनोविश्लेषण की पद्धति को 'संदेह का भाष्यशास्त्र' का नाम दिया है।) मरीज़ ने जब अपने मनोरोग को समझ लिया है या उसपर काबू पा लिया तो इसी संदर्भ में सफल मनोविश्लेषणात्मक पद्धति को परिभाषित किया जाता है। इस विचार का उस स्थान तक सामान्यीकरण किया जा सकता है जहाँ तक प्रकृति की अन्य वस्तुओं से अलग, मनुष्यों में अपने द्वारा की जा रही क्रियाओं की समझ तथा उनके प्रति चेतना होती है। यदि सामाजिक वैज्ञानिक को इस समझ तक सीमित नहीं रहना है तो भी सामाजिक वैज्ञानिक को झूठी चेतना कहकर इसकी उपेक्षा भी नहीं करनी है।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

गेडमर की दार्शनिक अथवा सर्वव्यापी भाष्यशास्त्र की अवधारणा का विरोध करने के लिए हेबरमास गहन भाष्यशास्त्र की अपनी इस श्रेणी का प्रयोग करता है। हेबरमास मानता है कि कोई अपरिचित दिखने वाले वस्तु के अर्थ की समझ तब आ सकती है जब उस अपरिचित क्रिया को उसके ऐतिहासिक तथा सामाजिक संदर्भ में रखा जाता है। किंतु, जिसे वह 'व्यवस्थित रूप से विकृत संचार' (systematically distorted social communication) कहता है, उसके संदर्भ में हेबरमास समझ के अभाव की समस्या की ओर इशारा करता है जो क्रिया के संदर्भगत करने के बाद भी रहती है। आइए, इस बात को समझने के लिए मनोरोग के उदाहरण का प्रयोग करें। जैसे ज़रूरत न होने पर भी बार-बार हाथ धोना। यदि हमें व्यक्ति विशेष द्वारा लगातार हाथ धोने का अर्थ समझना हो तो हमें उस घटना को भी जानना होगा जिसने इस व्यक्ति में यह मनोरोग को आरंभ किया। इस बात को समझने के लिए हमें पहले इसे स्पष्ट करना होगा (कोष्ठक 8.5 देखिए)।

कोष्ठक 8.5: स्पष्टीकरणात्मक समझ की हेबरमास की अवधारणा

हेबरमास (1929-) ने स्पष्टीकरणात्मक समझ (explanatory understanding) की श्रेणी का प्रतिपादन किया और कहा कि क्या अर्थात व्यवस्थित रूप से विकृत अभिव्यक्ति की सार्थक विषय-वस्तु को नहीं "समझा" जा सकता है। यदि उसी समय पर क्यों अर्थात स्वयं व्यवस्थित विकृति के लिए जिम्मेदार दशाओं में लाक्षणिक दृश्य के उद्‌गम को स्पष्ट नहीं किया जाए....., विशिष्ट रूप से अगम्य अभिव्यक्तियों का अर्थ खोजने वाले गहन भाष्यशास्त्र के रूप में स्पष्टीकरणात्मक समझ सरल भाष्यशास्त्रीय समझ की भाँति न केवल प्राकृतिक रूप से मिली संचारमय दक्षता के प्रशिक्षित अनुप्रयोग को मानती है बल्कि संचारमय दक्षता के सिद्धांत को भी मानती है। इस प्रकार का सिद्धांत भाषा की अंतर-आत्मपरता के स्वरूपों और उनकी विकृति के कारणों से संबद्ध होता है।

जोरगन हेबरमास
(1929-)

क्रांतिक विज्ञानों की उद्धारक रुचि के लिए गहन भाष्यशास्त्र को संसाधन के रूप में प्रयोग करने के लिए हेबरमास ने कहा कि गेडमेर के भाष्यशास्त्र के सामंजस्य में समझ की समस्या के बदलने के प्रति हमें सचेत रहना है। जब तक हममें 'व्यवस्थित विकृतियों' (systematic distortions) की संभावना के प्रति जागरूकता नहीं होती तब तक हमारे लिए तथ्य की अपरिचितता पर स्पष्टीकरण समझ से पार लग पाना संभव न होगा जबकि सामंजस्य द्वारा यह संभव हो पाएगा।

8.7 दृश्यप्रपंचशास्त्र और भाष्यशास्त्र

अंत में, आप ध्यान दें कि अपने भाष्यशास्त्र में, पॉल रिकर हेबरमास की स्पष्टीकरण से पीठ मोड़ने को आगे ले जाता है। सबसे पहले, अपने 'मूल पाठ के मॉडल' में सामाजिक विज्ञानों की पद्धति के रूप में भाष्यशास्त्र के महत्व को साबित करने के लिए रिकर दर्शाता है कि मानव क्रिया की संरचना लिखित सामग्री के समान होती है। रिकर (1971) पहले कहे गए और लिखे गए वाद-संवाद में अंतर करता है। बोली गई बातचीत से भिन्न लिखित वाद-संवाद में लेखक और उसके द्वारा लिखित सामग्री के अर्थ के बीच संबंध और लिखित सामग्री के अर्थ और उस विशिष्ट संभाषी के बीच संबंध टूट जाता है जिसे संबोधित किया गया है। लिखित वाद-संवाद की भाँति मानवीय क्रियाएं भी उसके लेखक से अलग हो सकती है, उसके अपने परिणाम होते हैं, वह सदैव अपने महत्व से परे अपनी आरंभिक स्थिति तक चली जाती है और इसे असंख्य लोगों को संबोधित करते हुए देखा जा सकता है। ये नाना-प्रकारीय समानताएँ क्रिया को मूल पाठ का दर्जा देने के लिए और मानवीय क्रिया पर भाष्यशास्त्रीय वाद-संवाद की विशिष्ट प्रस्थिति को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त है।

पॉल रिकर
(1913-2005)

हेबरमास की भाँति, रिकर भी मनोविश्लेषण को भाष्यशास्त्र के एक प्रकार के रूप में देखता है। किंतु रिकर कहता है कि यह भाष्यशास्त्र, आस्था का भाष्यशास्त्र न होकर संदेह का भाष्यशास्त्र है। आस्था का भाष्यशास्त्र जहाँ श्रवण के प्रति तत्परता और पवित्र के उजागर के रूप में वस्तु के लिए आदर द्वारा प्रचालित होता है वहीं संदेह का भाष्यशास्त्र, दी गई वस्तु के प्रति संदेह तथा वस्तु के प्रति आदर की अस्वीकृति द्वारा संचालित होता है।

MAADHYAM IAS

न केवल मनोविश्लेषण बल्कि संरचनावाद भी अर्थपूर्ण विषय के प्राधिकार पर प्रश्न-चिन्ह लगाता है : मूल पाठ का निष्पक्ष अर्थ लेखक के आत्मपरक आशय से भिन्न होता है और इसलिए सही समझ की समस्या लेखक के तथाकथित आशय पर वापस जाने मात्र से नहीं सुलझाई जा सकती है। स्क्लेयरमैकर तथा डिल्थी के हाथों भी, भाष्यशास्त्र ने जानबूझकर किए गए कार्य के अर्थ को संकुचित किया था किंतु रिकर के विचारों में नई बात यह है कि वह 'समझ से स्पष्टीकरण तक' और 'स्पष्टीकरण से समझ तक' रूपांतरण के विषय में बोलने लगा है। रिकर (1971) कहता है कि हमें संरचनात्मक विश्लेषण को 'सीधी-सादी' (naive) व्याख्या तथा 'आलोचनात्मक' व्याख्या के बीच, 'सतही' व्याख्या और 'गहन' व्याख्या के बीच एक आवश्यक चरण मानना चाहिए। इस प्रकार, व्याख्या के वाद-संवाद में अंतिम आंदोलन समझने की क्रिया में चरम सीमा तक जाता है जिसमें संरचनात्मक कार्य विश्लेषण की स्पष्टीकरणात्मक पद्धतियाँ मध्यस्थता करती हैं।

8.8 निष्कर्ष

भाष्यशास्त्र के अनुप्रयोग का आशय पारंपरिक मूल पाठ के अंतिम उपयोग से है, जैसे एक न्यायाधीश किसी मामले में कानून की व्याख्या करके उसे उस मामले पर लागू करे अथवा कोई उपदेशक किसी समकालीन नैतिक मुद्दे पर धार्मिक नियम की व्याख्या करके उसे लागू करे। इस अर्थ में, भाष्यशास्त्र हमारे चारों तरफ़ मौजूद है और हमें आशा है कि आपको अपने अनुसंधान में भाष्यशास्त्र का कुछ उपयोग करने का अवसर मिलेगा। आगे की इकाइयों में आपको समाजशास्त्रीय अनुसंधान में प्रयुक्त समकालीन परिप्रेक्ष्यों के विषय में मालूम होगा। कुछ समकालीन सामाजिक अनुसंधान में भाष्यशास्त्र के अनुप्रयोग को खोजना आपके लिए रोचक होगा।

8.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बाउमैन, ज़ेड. 1978, *हर्मिन्यूटिक्स एंड सोशल साइंस*, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस : न्यूयॉर्क।

बर्नस्टाइन, आर. 1983, *बियांउ ऑब्जेक्टिविज़्म एंड रिलेटिविज़्म : साइंस, हर्मिन्यूटिक्स एंड प्रेक्सिस*, यूनिवर्सिटी ऑफ पैंसिलवनिया प्रेस : फ़िलाडेल्फ़िया।

ब्लैचर, जे. 1980, *कंटम्पोरेरी हर्मिन्यूटिक्स : हर्मिन्यूटिक्स एज़ मैथड, फ़िलॉसफ़ी एंड क्रिटीक*, रूलेज एंड केगन पॉल : लंदन।

ब्रन्स. जी.एल. 1992, *हर्मिन्यूटिक्स : एन्शियंट एंड मॉडर्न*, येल यूनिवर्सिटी प्रेस : न्यू हेवन।

ग्रोन्डिन. जे.एल. 1994, *इंट्रोडक्शन टू फ़िलॉसफिकल हर्मिन्यूटिक्स*, येल यूनिवर्सिटी प्रेसः न्यू हेवन।

MAADHYAM IAS

खंड 3 की प्रस्तावना
समकालीन परिप्रेक्ष्य

यद्यपि हमें विदित है कि स्नातकोत्तर स्तर पर छात्र-छात्राओं को अपनी बुनियादी बातें मालूम ही हैं, फिर भी थोड़ा पीछे लौटना और उनका प्रत्यावर्तन करना हमेशा काफ़ी उपयोग सिद्ध होता है। यह बात विशेष रूप से इसलिए महत्वपूर्ण है कि आरंभिक अवस्था में अक्सर ही स्पष्टता का अभाव इस विश्वास के साथ लंबी समाजशास्त्रीय यात्रा पर ले जाया जा सकता है कि अस्पष्टता समाजशास्त्र की एक पूर्वशर्त है। यह प्रश्न उठ सकता है कि यह समाजशास्त्र में ही क्यों है, क्यों नही अर्थशास्त्र या राजनीति-विज्ञान में भी है कि सैद्धांतिक एवं शोधपद्धतिमूलक मुद्दों वाले उपागमों पर निरंतर चर्चाओं की मांग की जाती है।

इस प्रश्न के दो उत्तर प्रस्तुत हैं:

प्रायः विशिष्ट राजनीतिक संदर्भ एक बहस छेड़ देते हैं जैसा कि काफ़ी कुछ स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली इतिहास की पाठ्य-पुस्तकों के विवादास्पद मुद्दों पर हमारे देश में हुआ है। ऐसा नहीं है कि विद्वानों ने इतिहासशास्त्र के विषय पर चर्चा न की हो (देखें ई. एच. कर कृत हॉट इज़ हिस्ट्री) यह छोटी सी पुस्तक समाजशास्त्र के छात्र-छात्राओं के लिए शोध पद्धति का उत्तम परिचय देती है। परंतु दुर्भाग्यवश इतिहासशास्त्र से जुड़ी बहस एक तरफ हो गई। प्रायः पाठ्य-पुस्तकों के विवाद में मुख्य मुद्दा मात्र विचार वैचारिक नहीं है बल्कि शोध पद्धतीय भी है। ऐतिहासिक तथ्यों से क्या आशय है? कैसे ऐसे तथ्य हमें मिलते हैं? फिर ऐतिहासिक विधि का क्या अर्थ है? सौभाग्यवश समाजशास्त्र में समाज, सामाजिक तथ्यों, समाज को "जानने" की संभावना और "जानने" की विधियों के विषय में अधिक से अधिक प्रश्न उठाये जाते रहे हैं।

- इस विषय में राजनीति-विज्ञान और अर्थशास्त्र जैसे शिक्षा-विषयों में अधिक मतैक्य रहा है कि उनके अध्ययन की विषय-वस्तु क्या है? राजनीति-विज्ञान में उदाहरण के लिए, राजनीतिक-दर्शन के अनुगामियों के बीच उल्लेखनीय सैद्धांतिक चर्चाएं दिखाई पड़ती हैं। परंतु विभिन्न सैद्धांतिक रंगों के राजनीति-वैज्ञानिक प्रायः संभव मानक मात्रात्मक तकनीकों के साथ क्षेत्रीय शोध करते हैं। वे सिद्धांत, विधियों, तकनीकों एवं विषयवस्तु के बीच संबंधों के बारे में बेकार की चिंता नहीं करते। जबकि अर्थशास्त्र में नव-शास्त्रीय एवं मार्क्सवादी अर्थशास्त्रियों के बीच स्पष्ट विभाजन है। यहाँ भी सिद्धांत एवं अनुभवजन्य शोध के बीच संबंधों के विषय में किसी तरह का उल्लेखनीय सैद्धान्तीकरण नहीं दिखाई पड़ता। महिलावादी अर्थशास्त्रियों में महत्वपूर्ण रूप से इन प्रश्नों को उठाना शुरू कर दिया है। समाजशास्त्र की विषयवस्तु हमेशा ही विवादग्रस्त रही है, इस प्रवृत्ति को विषय की खूबी के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि किसी कमज़ोरी के लक्षण के रूप में। समाजशास्त्र में मूल विवाद यह भी रहा है कि क्या विवाह, परिवार, जाति एवं धर्म जैसे अन्य विषयों द्वारा छोड़ दिये गए बचे खुचे विषय ही समाजशास्त्रीय अध्ययन के विषय हैं या फिर, क्या समाजशास्त्र का अपना विशिष्ट दृष्टिकोण है जिसके अनुसार समाज का एक ओर तो समग्र इकाई की तरह अध्ययन होता है और दूसरी ओर समग्र का निर्माण करने वाले अंगों का आपस में संबंधों का भी अध्ययन किया जाता है।

- विषयवस्तु और विधियों संबंधी सुलभ स्पष्टता के इस अभाव को हानिकारक नहीं वरन् एक बड़े वरदान के रूप में देखा जाना चाहिए। इसने ही समाजशास्त्र के विषय को चिंतनशील और आत्मालोचक बनाया है। बारंबार ज्ञान की प्रकृति के बारे में मुख्य

MAADHYAM IAS

ज्ञान मीमांसात्मक प्रश्नों पर हमारा ध्यान जाता है अथवा मानव समाज में अस्तित्व की प्रकृति पर तात्विकीय प्रश्नों की ओर बरबस हमारा बार-बार लौटना होता है। हमारा प्रश्न होता है कि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण को सिद्धांत की जाँच हेतु शोध की ओर क़दम बढ़ाने चाहिए या फिर सिद्धांत को जन्म देने की और? हमारी बहस का विषय है – हमें कार्य-कारण संबंधों को स्थापित करने पर ध्यान केन्द्रित करना है, अथवा लोगों के जीवन में अर्थ के महत्व की तलाश करें। दूसरे शब्दों में हम निष्पक्ष और आत्मपरक के बीच, वृहत एवं सूक्ष्म के बीच क्या मूल्य पक्षपात शून्य एवं पक्षपाती शोध के बीच संबंधों पर चिंतन करें?

इस परिचय में इस बात पर ज़ोर देने का प्रयास किया गया है कि समाज के अध्ययन के लिये विभिन्न उपागम इतने महत्वपूर्ण क्यों हैं? और यह भी कि यह एक सतत प्रक्रिया क्यों है। समाज में परिवर्तन और सिद्धांत में परिवर्तन दोनों एक साथ जुड़े है और नये प्रश्नों को उठाते हैं। इकाई 9 में समाज के अध्ययन के लिये तीन शोध पद्धतीय उपागमों में से एक पर ध्यान केंद्रित किया गया है। ये तीन उपागम हैं – तुलनात्मक, महिलावादी और सहभागी। इन तीन इकाइयों (9, 10 व 11) में आपको स्पष्ट होगा कि मुख्य मुद्दों को लेकर किस प्रकार इनमें से प्रत्येक हमारा मार्ग निर्देशन करता है। मुख्य मुद्दे हैं निष्पक्ष एवं आत्मपरक, वृहत एवं सूक्ष्म, मूल्य टस्थता एवं पक्षपाती दृष्टिकोण।

तीन इकाइयों के दौरान तुलनात्मक, महिलावादी एवं सहभागी दृष्टिकोणों पर चर्चा का कारण है कि इन उपागमों में से प्रत्येक की अपनी विशिष्ट ऐतिहासिक विरासतें और गतिरेखाएं हैं। पुस्तक के एक विशिष्ट खंड में ही तीनों दृष्टिकोणों को देने का कारण है हक ये गति-रेखाएं उस भाँति अनुभवजन्य शोध के क्षेत्र में सक्रिय दृष्टिकोणों के संदर्भ में अति प्रासंगिक हैं। दरअसल सिद्धांत, विधियों एवं तकनीकों के भिन्न परंतु सम्बद्ध स्तरों के बीच जुड़ाव को समाजशास्त्र के सभी छात्र-छात्राओं एवं समाजशास्त्रियों द्वारा हृदयंगम करने की आवश्यकता है। जैसा कि मैंने (चौधरी 2000: 30) पाठ्यक्रमों के संबोध में एक अन्य प्रसंग में निश्चयपूर्वक तर्क दिया है कि

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

> पाठ्यचर्या से सामान्य रूप से जुड़े पाठ्यक्रम तीन विभिन्न विरासतों से निकले हैं, मूल संस्थापकों की सैद्धांतिक विरासत, मात्रात्मक तकनीकों की शोधपद्धतिमूलक विरासत और यथार्थमय मुद्दों की नागरिक विरासत। वैकल्पिक विरासतों की मौजूदगी चिंता का कारण नहीं है बल्कि चिंता तो इस बात है कि आंतरिक गति-रेखाओं को नहीं समझा जाता है और विश्व-दृष्टि से सिद्धांतों, अवधारणाओं से तकनीकों और सामग्री तक की गतिरेखाओं को समझकर चुने हुए की असंगति पर सवाल नहीं उठाये जाते। यहाँ विवाद का विषय यह नहीं है कि पाठ्यक्रमों को आपस में मिलाया जाए अथवा नहीं। अपितु बौद्धिक परम्पराओं, उनकी सामाजिक अवस्थिति एवं पाठ्यक्रमों में उनको ढाले जाने के बारे में एक समाजशास्त्रीय जागरूकता अवश्य होनी चाहिए।

दूसरे शब्दों में, तीनों इकाइयों में से प्रत्येक का निम्नलिखित पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

- सामान्य बोध से संबंध; वैचारिक स्थिति पर सवाल करना
- वह ऐतिहासिक संदर्भ जिसमें उपागम विशेष जन्मा
- दृष्टिकोण विशेष के कुछ प्रमुख अभिलक्षणों का वर्णन

खंड 3 की प्रत्येक इकाई के इस लंबे परिचय के साथ, हमें आशा यह है कि छात्र-छात्राओं को विषयवस्तु को पढ़ने और उनके 'सोचें और करें' अभ्यासों को पूरा करने में आनंद का अनुभव होगा। आइए, प्रस्तुत खंड की तीनों इकाइयों पर बारी-बारी से एक उड़ती नज़र डालें।

इकाई 9: तुलनात्मक पद्धति में समाजशास्त्रियों के लिए इस पद्धति के सशक्त आकर्षण के बारे में है। यह आकर्षण बहुत पुराना है और आज भी यथावत् जगा हुआ है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इस पद्धति के क्रमबद्ध प्रयोग ने उन्हें विभिन्न समाजों और संस्कृतियों की प्रचुर समझ पाने में सहायता की है।

इकाई 10: महिलावादी उपागम में सामाजिक शोध का महिलावादी दृष्टिकोण की चर्चा की गई है। हम अपने आसपास की दुनिया को लिंगभेद की नज़र से देखने में मदद करते है, इस दृष्टिकोण से हमें सामाजिक पदानुक्रमों एवं व्यवस्थाओं के आर-पार जाकर महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के चश्में से अपने चारों ओर की दुनिया को देखने में मदद मिलती है।

इकाई 11: सहभागी विधि ने शिक्षाविषयी सीमाओं के मुद्दे एवं उसकी वैधता पर आज के समय सवाल उठाये जाने की ओर हमारा ध्यान खींचा है। इस अर्थ में, काफ़ी कुछ महिलावादी उपागम की तरह सहभागी विधि में शोध के ज्ञानमीमांसात्मक आधार को पुनर्परिभाषित किया जाना शामिल है।

उपर्युक्त तीन इकाइयों के सहारे, हमारी उम्मीद है कि पुस्तक 1 के छात्र-छात्राओं को अपनी लघु शोध परियोजना हेतु एक भावी शोध विषय एवं शोध पद्धति चुनने की दृष्टि से सोचने के लिए स्वयं को तैयार करने का अवसर मिलेगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 9
तुलनात्मक पद्धति

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 सामान्य बोध के साथ संबंध; विचारधारात्मक अवस्थिति के बारे में सवाल करना

9.3 ऐतिहासिक संदर्भ

9.4 तुलनात्मक पद्धति के तत्व

9.5 निष्कर्ष

9.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 9 को पढ़ने के बाद आपके लिये संभव होगा:

- निष्पक्ष बनाम आत्मपरक, बृहद् बनाम सूक्ष्म, मूल्य-तटस्थता बनाम पक्षपात के परम आवश्यक मुद्दों के संदर्भ में तुलनात्मक पद्धति के महत्व का पता लगाना; तथा
- सामाजिक मुद्दों पर अपनी शोध करने के लिए कुछ सीखें प्राप्त करना।

9.1 प्रस्तावना

निष्पक्ष बनाम आत्मपरक, बृहद् बनाम सूक्ष्म और मूल्य-तटस्थता बनाम पक्षपात के परमावश्यक मुद्दों के बारे में दिशा-निर्देश करते हुए इकाई 9 में सामान्य बोध के साथ तुलनात्मक पद्धति के संबंध और इसकी विचारधारात्मक अवस्थिति के बारे में उठने वाले प्रश्नों की चर्चा की गई है। इसके पश्चात, चूंकि तुलनात्मक पद्धति की अपनी अलग ऐतिहासिक विरासत और गतिरेखा है इसीलिए इकाई लेखिका ने उस ऐतिहासिक संदर्भ की चर्चा की है। जिसमें इस विधि का उदय हुआ। इस पद्धति की गतिरेखा आनुभविक शोध के दौरान चलने वाले तरीके से सुसंगत है। इसके बाद इकाई में तुलनात्मक पद्धति की मुख्य विशेषताओं का व्यवस्थित निरूपण किया गया है। पूरी इकाई में, समग्र सैद्धांतिक मान्यताओं, शोध पद्धतियों और क्षेत्र तकनीकों के बीच संबंध पर ध्यान केंद्रित किया गया है। भारत में तुलनात्मक विधि द्वारा किये जाने वाले सामाजिक विज्ञान शोध की पर्याप्त चर्चा की गई है। यह चर्चा आपके अपने शोध में तुलनात्मक पद्धति को लागू करने का ठोस आधार प्रदान करेगी क्योंकि जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि बिना तुलना के समाजशास्त्र ही नहीं हो सकता है। इस इकाई में आपको सामाजिक सरोकारों पर शोध करने के लिए कुछ स्पष्ट सीखें भी मिलेंगी।

9.2 सामान्य बोध के साथ संबंध; विचारधारात्मक अवस्थिति के बारे में सवाल करना

समाजशास्त्र के छात्र-छात्राओं को सामान्य बोध और समाजशास्त्र दोनों के बीच अंतर तथा सामान्य बोध की समझ और समाजशास्त्रीय ज्ञान को एक में तिरोहित कर देने के ख़तरे के बारे में खूब अच्छी तरह से मालूम है (बेते 2002)। तुलनात्मक उपागम पर चर्चा के संदर्भ में सामान्य बोध की बात करना एक बार फिर महत्वपूर्ण बन जाता है। आपको भली-भांति मालूम है कि हमारे रोज़मर्रा के जीवन में तुलना और विषमता का खूब प्रयोग किया जाता है और इसमें कोई अचंभा नहीं है कि मानव समाज और संस्कृति के अध्ययन में

'तुलना और विषमता' का अनुप्रयोग उतनी ही आम बात है। यदि आप अपने आसपास के सामाजिक जगत की रोज़मर्रा की जानकारी के बारे में विचार करें तो आपको अहसास होगा कि आप भी तुलना और विषमता की प्रक्रियाओं में शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हम सभी के द्वारा चीज़ों, लोगों, खाद्य पदार्थों, संस्कृतियों इत्यादि का उनके श्रेष्ठ (बढ़िया) या निकृष्ट (घटिया) होने की सहज गुणवत्ताओं के संदर्भ में मूल्यांकन किया जाता है। "हमारा भोजन उनके भोजन से ज़्यादा स्वादिष्ट है", या "उनकी संस्कृति हमारी संस्कृति की तुलना में ज़्यादा विकसित" है – इस प्रकार की आम टिप्पणियां आमतौर पर सुनने में आती हैं। संस्कृति विशेष के अधिक विकसित होने वाले उपरोक्त दूसरे कथन में विकासवादी पूर्वाग्रह का आभास होता है अर्थात् विकास की अवस्थाएं होती है और प्रत्येक अगली अवस्था पिछली अवस्था से श्रेष्ठ होती है। बहुत समय तक समाजशास्त्र में जंगली के 'सभ्य' के साथ या आदिम (primitive) के साथ आधुनिक की तुलना करना बिल्कुल उचित प्रतीत होता था। समाजशास्त्रियों ने विकासवादी तुलनात्मक पद्धति पर आधारित अंतर्निहित मूल्य निर्णय से बचने के लिए 'सरल' और 'जटिल' समाजों का काफ़ी सोच विचार के साथ प्रयोग करना शुरू कर दिया है। इस संबंध में रोचक बात यह है कि रोज़मर्रा के स्तर पर भी यह जागरुकता आ गई है कि तुलना करना उचित नहीं है और हम प्रत्येक व्यक्ति, वस्तु या विचार को स्वयं के लिए मूल्यांकित करना है न कि सदा दूसरों से तुलना करके ही देखना है।

आपको स्पष्ट होगा कि तुलनात्मक पद्धति के कुछ प्रकरण दैनिक जीवन की धारणाओं में भी विद्यमान होते हैं। तुलना के प्रति हमारा दिन प्रतिदिन के अनुप्रयोग और समाजशास्त्रीय उपागम में अंतर करना कठिन हो जाता है क्योंकि समाजशास्त्र एवं रोज़मर्रा के जीवन में काफ़ी समीपता का संबंध है तथा दोनों स्तर एक दूसरे के क्षेत्र में आते-जाते रहते हैं। बेते ने दैनिक जीवन में तुलनात्मक और समाजशास्त्रीय तुलनात्मक दृष्टिकोणों के बीच सतर्क और महत्वपूर्ण अंतर बताया है। उसके शब्दों में,

> हालांकि मानव चिंतन की प्रक्रिया में तुलना का व्यापक प्रयोग स्वाभाविक हो सकता है लेकिन यही बात क्रिया-विधि के निश्चित या कम से कम परिभाषित नियमों वाली तुलनात्मक पद्धति के लिए सचेत खोज के बारे में नहीं कही जा सकती है। सामाजिक विज्ञानों में शामिल विभिन्न विषयों के भी लक्षणात्मक अंतर होते हैं। अर्थशास्त्र और मनोविज्ञान जैसे कुछ विषय अधिकांशतः सार्वभौमिक संरचनाओं और प्रत्येक स्थान पर सारी मानवजाति की सामान्य प्रक्रियाओं पर केंद्रित हैं। इन विषयों ने समाजों के बीच पाए जाने वाले विशेष और लगातार बने रहने वाले अंतरों पर कम ध्यान दिया है। दूसरे विषयों, ख़ासतौर से इतिहास में अपने चुने देश-काल की सीमाओं से दूर जाये बिना समाजों के विशिष्ट लक्षणों का उल्लेख किया जाता है। शोध साधन के रूप में बिना हरेक के विशिष्ट लक्षणों को नज़रअंदाज़ किये सारे समाजों (या संस्कृतियों) के सामान्य लक्षणों को खोजने के लिये सचेतन रूप से तैयार की गई पद्धति ने समाजशास्त्र और सामाजिक नृशास्त्र को विशेष रूप से सम्मोहित किया हुआ है।

इवन्स-प्रिचर्ड (1963: 3) ने अपने एल.टी हॉबहाउस मैमोरियल ट्रस्ट लेक्चर, 33, में तुलना की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि व्यापक अर्थ में देखा जाये तो कोई अन्य विधि है ही नहीं। तुलना सारे विज्ञान की अनिवार्य क्रिया-विधियों में से एक है और यही "मानव विचारधारा की मूल प्रक्रियाओं में से एक है।" इवान्स-प्रिचर्ड के विचारों मे दुर्खाइम के विचारों की गूंज स्पष्ट है। दुर्खाइम (1964: 139) ने लिखा, "तथ्यों का विवरण देने के स्थान पर तथ्यों की व्याख्या करने के रूप में तुलनात्मक समाजशास्त्र तो समाजशास्त्र की एक विशिष्ट शाखा न होकर स्वयंमेव समाजशास्त्र ही है।"

मैक्फ़ार्लेन (2004: 95) ने लिखा कि, "अनेको प्रेक्षकों ने नोट किया कि एक तथ्य को समझने के लिए उसे परिप्रेक्ष्य में रखना या दूसरों के साथ उसकी तुलना करना ज़रूरी है।

मैक्फ़ार्लेन ने लेवी (1950: 9) को उद्धत किया जिसने इसी बात को बहुत पहले कहा था, "एक तथ्य को केवल दूसरे तथ्यों के संदर्भ में समझा जाता है" जिसे केवल इंग्लैंड के बारे में ही मालुम है, उसे इंग्लैंड के बारे में बहुत कम मालूम है"। अतः पश्चिमी संस्कृति को परिप्रेक्ष्य में देखना ही उचित होगा।

अधिकांश सामाजिक वैज्ञानिकों को सामान्यतः यह पता है कि उनका काम हर समय तुलना करना ही है जैसा कि मैक्फ़ार्लेन (2004: 94) ने कहा, "इतिहास में तुलनाएं प्रायः काल के अनुसार की जाती है"। अन्य समाज विज्ञानों में देश के संदर्भ में होती हैं। इतिहासकारों की सबसे सुपरिचित विधि है अपने समाजों को एक प्रतिमान के रूप में लेकर देखना कि पुरातन काल उनसे कितना समान या मिलता है। ऐसा ही नृशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों द्वारा काल की बजाए देश के आयाम में किया जाता है। इसके आगे मैक्फ़ार्लेन ने पोकॉक (1961: 90) को उद्धृत किया, जिसने कहा था, "अनौपचारिक रूप से तुलना शोध की पद्धति में निहित होती है। यहाँ तक कि अपने सर्वप्रथम क्षेत्र-कार्य में हर नृशास्त्री ने प्रायः अपने समाज की श्रेणियों से ही अपने अध्ययन क्षेत्र के समाज की श्रेणियों की तुलना की है...।"

आर लोवी
(1883-1957)

मैक्फ़ार्लेन ने आगे द टोकविल (1861, i: 359) को उद्धृत किया जिसने अपने संस्मरणों में ऐसी ही तुलना विधि का उदाहरण प्रस्तुत किया था

> अमेरिका पर अपनी रचनाओं में हालांकि मैंने फ्रांस का उल्लेख कभी-कभार ही किया। फ्रांस के बारे में सोचे बिना या उसे अपने सामने रखे बिना मैंने एक भी पृष्ठ नहीं लिखा। और मैंने जो निष्कर्ष निकालने या स्पष्ट करने का प्रयास किया वह उस विदेशी समाज की संपूर्ण दशा नहीं थी, उसमें बस वे बातें थी जो हमारे अपने समाज से भिन्न थीं या उससे मिलती-जुलती थीं। मैंने सदैव समानताओं या भिन्नताओं को देखकर ही एक रोचक और सही विवरण दे पाने में सफलता पाई..।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अब तक तो आपको यह स्पष्ट ही हो गया होगा कि अलग-अलग समय पर समाजशास्त्रियों में तुलना और मूल्य निर्धारणों की समस्या के प्रति जागरूकता पैदा हुई। शास्त्रीय, समाजशास्त्रीय चिंतकों और तुलनात्मक उपागम के दुर्खाइम और वेबर जैसे समर्थकों ने इसके बारे में क्या कहा? पश्चिमी समाज अपने विकास की उच्चतम अवस्था पर पहुंच चुके थे – इसे अंदर ही अंदर स्वीकार करने वाली उद्विकासीय प्रगति के संदर्भ में, समाजशास्त्रियों ने मूल्य तटस्थ समाजशास्त्र की अपनी प्रतिबद्धता और तुलना के साथ अपनी प्रतिबद्धता के बीच द्वंद्व को किस प्रकार सुलझाया? आइए इन प्रश्नों पर हम अगले भाग में चर्चा करें। इकाई का अगला भाग समाजशास्त्र में तुलनात्मक पद्धति के ऐतिहासिक संदर्भ पर आधारित है।

अगले भाग में चर्चा बढ़ाने से पूर्व यह बात ध्यान में रखना उचित होगा कि केवल शास्त्रीय समाजशास्त्रियों को ही तुलना पद्धति के आकर्षण के सामने झुकना नहीं पड़ा बल्कि प्राचीन विद्वानों में हेरोडोटस, अरस्तू, पॉलिटिक्स, प्लूटार्क जैसे विचारकों और पुनर्जागरण के बोडिन तथा मेक्यिावेली ने भी इसका प्रयोग किया। आप भी ऐसे विद्वानों की एक लंबी सूची तैयार करें जिन्होंने शास्त्रीय समाजशास्त्रियों द्वारा तुलनात्मक उपागम के अनुप्रयोग से प्रेरणा ली और विभिन्न समाजों और संस्कृतियों की समृद्ध जानकारी प्राप्त की। मैक्फ़ार्लेन (2004: 108) ने अपनी ऐसी सूची में पैरी एंडरसन, फर्नांड ब्राडेल, लुई दुमों, अर्नेस्ट गैलनर, जैक गुडी, ई. एल. जोन्स, डेविड लैंडस और विलियम मैक्नील के नामों को शामिल

किया। समकालीन समाजशास्त्रियों जैसे आंद्रे बेते ने तुलनात्मक पद्धति के अनुप्रयोग को जारी रखने के लिए ज़ोर दिया, हालांकि साथ में पहले के समाजशास्त्रियों द्वारा की गई ग़लतियों से बचने की ओर भी उसने पूरा ध्यान दिया। इस नज़रिये से आपको सीख मिलती है कि तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग करने के बारे में विभिन्न विवादों में पड़ने की संभावनाओं से बचते हुए पर्याप्त सावधानी के साथ इसको देखें।

9.3 ऐतिहासिक संदर्भ

हालांकि प्राचीन और मध्यकालीन विद्वानों ने अपनी अपनी कृतियों में तुलनाओं का प्रयोग किया लेकिन सामाजिक शोध की निर्दिष्ट विधि के रूप में तुलनात्मक पद्धति उन्नीसवीं शताब्दी के समाजशास्त्र और सामाजिक नृशास्त्र की उपज थी। उन्नीसवीं शताब्दी में तुलनात्मक पद्धति का प्रमुख आकर्षण इस मान्यता से आया कि मानव समाज और संस्कृति के बारे में वैज्ञानिक नियमों को खोजने के लिए भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। तुलनात्मक पद्धति के सबल समर्थकों का समाज के ऐसे प्राकृतिक विज्ञान की संभावना में विश्वास था जो व्यवस्थिति तुलनाओं के माध्यम से सामाजिक जीवन के रूपों में सहअस्तित्व और अनुक्रम की नियमबद्धताएं स्थापित करेगा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उन्नीसवीं शताब्दी में समाजशास्त्र और नृशास्त्र के तहत् सामाजिक और सांस्कृतिक तथ्यों के अध्ययन में मानव जीवन के भौतिक या जैविक पहलुओं का अध्ययन भी शामिल था।

फ्रांस में दुर्खाइम, इंग्लैंड में हर्बर्ट स्पैंसर और जर्मनी में मैक्स वेबर जैसे प्रारंभिक समाजशास्त्रियों ने माना कि तुलना मानव जाति की विचार करने की मूलभूत प्रक्रियाओं में से एक है। स्पैंसर (1876 और 1895 के बीच प्रकाशित प्रिंसिपल्स ऑफ़ सोशियोलोजी के प्रथम खंड का अध्याय II देखें) और दुर्खाइम (1895 में प्रकाशित दि रूल्स ऑफ़ सोशियोलोजीकल मैथड के अध्याय V और VI देखें), दोनों ही जैव सादृश्य (organic analogy) से अत्यधिक प्रभावित थे। विशेषतः दुर्खाइम ने सामाजिक जगत को समझने के लिए तुलनात्मक दृष्टिकोण निर्मित करने में जैव सादृश्य का शोध-पद्धतिजनक प्रयोग विकसित किया। दुर्खाइम द्वारा तुलनात्मक विधि के व्यवस्थित प्रयोग ने बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में समाजशास्त्र और सामाजिक नृशास्त्र'में इसके व्यापक प्रयोग को बढ़ावा दिया विश्व के विभिन्न हिस्सों में शोधों में इस मूल्यवान पद्धति के अनुयायियों के रूप में रैडक्लिफ़-ब्राउन और उसके सभी साथियों के नामों का उल्लेख किया जा सकता है। तुलनात्मक पद्धति पर आलोचनात्मक टिप्पणी के लिए कोष्ठक 9.1 देखें।

MAADHYAMIAS
way to achieve your dream

कोष्ठक 9.1: तुलनात्मक पद्धति पर समीक्षात्मक टिप्पणी

निस्संदेह समाजशास्त्रियों और नृशास्त्रियों ने विद्वतापूर्व कृतियों की एक समृद्ध श्रृंखला दी। इनमें सामाजिक प्रचलनों और संरचना के बीच संबंध की तुलना तथा विरोध दिखाये गये। अधिकांश सामाजिक शोधों में समाज के बारे में एक विशेष अवधारणा ली गई थी। इसका मत था कि समाज स्वजातिक (sui generis) यथार्थता है और बाहर से इसका अवलोकन किया जा सकता है और फिर उसीका निष्पक्ष रूप से वर्णन किया जा सकता है। इनगोल्ड (1990: 6) ने समाज की इस अवधारणा की उपयोगियता पर सवाल उठाया और कहा कि इस पद्धति के प्रयोग की अति ने समाजशास्त्र में तुलनात्मक पद्धति से अनेक अपेक्षाएं पैदा कर दी थीं लेकिन इसका असमीक्षात्मक प्रयोग ही तुलनात्मक विधि की असफलता के लिये उतारदायी है।

तुलनात्मक पद्धति के बारे में मैक्स वेबर के दृष्टिकोण ने एक अलग रास्ता अपनाया क्योंकि सामाजिक तथ्यों के कारणों और प्रकार्यों की खोज करने के साथ समाप्त होने वाले समाजशास्त्रीय शोध से मैक्स वेबर को कोई सहानुभूति नहीं थी। वेबर को सामाजिक तथ्यों के अर्थों से अधिक सरोकार था। वेबर (1949: 15) का कथन है, "घटक व्यक्तियों के बारे

मैक्स वेबर
(1864-1920)

में आत्मपरक जानकारी प्राकृतिक विज्ञान में हमें कभी भी नहीं मिल सकती है।" तुलनात्मक पद्धति का प्रारंभिक प्रयोग केवल समाज के प्राकृतिक विज्ञान की विचारधारा से ही नहीं बंधा था बल्कि साथ में यह ज़्यादा स्पष्ट रूप से विकास के सिद्धांत से आबद्ध था। उन्नीसवीं शताब्दी के नृशास्त्र का एक बड़ा हिस्सा सामाजिक प्रतिरूपों के उद्‌गमों से और पुनःनिर्माण की उन अवस्थाओं से संबद्ध था जिनसे गुज़र कर वे सरलतम से जटिलतम रूपों में विकसित हुए।

एक ओर मूल्य-तटस्थ और निस्पक्ष उपागम और दूसरी ओर स्पेंसर, एमिल दुर्खाइम और मैक्स वेबर जैसे प्रारंभिक समाजशास्त्रियों पर विकासवादी उपागम के प्रभाव के बीच होने वाले तनाव पर टिप्पणी करते हुए बेते (2004: 114) ने कहा,

> उनका मानना था कि समाज, संस्कृति, धर्म, परिवार, विवाह इत्यादि ने हर जगह मानव जीवन को आकार प्रदान किया और इन्होंने न केवल देश में बल्कि विदेश में भी गंभीर व बौद्धिक रूप से ध्यान आकर्षित किया। इस अर्थ में, तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग करने वालों से अपने समाज एवं संस्कृति से एक प्रकार की तटस्थता की अपेक्षा होती है। ऐसी अपेक्षा ऐतिहासिक पद्धति का प्रयोग करने वालों द्वारा नहीं की जाती। कई इतिहासकार महाराष्ट्रवादी रहे हैं। चूंकि तुलनात्मक पद्धति, विशेषाधिकार प्राप्त अपवादों को कम से सैद्धांतिक रूप से तो स्वीकार नहीं करती, अतः यह इतनी आसानी से खुल्लमखुल्ला राष्ट्रवाद की भावना को स्वीकार नहीं कर सकती। समाजशास्त्र और सामाजिक नृशास्त्र में तुलनात्मक पद्धति के अग्रणी विद्वान विकास के सिद्धांत से चाहे थोड़ा या ज़्यादा प्रभावित तो अवश्य थे। वस्तुतः यह विकास की अवस्थाओं की खोज थी जिसके दौरान स्पेंसर और मार्गन की तुलनात्मक विधि उजागर हुई। इससे कुछ सीमाएं बंध गईं जिन तक ये विद्वान सभी समाजों और संस्कृतियों को समान मूल्य दे सकते थे। यह मौन रूप से स्वीकार किया गया कि पश्चिमी समाज विकास की उच्चतम अवस्था तक पहुंच चुके हैं और अन्य सभी समाज उनके नीचे क्रमिक दूरी पर खड़े हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इन निर्धारित मतों को चुनौती देने के लिए पश्चिमी जगत से बाहर कोई आवाज़ नहीं उठी। तुलनात्मक पद्धति की आकांक्षाओं और उसकी उपलब्धियों के बीच शुरुआत से ही एक अंतरात था। जैसा कि आपको इकाई 10 और 11 में स्पष्ट होगा कि महिलावादी और सहभागी दृष्टिकोण बहुत आधारभूत रूप से मूल्य-तटस्थता की मान्यता को विचलित करते हैं और साथ ही तर्क देते हैं कि प्रभावी वर्ग के परिप्रेक्ष्य ही विश्व व्यापक और तटस्थ मतों के रूप में मान लिये गये हैं। उदाहरण के लिए उन्नीसवीं शताब्दी के विशेषाधिकार प्राप्त श्वेत पुरुष विद्वानों के विचार निश्चित रूप से सार्वभौमिक ज्ञान के रूप में मान्य हुए (देखें इकाई 4)। इस अर्थ में तुलनात्मक दृष्टिकोण की उत्पत्ति उन महिलावादी और सहभागी दृष्टिकोणों से अत्यंत भिन्न है जिनका प्रभाव सामाजिक विज्ञान शोध में हाल में पड़ा है और जिनकी मान्यता मूल्य-तटस्थता के विचार से बहुत अलग है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि महिलावादी और सहभागी उपागमों द्वारा उठाए गए प्रश्नों ने तुलनात्मक पद्धति के मुख्य पालनकर्ताओं अर्थात् सामजशास्त्र तथा सामाजिक नृशस्त्रि को गहराई से प्रभावित किया है।

आइए, अपनी चर्चा पर वापिस आते हुए देखें कि वेबर और दुर्खाइम के बारे में बेते (2004: 127) ने क्या कहा है,

> वे जानते थे कि वर्ग या राजनीतिक संबंध के अनुसार विचारों में भिन्नता हो सकती है लेकिन उन्होंने राष्ट्रीय परंपरा के अंतरों पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया। उन्होंने ग़ैर-

पश्चिमी समाजों के विचारों और मूल्यों को ध्यान में रखा लेकिन केवल शोध के विषय की भांति ही, न कि शोध-पद्धति निर्माण के अवयवों के रूप में। एशियाई और अफ़्रीकी देशों के विद्वानों के लिए यह तथ्य चिंता का स्रोत बना है।

बेते (2004: 127) ने महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया कि क्या विभिन्न भौगोलिक स्थानों में बसे हुए व्यक्तियों के अवलोकन, विवरण और तुलना के लिए विभिन्न विधियों का परामर्श देने से इस कमी को दूर किया जा सकता है? शायद इसका उत्तर 'नही' है। फिर भी अपने अपने अध्ययनों की शुरुआत में ही अपनी अपनी अवस्थितियों (locations) अर्थात् राष्ट्र, लिंग, जाति, यहाँ तक कि सैद्धांतिक अभिरुचियों को यदि समाजशास्त्री स्पष्ट रूप से व्यक्त करें तो उनके लिये शोध पद्धतिजनक सुदृढ़ता को स्थापित करना संभव होगा। तब उनके पाठकों के लिये समाजशास्त्रीय अध्ययनों की आंतरिक सम्बद्धता तथा उनकी प्रधान मान्यताओं का आलोचनात्मक परीक्षण करना सरल होगा।

एक अन्य स्तर पर, जोकि तुलनाओं की संख्या और प्रकृति का स्तर है, यह सुझाव दिया गया है कि हम द्विआधारी (binary) चिंतन न करें और विश्लेषण की युग्तीय (dyadic) प्रणाली का प्रयोग न करें। एक युग्म या जोड़े की तुलना में, उदाहरण के लिए भारत और इंग्लैंड या पश्चिमी देश और शेष देशों की तुलना करते हुए निश्चित रूप से इन युग्मों में से एक को दूसरे से बेहतर/श्रेष्ठ/ऊंचा कहा जायेगा। मैक्फ़ार्लेन (2004:103) ने एक आदर्श प्रारूप की तरह लेते हुए सामंतवाद पर बर्क द्वारा की गई टिप्पणी का हवाला दिया और कहा कि फ्रांसीसी सामंतवाद को 'सटीक' और 'सामंतवाद' के अन्य सभी रूपों को विचलनों के रूप में देखा गया है। बर्क ने इस मान्यता पर सवाल उठाया और पाया कि ऐसा इसलिए है क्योंकि पश्चिमी विद्वानों ने अपने अपने समाजों के बिंबों के आधार पर ही समाजशास्त्र की अधिकांश अवधारणाओं को उजागर किया है। मैक्फ़ार्लेन ने त्रिकोणीय तुलना के लिए तर्क प्रस्तुत किये हैं (देखें कोष्ठक 9.2)।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कोष्ठक 9.2: त्रिकोणीय तुलना के लिए मैक्फ़ार्लेन का सुझाव

मैक्फ़ार्लेन (2004) ने वास्तविक, ठोस, ऐतिहासिक तथ्यों की सुस्पष्ट त्रिकोणीय तुलना का सुझाव दिया। लेकिन ये सभी वेबर के आदर्श प्रकारों के पृष्ठपट की छाया में निर्धारित किए गए क्योंकि तभी त्रिकोणीय तुलनाएं करना संभव हो पाता है।...

त्रिकोणीय विधि को दो तथ्यों और एक आदर्श प्रारूप से तीन तथ्यों और एक आदर्श प्रारूप तक बढ़ाने से हमारे लिये सापेक्षवाद और सारवाद (essentialism) की उन समस्याओं से पार पाना संभव है जिन्होंने पिछले डेढ़ सौ वर्षों से भी अधिक समय से समाजशास्त्र को घेरा हुआ है। हमारे लिये ऐसी स्थिति की ओर बढ़ना संभव है जहाँ लोगों में समानताओं पर ज़ोर देने के साथ-साथ उनकी अद्‌भुतताओं और अंतरों का आनंद उठाना संभव हो सकता है।

आइए, तुलनात्मक दृष्टिकोण की चर्चा के इस बिंदु पर सोचें और करें 9.1 पूरा करें ताकि आप सामाजिक जगत के अपने अध्ययन में तुलनात्मक दृष्टिकोण लागू करने की समस्या तथा इसके महत्व को समझने में निहित मुद्दों को पूरी तरह ग्रहण कर सकें।

सोचे और करें 9.1

निम्नलिखित उदाहरणों पर विचार कीजिए और उनसे संबंधित प्रश्नों का उत्तर दीजिए

उदाहरण

- सर हेनरी मेन ने भारत और यूरोप के बीच तुलना की।
- मार्क्स ने उत्पादन की विभिन्न प्रणालियों के बीच तुलना की।

- मैक्स वेबर ने यूरोप के प्रोटेस्टैंट और कैथोलिकों के बीच तुलना की और इस्लाम, हिन्दुवाद और कन्फ्यूशनवाद जैसे धर्मों की तुलना में यूरोप की विषमता को दर्शाया।

प्रश्न

- उपर्युक्त विषमताओं और तुलनाओं में कौन सा एकमात्र घटक अग्रवर्ती घटक के रूप में प्रमुख रूप से दृष्टिगत होता है?
- क्या उपर्युक्त उदाहरण मुख्यतः विषमता के या तुलना के हैं?
- क्या ऐसी विषमताएं द्विपक्षीय विरोध के उदाहरण हैं?
- क्या बहुत ज़्यादा अंतर वाले समाजों के बीच तुलना करने की बजाय किसी प्रकार की समानताओं वाले समाजों के बीच तुलना करना बेहतर है? उदाहरण के लिये भारत और यूरोप के बीच तुलना करने की जगह क्या यह बेहतर नहीं है कि इंग्लैंड और जापान के बीच तुलना की जाये? इंग्लैंड और जापान के बीच समानताओं तथा अंतरों के बिंदुओं को प्रकाश में लाइए।

9.4 तुलनात्मक पद्धति के तत्व

पिछले भाग में तुलना और निष्पक्ष निर्णय के नियम के बीच आने वाली समस्याओं पर समीक्षात्मक टिप्पणियों के बावजूद समाजशास्त्र में तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग बहुत स्वाभाविक तौर पर किया गया है। इसकी कुछ विशेषताओं का योजनाबद्ध रूप से नीचे उल्लेख किया जा रहा है।

- समाज के प्राकृतिक विज्ञान की संभावना में आस्था
- तटस्थता के लक्ष्य और उद्‌विकास के सिद्धांत के बीच असुविधाजनक संबंध
- जैव सादृश्य (organic analogy) का प्रभाव
- व्यवस्थित तुलनाएं करने का इरादा

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

हालांकि समाजशास्त्रियों ने प्रथम तीन विशेषताओं पर काफ़ी तर्क-वितर्क किया लेकिन फिर भी उन्होंने व्यवस्थित तुलनाओं के इरादे के प्रति काफ़ी श्रद्धा दिखाई है।

इसी कारण से इस पद्धति के निम्नलिखित तत्वों पर ध्यान देना अनिवार्य है।

- तुलना की विधियाँ
- तुलना की इकाइयाँ
- तुलनात्मक पद्धति का लक्ष्य

आइए प्रत्येक तत्व पर विस्तार से चर्चा करें ताकि अपने शोध में तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग करने हेतु हमें कुछ उपयोगी बातें मालुम हो सकें।

i) तुलना की विधियाँ

जैसा कि मैक्फ़ार्लेन (2004:99) ने नोट किया, तुलना अनेकों तरीक़ों से की जा सकती हैं, व प्रत्येक तुलना अपने कार्य के अनुरूप की जाती है और पहले से ही या निर्धारित नहीं किया जा सकता है कि कौन सी विधि सर्वश्रेष्ठ होगी। अधिक से अधिक कुछ विकल्पों को प्रस्तुत किया जा सकता है। आइए देखें कि दुर्खाइम (1964) ने तुलना की किन तीन विधियों को बताया है।

क) विशेष समय में केवल एक समाज की ही चर्चा हो सकती है और उस समाज के कार्य के विशिष्ट तरीक़ों या संबंधों में पाये जाने वाले अंतरों का विश्लेषण किया जा सकता है।

ख) समान प्रकृति वाले ऐसे कई समाजों की चर्चा की जा सकती है जिनकी कार्य विधियों या संबंधों में अंतर हो। अधिक स्पष्ट रूप से कहें तो असमान और संभवतः समकालीन समाजों की तुलना की जा सकती है अथवा यदि विभिन्न कालों में कुछ सीमा तक सांस्कृतिक परिवर्तन हुए हों तो एक ही समाज को अलग-अलग कालों में देखा जा सकता है।

ग) ऐसे अनेक समाजों की तुलना की जा सकती है जिनके स्वरूप में व्यापक रूप से अंतर होने के बावजूद कुछ समरूपी विशेषताएं हों। इसी प्रकार, एक ही समाज के जीवन में विभिन्न कालों में आमूल परिवर्तन दृष्टिगत हो तो उनकी तुलना भी की जा सकती हैं।

ii) तुलना की इकाइयाँ

मैक्फ़ार्लेन (2004: 100) के शब्दों में तुलना पद्धति की सफलता उन्हीं चीज़ों की तुलना पर निर्भर करती है जिनकी तुलना की जा सकती है। इसके अंतर्गत कई विशेषताएं आती हैं। उनमें से एक है कि तुलना की जाने वाली इकाइयाँ लगभग एक ही महत्ता की हों, उदाहरण के लिए इंग्लैंड में अभिवादन करने के तरीक़े की तुलना चीन की परिवार प्रणाली से करना तनिक भी लाभप्रद नहीं होगा।

आगे, मैक्फ़ार्लेन ने कहा, द्वितीयतः, प्रभावी तुलना के लिए चीज़ें किसी न किसी रूप में एक ही वर्ग या क्रम की होनी चाहिए। इस प्रकार अमेरिका में विवाह की तुलना चीन की चाय पीने की पद्धति से करना संभवतः निरर्थक ही होगा। तुलनाओं का चयन काफ़ी महत्वपूर्ण है। कभी-कभी एक समान दिखने वाली चीज़ों का चयन करने पर भी धोखा हो सकता है। 'नगर', 'विवाह', 'परिवार', 'क़ानून' जैसे शब्दों में नाना-प्रकार की नृजाति विवरण शास्त्रपरक मान्यताएं भरी पड़ी हैं। यहाँ तक कि 'घर', 'आहार', 'शरीर' जैसे स्पष्ट शब्दों में भी प्रत्येक संस्कृति में पाई जाने वाली मान्यताओं का जटिल समुच्चय मिलता है। अतः तुलना के लिये इकाइयों का चयन करते समय सचमुच ही काफ़ी सतर्कता की आवश्यकता होती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

iii) तुलनात्मक पद्धति का लक्ष्य

सामाजिक वैज्ञानिकों ने अपने शोध के उपकरणों में से तुलनात्मक पद्धति को मात्र एक उपकरण माना है। हर शोधकार के लिये यह जानकारी आवश्यक है कि उसे किसी भी विशिष्ट उपकरण का प्रयोग क्यों करना है, उसका क्या उद्देश्य है और कैसे अच्छी तरह उस उपकरण का उपयोग किया जाये। इस संबंध में, मैक्फ़ार्लेन का सुझाव है: i) सुपरिचित से फ़ासला रखने में, ii) अपरिचित से परिचित होने में, और iii) अदृश्य को उजागर करने में बड़ा फ़ायदा है। आइए, तीनों को थोड़ा विस्तार से समझें।

सुपरिचित से फ़ासला रखना

सुपरिचित से फ़ासला रखने या स्पष्ट को अस्पष्ट में बदलने का अर्थ है स्वयं और जानी-पहचानी चीज़ों के बीच में दूरी रखना ताकि शोधकार उन्हें भिन्न दृष्टिकोण से देख सके। अधिकांश शोधकारों के सामने प्रायः सुपरिचित का न देखने की समस्या आती है क्योंकि उनके लिये सुपरिचित तो 'ऐसा होता ही है' की श्रेणी में रहता है। पीने के पानी वाले गिलास के किनारों को न छूना – भारतीयों के लिये आम बात है परंतु विदेशियों के लिये यह ख़ास बात हो सकती है। समाजशास्त्र में सामान्य बोध के बारे में प्रश्न करना सिद्धांत के क्षेत्र में आता है और यथार्थ के जो स्वरूप हमें स्वाभाविक लगें वही बहुधा समाजशास्त्रीय दृष्टि से सिद्धांत निर्माण में महत्वपूर्ण हो जाते है।

अपरिचित से परिचित होना

अपने कार्य के दौरान हमें कई ऐसी चीज़ें दिखाई देती हैं जिनके बारे में हमें जानकारी ही नहीं होती है और उनके तर्क तक हमारी पहुंच नहीं होती या ये हमारी समझ में नहीं आते। यह भी काफ़ी समस्यापूर्ण विषय है। ऐसे में प्रायः या तो विषय को पूरी तरह छोड़ देने का प्रलोभन होता है या अविवेकी और निरर्थक कहकर उसके बारे में सोचना ही बंद कर दिया जाता है। दूसरे समाजों पर अन्य लोगों द्वारा किए गए अध्ययनों के ज़रिए ऐसी समस्या का हल एक तरह से अब 'ज्ञात' है। उदाहरण के लिये पश्चिम में रक्त-प्रतिशोध और जादू-टोने जैसे कौतूहलपूर्ण तथ्यों का जब इतिहासकारों ने अध्ययन किया तो इनको समझने में उन्हें ऐसे तथ्यों के नृशास्त्रीय अध्ययनों से बहुत उपयोगी अंतर्दृष्टियाँ मिली।

अदृश्य को उजागर करना

तुलनात्मक विधि से हमें अदृश्य को उजागर करने में मदद मिलती है। शोध के दौरान आपको सदैव यह पता लगेगा कि कई रोचक बातें प्रायः वे होती हैं जो दिखाई नहीं देती और इनसे अवगत होना इतना आसान भी नहीं है। मैक्फार्लेन (2004: 97) ने रॉबर्ट स्मिथ (1983: 102) का उदाहरण दिया जिसने बताया कि एक जापानी विद्वान से पूछा गया कि आधुनिक जापान में पूर्वजों की पूजा अभी भी क्यों प्रचलित है। जापानी विद्वान ने उत्तर दिया कि 'यह बड़ा नीरस सवाल है। असली सवाल तो यह है कि पश्चिम में यह क्यों लुप्त हो गई।' स्पष्ट है कि दोनों ही प्रश्न रोचक हैं और हर शोधकार को अपनी दृष्टि से अदृश्य को उजागर करने की लालसा होती है।

इस रुचिकर भाग के अंत में, आइए अब सोचें और करें 9.2 को पूरा कर लें।

> **सोचें और करें 9.2**
>
> क) दुमोंट (1986:234) ने कहा, "मूल्यों की ठोस और पर्याप्त तुलना केवल उन्हीं दो प्रणालियों के बीच संभव है जो अपने आप में संपूर्ण हैं।" तुलनात्मक पद्धति के इस दृष्टिकोण के आधार पर सफलतापूर्वक तुलना करने के लिए सामाजिक संबंधों की कम से कम पाँच प्रणालियों के नाम बताइए।
>
> ख) अपरिचित के बारे में परिचय पाने में तुलनात्मक पद्धति किस तरह मदद करती है? बर्गेस (1982: 217) ने गणितज्ञ जी. पोल्या को उद्धृत किया जिसका सुझाव था कि किसी भी समस्या को सुलझाने के लिये हम अपनी स्मरणशक्ति को टटोलें कि ऐसी ही कोई समान समस्या मिले जिसका हल हमें मालुम है ताकि उसकी मदद से अपरिचित को समझा जा सके। ऐसे निराले तथ्यों के अध्ययनों के उदाहरण दीजिए जिनसे शोधकारों के अपने क्षेत्रों में समस्याओं को समझने में मदद मिली। अपने रोज़मर्रा के जीवन से ऐसे अनुभवों के उदाहरण दें।
>
> ग) विषमता और तुलना के बीच क्या अंतर है? यह तो स्पष्ट है कि ये दो अलग-अलग प्रक्रियाएं हैं। उदाहरणों के साथ इन अंतरों को समझाइये।

9.5 निष्कर्ष

इस इकाई में विषमता दिखाने और तुलना करने की संक्रियाओं में शामिल जटिल मुद्दों पर चर्चा करते हुए, हमने तुलनात्मक पद्धति के अनुप्रयोग के इतिहास पर विंहगम दृष्टि डाली। साथ में, हमने तुलनात्मक पद्धति को उन साधनों में से एक साधन के रूप में देखा जिनका प्रयोग सामाजिक वैज्ञानिकों ने सामाजिक वास्तविकताओं की अपनी व्याख्या को सुदृढ़ करने के लिये किया है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

9.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बेते, आन्द्रे. 2002. *सोशियोलॉजीः एसेज़ आन अप्रोच एंड मैथड।* आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; नई दिल्ली (समाजशास्त्र विषय के स्वरूप और सामाजिक जगत के अध्ययन हेतु समाजशास्त्रियों द्वारा प्रयुक्त पद्धतियों पर निबंधों के लिए देखें)

बेते, आन्द्रे. 2004. कंपेरिटिव मैथड एंड स्टैंड पॉइंट ऑफ़ द इन्वैस्टीगेटर। विनय कुमार श्री वास्तव (संपादित) *मैथेडॉलॉजी एंड फ़ल्डिवर्क,* ऑक्सफोर्ड यूनि. प्रैसः नई दिल्ली में पृष्ठ संख्या 112-131

इवन्स-प्रिचर्ड, ई.ई. 1963. *दि कंपेरिटिव मैथड इन सोशल एंथ्रोपोलॉजी।* एल. टी. हॉबहाउस मैमोरियल ट्रस्ट लेक्चर, 33

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 10
महिलावादी उपागम

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 सामान्य बोध के साथ संबंध; विचारधारात्मक अवस्थिति पर प्रश्न-चिन्ह
10.3 ऐतिहासिक संदर्भ
10.4 महिलावादी उपागम की विशेषताएँ
10.5 महिलावादी उपागमों में आत्मचिंतनपरकता
10.6 भारत में महिलावादी लेखन
10.7 निष्कर्ष
10.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इस इकाई 10 को पढ़ने के पश्चात आपके लिये संभव होगा:

- उन तरीक़ों के विश्लेषण हेतु आलोचना सहित एक अवधारणात्मक ढांचा प्रस्तुत करना जिनमें सामाजिक संस्थाएं, प्रचलन और वाद-संवाद सामान्यतः समाज में और विशेषतः भारत में महिलाओं एवं पुरुषों को तथा उनकी प्रस्थिति को परिभाषित करते हैं;
- समाजशास्त्रीय शोध में अति सामान्य रूप से पाई जाने वाली महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव की जमी-जमाई धारणाओं को सामने लाना;
- यह दिखाना कि किस तरह अभी भी आनुभविक यथार्थ के बावजूद महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव वाले संबंधों के बारे में केंद्रीय मान्यताएं ही सामाजिक जगत के संगठन को आकार देती हैं; तथा
- समाजशास्त्र में सामान्यरूप से तथा महिला पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के समाजशास्त्र में विशेष रूप से किए गए महिलावादी उपागम के कुछ योगदानों की चर्चा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

10.1 प्रस्तावना

इकाई 9 में सामाजिक शोध में तुलनात्मक पद्धति के महत्व की चर्चा करने के पश्चात अब हमने इकाई 10 में समकालीन सामाजिक शोध में महिलावादी उपागम के महत्वपूर्ण अनुप्रयोग की ओर ध्यान केंद्रित कियां है। यह कहा जा सकता है कि महिलावादी उपागम महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव के नज़रिये से सामाजिक जगत को देखने में हमारी मदद करता है। यह अन्य सोपानक्रमों और सामाजिक रूपों में समान रूप से पाया जाता है। सच है कि शास्त्रीय या क्लासिकीय समाजशास्त्रियों ने सामान्यतः महिलाओं के कार्यों पर विवेचना को अपने लेखन में शामिल नहीं किया। परिणामतः समाजशास्त्र विषय में महिलाओं के बारे में बहुत कम कहा गया। मार्क्स, दुर्खाइम और वेबर ने महिलाओं और परिवार पर भूले-भटके टिप्पणियाँ कीं। इसी कारण नई पीढ़ी के समाजशास्त्रियों में महिलावादी समाजशास्त्र के उदय ने अत्यधिक उत्साह व आशावादिता का संचार किया है।

इसकी सैद्धांतिक अवस्थिति का ख़ाका खींचने के बाद इकाई 10 में महिलावादी उपागम के ऐतिहासिक संदर्भ की चर्चा की गई है। इसके बाद इकाई लेखिका ने 1970 के दशक

से महिलावादी उपागम के विकास के तीन चरणों को प्रस्तुत किया है और फिर महिलावादी उपागम के विशेष लक्षणों का निरूपण किया है। महिलावादी शोध के लिए मारिया मीस द्वारा प्रदत्त शोध पद्धति परक मार्गदर्शी निर्देशों का उल्लेख किया गया है। अंत में भारत में महिलावादी शोध का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

10.2 सामान्य बोध के साथ संबंध; विचारधारात्मक अवस्थिति पर प्रश्न-चिन्ह

सभी सिद्धांतों और विधियों में निहित मान्यताओं को सुस्पष्ट करना अत्यावश्यक है। ज्ञान का समाजशास्त्र मानता है कि सामाजिक संस्थाओं और आस्थाओं के समान ज्ञान भी सामाजिक रूप से निर्मित होता है और इसीलिए सामाजिक वर्गों, जातियों, समूहों और समुदायों के साथ उसका एक अनिवार्य सहजीवी संबंध होता है। हालांकि प्रमुख मान्यताओं को समझना आसान है जो उन ज्ञान-पद्धतियों की विशेषताओं को बताती हैं जो सीमांती (marginal) होती हैं और प्रत्यक्षतः राजनीतिक समझी जाती हैं। पहले से स्थापित प्रभावी उपागमों के संदर्भ में यह बात सच नहीं है। अतः यह केवल उत्तर-औपनिवेशिक रचनाओं के वेगवाले प्रवाह में अब ऐसा प्रतीत होता है कि प्राच्यवादिता अथवा पाश्चात्यवादिता ने शास्त्रीय तुलनात्मक उपागमों पर अपनी छाप छोड़ी। तुलनात्मक पद्धति में छाई तटस्थता के विपरीत महिलावादी उपागम प्रत्यक्षतः राजनीतिक है। अवश्य ही शैक्षणिक और राजनीतिक उपागमों के बीच एक झूठी लेकिन लगातार खाई पैदा की गई है। यही तथ्य मार्क्सवादी या दलित या काले (black) परिप्रेक्ष्यों के बारे में भी सच होगा। किंतु महिलावादी उपागम के संदर्भ में विरोध प्रायः अधिक तीव्र है और हास-विनोद में उड़ा देने से लेकर अमानुषीय स्वरूप देने तक की प्रतिक्रियाएं देखने को मिलती हैं। ऐसी प्रतिक्रियाओं को ऐसे दूरगामी और मूलभूत चुनौतियों के संदर्भ में समझा जा सकता है जो रूढ़िगत ज्ञान प्रणालियों के समक्ष महिलावादी उपागम लेकर आता है।

ये चुनौतियाँ किसी भी मौजूदा समाज में प्रचलित सामान्य बोध के विपरीत हैं। यहाँ इस बात पर ज़ोर दिया है कि ये केवल पारंपरिक और आधुनिक पितृसत्तात्मक सामान्य बोध के ही विपरीत नहीं है बल्कि यह आधुनिक किंतु प्रबल सैद्धांतिक उपागमों के भी विपरीत है (देखें कोष्ठक 10.1)।

MAADHYAM IAS

कोष्ठक 10.1: परंपरागत और आधुनिक पितृसत्तात्मक सामान्य बोध के उदाहरण

परंपरागत पितृसत्तात्मक सामान्य बोध का दृष्टान्त होगा कि महिलाएं छोटे दिलवाली तथा संकीर्ण मनोवृत्ति की होती हैं। अपनी रचना, घरे बाहिरे, में रवींद्रनाथ टैगोर ने इसका उपयुक्त उत्तर दिया था कि हाँ वे ऐसी हैं, एकदम वैसे ही जैसे चीनी महिलाओं के बंधे पैर थे.. मुड़े हुए और बेडौल।

आधुनिक पितृसत्तात्मक सामान्य बोध का उदाहरण होगा कि महिलाओं को शिक्षित होना चाहिए ताकि वे बेहतर गृहणियाँ बन सकें। आपको तो मालुम ही होगा कि भारत में विवाह विज्ञापन ऐसी मांगों से भरे होते हैं कि आधुनिक लेकिन पारंपरिक वधू चाहिए। दूसरे शब्दों में, आधुनिक और परंपरागत महिलाओं के चुने हुए गुणों को मिलाकर पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चालू रखने की ख़ातिर आवश्यकतानुरूप सेवाएं मिलनी चाहिए।

यहाँ पर आपका विधिसंगत प्रश्न हो सकता है कि कोष्ठक 10.1 के उदाहरण किस प्रकार महिलावादी उपागम को समझने में हमारी मदद करते हैं। इस स्तर पर यहाँ इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये मेरा आपसे एक प्रश्न है जो मैंने प्रायः अपने छात्र-छात्राओं से पूछा है। हमारी चर्चा इस प्रकार चलती है, 'शिक्षित महिलाओं की संख्या में वृद्धि के कारण तलाक़ की दरों में वृद्धि हो रही है।'

उपर्युक्त कथन पर अलग-अलग प्रतिक्रियाएं होती हैं। कक्षा के कुछ विद्यार्थियों का पूरी तरह से यह मानना है कि हाँ शिक्षित महिलाएं ही घरों के उजड़ने के लिए उत्तरदायी हैं। जबकि कुछ छात्र-छात्राओं को इस कथन में निहित अर्थ से परेशानी होती है क्योंकि निहितार्थ है कि महिलाओं को शिक्षित नहीं होना चाहिये। कुछ अन्य छात्र-छात्राओं का शोध पद्धतिपरक बिंदु है कि उपरोक्त परिक्कल्पना में दिए परिवर्तियों को पुनः निर्मित करना चाहिये। दूसरे शब्दों में, क्या इस कथन को नीचे दिये दूसरे रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है?

'तलाक़ की दरों में वृद्धि इसलिए हो रही है क्योंकि शिक्षित पुरुष अपनी पत्नियों को अपने बराबर मानने के लिये तैयार नहीं हैं।' या इसी बात को इस तरह से भी कहा जा सकता है कि 'तलाक़ की दरों में वृद्धि इसलिए हो रही है क्योंकि अब अधिक महिलाएं मौन रह कर कष्टप्रद जीवन सहने के स्थान पर ख़राब वैवाहिक जीवन के बंधनों को तोड़ने के लिये तैयार हैं।'

उपरोक्त उदाहरणों को प्रस्तुत करने का उद्देश्य है कि दैनिक सामान्य बोध और समाजशास्त्रीय दृष्टि से समझने के बीच पाई जाने वाली समरूपता को उजागर किया जा सके। यह आश्चर्यजनक नहीं हैं कि टाल्कट पार्सन्स के परिवार के मॉडल में यह माना गया है कि महिलाओं की भूमिकाएं वाचक की और पुरुष की भूमिकाएं साधक की होती हैं। मुद्दा यह नहीं है कि यह आनुभविक वास्तविकता के अनुरूप नहीं है बल्कि यह विद्यमान को समस्यात्मक रूप में न लेकर उसे मान लेता है। इस प्रकार परंपरागत और आधुनिक पितृसत्तात्मक मानक प्रबल सैद्धांतिक नियमों में अंतर्निहित हो जाते हैं (देखें जॉनसन 1991)। स्थापित विधियों का आधिपत्य इतना ज़बरदस्त था कि ये स्वाभाविक प्रतीत होने लगे (देखें हार्डिंग 1987: 2-14)। इससे अधिक स्पष्ट और प्राकृतिक और क्या हो सकता है कि महिलाओं एवं पुरुषों में अंतर होते हैं? ऐसी स्थिति में 'शारीरिक रचना को ही नियति' मान लेना सही लगा और श्रम के विभाजन को मूलतः जैविक समझा गया (देखें कोष्ठक 10.2)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 10.2: 'शारीरिक रचना ही नियति है' के उदाहरण

1980 के दशक के आरंभ में सामाजिक सेवा के लिए राज्य के ब्रिटिश सचिव पैट्रिक जैन्किन ने कामकाजी महिलाओं पर दिये टेलिविज़न इंटरव्यू के दौरान कहा, "सच कहूँ तो मैं नहीं मानता कि माताओं को काम करने का उतना ही अधिकार है जितना पिताओं को है। यदि भगवान को हमें समान अधिकार वाला बनाना होता तो उसने महिला और पुरुष की रचना न की होती। ये तो जैविक तथ्य हैं, छोटे बच्चे अपनी-अपनी माताओं पर आश्रित होते हैं (रोज़ 1994:19 में उद्धृत)

शास्त्रीय और नवशास्त्रीय आर्थिक चिंतन में हमें मिलता है कि इतिहास में बहुत पहले ही महिलाओं की मज़दूरी और उनके रोज़गार की दशाओं पर चर्चा हुई है। उदाहरण के लिए स्मिथ (1776) ने नोट किया कि महिलाएं मज़दूरी के लिए काम करती हैं लेकिन उसके विचार में परिवार का पालन-पोषण करने के लिए पुरुष को पर्याप्त मज़दूरी मिलनी चाहिए। उसने महिलाओं की पुनुर्रुत्पादन वाली भूमिकाओं को समाज के लिए अनिवार्य माना। ऐडम स्मिथ का मानना था कि महिलाओं में आर्थिक विषयों के संबंध में तर्कसंगत निर्णय लेने की क्षमता नहीं होती।

अति संवेदनशील और जमी-जमाई संरचनाओं को किस प्रकार महिलावादी उपागम आड़े हाथों लेकर उन्हें चुनौती देता है और फिर प्रतिरोध एवं उलझने पैदा होती हैं – यह दर्शाने के लिए हमने एक और आम उदाहरण प्रस्तुत किया है। लोगों का अक्सर कहना है कि विवाहोपरांत अपना कुलनाम (surname) न बदलने की इच्छुक महिलाएं एक छोटी सी बात

संबंध है। यह अत्यंत स्वाभाविक है कि विकास से संबंधित, समाज के विभिन्न भागों के विचारों को शामिल करने और उनका प्रतिनिधित्व करने की इच्छा के चलते क्षेत्र कार्य करने की वास्तविक प्रणाली में परिवर्तन होगा। इस प्रकार सहभागी विधि का अर्थ सहभागी क्षेत्र का मूल्यांकन हो जाता है। आइए, संक्षेप में हम त्वरित ग्रामीण मूल्यांकन (आर आर ए) और सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन (पी आर ए) के अधिक व्यापक रूप से प्रयुक्त किए जाने वाले प्रचलित रूपों पर जानकारी लें।

त्वरित ग्राम मूल्यांकन या आर आर ए लघु समयावधि में जानकारी एकत्र और विश्लेषित करने के लिए लोगों को संगठित करने का एक तरीक़ा है। इसको जांच पड़ताल की ऐसी व्यवस्थित प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो नई जानकारी पाने के लिए प्रयुक्त होती है ताकि सीमित समयावधि में अनुमान, प्राक्कल्पना, पर्यवेक्षण और निष्कर्ष निकाले और अभिपुष्ट किए जा सकें। इसमें परिस्थितियों से समायोजन करने के लिए लचीलापन होता है क्योंकि यह प्रत्येक मामले में लागू करने के लिए विधियों के मानक सैट की सिफ़ारिश नहीं करता। एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति में अलग-अलग विधियों का प्रयोग होता है और स्थानीय दशाओं, स्थानीय समस्याओं और सामने मौजूद उद्देश्यों के अनुसार विधि विशेष का चुनाव किया जाता है।

कृषिक विकास की शोध पद्धति के रूप में आर आर ए को शीघ्र प्राप्त होने वाले क्षेत्रोन्मुख परिणामों के लिए विकसित किया गया था। इसके उद्देश्य निम्नलिखित थे:

i) ग्रामीण समुदाय की कृषि संबंधी और अन्य आवश्यकताओं का मूल्यांकन;

ii) ऐसी आवश्यकताओं के अनुकूल शोध के क्षेत्रों की प्राथमिकताओं का निर्धारण;

iii) विकासात्मक आवश्यकताओं और कार्ययोजनाओं की संभाव्यता को आंकना;

iv) कार्य योजनाओं का कार्यान्वयन, अनुश्रवण करना और उनका मूल्यांकन करना।

सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन (पी आर ए) ग्रामीणों के साथ अंतःक्रिया करने, ग्रामीणों को समझने और उनसे सीखने के लिए एक शोध पद्धति है। इसमें सिद्धांतों का समुच्चय, संचार की प्रक्रिया है। साथ में यह विधियों की एक सूची है जिससे ग्रामीणों की भागीदारी प्राप्त होती है। इस भागीदारी की प्रक्रिया से मिली सीख का उपयोग कर ग्रामीणों के लिए अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत कर पाना संभव होता है। यह पद्धति सहभागी प्रक्रिया को शुरू करती है और इसको चलाते रहने का प्रयास करती है। पी आर ए को कभी-कभी सहभागी त्वरित मूल्यांकन के रूप में भी जाना जाता है जहाँ 'भागीदारी' और 'त्वरित' दोनों पर बल दिया जाता है। सामग्री एकत्रित करने के संदर्भ में त्वरित पर अधिक बल दिया जाता है। इसकी तुलना परंपरागत सर्वेक्षण विधियों से की जाती है और तर्क दिया जाता है कि परंपरागत सर्वेक्षण से लंबा समय लगता है तथा उसकी जानकारी पूर्णतः विश्वसनीय नहीं होती है क्योंकि उसमें केवल सर्वेक्षण कर्मचारी ही जानकारी करते हैं कभी-कभी सर्वेक्षण कर्मचारी बिना प्रश्न पूछे मन से उत्तर भर देते हैं।

11.5 निष्कर्ष

सहभागी विधि से अनेकों महत्वपूर्ण बातें सीखी जा सकती हैं। फिर भी यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि इस विधि से जादुई छड़ी जैसे प्रभाव की अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। यदि इसे अंधाधुंध और बिना पर्याप्त सैद्धांतिक प्रशिक्षण और ऐतिहासिक जागरूकता के प्रयोग किया जाने लगे तो सहभागी विधि से एक ख़तरा है कि यह सूक्ष्म स्तर के अध्ययनों का सुलभ साधन बना सकता है। ऐसे अध्ययन व्यापक जगत से बिल्कुल मेल नहीं खाते। व्यापक जगत से यह अछूतापन सदैव ही ख़तरे की घंटी रहा है लेकिन अब भूमंडलीय

MAADHYAM IAS

करण या वैश्विकरण के युग में तो ऐसा और भी है। सहभागी उपागम के संदर्भ में देखने से मालुम पड़ता है कि सहभागी उपागम केवल बिना समझी हुई तकनीकों (पी आर ए) के सैट में तीव्रता से बदलता जा रहा है। साथ में उन ज्ञानमीमांसीय मान्यताओं से हटता जा रहा है जिनके सहारे यह अस्तित्व में आया था। यद्यपि मूल्य-तटस्थता की इसकी धुआंधार समालोचना महत्वपूर्ण है, ग़ैर-सरकारी संगठनों और 'दाता' एजेंसियों की ज़रूरतो और कार्यसूची से पूरी तरह जुड़े हुए जल्दबाज़ी में किये शोध के बारे में सतर्क होना भी आवश्यक है। शैक्षिक शोध के महत्व को तो समझना ही होगा। पश्चिमी देशों में विशुद्ध शोध के लिए मान्यता विद्यमान है, जो किसी भी लोकतांत्रिक समाज की पुष्टि के लिए अनिवार्य आवश्यकता है। केवल ग़ैर-सरकारी संगठनों की संस्था के माध्यम से नागर समाज की नूतन संरचना का उद्‌भव ही महत्वपूर्ण नहीं है। इस संरचना का सहभागी उपागम समर्थन करता है, परंतु इसी प्रकार विश्वविद्यालयों में सामाजिक विज्ञान विद्यापीठों जैसे सिविक संस्थाओं के पुरातन स्वरूप भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। सामाजिक वैज्ञानिक शोध को सहभागी विकास कार्यक्रमों के साधनों के रूप में घटाना लोकतंत्र और विकास दोनों ही के लिए विनाशकारी होगा। इस बारे में मुखर्जी (2000: 50) की सलाह है "सहभागी शोधकारों को सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों से सामाजिक यथार्थ की अपनी समझ बनाने की ज़रूरत है जिससे यह विवेचन किया जा सके कि उनका शोध परिवर्तन और विकास के किस स्तर पर टिका है। क्या यह केवल लक्षणों के स्तर पर वृहत रूप से समस्या समाधान करने वाला है या व्यवस्थापरक स्तर तक भी पहुँच रहा है?"

अंत में, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सहभागी अनुसंधान का निर्णायक लक्षण शोधकारों की अभिवृत्तियों से जुड़ा है। उनकी अभिवृतियाँ ही शोध के कार्यकलापों के अवधारणीकरण और उन्हें सम्पन्न करने के रूप को निर्धारित करती हैं। इस अर्थ में, सहभागी शोध व्यावसायिक और व्यक्तिगत दोनों ही चुनौतियाँ पैदा करता है जो ज्ञान के उत्पादन और लेखक होने के दावे से जुड़े मुद्दों से परे जाती हैं।

MAADHYAM IAS

कृपया सोचिये और करिये 11.3 को पूरा करना न भूलें।

सोचिये और करिये 11.3

यदि सहभागिता की परिभाषा यह दी जाये कि, "प्रदत्त सामाजिक परिस्थितियों में संसाधनों और नियामक संस्थाओं के ऊपर नियंत्रण को बढ़ाने के संगठित प्रयास, जो वे समूह और आंदोलन करते है जिनके पास अभी तक ऐसा नियंत्रण करने की ताक़त नहीं थी।" तो अपने शोध में सहभागी पद्धति मूलक भागीदारी के कितने आयामों को आपके द्वारा शामिल किया जायेगा? ऐसे आयामों का एक उदाहरण है सामाजिक वर्गों/हित समूहों के बीच मुठभेड़ के रूप में भागीदारी अथवा स्थानीय तथा महानगरीय हितों के बीच टक्कर के रूप में भागीदारी। ऐसे ही अन्य आयामों का पता लगाने का प्रयास कीजिए।

11.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मुखर्जी, पार्थ नाथ, 2000, *मैथोडॉलजी इन सोशल रिसर्च: डाइलैमाज़ एंड पर्सपेक्टिव्स*, सेज़ प्रकाशन इंडिया प्राइवेट लिमिटेड: नई दिल्ली (विशेष रूप से पृष्ठ 13-84)

चौधरी, मैत्रेयी, 2003, *द प्रेक्टिस ऑफ़ सोशलॉजी*, ओरियेन्ट लांगमेन: नई दिल्ली।

शब्दावली

(शब्दावली के शब्दों की व्याख्या इंटरनेट और अन्य स्रोतों पर उपलब्ध जानकारी की सहायता से निर्मित की गई है)

कार्य शोध (Action Research): यह एक त्रि चरणीय चक्करदार प्रक्रिया है i) नियोजन बनाना जिसमें पर्यवेक्षण शामिल है, ii) कार्रवाई करना, iii) कार्रवाई के परिणामों के बारे में तथ्यों की प्राप्ति करना। यह ऐसी प्रक्रिया हैं जिससे इसका अनुप्रयोग करने वालों को अपने निर्णयों एवं कार्यों के मार्गदर्शन, उन्हें सुधारने एवं उनके मूल्यांकन के उद्देश्य से अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करने का अवसर मिलता है। व्हाइटहैड (1988: xi) के अनुसार "व्यावसायिक ढंग से किये विकास के लिये अपनाये कार्य शोध उपागम की शक्ति समुदाय विशेष के सदस्यों के बीच होने वाले सर्जनात्मक एवं आलोचनात्मक संवाद में प्रकट होती है। ऐसे समुदाय के सदस्य होते हैं, अध्यापक, शिक्षाविद्, अभिभावक, उद्योगपति एवं राजनीतिज्ञ। कल्पना की ऊँची उड़ानों के माध्यम से हमारा आगे बढ़ने का हौसला जागता है। हमारे विचारों की विस्तृत आलोचना में शामिल हमारी त्रुटियां ही हमें सिखाती हैं।

चित्तविभ्रम (Alienation): इसका शब्दिक अर्थ है "अलग होना" या पृथक्करण। इस शब्द का साहित्य में अक्सर प्रयोग किया जाता है और कार्ल मार्क्स ने इसे समाजशास्त्रीय अर्थ दिया है। मार्क्स ने इसे ऐसे समाजों की संरचना से जुड़े प्रतिरूप के रूप में स्पष्ट किया है जिनमें उत्पादक को उत्पादन के साधनों से अलग कर दिया जाता है और उसमें प्राणहीन (पूंजी), प्राणवान (कामगार) पर हावी रहती है। आइए एक फ़ैक्टरी में जूते बनाने वाले का उदाहरण लें। फ़ैक्ट्री में जूते बनाने वाले जूतों का स्वयं अपने लिये उपयोग नहीं करते। इस तरह उनका सृजन एक ऐसी वस्तु बन जाता हैं जोकि उनसे अलग है। यह अपने आप में एक सत्ता है जो कि उसके सर्जनहार से अलग है। ये जूते केवल इसलिये नहीं बनाते क्योंकि इससे उनकी सृजन और कार्य करने की लालसा की तुष्टि होती है। यह केवल उनके जीवन-निर्वाह का साधन है। फ़ैक्ट्री के कामगारों के लिए इस तरह का काम वस्तुनिष्ठ हो जाता है क्योंकि फ़ैक्ट्री में उत्पादन की प्रक्रिया बहुत से भागों में बँटी होती है और अलग-अलग लोगों में पूरे काम के छोटे छोटे हिस्से बाँट दिये जाते हैं। चूंकि हर कामगार पूर्ण कार्य का केवल एक भाग ही करता है और उसका काम इतना मशीनी हो जाता है कि उसकी अपनी सृजनात्मकता ही खो जाती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अनुरूपता (Analogy): अनुरूपता तुलना पर आधारित होती है। इसमें एक बात का हवाला दे कर दूसरी बात को समझाया जाता है इसलिए यह वास्तव में शोध करने हेतु ऐसी युक्ति है जिससे सोचने एवं समझने में सहायता मिलती है। विषय के रूप में समाजशास्त्र का कोई अस्तित्व नहीं होता यदि लोगों ने यह अनुभव नहीं किया होता कि प्रतिरूपों को एक ऐसा वर्ग होता है जो व्यक्ति-विशेष या जैविक भूल की बजाय सामाजिक अतःक्रिया का उत्पाद है। प्रकार्यवाद ऐसा उपागम है जो इस विचार को खुलकर स्पष्ट करता है और जिसका तर्क है कि समाज अपने भागों के योगफल से अधिक है।

बुनियादी विचार है कि जब किसी भी समाज के बुनियादी निर्माण खेड़ों को सामाजिक संरचना गठित करने के लिए एक साथ रखा जाता है तब

- इन भागों को आपस में जोड़ने के दौरान ही अन्य प्रतिरूपों (सामाजिक तथ्यों) की उत्पत्ति भी होती है।
- यदि समाज की समग्रता को निपुणतापूर्वक काम करना है तो इन भागों का होना बहुत आवश्यक है।

एंग्लो सैक्सन (Anglo-Saxon): जर्मनी के उत्तर-पश्चिम तट में लोअर सैक्सनी के प्रायद्वीप एंगेल्न में रहने वाली जर्मनमूल की जनजातियों का समूह एंग्लो–सैक्सन कहलाता था। पांचवी शताब्दी के मध्य से ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य तक दक्षिणी ब्रिटेन में इन्होंने वर्चस्व क़ायम

किया और आधुनिक अंग्रेजी राष्ट्र, भाषा और संस्कृति का यह प्रारंभिक आधार है। एंग्लो-सैक्सन शब्द किंग अल्फ़ेड द ग्रेट के ज़माने से चला आ रहा है जिसने लगता है कि रेक्स एंगुल सेक्मोनम उपाधि का बारंबार प्रयोग किया था इस उपाधि की उत्पत्ति का पूरी तरह पता नहीं है। माना जाता है कि 886 में अल्फ़ेड के अधीन विविध राज्यों के अंतिम संघीकरण के परिणामस्वरूप इसकी उत्पत्ति हुई है।

अप्रतिमानता (Anomie): समाज की ऐसी अवस्था जिसमें आचरण एवं विश्वास के मानकीय मानक कमज़ोर हों या जिनका अभाव हो। ऐसी स्थिति किसी व्यक्ति की भी हो सकती है जिसमें उसे विमुखता एवं तनाव महसूस होता है।

द्विआधारी (Binary): द्विआधारी सांख्यिकीय पद्धति जिसमें दो के मूलांक का प्रयोग किया जाता है। द्विआधारी संख्यात्मक पद्धति में प्रत्येक अंक दो भिन्न मूल्यों का हो सकता है। आमतौर पर द्विआधारी संख्याओं को दर्शाने के लिए O और I का प्रयोग किया जाता है। विद्युत-मंडल में इसके सीधे प्रयोग की सुविधा के कारण प्रायः सभी कम्प्यूटरों में आजकल द्विआधारी प्रणाली का उपयोग होता है। इसी प्रकार समाजशास्त्रियों ने भी सामाजिक विश्लेषण में इस पद्धति का प्रयोग किया है।

पूंजीवाद (Capitalism): ऐसी आर्थिक पद्धति जिसमें वस्तुओं पर निजी व्यक्ति या निगम का स्वामित्व होता है। इसमें राज्य नियंत्रण की बजाय निजी निर्णय द्वारा निवेश किया जाता है और मुक्त बाज़ार में प्रतियोगिता द्वारा मुख्यतया वस्तुओं का मूल्यीकरण, उत्पादन तथा वितरण किया जाता है। कार्ल मार्क्स के लिए पूंजीवाद समाज की एक ऐतिहासिक अवस्था है जिसमें उत्पादन के साधन मुख्यतया मशीनरी, श्रम और पूंजी होते हैं।

अंतविवेकशीलता (Conscientisation): पाडलो फ़्रेर के शोध के शैक्षिक एवं राजनीतिक पहलुओं के संदर्भ में अंतर्विवेकशीलता का उद्देश्य समूहों के संसाधनों एवं ज्ञान को सशक्त करना है। यह सशक्तीकरण सीखने की उस प्रक्रिया को सहज या सरल करने से आता है जो आलोचनात्मक, संक्रामी एवं संवादात्मक चेतना बनने के बाद "मुक्ति" की संभावना बन जाता है। 'अंतर्विवेकशीलता' की धारणा मुख्यतया दक्षिण अमेरिका जैसे बहुत से देशों में प्रचलित है जो कि उत्पीड़ित "ज्ञान" में निहित आस्था पर आधारित है और यह ऐसे नेता की भूमिका पर सवालिया निशान लगाता है जो संवादों के माध्यम से सीखने–सिखाने का काम करता है।

MAADHYAM IAS

विनिर्मितीकरण (Deconstruction): यह जैक देरिदा से जुड़ी आलोचनात्मक विश्लेषण की एक युक्ति है। दर्शनशास्त्रीय एवं साहित्यिक भाषा में शामिल कभी न चुनौती दी गई तात्विक अवधारणाओं एवं आंतरिक प्रतिवादों का भंडाफोड़ करने का इसका लक्ष्य है। परंतु चूंकि विनिर्मितीकरण का उपागम भाषा की पारदर्शिता (और विशेषरूप में शब्द के एकल अंतिम अर्थ पर पहुँचने की योग्यता) को चुनौती देता है इसलिए इस उपागम के मुख्य प्रतिपादकों को यह परिभाषा ठीक नहीं लगेगी। विशेष रूप से देरिदा ने इस शब्द को परिभाषित करने से बचता ही रहा और उसने यह भी भरसक कोशिश की कि बाद के शिक्षाविद विनिर्मितीकरण को सुसंगत युक्ति या पद्धति न बनायें। परिणामस्वरूप इस शब्द का पूरे संतोष के साथ वर्णन करना असंभव है। फिर भी पिछले कई वर्षों से बहुत सी महत्वपूर्ण विषयवस्तुएं उभर कर सामने आई हैं। उत्तर आधुनिकतावाद एवं आलोचनात्मक सिद्धांतों की कुछ शाखाओं के अनुसार विनिर्मितीकरण मूलपाठ का वह अनिश्चित गुणधर्म है जिसमें पश्चिमी लोगों को कानों को लगता है कि मूल पाठ में दो या अधिक स्वर बोल रहे हैं। इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम उत्तर-संरचनावादी दर्शनशास्त्री देरिदा ने किया था। उसने जो शुरू किया उसे आज आम भाषा में विनिर्मितीकरण पाठ (रिकन्स्ट्रक्शन रीडिंग) कहते हैं। पश्चिमी दर्शनशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक कृतियों के बहुत से विविध स्वरों को बिना द्विआधारी विरोध में वर्गीकृत किए उसने विनिर्मितीकरण में निरूपित करने का प्रयास किया। मेरियम वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार विनिर्मितीकरण (डिकन्सट्रक्शन) "साहित्यिक आलोचना की ऐसी विधि है जो यह मान कर

चलती है कि भाषा का अर्थ बाहरी ऐसी यथार्थ की बजाय अपने तक ही सीमित होती है। यह अर्थ मूलपाठ की बहुल द्वंद्वकारी व्याख्याओं का दावा करता है। लेखक के मंतव्य की बजाय मूलपाठ में भाषा के प्रयोग के दर्शनशास्त्रीय, राजनीतिक या सामाजिक निहितार्थ पर ऐसी व्याख्या को यह अर्थ आधार प्रदान करता है।"

निगमनात्मक (Deductive): तार्किक सोच से निष्कर्ष निकालना या पूर्वकथित तथ्य से निष्कर्ष का अनुमान लगाना।

वाद-संवाद (Discourse): सामाजिक विज्ञान में वाद-संवाद (डिस्कोर्स) को संस्थागत प्रकार का चिंतन कहा गया है या कहें कि एक सामाजिक सीमा परिभाषित करनी है कि विषय विशेष के बारे में क्या कहा जाये। ऐसी सोच सभी चीजों पर हमारे विचारों को प्रभावित करती है। अन्य शब्दों में ऐसे वाद-संवाद से बचना मुश्किल है। जैसे, विविध छापामारों के आंदोलनों के बारे में दो विशिष्ट रूप से भिन्न चिंतन में एक उन्हें 'स्वतंत्रता सेनानी' मानेगा तो दूसरा उन्हें 'आंतकवादी' कहेगा। अन्य शब्दों में चयनित वाद-संवाद शब्दावली, अभिव्यक्ति और शायद संप्रेषण के लिए अपेक्षित शैली भी प्रदान करता है।

वाद-संवाद गूढ़ रूप से शक्ति एवं राज्य के विविध सिद्धांतों से घनिष्ठ रूप से संबद्ध है, कम से कम तब तक जब तक कि इसका अर्ध-यथार्थ को परिभाषित करने के रूप में देखा जाता है।

वाद-संवाद की सामाजिक अवधारणा को फ्रांसीसी सामाजिक दर्शनशास्त्री माइकल फूको (1926-1984) के कार्य से जोड़ा जाता है।

मोहभंग (Disenchantment): कल्पना लोक के भ्रमकारी विचरण से मुक्त होना। वेबर का मोहभंग (डिस्एनचेंटमेंट) में है कांट की तार्किकता की हार होना। कांट का कहना है कि इतिहास में तर्क से 'प्रगति' उत्पन्न होगी और अधिकाधिक तर्क से 'लक्ष्यों के तार्किक राज्य' बनेगा। वेबर का (निष्ठावानों का प्यूरिटन) अध्ययन इस दावे का परीक्षण करता है। जहाँ एक ओर कांट एवं चैनिंग पूर्वनियति के दैवी 'नियतिवाद' को तर्क एवं 'स्वतंत्रता' के अपमान के रूप में देखते हैं, वहीं दूसरी ओर कैल्विनवादी पूर्वनियति के अपमान को 'विचारों' के 'मुक्त बल' के रूप में देखते हैं अर्थात् तर्क और अपने उद्यम में अच्छे कामों में ईश्वर की महिमा देखना। लेकिन यह प्रतिक्रिया तर्कपूर्ण-तपस्वी आदर्शलोक को बनाने में असफल है जो कि कांट का पूर्वानुमान है और इसके स्थान पर पूंजीवाद की भौतिक विषयासक्ति की ही उत्पत्ति होती है। इस तरह तर्क तो असंगत हो जाता है क्योंकि यह अपने निजी प्रतिवाद की पूंजीवादी दशाओं को सृजित करता है क्योंकि संक्षेप में स्वतंत्रता से नियतिवाद उपजता है।

दोहरा भाष्यशास्त्र (Double hermeneutics): सामाजिक विज्ञान के तार्किक दृष्टि से अनिवार्य भाग के अर्थ के दो दायरों को एक-दूसरे से काटने से दोहरा भाष्यशास्त्र जुड़ा है। गिडन्स की दोहरे भाष्यशास्त्र की अवधारणा से यह भी पता चलता है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था को बनाने वाली शक्तियों को बदलना संभव है। इस अवधारणा के अनुसार राष्ट्र-राज्य, ऋण, धन आदि सभी वे वस्तुएं जिन्हें समाजशास्त्रियों द्वारा समझा जाता है या व्याख्यायित किया जाता है, वह स्वयं पहले से ही सामाजिक रूप से निर्मित यथार्थ हैं। ये यथार्थ अपने अस्तित्व के लिए संस्थाओं पर निर्भर करते हैं, सामाजिक रूप से निर्मित यथार्थ के सिद्धांत में (जॉन सियर्ल ने संस्थागत तथ्यों की परिभाषा दी है)। फलस्वरूप, वैश्विक बाज़ार अर्थव्यवस्था के प्रत्येक तत्व में बदलाव लाया जा सकता है। सामान्य रूप से गिडन्स द्वारा सामाजिक विज्ञान में यंत्रवादल चिंतन की दसियों साल से की जाने वाली समीक्षा से निष्कर्ष निकलता है कि मनुष्यों द्वारा सामाजिक संस्थाओं का निर्माण होता है। गिडन्स के द्वारा सविस्तार विकसित व्याख्यात्मक समाजशास्त्र में सदैव संस्थाओं की समझ एवं निर्माण में चयन एवं चिंतनशील स्व-नियमन के तत्वों पर ज़ोर दिया गया है।

डोक्सा (Doxa): डोक्सा का अर्थ है समाज के पूर्वमान्य (taken for granted) सच और राय का अर्थ है ऐसे सच जिनपर सवाल ही नहीं उठाये गये और इनका वह भाग जिस पर खुले आम चर्चा की जा सकती है।

संरचना-द्वैत (Duality of Structure): संरचना उस आचरण का माध्यम तथा परिणाम है जिसे संरचना ही बारम्बार संगठित करती है। सामाजिक प्रणालियों के संरचनात्मक गुणों का कार्य के बाहर कोई अस्तित्व नहीं होता बल्कि उत्पादन तथा पुनः उत्पादन में ही ये सदा लिप्त होते है। यही संरचना की द्वैत प्रकृति है।

प्रत्यक्ष (Empiricism): इसे आमतौर पर आधुनिक वैज्ञानिक विधि का आधार बिंदु कहा जाता है अर्थात हमारे सिद्धांत हमारी आस्था की बजाय विश्व के हमारे प्रेक्षण पर आधारित होने चाहिए। इसका अर्थ है विशुद्ध निगमनात्मक तर्क की बजाय प्रत्यक्षवादी शोध और आगमनात्मक तर्क।

प्रत्यक्षवादी या आनुभविक (Empirical): विज्ञान अर्थात प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान के लिये प्रयुक्त विशेषण जिसका अर्थ है ऐसी प्राक्कल्पनाओं का उपयोग जो प्रेक्षण या प्रयोग के आधार पर सिद्ध या असिद्ध घोषित की जा सकें।

प्रबोधन (Enlightment): यद्यपि बौद्धिक आंदोलन 'प्रबोधन' आमतौर पर अट्ठारहवीं शताब्दी से संबद्ध है लेकिन इसकी जड़ें इससे भी पहले की हैं। लेकिन ऐसे आधारों को ढूंढने से पहले हमें इस शब्द को परिभाषित करना होगा। यह दुर्लभ ऐतिहासिक आंदोलन है जिसका अर्थ उसके नाम में ही छिपा है। कुछ विचारकों एवं लेखकों (मुख्यतया लंदन एवं पेरिस के) का मानना था कि वे अपने देशवासियों से अधिक बौद्धिक हैं और उनका काम कम बौद्धिक को अधिक बौद्धिक बनाना था।

उनका मानना था कि मानव तर्क का प्रयोग अज्ञानता, अंधविश्वास और अत्याचार से जूझने और बेहतर विश्व बनाने के लिए किया जा सकता है। उनकी चोट के मुख्य निशाने थे पीढ़ी दर पीढ़ी चले आ रहे अभिजात-वर्ग द्वारा समाज पर वर्चस्व एवं धर्म। फ्रांस में धर्म का अर्थ था कैथलिक चर्च, जिसे इस आंदोलन के तहत् पूरी तरह से शक्तिहीन करने का बीड़ा उठाया गया था।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संतुलन (Equilibrium): प्राकृतिक या सामाजिक विज्ञानों में परस्पर जुड़े प्रतिरूपों की एक संख्या विशेष को संतुलन कहते है। साधारणतः एक प्रणाली तब संतुलन की अवस्था में होती है जब उस प्रणाली पर पड़ने वाले सारे प्रभाव दूसरे प्रभावों के परिणाम से अप्रभावी हो जाते हैं। स्थिरता इसी से जुड़ी एक और अवधारणा है। संतुलन की अवस्था में संभव है कि स्थिरता हो और यह भी संभव है कि स्थिरता न हो।

नृजातिकेंद्रिकता (Ethnocentrism): इसका अर्थ है मनुष्य की अपनी संस्कृति के परिप्रेक्ष्य से विश्व को देखने की प्रवृति। बहुत विचारकों का मानना है कि हर समाज में नृजातिकेंद्रिकता पाई जाती है। विडम्बना यह है यही ऐसा कुछ है जो सभी संस्कृतियों में समान रूप से पाया जाता है।

नृजाति-शोधपद्धति (Ethno-methodology): यह नवीन समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य है। इसका प्रतिस्थापन 1960 के आरंभ में अमेरिकी समाजशास्त्री हैरल्ड गारफ़िंकल ने किया था। इस पर उसके विचार उसकी पुस्तक, स्टडीज़ इन एथनोमैथेडालॉजी, (1967) में नज़र आते हैं। इसका साधारण अर्थ ऐसे तरीक़ों के अध्ययन से है जिनसे लोगों को अपने सामाजिक जगत का बोध होता है। एक महत्वपूर्ण अर्थ में यह अन्य समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्यों से भिन्न है। यद्यपि प्रकार्यवादी, मार्क्सवादी एवं प्रतीकात्मक अंतक्रियावादी सभी एक दूसरे से भिन्न हैं फिर भी उन सभी का मानना है कि सामाजिक जगत अनिवार्यतया क्रमबद्ध है अर्थात समाज में व्यवहार एवं अंतःक्रिया के विन्यास तितर-बितर एवं गोरखधंधे वाले होने की बजाय नियमित एवं व्यवस्थित हैं। निसंस्देह प्रकार्यवादी, मार्क्सवादी तथा अंतःक्रियावादी सभी विभिन्न तरीक़ों से इस सामाजिक व्यवस्था का वर्णन करते हैं। प्रकार्यवादियों ने इसे समाज में मूल्य सर्वसम्मति का

परिणाम माना है जो सुनिश्चित करता है कि व्यवहार स्वीकृत प्रतिमानों के अनुसार चलता रहे। मार्क्सवादियों ने इसे एक वर्ग का दूसरे वर्ग के अधीन होने के परिणाम के रूप में देखा है। अंतःक्रियावादी इन वृहत् परिप्रेक्ष्यों से अलग हैं और उन्होंने क्रमबद्धता को सामाजिक पद्धति की विशेषता के रूप में कम देखा है। उनके अनुसार अंतःक्रियात्मक परिस्थितियों की बहुलता में प्रतिदिन ही सामाजिक प्रणाली की व्यवस्था सृजित एवं पुनःसृजित होती है। सामाजिक अंतःक्रिया बातचीत, व्याख्या व परिभाषा की प्रक्रियाओं से निर्मित होती है। इन्ही प्रक्रियाओं से बातचीत के बाद व्यवस्था निकलती है। प्रकार्यवादी एवं मार्क्सवादियों की तरह ही अंतःक्रियावादियों ने भी सामाजिक व्यवस्था को सामाजिक जीवन की मुख्य विशेषता के रूप में माना गया है। इसकी तुलना में नृजाति शोधपद्धतिशास्त्रियों का मानना है कि सामाजिक व्यवस्था भरमाने वाली है। उनका मानना है कि सामाजिक जीवन क्रमबद्ध नज़र आता है लेकिन वास्तविकता में यह अव्यवस्थित है। इनके नज़रिए से सामाजिक व्यवस्था सामाजिक कर्ताओं के मस्तिष्क में निर्मित होती है। बोध छवियों और अनुभवों की कड़ी की तरह समाज का व्यक्ति से आमना-सामना होता है और इन छवियों व अनुभवों को व्यक्तियों द्वारा एक सुसम्बद्ध विन्यास में येन-केन-प्रकरेण संगठित किया जाता है।

अस्तित्ववाद (Existentialism): यह ऐसा दर्शनशास्त्रीय आंदोलन है जो व्यक्ति विशेष, अहम् एवं व्यक्ति विशेष के अनुभव को और उनकी अद्वितीयता को मानव अस्तित्व की प्रकृति को समझने का आधार मानता है। दर्शनशास्त्र में सामान्यतः स्वाधीनता के प्रति आस्था झलकती है और इसमें व्यक्ति के कार्यों के परिणामों को स्वीकार किया जाता है। साथ में चयन करने के साथ जुड़े दायित्वों को भी स्वीकार किया जाता है। अस्तित्ववादियों ने आत्मपरकता को अधिक महत्व दिया है और मनुष्यों को एक संदिग्ध एवं विरक्त जगत का प्राणी माना है।

सामंतवाद (Feudalism): सामंतवाद को परिभाषित करना कठिन है क्योंकि इसके अर्थ पर कोई सामान्य रूप में स्वीकृत सहमति नहीं है। सामंतवाद को समझने के लिये एक कामचलाऊ परिभाषा होना ही श्रेयस्कर है। मध्य युग के दौरान यूरोप में यह लार्ड, जागीरदार एवं सामंत जैसी तीन अवधारणाओं से जुड़ा माना जाता है। इन तीनों अवधारणाओं के इर्द-गिर्द लड़ाकू सम्भ्रान्त वर्गों के बीच पारस्परिक विधिक एवं सामरिक दायित्वों के पुंज को सामंतवाद कहा जा सकता है। इसकी कुछ अन्य परिभाषाएं भी मौजूद हैं। 1960 के इतिहासकारों ने जागीरदारी व्यवस्था के कृषक वर्गों संबंधों को जोड़कर एक विस्तृत सामाजिक पहलू का शामिल किया और उसे "सामंतवादी समाज" कहा। कुछ अन्य विचारकों ने 1970 के दशक से उपलब्ध जानकारी की पुनः जाँच की और निष्कर्षतः कहा कि इस शब्द को समस्त शैक्षिक एवं विवेकपूर्ण चर्चा से हटा देना चाहिए या इसका प्रयोग सजगता से करना चाहिए। लेकिन फिर भी सभी शिक्षाविदों का मानना है कि यह शब्द सिर्फ़ मध्यकालीन यूरोपियाई इतिहास को ही लागू होता है और इस संदर्भ के बाहर इसका प्रयोग पिछड़ेपन का वर्णन करने के लिये नितान्त अनुपयुक्त है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

"सामंतवाद" शब्द की खोज सत्रहवीं शताब्दी में की गई। उत्तरी लैटिन भाषा का 'फ्यूडम' शब्द मध्ययुग में जर्मन 'फ़ेहू' शब्द से लिया गया। इसका अर्थ है फ़ियोदाती द्वारा निश्चित दायित्वों के अंतर्गत प्राप्त जागीर या भूमि। यद्यपि ये शब्द मध्य युग से जुड़े हुए हैं, लेकिन आधुनिक युग में सत्रहवीं शताब्दी तक सामंतवाद की संकल्पना की खोज नहीं हुई थी।

हैबीतस (Habitus): इस शब्द को मॉस से लिया गया है। इसका अर्थ है वृत्तियों (disposition) का एक पुंज जो शरीर में अंकित हैं, जिनसे शरीर की मूल आदतें तथा दक्षताएं आकार लेती हैं और इनसे व्यक्ति में सामाजिक शक्ति के प्रभाव संचरित होते हैं। इस प्रकार हैबीतस में दोनों अर्थात् शक्ति के गुण एवं दक्षता के और इस प्रकार सौंदर्य के गुण शामिल हैं। शक्ति-सौंदर्य-शरी की धुरी बोर्द्यो के बाद के सभी कामों में केंद्रीय रही है।

उत्तर संरचनावादी विचार-पद्धति में, बोर्द्यो द्वारा परिभाषित हैबीतस व्यक्ति विशेष के पूर्णतः विचारात्मक (या यों कहें कि अस्तित्वमूलक) परिवेश की अवधारणा है। इसमें व्यक्ति की

आस्थाएं व ञित्रवृतियाँ शामिल हैं और जो भी व्यक्ति करना चाहे वह पहले से ही आकार लेता है हैबीतस की अवधारणा स्वतंत्र इच्छा की अवधारणा को चुनौती देती है क्योंकि किसी भी एक समय बिंदु पर चयन सीमाहीन रूप से नहीं किया जा सकता है, हमेशा सीमित वृत्तियाँ ही होती हैं या काम करने की तत्परता होती है। व्यक्ति स्वचालित यंत्र नहीं है। हैबीतस में लचीलापन होते हुए भी पूर्णतः स्वतंत्र इच्छा नहीं होती है।

व्यक्ति को अपने हैबीतस के बारे में पूर्णतः पता नहीं होता क्योंकि यह अधिकांशतः अवचेतन के दायरे में रहता है और इसमें शारीरिक उठने-बैठने-लेटने जैसी अंतरंग क्रियाओं से लेकर दुनिया के बाद में विचार और ज्ञान के मूलभूत पक्षों और यहाँ तक कि हैबीतस के बारे में सोच भी शामिल हैं।

भाष्यशास्त्र (Hermeneutics): (इसका अर्थ हैं व्याख्यात्मक)। यह व्याख्या एवं मानव समझ से जुड़ी दर्शनशास्त्र की एक शाखा है । भाषा, अभिनय, नृत्य गायन, कलाकृतियाँ और यहाँ तक कि घटनाएं भी अब मूल पाठों में शामिल की जाने लगी हैं। इस शब्द की दो व्युत्पत्तियाँ हैं; एक यूनान के देवता हर्मीज़ से निकलती है। इसमें मानव समझ एवं व्याख्यात्मक संप्रेषण के संरक्षक के रूप में हर्मीज़ की भूमिका को देखा जाता है। दूसरी व्युत्पत्ति मिले-जुले टोल्मिक देवता हर्मीज़ त्रिस्मैगिस्टस से है। इसमें उसकी गुप्त ज्ञान की भूमिका को देखा गया है।

ऐतिहासिक भौतिकवाद (Historical Meterialsm): यह एक सामाजिक सिद्धांत है और आमतौर पर इसे मार्क्सवाद के बौद्धिक आधार के रूप में लिया जाता है जिसमें इसे इतिहास एवं समाजशास्त्र के अध्ययन के एक दृष्टिकोण की तरह माना जाता है। मार्क्स ने इसे इतिहास की भौतिकीय अवधारणा कहा है।

ऐतिहासिक भौतिकवाद विकास के कारणों तथा मानव इतिहास होने वाले आर्थिक, प्रौद्योगिकीय एवं अधिक विस्तृत रूप से भौतिक कारकों में बदलावों को निरूपित करता है। साथ में भौतिकवाद का सिद्धांत ऐतिहासिक जनजातियों, सामाजिक वर्गों एवं राष्ट्रों में भौतिक हितों के कारण होने पर द्वंद्वों को भी निरूपित करता है।

इस सिद्धांत की तुलना इतिहास की अन्य व्याख्याओं से की जा सकती है। मार्क्सवादी इन अन्य व्याख्याओं को आदर्शवाद के नाम से पुकारते हैं। ऐतिहासिक भौतिकवाद के अनुसार, राजनीति, दर्शनशास्त्र, कला, ईश्वर या चेतना के अनंत स्वरूप ही ऐतिहासिक और सामाजिक परिवर्तन के कारण होते हैं। इस सिद्धांत की मुख्य धारणा है कि मनुष्यों के जीने के तरीके सदा बदलते रहते हैं और इसीलिये पूंजीवाद भी एक अस्थायी संस्था है जो कुछ शताब्दियों पहले उदित हुई थी एवं एक दिन यह भी तिरोहित हो जाएगी।

MAADHYAM IAS

ऐतिहासिक विधियाँ (Historical methods): शोध की ऐतिहासिक विधि अध्ययन के सभी क्षेत्रों पर लागू होती है क्योंकि यह उनकी उत्पत्ति, वृद्धि, सिद्धांतों, व्यक्तित्वों संकट आदि को शामिल करती है। ऐतिहासिक जानकारी के संग्रहण में परिमाणात्मक एवं गुणात्मक दोनों परिवर्तियों (bariables) का प्रयोग किया जा सकता है। यदि एक बाद ऐतिहासिक शोध करने का निर्णय ले लिया जाता है तो ऐसे कुछ चरणों का अनुसरण करना पड़ता है जिससे विश्वसनीय परिणाम मिलें।

इतिहासपरतावाद (Histozicism): इतिहासपरतावाद किसी सीमा तक मिलते-जुलते किंतु फिर भी विभिन्न तथा कभी-कभी विरोधी अर्थों के साथ विकसित हुआ। उन्नीसवीं सदी के योरोप में महान दर्शनशास्त्री जी. डब्ल्यू. एफ. हीगल की विस्तृत रचनाओं में इस तरह के अर्थों के कुछ तत्वों की झलक मिलती है। इसके अलावा कार्ल मार्क्स की रचनाओं में भी इसकी झलक मिलती है, कार्ल मार्क्स हीगल से बहुत प्रभावित था। इतिहासपरतावाद के कुछ रूपभेद हैं। आइए कुछ उदाहरण पेश करें।

- **हीगल का इतिहासपरतावाद**

  हीगल द्वारा प्रस्तावित इतिहासपरतावाद स्थिति दर्शाती है कि कोई भी मानव समाज और विज्ञान, कला या दर्शनशास्त्र जैसी सभी मानवीय गतिविधियाँ उनके इतिहास से

परिभाषित हैं। अतएव उनके सार को उस इतिहास को समझ कर ग्रहण किया जा सकता है। ऐसे मानव प्रयास का इतिहास न केवल नवनिर्माण की कहानी है बल्कि पिछले कार्यों पर प्रतिक्रिया भी दर्शाता है। यही हीगल की प्रसिद्ध द्वंद्वात्मक सिद्धांत का स्त्रोत है जो उसकी प्रसिद्ध सूक्ति "दर्शनशास्त्र, दर्शनशास्त्र का इतिहास है" में स्पष्ट किया गया है। इसी को फ़िक्टे ने "वाद, प्रतिवाद एवं संवाद" कहा था।

- **पॉपर का इतिहासपरतावाद**

  कार्ल पॉपर ने अपनी प्रभावकारी पुस्तक; "द पावर्टी ऑफ़ हिस्टौरिज़्म एंड द ओपन सोसाइटी एंड इट्स एनिमीज़" में इस शब्द का प्रयोग किया। इसका अर्थ है सामाजिक विज्ञान आधारित वह उपागम जो यह मानकर चलता है कि ऐतिहासिक पूर्वानुमान लगाना उसका बुनियादी लक्ष्य है और जो मानता है कि इतिहास के उपविकास में निहित प्रवृत्तियों, या नियमों या विन्यासों या लयों को खोजने से इस उद्देश्य की पूर्ति की जा सकती है।

- **नव इतिहासपरतावाद**

  1990 से कुछ उत्तर आधुनिक विचारकों ने इतिहासपरकता का प्रयोग यह नज़रिया व्यक्त करने के लिए किया कि शाश्वत गूढ़ दर्शनशास्त्रीय प्रश्नों के बारे में कोई पूर्ण सत्य नहीं होता है। बल्कि इन विचारकों के इतिहासपरतावाद के अनुसार विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी के इतिहास के समेत सिर्फ़ दर्शनशास्त्र का, या सामान्यतः बौद्धिक इतिहास है। ऐसे चिंतन को कभी-कभार नव इतिहासपरतावाद का नाम दिया गया है।

आदर्श प्ररूप (Ideal types): ये ऐसी अवधारणाएं हैं जो प्रत्यक्षवादी शोध के लिए ध्यानपूर्वक एकत्रित एवं विश्लेषित तथ्यों के आधार पर सूत्रबद्ध हैं। इस अर्थ में आदर्श प्ररूप ऐसी अवधारणाएं हैं जिनका प्रयोग सामाजिक समस्या विशेष के विश्लेषण एवं हमारी समझ के लिए शोधपद्धतीय युक्तियों या साधनों के रूप में किया जाता है।

न्यू वेबस्टर डिक्शनरी (एन डब्ल्यू डी 1983) के अनुसार 'आदर्श' एक किसी वस्तु की ऐसी अवधारणा या मानदंड है जो उच्चतम पराकाष्ठा पर आधारित है। आदर्श प्ररूप भौतिक वस्तु की बजाय, मानसिक छवि को दर्शाती है। यह एक नमूना या मॉडल है। कोलिन कोबिल्ड इंगलिश भाषा शब्दकोश के अनुसार, किसी चीज़ का आपका आदर्श कोई ऐसा व्यक्ति या वस्तु होता है जो आपको उस व्यक्ति या वस्तु का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण लगता है। 'प्ररूप' का अर्थ ऐसी किस्म, वर्ग या समूह है जो एक विशिष्ट प्रकृति का होता है (एन डब्ल्यू डी 1985)।

वेबर ने एक विशिष्ट अर्थ में आदर्श प्ररूप शब्द का प्रयोग किया। उसके अनुसार, ठोस स्थिति की संवीक्षा एवं क्रमबद्ध विशेषताओं की अभिव्यक्ति के लिए यह मॉडल जैसा मानसिक निर्मिति है। सचमुच ही उसने 'आदर्श प्ररूप' का प्रयोग सामाजिक यथार्थ को समझने एवं उसका विश्लेषण करने के लिए शोधपद्धतीय साधन के रूप में किया था।

मैक्स वेबर सामाजिक विज्ञानों में निष्पक्षता की समस्या के बारे में विशेष रूप से चिंतित था। इसलिए उसने शोधपद्धतीय साधन के रूप में आदर्श प्ररूप का प्रयोग किया जो वास्तविकता को निष्पक्ष दृष्टि से देखता है। यह आत्मपरक पक्षपात के बिना सामाजिक यथार्थ की संवीक्षा एवं उसका वर्गीकरण करता है एवं उसे क्रमबद्ध करके परिभाषित करता है। आदर्श प्ररूप का मूल्यों से कोई सरोकार नहीं हैं शोध साधन के रूप में इसका प्रकार्य वर्गीकरण एवं तुलना करना है। मैक्स वेबर के शब्दों में, "आदर्श प्ररूप की अवधारणा से शोध में अर्थ खोजने की हमारी दक्षता विकसित होगी। आदर्श प्ररूप यथार्थ का वर्णन नहीं करता लेकिन इसका लक्ष्य है कि ऐसे वर्णन को अभिव्यक्ति के द्विविधारहित साधन दे।"

आवलेखात्मक (Ideographic): मानव व्यवहार, मानव व्यवहार के बारे में विस्तृत सामान्यीकरण की बजाय व्यक्तियों पर, व्यक्तियों के काम करने या अनूठे गुणों पर एवं उनसे संबंधित विशिष्ट उदाहरणों पर ज़ोर देना।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

विचारधारा (Ideology): मानव जीवन या संस्कृति के बारे में अवधारणाओं का सुव्यवस्थित निकाय संस्कृति या समूह या व्यक्ति के सोचने के गुण का तरीका या विषयवस्तु। ऐसे समेकित मतों, सिद्धांतों तथा लक्ष्यों को भी विचारधारा कहा जाता है जो सामाजिक-राजनीतिक कार्यक्रम विशेष के बारे में हों।

आगमनात्मक (Inductive): यह तर्क की ऐसी व्यवस्था है जो निगमनात्मक तर्क का निश्चित से कम अनुमानों तक विस्तार करती है। वैध आगमनात्मक तर्क में आधार निष्कर्षों के लिये तार्किक भाग करते है। यहां ऐसी भाग का अर्थ है कि आधार का सत्य निष्कर्ष के सत्य की प्रतित्रुति प्रदान करती है। इसी प्रकार एक अच्छे आगमनात्मक तर्क में आधारों को निष्कर्ष के लिए कुछ हद सहयोग प्रदान करना चाहिए। जहां ऐसे सहयोग का अर्थ है कि आधार के सत्य में कुछ ऐसी ठोस मजबूती है जिससे यह पता चले कि निष्कर्ष सही है। अनुमानतः यदि अच्छे आगमानात्मक तर्कों को सही मूल्य का बनना है तो इसके द्वारा सुस्पष्ट किये गये सहयोग का माप निम्नलिखित शर्तों को पूरा करे–

उपयुक्तता की कसौटी (Criterion of Adequacy): साक्ष्य इक्ट्ठा होने के दौरान तर्क से मापने पर जिस सीमा तक सही साक्ष्य वाले कथन प्राक्कल्पना का समर्थन करते हैं, उससे प्रायः यह संकेत मिलता है कि ग़लत प्राक्कल्पनाएं अक्सर ग़लत होती हैं और सही प्राक्कल्पनाएं अक्सर सही होती हैं।

जस्टीनियन (Justinian): परंपरागत विधिवेत्ताओं ने दायित्वों को नियमोल्लंघन या नियमपरक अनुबंध के आधार पर दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है। जस्टीनियन क़ानून ने दायित्वों के दो अन्य वर्गों को भी मान्यता दी हैं। ये हैं; नियमोल्लंघन–वत् एवं नियमपरक अनुबंधवत्।

मुख्यधारा (Mainstream): डिक्शनरी में मुख्यधारा शब्द की परिभाषा है "समाज को प्रचलित मनोवृत्तियाँ, मूल्य एवं व्यवहार"।

यांत्रिक एकता (Mechanical Solidarity): समाज में व्यक्तियों में समानता एवं एकरूपता पर आधारित सामाजिक एकता और यह मुख्यतया समान अनुष्ठानों एवं रोज़ाना किए जाने वाले कार्यों पर निर्भर करती है। यांत्रिक एकता प्रागतिहासिक तथा कृषि पूर्व समाजों में पाई जाती है और जैसे जैसे आधुनिकता का विकास होता है वैसे वैसे यांत्रिक एकता का ह्रास होता जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

शोधपद्धतीय द्वैतवाद (Methodological dualism): ज्ञाता को ज्ञान से अलग करने या कर्ता को कारक से अलग करने में प्रत्यक्षवादी आस्था रखने को शोधपद्धतीय द्वैतवाद कहा जाता है।

शोधपद्धतीय अद्वैतवाद (Methodological Monism): द्वैतवाद की तुलना में अद्वैतवाद विश्व को 'सीवनहीन जाल' के रूप में देखा जाता है। गोल्डनर के तर्क की दृष्टि से ज्ञान से ज्ञाता अलग करने से ऊपर उठना आवश्यक है।

आधुनिकता (Modernity): विकास के मौजूदा या नवीनतम काल की विशेषताओं को आधुनिकता कहा जाता है।

नियमान्वेषी (No mothetic): सामान्य नियमों की खोज से संबंधित या सार्वभौमिक नियम की खोज से संबंधित।

नोमेना (Noumena): इमैनुअल कांट के दर्शनशास्त्र में नोमेना या वस्तु स्वयं अज्ञेय, वर्णनातीत यथार्थ है। एक नज़रिए से यह प्रेक्षित प्रतिरूपों के "पीछे" स्थित होती है। इस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द नाउस (nous) अर्थात मस्तिष्क से है। कुछ लोवक नोमेना शब्द का प्रयोग बहुवचन के रूप में करते हैं।

वस्तुनिष्ठता (Objectivity): व्यक्तिगत संवेदनाओं या पूर्वाग्रहों द्वारा विकृत किए बिना तथ्यों का प्रयोग करने को निष्पक्षता या वस्तुनिष्ठता कहा जाता है। इस अर्थ में निष्पक्षता का अर्थ

उन विधियों से है जो न्यूनतम सृजनात्मक व्याख्या हेतु निश्चित विकल्पों के रूप में चयन को सीमित कर आत्मपरकता को समाप्त कर देती हैं। वैज्ञानिक विधियों से जाँची या प्रेक्षित और इंद्रियग्राह्य जगत वाले यथार्थ की प्रकृति को आत्मपरक चिंतन तथा संवेदन से परे हटा कर व्याक्त करने को निष्पक्षता या वस्तुनिष्ठता कहते हैं।

जैव सादृश्य (Organic analogy): प्रकार्यात्मक सादृश्यों में सर्वविदित सादृश्य एमिल दुर्खाइम से संबद्ध जैव सादृश्य है। समाज को परिपूर्ण जैव के रूप में देखा जाता है जिसमें विविध भाग अन्य भागों को क़ायम रखने के लिए काम करते है। इसकी तुलना यदि मानव शरीर के साथ करें तो यह बात अधिक स्पष्ट हो जायेगी। शरीर के विविध अंग होते हैं। शरीर को स्वस्थ रखने में प्रत्येक अंग कर अपना एक विशेष कार्य होता है। समाज में बहुत सी संस्थाएं होती हैं जो समाज की व्यवस्था को बनाए रखने के लिए अपने विशिष्ट कार्य करती हैं। शरीर की भाँति एक घड़ी भी अनेक हिस्सों से बनी होती है। शरीर की तरह ही घड़ी के सारे हिस्सों को 'सही' क्रम में लगाना पड़ता है। यदि घड़ी को खोल दिया जाये तो भी घड़ी के सारे हिस्से तो मौजूद ही है परंतु घड़ी अपना काम नहीं करती है यानि समय नहीं बता पाती है। इस तरह से इस सादृश्य से न केवल विभिन्न हिस्सों का पारस्परिक संबंध स्पष्ट होता है वरन् यह भी पता लगता है कि उन्हें साथ-साथ एक इकाई की तरह काम करना पड़ता है।

जैव या अवयवी एकता (Organic Solidarity): विकास के युग में अधिक ऊँचे समाज में लोगों के एक दूसरे पर निर्भर होने से निर्मित सामाजिक एकता को जैव या अवयवी एकता कहा जाता है। जैसे जैसे श्रम विभाजन बढ़ता है वैसे वैसे औद्योगिक समाज में जैव या अवयवी एकता बढ़ जाती है। यद्यपि विभिन्न कार्यों को विभिन्न लोगों द्वारा पूरा किया जाता है और उनके मूल्य एवं हित अलग-अलग होते है, समाज की व्यवस्था एवं उसका अस्तित्व भी इस बात पर टिका है कि पारस्परिक दूसरे पर निर्भर होकर लोग अपने अपने कामों को पूरा करें।

प्राच्य संस्कृतिवाद (Orientalism): अनेक विचारकों ने इतिहास, साहित्य, दर्शनशास्त्र, नृशास्त्र एवं कलाओं में उत्तर-औपनिवेशिक अध्ययन की शुरुआत 1978 में प्रकाशित एडवर्ड साइद की कृति ओरियंटलिज़्म के प्रकाशन से की है। साइद ने इस कृति में पश्चिम (ऑक्सीडेंट) एवं पूर्व के बीच के अंतःसंबंधों पर अपना ध्यान केंद्रित किया है। यहाँ साइद ने ऑक्सीडेंट शब्द का प्रयोग पश्चिम (इंग्लैंड, फ्रांस एवं अमेरिका) के लिए किया है जबकि पूर्व (ओरिएंट) शब्द का प्रयोग रूमानी और ग़लत ढंग से समझे हुए मध्य पूर्व (मिडिल ईस्ट) एवं फ़ार सुदूर पूर्व (फ़ार ईस्ट) के यथार्थ के लिए किया है। साइद के अनुसार पश्चिम ने पूर्वी देशों के यथार्थ और पूर्व के बारे में रूमानी धारणाओं के बीच एक दीवार खड़ी कर दी है। मध्य पूर्व एवं एशिया का पूर्वाग्रहों एवं प्रजातिवाद की दृष्टि से देखा गया है। इन्हें पिछड़ा हुआ और अपनी निजी संस्कृति एवं इतिहास के प्रति अनभिज्ञ माना है। इस तरह पैदा हुए अंतराल को भरने के लिए पश्चिम ने इनके लिए संस्कृति, इतिहास एवं भविष्य के लिए सुनहरे सपनों को रचा है। इस ढाँचे पर न सिर्फ़ ओरिएंट का अध्ययन आधारित है बल्कि पूर्व में यूरोप का राजनीतिक साम्राज्यवाद भी टिका हुआ है। एडवर्ड साइद के शब्दों में, "पाठकों को स्पष्ट हो जायेगा कि प्राच्यवाद से मेरा अर्थ कई चीज़ों से है, ये सारी चीज़ें एक दूसरे से जुड़ी हैं। प्राच्यवाद का सबसे मान्य रूप सैद्धान्तिक है जो कई शिक्षा संस्थानों में प्रचलित है। जो भी प्राच्य को पढ़ाये, उसके बारे में लिखे या अध्ययन करे, चाहे वह नृशास्त्री हो, समाजशास्त्री हो, इतिहासकार हो या भाषाशास्त्री – वह विशिष्ट रूप से या सामान्य रूप से प्राच्यवादशास्त्री है और उसका काम प्राच्यवाद कहलाता है।" प्राच्य संस्कृति ऐसी चिंतन शैली है जो ओरिएंट एवं पश्चिम के बीच की ज्ञानमीमांसीय एवं भिन्नता पर आधारित है। इस प्रकार कवि, उपन्यासकार, दर्शनशास्त्री, राजनीतिक सिद्धांतक़ार, अर्थशास्त्री और साम्राज्यवादी प्रशासक – ऐसे सभी लेखकों ने पूर्व और पश्चिम में अंतर को स्वीकार किया है और अंतर के बिंदु से ही पूर्व, उसके लोगों, प्रथाओं, भविष्य इत्यादि का उनका विवरण शुरू होता है।

MAADHYAM IAS

निदर्शन (Paradigm): 1800 के अंतिम चरण से वैज्ञानिक विषय के या अन्य ज्ञानमीमांसा के संदर्भ में चिंतन विन्यास को निदर्शन कहा जाता है। शुरुआत में इस शब्द का प्रयोग सिर्फ़ व्याकरण के लिए किया गया था। 1900 की मेरियम वेबस्टर डिक्शनरी में निदर्शन का तकनीकी प्रयोग सिर्फ़ व्याकरण या अलंकारशास्त्र के संदर्भ में उदाहरणार्थ दी गई लोककथा या उक्ति के रूप में किया गया था।

भाषाशास्त्रीय प्रयोजनों के लिए फ़र्डिनंड द ससुआ शब्द का प्रयोग समान तत्वों वाले वर्ग को दर्शाने के लिए किया था।

वैज्ञानिक विषय के संदर्भ में निदर्शन शब्द का सर्वश्रेष्ठ प्रयोग दर्शनशास्त्री थॉमस कुन ने विज्ञान में व्यवहारों के पुंज को दर्शाने के लिए किया। इस शब्द का प्रयोग प्रायः ग़लत ढंग से किया गया तथा अभी भी किया जाता है। कुन ने भी इस शब्द की जगह उदाहरणीय और प्रतिमानक विज्ञान शब्दों का उपयोग किया जिनका सटीक दार्शनिक अर्थ है। अपनी पुस्तक, द स्ट्रक्चर ऑफ़ सांइटिफिक रिवोल्यूशन्स में कुन ने वैज्ञानिक निदर्शन को इस प्रकार परिभाषिक किया:

- जिसे प्रेक्षित करना है तथा जाँचना है
- इस विषय के संबंध में उत्तर के लिये जिस प्रकार के प्रश्नों को पूछना तथा उनकी गहराई में जाना है
- इन प्रश्नों को कैसे पूछना है
- वैज्ञानिक खोज-बीन के परिणामों की व्याख्या कैसे होनी है

औपचारिक परिभाषित शब्द 'समूहसोच' (ग्रुपथिंक) और मानसिकता के एक से अर्थ हैं और विषयगम चिंतन के छोटे-बड़े स्तर के उदाहरणों में लागू होते हैं। माइकल फूको ने ज्ञान (episteme) और वाद-संवाद (discourse)), चितएकाग्रता (mathesis) और वर्गीकरण (taxinomia) जैसे शब्दों को कुन के अर्थों में निदर्शन के लिये प्रयुक्त किया। इनके बारे में ज्ञान के समाजशास्त्र तथा विज्ञान के दर्शन के संदर्भ में निदर्शन परिवर्तन की चर्चा के समय अधिक जानकारी प्राप्त हो सकती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन (Participatory rural appraisal): सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन (पी आर ए) ऐसा शीर्षक है जो ऐसे सहभागितापरक उपागमों एवं विधियों के बढ़ते परिवार को दिया गया है। ये उपागम और विधियाँ स्थानीय ज्ञान पर ज़ोर देते हैं और स्थानीय लोगों को अपना निजी मूल्यांकन, विश्लेषण एवं योजनाएं बनाने के योग्य बनाते हैं। इसमें सामूहिक सजीवता का उपयोग होता है और भागीदारों में जानकारी बाँटने, विश्लेषण और काम करने को सहज किया जाता है। यद्यपि शुरू में इसको केवल ग्रामीण क्षेत्रों में काम में लाया गया था परंतु अब इसका उपयोग नाना-प्रकार के परिवेशों में किया जा चुका है। पी आर ए का उद्देश्य विकास क्षेत्र में काम करने वाली, सरकारी अधिकारियों एवं स्थानीय लोगों को संदर्भ —उपयुक्त कार्यक्रम बनाने के लिए मिलजुल कर काम करने के योग्य बनाना है।

दृश्यप्रपंच (Phenomenology): बीसवीं शताब्दी का दर्शनशास्त्रीय आंदोलन दृश्यप्रबंध अनुभव की संरचनाओं का वर्णन करने के प्रति समर्पित है। प्राकृतिक विज्ञानों जैसे अन्य विषयों के पूर्वाग्रहों, निगमन या सिद्धांत की बिंना मदद लिये, अनुभव की संरचनाएं जैसे चेतना के सम्मुख आती हैं, उन्हीं का वर्णन दृश्यप्रपंच में किया जाता है। इसके प्रतिपादक जर्मन दर्शनशास्त्री एडमंड हुसर्ल ने इस शब्द का प्रयोग अपनी पुस्तक; ए जनरल इंट्रोडक्शन टू प्योर फ़िनोमेनोलॉजी में किया था।

उत्तर आधुनिकतावाद (Postmodernism): आलोचनात्मक सिद्धांत, दर्शनशास्त्र, वास्तुशास्त्र, कला, साहित्य एवं संस्कृति में विविध आयामों के उस विकास को उत्तर आधुनिकतावाद कहा जाता है जो आधुनिकतावाद की प्रतिक्रिया स्वरूप उससे भी परे जाता है। समाजशास्त्र में आर्थिक, सांस्कृतिक एवं जनसांख्यिकीय बदलावों के परिणाम को उत्तर आधुनिकतावाद की

पर हंगामा खड़ा करती हैं। हालांकि यदि कहा जाये कि अगर यह इतनी ही छोटी सी बात है तो इसे मान लेने में ही क्या हानि है या फिर पुरुष भी विवाहोपरांत अपना कुलनाम क्यों नहीं बदल लेते। अवश्य मुद्दा यहाँ बहस का नहीं बल्कि मुद्दा यह है कि साधारण रीति-रिवाज अक्सर जमी-जमाई पितृसत्तात्मक संरचना पर टिके हैं। कुलनाम बदलने का निहित अर्थ है वंश, परिवार और अस्मिता में बदलाव। यदि महिला अपने जन्मगत कुलनाम को ही रखना चाहती है तो इसे पति के परिवार के प्रति विद्वेष का प्रतीक या अपने कुल में प्रतिभक्ति का प्रतीक माना जाता है। स्पष्ट है महिलावादी उपागम कैसे तीखी आलोचना या उद्वेगपूर्ण प्रतिक्रिया पैदा करता है जबकि तुलनावादी पद्धति में इस प्रकार का कुछ होने का अवसर ही नहीं होता।

ऊपर उठाए गएं मुद्दे के संबंध में अपनी प्रतिक्रिया जानने के लिए सोचिए और करिए 10.1 पूरा करें।

सोचिये और करिये 10.1

इसमें कोई बुराई नहीं 'यदि महिलाएं विवाह के बाद अपना विवाह पूर्व का कुलनाम न बदलें'। इस विषय पर अपने अध्ययन केंद्र में एक वाद-विवाद आयोजित कीजिए। विषय के पक्ष और विपक्ष दोनों में रखे गए सभी विचारों को ध्यानपूर्वक सुनिए और उसके बाद पक्ष और विपक्ष दोनों के वक्ताओं द्वारा बताए गए सभी सामाजिक कारणों को शामिल करते हुए एक हज़ार शब्दों में एक टिप्पणी लिखिए। टिप्पणी के अंत में आप अपना मत भी रखिये। वाद-विवाद और टिप्पणी लिखने के पंद्रह दिन पश्चात आप एक बार फिर अपने मत के बारे में सोचिये। क्या आपके विचार अभी भी वही हैं जो पहले थे?

10.3 ऐतिहासिक संदर्भ

हमने उन्नीसवीं शताब्दी के उस शैक्षिक संदर्भ को देखा जिसके तहत् तुलनात्मक विधि उत्पन्न हुई। आजकल के नृशास्त्रियों का इस तथ्य की ओर इशारा होगा कि उपनिवेशवाद और दूसरों की संस्कृतियों के अध्ययन तक पहुंच वह राजनीतिक प्रसंग था जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता है। पाश्चात्य विद्वता तथा शक्ति की निर्विवाद प्रभुता के कारण यह राजनीतिक संदर्भ एक तरह से छिप ही गया था। अब हर देश के वासी प्रत्युत्तर देने लगे हैं। राजनीतिक संदर्भ इसलिये भी अनदेखा हुआ क्योंकि शोध पद्धति में स्पष्ट रूप से मूल्य-तटस्थता का समर्थन किया गया और इसमें पक्षपात के ख़तरों से बचने के लिए मार्गदर्शी निर्देशों को देने के लिए घोर परिश्रम किया गया। इसके बिल्कुल विपरीत महिलावादी उपागम में राजनीतिक संदर्भ बिल्कुल साफ़ दिखाई देता है। इसमें मूल्य-वरीयताओं को भी स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जाता है। इस उपागम में महिला-पुरुष में सामाजिक समता पूरी तरह से समाई हुई है।

महिला आंदोलन की प्रथम अवस्था पश्चिम में महिला मताधिकार आंदोलन (देखें कोष्ठक 10.3) और हमारे जैसे काफ़ी समय तक रहे औपनिवेशिक देशों में राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ी है। 1970 के दशक में महिला आंदोलन की दूसरी अवस्था आई जब महिलावादी उपागम की ओर से सामाजिक विज्ञानों पर व्यवस्थित रूप से प्रश्न चिन्ह लगाए जाने शुरू हुए।

जैसा कि चौधरी (2004) ने कहा है, तुलनात्मक पद्धति की विरासत के विपरीत, महिलावादी उपागम का महिलावादी आंदोलनों के साथ अटूट संबंध है। यहाँ मुद्दा यह नहीं है कि हर महिलावादी विद्वान सक्रियतावादी है या नहीं। मुद्दा यह है कि महिलावादी ज्ञान एक क्रांतिकारी आंदोलन से उपजा जिसने प्रदत्त सामाजिक व्यवस्था के प्राकृतिक और दैवीय

दोनों रूपों पर सवाल उठाये। अभी-अभी हमने कुलनामों को बदलने या न बदलने के दूरगामी प्रभाव की चर्चा की ही थी (आगे, महिलावादी आंदोलन के बारे में बहुत कम मालूम तथ्यों के बारे में देखें कोष्ठक 10.3)।

कोष्ठक 10.3: क्या आपको मालूम है?

क्या आपको पता है कि पाश्चात्य देशों का महिला मताधिकार आंदोलन बड़ी लंबी चलने वाली लड़ाई थी। अनेक महिला आंदोलनों के बावजूद औपचारिक रूप से महिलाओं को समानता पाने में काफ़ी समय लगा। उन्नीसवीं शताब्दी के उतरार्द्ध तक इंग्लैंड में महिलाओं को क़ानूनी या उदार सैद्धांतिक अर्थ में व्यक्तियों के रूप में मान्यता नहीं प्राप्त थी। औपचारिक रूप से पूरे परिवार पर पुरुषों की सत्ता थी और महिलाएं सार्वजनिक क्षेत्र से बाहर थीं। मिल और टेलर ने एलिज़ाबेथ केडी स्टेंटन और सूज़न बी. एंथनी जैसी अमेरिका की प्रारंभिक महिलावादियों के साथ मिलकर यह तर्क प्रस्तुत किया कि महिलाओं का समानता के लिये महिलाओं को पूर्ण नागरिकता मिलना ज़रूरी हैं। इसका अर्थ था महिलाओं को मताधिकार मिले। 1865 के बाद जब मिल इंग्लैंड की संसद का सदस्य था तब उसने महिलाओं के मताधिकार के लिए संघर्ष किया। उसने उन क़ानूनों में संशोधन करने के लिए भी लड़ाई की जिनके अनुसार पति को पत्नी के धन और सम्पदा पर नियंत्रण का अधिकार था।' (आइन्स्टाइन 1979: 198)।

स्रोत: http:/uregina.ca/-gingrich/028f99.htm

इसके अतिरिक्त, 1980 के दशक के आने तक, यह स्पष्ट होता जा रहा था कि महिलावादी वैज्ञानिक क्रांति (जैसी क्रांतियों का कुन (1970) ने अध्ययन किया था) बिना प्रतिरोध के नहीं हो पाएगी (इकाई 6 भी देखें)। जैसा कि कुन (1970) ने नोट किया कि वैज्ञानिक विषयों को यथायोग्य नाम दिए गए हैं; ये विषय चिंतन को अनुशासित करते हैं जिसके तहत् कुछ विचार स्वाभाविक तो कुछ अविचारणीय हो जाते हैं। विज्ञान को मानने का अर्थ है कि इन विषयों के प्रति अगाध प्रतिबद्वता हो। विशिष्ट विचारों और सोचने के ढंगों के प्रति विद्वत्समाज की प्रतिबद्वताएं नए सिद्धांतों की राह में रोड़ा बनकर आते प्रतीत होते हैं। भले ही ये नये सिद्धांत भविष्य में अति उपयोगी ही सिद्ध हों। जैसा कि इकाई के अगले भाग में की गई चर्चा में आपको स्पष्ट हो जायेगा। महिला अध्ययनों में हुए शोध के समीक्षात्मक मूल्यांकन के लिये आवाज़ उठाते हुए कृष्णराज (2005: 3008-3017) ने कहा कि महिलावादी शोध में सिद्धांत का उपयोग प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण के लिये इतना नहीं है जितना कि मूल अवधारणाओं के माध्यम से बेहतर समझ विकसित करने के लिये किया गया है।

MAADHYAM IAS

आइए अब महिला उपागम के विकास के चरणों का निरूपण करते हुए महिलावादी उपागम की प्रमुख विशेषताओं पर चर्चा करें। लेकिन इकाई के इस महत्वपूर्ण भाग की ओर बढ़ने से पूर्व, महिलावादी उपागम विधि में समाविष्ट विचारधारा को पूरी तरह समझने के लिए हमें सोचिये और करिये 10.2 अभ्यास को करना होगा।

सोचिये और करिये 10.2

इकाई के भाग 10.1 और 10.2 को पुनः पढ़ें और अलग कागज़ पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखें।

प्रश्न

- यदि महिला विवाह से पूर्व वाला अपना कुलनाम ही विवाह के बाद भी रखे तो इसके क्या अर्थ हैं?
- एक छात्र या छात्रा के लिए स्कूल में दाखिले के फ़ार्म में संरक्षक के रूप में माता के नाम को लिखना क्या ग़लत है?

- परिवार में पुरुष का आधिपत्य क्या स्वाभाविक हैं?
- क्या महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव को न प्रदर्शित करने वाली भाषा लिखना संभव है?
- क्या महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव न प्रदर्शित करने वाली भाषा लिखना ज़रूरी है? यदि हाँ तो क्यों और यदि नहीं तो क्यों?
- क्या एम.एस.ओ-002 पाठ्यक्रम में महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव न प्रदर्शित करने वाली भाषा का उपयोग किया गया है?

शैक्षिक परामर्शदाता, कृपया 'प्रदत्त सामाजिक व्यवस्था का आलोचनात्मक अवलोकन' विषय पर चर्चा आयोजित करें। छात्र-छात्राओं को और स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशन हेतु इस विषय पर लघु निबंध लिखने के लिए प्रोत्साहित करें।

10.4 महिलावादी उपागम की विशेषताएँ

तुलनात्मक पद्धति की तरह अध्ययनों के विशाल भंडार में निश्चित रूप से कुछ ऐसी सामान्य विशेषताएं हैं जो उन्हें तुलनात्मक या महिलावादी श्रेणी में रखती हैं यह निश्चयपूर्वक कहना महत्वपूर्ण है कि ऐसे महत्वपूर्ण अंतर भी हैं जो महिलावादी उपागम की विशेषताओं को उजागर करते हैं। स्पष्टीकरण के उद्देश्य से, सबसे पहले समाजशास्त्र की दृष्टि से महिलावादी उपागम के विकास के चरणों से शुरुआत करके यह देखा जायेगा कि महिलावादी उपागम में शोध-पद्धति के अनुसार कौन सी विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं।

क) समाजशास्त्र की दृष्टि से महिलावादी उपागम के विकास के चरण

समाजशास्त्र की दृष्टि से महिलावादी उपागम वृद्धि को जानने का एक उपयोगी तरीक़ा है कि 1970 से महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से जुड़े मुद्दों के अध्ययन के तीन चरणों की विवेचना की जाये।

i) प्रारंभ में महिला-पुरुष के बीच अंतरों पर अध्ययन का ज़ोर था और देखा जाता था कि किस सीमा तक ऐसे अंतर व्यक्तियों के जैविक लक्षणों पर आधारित थे।

ii) दूसरे चरण में, महिलावादी उपागम के तहत् किये गये व्यक्तिगत स्तरीय महिला-पुरुष की भूमिकाओं और समाजीकरण पर बल दिया गया। इससे महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेद-भाव का पक्ष उजागर हुआ। यह स्पष्ट हुआ कि ये भेदभाव विशिष्ट सामाजिक व्यवस्थाओं के फलस्वरूप विद्यमान होते हैं। अभी भी इस चरण तक इस धारणा को सारी सामाजिक प्रणालियों की विशेषता के रूप में न देखकर केवल समाजविशेष की व्यवस्था की तरह ही देखा गया था।

iii) तीसरे चरण में यह स्पष्ट हुआ कि सभी सामाजिक प्रणालियों में एक संगठित सिद्धांत के रूप में महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव की मान्यता केंद्रीय है। पाया गया कि राजनीति, रोज़मर्रा की अंतःक्रिया, परिवार, आर्थिक विकास, क़ानून, शिक्षा और अन्य सभी सामाजिक क्षेत्रों में यह भेदभाव व्याप्त है। जैसे जैसे महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव की हमारी जानकारी समाज के स्तर पर आई है वैसे वैसे यह जागरूकता बढ़ी है कि महिला-पुरुष के बीच भेदभाव प्रजाति एवं जाति विशेष के ढंगों में संगठित रूप से विद्यमान है तथा पल प्रतिपल इसका अनुभव किया जाता है।

उपर्युक्त तीन चरणों के प्रकाश में अब हमारे लिये महिलावादी उपागम की कुछ प्रमुख विशेषताओं की सार्थक रूप से चर्चा करना संभव है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ख) प्रमुख विशेषताएँ

इसका पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि विभिन्न महिलावादी उपागमों के बीच

मारिया मीस
(1931-)

महत्वपूर्ण अंतर हैं। विभिन्न राजनीतिक और सैद्धांतिक उपागमों के बीच प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध इंगित करने के साथ हमने यहाँ चर्चा की है कि समाजशास्त्र की दृष्टि से महिलावादी उपागम में क्या क्या विशेषताएं हैं। सबसे पहले महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के प्रति परंपरागत समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण तथा महिलावादी दृष्टिकोण में अंतर देखें। समाजशास्त्र की अधिकांश परिचयात्मक पाठ्यपुस्तकों में अभी भी महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव को एक व्यक्तिगत गुण के रूप में देखा जाता है और इस भेदभाव से जुड़ी असमानता को बाल्यावस्था में समाजीकरण के परिणाम के रूप में समझा जाता है। इसके विपरीत आज की महिलावादी विचारधारा असमानता के संरचनात्मक तथा अंतःक्रियात्मक आधारों के रूप में श्रम-विभाजन, शक्ति, सामाजिक नियंत्रण, हिंसा और विचारधारा के अधिकाधिक समावेश पर बल देती है। यह असमानता न केवल महिलाओं और पुरुषों बल्कि विविध सामाजिक वर्गों तथा प्रजातियों के नृजातीय समूहों के महिलाओं-पुरुषों में पाई जाती है। गोरेलिक (1991: 461) ने मारिया मीस की चर्चा की जिसने 1970 के दशक में महिलावादी शोध पद्धति परक मार्गदर्शी निर्देशों को दिया था। उसने सामाजिक परिवर्तन के लिए मूल्य-निरपेक्ष महिला संघर्षों के प्रति सचेतन तरफ़दारी की ज़रूरत पर बल दिया। दूसरा, उसने शोधकार और जिसका शोध किया जा रहा है – दोनों के अंतर्विवेक को जगाने की ज़रूरत पर ज़ोर दिया।

आइए अब महिलावादी उपागम को दर्शाने वाली निम्नलिखित प्रमुख विशेषताओं की रूपरेखा प्रस्तुत करें।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- **महिलावादी उपागम के अनुसार शोध प्रारूप पुरुषों के अनुभवों पर आधारित थे**

किस प्रकार प्रश्न पूछे जायें और कौन सा उत्तर स्वीकार्य है या परिभाषित करने के लिए कौन से मानदंड अपनाए जायें – इस बारे में महिलावादी सामाजिक वैज्ञानिकों ने आमूल परिवर्तन की ज़ोरदार मांग की (देखें कोष्ठक 10.4 और इकाई 4 भी)। घर का मुखिया सबसे वृद्ध पुरुष सदस्य ही होता है यह मानने का हमेशा से चला आया प्रचलन इस तथ्य का उदाहरण है। अनेक अध्ययनों से अब यह निकलकर आया है कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में महिला-मुखिया वाले घरों की संख्या काफ़ी ज़्यादा है। लेकिन घर के मुखिया की अवधारणा शहरी मध्यवर्गीय पुरुषों के अनुभव पर आधारित रही कि महिलाएं तो 'गृहिणियां' ही हैं। एक और बहुत आम उदाहरण हैं कि 'कार्य' की श्रेणी में वही काम आता है जो घर से बाहर किया जाता है और जिसके लिए मज़दूरी मिलती है। अनेक अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हो गया है कि अनौपचारिक क्षेत्र में आने वाली घरेलू उत्पादन इकाइयों में अधिकांशतः महिलाएं ही काम करती हैं। दिल्ली शहर में चूड़ी और खिलौने बनाना, जरदोज़ी, घरेलू काम आदि इस तरह के कामों के उदाहरण हैं; इलैक्ट्रॉनिक पुर्जों को जोड़ने के कामों को भी मलिन बस्तियों में रहने वाली निर्धन महिलाओं को ठेके पर दिया जाता है। 1997 की जनगणना के दौरान साधारण नागरिकों और जनगणना करने वाले श्रमिकों के शिक्षित करने के प्रयास किए गए कि पत्थर तोड़ना और ईंटे ढोना भी काम की श्रेणी में आते हैं। भूमंडलीकरण के साथ बढ़ रहे इस अनौपचारिक कार्य के अलावा घर का काम काज भी 'कार्य है भले ही इस विचार को अभी भी सामान्य बोध के स्तर पर स्वीकार नहीं किया गया है। महिलाओं को अनदेखा करने के बारे में देखें कोष्ठक 10.4।

कोष्ठक 10.4: सामाजिक शोध में महिलाओं को अनदेखा करना

महिलावादियों की समालोचना में एक सामान्य मुद्दा यह है कि शास्त्रीय समाजशास्त्र में सामाजिक जगत के सामाजिक विश्लेषणों में महिलाओं को देखा तक नहीं गया है। शास्त्रीय समाजशास्त्र की भाषा और विश्लेषण पुरुषों, पुरुष गतिविधियों और अनुभवों तथा पुरुषों के प्रभुत्व वाले समाज के हिस्सों से ओत-प्रोत हैं। मार्क्स, वेबर और दुर्खाइम उन्नीसवीं शताब्दी के विशिष्ट यूरोपीय लेखक थे जिन्होंने माना था कि सामाजिक जगत में पुरुष गतिविधियाँ ही प्रधान हैं।

स्रोत: http://uregina.ca/-gingrich/orff99.htm

- **महिलावादी समाजशास्त्र सार्वजनिक और निजी के बीच पृथक्करण और मूर्तकरण के विरुद्ध है।**

समाजशास्त्र में जब महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव को प्रमुख रूप से परिवार को संगठित करने वाले सिद्धांत के रूप में देखा गया तो सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों को मिथ्या रूप से महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से विहीन होने के रूप में अवधारणीकृत कर दिया गया।

इसके साथ ही यह जुड़ गया कि 'सार्वजनिक' क्षेत्र महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से विहीन है और केवल निजी क्षेत्र में ही महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव होता है। इस प्रकार का विभाजन करना विचारधारा विशेष का द्योतक है और बहुत भटका देने वाला है (देखें कोष्ठक 10.5)। इसका उदाहरण है कि निगमीय कम्पनियों के क्षेत्र में पुरुषों को प्राथमिकता दी जाती है और इसके लिए यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि पुरुष काम के प्रति ज़्यादा वचनबद्ध होते हैं जबकि महिलाओं का ध्यान बंट जाता है क्योंकि वे विवाह एवं संतानोंत्पत्ति में लग जाती हैं। यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि विवाह तो पुरुषों का भी होता है और संतानें तो उनके भी होती हैं। परंतु प्रधान मान्यता यही है कि निजी दायरे में सफ़ाई रखना, खाना-पकाना, खरीददारी, संतान की देखभाल, अभिभावक शिक्षक बैठक में जाना, बीमार की देखभाल करना तो केवल महिलाओं के ज़िम्मे होते हैं। यही कारण है कि सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में महिलाओं के काम को तब तक पुनर्गठित नहीं किया जा सकता जब तक निजी क्षेत्र में केवल उन्हीं को उत्तरदायित्व सौंपा जाता रहेगा। विकासशील देशों तथा विकसित देशों में भी घरेलू काम-काजों को पूरा करने के लिये महिला नौकरों को लगाया जाता है। श्रीलंका, फिलिपीन्स और बंगलादेशी महिलाएं विदेशों में मध्यवर्गीय घरों में काम करने के लिये बड़ी संख्या में प्रस्थान कर रही है। इस तथ्य से वर्ग और नृजातीयता जैसी अन्य श्रेणियाँ और महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव एक दूसरे को छूते है। इसी के साथ एक तीसरा मुद्दा भी उठ खड़ा होता है जिसके बारे में नीचे विस्तार से बताया जा रहा है।

कोष्ठक 10.5: सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बीच विभाजन

आधुनिक, शहरी, औद्योगिक समाज के लंबे इतिहास का एक पहलू रहा है सार्वजनिक और निजी कार्य क्षेत्रों के बीच पृथक्करण का विकास। परंपरागत समाजों में सदा से ऐसा नहीं था भले ही महिला-पुरुष होने के आधार पर श्रम विभाजन और पुरुष-प्रधानता रही हो। इसमें संदेह नहीं है कि पूंजीवाद नगरों एवं उद्योग के विकास के साथ पुरुषों के वर्चस्व वाला और पुरुषों के कार्यकलापों से विकसित सार्वजनिक कार्यक्षेत्र उदित हुआ। महिलाएं सामान्यतः घर और परिवार के निजी कार्यक्षेत्र तक ही सीमित रहीं और राजनीतिक, आर्थिक और यहाँ तक कि सामाजिक सार्वजनिक जीवन में उनकी सहभागिता बहुत ही थोड़ी थी। जब महिलाएं सार्वजनिक कार्यकलापों में भाग लेने लगी तो सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी पर प्रतिबंधित करने के लिए आंदोलन हुए, उदाहरण के लिए कारख़ाना क़ानून और परिवार के आधार पर मज़दूरों को भत्ता देना आदि।

स्रोत: http://uregina.ca/-gingrich/orff99.htm

MAADHYAM IAS

- **महिलावादी समाजशास्त्र ने सामाजिक व्यवस्था में महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव वाली प्रस्थितियों की विविधता को माना है।**

अध्ययन की पद्धतियों को परिष्कृत करने पर टिप्पणी देते हुए कृष्णराज (2005: 3012) ने कहा कि, "महिलावादी उपागम का सकारात्मक लक्षण है कि यह संदर्भों की ओर अधिक ध्यान देता है, न कि पूर्वपरिभाषित, अनुक्रियान्वित प्राक्कल्पनाओं पर।" महिलावादी समाजशास्त्र ने सामाजिक वर्ग, जाति, प्रजाति, नृजातीयता और श्रम के अंतर्राष्ट्रीय विभाजन को आर-पार करती हुई प्रस्थितियों पर ध्यानकेंद्रित किया है। इसीलिए महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव आर्थिक अवसर और राजनीतिक शक्ति में कभी न पटने वाली ख़ाइयों से ओत-प्रोत है (देखें कोष्ठक 10.6)।

महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव की श्रेणियाँ समरूपीय नहीं हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है घरेलू नौकरी करने वाली महिलाएं सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बीच 'सेतु' का काम करती है क्योंकि वे अपनी मालकिन के सामाजिक पुनरुत्पादन का दायित्व अपने ऊपर लेकर, मालकिन के सार्वजनिक क्षेत्र में जाने को सुगम बनाती हैं और इस तरह दो क्षेत्रों के बीच के अंतराल को भरती हैं। यद्यपि घरेलू काम करना व्यवसायों के सोपानक्रम में निम्न स्तर पर है लेकिन दुनिया भर में यह आसानी से मिल जाता है। इस कारण कौशलों, प्रशिक्षण या शिक्षा युक्त या इनके बिना ही आर्थिक रूप से सताई महिलाएं राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर दूरदराज के स्थानों में नौकरी की खोज में जाती हैं। महिलावादी शोध ने प्रजाति, आयु, नृजाति, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में महिलाओं के विविध अनुभवों और व्यवहारों के अध्ययन पर बल दिया है (देखें स्टेन्सी और थॉर्न 1998: 219-240)। इन अध्ययनों में चेतन रूप से अनदेखा करने की बजाय अधिकाधिक पक्षों को सम्मिलित करने का प्रयास किया गया है। प्रस्थिति, इज्ज़त जैसी समाजशास्त्रीय अवधारणाओं से समाज में महिलाओं के स्थान का परीक्षण करने में सहायता मिलती है।

MAADHYAM IAS

कोष्ठक 10.6: महिला और पुरुष के बीच असमानताएं

शास्त्रीय समाजशास्त्रियों ने सामान्य रूप से विभिन्नताओं से असमानता पर ध्यान केंद्रित किया था। मार्क्स इस बारे में मे सर्वाधिक स्पष्ट था लेकिन दुर्खाइम और वेबर ने अंतर और असमानता का परीक्षण करने के विभिन्न तरीके विकसित किए। श्रम-विभाजन, शोषण और शक्ति, प्रभुत्व और सत्ता जैसे मुद्दे अंतर और असमानता पर बल देते हैं। फिर भी पुरुष और महिला के बीच असमानताएं या जातिगत और नृजातीय असमानताओं को शास्त्रीय समाजशास्त्र में नाममात्र की जगह मिली है। महिलावादियों ने पितृसत्ता को असमानता की सामाजिक व्यवस्था के रूप में देखा है लेकिन शास्त्रीय समाजशास्त्र ने इसका केवल सीमित विश्लेषण ही किया था। मार्क्स और ऐंगल्स ने अवश्य महिला और पुरुष के बीच असमानता का मॉडल (प्रारूप) दिया लेकिन यह संपति और आर्थिक मुद्दों से निकला था (वेबर ने पितृसत्ता का विश्लेषण तो किया लेकिन उसके विश्लेषण में महिला और पुरुष के बीच असमानताएं मुख्य सरोकार नहीं थीं।

स्रोत: http://uregina.ca/gingrich/028(22.htm)

महिलाएं केवल विवाह या परिवारों के संदर्भ में ही गतिशील होती हैं – वस्तुतः यह धारणा उन पितृसत्तात्मक मान्यताओं के पुंज पर टिकी हैं जो महिलाओं को प्रथमतः और पूर्णतः गृहिणियां समझते हैं। इन धारणाओं के अनुसार महिलाएं स्वतंत्रत रूप से कार्य नहीं करती और इसीलिए उनका एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना केवल कमाऊ पुरुष आप्रवासियों के साथ ही संभव है। तथ्य हमें दूसरी ही कहानी बताते हैं। प्रवास के पैमाने के संदर्भ में महिलाओं और बच्चों की संख्या वयस्क पुरुषों से अधिक है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा

लगाए गए अनुमान के अनुसार विश्वभर के 150 मिलियन प्रवासियों में से 36-42 मिलियन प्रवासी श्रमिक हैं और 44-55 मिलियन उनके परिवारों के सदस्य हैं। इसके अलावा पुरुष प्रधान परिवारों की तुलना में महिला प्रधान प्रवासी घरों में वयस्क पुरुषों के होने की संभावना कम है। शरणार्थियों के लिए संयुक्त राष्ट्र के उच्चायुक्त (UNHCR) के अनुसार 6.1 मिलियन शरणार्थियों में 51 प्रतिशत महिलाएं हैं जिनके बारे में महिला-पुरुष में सामाजिक भेदभाव के आधार पर जानकारी उपलब्ध है (भाभा 2003)।

10.5 महिलावादी उपागमों में आत्मचिंतनपरकता

हमारे सोचने के तरीक़ों में बदलाव से ही बदलाव की हमारी इच्छा जाग्रत होती है। ऐसे में औरों के साथ यह आदान-प्रदान करना बहुत उपयोगी और सांत्वनादायी है कि "महिलावादी सामाजिक विज्ञान एवं विद्वता के लिये महिलाओं की वास्तविक विशेषज्ञता और भाषा ही उनका प्रमुख सरोकार है" (दुब्बा 1983: 108)। पिछले एक दशक से महिला शोधकारों ने महिलाओं की आवाज़ों को सुनने की ज़रूरत पर निरंतंर बल दिया है। मालविका कार्लेकर (2004: 387) ने कहा,

> आज महिलाएं सुगमता से आदान प्रदान करने, बोलने और अपने जीवन के बारे में पुनः विचार करने की इच्छुक हैं, इसी कारण मेरा आत्म-विश्वास भी बड़ी मात्रा में बढ़ा। अपने शोध क्षेत्रों में दुबारा जाने से पहले मुझे अनेक बार पारस्परिक आदान-प्रदान और विश्वास जीतने के मौक़े मिले थे इसलिये मैं आश्वस्त थी कि संदर्भ को सृजित करना और यहाँ तक कि नए सिरे से पुनःनिर्मित करना असंभव नहीं है। क्षेत्रीय शोधकार को अनेकों जीवन वृत्तांत सुनने-कहने पड़ते हैं और निश्चित रूप से, उनमें से एक कहानी उसकी अपनी कहानी होती है। जब जिन्हें वह सुनना चाहती है वे आवाज़ें शीशे की तरह साफ़ ईमानदारी के साथ पैने ढंग से कही जाती हैं तो अपनी भूमिका की व्याख्या तथा समझने की समस्याएं आदि अनेकों प्रश्नों को दबाने के लिए वह कड़ा प्रयास करती है। बीस साल पहले, इस ईमानदारी और उत्तर प्राप्त करने के प्रयास से मैंने स्वयं को भयभीत, आदत और असमर्थ पाया था। आज, उत्तर देने वालों की अपेक्षाओं से निपटने में मुझे कठिनाई नहीं होती। यह केवल मेरे अंदर की बात नहीं है। आज शिशुपालन का दायरा, नौकरी, घरेलू द्वन्द्वों के समाधान हेतु युक्तियां इत्यादि बढ़ गये हैं एवं वैध हो गये हैं। पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार से उत्पीड़ित महिला की ज़माने से चली आई समस्या का कोई हल निकालने के लिए मैं कम से कम प्रयास तो कर सकती हूँ। लेकिन बाल्मीकी महिलाओं से तो ऐसा प्रश्न के पूछने का साहस तक मुझ में नहीं है क्योंकि मुझे लगता है कि यह उनकी गोपनीयता पर हमला तो होगा ही साथ में मैं नहीं जानती कि मैं इसका क्या हल निकाल सकती हूँ।

MAADHYAM IAS

समाजशास्त्र को महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के मुद्दे से मुक्त करने का अर्थ है उन प्रक्रियाओं पर सवाल उठाना जिनके द्वारा समाजशास्त्रीय लेखन को महिलावादी चिंतन से अवगत कराया गया। महिलावादी आत्मपरक चिंतन वाली समाजशास्त्र की समझ को मुक्तिदायक के रूप में देखा गया। अतः आत्मचिंतनपरक आधुनिकता से प्रतिबद्ध व्यक्तियों के लिए समाजशास्त्र को महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के मुद्दे से मुक्त बनाने के काम में शामिल है– उन तरीकों को प्रकाश में लाना जिनसे समाजशास्त्रीय लेखन पितृसत्तात्मक, मध्यवर्गीय, हिंदू और ब्राह्मणवादी बन चुका है। जैसा कि रेगे (2003: 4) ने कहा, "सीमांती लोगों के अनुभवों को केंद्र में लाने के बाद, कठिनतम काम है कि विश्लेषण की मूलभूत श्रेणियों को पुनः अवधारणीकृत किया जाये।"

आइए अब इकाई के अंत में समाजशास्त्र में महिलावादी दृष्टिकोण के विषय की और ज़्यादा चर्चा करने से पहले सोचिये और करिये 10.3 को पूरा कर लें।

सोचिये और करिये 10.3

इकाई 10 को पूरा पढ़ लेने के बाद, अपने आसपास के कम से कम पांच वयस्कों से निम्नलिखित प्रश्नों पर विचार विमर्श करें। इसके उपरांत एक अलग कागज़ पर इन प्रश्नों के उत्तर लिखें। अपने उत्तरों के आधार पर 'समाजशास्त्र के प्रति मेरा नज़रिया' विषय पर एक निबंध लिखें।

प्रश्न

- शास्त्रीय समाजशास्त्रियों की तरह, क्या आपका भी यह मानना है कि महिलाओं और पुरुषों के बीच प्रकृतितः अंतर हैं?
- क्या आपका मानना है कि महिलाएं प्रकृति-जगत से जुड़ी हैं जबकि पुरुष संस्कृति से जुड़े हैं?
- क्या आपका मानना है कि महिलाएं भावात्मक होती हैं तथा पुरुष तर्कमूलक होते हैं?
- क्या आप इस अवलोकन से सहमत हैं कि सामाजिक जगत की शास्त्रीय परिभाषाओं में मानव क्रिया और अंतःक्रिया के सभी भाग शामिल नहीं किये गये हैं?
- क्या आपको ऐसा समाजशास्त्र अधिक भायेगा जिसमें सामाजिक स्थितियों में महिलाओं और बच्चों का स्थान हो और सामाजिक क्षेत्रों में महिलाओं के अनुभव केंद्रबिंदु हों?

10.6 भारत में महिलावादी लेखन

MAADHYAM IAS

भारत में महिलावादी लेखन प्रायः विवाह और परिवार की समालोचना के इर्दगिर्द उभरा है। इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि भारत में महिलावादियों ने विवाद को बीसवीं शताब्दी के अंतिम तीन दशकों में मुखर किया है। इस विवाद में ने केवल महिलाओं के उत्पीड़न विनिर्मित के संदर्भ में सिद्धांतीकरण किया गया है बल्कि वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में इससे कैसे निपटा गया व कैसे बदलाव आया – इसे भी देखा गया है। महिला उत्पीड़न के आर्थिक, वर्ग पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करके समाजवादी महिलावाद ने यौन, आर्थिक वर्ग और प्रजातीय अत्यचार के बीच संबंध पर चर्चा की है। हैन्समैन (2005: 7-9) जैसी विद्वानों ने विवाह, परिवार भी समुदाय की समाजवादी-महिलावादी मीमांसा प्रस्तुत की। इन विद्वानों का मानना है कि वामपंथीय मूल मीमांसा अपर्याप्त हैं। इसी तरह जॉन (2005: 712) ने परिवार और विवाह का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से अध्ययन किया और दर्शाया कि किस तरह 'उन्नीसवीं' और प्रारंभिक बीसवीं शताब्दियों के दौरान समाज सुधार आंदोलन ने 'परंपरा' की समीक्षा के माध्यम से घरेलू क्षेत्र में प्रवेश किया और विधवा, बाल वधू तथा अन्य विषयों पर ध्यान दिया। भारत में महिलावाद केवल उच्च और मध्य वर्गीय समाज की वास्तविकताओं तक ही सीमित नहीं है। इसने हमारा ध्यान दलित और निम्न जाति की महिलाओं की उभरती हुई समालोचनाओं की ओर खींचा है। राष्ट्रीय दलित महिला संघ के नाम से बना अखिल भारतीय समूह जाति-आधारित असमानताओं पर विवाद का प्रतीक है और भारतीय महिलावादियों ने उन चुनौतियों का सामना किया जो इस समालोचना के फलस्वरूप प्रकाश में आई थीं। यह आलोचना मुख्यतः इस बिंदु पर थी कि महिलावादी आंदोलन की मुख्यधारा में दलित महिलाओं के परिप्रेक्ष्य को शामिल नहीं किया गया था (देखें राव 2001)। महिलाओं पर अत्याचार व हिंसा और क़ानूनी असमानताएं भारतीय महिलावादियों की व्यापक चर्चाओं का मुख्य विषय रहे हैं और अब भारतीय महिलावादी विद्वानों ने दिन-प्रतिदिन होने वाली घटनाओं के प्रकाश में विवाह और परिवार के मुद्दों को लिया है, साथ में यौन तथा महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से जुड़े संबंधों के बारे में दृष्टिकोणों के टकरावों को भी देखना शुरू किया है (महिला अध्ययनों और समाजशास्त्र के लिए देखें जॉन 2003)।

10.7 निष्कर्ष

इस इकाई का अंत हमने एक उद्धरण से किया है। फ़ैरी, मार्क्स, लॉबर्ट और हाइज़र (199: xii) ने महिलावादी उपागमों के बारे में कहा,

> महिलावादी उपागम ने सामाजिक तथ्यों में महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव को उजागर किया और पूछा कि कैसे और क्यों सामाजिक प्रक्रियाएं, मानक और अक्सर महिलाओं तथा पुरुषों के लिये बिना अपवाद भिन्न-भिन्न हैं। (इस उपागम का यह भी मानना है) कि महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभावजन्य असमानता अन्य व्यवस्थाओं की असमानता के साथ जटिल रूप से गुंथी हुई है। इस तरह विश्व को महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभावजन्य नज़रिए से देखने का अर्थ है दो विरोधी दिखने वाले कार्य। पहला कार्य है यह सामने लाना कि समाजशास्त्रीय शोध में व्याप्त महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के बारे में पहले से ही मान लिये गये पूर्वग्रह जो सामाजिक जीवन में भी उतने ही व्याप्त हैं। दूसरा कार्य है यह दिखाना कि कैसे महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से जुड़े केंद्रीय पूर्वाग्रह अनुभवजन्य यथार्थ की उपेक्षा करते हुए सामाजिक जगत को संगठन देने का काम अभी भी करते हैं।

उद्धरण में वर्णित कार्य समाजशास्त्री के वर्तमान प्रचलनों के अनुरूप है। लगभग समूचे विश्व में महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव पर शोध और सिद्धांत को उच्च शिक्षा संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में एकीकृत करने का सचेत प्रयास किया जा रहा है। यह समाजशास्त्र में बदलाव की धाराओं को दर्शाता है।

केवल महिलाओं पर किए गए महिलावादी शोध वाले अलग-थलग महिलावादी पद्धति के लिये बहस करने की जगह सामाजिक विज्ञानों की मुख्यधारा में सैद्धांतिक और शोध पद्धतिजन्य लेखन में महिलावादी शोध को अवस्थित करने के लिये आप प्रयास कर सकते हैं। समाजशास्त्रीय शोध में अब महिला-पुरुष के सामाजिक भेदभाव पर अध्ययन ने उल्लेखनीय स्थान प्राप्त कर लिया है। महिलावादी उपागम का समाजशास्त्र को योगदान मात्र महिलाओं के अनुभवों का वर्णन करने और रूढ़िवादी समाजशास्त्र में यौनवाद के प्रतीकों को उजागर करने तक ही सीमित नहीं है। महिलावादी उपागम ने नई विजय वस्तुओं और अवधारणाओं को शामिल करने का योगदान किया है। आपको लग सकता है कि महिलावाद उपागम समाजशास्त्र से निदर्शनीय बदलाव का अग्रदूत है। के. ए. मायर्स द्वारा संपादित *फ़ेमिनिस्ट फ़ाउंडेशन: टुवर्ड्स ट्रांसफ़ोर्मिंग सोशियोलॉजी* (1998) जैसी रचनाओं में आपको इसी प्रकार के महिलावादी उपागम का दिग्दर्शन हो सकता है। समाजशास्त्र पर महिलावादी उपागम के प्रभाव की इस चर्चा से संभव है कि हम सहमत हों या असहमत हों परंतु हमारा यह बहस करने का अधिकार है कि अब महिलावादी शोध ने अपनी समालोचना के प्रति संवेदनशीलता पैदा की है और इसके परिणामस्वरूप यह अधिक से अधिक रूप में समाहित करने की ओर अग्रसर है। इसका अर्थ है कि अब महिलावादी शोध में विभिन्न प्रजातियां, आयु-वर्गों, रंगों, संस्कृतियों और इतिहासों की महिलाओं के विविध अनुभवों और परिप्रेक्ष्यों पर और अधिक ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। इस उन्मुखता ने महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभावों से जनित संबंधों के उपयोगी विश्लेषणों को प्रस्तुत किया है। इन विश्लेषणों को उत्तरोत्तर प्रजातिवाद, नृजाति केंद्रीयतावाद और सामाजिक-आर्थिक रचनाओं के मुद्दों से जोड़ा जा रहा है (उदाहरण के लिए देखें जैन 1988 और 2006)। अब महिलावाद मात्र एक धुन नहीं है और महिलावादी उपागम में सामाजिक यथार्थ के निर्माणों एवं दृष्टिकोणों में व्यापक बदलावों की झलक मिलती है।

MAADHYAM IAS

10.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

साइदी, आर. ए. 1987. *नेचुरल विमेन कलचर्ड मैनः ए फ़ेमिनिस्ट पर्स्पेक्टिव आफ़ सोशियोलॉजिकल थियरी।* मैथ्यूनः टोरेटो (महिलावादी नज़रिये के शास्त्रीय समाजशास्त्रियों, मार्क्स, दुर्खाइम और वेबर के विचारों के व्यवस्थित विश्लेषण हेतु)

टॉन्ग, रोज़मेरी. 1989. *फ़मिनिस्ट थाटः ए कम्पेरिटिव इन्ट्रोडक्शन।* वैस्ट व्यू प्रैसः बोल्डर (शक्ति, प्रभुत्व, सोपानक्रम और प्रतियोगिता की विशेषताओं वाली व्यवस्था के रूप में पितष्सत्ता की चर्चा के लिए)

जॉन, मेरी ई. और जाकी नायर (संपादक) 1998. *ए क्वश्चन आफ़ साइलेंस? द सैक्सुयल इकोनोमीज़ आफ़ माडर्न इंडिया।* काली फ़ॉर विमेनः नई दिल्ली

दुबो, 1983. पैशनेट स्कॉलरशिपः नोट्स ऑन वैल्यूस, नोविंग एंड मैथड इन फ़ैमिनिस्ट सोशल सांइस। इन जी. बोल्स एंड आर डूएली-क्लेन (संपादित), *थियरीज़ आफ़ विमेन्स स्टडीज़।* रटलेज़ एंड केगन पॉलः लंदन

चौधरी, मैत्रेयी, 2004. *फ़ैमिनिज़्म इन इंडियाः विमेन अनलिमिटैड.* कालीः नई दिल्ली

जैन, शोभिता 2006. विमेन्स एजेंसी इन द कन्टैक्स ऑफ फैमिली नैटवर्क्स इन इंडियन डायसपोरा. *इकानॉमिक एण्ड पोलिटिक्स वीकली* x21(23): 2312-2316

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 11
सहभागी विधि

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 सामान्य बोध के साथ संबंध; विचारधारात्मक अवस्थिति पर प्रश्न

11.3 ऐतिहासिक संदर्भ

11.4 मुख्य विशेषताओं का निरूपण

11.5 निष्कर्ष

11.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 11 को पढ़ने के पश्चात आपके लिये संभव होगा:

- सामाजिक विज्ञानों की मुख्यधारा में सैद्धांतिक और शोध पद्धति संबंधी विवादों के अंतर्गत सामाजिक शोध में सहभागी विधि का स्थान-निर्धारित करना;
- सहभागी विधि के उदय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि बताना;
- सहभागी शोध पद्धति के आधारों की विवेचना करना;
- शोध के लिए परंपरागत शोध पद्धति की सहभागी विधि के साथ तुलना करना; तथा
- सहभागी विधि के संक्रियात्मक आयाम और सहभागी ग्रामीण मुल्यांकन के उपयोगों का वर्णन करना।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

11.1 प्रस्तावना

इकाई 11 में शोध-पद्धतियों पर हमारी बहुआयामी चर्चा को समाप्त किया जायेगा। एक तरह से तो हमने इस बिंदु तक पहुंचने के लिए लंबा रास्ता अपनाया है। इस बिंदु तक आते-आते आपको स्पष्ट हो रहा होगा कि यथार्थ को समझने की प्रक्रिया में सब को शामिल करना शोध की एक सर्वव्यापी गतिविधि है। संभवतः इस उपागम और पुस्तक 1 की अन्य इकाइयों की सामान्य दिशा से आप पूरी तरह सहमत न हों। फिर भी इसमें आपको सामाजिक विज्ञानों में शोध-पद्धतिमूलक वाद-विवादों की प्रमुख धाराओं से परिचित होने का अवसर तो मिला ही है। पुस्तक 2 और पुस्तक 3 को पढ़ते हुए आपको पुस्तक 1 की कुछ इकाइयों को एक बार फिर से पढ़ने की आवश्यकता महसूस होगी। इकाई 11 उन्हीं इकाइयों में से एक है जिसे आप पुनः पढ़ना चाहें क्योंकि सहभागी विधि ने मूल्य-तटस्थ शोध की समीक्षा प्रस्तुत की है और सामाजिक जगत के शोध की प्रक्रिया में उन्हें भी सम्मिलित करने की ज़रूरत बताई है जिन पर शोध किया जा रहा है। यही कारण है कि शोध की इस विधि से जुड़ने में आपको सरलता होगी। आइए, जानें कि सहभागी विधि क्या है।

11.2 सामान्य बोध के साथ संबंध; विचारधारात्मक अवस्थिति पर प्रश्न

तुलनात्मक पद्धति पर अपनी चर्चा में हमने पहले ही देखा है कि सामान्य बोध और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणों के बीच अंतर करना क्यों और कैसे महत्वपूर्ण है। यथार्थ के समाज बोधात्मक अनुभव से जान-बूझकर हटना ही सामाजिक विज्ञान की शुरुआत की

उल्लेखनीय आधारभूत बात थी। तथ्य रूप में मान लिये गये यथार्थ को वैध प्रारंभिक बिंदु नहीं माना गया। प्राकृतिक विज्ञान से सादृश्य का उपयोग करें तो यह अर्थ निकलता है कि यद्यपि लोगों को मालूम है कि सूर्य पश्चिम में अस्त होता है और पूर्व में उदय होता है, विज्ञान ने अच्छी तरह से दिखाया कि सूर्य नहीं घूमता, पृथ्वी घूमती है। भले ही धरती पर होने के हमारे जीवंत अनुभव की ठोस स्थिरता कितनी भी तीव्र हो, इसके बावजूद वैज्ञानिक सत्य यह है कि धरती चलायमान है। एमिल दुर्खाइम के दि रूल्स आफ़ सोशियोलॉजिकल मैथड को संक्षेप में पुनः याद करें जिसमें कहा गया है कि सामाजिक तथ्यों को चीज़ों के रूप में मानना चाहिए, यह इस बात की दो टूक अभिपुष्टि है कि सामाजिक तथ्य प्रकृति का ही हिस्सा हैं। सामाजिक आचरण के परीक्षण से पहले, प्रकृति के बारे में मानव के विचारों में मौजूद जमी-जमाई धारणाओं और भ्रमों पर अनुभवजन्य विज्ञान को जीत हासिल करनी होगी। यह जीत हासिल करना आसान काम नहीं है क्योंकि जमी-जमाई धारणाएं और भ्रम वस्तुतः हमारे सामाजिक जीवन का एक अंश हैं। सामाजिक तथ्यों को चीज़ों के रूप में देखने का अर्थ है तटस्था हो सकने का काम करना। तटस्थता से ही हमें समाज के वस्तुपरक अस्तित्व का आभास हो पाता है कि हममें से किसी से भी स्वतंत्र होकर समाज का अस्तित्व होता है। इसीलिये समाज का अध्ययन निष्पक्ष प्रेक्षण की विधियों से किया जा सकता है।

बहुत समय तक यह धारणा रही है कि यथार्थ का बाहर से और स्थान विशेष से (जो कहीं नहीं और सब जगह पर है) प्रेक्षण तथा अध्ययन किया जा सकता है। भले ही एक ओर मार्क्सवादी उपागम और दूसरी ओर दृश्यप्रपंचशास्त्रीय मत ने तटस्थता के इस विचार को चुनौती दी। महिलावादी उपागम ने हाल ही में इस विचार के बारे में गंभीर सैद्धांतिक चुनौती प्रस्तुत की। एक अन्य दृष्टिबिंदु से सहभागी विधि ने भी इसी मुद्दे को उठाया है।

सहभागी विधि के ऐतिहासिक संदर्भ और इसकी मुख्य विशेषताओं पर विस्तार से चर्चा करने से पहले महिला उपागम और सहभागी विधि के निहितार्थों की एक अन्य समानता की ओर आपका ध्यान ले जाया जा रहा है। यह पूरा का पूरा मुद्दा विषय की सीमाओं और उसकी विशुद्धता का है। आज यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जा चुका है कि ज्ञान को विषयबद्ध करने और शैक्षिक विषयों के उदय के बीच संबंध विद्यमान है। हमें यह भी मालूम है कि एक विशिष्ट रूप से सैद्धांतिक उपागम का यह मानना है कि हमारे लिये शोध के स्पष्ट क्षेत्र तय करना संभव है और इस तरह विभिन्न विषयों के द्वारा अध्ययन किये जाने वाले शोधकारों के लिये सामाजिक यथार्थ को आर्थिक, राजनीतिक, समाजशास्त्रीय जैसे विभिन्न हिस्सों में बांटा जा सकता है। इस प्रकार से प्रखंडित उपागम में यह माना गया है कि विभिन्न विषयों द्वारा विकसित किए गए सैद्धांतिक साधन तटस्थ और वैज्ञानिक हैं। ऐसे मामले में प्रदत्त निदर्शनों पर बिना प्रश्न किए और इन साधनों का प्रयोग करना या सामान्य विज्ञान का अनुपालन करना समुचित लगता है। महिलावादी और सहभागी उपागमों ने इस मान्यता पर प्रश्न उठाए हैं। शोध की नई तकनीकों को लागू करने संबंधी सुझावों के साथ-साथ इन नये दृष्टिकोणों ने शोध के ज्ञानमीमांसीक आधार के पुनर्प्रतिपादन के रास्ते खोले हैं।

यहाँ इस तथ्य को बताना उपयोगी है कि दोनों, महिलावादी और सहभागी उपागम कैसे समान राहों पर चले हैं। दोनों ने इस धारणा पर प्रश्न किया कि क्या पारंपरिक सामाजिक शोध सचमुच मूल्य-निरपेक्ष, सर्वव्यापी और निष्पक्ष है? दोनों का मानना है कि सार्वभौमिक दृष्टिकोण जैसा विचार जाति, वर्ग, प्रजाति, महिला-पुरुष में सामाजिक भेदभाव आधारों पर विभक्त विश्व में क्या 'सार्वभौमिक' हो सकता है? दूसरे शब्दों में समाज के प्रभुताशाली मत को ही सार्वभौमिक दृष्टिकोण के रूप में प्रस्तुत कर दिया जाता है। उन्होंने मुख्यधारा के पांडित्य द्वारा समर्थित निष्पक्ष उपागम पर सवाल उठाया। उन्होंने परंपरागत विषय-सीमाओं

को चुनौती दी और परंपरागत शैक्षिक पाडिल की तुलना में अंतर्विषयी उपागम का समर्थन किया।

उन्होंने समाज में हित विशेष के लिये सक्रिय लगन के विचार को बढ़ाया। उदाहरण के लिए महिला उपागम व्यापक रूप से चाहेगा कि महिला-पुरुष में सामाजिक भेदभाव के विश्लेषण से निकले निष्कर्षों को शोध की मुख्यधारा में शामिल किया जाये क्योंकि इन निष्कर्षों से पता चला है कि मूल्य-तटस्थ एवं निष्पक्ष ज्ञान के रूप में प्रस्तुत जानकारी वास्तव में पुरुष केंद्रित थी। इसी तरह सहभागी उपागम के अनुसार चाहे वर्ग पर आधारित हों या जाति पर या महिला-पुरुष होने पर, सीमांती (marginal) समूहों के दृष्टिकोणों और स्वरों को समुचित रूप से सुना ही नहीं गया। इसलिये इस स्थिति को सुधारने के लिए शोध पद्धतिमूलक सक्रिय प्रयास करना होगा।

महिलावादी और सहभागी उपागमों के बीच समानताओं के उपर्युक्त विवरण से आपको आसानी से समझ में आ सकता है कि उपागमों को लागू करते समय शैक्षिक शोध के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन लाना हमारे लिये काफ़ी संभव है। महिलावादी सिद्धांत और महिलावादी आंदोलन के बीच प्रतिबद्धतापूर्ण निकट संबंध में या शोध के दौरान महिला-पुरुष के बीच सामाजिक साम्यता के प्रति आत्म चेतना के साथ प्रतिबद्धता को खुले आम व्यक्त करने में आपको स्पष्ट रूप से दिखेगा कि कैसे शोध और सक्रिय होना परस्पर जुड़े हैं। दोनों उपागम केवल समाज में नहीं बल्कि सामाजिक ज्ञान के निर्माण में भी विविधता को स्वीकार करने में विश्वास करते हैं।

महिलावादी और सहभागी उपागमों के बीच समानताएं जानने के बाद आइए उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की ओर बढ़ें जिसके संदर्भ में सहभागी विधि का आविर्भाव हुआ।

ऐतिहासिक संदर्भ पर चर्चा करने से पहले, आइए सोचिये और करिये 11.1 को पूरा करें।

सोचिये और करिये 11.1

सहभागी शोध मानता है कि इसकी विधि शोध को विकास के लिए एक साधन बनाती है क्योंकि शोधकार और जिस पर शोध हो रहा है दोनों के बीच सीखने की समान प्रक्रिया चलती है और इस प्रक्रिया में जो वाद-संवाद होता है उससे उन सभी की शिक्षा और जागरूकता की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलता है जो इसमें शामिल हैं। कल्पना कीजिए आप ऐसी ही अनुसंधान प्रक्रिया में शामिल हैं। आपको क्या करना होगा कि आपके शोध के संगठनीकरण में सहभागी उपागम की झलक आये? अपने शोध के लक्ष्य समूहों की ज़रूरतों की जानकारी लेते हुए आपको निम्नलिखित में किससे पूछना होगा और क्यों?

- स्थानीय जाने-माने नेतागणों से
- स्वयं लोगों से
- सरकारी एजेंसी के प्रशासकों से
- केंद्र द्वारा प्रायोजित योजना अधिकारियों से

11.3 ऐतिहासिक संदर्भ

इस इकाई में यह बताने का प्रयास किया गया है कि निर्दिष्ट कालों में समाज विशेष के सरोकारों के संदर्भ में सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन करने हेतु उपागमों का उदय होता है। इकाई 9 में आपने शैक्षिक पश्चिमी संदर्भ को देखा जिसमें तुलनात्मक पद्धति उभरी। इकाई 10 में आपने ध्यान दिया कि किस प्रकार महिलावादी उपागम महिला आंदोलन की वृद्धि से अटूट रूप से जुड़ा है। इस अर्थ में महिलावादी और सहभागी उपागमों के बीच अधिक समानताएं हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सहभागी उपागम के आविर्भाव के इतिहास का पता लगाने हेतु हमने विश्व के दक्षिणी देशों के ईवान इलिच और पाओलो फ्रेर जैसे प्रौढ़ों के शिक्षकों का उल्लेख किया है। उन्होंने स्कूली शिक्षा के विचार का विरोध किया और वैकल्पिक शिक्षाशास्त्र (pedagagy) का विन्यास प्रस्तुत किया। बाद में यही प्रक्रिया सहभागी शोध की अवधारणा के रूप में मूर्तिमान हुई। उन्होंने शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच समानान्तरीय वार्तालाप को सहज बनाया। जैसा कि टंडन (1996: 29) ने कहा, ऐसा इसलिये किया गया ताकि, 'सीखने की प्रक्रिया पर सीखने वाले का नियंत्रण स्थापित हो सके'। यही सहभागी उपागम का मूलभूत ढांचा था। 1974-75 में प्रौढ़ सीखने वालों के शिक्षकों के एक समूह ने 'सहभागी शोध शब्दों को गढ़ा और इसको अपना कर अंतर्राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा परिषद ने इसे ठोस आकार दिया। ग़ैर-सरकारी संगठनों सहित सभी क्षेत्रों में जहाँ शोध सामाजिक बदलाव और विकास की समस्याओं से जुड़ा था वहाँ वहाँ सहभागी शोध को लोकप्रियता मिली। सहभागी ग्रामीण मूल्यांकन की शोध पद्धति और अनुप्रयोगों पर टिप्पणी करते हुए मुखर्जी (1997: 27) ने लिखा,

> इन अधिकांश एजेंसियों का मुख्य सरोकार ग्रामीण विकास रहा है। इस तरह खेती करने की प्रणालियों पर शोध (एफ एस आर) और अन्य विधियों से प्रभावित होकर 1970 के दशक में शोध पद्धति के रूप में त्वरित ग्राम मूल्यांकन या आर आर ए का विकास हुआ। ऐसी पद्धति के कुछ प्रारंभिक अग्रणी हैं रॉबर्ट चैम्बर्स, पीटर हिल्डर ब्रैंड, रॉबर्ट रोड्स और माइकेल कॉलींसन जो कुछ और लोगों के साथ अक्तूबर 1978 और दिसंबर 1979 में इंस्टिट्यूट ऑफ़ डिवेलपमैंट स्टडीज़ के सम्मेलनों में एक दूसरे से मिले। त्वरित ग्रामीण मूल्यांकन की शोध पद्धति शीघ्र ही विश्व के विभिन्न भागों में फैल गई और अस्सी के दशक के मध्य में विभिन्न क्षेत्र स्थितियों में इसके अनुप्रयोगों का व्यापक अनुभव प्राप्त हुआ।

मुकर्जी (2002: 46-49) ने अपनी पुस्तक मैथडॉलजी इन सोशल रिसर्च की प्रस्तावना में 'शोध की अवधारणा और उसके अनुप्रयोग के रूप में इसके विकास के पोषित करने वाले प्रमुख प्रभावों और प्रेरणाओं' की विवेचना की है। सबसे अच्छा है कि मुखर्जी द्वारा दिये प्रभावों तथा प्रेरणाओं के संक्षिप्त विवरण को कोष्ठक 11.1 में शब्दशः दे दिया जाये (देखें कोष्ठक 11.1)।

MAADHYAM IAS
"way to achieve your dream"

कोष्ठक 11.1: सहभागी शोध के विकास में प्रमुख प्रभाव और प्रेरणाएं

i) **ज्ञान का समाजशास्त्र:** यह सामाजिक समूहों द्वारा प्रतिपादित विचारों और विचारधाराओं को सामाजिक संरचना में उन स्थानों से जोड़ता है जिन पर वे आसीन हैं। अतः उन संघर्षों और विचारों के वैकल्पिक इतिहास लिखे जा सकते हैं जिनका कोई रिकॉर्ड नहीं है और जो इतिहास (विचारधाराएं) रच सकते हैं। इन सीमांती (सबऑल्टर्न) समूहों द्वारा उद्‌जनित ज्ञान जानने, सीखने और शिक्षा की प्रक्रिया के माध्यम से उनके जीवन में बदलाव व रूपांतरण की दशा लाई जा सकती है।

ii) क्रियानिष्ठ शोध: क्रियानिष्ठ शोध को लैट्रिन अमेरीका में पुनः स्थापित कर लिया गया था और आगे यही सहभागी क्रियानिष्ठ शोध का आधार बना। इसमें जानने के वैध तरीके के रूप में क्रिया की धारणा पर बल दिया गया। इस तरह ज्ञान के दायरे को व्यवहार के क्षेत्र में ले जाया गया (टंडन 1996: 21)।

iii) दृश्यप्रपंचशास्त्रीय विचारणा: 'जानने के आधार को प्रत्यक्षज्ञान शास्त्रीय विचारणा ने वैध अनुभव' बनाया। इस प्रकार मात्र बौद्धिक संज्ञान के परे जानने के आधार को विस्तृत बनाया गया (पृष्ठ 21)।

iv) विकास निदर्शन पर वाद-विवादः विकास निदर्शन पर वाद-विवाद ने अधोगामी, विशेषज्ञ निर्मित विकास परियोजनाओं और कार्यक्रमों की आलोचना की और 'लोगों की सहभागिता, समुदायिक सहभागिता, उन की सहभागिता जिनके विकास का प्रयास हो रहा है – जैसे मुद्दों को सामने लाया गया (पृष्ठ 21-22)।

v) नागर समाज का उदयः ग़ैर-सरकारी संगठनों की संस्था के माध्यम से नागर (Civil) समाज की नई संरचना का अविर्भाव हुआ।

आइए सहभागी शोध पद्धति की उन मुख्य विशेषताओं का मूल्यांकन करने की ओर बढ़े जिसे आजकल सामाजिक विज्ञानों के विभिन्न विषयों में कई अनुगामी मिले हैं।

11.4 मुख्य विशेषताओं का निरूपण

प्रारंभिक तुलनात्मक पद्धति द्वारा प्रतिपादित निष्पक्षता और मूल्य-तटस्थता के विचार के बिल्कुल विपरीत सहभागी विधि में सीमांती समूहों (जिनके बोध को सामाजिक विज्ञान के ज्ञान में दरकिनार कर दिया गया है) के साथ लगाव और पक्षपात के बारे में मुखरता और दृढ़ता है। पार्थनाथ मुखर्जी (2000: 46) के अनुसार सहभागी शोध पद्धति तीन महत्वपूर्ण शर्तों पर आधारित है जिसे हमने कोष्ठक 11.2 में मुखर्जी के शब्दों में ही प्रस्तुत किया है।

कोष्ठक 11.2: सहभागी शोध पद्धति के आधार

i) एक लक्ष्य समुदाय/ समूह हो जिसे अपनी तंगहाली (पीड़ित, सीमांती, शोषित) परिस्थिति को ज़्यादा अनुकूल परिस्थिति में बदलने की अनुभूत आवश्यकता है।

ii) मान्य और बाह्य हस्तक्षेप की तरफ उन्मुख शोधकार के सहयोग और संयोजन के साथ यह लक्ष्य समूह शोध लक्ष्य गठित करे, शोध सामग्री इकट्ठा करने में सहभागी हो और जहाँ तक संभव हो सके निष्कर्षों तक पहुँचने तथा उनका विश्लेषण करने में भागीदारी करे। ये निष्कर्ष सीधे बदलाव/विकास के लिए सामुदायिक कार्यवाही से जुड़े निर्णय लेने की प्रक्रिया में प्रयुक्त हों।

iii) बाह्य शोधकार का अंतिम उद्देश्य हो कि ज्ञान का पूरा स्वामित्व (उदाहरण के लिए स्वास्थ्य प्रणाली, प्रौद्योगिकी प्रबंधन तकनीकें) लक्ष्य-समुदाय के हाथों में हो।

इस प्रकार सहभागी शोध वह प्रक्रिया है जो शोध में भागीदारी करने वालों के जीवन तथा जीने की दशाओं में सुधारात्मक बदलाव लाने की ओर दिशा-उन्मुख होती है।

MAADHYAM IAS

सहभागी शोध विधि की तथाकथित परंपरागत शोधपद्धति से तुलना करने से पहले आइए सहभागिता की अवधारणा के बारे में जान लें।

इस शब्द के निस्संदेह विभिन्न संदर्भों में अलग-अलग अर्थ निकाले गये और अनेक व्याख्याएं की गई। यहाँ हमने सामाजिक शोध के संदर्भ तक ही अपनी चर्चा को सीमित रखा है और इस संदर्भ में सहभागिता के कम से कम तीन आयाम हैं।

i) "क्या और कैसे करना है" के बारे में निर्णय लेने के साथ जुड़े सारे लोगों द्वारा एक साथ निर्णय प्रक्रिया में शामिल होने को सहभागिता कहा जाता है।

ii) सहभागिता में विकास के लिए प्रयासों में सभी का योगदान भी शामिल होता है। इसका अर्थ हुआ कि निर्णयों के कार्यान्वयन से प्रभावित होने वाले लोगों का एक साथ कार्यान्वन प्रक्रिया में शामिल होना सहभागिता कहलाता है।

iii) उपरोक्त (i) और (ii) में शामिल सभी लोग विकास के लिए नियोजित और कार्यान्वित प्रयासों के फलों या लाभों में साझेदारी करते हैं।

सहभागिता के बारे में ये विचार समाज की सारी सामाजिक आर्थिक प्रक्रियाओं को निरूपित करते हैं और इसलिए परिवर्तन एवं विकास की सामाजिक प्रक्रियाओं के शोधकारों को इनसे पूरा सरोकार होता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि समाज के व्यापक स्तरीय लक्ष्यों में और सहभागिता के नाम पर सामान्यतः जो होता है, दोनों के बीच एक बड़ा अंतराल है। अक्सर, किसी योजना या कार्यक्रम के कार्यान्वयन में होने वाले वास्तविक कार्य में लोगों की सहभागिता को समुदाय सहभागिता के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। हमारे विचार से, जब तक समुदाय की नियोजन प्रक्रिया में और योजना या कार्यक्रम की कार्यान्वयन प्रक्रिया के बारे में निर्णयन में भागीदारी नहीं हो तब उसे सहभागिता नहीं कहा जा सकता है। सहभागिता के नाम पर बेगारी वाले श्रम को मान लिया जाना तो श्रम के वास्तविक शोषण का और भी अधिक विकृत रूप है। इस अर्थ में, कुछ स्थानीय व्यक्तियों की सहभागिता और समुदाय के संगठित रूप से सम्मिलित होने वाली सहभागिता में आपके लिए अंतर करना उचित होगा। हमें सतर्क रहना होगा कि कहीं उत्साह के अतिरेक में ऐसा न हो कि योजना के सभी कार्यकलापों को नियंत्रित करने में समुदाय की पूर्ण स्वायत्तता की अपेक्षा की जाने लगे। वास्तविक जीवन परिस्थितियों में सहभागिता की ऐसी धारणा किसी भी दृष्टि से संभव नहीं हो पाती है। यहाँ चर्चित सहभागिता या समुदायपरक सहभागिता का हमारा विचार प्रौढ़ सीखने वालों के शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत किए गए विचारों का तार्किक अनुक्रम ही है। इस अर्थ में भागीदारों के लिए सहभागिता का आंतरिक मूल्य होता है और शोधकार भी भागीदारों में से ही एक है। सबसे अधिक आवश्यकता इस बात को समझने की है कि समुदायपरक सहभागिता से विकास योजनाओं के कार्यान्वयन में देशी जानकारी और विशेषज्ञतों का समावेश होना सुनिश्चित हो जाता है। इससे तथाकथित व्यवसायिकों या विशेषज्ञों पर निर्भरता से मुक्ति मिलती है।

सहभागी शोध कुल मिला कर एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य शोध में भागीदारी करने वालों की जीने की दशाओं में सुधार लाना है। सहभागी शोध का एक उप-उत्पाद है कि लोगों के हाथों में ज्ञान का स्वामित्व आ जाता है। सहभागी अनुसंधान की यह विशेषता जीने की बेहतर दशाओं को टिकाऊ या स्थायी बनाती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

मुखर्जी (2000: 47-48) ने तथाकथित शैक्षिक/ पारम्परिक/ रूढ़िगत शोध पद्धति की कुछ मूलभूत विशेषताएं प्रस्तुत की हैं। मूलतः सहभागी शोध पद्धति के तर्क को बढ़ाने वाले क्रियानिष्ठ शोधकारों/ सामाजिक सक्रियतावादियों ने इन्हें उजागर किया है। यह इसलिए है क्योंकि सहभागी शोध पद्धति के समर्थक प्रायः परंपरागत शोध पद्धति के अनुगामियों के विपरीत माने जाते हैं (देखें कोष्ठक 11.3)।

कोष्ठक 11.3: पारम्परिक शोध का सहभागी अनुसंधान से आमना-सामना (मुखर्जी 2000: 47-48 से उद्धृत)

i) **अंतःक्षेपी भूमिकाः** सहभागी शोध की मुख्य शर्त है शोध से जुड़े लोगों की अंतःक्षेपी भूमिका में शोधकार की सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए प्रतिबद्धता होती है। पारंपरिक शोध पद्धति की यह आदर्श स्थिति अमान्य है कि बाहरी विषय-वस्तु से अंतराल रखा जाये ताकि अध्ययन की जा रही स्थिति विषय (सामाजिक वैज्ञानिक की भूमिका) से अप्रभावित रहे।

ii) **मूल्यतटस्थता को तिलांजलिः** स्पष्ट है कि सहभागी शोध में मूल्य-तटस्थता के लिए कोई स्थान नहीं हैं। सहभागी शोध को वांछित निर्दिष्ट परिवर्तन और विकास की ओर लागू किया जाता है।

iii) **सीमांती समूहों का सशक्तिकरण:** पारंपरिक शोध पद्धति के ऊपर से नीचे की ओर देखने के दृष्टिकोण को छोड़कर शोध को उस प्रक्रिया की तरह देखना होगा जिसमें उत्पीड़ितों की परिस्थिति के बारे में लोगों की जागरूकता का निर्माण हो (फ़र्नान्डीज़ और वेगास 1985: 16)। दूसरी ओर, ऊपर से नीचे की ओर देखने वाले दृष्टिकोण में अध्ययन के केंद्र बिंदु, उसकी शोध पद्धति ओर उसके परिणामों के बारे में शोधकार और उसकी संस्था निर्णय लेती हैं। साथ में पारंपरिक शोध पद्धति में जिनका अध्ययन किया जा रहा है उन्हें शोधकार की सुविधा हेतु मौजूद वस्तु की तरह माना जाता है (फ़र्नान्डीज़ और वेगास 1985: 12)। यह तर्क पेश किया जाता है कि अधिकांश पारंपरिक शोध पद्धतियाँ पश्चिम में इस स्पष्ट उद्देश्य के साथ पैदा हुई कि इसके पश्चिमी देशों के आधीन लोगों को नियंत्रित किया जा सके (फ़र्नान्डीज़ और वेगाज़ 1985: 4)। इनके माध्यम से विपरीत, शोध प्रक्रिया द्वारा सीमांती लोगों का सशक्तिकरण सहभागी शोध का घोषित लक्ष्य है (फर्नान्डीज़ और वेगाज़ 1985: 21)।

iv) **लोगों के लिये, लोगों के साथ, लोगों पर नहीं:** पारंपरिक शोध पद्धति तो व्याख्या में वैज्ञानिक सुदृढ़ता और/ या तथ्यों को समझने पर ध्यान केंद्रित करती है। तत्पश्चात उस व्याख्या को अधिकृत पत्रिकाओं के माध्यम से वैज्ञानिक समुदाय के बीच प्रसारित किया जाता है। यह माना और अपेक्षित किया जाता है कि इस प्रकार उद्जनित ज्ञान सामाजिक नीति, सामाजिक कार्य और क्रियानिष्ठ शोध के माध्यम से देर सबेर व्यावहारिक अनुप्रयोग में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से योगदान देगा। दूसरी और सहभागी शोध को अब मात्र लोगों के अध्ययन के रूप में नहीं देखा जाता बल्कि ऐसी प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है जिसके द्वारा स्वयं लोग ही अपने उत्पीड़न की परिस्थिति के बारे में जागरूकता उत्पन्न करने की ओर क़दम बढ़ाते है। इसमें शोध आदर्श रूप से 'लोगों के लिए है और उनके साथ है न कि उन पर है' (फ़र्नान्डीज़ और वेगाज़ 1985:18)।

कोष्ठक 11.3 से ज्ञात होता है कि सहभागी शोध परंपरावादी शोध की आलोचना इसलिए करता है क्योंकि परंपरागत शोध में तृणमूलक स्तर की समस्याओं के प्रति स्पष्ट रूप से संवेदनहीनता है। दूसरी ओर परंपरागत शोध द्वारा सहभागी शोध की आलोचना इसलिए की जाती है क्योंकि इसमें वैज्ञानिक सुदृढ़ता का अभाव होता है। लेकिन ध्यान देने योग्य बात यह है कि सहभागी शोध खुद को परंपरागत शोध के 'एकमात्र विकल्प' के रूप में नहीं देखता। फ़र्नान्डीज़ ने तथाकथित परंपरागत शोध के महत्व को लोगों को गतिमान करने में और नीति वितर्कों के लिए आवश्यक व्यापक वास्तविकताओं को सामने लाने – दोनों में ही मान्यता दी है। मुखर्जी (2000: 47-48) के अनुसार फ़र्नान्डीज़ और वेगाज़ द्वारा वर्णित सहभागी शोध एक प्रकार से साधन-उन्मुख विधि है। इस अर्थ में यहाँ हमारी चर्चा शोध की विधियों या तकनीकों की हो रही है। यह कहा जा सकता है कि दोनों प्रकार की शोध पद्धतियों के तत्वों के समाकलन का समर्थन करना विधियों को मिलाने का एक उदाहरण है। ऐसा करना सहभागी योजना के व्यावहारिक उद्देश्यों से जुड़ा शोध करने के लिए अनुकूल है। मुखर्जी (2000: 49) ने भाष्य शास्त्र उत्तर-संरचनावाद, समीक्षात्मक यथार्थवाद जैसे व्यापक सिद्धांतों के बारे में भी एक रोचक मुद्दा उठाया है। ये सारे सिद्धांत प्रत्यक्षवाद का समर्थन नहीं करते लेकिन वे परम्परागत शोध के इस अर्थ में समान रूप से हिस्सा हैं कि उनका सहभागी क्रियानिष्ठ शोध को गतिमान करने में बहुत कम उपयोग है। मुखर्जी का आगे बढ़कर एक और तर्क है "ऐसे व्यापक सिद्धांत समाज में चहुँमुखी और तीव्र सक्रियता उत्पन्न करते हैं। इस सक्रियता से प्रायः वे दशाएं सृजित होती हैं जिनसे तृणमूलस्तरीय कार्य महत्वपूर्ण और आवश्यक हो जाते हैं"। इस तरह हमें प्रत्यक्षवाद विरोधी नई सिद्धांतीय शोध पद्धतियों का सहभागी शोध से योगदान दिखता है।

यह प्रश्न उठता है कि अपने शोध की रूपरेखा किस प्रकार बनाई जाए ताकि यह उन सामाजिक मूल्यों का संवर्धन करे जो बढ़ती सहभागिता की तलाश में अंतर्निहित होते हैं? वस्तुतः संस्थापित शोध संस्थाएं प्रचलित वर्ग संबंधों के अनुकूल होती हैं और केवल उच्च और मध्य स्तर के शोधकारों के लिये लाभकारी हैं। दूसरी ओर सहभागी शोध का मानना है कि सहभागी विधि द्वारा शोध खुद ही सहभागी विकास के लिए एक साधन के रूप में बदल सकता है। अवश्य ही राष्ट्रीय और स्थानीय शक्ति संरचनाएं कुल मिलाकर सहभागी शोध विधियों के कारण अस्तित्व में आये सद्विवेक की प्रबलता को स्वीकारने में तनिक भी सहायक नहीं होती हैं।

सहभागी आंदोलनों के अनुपालकों द्वारा निश्चित रूप से सहभागी शोध का स्वागत किया जायेगा यदि यह शोध उनकी अपनी सामाजिक अस्मिता को समझने में, तथा उनको प्रभावित करने वाले अन्य सामाजिक संबंधों से अपने संबंधों को जानने में और अपने पारिवारिक स्तर की अपेक्षा अधिक बड़े स्तर पर साझे संसाधनों की अधिकाधिक समान्यता को परखने में उनकी सहायता करेगा।

अपने शोध में सहभागिता पर प्रश्नों का समावेश करने के लिए शोध में कुछ मुख्य मुद्दे का चयन करने की ज़रूरत होती है। मुद्दों का चयन करने के लिए मापदंडों का सहभागी होना आवश्यक है। यहाँ सबसे महत्वपूर्ण बात है सहभागिता के नाम पर नारेबाज़ी से सतर्क रहना, जो वर्तमान लेखन के सभी क्षेत्रों में लगभग सर्वव्यापी है। इस बात को भली-भाँति समझने के लिए सोचें और करें 11.2 अभ्यास को पूरा करना उचित होगा।

सोचें और करें 11.2

सहभागी विधि पर हुई एक अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठी में भाग लेने वाले एक व्यक्ति ने सहभागिता के प्रति अपने देश की प्रतिबद्धता को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया।

विस्तृत कार्यक्रमों की भली-भाँति योजना बना लेने के पश्चात् हम लोगों को स्पष्ट रूप से बताते हैं कि उन्हें क्या करना है, जिससे वे भाग लेने के अपने उत्तरदायित्व को समझ जायें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर लिख कर सहभागिता की धारणा के इस अनुप्रयोग पर अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

- क्या आपको उपर्युक्त कथन में सहभागिता की भावना की उपस्थिति पता लगती है?
- कौन योजना बना रहा है और कौन भाग लेने का उत्तरदायित्व ले रहा है?
- क्या योजना बनाने वाले और भाग लेने का उत्तरदायित्व लेने वाले लोग दो अलग अलग समूहों के होने चाहिये?

समाज विज्ञानों में सहभागी अनुसंधान के समर्थन हेतु हमें इस तथ्य को मानना होगा कि सामाजिक आवश्यकताओं और मूल्यों तथा उपलब्ध दक्षताओं और संसाधनों के संदर्भ में सहभागी प्रचलनों और संस्थाओं को बनाना एक गतिकीय और धीरे-धीरे उद्विकसित होने वाली प्रक्रिया है। सहभागी विधि को केवल चंद दिनों में ही न तो वैधानिक बनाया जा सकता है और ना ही अपनाया जा सकता है।

सामान्यतः काफ़ी समय में, अनुभव और अभ्यास के साथ तथा क्या कामगार होता है क्या नहीं के विश्लेषण के बाद ही सहभागी विधि विकसित होती है।

इकाई 11 में हमने बराबर इस बात पर बल दिया है कि समग्र सैद्धातिक मान्यताओं उपागमों और अंत में उनके बाद आने वाली उपयुक्त क्षेत्र तकनीकों के बीच महत्वपूर्ण

तरह निरूपित किया जाता है। इस संदर्भ में आधुनिकतावाद में उत्तर आधुनिक समाज, उत्तर पूंजीवाद को शामिल किया जाता है। विश्व अर्थव्यवस्था का उत्तरोत्तर उत्थान, जन संचार का महत्त्व, सेवा प्रदान करने वाली आर्थिकी का उदय आदि उत्तर आधुनिकतावाद के घटक है। सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में उत्तर आधुनिकतावाद उत्तर आधुनिकता का ऐसा पहलू है जिसे आधुनिकता के बाद पश्चिम समाज की दशा के रूप में परिभाषित किया गया है। उत्तर आधुनिक विशेषण प्रायः उत्तर आधुनिकतावाद अथवा उत्तर आधुनिकता के पक्षों के लिये प्रयुक्त होता है। उत्तर आधुनिक सिद्धांतकार जीन–फ्रैंको ल्योटार्ड के अनुसार, उत्तर आधुनिकता में महा-वृत्तान्तों (metanarratives) के प्रति संदेहशीलता होती है अर्थात् उत्तर आधुनिक संस्कृति के युग में लोगों ने महाकाव्यों की कहानियों को अस्वीकार कर दिया है। धर्म, परंपरागत दर्शनशास्त्र, पूंजीवाद और पहले ज़माने में व्यवहार तथा संस्कृति में प्रचलित महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव के निदर्शनों को अस्वीकार करके लोगों ने स्थानीय और उप-संस्कृति का मिथकों, वृत्तांतों के इर्द-गिर्द सांस्कृतिक जीवन को संगठित किया हैं। साथ में उत्तर आधुनिकतावाद यह भी मानता है कि मा-वृत्तान्त और निदर्शन तभी तक स्थायी होते हैं जब तक वे उपलब्ध साक्ष्य से मेल खाते हैं। जब निदर्शन के विपरीत प्रतिरूप घटित होते हैं तो ऐसे महा-वृत्तान्तों व निदर्शनों को उल्य भी किया जा सकता है और बेहतर व्याख्या वाला मॉडल या आदर्श प्रस्तुत किया जा सकता है। अवश्य, इस नई व्याख्या का भी यही परिणाम हो सकता है । देखें द पोस्ट-मॉडर्न कंडीशनः ए रिपोर्ट ऑन नॉलेज जो 1979 में छपी थी। उत्तर आधुनिकतावाद को मान लेने के परिणाम के बारे में मत है कि वाद संवाद के विभिन्न क्षेत्र दूसरे वाद-संवाद के परिणामों का मूल्यांकन करने में असमर्थ होते हैं और तुलनीय नहीं होते हैं। ल्योटार्ड का यही निष्कर्ष था।

झुकाव (Predilection): किसी विशिष्ट बिंदु में रुचि दिखाना।

आभासी विज्ञान (Pseudo Science): ज्ञान का ऐसा पुंज जो विज्ञान होने का दावा करे और उसके द्वारा समर्थित भी हो लेकिन जो विज्ञान के क्षेत्र के बाहर ही माना जाता है। ऐसा सोचने के कई मानक हो सकते हैं। परंतु ऐसे में प्रायः वैज्ञानिक विधि का संदर्भ दिया जाता है। बहुत बार प्रयास किया गया है कि इस तरह की स्थिति में दार्शनिक कसौटी को लागू किया जाये किंतु इससे कोई विशेष सफलता नहीं मिली। इसमें कार्ल पॉपर के मिथ्यात्वकरण और इम्रे लकटोस के ऐतिहासिक विवरण के उपागम को शामिल किया जा सकता है। लकटोस ने यह उपागम अपनी कृति मैथडोलॉजी ऑफ़ साइंटिफ़िक रिसर्च प्रोग्राम्स प्रयुक्त किया था। टॉमस कुन और पॉल फेयेरबेंड जैसे विज्ञान के इतिहासकारों व दार्शनिकों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से मानना है कि विज्ञान तथा आभासी विज्ञान में अंतर करना न ही संभव है और न ही श्रेयस्कर है।

आभासी विज्ञान शब्द नकारात्मक है और सामान्यतः इसका अर्थ है कि इसमें मिथ्य एवं धोखे वाली बातें होती हैं (यद्यपि इस शब्द की सही व्याख्या की जाये तो आभासी विज्ञान न ही मिथ्या है और न ही धोखे धड़ी वाला। जो आभासी विज्ञान का समर्थन करते हैं एवं उसे व्यवहार में लाते हैं उन्हें इस प्रकार के वर्गीकरण तथा यह अंतर ही अस्वीकार अमान्य है।

आभासी विज्ञान के कुछ आलोचकों का मानना है कि आभासी विज्ञान के सारे प्रकार वास्तव में हानिरहित मनोरंजन हैं जबकि रिचर्ड डॉकिन और कार्लसगन जैसे विद्वानों के लिये आभासी विज्ञान के सारे रूप बहुत हानिकारक हैं। भले ही इन रूपों से आभासी विज्ञान के मानने वालों को तुरंत ही नुकसान भी नहीं पहुँचे। इन आलोचकों की दृष्टि में आभासी विज्ञान को कई कारणों से माना जाता है। विज्ञान के स्वरूप तथा वैज्ञानिक विधि के बारे में सामान्य सरल भाव से लेकर आर्थिक या राजनीतिक लाभ हेतु जानबूझकर धोखा-धड़ी करना आदि कई तरह के कारण गिनाये जाते हैं।

यत्र-तत्र प्रतिचयन (Random Sampling): सांख्यिकीयशास्त्र की दृष्टि से यत्र-तत्र प्रतिचयन उन मुद्दों का पुंज है जो एक जनसंख्या में से इस तरह लिये गये हैं कि जब भी एक मद

MAADHYAM IAS

का चयन किया जाये तो जनसंख्या के हर मद को प्रतिचयन में लिये जाने का बराबर अवसर हो। व्यवहारगत रूप में यत्र-तत्र प्रतिचयन करना आसान काम नहीं है। सबसे पहले तो इस प्रक्रिया को संचालित करने वाला कारक केवल 'अनायास' ही होता है। उदाहरण के लिये यदि एक बर्तन में रखी टिकटों से यत्र-तत्र प्रतिचयन करना हो तो पहले तो सारी टिकटों को ख़ूब अच्छी तरह मिला देना होगा और यह ज़रूरी है कि सारी टिकटें एक सी हों बस उनपर अंकित संख्या फ़र्क हो। उसके बाद बर्तन में से टिकट निकालने वाले की आंखें पर पट्टी बांध दी जाये और बस यत्र-तत्र टिकटें निकालने को कहा जाये। तभी यत्र-तत्र प्रतिचयन की पहली शर्त संभव है।

दूसरी शर्त है कि हर मद को बराबर रूप से चयन में भागीदारी मिले। इस शर्त को पूरा करने के लिये हमें निकाली हुई टिकट की अंकित संख्या को रिकॉर्ड करने के बाद फिर से बर्तन में पड़ी टिकटों में मिला देना होगा ताकि दूसरी बार के यत्र-तत्र प्रतिचयन में सारी टिकटों की भागीदारी में बराबरी बनी रहे, उसमें कमी न आये। वास्तव में ही यत्र-तत्र प्रतिचयन की विधि को व्यवहार में निष्पादित करने में काफ़ी सावधानी रखनी पड़ती है तथा यह कोई सरल विधि नहीं हैं।

सुधार आंदोलन (Reformation): सुधार आंदोलन की शुरुआत 31 अक्टूबर, 1517 को हुई जब जर्मन भिक्षु संत मार्टिन लूथर ने विट्टनबर्ग, जर्मनी में चर्च के दरवाजे पर अपने 95 सिद्धांतों को ठोक दिया था। इससे विश्व के इतिहास में सच्चे ईसाई धर्म के अंतिम महान उत्थान की शुरुआत हुई और ईसा मसीह के दूसरी बार धरती पर आने की घड़ी की प्रतीक्षा हुई। संत मार्टिन लूथर का जन्म 10 नवम्बर, 1483 को हुआ था और उसका स्वर्गवास 18 फरवरी, 1546 को हुआ। यह वर्ष उस महान यादगार की 488वीं पुण्य तिथि है। लूथर एक महान व्यक्ति था। अंधकारमय युग के अंत में उसने विश्व को स्वतंत्रता की दिशा दी। अपने सुधार आंदोलन के दौरान जब उसे 'डाइट ऑफ़ वर्म्स' के दौरान सम्राट के समक्ष अपने लेखन के लिये पेश किया गया तो उसका उत्तर था,

> मैं पोप या परिषद के सामने घुटने नहीं टेकूंगा क्योकि यह बात शीशे की तरह साफ है कि ये निरंतर ग़लतियाँ करते आ रहे हैं और एक दूसरे का प्रतिरोध करते आ रहे हैं। जब तक ईसा का आदेश नहीं होता तब तक मैं पीछे हटने का काम न कर सकता हूँ और न ही करूँगा। मैं यहाँ खड़ा हूँ क्योंकि और कुछ मेरे बस में नहीं इसलिए ईश्वर मेरी सहायता करे, आमेन।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

पुनर्जागरण (Renaissance): इटली में चौदहवी शताब्दी में मध्य युग एवं आधुनिक युग के बीच के समय में यूरोप में शुरू हुए संक्रांति आंदोलन को पुनर्जागरण का युग कहते हैं। यह आंदोलन सतारहवीं शताब्दी तक चला।

रुमानी (Romantic): रोज़ाना के जीवन के अनुभवों से दूर, काल्पनिक विचारों पर आधारित।

रुमानीवाद (Romanticism): आम भाषा में रूमानीवाद में यूरोप में 18वीं शताब्दी के अंत में और 19वीं शताब्दी की शुरुआत के समय संबद्ध कलात्मक, राजनीतिक, दर्शनशास्त्रीय एवं सामाजिक प्रवृतियों के समूह का समावेश है। पूरी बीसवीं सदी के दौरान बौद्धिक और साहित्यिक इतिहास में कोशिश रही कि रूमानीवाद के सामान्य तथा विशिष्ट लक्षणों का वर्णन किया जाये किंतु कोई सर्वमान्य विचार सामने नहीं आये। आर्थर लवजॉय ने अपने सारगर्भित लेख "आन द डिस्क्रिमिनेशन ऑफ़ रोमांटिसिज़्म्स" में इस समस्या की विवेचना की है। कुछ विद्वानों के अनुसार रूमानीवाद वर्तमान के साथ साथ चलता है जबकि कुछ, अन्य विद्वानों ने इसे आधुनिकता के प्रारंभ होने का क्षण माना है तो कुछ के अनुसार इसे प्रबोधन का विरोध करने वाली परंपरा का प्रारंभ माना है। कुछ अन्य विद्वानों ने रूमानीवाद को फ्रांसीसी क्रांति का सीधा परिणाम माना है। इसे अक्सर नयी सांस्कृतिक एवं सौन्दर्यपरक मूल्यों के समुच्चय के रूप में समझा जाता है। इसमें व्यक्तिवाद के उदय को शामिल किया जा सकता

है, उदाहरनार्थ वर्डसवर्थ की कविता में या शेक्सपियर की रूमानी पूजा में कलात्मक प्रतिमा की उपासना को देखा जा सकता है। इसी तरह प्रतिदिन के अनुभवों का वर्णन, समय भाषा पर ज़ोर और नई, अशास्त्रीय कला-विधाओं में प्रयोग भी रूमानीवाद के उदाहरण माने जा सकते हैं।

रोशॉर्क इंकब्लॉट टैस्ट (Rorschach inkbdot tests): यह मनोवैज्ञानिक ढंग से मूल्यांकन करने की विधि है। यह फ्रॉइडियन विचारधारा से संबद्ध प्रक्षेपी परीक्षण है। मनोवैज्ञानिक इस परीक्षण का प्रयोग अपने मरीज़ों के अचेतन मन को समझने के लिए करते हैं। इस परीक्षण को स्विस मनोविज्ञानी हर्मन रोशॉर्क ने बीसवीं सदी के प्रारंभ में विकसित किया था। रोशॉर्क फ़्रॉइडियन मनोविश्लेषण का प्रतिपादक था। यह मनोविश्लेषण अचेतन मन की भूमिका पर ज़ोर देता है। सन् 2004 तक यह परीक्षण काफ़ी पुराना पड़ चुका था जब कई इंटरनैट की वेबसाइट्स ने इस परीक्षण के रहस्यों का भंडाफोड़ किया और इसे कॉपीराइट करके इसके करने की सभी अवस्थाओं को छापा। इन विस्तृत जानकारियों का पता लगने पर इस परीक्षण को अवैध कर दिया गया।

अधिकारिक रूप से दस इंकब्लॉट्स हैं। इन्हें एक निश्चित क्रम में मरीज़ों को दिखाकर मनोवैज्ञानिकों द्वारा मरीज़ से कहा जाता है कि एक इंकब्लॉट देखने है। उसके मन में जो विचार या भाव आये उसके बारे में वह बतायें। इस तरह जब मरीज़ को सारे इंकब्लॉट्स दिखा दिये जाते हैं और उसकी प्रतिक्रियाएं रिकॉर्ड कर ली जाती हैं तो एक बार फिर मरीज़ को वही इंकब्लॅट्स एक एक करके दिखाये जाते हैं और मरीज़ से पूछा जाता है कि हर इंकब्लॉट में उसने क्या नया देखा। हर ब्लॉट को 90, 180 या 270 डिग्री तक घुमाया भी जा सकता है। यदि मरीज़ ऐसा करने की अनुमति मांगे तो इसे सकारात्मक रूप से लिया जाता है। परंतु यदि ब्लॉट को अजीब ढंग से घुमाया जाये या उसके कुछ हिस्सों को ढक दिया जाये तो इसे मस्तिष्क में कुछ किसी प्रकार की क्षति की तरह देखा जाता है। जब मरीज़ द्वारा इन्कब्लॉट्स का परीक्षण किया जाता है तो मनोवैज्ञानिक द्वारा मरीज़ का हर शब्द या कार्य लिख लिया जाता है। चाहे जितना भी छोटा या महत्वहीन क्यों न हो, मरीज़ का हर शब्द, हर काम नोट किया जाता है।

MAADHYAM IAS

विज्ञानपरतावाद (Scientism): यह एक नव निर्मित शब्द है जो विज्ञान पर विशेष ज्ञानमीमांसीय अवधारणाओं की ओर इशारा करता है। इस शब्द के विविध अर्थ हैं। विज्ञानपरतावाद यह विश्वास है कि सारी बुद्धिमत्ता का आधार वैज्ञानिक ज्ञान है इसलिए अन्य प्रकार की बुद्धिमत्ता की तुलना में वैज्ञानिक तर्क को विशेष तरजीह दी जानी चाहिए। वैज्ञानिक तर्क निश्चित ही उस प्रकार की बुद्धिमत्ता से अधिक श्रेष्ठ है जिसकी तार्किक संरचना ही ठीक से निरूपित नहीं है या जो विवाद के दौरान वैज्ञानिक तर्क के समक्ष टिक ही न पाये। विज्ञान की समीक्षा इसका उपयोग करने पर, कुछ वैज्ञानिकों ने इसे नगण्य माना है क्योंकि उनका कहना है कि शोध के हर क्षेत्र में शोध की सर्वमान्य वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। इस रूप में विज्ञानपरतावाद किसी भी प्रकार के ग़ैर-वैज्ञानिक तार्किक संरचना के अस्तित्व तक को भी नहीं मानता। साथ में "वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग आवश्यक है" जैसे कथन से विज्ञान की प्रभुता वाले शक्ति संबंधों का भी इससे पता चलता है। विज्ञानपरतावाद यह मानता ही नहीं कि कई वैज्ञानिकों ने अपने विज्ञान से प्राप्त परिणामों की पूरी तरह से समीक्षा नहीं की है, जैसे कि सीमांती जन-समूहों और जीने के प्रकारों के बारे में शोधों की समीक्षा नहीं की गई है। इसका प्रतिरोध करने वाले बुद्धिमत्ता के हर प्रकार के अस्तित्व तक को विज्ञानपरतावाद नहीं मानता हैं विज्ञानपरकतावाद इस बात को अनदेखा कर देता है कि विज्ञान प्रायः नाना-प्रकार के नियंत्रण वे शक्तियां करनी हैं जो इसे आर्थिक रूप से बढ़ावा देती हैं। इन शक्तियों से विज्ञान के संबंध की कोई समीक्षा विज्ञानपरकतावाद में संभव ही नहीं होती।

विज्ञानपरकतावाद की तुलना इतिहासपरकतावाद से की जा सकती है। इतिहासपरकतावाद में इस बात को माना जाता है कि ऐसे सत्य भी होते हैं जिन्हें जाना नहीं जा सकता है। जबकि विज्ञानपरकतावाद में कट्टर सिद्धांतीपना होता है जो इस तरह के कथन में स्पष्ट होता है,

"वैज्ञानिक शोध से सिद्ध हो गया है कि X तत्व से मनुष्यों में कैंसर होता है।" इस तरह विज्ञानपरकतावाद विज्ञान को ही एकमात्र साधन मानता है जिससे सत्य तक पहुँचा जा सकता है। विज्ञानपरकतावाद का अर्थ है मानवता के मूल्य और विज्ञान से निर्मित प्रबोधन।

संकेतक (Signifier): किसी बात को दर्शाने या उसे स्पष्ट करने का काम संकेतक करते हैं। बोलना या लिखना ऐसे प्रमुख तरीके है जिससे संकेत सांस्कृतिक अर्थों को सृजित तथा अभिव्यक्त किया जाता है। किंतु केवल भाषा ही सांस्कृतिक प्रतीकों का प्रकार नहीं है। व्यवहार एवं भौतिक वस्तुएं भी संकेतक हो सकती हैं। समाजशास्त्रियों ने लाक्षणिक (semiofic) विश्लेषण को बहुत उपयोगी पाया है जब उन्हें एक संस्कृति की दूसरी संस्कृति से तुलना करनी होती है।

संशयवाद (Skepticism): यद्यपि सभी संशयवादियों ने किसी न किसी तरीके से विश्व के बारे में ज्ञान की प्राप्ति के लिए हमारी योग्यता पर शंका की है, "संशय" शब्द के दायरे में दरअसल विस्तृत मनोवृत्तियाँ एवं स्थितियाँ आती हैं। बहुत से यूनानी दर्शनशास्त्रियों के विचारों में संशय के तत्व मौजूद हैं। किंतु 'प्राचीन संशयकार' शब्द का प्रयोग संशय युग के दौरान प्लेटो अकादमी के सदस्य के लिये किया जाता था (संशय युग का समय 273 ई. पू. से पहली सदी ई. पू. तक था)। इसका प्रयोग पिरो (Pyrrho) के अनुयायियों के लिये भी किया जाता था। पिरो का संशयवाद पहली सदी में ऐनेसिदेमस (Aenesidemus) के पुनरुत्थान से सैक्सटस एम्पिटिकस तक फला-फूला था। सैक्सटर एम्पिटिकस का जीवन-काल दूसरी या तीसरी सदी था। इस प्रकार प्राचीन संशयवाद के दो रूप थे: अकादमी वाला तथा पिरो वाला। 'स्केप्टिक' शब्द यूनानी भाषा की संज्ञा 'स्केप्सीस' से बना है जिसका अर्थ है परीक्षा, जाँच-पड़ताल एवं विचार करना। मूल महत्व के सरोकारों के बारे में अंतहीन दिखने वाले और बहुत ही जाने-माने विरोधों के साथ ने सारे संशयवादियों को अंत में यही नहीं समझ में आता है कि आख़िर किस बात पर विश्वास किया जाये। प्राचीन संशयवादियों के अनेक तर्क वास्तव में अपने समकालीनों विशेषतः सकारात्मक विचारों पर प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुए थे। इस तर्कों का आगे आने वाले दार्शनिकों पर बहुत प्रभाव पड़ा। इनका महत्व तब तक बना रहेगा। जब तक दार्शनिक मुद्दों का महत्व बना हुआ है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सामाजिक व्यवस्था (Social Order): व्यवस्था आर्डर एक विषय, अवधारणा और उद्देश्य है जो सामाजिक विज्ञानों के अंतर्गत विविध शोधपद्धतियों एवं विषयों को निरूपित करता है। अर्थशास्त्रियों ने भौतिक वस्तुओं, संसाधनों और धन-सम्पदा के चक्र में व्यवस्था का निरूपण किया है। समाजशास्त्रियों ने संस्थागत विन्यासों एवं उनके बीच की ओर ध्यान दिया है, जो विविध सामाजिक समूहों को व्यवस्थित करती हैं। नृशास्त्रियों ने सांस्कृतिक, प्रतीकात्मक और बहु विचारित स्वरूपों का अध्ययन किया है जिनके माध्यम से विविध समाज एवं संस्कृतियाँ सामाजिक एवं प्राकृतिक व्यवस्था को परिभाषित करते हैं। राजनीतिक विज्ञानियों ने विभिन्न समाजों में शक्ति के संगठन करने एवं इसके विन्यासों को निर्मित करने की प्रक्रिया की व्याख्या की है। मनोवैज्ञानिकों ने मानसिक अव्यवस्था, रूपों के पीछे निहित व्याख्यात्मक व्यवस्था को देखा है। संक्षेप में सामाजिक विज्ञान को जो समेकित करता है वह है, सामाजिक व्यवस्था के रहस्यों की खोज करने में उनका एक दूसरे से जुड़ा शोध है।

समाजवादी महिलावाद (Socialist feminism): समाजवादी महिलावाद महिलाओं के शोषण की वजह से पूंजीवादी व्यवस्था की आलोचना करता है। समाजवादी-महिलावादियों ने महिला उत्पीड़न की जटिल प्रकृति को बेनकाब करने के लिए पारंपरिक मार्क्सवाद का प्रयोग एवं इसकी समीक्षा की है, विशेषतः जहाँ तक महिला उत्पीड़न अर्थव्यवस्था से जुड़ा है। समाजवादी महिलावाद ने महिलाओं के उत्पीड़न के आर्थिक वर्ग पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया है। समाजवादी महिलावाद को मानने वालों के मध्य प्रजातीय उत्पीड़न, आर्थिक वर्ग और यौन के आपसी संबंधों के बारे में बहुत अधिक विचार-विमर्श हुआ है। मार्क्सवादी महिलावादियों का कहना है कि आर्थिक वर्ग के कारण उत्पीड़न होता है। यद्यपि उन्होंने यह माना है कि पुरुष वर्चस्व का जटिल विन्यास भी महिला उत्पीड़न का एक अंग है किंतु पुरुष वर्चस्व को भी

उन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था के नज़रिये से ही देखा है। अन्य महिलावादियों के अनुसार पुरुष सत्ता प्रधान व्यवस्था एवं पूंजीवाद एक दूसरे पर निर्भर व्यवस्थाएं हैं जिनमें कोई एक ही आवश्यक तत्व नहीं है। महिलाओं को मां और कामगार, पुनःउत्पादन करने वाली तथा उत्पादन करने वाली गृहिणी और कमाने वाली, उपभोक्ता और नियोक्ता -- दोनों तरह देखा जाता है।

कुछ समाजवादी महिलावादियों ने पुरुष सत्ता प्रधान सामाजिक व्यवस्था को पुरुषवादी कहा है। तो कुछ अन्य ने उसे "पुरुष सत्ता प्रधान" कहा है। इस तरह की बाल की खाल जो भी हो, सभी समाजवादी महिलावादियों ने पूंजीवाद (एक का श्रम दूसरे का लाभ बन जाये) को महिलाओं के लिये विशेषतौर से समस्यामूलक पाया है।

पुरुष वर्चस्व की अर्ध-स्वतंत्र प्रणाली की भाँति पुरुष सत्ता प्रधान व्यवस्था तथा पूंजीवाद के बीच विशिष्ट संबंध हमेशा ही विवाद का विषय रहा है।

बीसवीं सदी के पश्चिम में उदित समाजवादी महिलावाद के प्रारंभिक रूप तथा तृतीय-विश्व के समाजवादी महिला का जन्म पारम्परिक मार्क्सवादी सिद्धांत के गर्भ से हुआ। महिलाओं के उत्पीड़न को आर्थिक वर्ग संरचना से जोड़ा गया: श्रमिक वर्ग की महिलाएं आर्थिक शोषण से उत्पीड़ित की गईं अर्थात् समान काम के लिये महिलाओं को पुरुषों से कम मज़दूरी दी गई। किसी ने भी इस प्रकार के शोषण को पहचाना तक भी नहीं क्योंकि कम मज़दूरी पाने वाली महिलाएं थीं। हमेशा की तरह अभी भी बहुत कम यह समझा जाता है कि वर्ग भेद के बावजूद भी महिलाओं के अनेक समान हित हैं जैसे गर्भपात, शिशु-देखरेख, मातृत्त्व के लिये अवकाश आदि।

एकता (Solidarity): दुर्खाइम ने सामाजिक एकता की समाज के भीतर सभी व्यक्तियों के बीच के आपसी संबंध के रूप में चर्चा की थी। उसने इसकी चर्चा बहुत विस्तार से अपनी पहली मुख्य कृति, द डिवीज़न ऑफ़ लेबर में की थी जो 1893 में छपी थी। दुर्खाइम ने सबसे पहले पूर्व-औद्योगिक समाजों में सामाजिक एकता की चर्चा की थी। इस एकता को उसने यांत्रिक एकता कहा। दुर्खाइम की मुख्य रुचि इस बात में थी कि क्या होता है जब समाज आधुनिक होने लगते हैं और श्रम अधिक से अधिक विशिष्टीकृत होता जाता है। दुर्खाइम ने इस नई एकता को अव्यवीयप जैविक एकता कहा जो आधुनिकीकरण के परिणामवश सामने आई।

MAADHYAM IAS

अहंमात्रवाद (Solipsism): इसका अर्थ है कि मनुष्य का अहम ही मौजूद रहता है और 'अस्तित्व' का अर्थ व्यक्ति की निजी मानसिक अवस्था का भाग होना है – सभी वस्तुएं, सारे लोग जिनका व्यक्ति द्वारा अनुभव। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग सुकारात से पूर्व सोफ़िस्ट जोरजिया (483-375 ईसा पूर्व) ने किया था जिसे निम्न के रूप में सेक्सटस एम्पीटिकस ने उद्धृत किया है:

- किसी का भी अस्तित्व नहीं है
- यदि किसी का अस्तित्व है तो इसके बारे में कुछ भी जाना नहीं जा सकता, और
- यदि इस बारे में कोई ज्ञान मिलता है तो ऐसे ज्ञान को दूसरों तक संप्रेषित नहीं किया जा सकता।

सामान्यतः, अंतमात्रवाद को जोर्जियास के अनुसार उपरोक्त कथन के 2 तथा 3 से जाना जाता है।

संरचनाकरण (Structuration): यह ऐसी प्रक्रिया है जिससे सामाजिक संरचनाएं गठित की जाती है। जैसा कि प्रायः सभी क्रिया सिद्धांतकारी कामों में होता है, इस अवधारणा का उद्देश्य कार्य-उन्मुख तथा संरचना को एकीकृत करना है। गिडन्स के संरचनाकरण सिद्धांत के अनुसार, लोगों के यो ही किए जाने वाले कार्यों की तुलना में सामाजिक जीवन काफ़ी कुछ अधिक है लेकिन सिर्फ़ सामाजिक बलों से ही इसका निर्धारण नहीं होता। अन्य शब्दों में यह

सूक्ष्म (माइक्रो) स्तर की गतिविधि का पुंज नहीं है, बल्कि इसका अध्ययन केवल बृहद (मैक्रो) स्तर की व्याख्याओं पर ध्यान केंद्रित करके नहीं किया जा सकता है। गिडन्स का कहना है कि मानव क्रिया और सामाजिक संरचना एक दूसरे से बंधे हुए हैं और यह व्यक्ति की क्रियाओं की पुनरावृत्ति है जो संरचना को पुनः उत्पन्न करती है। इसका अर्थ है कि एक सामाजिक संरचना है अर्थात् परंपराएं, संस्थाएं, नैतिक कोड एवं कार्य करने के पूर्वनिर्मित तरीके हैं लेकिन इसका अर्थ यह भी है कि जब लोग इन्हें अनदेखा करते हैं, इनकी जगह किसी और बात को बल देते है या उन्हें अन्य प्रकार से पुनःनिर्मित करते हैं तो इन्हें बदला भी जा सकता है।

प्रणाली (System): देश-काल के परे सामाजिक संबंधों के विन्यासीकरण अथवा पुनर्उत्पादित व्यवहार की तरह समझे जाने को प्रणाली कहा जाता है। प्रणालीपन प्रदर्शित करने वाले लक्षणों के अनुसार सामाजिक प्रणालियों में भेद किये जाते हैं। सामाजिक प्रणालियों में भौतिक और शारीरिक प्रणालियों की भाँति आंतरिक एकता केवल कभी-कभी ही होती है।

प्ररूपण (Typification): अल्फ़्रेड शुज़ (1899-1959) प्रतिरूपशास्त्रकार का कहना है कि 'घनिष्ठ संबंधों' को छोड़ कर अन्य लोगों से संसर्ग में प्रायः हमें आदर्श प्ररूपों की दृष्टि से दूसरों को समझने का प्रयास करना होता है। इसका अर्थ है कि हमें व्यवहार के सर्वसामान्य तरीक़े का निर्माण करना होता है और सर्वसामान्य व्यक्तित्व या निहित की पूर्वधारणा बनानी होती है। जैसे डाक्टर, पादरी या न्यायधीश को लेकर हमारे मन में उनके व्यक्तित्व तथा व्यवहार के बारे में पहले से ही एक विशिष्ट धारणाएं बनी होती है। नृजाति शोधपद्धति क्रमों ने प्ररूपण की प्रक्रिया का एक ऐसे साधन के रूप में प्रयोग किया है, जिससे पता चलता है कि किस प्रकार पुलिस अधिकारी एवं केस चलाने वाले, अपने कार्य में निश्चित पूर्वानुमान तथा सही होने का भाव धारण कर लेते हैं।

समझ (Verstetion): जर्मन इतिहासविवरणशास्त्रीय परंपरा ने वर्सटीहेन (समझ) एवं अंकलेटन (व्याख्या) के बीच तुलना की। इसे स्वीकार किया गया कि प्राकृतिक विज्ञान में होने वाले व्याख्या एवं वादविवाद इस बात पर केंद्रित होते हैं कि क्या मानव सामाजिक संस्थाओं की व्याख्या करना संभव है। जैसा कि गिडन्स (1987: 18) ने कहा कि वर्सटीहेन को अर्कलेटन से अलग करने का अर्थ हैं, सामाजिक एवं प्राकृतिक विज्ञान दोनों को व्यक्ति करने का भ्रामक तरीक़ा। मैक्स वेबर ने सामाजिक विज्ञान में वर्सटीहेन के विचार को लोकप्रिय बनाया। उसने प्रयोजनात्मक तार्किक कार्य की अपनी धारणा की सहायता से मानव आचंरण की समझ को व्यक्त किया। वेबर की वर्सटीहेन की अवधारणा के अनुसार प्रयोगात्मक तार्किकता ने पश्चिमी संस्कृति के तर्कसंगतता की ऐतिहासिक प्रक्रिया में मुख्य भूमिका निभाई है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

संदर्भ

Aaron, Raymond 1965. *Main Currents in Sociological Thought*. Penguin: Harmondsworth

Adorno, T.W. 1976. *The Positivist Dispute in German Sociology*. Heinemann: London

Alexander, J.A. 1987. *Sociological Theory since 1945*. Hutchinson: London

Allan, Kenneth 2005. *Explorations in Classical Sociological Theory, Seeing the Social World*. Sage Publications: New York

Bacon, Francis 1970. *On the Interpretation of Nature and the Empire of Man*. In J.E.

Barnes, J. A. 1977. *The Ethics of Inquiry in Social Science*. Oxford University Press: New Delhi

Barth, Frederick 1987. *Cosmologies in the Making: A Generative Approach to Cultural Variation in Inner New Guinea*. Cambridge University Press: Cambridge

Baudrillard, Jean 1968. *The System of Objects*. Translated by Jacques Mourrain in Mark Poster (ed.) Jean Baudrillard: Selected Writing. Published in 1988 at Stanford

Bauman, Zygmunt 1978. *Hermeneutics and Social Science*. Columbia University Press: New York

Bauman, Zygmunt 1987. *Legislators and Interpreters*: On Modernity, Post-Modernity and Intellectuals. Polity Press: Cambridge

Becker, H. and H. E. Barnes 1961. *Social Thought from Lore to Science*. Dover: New York

Bernstein, R. 1983. *Beyond Objectivism and Relativism*: Science, Hermeneutics and Praxis. University of Pennsylvania Press: Philadelphia

Beteille, Andre 2000. *Sociology and Common Sense*. IN Andre Beteille (ed.) Sociology. Oxford University Press: New Delhi

Beteille, Andre 2002. *Sociology and Common Sense*. IN Andre Beteille, Sociology. Oxford University Press: New Delhi. Pp.13-27

Beteille, Andre 2004. *The Comparative Method and the Standpoint of the Investigator.* IN Vinay Kumar Srivastava (ed.) Methodology and Fieldwork. Oxford University Press: New Delhi. Pp. 112-131

Bhabha, Jacqueline 2003.Children, *Migration and International Norms*. IN T.A. Aleinikoff and V. Chetail (eds.) Migration and International Legal Norms. T.M.C. Asser Press: The Hague. Pp. 203-223

Bleicher, J. 1980. *Contemporary Hermeneutics - Hermeneutics as Method, Philosophy and Critique*. Routledge & Kegan Paul

Bose, Pradip Kumar. 1995. *Research Methodology*. Indian Council of Social Science Research: New Delhi

Bourdieu, Pierre 1977. *Outline of a Theory of Practice*. Translated by Richard Nice. Cambridge University Press; Cambridge

Braybrooke, David 1987. *Philosophy of Social Science*. Prentice-Hall: Englewood Cliffs, N. J.

Brim, John A. and David A. Spain 1974. *Research Design in Anthropology:* Paradigms and Pragmatics in the Testing of Hypothesis. Holt, Rinehart and Winston: New York

Bruns, G. L. 1992. *Hermeneutics Ancient and Modern*. Yale University Press: New Haven

Bryant, C.G.A. 1985. *Positivism in Social Theory and Research*. Macmillan: London

Cartwright, Nancy 1983. *How the Laws of Physics Lie*. Oxford University Press: Oxford

Chambers, Robert 1981. *Rapid Rural Appraisal: Rationale and Repertoire*. Discussion Paper No 155. Institute of Development Studies: Sussex

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

Chapin, F. Stuart 1963. *The Social Effects of Public Housing in Minnepolis*. IN Matilda White Riley (ed.) Sociological Research. Volume 1: A Case Approach. Harcourt Brace and World Inc.: New York and Burlingame

Chatterjee, Partha 1993. *The Nation and its Fragments: Colonial and Post Colonial Histories*. Princeton University Press: Princeton

Chaudhuri, Maitrayee 2003. *The Practice of Sociology*. Orient Longman: New Delhi

Chaudhuri, Maitrayee 2004. *Feminism in India*. Women Unlimited/ Kali: New Delhi

Cohn, Bernard 1996. *Colonialism and its Forms of Knowledge*. Princeton University Press: Princeton, N J

Comte, Auguste 1830-1892. *Course of Positive Philosophy*. Six volumesThoemmes Press: Bristol (reprint in 2001)

Comte, Auguste 1851-1854. *System of Positive Politics*. Calvin Blanchard: New York (reprint in 1961)

Coser, Lewis A. 1969. *Sociological Theory*. Macmillan: London

Curtis and J. W.Petras (eds). *The Sociology of Knowledge: A Reader*. Gerald Duckworth and Co. Ltd.: London

de Tocqueville, Alexis 1861: *Memoir, Lettersw and Remains*. Macmillan: London

Descartes, René 1641. *Meditations on the First Philosophy* (English translation by Cottingham, Stoothoff, Murdoch and Kenny, published in 1991).

Dirks, Nicholas B. 1992. *Colonialism and Culture*. University of Michigan Press: Ann Arbor

Dostal, J. 2002. *The Cambridge Companion to Gadamer*, CUP: Cambridge

Du Bois, 1983. *Passionate Scholarship: Notes on values, Knowing and Method in Feminist Social Science*. IN G. Bowles and R. Duelli-Klein (ed), Theories of Women's Studies. Routledge and Kegan Paul: London

Dumont, Louis 1962. *The Conception of Kingship in Ancient India*. Contributions to Indian Sociology IX: 17-32

Durant, W.1961, *Story of Philosophy*, Pocket books, New York

Durkheim, Emile 1963 (first published in 1903). *Primitive Classification*. Translated by Rodney Needham) The University of Chicago Press: Chicago

Durkheim, Emile 1964 (first published in 1893). *The Division of Labour in Society* The Free Press: New York

Durkheim, Emile 1964 (first published in 1895). *The Rules of Sociological Method*. First The Free Press Paperback edition. The Free Press: New York

Eisentein, Zillah 1979. *Capitalist Patriarchy and the Case for Socialist Feminism*. Monthly Review Press: New York

Elster, John 1989. *Nuts and Bolts for the Social Sciences*. Cambridge University Press: Cambridge

Epstein, Scarlet 1979. *Mysore Villages Revisited*. IN G. M. Foster, T. Scudder, E Colson, R.V. Kemper (eds.) Long-term Field Research in Social Anthropology. Academic Press: Orlando, New York and London

Evans-Pritchard, E. E. 1937. *Witchcraft, Oracles and Magic among the Azande*. Clarendon Press: Oxford

Evans-Pritchard, E. E. 1963. *The Comparative Method in Social Anthropology*. L.T. Hobhouse Memorial Trust Lecture, 33

Fernandes, Walter and Philip Viegas 1985. *Participatory and Conventional research Methodologies*. Indian Social Institute: New Delhi

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

Ferree, Myra Max, *Judieth Lorber and Beth B.* Heiss 1999. Revisioning Gender. Sage Publications: Thousand Oaks

Feyerabend, Paul 1982. *Science in a Free Society*. Verso: London

Firth, Raymond 1956. *Elements of Social Organisation*. Watts & Co.: London

Fortes, Myer and E. E. Evans-Pritchard 1940. *African Political Systems*. Oxford University Pres: London

Foster, George M. 1965. *Peasant Society and the Image of the Limited Good. American Anthropologist* 67: 293-315

Foucault, Michael 1973. *The Order of Things: An Archeology of Human Sciences*. Vintage: New York

Freeman, Derek 1983. *Margaret Mead and Samoa: The Making and Unmaking of an Anthropological Myth*. Harvard University Press: Cambridge, Mass

Freire, P. 1972. *Pedagogy of the Oppressed*. Penguin: Harmondsworth

Gadamer, Hans-Georg . *Truth and Method in Mueller-Vollmer K.* The Hermeneutics Reader

Garfinkel, H. 1967. *Studies in Ethnomethodology*. Prentice-Hall: Englewood Cliffs, N J

Geertz, Clifford 1975. *Thick Description: Toward an Interpretive Theory of Culture*. IN The Interpretation of Cultures: Selected Essays of Clifford Gertz. Hutchinson: London

Geertz, Clifford 1983. *Local Knowledge*. Basic: New York

Gell, Alfred 1992. *The Anthropology of Time: Cultural Construction of Temporal Maps and Imagers*. Berg Publishers: Oxford

Giddens Anthony 1984. *The Constitution of Society*. Polity Press: Cambridge

Giddens, Anthony 1987. *Social Theory and Modern Sociology*. Polity Press in association with Basil Blackwell: Cambridge

Giddens, Anthony1976. *New Rules of Sociological Method: A Positive Critique of Interpretative Sociologies*. Hutchinson: London

Glaser, Barney G. and A. L Strauss 1967. *The Discovery of Grounded Theory: Strategies for Qualitative Research*. Aldine: Chicago

Godelier, Maurice 1977. *Perspectives in Marxist Anthropology*. Cambridge University Press: Cambridge

Godelier, Maurice 1986. *The Mental and the Material: Thought, Economy and Society*. Verso: London

Gordon, S. 1991. *The History and Philosophy of Social Science*. Routledge, London

Gouldner, Alvin W. 1970. *The Coming Crisis of Western Sociology*. Heinemann: London

Gramsci, Antonio 1921-1926. *Selections from Political Writings*. Translated by quintin Hoare and published in 1978 by Lawrence and Wishart international Publishers: London and New York. Reprinted by University of Minnesota Press in 1990

Grondin, J. L. 1994. *Introduction to Philosophical Hermeneutics*. Yale University Press: New Haven

Guha, Ranjit (ed.) 1982. *Subaltern Studies: Writings on South Asian History and Society*. Oxford University Press: New Delhi

Habermas J. *Hermeneutics and the Social Sciences in Mueller-Vollmer K.* The Hermeneutics Reader

Harding, Sandra (ed.) 1987. *Feminism and Methodology: Social Science Issues*. Indiana University Press

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

Harvey, David 1989: *The Conditions of Post Modernity. Blackwell*: Oxford

Hekman, Susan J. 1986. *Hermeneutics and the Sociology of Knowledge*. Polity Press: Cambridge

Hempel Carl G. 1942. *Philosophy of Natural Science*. Prentice-Hall: Englewood Cliffs, N J

Holmswood, John and Alexander Stewart 1991. *Explanation and Social Theory.* McMillan: London.

Homans, George C. 1950. *The Human Group*. Harcourt Brace and World: New York

Illich, Ivon 1971. *Deschooling Society*. Calder & Boyars: New York

Ingold, Tim (ed.) 1990. *The Concept of Society is Theoretically Obsolete*. Department of Anthropology, University of Manchester: Manchester

Ingold, Tim 1986. *Evolution and Social Life*. Cambridge University Press: Cambridge

Jain, Ravindra K. 1986. *Social Anthropology of India: Theory and Method*. IN Survey of Research in Sociology and Social Anthropology. Indian Council of Social Science Research: New Delhi. Pp. 1-50

Jain, Shobhita 1988. *Sexual Equality: Workers in an Asian Plantation.*Sterling Publishers: New Delhi

Johnson, Miriam 1991. *Feminism and the Theories of Talcott Parsons*. IN Ruth A, Wallace (ed.) Feminism and Sociological Theory. Sage Publications: London

Jost, W. and M. Hyde (ed.) 1977. *Rhetoric and Hermeneutics in Our Time*. Yale University Press: New Haven

Kant, Immanuel 1783. *Prolegomena to Any Future Metaphysics that will be able to Come Forward as Science*. Translated by Paul Carus. Hackett: Indianapolis IN

Kaplan, Abraham 1964. *The Conduct of Inquiry*. Chandler: London

Karlekar, Malavika 2004. *Search For Women's Voices*. IN Vinay Kumar Srivastava (ed.) Methodology and Fieldwork. Oxford University Press: New Delhi, Pp 371-388

Karlekar, Malavika 2004. *Search for Women's Voices: Reflections on Fieldwork*, 1968-93. IN Vinay Kumar Srivastava (ed.) Methodology and Fieldwork. Oxford University Press: New Delhi. Pp.

Kincaid, Harold 1990. *Defending Laws in Social Sciences*. Philosophy of the Social Sciences 20: 56-83

Kloos, Peter 2004. *Restudies in Anthropology. IN V. K. Srivastava* (ed.) Methodology and Fieldwork. Oxford university Press: New Delhi

Krishnaraj, Maithreyi 2005. Research on Women's Studies: Need for a Critical Appraisal. *Economic and Political Weekly* XL (28): 2008-2017

Kuhn, Thomas 1970. *The Structure of Scientific Revolutions*. The University of Chicago Press: Chicago

Laszlo, Ervin and James Benjamin Wilbur (eds.) 1970. *Human Values and Natural Science: Proceedings of the Third Conference on Value Inquiry*, Current Topics of Contemporary Thought. Volume 4. Gordon and Breach: New York

Leach, Edmund 1961. *Rethinking Anthropolgy*. Athlone Press: London

Leach, Edmund 1982. *Social Anthropology*. Fontana Paperbacks: Glasgow

Levi-Strauss 1949. *Les Structures Elémentaires de la Parenté*. The Elementary Structures of Kinship, edited by Rodney Needham, translated by J. H. Bell, J. R. von Sturmer, and Rodney Needham, 1969).Eyre and Spottiswood: London

Little, Daniel 1991. *Varieties of Social explanation: An Introduction to the Philosophy of Social Science*. Westview Press: Boulder, Colorado

MAADHYAM IAS

Little, Daniel 1992. On the Scope and Limits of Generalizations in the Social Sciences. *Boston Colloquium for the Philosophy of Science*, Boston University

Locke, John 1690. *An Essay Concerning Human Understanding.*

Lockwood, David 1992. *Solidarity and Schism.* Clarendon Press: Oxford

Lorde, Audre 1989. *A Burst of Light*. Firebrand Books: Ithaca New York

Lowie, Robert H. 1950. *Social Organization.* Rutledge & Kegan Paul: London

Luhman, Niklas 1998. *Observations on Modernity.* Stanford University Press: Stanford

Lukacs, George 1823 (translation published in 1980). *The Destruction of Reason.* Translated by Peter Palmer. The Merlin Press: London

Madan, Triloki Nath 1972. *Research Methodology: A Trend Report.* IN A Survey of Research in Sociology and Social Anthropology. Volume III. Popular Prakashan: Bombay

Madan, Triloki Nath 2004. *In Pursuit of Anthropology.* IN V. K. Srivastava (ed) Methodology and Fieldwork. Oxford University Press: New Delhi

Malinowski, Bronislaw 1922. *Argonauts of the Western Pacific.* Dutton: New York

Malinowski, Bronislaw 1929. *The Sexual Life of Savages in North-west Melanesia.* Harcourt: New York

Malinowski, Bronislaw 1944. *A Scientific Theory of Culture.* : North Carolina

Martindale, Don 1960. *The Nature and Types of Sociological Theory.* Routledge and Kegan Paul: London

Marx, Karl H. 1942. *Capital: A Critique of Political Economy.* Volume 1. Everyman: London (First published in 1867)

Mary, Tim 1996. *Situating Social Theory.* Open University Press: Buckingham-Philadelphia

McIntyre, Alisdair 1973. *Is a Science of Comparative Politics Possible?* In A. Ryan (ed.), The Philosophy of Social Explanation. Oxford University Press: Oxford

McIntyre, Lee 1991. *Problems in the Philosophy of Social Science: Towards a Defense of Nomological Explanation in the Social Sciences.* PH. D. Dissertation. University of Michigan

Mead, Margaret 1928. *Coming of Age in Samoa.* William Morrow: New York

Mead, Margaret 1930. *Growing up in New Guinea.* William Morrow: New York

Mead, Margaret 1935. *Sex and Temperament in Three Primitive Societies.* William Morrow: New York

Meillassoux, Claude 1981. *Maidens, Meal and Money.* Cambridge University Press: Cambridge

Merton, Robert K. 1976. *Structural Analysis in Sociology.* IN Robert K. Merton Approaches to the Study of Social Structure. Open Books: London

Merton, Robert K. 1950. *Continuities in Social research: Studies in the Scope and Method of "The American Soldier".* Edited by Paul F. Lazarsfeld. The Free Press: New York

Merton, Robert K. 1957. *Social Theory and Social Structure.* The Free Press: Glencoe

Mill, John Stuart (1879). *The Subjection of Women.* Reprinted in Essays on Sex Equality. Edited by Alice Rossi. Chicago University Press: Chicago

Mill, John Stuart 1930. *A System of Logic.* Longmans: New York

Mueller-Vollmer K. *The Hermeneutics Reader.* Continuum Press: New York

Mukherjee, Neela 1997. *Participatory Rural Appraisal: Methodology and Applications.* Concept: New Delhi

MAADHYAM IAS

Mukherji, Partha Nath 1998.Introduction. IN Partha Nath Mukerji, Jacob Aikara and Chandan Sengupta (eds.) *Sociology in South Asia: Heritage and Challenges.* International Sociological Association: Madrid

Mukherji, Partha Nath 2000a. Introduction. IN Partha\Nath Mukerji (ed.), *Methodology in Social Research: Dilemmas and Perspectives.* Sage: New Delhi

Mukherji, Partha Nath 2000b. *Methodology in Social Research: Dilemmas and Perspectives.* Essays in Honour of Ramkrishna Mukherjee. Sage: New Delhi

Murdock, G. P. 1975. *Outline of World Cultures.* Human Relations Area Files: New Haven

Nagel, Ernest 1970. *The Structure of Science: Problems in the Logic of Scientific Explanation.* Routledge and Kegan Paul: London

Nathan, Dev (2005). *Transforming the economic Ethic.* Economic and Political Weekly 40 (4): 275-278

Needham, Rodney 1963. Introduction. IN Durkheim, Emile 1963 (first published in 1903). *Primitive Classification.* Translated by Rodney Needham) The University of Chicago Press: Chicago. Pp. vii-xlviii

Nisbet, Robert 1967. *The Sociological Tradition.* Heinemann: London

Osborne, R. 1991, *Philosophy for Beginners*, Writers and Readers, New York

Osborne, R. 2005, http://www.philosophypages.com

Osborne, R. 2005, http://www.utm.edu/research/iep

Oxford Dictionary of Social Sciences 1998.

Pareto, Vilfredo 1935. The Mind and Society. Edited by Arthur Livingston and translated by Andrew Bongiomo. Harcourt Press Brace & Co: New York (Theory of Elites discussed in volume III and IV, sections 2026-2029 and 2223-2236, respectively)

Parsons, Talcott 1937. *The Structure of Social Action.* McGraw Hill: New York

Parsons, Talcott 1971. *The System of Modern Societies.* Prentice Hall: Englewood Cliffs, N J

Phillips, D. L. 1973. *Abandoning Method.* Jossey-Bass: San Francisco

Pocock, D.F. 1961. *Social Anthropology.* Sheed and Ward: London

Popper, Karl 1945. *The Open Society and Its Enemies.* Routledge: London

Popper, Karl 1961. *The Poverty of Historicism.* Routledge: London

Popper, Karl 1972. *Conjectures and Refutations: The Growth of Scientific Knowledge.* Rutledge and Kegan Paul: London

Radcliffe-Brown, A. R. 1922. *The Andaman Islanders.* Cambridge University Press: Cambridge

Rege, Sharmila (ed.) 2003. *Sociology of Gender: The Challenge of Feminist Sociological Knowledge.* Sage: New Delhi

Ricoeur P. 1971. *The Model of the Text: Meaningful Action Considered as a Text Autumn*

Ricoeur, P. 1981. *Hermeneitics and the Human Sciences. Maison des Sciences de L'Homme* and Cambridge University Press: Paris and Cambridge

Ritzer, George 1983. *Sociological Theory.* Alfred A Knopf: New York

Rosaldo, Renato 1984. *Grief and a Headhunter's Rage.* IN Edward Bruner (ed) Text, Play and Story. The 1983 Proceedings of the American Ethnological Society: Washington D C

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

Rose, Hilary 1994. *Love, Power and Knowledge: Towards a Feminist Transformation of the Sciences*. Polity: Cambridge

Roy, Sarat Chandra 1938. *An Indian Outlook on Anthropology*. Man Article 172: 146-150

Rudner, Richard 1966. *Philosophy of Social Science*. Prentice-Hall: Englewood Cliffs, NJ.

Sahlins, Marshall 1976. *Culture and Practical Reason*. University of Chicago: Chicago

Said, Edward 1977. *Orientalism: Western Concepts of the Orient*. Pantheon: New York

Saran, A.K. 1962. *Review of Contributions to Indian Sociology*, No. IV. The Eastern Anthropologist 15(1): 53-68

Sax, William 2002. *Dancing the self: Personhood and Performance in the Pandava Lila of Garhwal*. Oxford University Press: New Delhi

Schleiermacher F.D.E. 1985. *The Hermeneutics Reader.* Compendium of 1819

Schutz, Alfred 1972. *The Phenomenology of the Social World*. Heinemann: London

Seidman, Steven 1983. *Liberalism and the Origins of European Social Theory.* Basil Blackwell: Oxford

Sheridan, Alan 1980. *Michel Foucault: The Will to Truth*. Tavistock Pub: London

Shostak, Marjorie 1981. Nisa: *The Life and Words of a !Kung Woman*. Harvard University Press: Cambridge, Mass

Simmel, George 1898. *The Persistence of Social Groups*. American Journal of Sociology 3: 829-836

Singh, Yogendra 1979. Ideology, Theory and Method in Indian Sociology. IN Stein Rokkan (ed.) *A Quarter Century of international Social Science: Papers and Reports on Development, 1952-1977*. Concept Publishing Company: New Delhi. Pp. 291-314

Smart, Barry 1993. *Postmodernity.* Routledge: London/ New York

Smith, Adam (1776). *An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations.* Reprint 1976. Clarendon Press: Oxford

Smith, Robert 1983. *Japanese Society*. Cambridge University Press: Cambridge

Sorenson, Ninna Nyberg, Nicholas Van Hear and Paul Engberg-Pedrsen 2002. Migration, *Development and Conflict: State-of-the-Art Overview.* IN Nicholas Van Hear and Ninna Nyberg Sorensen (eds.) The Migration-Development Nexus. International Organization for Migration: Geneva. Pp.5-50

Sorokin, Pitrim 1962 (originally published in 1937-1941). *Social and Cultural Dynamics.* The Bedminster Press: Totowa, N J

Sperber Dan 1982. *On Anthropological Knowledge*. Cambridge University Press: Cambridge

Srinivas, M. N. 1966. *Social Change in Modern India*. University of California Press: Berkeley

Srinivas, M. N. 1976. *The Remembered Village*. University of California Press: Berkeley

Srivastava, Vinay Kumar (ed.) 2004. *Methodology and Fieldwork*. Oxford University Press

Stacey, Judith and Barri Thorne 1998. The Missing Feminist Revolution in Sociology. IN K. A. Myres, C. D. Anderson and B. J. Risman (eds) *Feminist Foundation, Toward Transforming Sociology.* Sage Publications: New York

Stanley, Liz and Sue Wise 1983. *Breaking Out: Feminist Consciousness and Feminist Research*. Rutledge and Kegan Paul: London

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

Sydie, R. A. 1987. *Natural Women Cultured Men: A Feminist Perspective on Sociological Theory.* Methuen: Toronto

Tambaih, Stanley Magic , *Science, Religion and the Scope of Rationality*

Tandon, Rajesh 1996. *The Historical Roots and Contemporary Tendencies in Participatory Research: Implications for Health Care.* IN Korrie de Koning and Marion Martin (eds.) Participatory Research in Health Care. Vistar: New Delhi

Taylor 1985

Terray, Emmanuel 1972. *Marxism and "Primitive Societies".* Monthly Press Review: New York

Thapan, Meenakshi 2004. *Fieldwork in Rishi Valley School.* IN Vinay Kumar Srivastava (ed.) Methodology and Fieldwork. Oxford University Press: New Delhi, Pp. 240-256

Thompson J.B. *Critical Hermeneutics : A Study in the thought of Paul Ricoeur and J. Habermas.* Cambridge: CUP

Tong, Rosemarie 1989. *Feminist Thought: A Comparative Introduction.* Westview Press" Boulder

Turner, Bryan (ed) 2000. *The Blackwell Companion to Social Theory.* Basil Blackwell: Oxford

Turner, H. 1992. *Positivism. IN Edgar F. Borgatta and Marie L. Borgatta* (eds.) Encyclopedia of Sociology. Macmillan Publishing: New York

Turner, Jonathan 1987. *The Structure of Sociological Theory.* Dorsey: Homewood, Illionois

Turner, Victor 1974. *Dramas, Fields and Metaphors: Symbolic Action in Human Society.* Cornell University Press: Ithaca, NY

Veblen, Thorstein 1899. *The Theory of the Leisure Class.* Published in 1967 as a Penguin Classic by Viking Penguins: New York

Wachterhauser, B. R. (ed.) 1986. *Hermeneutics and Modern Philosophy.* State University of New York Press: Albany

Waters, Malcolm 1994. *Modern Sociological Theory.* Sage: London

Weber M. 1949. *The Methodology of the Social Sciences.* Free Press, New York

Weber, Max 1949. *The Methodology of Social Science.* The Free Press: Glencoe

Weiner, Annette B. 1976. *Women of Value, Men of Renown.* University of Texas Press: Austin and London

Weiner, Annette B. 1979. *Trobriand Kinship from Another View: The Reproductive Power of Women and Men.* Man (NS) 14: 328-348

Whitehead, Jack 1988. *Action Research, Principles and Practice.* McNiff: New York

Winch, Peter 1958. *The Idea of Social Science.* Routledge: London

Windelband, Wilhelm 1914. *A History of Philosophy.* Published in 1964 by Image Books: New York

Worsley, Peter et al (eds) 1970. *Introducing Sociology.* Penguin Books: Harmondsworth

Zeitlin, Irving M. 1990. *Ideology and the Development of Sociological Thought.* Fourth edition. Prentice Hall: Englewood Cliffs, N. J.

Zetterberg, Hans L. 1965. *On Theory and Verification.* The Bedminster Pres: Totowa, New Jersey

MAADHYAM IAS

संदर्भ पुस्तकों की अतिरिक्त सूची

(Please note that this list and the previous list of references include all the sources that the authors of the units have cited in the text. They include also the books mentioned as Further Reading at the end of each unit of Book 1.)

Carr, E. H. 1961. *What is History?* Penguin Books: Harmondsworth

Castaneda, Carlos 1971. *A Separate Reality*. Penguin Books: Harmondsworth

Damle, Y. B. 1986. Sociological Theory. IN *Survey of Research in Sociology and Social Anthropology*. Indian Council of Social Science Research: New Delhi. Pp. 1-50

Dilthey, W.1883. *Introduction to Human Science*. Princeton University Press: Princeton

Dumont, Louis 1986. *Essays in Individualism*. Chicago University Press: Chicago

Foucault, Michael 1961. *Folie et Déraison*. Plon: Paris

Foucault, Michael 1973. *The Order of Things: An Archeology of Human Sciences*. Vintage: New York

Foucault, Michael 1979. Discipline and Punish. Vintage: New York

Giddens Anthony 1979. *Central Problems in Social Theory*. Macmillan: London

Gluckman, Max 1956. *Custom and Conflict in Africa*. Blackwell: Oxford

Gorelick, Sherry 1991. Contradictions in Feminist Methodology. *Gender and Society* 5 (4)

Heidegger, Martin 1988. *The Basic Problems of Phenomenology*. Indiana University Press: Bloomington

Hensman, Rohini 2005. Revolutionizing the Family. *Economic and Political Weekly* XL (8): 709-712

Hume, David 1739 (volumes 1 and 2) and 1740 (volume 3). *A Treatise of Human Nature*. John Noon: London (volumes 1 and 2) and Thomas Longman: London (volume 3)

Hume, David 1751. *Concerning the Principles of Morals*. A. Millar: London

Hume, David 1779. *Dialogues concerning Natural Religion*. Robinson: London

Husserl, Edmund 1913 (translated in 1931). *Ideas: A General Introduction to Pure Phrenomenology*. Nijhoff: The Hague

John, Mary E. 2003. The Encounter of Women's Studies and Sociology: Questions from the Borders. IN Maitrayee Chaudhuri (ed.) *The Practice of Sociology*. Orient Longman: New Delhi

John, Mary E. 2003. The Encounter of Women's Studies and Sociology: Questions from the Borders. IN Maitrayee Chaudhuri (ed.) *The Practice of Sociology*. Orient Longman: New Delhi

John, Mary E. 2005.Feminist Perspectives on Family and Marriage: A Historical View. *Economic and Political Weekly* XL (8): 712-715

John, Mary E. 2005.Feminist Perspectives on Family and Marriage: A Historical View. *Economic and Political Weekly* XL (8): 712-715

John, Mary E. and Janaki Nair (eds.) 1998. *A Question of Silence? The Sexual Economies of Modern India*. Kali for Women: New Delhi

John, Mary E. and Janaki Nair (eds.) 1998. *A Question of Silence? The Sexual Economies of Modern India*. Kali for Women: New Delhi

Levi-Strauss, Claude 1963. *Structural Anthropology*. Penguin Books: Harmondsworth

Lewis, Oscar 1955.Comparisons in cultural Anthropology. IN W. L. Thomas Jr. (ed.) *Current Anthropology*. Chacago University Press: Chicago

Macfarlane, Alan 2004. To Contrast and Compare. IN Vinay Kumar Srivastava (ed.) *Methodology and Fieldwork*. Oxford University Press: New Delhi, Pp. 94-111

Marx, Karl 1857-1858. *Grundrisse*. (English translation in 1939). Penguin Books: Harmondsworth

Marx, Karl 1859. *A Contribution to the Critique of Political Economy*. Franz Duncker: Berlin

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

Marx, Karl 1861-1879. *Capital* (volume i, ii, iii). Otto Meissner: Hanbury

Mueller-Vollmer, Kurt1975. *The Hermeneutics Reader.* Continuum: New York

Mukerjee, Radha Kamal 1960. *A Philosophy of Social Science.* Macmillan: London

Mukherji, Dhurjati Prasad 1958. *Diversities: Essays in Economics, Sociology and Other Social Problems.* People's Publishing House: New Delhi

Myers, K. A. et al 1998. *Feminist Foundation: Towards Transforming Sociology.*

Radcliffe-Brown, A. R. 1952. *Structure and Function in Primitive Society.* Cohen and West: London

Rao, Anupama 2005. Sexuality and the Family Form. *Economic and Political Weekly* XL (8): 715-718

Spencer, Herbert 1876-1896. *The Principles of Sociology.* D. Appleton & Co: New York

Stanford Ecyclopaedia of Philosophy 2004. Edited by N. Zalta. The Metaphysics Lab Center for the Study of Language and Information, Cordura Hall Stanford University: Stanford

Taylor, S. J. and R. Bogdan 1984. *Introduction to Qualitative Research: The Search for Meanings.* Wiley: New York

Weber, Max 1971.Ideal Types. IN K. Thompson and J. Tunstall (eds.) *Sociological Perspectives.* Penguin Books: M<iddlesex

White, Leslie Alvin 1945. Diffusion vs. evolution: An Anti-Evolutionist Fallacy. *American Anthropologist* 47: 339-356

White, Leslie Alvin 1947. Evolutionary Stages, Progress and the Evaluation of Cultures. *Southwestern Journal of Anthropology* 3: 165-192

White, Leslie Alvin 1959. The Expansion of the Scope of Science. IN Morton H. Fried (ed.) Readings in anthropology. Crowell: New York. Pp. 15-24 (volume 1)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 12

शोध के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 शोध क्या है?

12.3 शोध के मूल प्रकार

12.4 निष्कर्ष

12.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 12 को पढ़ने के बाद आपके लिये निम्नलिखित को बताना संभव होगा:

- शोध का अभिप्राय;
- शोध के विभिन्न प्रयोजनों की समझ; तथा
- विभिन्न प्रकार के शोधों और तकनीकों के स्तर पर उनके प्रयोग से परिचय।

12.1 प्रस्तावना

इकाई 12 एम.एस.ओ.-002 पाठ्यक्रम की पुस्तक 2 में खंड 4 की प्रथम इकाई है। चूँकि पुस्तक 2 का उद्देश्य आपको शोध विधियों और तकनीकों की दुनिया में प्रविष्ट कराना है, इस पुस्तक में 'शोध' की धारणा और शोध के स्वरूपों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इकाई 12 का मुख्य प्रयोजन यह स्पष्ट करना है कि विभिन्न प्रकार के शोधों में क्या सम्मिलित होता है और विभिन्न शोध तकनीकों के उपलब्ध विकल्पों का आप किस प्रकार प्रयोग करें। आपको मूल रूप से प्रयास करके शोध के कार्य विशेष को वर्गीकृत करने के विभिन्न तरीकों से परिचित होने की आवश्यकता है। साथ ही, आपको इस बात को भी महत्व देने की आवश्यकता है कि इकाई में चर्चित स्वरूपों में से कोई भी किसी दूसरे स्वरूप के पूरी तरह से अलग कोई निराला स्वरूप नहीं है। वस्तुतः शोध प्रक्रिया में संश्लेषण (Synthesis) तथा सार संग्रहवाद (Edicticism) की मदद से आपको अधिक आसानी से शोध प्रक्रियाओं में अपना रास्ता मिल सकता है। यह ज़रूरी है कि आप एक जानकार शोधक हों और यही कारण है कि खंड 4 की इकाइयां आपके शोध के प्रति आपकी संवेदनशीलता की मात्रा को एक उच्च स्तर पर ले जाने के लिये प्रस्तुत की गई हैं।

12.2 शोध क्या है?

शोध का अभिप्राय नए और पुष्ट निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए शोधक द्वारा चुने हुए विषय के एक योजनाबद्ध अध्ययन से है। समाजशास्त्र में सामाजिक प्रघटना का वैज्ञानिक शोध किया जाता है।

शोध वैज्ञानिक कैसे होता है? यदि विषय विशेषकर आपके अध्ययन ने शोध की कोई विधि अथवा तर्कसंगत अपनाई है तो आपका शोध कार्य वैज्ञानिक कहलायेगा। चुने हुए विषय के वैज्ञानिक शोध का उद्देश्य होता है कि उस विषय पर वर्तमान जानकारी में योगदान दिया जाये। वैज्ञानिक रूप से प्राप्त की गई आपकी जानकारी को वैध निष्कर्षों तक पहुंचने के लिये शोध की एक प्रक्रिया से गुज़रना होता है। आपके निष्कर्षों की वैधता

बहुत हद तक आपके शोध करने के लिए अपनाई गई विधियों पर निर्भर करती है। वैधता इस बात पर भी निर्भर करेगी कि आपने इन विधियों का कितनी अच्छी तरह से प्रयोग किया है। आपके शोध का मूल्यांकन करने वाले आपके उस तरीके पर भी नज़र डालेंगे जिससे आपके निष्कर्षों ने आपके शोध के विषय की सैद्धांतिक समझ में योगदान दिया है।

क्या उपरोक्त बतलाता है कि शोध क्या है? शायद नहीं। हां अवश्य ही यह आपको इस बात का व्यापक बोध कराता है कि शोध से हमारा क्या अभिप्राय है और किस प्रकार शोध वैज्ञानिक हो सकता है। ऊपर दिए गए हमारे कथनों में हमने अनेक शब्दों का प्रयोग किया है.(विशेष रूप से 'हमारा चुना हुआ विषय', सैद्धांतिक समझ और प्राथमिकता)। इन शब्दों का विश्लेषण और स्पष्ट करेगा कि शोध क्या है। अतः आइए इन शब्दों को स्पष्ट करें।

चयनित विषय : हमने अपने चुने हुए विषय की चर्चा की है। इसका मतलब है कि शोध विषय को निर्धारित करने में अपनी पसंद का एक स्पष्ट संकेत मिलता है । वस्तुतः यही प्रवेश बिन्दु है। शोध के विषय या समस्या को हमने कैसे चुना है?

'पसंद' एक से अधिक कारकों पर निर्भर होती है। 'पसंद' एक काफ़ी सीधी बात लगती है परन्तु यही बात कभी-कभी लंबी बहस, संदेह और विवाद का विषय बन जाती है। उदाहरण के लिए आप मदन (2004 : 191-207) का संदर्भ लें। मदन ने विस्तार से वर्णन किया है कि कैसे और क्यों मदन ने अपने ही समुदाय अर्थात कश्मीर घाटी के पंडितों का अध्ययन करने का विषय चुना। जोबर्ग और नैट (1992) ने अपनी पुस्तक, ए मैथडॉलॉजी फॉर सोशल रिसर्च में लिखा है कि फैशन शौक और किसी प्रकार की कमी अनेक शोधकारों के विषय चयन को प्रभावित कर सकते हैं। कुछ शोधकारों के जीवन के किसी पहलू की विद्यमान स्थितियों को सुधारने की इच्छा हो सकती है और शोध के सामाजिक रूप से उपयोगी अंश पर काम करने का उनका निश्चय हो सकता है। अन्य वैज्ञानिक शोध हेतु काफी महत्वपूर्ण मानी गई समस्या पर काम करना पसंद आ सकता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अतः बावजूद इसके कि कैसे और क्यों आपने शोध हेतु समस्या विशेष को चुना, आपको निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर स्वयं से पूछना उपयोगी लग सकता है। बर्नाड (1994 : 103) ने कहा कि सभी शोधकारों को ये प्रश्न पूछने चाहिए।

- क्या आपके शोध का विषय वास्तव में आपको रुचिकर लगता है?
- क्या आपके शोध विषय पर वैज्ञानिक रूप से शोध करवाना संभव है?
- क्या अपने शोध के प्रारंभ और समापन हेतु आपके पास पर्याप्त संसाधन है?
- अपने शोध प्रश्नों को पूछने अथवा शोध की कुछ विधियों व तकनीकों का प्रयोग करने से आपके समक्ष किसी भी प्रकार की नीति शास्त्रीय अथवा नैतिक समस्याएं आ सकती है?
- क्या आपके शोध का विषय सैद्धांतिक रूप से महत्वपूर्ण और रोचक है?

संभव है कि आपको उपरोक्त प्रश्न घिसे पिटे लगें परन्तु मुझे लगता है कि बर्नाड की सलाह उनके लिए उत्तम है जिन्हें अभी तक शोध करने का अनुभव नहीं हुआ है। इस प्रकार के प्रश्न पूछने से शोधक को शोध विषय के अपने चयन के कारणों की गहरे पैठ कर जांच करने में मदद मिलती है।

सैद्धांतिक समझः दूसरा शब्द सैद्धांतिक समझ जो हमने प्रयोग किया था इस शब्द से क्या अभिप्राय है? सिद्धांत तथ्यों के अमूर्तीकरण से संबद्ध है। तथ्य एक प्रेक्षण है जिसको

अनुभाविक रूप से प्रमाणित किया जा सकता है। यदि आनुभाविक रूप से प्रमाणित तथ्यों के प्रेक्षण के आधार पर आप इस योग्य हों कि: i) अमूर्तीकरण कर सकें, ii) एक अवधारणात्मक प्राधार बना सकें जो प्रासंगिक तथ्यों को क्रमबद्ध करने, वर्गीकृत करने और अन्तर्सम्बद्ध करने में आपकी मदद करे और iii) अनुभवजन्य और सुव्यवस्थित सामान्यीकरणों के रूप में तथ्यों का संक्षेपण कर सकें, तो कहा जा सकता है कि अपने चुने विषय की आपको एक सैद्धांतिक समझ हासिल हो गई है। सैद्धांतिक समझ हमें कभी-कभी कुछ तथ्य संयोजनों के तार्किक परिणामों का पूर्वानुमान करने में मदद करती है। दूसरे अवसरों पर, इस प्रकार की सैद्धांतिक समझ से विषय संबंधी हमारे ज्ञान में संभावित अन्तराल का संकेत भी मिल सकता है।

वैधता: अब वैधता के सवाल पर आएं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि वैधीकरण से तात्पर्य है – सर्वप्रथम एक 'सामान्य-बोध विश्लेषण' अथवा यह बताना कि हमारा चयनित विषय किस बात से है? या इसकी वर्तमान प्रतिस्थिति क्या है? विषय के वैधीकरण प्रयास के आगामी चरणों के बारे में हमें बाद में शोध के मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही संदर्भों में पढ़ने का अवसर मिलेगा। निस्संदेह हमसे ऐसी आशा नहीं की जाती है कि केवल तार्किक और सामान्य-बोध वैधीकरण पर ही भरोसा करें क्योंकि ऐसे वैधीकरण का संबंध सिर्फ़ सत्याभास की श्रेणी से होता है और वह कभी भी निश्चयात्मक नहीं हो सकता। वैधता की माप करने के लिए आपको एक मानदण्ड या पैमाने की आवश्यकता पड़ेगी। इस विषय पर इस पाठ्यक्रम में आगे पढ़ने का अवसर मिलेगा।

अब हम शोध के प्रकारों पर चर्चा आरंभ करें जो हमें समाजशास्त्रीय साहित्य के संग्रह में मिल सकते हैं। लेकिन इन प्रकारों पर बात करने से पहले हमें समाजशास्त्रीय शोधकर्त्ताओं के विषय में कुछ धारणाओं को दूर करना होगा।

MAADHYAM IAS

सामाजिक कार्य शोध का एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए, रीड (1995 : 2040) ने बताया कि शोध हमेशा वह नहीं होता जिसे आप 'वैज्ञानिक' कह सकें। शोध कभी-कभी उपयोगी जानकारी एकत्र करने तक सीमित हो सकता है। बहुधा ऐसी जानकारी किसी कार्य विशेष का नियोजन करने और महत्वपूर्ण निर्णयों को लेने हेतु बहुत महत्वपूर्ण होती है। इस प्रकार के शोध कार्य में एकत्र की सामग्री तदन्तर सिद्धांत सृजन की ओर ले जा सकती हैं इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारी-भरकम सैद्धान्तिक व्याख्याओं में जाये बग़ैर जो शोध उपयोगी जानकारी दे, उसे तुच्छ मानने की आवश्यकता नहीं है।

दूसरी ओर, बेहतर होगा कि यह माना जाये कि महज तथ्य संग्रह से सामाजिक यथार्थ पूरी तरह समझ में नहीं आती है। अतएव जानकारी को केवल एकत्र करने की खातिर ही इकट्ठा किए जाने की आवश्यकता नहीं है। प्रघटना को समझने हेतु आपको एक अवधारणात्मक एव सैद्धांतिक प्रायोजना तैयार करने की आवश्यकता है जो तथ्यों के एक वृहत्तर पुंज को अन्तर्सम्बद्ध करने और उन्हें एक योजनाबद्ध तरीके से समझने में मदद दे।

इसके अलावा वैज्ञानिक शोध करने के लिए आपको अपने ही शोध परिवेश के देश-काल से परे जाना होगा और अपने निष्कर्षों के आधार पर एक सामान्यीकरण को ढूंढ़ना होगा। आपके शोध का यह गुण उसे ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में उपयोग के लायक बनायेगा।

अन्ततः आपको यह समझना है कि शोध की प्रक्रिया के बाद उत्पादित ज्ञान महज जानकारी उत्पन्न करने की खातिर नहीं होता। जैसा कि वालर्स्टाइन (1997:1250) ने कहा है, ज्ञान का उत्पादन समाज की भलाई हेतु शोध से जुड़ा है। यहां हमारा आपको सुझाव है कि पुस्तक के आमुख का प्रथम वाक्य फिर से देखें। इससे आपको शोध पद्धतियों और सामाजिक शोध विधियों में स्वयं को प्रशिक्षित करने की सार्थकता नज़र आयेगी।

आइए, नीचे दिए गए 'सोचें और करें 12.1' को पूरा करने के बाद अब आगे शोध के मूल प्रकारों का निरूपण करें।

सोचे और करें 12.1

मदन (2004:191.207) का लेख, इन परस्यूट ऑफ़ ऐन्थोपॉलॉजी पढ़ें और फिर इग्नू के स्नातकोत्तर उपाधि कार्यक्रम में प्रवेश लेने में अपनी रुचि के बारे में सोचें। इसके बाद "क्यों अपनी पसंद के विषय पर शोध करने की मेरी इच्छा क्यों है या नहीं है?" इस विषय पर पांच सौ शब्दों की एक टिप्पणी लिखो।

12.3 शोध के मूल प्रकार

जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है आपका वास्ता ऐसे शोध से भी पड़ सकता है जो बहुत अधिक सैद्धांतिक हो जबकि ऐसा भी शोध हो सकता है जो निर्णय लेने के लिए तथ्य इकट्ठे करने के व्यवहारजन्य कारण से विशेष रूप से किया गया हो। आपको विदित ही है इस तथ्य के बावजूद कि शोध चार्ट वैज्ञानिक हो, सैद्धांतिक या व्यवहार जन्य हो उसे सुव्यवस्थित होना ही चाहिए और उसमें स्थापित शोध विधियों का प्रयोग करना चाहिए। वस्तुतः यह एक कारण है कि आपको यह पाठ्यक्रम पढ़ने की ज़रूरत है। शोध की विधियों का कोरा प्रयोग ही हमारे शोध को वैज्ञानिक नहीं बनाता। शोध वैज्ञानिक तब होगा जब अपने विषय के क्षेत्र में अवधारणाएं सिद्धांत अथवा सैद्धांतिक विचार विमर्श का हमारे शोध में उपयोग किया जायेगा। यही कारण है कि आपने पुस्तक 1 में सामाजिक यथार्थ को समझने के लिए समाजशास्त्र में विभिन्न विचारधाराओं के सैद्धांतिक योगदानों को विषय में पढ़ाया। इस अर्थ में, आपको पता लगेगा कि शोध जगत में जल्दबाज़ी का कोई काम नहीं है और लम्बी खिंचने वाली शोध प्रक्रिया के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। हां अपने शोध का प्रारूप बनाने के तरीके को तलाशने से पहले मनन करने के लिए हमारे पास शोध के वैकल्पिक स्वरूप अवश्य हैं। यही कारण है कि हमने शोध के प्रकारों पर चर्चा की है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अपने शोध में हमें शोध के अनेक प्रकारों को लाभप्रद ढंग से जोड़ने की स्वतंत्रता है। यह ध्यान में रखें कि इन प्रकारों में से अनेक अपने स्थान विशेष के माध्यम से सम्मिलिन में बेहतर काम करते हैं। प्रकार को निर्दिष्ट करने से यह आभास हो सकता है कि प्रत्येक प्रकार का एक विशिष्ट अस्तित्व है जो किसी अन्य प्रकार के अनुरूप नहीं होगा परंतु ऐसा नहीं है। प्रकारों की सूची पर जाने से पहले हम यह समझें कि आपको देखना होगा कि आपके शोध में हर प्रकार कैसे फलदायक हो सकता है। बहुधा विशेष प्रकारों के गुण अवगुण विषयक लम्बी बहसों से अनुभवहीन शोधकारों को यह लगने लगता है कि शोध के विशिष्ट प्रकार को निर्धारित करते समय उन्हें एक मत विशेष को मानना पड़ेगा।

मेरे विचार से ये वाद-विवाद इस हद तक उपयोगी थे कि वे हर प्रकार के बहुल प्रयोगों को उजागर करते थे परन्तु उनसे शोधकारों के मनों में शंका और संघर्ष भी पैदा हुए। वैज्ञानिक शोध के विकास में बहुत पहले से ही आगमिक (inductive) और निगमनिक (deductive) शोध विषयक बहस छिड़ी हुई थी। प्रत्येक प्रकार के अनुयायी एक के मुकाबले दूसरे के गुण-अवगुण पर लड़ा करते थे। (देखें पुस्तक 1 की इकाई 1)। फिर उसके बाद सैद्धांतिक शोध के मूल्य बनाम एक तथ्य संग्रह मात्र पर विचार विमर्श देखने में आया। सामाजिक वैज्ञानिकों ने विशुद्ध और प्रयोज्य शोध के बीच भेद किया। ये वाद-विवाद कई लोगों के लिए इस बोध के साथ सभारत हुए कि ये दोनों ही घटक एक दूसरे के विरूद्ध नहीं है। अपितु दोनों का ही हम अपनी शोध योजना हेतु आवश्यकतानुसार लाभग्राही ढंग से उपयोग किया जा सकता है (देखें कोष्ठक 12.1 जो मर्डल (1944 : 1130) की सलाह पर आधारित है)।

कोष्ठक 12.1: मात्रात्मक और गुणात्मक शोधों को जोड़ देने की मर्डल की सलाह

आदर्श समुदाय अध्ययन, सामाजिक व आर्थिक सामग्री के ध्यानपूर्वक सांख्यिकीय विश्लेषण के साथ शुरू होनी चाहिए जो कि अध्ययनाधीन समुदाय का निर्माण करने वाले व्यक्ति जनों और परिवारों से संबद्ध हो। प्रवृत्तियों, सांस्कृतिक लक्षणों, व्यवहारगत विन्यासों विषयक विभिन्न समूहों के सदस्यों की ओर से सामाजिक सामग्री को मापना सरल नहीं है और सामाजिक स्तरीकरण अभिव्यक्त होता है। प्रास्थिति अथवा प्रायः सामाजिक प्रास्थिति के 'बोध' का तदन्तर प्रेक्षण किया जाए और प्राप्त परिणामों को सांख्यिकीय जानकारी के ताने बाने में समाकलित किया जाये।

आइए, अब शोध के संभावित प्रकारों की सूची पर दृष्टिपात करें। सामाजिक शोध के पंद्रह प्रकारों में सरजताकोस (1998 . 6-8) के विन्यास की ही भांति, हमने यहां जोड़ों में विन्यास शोध प्रकारों की एक सूची प्रस्तुत की हैं:

- बुनियादी और व्यवहारमूलक
- विवरणात्मक और विश्लेषणात्मक
- अनुभवजन्य और समन्वेषीय (explaratory)
- मात्रात्मक और गुणात्मक
- व्याख्यात्मक (कार्यकरणात्मक) और लम्बे समय तक चलने वाली
- प्रयोगात्मक और मूल्यांकनकारी
- सहभागितापूर्ण कार्य शोध

यदि आप हर प्रकार के नाम को गौर से पढ़े तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि शोधका हर प्रकार शोध के विभिन्न पहलुओं को व्यक्त करता है और आपके लिये उन्हें एक दूसरे से मिलाना संभव है। शोध के विभिन्न प्रकारों का एक दूसरे से मिलाना आपके शोध के प्रयोजन पर निर्भर करेगा। अपने शोध के विभिन्न प्रयोजनों हेतु कोष्ठक 12.2 पर एक नज़र डालें।

MAADHYAM IAS

कोष्ठक 12.2: सामाजिक शोध के विभिन्न प्रयोजन

प्रयोजनों में एक प्रयोजन उस प्रघटना को समझना हो सकता है जिस पर अब तक शोध न किया गया हो। यदि शोध हो चुका है तो संभव है कि वह शोध अप्रमाणिक जानकारी पर आधारित हो। इस प्रकार के सुस्पष्ट उद्देश्य के साथ किया गया शोध आमतौर पर अन्वेषणात्मक या व्यवस्थित शोध कहलाता है।

एक अन्य प्रयोजन पहले से ही ज्ञात और व्याख्यायित प्रघटना पर आगे काम करना हो सकता है। इसमें शोध संबंधी अपने चयनित विषय के क्षेत्र में प्राक्कल्पनाओं की एक श्रृंखला का परीक्षण शामिल हो सकता है। इस प्रयोजन से किया जाने वाला शोध, वर्णात्मक शोध कहलाता है।

एक अन्य प्रयोजन 'प्रयोगशाला' प्रकार के प्रतिवेश में परिवर्तियों (variables) के बीच कार्य करण संबंधी स्थापित करना भी हो सकता है। इस उद्देश्य के किए जाने वाले शोध के प्रयोगात्मक शोध कहा जाता है।

आइए अब ऊपर दी गई सूची के प्रत्येक जोड़े पर विस्तार से चर्चा करें । इस परिचर्चा के अलावा एम.एस.ओ-002 की तीनों पुस्तकों में हर प्रकार की चर्चा विस्तार से की गई है।

i) बुनियादी (या विरूद्ध या आधारभूत) तथा व्यवहारमूलक शोध

बुनियादी शोध को विशुद्ध अथवा आधारभूत शोध के रूप में लिया जा सकता है क्योंकि इसका संबंध सिद्धांतों अथवा कानूनों अथवा आधारभूत नियमों से है और इसमें ज्ञान प्राप्त करने की खातिर ज्ञान प्राप्त करने का लक्ष्य होता है। इसमें व्यवहारमूलक प्रयोग की परवाह किये बिना प्रघटना विशेष के विषय में जानकारी की प्यास है। संदेहों की जांच करने और उन्हें दूर करने हेतु विशुद्ध शोध की जा सकती है। यदि संदेह सही सिद्ध होता है तो विशुद्ध शोध के निष्कर्ष और परिणामों के अनुसार संबद्ध सिद्धांतों और नियमों को परिष्कृत किया जा सकता है। आपका तर्क हो सकता है कि उत्तम सिद्धांत के जैसा व्यवहारिक तो कुछ भी नहीं होता। उदाहरण के लिए, समूहगत विचार (सामूहिक व्यवहार) अथवा सामूहिक गतिकी (dynamics) से संबंधित सिद्धांत के विकसित करने से अत्यधिक उपयोगी प्रयोजन सिद्ध हो सकते हैं। सामाजिक प्रघटना के बारे में वर्तमान सिद्धांतों को निरस्त अथवा प्रमाणित करने हेतु भी विशुद्ध शोध किया जा सकता है। समाजशास्त्रियों ने सामाजिक प्रतिमूल्यों को प्रभावित करने वाले नियमों की खोज़ निकालने के लिए आमतौर पर विशुद्ध शोध किया है। शुद्ध शोध अक्सर ही आवश्यक अवधारणाओं और तकनीकी शब्दावली को विकसित करने का आधार होता है।

जबकि विशुद्ध शोध सिद्धांतों एवं नियमों की खोज करता है, व्यवहारमूलक शोध सामाजिक समस्याओं को हल करने हेतु उन्हें व्यवहार करने के तरीके खोजता है। व्यवहारमूलक शोध सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण करने और उन्हें हल करने पर ध्यान केन्द्रित करता है। समाजशास्त्र में, सामाजिक, अर्ध-सामाजिक और सामाजिक मनोवैज्ञानिक समस्याओं के क्षेत्रों में व्यवहारमूलक शोध किया जाता है। समाजशास्त्रियों का शोध तब विशुद्ध शोध होता है जब उन शोध में यह पता लगाने का प्रयास होता है कि अपराध क्यों किया जाता है अथवा किस प्रकार व्यक्ति अपराधी बन जाता है।

यदि कुछ समाजशास्त्री यह पता लगाने का प्रयास करें कि किस प्रकार अपराधियों को जीवन में पुनः प्रतिस्थापित कर उनके असामान्य व्यवहार को नियंत्रित किया जा सकता है तो कहा जायेगा कि उनका शोध व्यवहार मूलक शोध है। उदाहरण के लिए ट्रक और आटोरिक्शा चालकों के बीच अथवा उद्योग श्रमिकों के बीच नशीले पदार्थों की लत के स्वरूप और विस्तार संबंधी अध्ययन कर रहे समाजशास्त्री का विशुद्ध शोध कहलायेगा। यदि इसके बाद ट्रक और ऑटोरिक्शा चालकों के बीच नशीले पदार्थों की कुप्रथा को कैसे कम करें – शोध संबंधी कोई अध्ययन किया जाता है तो यह व्यवहारमूलक शोध होगा

सामाजिक समस्याओं के अलावा, व्यवहारमूलक का सामाजिक नियोजन, सामाजिक विधान, सामाजिक स्वच्छता, धर्म आदि के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए परिवार नियोजन के क्षेत्र में शोध का लक्ष्य कुछ व्यवस्थाओं को लागू करना होता है। आपका तर्क हो सकता है कि समाजशास्त्र व्यवहारमूलक शोध पर ज़ोर देकर अपने महत्व को बढ़ा सकता है।

ii) विवरणात्मक तथा विश्लेषणात्मक शोध

विवरणात्मक शोध सामाजिक परिस्थिति, सामाजिक घटनाओं, सामाजिक प्रणालियों, सामाजिक संरचनाओं आदि का वर्णन करता है। इसका मुख्य प्रयोजन सामाजिक दशा का यथावत् विवरण प्रस्तुत करना होता है। उदाहरण के लिए, नशीले पदार्थों की लत के बारे में अध्ययन में इस प्रकार के प्रश्न शामिल होंगे : कॉलेज के छात्रों के बीच मादक द्रव्यों की लत का प्रसार कहां तक है? लिए जाने वाले मादक द्रव्यों का स्वरूप क्या है? मादक द्रव्य लेने के पीछे कारण क्या हैं? मादक द्रव्यों के स्रोत क्या हैं? मादक द्रव्य लेने के क्या दुष्प्रभाव होते हैं? आदि।

सामाजिक विज्ञानों में विवरणात्मक अध्ययनों के लिए प्रायः कार्योत्तर (ex post facto) शोध का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के शोध का मुख्य अभिलक्षण यह है कि शोधकर्मी का परिवर्तियों पर कोई नियंत्रण नहीं होता; वे सिर्फ बता सकते हैं कि क्या हुआ या क्या हो रहा है। विवरणात्मक शोध सर्वेक्षण का प्रयोग करता है। विवरणात्मक शोध आम जनता के सामान्यतः अभिलक्षणों या विभिन्न क्षेत्रों व समुदायों की जनसंख्या की व्यापक विविधता का भी सही-सही और सूक्ष्मतः वर्णन करता है।

विश्लेषणात्मक शोध में, शोधकार को पहले से उपलब्ध तथ्यों या जानकारी का उपयोग करना होता है, और इस सामग्री का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने के लिए उसका विश्लेषण करना होता है। पहले से एकत्र किये विचारों, तथ्यों और आंकड़ों के परे देखते हुए समाज-विश्लेषक का यह मानना होता है कि संचित तथ्यों व आंकड़ों के पीछे कुछ और अधिक महत्वपूर्ण और प्रकाशमान है। पूर्वाग्रह यह है कि ध्यानपूर्वक संग्रहित तथ्यों और आंकड़ों का जब सारी सामग्री में प्रस्तुत अन्य परिवर्तियों से जोड़ा जाता है तो एक महत्वपूर्ण व्यापक अर्थ प्रकट होता है, जिससे आपको एक वैध सामान्यीकरण निकालने में मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त पूर्वाग्रह यह भी है कि सामाजिक विश्लेषण सारी शोध क्रिया के द्वारा एक सतत चलने वाली प्रक्रिया है। क्रमबद्ध विश्लेषण का प्रकार्य है एक बौद्धिक मंच ,का निर्माण जहां आपको समुचित रूप से छांटे और छाने हुए तथ्यों और आंकड़ों को उनके उचित प्रतिवेशों और सुसंगत संबंधों में रखना है ताकि आपके लिए उनसे एक सामान्य अनुमान लगाना संभव हो।

तथ्य और आंकड़ें अपनी बात खुद नहीं कहते हैं; वे स्वतंत्र और समान नहीं होते हैं। उनमें विभिन्न जटिलताओं, स्रोतों और संरचनओ वाले अनेक विश्लेषक (अगर-मगर) होते हैं। तथ्य कभी भी सरल नहीं होते। विश्लेषकों को तथ्यों और आंकड़ों को उनके प्रति अपनी आत्मपरक प्रतिक्रियाओं के साथ संयोजन में देखने की आवश्यकता होती है। सामाजिक विश्लेषण में एकत्र की गई संबंधी की व्यापक जानकारी की ज़रूरत होती है। सूक्ष्मदर्शी और अन्तर्दृष्टिपूर्ण ज्ञान के बिना विश्लेषण निरर्थक हैं। विश्लेषणात्मक शोध में सबसे पहला चरण है – संकलित सामग्री का एक आलोचनात्मक परीक्षण, जो अध्ययन के प्रयोजन और वैज्ञानिक खोज पर उसके संभावित उपयोग को दृढ़ता से मन में रखकर किया जाता है। एकत्रित सामग्री को पुनः पढ़ने और पुनः जांचने से विश्लेषक की कल्पनाशक्ति में मंथन होता है और इससे समस्या और सामग्री को देखने का एक नया मार्ग प्रशस्त होता है।

MAADHYAM IAS

सामग्री के विश्लेषण (खासकर उस सामग्री जो सामाजिक एवं व्यक्तिगत समस्याओं से जुड़ी है) के कार्यों में कारण कार्य संबंध की स्थापना एक कार्य है। उन कारणात्मक घटकों की पूरी की पूरी श्रृंखला को खोजना अत्यावश्यक है। ये घटक आमतौर पर एक जटिल सामाजिक परिस्थिति को लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अब समय है झटपट 'सोचे और करें' 12.2 को करें ताकि यह पक्का हो जाए कि आपको विवरणात्मक और विश्लेषणात्मक शोध को पहचानने में दक्षता हासिल हो गई है। निस्संदेह, यह समझने की बात है कि मुख्य रूप से विवरण वाले अध्ययन में भी किसी न किसी प्रकार का विश्लेषण शामिल होगा और विपरीततः मुख्य रूप से विश्लेषणात्मक शोध में कुछ मात्रा में सीधा सपाट विवरण होगा। इस अर्थ में, आपको विशुद्ध विवरणात्मक अथवा विशुद्ध विश्लेषणात्मक अध्ययनों की प्रतीक्षा नहीं करनी है। आपको तो शोध कार्य के अनिवार्य लक्षण पर ही दृष्टि डालनी है जो एक या अन्य दिशा में पूरी तरह झुका हुआ है यानि स्पष्ट संकेत दे रहा है ताकि आप उसे विवरणात्मक अथवा विश्लेषणात्मक की श्रेणी में रख सकें। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है शोध के हर स्वरूप की ज्ञान की दुनिया में उपयोगिता है। अतएव, आइए 'सोचें और करें 12.2' समाप्त करें और फिर शोध के एक अन्य स्वरूप पर चर्चा करें।

सोचे और करें 12.2

विभिन्न संस्थानों एवं टी वी चैनलों द्वारा करवाए गए एक सर्वेक्षण के आधार पर मतदान पुर्वानुमान विषयक शोध के स्वरूप को समझें।

जनजातीय समाज की संस्कृति का विवरण प्रस्तुत करने वाले सामाजिक नृविज्ञानी का शोध किस प्रकार का होता है?

एम.एस.ओ-002 की पुस्तक 1 की इकाइयों में उल्लिखित अध्ययनों में से विश्लेषणात्मक शोध के उदाहरणस्वरूप कोई भी दो चुनें। उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर एक अलग कागज़ पर लिखें और प्रत्येक अध्ययन के पूरा संदर्भ को अध्ययन के शीर्षक के नाम, प्रकाशन के वर्ष तथा प्रकाशन एजेंसी के नाम तथा प्रकाशन के स्थान के साथ दें।

iii) अनुभवजन्य तथा समन्वेषणीय (exploratory) शोध

अनुभवजन्य शोध प्रायः प्रणालियों और सिद्धांत को यथायोग्य स्थान दिए बग़ैर, केवल अनुभवों अथवा प्रेक्षणों पर ही भरोसा करता है। यह शोध सामग्री आधारित शोध है जिसके निष्कर्षों को आगे और प्रेक्षण अथवा प्रयोग द्वारा सत्यापित किया जा सकता है। इस प्रकार के शोध में आंखों देखे तथ्य प्राप्त करना आवश्यक होता है ताकि एक कामचलाऊ प्राक्कल्पना की जा सके, और एक प्रयोगात्मक प्रारूप तैयार किया जा सके। इस प्रकार का शोध तब यथोचित होता है जब यह सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है कि कुछ परिवर्तियां दूसरी परिवर्तियों को किसी न किसी तरीके से प्रभावित करती हैं। प्रयोगों अथवा अनुभवजन्य अध्ययनों के माध्यम से जुटाया गया साक्ष्य प्रदत्त प्राक्कल्पना हेतु एक सशक्त आधार होता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सामान्यतया, समन्वेषनीय शोध गुणात्मक होता है जो प्राक्कल्पनाओं के निरूपण अथवा प्राक्कल्पनाओं व सिद्धांतों के परीक्षण में उपयोगी होता है। इस शोध में यह पूर्वाग्रह होता है कि शोधकार को विचाराधीन समस्या अथवा परिस्थिति संबंधी जानकारी कम है अथवा कतई नहीं है, या फिर उसे समूह की संरचना के बारे में मालूम नही है। विश्वविद्यालय परिसर में छात्रों के असंतोष की छानबीन करने में रुचि रखने वाले शोधकार का उदाहरण कोष्ठक 12.3 में देखें।

कोष्ठक 12.3: शोध के समन्वेषणात्मक प्रकार का उदाहरण

छात्र असंतोष के कारणों को समझने में रुचि रखने वाले को इन बातों का अध्ययन करना होगा विभिन्न समस्याओं के प्रति छात्रों का असंतोष, इन समस्याओं के प्रति प्रशासकों को उदासीनता, प्रदर्शन, घेराव, हड़ताल आदि हेतु एक नेता के अधीन संगठित छात्र; किस प्रकार के छात्रों को सक्रियता होती है, समर्थन जिसे पाने के लिए उनका प्रयास होता है और वे बाहरी संस्थाएं जिनसे समर्थन मिलता है, यह असंतोष कितना व्यापक है, इसे किस प्रकार पुलिस बल द्वारा दबाया जाता है, कैसे नेताओं को गिरफ़्तार किया जाता है, और किस प्रकार कुछ मांगों को स्वीकार करने के लिए अधिकारियों पर दबाव डाला जाता है।

समन्वेषणात्मक अध्ययन के कुछ संदा से चलते आ रहे प्रघटनाओं के लिए भी उपयुक्त होते हैं, जैसे शिक्षा-प्रणालियों की प्रकार्यात्मकता में कमियां, राजनीतिक अभिजातय वर्ग में भ्रष्टाचार, पुलिस द्वारा तंग करना, ग्रामीण दरिद्रता आदि। समाज विज्ञानों में समन्वेषणात्मक अध्ययन अति मूल्यवान हैं। वे एक नवोदित शोधकार के लिए अनिवार्य है।

iv) मात्रात्मक तथा गुणात्मक शोध

मात्रात्मक शोध मात्रा या परिमाण के मापन पर आधारित होता है। यह उन प्रघटनाओं में लागू होता है जिन्हें मात्रा के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। इस प्रकार का शोध

प्रत्यक्षवाद के शोध पद्धतीय सिद्धांतों पर तथा अन्य शोध प्रारूप तथा चयन की कठोरता के मानकों पर आधारित होता है।

गुणात्मक शोध एक ग़ैर मात्रात्मक विश्लेषण को प्रस्तुत करता है, या फिर गुणात्मक प्रघटना से जुड़ा होता है अर्थात यह एक ऐसी घटना है जिसका गुण या भेद से संबंध है। उदाहरण के लिए, एक शोधकार की इच्छा किसी खास मानव व्यवहार हेतु कारणों की जांच पड़ताल की हो सकती है तो उसे ऐसे तकनीकों का प्रयोग करना चाहिए जैसे शब्द संयोजन परीक्षण, वाक्य पूर्ति परीक्षण, कहानी पूर्ति परीक्षण और इसी प्रकार की अन्य युक्तियुक्त तकनीकें। गुणात्मक शोध व्यवहार विज्ञानों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है जिसमें मानव व्यवहार के निहित इरादों का पता लगाना उद्देश्य होता है। इस दृष्टिकोण हेतु कोष्ठक 12.4 देखें जिसमें दिखाया है कि मात्रात्मक और गुणात्मक प्रकार के शोध में कोई द्वैतता नहीं है।

कोष्ठक 12.4: मात्रात्मक और गुणात्मक शोध पर रामकृष्ण मुखर्जी के विचार

मुखर्जी एवं सेनगुप्त (2000:242) ने सामाजिक शोध की शोध पद्धति पर रामकृष्ण मुखर्जी से साक्षात्कार किया और रामकृष्ण मुखर्जी ने दोनों ही प्रकारों के बीच संबंध को इन शब्दों में व्यक्त किया : "गुण मात्रा में कोई द्वैतता नहीं है। उनके बीच कोई 'या/अथवा' नहीं है। गुण विभिन्नता में सिर्फ़ 'दूरियों' को दर्शाता है, जो हमें पता नहीं होती और इसीलिए, मापी नहीं जा सकती"।

हमारा काम है यह पता लगाना कि वे 'दूरियां' या फ़ासले क्या हैं? और उन्हें कैसे मापा जाये। .... यह दूरी या अन्तर ही उन इकाइयों के बीच भिन्नता है जिससे हमारा यहां ताल्लुक है। हो सकता है ये व्यक्ति हों; यह कुछ भी हो सकता है।

पुस्तक 2 में खंड 5 और खंड 6 तथा पुस्तक 3 में खंड 7 पढ़ते समय आपको इन दो प्रकार के शोध के विषय में और अधिक विस्तार से जानकारी प्राप्त होगी। यह बात उल्लेखनीय है कि शोधों के इन दो स्वरूपों के बीच तकनीकी और ज्ञानमीमांसात्मक स्तरों के लिहाज से भेद किया जा सकता है। तकनीकी स्तर के लिहाज से, दोनों ही प्रकार आपके लिए वैकल्पिक तरीकों की पसंद पेश करते है। अपने शोध के लिए उनकी प्रासंगिकता के अनुसार दोनों में से कोई या दोनों का ही चुनाव किया जा सकता है। तकनीकी स्तर पर इन दोनों प्रकारों के बीच कोई ज़्यादा द्वैतता नहीं है। परन्तु ज्ञानमीमांसा के स्तर पर, शोध के ये दोनों प्रकार सामाजिक यथार्थ विषयक ज्ञान का अध्ययन करने के लिये बिल्कुल भिन्न तरीके अपनाते हैं (देखें ब्राइमैन 1988 : 50)। आमतौर पर, प्रत्यक्षवादियों (जो सर्वेक्षण तथा प्रयोगमूलक विधियों का प्रयोग करते हैं) ने मात्रात्मक शोध किया है। यही कारण है कि शोध के इन दो प्रकार के बीच द्वैतता की धारणा व्याप्त है। तकनीक के स्तर पर रामकृष्ण मुखर्जी से सहर्ष सहमति हो सकती है तथा दोनों प्रकारों के शोध को द्वैत नहीं मान सकते हैं।

v) व्याख्यात्मक (कार्यकारणात्मक) तथा लंबे समय तक चलने वाला शोध

व्याख्यात्मक शोध सामाजिक प्रघटना के कारणों को स्पष्ट करता है। इसका लक्ष्य होता है परिवर्तियों या चरों के बीच संबंध स्थापित करना, यथा किस प्रकार एक बात दूसरी बात का कारण है, अथवा किस प्रकार जब एक परिवर्ती (या चर) प्रस्तुत होती है तो दूसरी भी आ जाती है। उदाहरण के लिए, टूटे परिवारों और बाल अपराध के बीच या फिर मादक द्रव्य सेवन और पारिवारिक नियंत्रण के अभाव के बीच, या फिर कॉलिज में छात्रों की हड़ताल और उनकी शिकायतों को दूर करने के प्रति उदासीनता के बीच संबंध की व्याख्या करना।

व्याख्यात्मक (या कार्य-कारणात्मक) शोध मुख्य रूप से प्रघटना विशेष विषयक कारणों, या फिर 'क्यों' कारक से जुड़ा है। इसमें तुलना अथवा परिवर्तन के कारक शामिल नहीं होते। उदाहरण के लिए, महिलाओं के विरूद्ध हिंसा विषयक शोध इस प्रश्न का उत्तर देना चाहेगा कि पुरुष हिंसा क्यों करते हैं। यह एक व्याख्यात्मक शोध का उदारहण है। व्याख्यात्मक शोध में प्राक्कल्पना दो (या अधिक) परिवर्तनों के बीच संबंध को व्यक्त करती है, और शोध प्रारूप इस सहसंबंध के 'क्यों' पहलू को निश्चित करने पर ध्यान केन्द्रित करता है। इन सहसंबंध अध्ययनों से कार्यकारणात्मक अध्ययनों का भ्रम नहीं होना चाहिए, क्योंकि ये समानार्थी नहीं हैं। एक प्राक्कल्पना में दो परिवर्तियों को सकारात्मक रूप से या नकारात्मक रूप से एक दूसरे से जोड़ा जा सकता है, परन्तु हो सकता है उनमें कोई कार्यकारणात्मक संबंध न हो।

लंबे समय तक चलने वाले शोध में, एक लंबे काल के दौरान समस्या अथवा प्रघटना के एक से रूपों का अध्ययन शामिल होता है उदाहरण के लिए, 1979, 1989 तथा 1999 में भारत में पुरुषों और महिलाओं के बीच 'एडस' की बीमारी का फैलना। ऐसे अध्ययन रुझान दर्शाते हैं। यह शोध कई समूहों के बीच भी हो सकता है जिसमें एक समय बिन्दु विशेष पर प्रतिरूपों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल होती है

vi) प्रयोगात्मक तथा मूल्यांकनकारी शोध

सैद्धांतिक रूप से, कारण और प्रभाव की समस्या का अध्ययन करने का विशुद्धतम तरीका प्रयोग होते हैं। इसी कारण, व्याख्या की समस्याओं के अध्ययन के लिये प्रयोग सर्वाधिक परिष्कृत तरीका है। अभीष्टतः, इस प्रकार के शोध में शोधकार को यह दर्शाना अच्छा लगेगा कि क कारण ख यह बात दर्शाने के लिए उसे यह प्रदर्शित करना पड़ेगा कि ख ही क का एक आवश्यक और यथेष्ट कारण है अर्थात शोधकर को दर्शाना पड़ेगा कि 'ख' के अस्तित्व के लिए 'क' को होना ही होगा, और कि 'ख' वास्तव में 'क' का ही परिणाम है, या और कुछ नहीं।

MAADHYAM IAS

नियंत्रित प्रयोगों में परिस्थितियों का इच्छानुसार परिचालन शामिल होता है। शोधकार को उन कारकों को पहचानना ज़रूरी है जो महत्वपूर्ण हैं और फिर उन्हें परिस्थिति में शामिल करना चाहिए या फिर उसमें से निकाल देना चाहिए ताकि उनके प्रभाव का प्रेक्षण किया जा सके।

कार्यकारणात्मक कारकों की पहचान, परिस्थिति में इन कारकों का समावेशन अथवा इसमें से उनका अपवर्णन शोधकार को उन कारकों को इंगीत करने में मदद करता है जो वास्तव में प्रेक्षित परिणाम को सामने लाते हैं।

प्रेक्षण और मापन : प्रयोग उन परिणामों और परिवर्तनों के सटीक और विस्तृत प्रेक्षण पर भरोसा करते हैं जो संभाव्य रूप से प्रासंगिक कारकों के सम्मिलन अथवा निष्कासन के बाद प्रस्तुत होते हैं। इनमें प्रेक्षण और मापन पर गहन रूप से ध्यान दिया जाना भी शामिल होता है।

नियंत्रित प्रयोग शोध प्रयोगशाला के वातावरण अथवा कार्यक्षेत्र के आसपास किया जा सकता है। प्रयोगशाला में किये गये प्रयोग प्रायः छोटी अवधि के होते हैं और उनमें कार्यकारणात्मक कारकों को अलग करने के लिए परिवर्तियों का गहन नियंत्रण किया जाता है। इनमें सूक्ष्म प्रेक्षण और मापन किया जाता हैं।

इस प्रकार की विधियों में एक एकरूप कार्यविधि होती है और यह शोधकार को एक विशिष्ट गुण/दोष के ये मापन की अनुमति देती है । परन्तु प्रयोगशाला में लिये गए शोधकार को

प्राकृतिक वातावरण में चीज़ों के अध्ययन की अनुमति नहीं देते। वे खर्चीले हो सकते हैं और इनकी अनुप्रयोगिता सीमित होती है। उस सीमा को निर्धारित करना कठिन है जिस तार्किक ये जांच परिणाम शोध के प्रति अधिक विशिष्ट योग्यता अथवा अभिवृति की बजाय स्वयं उत्तरदाताओं के परीक्षण स्थिति संबंधी अनुभव को प्रकट करते हैं। प्रयोगशाला परिवेश एक कृत्रिम वातावरण को जन्म दे सकता है, जो परीक्षण परिणामों को प्रभावित कर सकता है और कृत्रिम प्रतिवेश में जुटाई गई सामग्री बनावटी लग सकती है।

एक अन्य प्रकार के प्रयोगमूलक शोध में प्राकृतिक परिवेश में किया गया प्रयोग होता है। व्यक्तियों की आय के स्तर, अथवा ग़रीबी का मुद्दा, कार्यालय परिसर में धूम्रपान का स्तर, आदि जैसे अध्ययनों में शोधकार के लिये परिस्थितियों का इच्छानुकूलन करना संभव नहीं है। ऐसे अध्ययनों में नियंत्रण लागू करना न तो व्यवहारिक है और न ही नैतिक दृष्टि से सही। इसी कारण, ऐसे अध्ययन प्राकृतिक वातावरण में ही करने पड़ते हैं। ऐसे अध्ययन लंबी अवधि के होने के साथ ख़र्चीले भी होते हैं।

इस स्थिति से निबटने के लिए कुछ समाज वैज्ञानिकों ने अर्धप्रयोगात्मक उपागम का सहारा लिया है। इसमें शोधकारों को प्राकृतिक रूप से हो रहे प्रयोगों की ताक में रहना पड़ता है, अर्थात ऐसी परिस्थितियां जिनमें कृत्रिम नियंत्रण थोपे बग़ैर, घटित होने वाली परिस्थितियों के माध्यम से, अलग की गई परिवर्तियों का प्रेक्षण और मापन किए जाने की संभावना उन्हें मिल सके। उदाहरण के लिए, खनन परियोजना के परिणामस्वरूप लोगों के विस्थापन के अध्ययन को एक 'प्राकृतिक रूप से होने वाला प्रयोग' कहा जा सकता है।

सामाजिक कार्यकर्त्ता उत्तरोत्तर मूल्यांकनकारी शोध में लग रहे हैं। मूल्यांकनकारी शोध के सार तत्व को निम्नलिखित तीन मूल प्रश्नों में समेटा जा सकता है :

- यह कार्यक्रम (या एजेन्सी, कार्यविधि, या प्रशासनिक ढांचा) कितना प्रभावी है?
- यह कार्यक्रम कितनी कुशलता से चल रहा है? इससे कार्यक्रम के लागत की तुलना में लाभ और कम लागत से अधिक लाभ से जुड़े सवाल उठते हैं।
- क्या यह कार्यक्रम चलता रहे? क्या यह कार्यक्रम प्रभावकारी या फलोत्वादी है? यदि नहीं, तो क्या इस कार्यक्रम को जारी रखना सही होगा? साथ ही शोधकार को इन बातों की भी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए जैसे, क्या यह कार्यक्रम नैतिक कानूनी आधार पर सही है? एक सक्षम मूल्यांकनकर्ता के लिये मूल्य संबंधी समस्याओं को अनदेखा करना अनुचित है (देखें मार्क और हैनरी 2004)।

vii) सहभागितापूर्ण क्रियात्मक कार्य शोध

आपने प्रारंभ से ही क्रियात्मक शोध, व्यवहारिक मुद्दों वास्तविक संसार में एक नित्यक्रम रूप से उठने वाले विषयों एवं आवश्यकताओं आदि से उत्पन्न समस्याओं के लिए जुड़ा रहा है। यह व्यवहारिक उन्मुखता क्रियात्मक शोध को परिभाषित करने वाला अभिलक्षण (देखें गुस्तवासेन:2003)। क्रियात्मक शोध को परिभाषित करने वाले चार अभिलक्षण निम्नवत हैः

व्यवहारिकः इसका लक्ष्य वास्तविक संसार की समस्याओं एवं मुद्दों को सुलझाना है, विशिष्ट रूप से कार्य स्थल एवं संगठनात्मक प्रतिवेशों में।

परिवर्तनः व्यवहारिक समस्याओं से निबटने के साधन स्वरूप और सामाजिक प्रतिरूपों में परिवर्तन के विषय में अधिक पता लगाने के साधन स्वरूप भी, इसे शोध का एक अभिन्न हिस्सा माना जाता है।

MAADHYAM IAS

चक्रीय प्रक्रिया : शोध में एक प्रतिक्रिया चक्र होता है जिसमें शुरुआती निष्कर्ष परिवर्तन हेतु संभावनाओं को जन्म देते हैं, जो कि फिर आगे की जांच पड़ताल हेतु एक भूमिका के रूप में क्रियान्वित और मूल्यांकित की जाती है।

सहभागिताः शोध प्रक्रिया में अनुपालक (Practicners) मुख्य होते हैं। उनकी भागीदारी सक्रिय होती है, निष्क्रिय नहीं।

क्रियात्मक शोध अपने आप में ही दो अवस्थाओं को लेकर चलता है। प्रथम अवस्था में शोध किया जाता है और दूसरी अवस्था में शोध से निकली जानकारी के अनुपालक व्यवहार में लाते हैं। शोध और क्रियान्वन ये दो प्रक्रियाएं एक दूसरे से जुड़ी हैं। परन्तु व्यवहार के साथ शोध का यह एकीकरण शोध हेतु प्रासंगिकता के कारकों पर नियंत्रण लागू करने संबंधी व्यवहारिकता को सीमित कर देता है। शोध हेतु परिवेश आमतौर पर परिवर्तियों को इच्छानुकूलित किए जाने अथवा नियंत्रण लागू किए जाने की अनुमति नहीं देता, क्योंकि शोध दैनिक गतिविधि के साथ-साथ नहीं अपितु वस्तुतः उस गतिविधि के हिस्से के रूप में किया जाता है। (देखें चैण्डलर एवं टॉर्बर्ट : 2003)।

12.4 निष्कर्ष

इकाई 12 ने स्पष्ट किया कि शोध क्या है और किस प्रकार के प्रयोजन को लेकर सामाजिक यथार्थ के स्वरूप में शोध का. कार्य किया जाता है। शोध के विभिन्न प्रकारों की सूची सहज ही आपको उन मापों से भिज्ञ कराने के लिए है जिनको हम सभी ने कभी न कभी समाजशास्त्रीयों के काम से जोड़ा है। यथार्थ जीवन में, यह इतना आसान नहीं है कि शोध विशेष को एक खास ढांचे में रखा जा सके ।

इकाई 12 में शोध के विभिन्न स्वरूपों की सूची प्रस्तुत करने का अर्थ है कि प्रायः शोधकार को प्रयास होता है कि किसी न किसी प्रकार से अपने शोध को जोड़ा जा सके। सामाजिक प्रघटना के बारे में समाजशास्त्रीय शोध से उनके योगदानों का मूल्यांकन करने में यह प्रवृति मदद देती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इसी ढंग से हमने अगली दो इकाइयों में समाजशास्त्रीय शोध करने की विशिष्ट तरीकों पर ध्यान देने के पूर्व शोध विधियों और शोध प्रारूप की चर्चा करेंगे।

12.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मुखर्जी, पी.एन. (2000), *मैथडॉलॉजी इन सोशल रिसर्च : डिलैमाज् एण्ड पर्सपैक्टिव्ज़,* सेज पब्लिकेशन्ज़ : नई दिल्ली।

श्रीवास्तव, विनय कुमार (सं.)(2004), *मैथडॉलॉजी एण्ड फील्डवर्क,* ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैसः नई दिल्ली

इकाई 13

शोध की विधियां

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 सामाजिक विज्ञानों में शोध विधियों की केन्द्रिकता

13.3 शोध पद्धति और विधियों के बीच अंतर फलक

13.4 शोध पद्धति के तत्व

13.5 सामाजिक शोध में प्रयुक्त सामग्री के प्रकार

13.6 शोध की विभिन्न प्रचलित विधियां

13.7 निष्कर्ष

13.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

ऐसी आशा की जाती है कि इकाई 13 को पढ़ने के बाद आपको यह योग्यता होगी कि:

- सामाजिक विज्ञानों में शोध विधियों के महत्व की विवेचना कर सकें;
- शोध पद्धति और विधियों के बीच संबंध स्पष्ट कर सकें;
- शोध पद्धति तंत्र के घटकों और सामाजिक शोध में सामान्यतया प्रयुक्त सामग्री के स्वरूप बता सकें; तथा
- *विभिन्न शोध विधियों का वर्णन कर सकें।*

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

13.1 प्रस्तावना

शोध विधियों के विषय में सीखना आपको वह पता लगाने में मदद करेगा कि हम कैसे जानें कि तथ्यों के रूप में किसको लें। पर्याप्त पुष्टिकर भोजन का अभाव हमें कुपोषण का शिकार बनाता है। दूषित जल पीलिया या पाण्डु रोग को जन्म देता है। नियमित व्यायाम हमें चुस्त-दुरुस्त और आम बीमारियों से मुक्त रखता है। आपको ये तथ्य कहां से मिले? किसी न किसी शोधकार ने कहीं न कहीं तो उपर्युक्त तथ्यों में से हरेक का पता लगाने के लिए अध्ययन किया ही होगा।

आपका प्रश्न कि कोई शोधकार विशेष ने किसी अध्ययन को कैसे किया, मूलतः आपकी शोध विधियों के विषय में जिज्ञासा दिखाता है। अपने शोध कार्य को करने के लिए हमारे पास कुछ सामान्य तरीके हैं और इकाई 13 ऐसे ही तरीकों पर चर्चा करने जा रही है। यह शोध प्रक्रिया में विभिन्न चरणों का भी वर्णन करेगी। यह इकाई एक बार फिर से शोध पद्धति और विधि के बीच अंतर स्पष्ट करेगी और इन शब्दों के बीच सूक्ष्म संबंध भी बतलायेगी। योजनाबद्ध शोध के तरीकों को समझने का मतलब है आप अपनी लघु शोध परियोजना को क्रियान्वित करने के लिए तैयार हैं। कृपया ध्यान दें कि यह परियोजना आपके सत्रीय कार्यों में से एक का हिस्सा होगी।

13.2 सामाजिक विज्ञानों में शोध विधियों की केन्द्रिकता

सामाजिक विज्ञानों में विषयों की पहचान अधिकांश रूप में उसके अनुपालकों की शोध विधियों पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में, आपके लिये सामाजिक विज्ञानों में विधियों की

केन्द्रिकता से इंकार करना संभव नहीं है। अधिकांश सामाजिक विज्ञान विषयों ने भौतिक विज्ञानों से विधियां उधार लीं, हालांकि भौतिक विज्ञानों में सम्मिलित विषयों में नितांत भिन्न विषयों का अध्ययन किया जाता है। परिमाणतः सामाजिक विज्ञानियों का काफ़ी समय सामाजिक प्रघटनाओं/दृश्यों से जुड़ी वस्तुओं और भौतिक प्रतिरूपों के अध्ययन की विधियों के बीच प्रतिवाद को हल करने में जाता है। जैसा कि खंड 4 की प्रस्तावना में उल्लेख किया गया, ये विधियां तकनीकी नियमों का ध्यान दिलाती हैं जो विषय-सामग्री के संग्रहण और विश्लेषण हेतु विधियों को परिभाषित करते हैं। यदि सामग्री संग्रहण की विभिन्न विधियां मौजूद हैं तो सामग्री विश्लेषण की भी अनेक विधियां हैं जैसे सांख्यिकीय अनुमिति, निदर्शन और कंप्यूटर आधारित गुणात्मक सामग्री विश्लेषण के नए स्वरूप। शोध के भी अनेक तरीकें हैं जैसे शोध समस्या का स्पष्ट वर्णन, प्राक्कल्पना अवधारणाएं, सिद्धांतों एवं कथनों को प्रलक्षित करने की विधियां।

इस रूप में समझे जाने पर विधियां विश्वसनीय और वस्तुनिष्ठ जानकारी उत्पन्न करने हेतु कार्यविधि प्रस्तुत करती हैं। शोधकारों को अपनी मर्ज़ी से ही मनमानी प्रश्नावली तैयार करने, साक्षात्कार करने अथवा सहभागी प्रेक्षण आदि की स्वतंत्रता नहीं होती। यह सुनिश्चित करने के लिए कि उत्पन्न जानकारी निष्पक्ष, प्रामाणिक और विश्वसनीय हो, उन्हें निश्चित और भली-भांति स्वीकृत कार्यप्रणालियां ही अपनानी होती हैं।

13.3 शोध पद्धति और विधियों के बीच अंतर फलक

एक बार फिर से स्पष्ट करने के लिहाज़ से, हमें आपका ध्यान इस तथ्य की ओर खींचना है कि शोध पद्धति उस विस्तृत सैद्धांतिक एवं दार्शनिक गठन की ओर संकेत करता है जिसमें कार्यविधिक नियम सही बैठते हैं। विधियों और शोध पद्धति के बीच अन्तरफलक अर्थात क्रिया-बिंदु संबंधी अध्ययन को 'सामाजिक शोध का दर्शन' कहा जाता है (देखें ह्यूसः 1990)। यह उस रीति को देखता है जिसमें विस्तृत दार्शनिक एवं शोध पद्धतीय उन्मुखतन सामग्री के संग्रहण एवं विश्लेषण के संग्रहण एवं विश्लेषण हेतु कार्यविधिसंगत नियमों को मान्य और प्रमाणीकृत करती हैं। ब्रुअर (2000) के अनुसार इस कार्य कारणात्मक संबंध को निम्नवत बताया जा सकता है।

शोध कार्य की सफलता काफ़ी हद तक उस शोध पद्धति द्वारा निश्चित होती है जिस पर वह आधारित होता है। आपको विदित ही है कि शोध पद्धति शोध प्रक्रिया का एक विस्तृत ख़ाका होता है ; यह उस सैद्धांतिक उन्मुखता पर प्रकाश डालता है जिसके अनुसार उस शोध प्रक्रिया को चलाया जाना है जिसमें प्रयोग की जाने वाली विधियों और तकनीकों के चयन को दिशानिर्देश मिले। समाजशास्त्रियों का यह मानना है कि जो चीज़ सामाजिक शोध को वैज्ञानिक पुट प्रदान करती है वह अनुमानात्मक दृष्टिकोण ही है जो शोधकार को स्पष्ट सामान्य नियमों पर पहुंचने में मदद करता है।

आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि हमने शोध पद्धति पर चर्चा क्यों की है जबकि यह इकाई 13 शोध की विधियों के विषय पर है। उम्मीद है कि उपर्युक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो गया होगा कि हमें अपनी शोध पद्धति के विषय में सुनिश्चित होना आवश्यक है ताकि हमारे लिये अपने शोध के क्रियाविधिक नियमों अथवा विधियों तक पहुंचना संभव हो। यही कारण है कि यहां शोध पद्धति के मूल तत्वों पर ही चर्चा की गई। अवसर पड़ने पर हमें प्रयोग किए जाने वाली विशेष विधियों को तय करने में मदद करेगी।

भाग 13.4 पर जाने से पूर्व क्यों न 'सोचे और करें 13.1' को हल किया जाए।

सोचें और करें 13.1

पुस्तक 1 और 2 की प्रस्तावना को पढ़ें और देखें कि सिद्धांत और अनुसंधान किस प्रकार संबद्ध हैं। इनमें प्रत्येक दूसरे को क्या योगदान देता है, इस पर चर्चा करें। फिर अपनी रुचि का एक विषय तलाशें और इस विषय के अन्तर्गत आने वाले सामाजिक प्रतिरूपों की श्रृंखला को निर्दिष्ट करें। 'सोचें और करें 13.2' में यह अभ्यास जारी रहेगा।

13.4 शोध पद्धति के तत्व

शोध पद्धति को रूपायित करने वाले मूल तत्व हैं:

i) अवधारणाएं

ii) प्रतिज्ञप्तियां (Propositions) या प्राक्कल्पनाएं (Hypotheses)

iii) सिद्धांत

ये तीनों तत्व शोध पद्धति का तानाबाना हैं। ये तीनों तत्व एक दूसरे से एक चक्रीय ढंग से जुड़े हैं। जबकि अवधारणा को एक सिद्धांत का उपयोग कर परिभाषित किया जा सकता है, ये अवधारणाएं ही सिद्धांतों की विषयवस्तु को आकार प्रदान करती हैं। आइये तीनों तत्व में से प्रत्येक के विषय में जाने।

अवधारणाएं: अवधारणाएं सामाजिक शोध के अंजर पंजर हैं। अवधारणा को विविध तथ्यों को एक संक्षिप्त लिपि (Shorthand) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यही सामाजिक-वैज्ञानिक भाषा का सार्थक प्रतीक संघटक हैं। सभी अवधारणाएं अनिवार्यतः यथार्थ का अमूर्तिकरण होती है। यथार्थ के अनेक आयाम होते हैं; अतः एक अवधारणा के अनेक अर्थ और उसकी अनेक छवियां हो सकती हैं। अवधारणाओं को शोधकार की सैद्धांतिक उन्मुखता के अनुसार परिभाषित किया जाता है और वे ही विचाराधीन प्रघटना के [illegible] में अर्थवान क्रमबद्धता ले कर आती हैं। इस तरह अवधारणाएं सिद्धांतों का [illegible] हैं (अवधारणा शब्द को परिभाषित करने के लिए देखें कोष्ठक 13.1)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 13.1: बैबी (1989 : 126) कृत अवधारणा शब्द की परिभाषा

अवधारणा "एक मानसिक छवि है जिसे एक दूसरे से असंबद्ध प्रेक्षणों और अनुभवों को एक साथ लाने हेतु संक्षिप्त युक्ति के रूप में प्रयोग किया जाता है। {...} वे व्यक्तित्व जगत में नहीं पाये जाते हैं अतः उन्हें साक्षात रूप से नहीं मापा जा सकता है"।

बैबी (1989:126) ने आगे अवधारणीकरण शब्द को निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया है:

"अवधारणीकरण शोध हेतु उपयुक्त विभिन्न प्रकार के प्रेक्षण एवं मापन को अवधारणाओं के अस्पष्ट मानसिक को विशिष्टीकृत करने की प्रक्रिया अवधारणीकरण है"। किसी अवधारणा के मापन हेतु आपको उस अवधारणा को परिमेय सूचकों में बदलना पड़ेगा।

प्रतिज्ञप्तियां/प्राक्कल्पनाएं: अवधारणाओं के बीच अन्तर्संबधों के कथनों को प्रतिज्ञप्तियां कहा जाता है। शोध के विषयों के रूप में विशिष्ट संकल्पनाओं की परिभाषाओं में विचाराधीन अवधारणाओं और उसी दायरे से चुने गए अन्य सभी संभावित विषयों के पुंज के साथ सुव्यक्त या अव्यक्त तुलना शामिल होती है। उदाहरण के लिए, किसानों के विशेष संदर्भ के साथ मानव समूहों के क्षेत्र में शोध करते वक्त 'किसान' शब्द को नगरवासियों, जनजातियों आदि से भिन्न विशिष्ट लक्षणों वाले व्यक्ति या समुदाय, के रूप में परिभाषित किया जाता है। हमारा सुझाव है कि प्राक्कल्पनाओं के विषय में अधिक जानने के लिए आप पुस्तक 1 की इकाई 3 फिर से देखिये।

सिद्धांत: सिद्धांतों को उन अवधारणाओं और प्रतिज्ञप्तियों की प्रणालियों के रूप में समझा जा सकता है जो प्रतिरूप विशेष को अभिलक्षित करने वाले संबंधों और निहित सिद्धांतों की

व्याख्या करते हैं। ऐसे सिद्धांतों की एक "भव्य श्रेणी" हो सकती है जो तार्किक विन्यास में मानव व्यवहार के विस्तृत क्षेत्रों के साथ सही बैठने का प्रयास करती है। अल्पसंख्या वाली अवधारणाओं एवं प्रतिज्ञप्तियों की कम दायरे की सैद्धांतिक व्यवस्था भी हो सकती है। आनुभाविक शोध द्वारा जांची जा सकने वाली प्रतिज्ञप्तियों के स्रोतों के रूप में अपनी प्रभावशीलता की दृष्टि से आपस में भिन्न होते हैं। अतः यह नहीं कहा जा सकता है कि सिद्धांत विशेष "सिद्ध" किया जा चुका है। फिर भी प्रतिज्ञप्तियों या प्राक्कल्पनाओं के सफल प्रमाणीकरण में उस सैद्धांतिक प्रणाली के लिये निहितार्थ होते हैं जिससे उसका संबंध होता है। इस प्रकार का हर प्रमाणीकरण सिद्धांत को मज़बूती प्रदान करता है।

अब समय है 'सोचें और करें 13.2' को पूरा करने का।

> **सोचें और करें 13.2 (सोचें और करें 13.1 का पुनरारम्भ)**
>
> अपने शोध विषय से जुड़ी प्रमुख अवधारणाओं एवं परिवर्तनों को स्पष्ट करते हुए निरूपित करें। कम से कम एक विशिष्ट जांच योग्य प्राक्कल्पना बनायें। सुनिश्चित करें कि आपकी प्राक्कल्पना में परिवर्तियों के बीच एक विशिष्ट संबंध दिखाई दे।

13.5 सामाजिक शोध में प्रयुक्त सामग्री के प्रकार

सामाजिक शोध में प्रयुक्त विभिन्न विधियों पर चर्चा से पूर्व, आइए सामाजिक शोध में प्रयुक्त सामग्री के स्वरूपों को समझें। एक है – मौलिक या प्राथमिक सामग्री जो शोधकार अन्वेषिका द्वारा स्वयं एकत्र की जाती है। दूसरी है – गौण सामग्री पुस्तकालय आदि जैसे स्रोतों से इकट्ठे किए जाती है। जब सामग्री के मुख्य रूप से संख्याएं और तालिकाएं हों और उसे सांख्यिकीय विश्लेषण की ज़रूरत हो तो उसे 'मात्रात्मक सामग्री' कहा जाता है, जबकि यदि यह सामग्री विवरणात्मक हो और उसे समाजशास्त्रीय/शास्त्रीय विश्लेषण की ज़रूरत हो तो उसे 'गुणात्मक सामग्री' की संज्ञा दी जाती है।

MAADHYAM IAS

आइए, अब सामाजिक शोध की प्रचलित विधियों पर चर्चा आरंभ करें।

13.6 शोध की विभिन्न प्रचलित विधियां

'विधि' शब्द पर हमने पहले ही चर्चा की है और उसे शोध पद्धति से भिन्न दर्शाया है। इससे आपको 'विधि' शब्द के एक भिन्न अर्थ के प्रति संवेदनशीलता होगी। यह शब्द अपने ज्ञानमीमांसात्मक संदर्भ में दिखाई पड़ सकता है और यह शब्द शोध के एक साधन के प्रसंग में भी आपके सामने आ सकता है। निम्नलिखित विधियों पर हमारी चर्चा दोनों ही अर्थ भेदों का संकेत देती है परन्तु अधिकतः यह चर्चा शोध में साधन स्वरूप प्रयोगों के संदर्भ में की गई है। यह चर्चा सामग्री को एकत्रित करने और उसका विश्लेषण करने के तरीकों के बारे में है। ध्यान रखें कि मात्रात्मक और गुणात्मक प्रक्रियाओं (प्रतिचयन, सर्वेक्षण, गहन क्षेत्र कार्य, सहगामी प्रेक्षण तथा केस-स्टडी आदि) से जुड़ी विधियों पर पुस्तक 2 के खंड 5 और खंड 6 तथा पुस्तक 3 के खंड 7 में विस्तार से चर्चा की जायेगी। इसी कारण उन्हें शोध विधियों की हमारी इस सामान्य चर्चा में शामिल नहीं किया गया है।

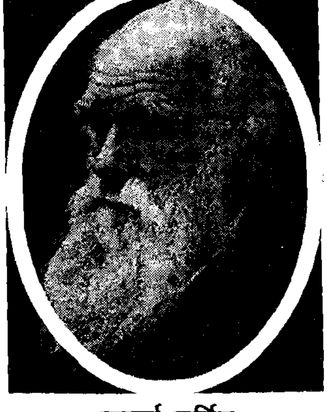

चार्ल्स डर्विन
(1809-1882)

उदविकासीय विधि

सामाजिक शोध में अनुभववाद के उदय को समझते समय हमें पता लगा था कि प्रारंभिक सामाजिक वैज्ञानिकों ने समाज के अध्ययन के जीव विज्ञान के प्रतिदर्श (model) को अपनाया था। सामाजिक विज्ञानों में डार्विन के उद्विकास के सिद्धांत के समानान्तर विचार थे। यह मान लिया गया

था कि सभी समाज सरल से जटिल रूपों में बदलाव की अवस्थाओं से गुज़रते हैं। हर परिवर्तन स्वयं दृश्य विशेष में छोटे मोटे बदलाव लाता है परन्तु एक लंबी समयावधि में परिवर्तनों का संचयी प्रभाव ही नए, प्रायः अधिक जटिल, रूपों को उभारता है। उदविकासीय विधि में परिवर्तनों की एक श्रृंखला के संचयी प्रभाव का अध्ययन होता है। इस बात से विश्लेषण किया जाता है कि हर परिवर्तन कैसे रूपान्तरीकरण करता है।

अनेक समाजशास्त्रीयों ने इस विधि का विरोध किया और इसे ऐतिहासिक विवरण तैयार करने का एक साधन बताया, जो कृत्रिम और सतही लगता था। परन्तु साथ ही एक लंबी समयावधि के दौरान संस्था विशेष की बदली दशाओं के विषय में हमें इस विधि से क्रमबद्ध रूप से ज्ञान मिलता है। यह विधि सामाजिक परिवर्तन के अध्ययन को संभव बनाती है।

तुलनात्मक विधि

तुलनात्मक विधि प्राथमिक एवं गौण दोनों प्रकार की सामग्री को इकट्ठा करने और उसका विश्लेषण करने के लिये सामाजिक विज्ञानों की प्राचीनतम विधि हैं ऑगस्त कॉम्टे (जीवनकाल 1830-1892) जैसे प्रत्यक्षवादियों ने इसे शोध की एक विश्वसनीय और वैज्ञानिक विधि कहा है। उद्विकासवादियों और प्रसरणवादियों ने इसे सांस्कृतिक विशेषताओं की समानता तथा समाजों की 'प्रगति' की व्याख्या करने के लिए प्रयुक्त किया था। सांस्कृतिक समष्टि को लक्षणों में बांट कर और उनका विश्लेषण करके प्रसरण और उदविकास के सिद्धांतों के विकास का यह एक सरल प्रचलन थी।

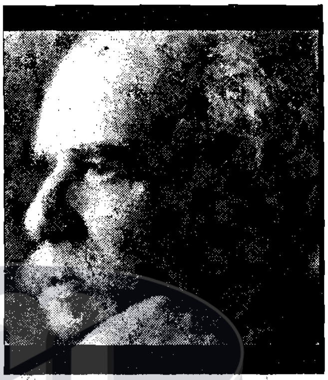

फ्रैंज़ बोआस
(1858-1942)

MAADHYAM IAS

फ्रैंज बोआस (1940) ने उदविकासवाद के सिद्धांत की तीव्र आलोचना की और सांस्कृतिक सापेक्षवाद की धारणा को प्रस्तुत किया, जो हर संस्कृति को एक अनुपम इकाई के रूप में स्वीकार करती है और संस्कृतियों के लक्षणों की तुलना के विचार को नकारती है। बोआस ने ऐतिहासिक सामग्री की प्रासंगिकता पर ज़ोर दिया और ऐतिहासिक संदर्भ में संस्कृतियों का अध्ययन करने के विचार को प्रतिपादित किया। इस विचारधारा के तहत् विपरीत संस्कृतियों के बीच तुलनात्मक अध्ययनों का उदय हुआ और हर संस्कृति में नातेदारी, परिवार सार्वभौमिक श्रेणियों का विश्लेषण करके सम्पूर्ण विश्व की मानव समाजों में समानता को समझने के प्रयास किए गए। विभिन्न संस्कृतियों के बीच तुलनाएं नृशास्त्र में विशेष रूप से लेवी-स्ट्रॉस (1963) के संरचनावाद का आधार हैं।

बोआस (1940) ने तुलनात्मक विधि की सीमाओं को बताया। उसने एक सुनिश्चित लघु भौगोलिक क्षेत्र के भीतर ही तुलना के एक सीमाबद्ध उपयोग की सलाह दी। उसने इसे इतिहास मूलक विधि का नाम दिया।

जी. पी. मर्डाक (1940) ने तुलना को एक नया आयाम दिया और इसके लिये सांख्यिकीय तकनीकों का उपयोग किया। उसने इसे विभिन्न संस्कृतियों के बीच सर्वेक्षण कहा। उसके अनुसार, यह समझने के लिए कि ठीक-ठाक रूप से तुलनात्मक विधि क्या होनी चाहिए, हमें देखना चाहिए कि किस प्रकार की समस्याएं हैं तथा उसका गंतव्य समाधान क्या है? ये दो प्रकार की होती

जी.पी. मर्डाक
(1897-1985)

हैं, एक है समकालिक तथा दूसरी है भूतकालिक। समकालिक अध्ययन में संस्कृति विशेष की एक समय विशेष ने बिंदु पर अध्ययन किया जाता है। अपना अस्तित्व बनाये रखने हेतु ज़रूरी संस्कृति की दशाओं को यथासंभव परिभाषित करना ही हमारा अंतिम लक्ष्य हो सकता है। हमारी सामग्री द्वारा प्रस्तुत बहुविध भेदों के पीछे निहित सार्विकीय की खोज के साथ संस्कृति और सामाजिक जीवन के स्वरूप से हमारा सरोकार होता है। अतः हमें यथासंभव अधिक से अधिक विविध प्रकार की संस्कृतियों की तुलना करने की आवश्यकता होती है।

संस्कृति के भूतकालिक अध्ययन में, दूसरी ओर, हमारा सरोकार उन तरीकों से होता है जिनसे संस्कृति बदलती है, और परिवर्तन प्रक्रिया के सामान्य नियमों को खोजने का प्रयास होता है। यह अध्ययन करने के लिए कि कैसे संस्कृति बदलती है, हमें पहले यह तय करना पड़ता है कि संस्कृति वस्तुतः क्या है और वह कैसे काम करती है।

इस प्रकार, समस्याओं के समकालिक अध्ययन को अनिवार्यतः कुछ हद तक समस्याओं के भूतकालिक अध्ययन से पूर्व ही किया जाता है।

ऑस्कर लेविस
(1914-1970)

फ्रैड ऐगन (1954) ने एक लघु स्तर पर और तुलना पर यथासंभव अधिक से अधिक नियंत्रण के साथ, तुलनात्मक विधि की उपयोगिता के प्रति अपनी वरीयता बताई है। प्रथमतः यह स्वाभाविक है कि आपेक्षिक रूप से समरूपीय संस्कृति वाले क्षेत्रों का लाभ उठाया जाये अथवा सामाजिक या सांस्कृतिक स्वरूपों के भीतर ही काम किया जाये और आगे ऐसा करने के लिए जहां तक संभव हो पारिस्थितिकीय कारकों पर नियंत्रण रखा जाये। दूसरे, उस ऐतिहासिक ढांचे पर नियंत्रण रखना आवश्यक है जिसके दायरे में तुलना की जाती है। ऐगन (1954) ने नियंत्रित तुलना विधि का सुझाव दिया है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

दूसरी ओर, ऑस्कर लेविस (1955), का कहना है कि नृजातिशास्त्र में सिर्फ तुलनाएं होती हैं और इसमें कोई तुलनात्मक विधि नहीं है।

समय के साथ तुलनात्मक विधि में अत्याधिक बदलाव आया है। पहले के विद्वानों ने इस विधि का प्रयोग समाज विषयक सामान्य नियमों को प्रतिपादित करने के लिए किया था। परन्तु शीघ्र ही अहसास होने लगा कि विभिन्न समाजों में सामाजिक प्रतिरूपों की जटिलता और विविधता के चलते सामान्य नियमों को प्राप्त करना सभंव नहीं है। 1960 के उपरांत तक तुलनात्मक विधि का मुख्य लक्ष्य सार्वत्रिक रूप से वैध सामान्य नियमों के प्रतिपादन से हर बार विशिष्ट विवरण शास्त्रीय संस्कृतियों के विवरणों को प्रस्तुत करना हो गया। नृजाति विवरणशास्त्रीय विशिष्टता पर बल देने से ऐसी सामग्री एकत्रित हुई जो पहले के अध्ययनों द्वारा प्रस्तुत सामग्री से गुणात्मक रूप से भिन्न हैं।

विभिन्न संस्कृतियों के बीच किये गये अध्ययन दो श्रेणियों में आते हैं : (i) भावमूलक अध्ययन; जो देश और काल में विद्यमान विशिष्टतापूरक विवरणों पर ध्यान केंद्रित करते हैं और (ii) मानमूलक अध्ययन, जो कानून सदृश सामान्य नियमों पर ध्यान केंद्रित करते हैं

आइए, अब इतिहासमूलक विधि की चर्चा करें

इतिहासमूलक विधि

यह विधि समाजों और संस्कृतियों के निरालेपन तथा गतिकीय स्वरूप को मान्यता देती है। (समाज या संस्था अथवा किसी तत्व प्रघटना) विशेष से जुड़ी ऐतिहासिक जानकारी उसकी

सामाजिक गतिकता की प्रकृति को उजागर करती है। ऐतिहासिक आयाम अछूती सामग्री समयहीन होने की छवि देती है।

इतिहासमूलक विधि में विभिन्न समयावधियों वाले अतीत में जाकर तथ्य इकट्ठे किये जाते हैं। इस विधि के जानकारी स्रोतों में आते हैं: लिखित अभिलेख, समाचार पत्र , डायरियां, पत्र, यात्रियों के विवरण आदि। सामाजिक शोधकार आमतौर पर इतिहासमूलक जानकारी के तीन मुख्य स्रोतों तक सीमित हैं:

अ) दस्तावेज़ और विभिन्न ऐतिहासिक स्रोत जिस सीमा तक वे इतिहासकारों को उपलब्ध होते हैं

ब) सांस्कृतिक इतिहास और विश्लेषणात्मक इतिहास संबंधी सामग्रियां और

स) प्रमाणिक पर्यवेक्षकों एवं प्रत्यक्षदर्शियों के व्यक्तिगत स्रोत

कब, कैसे और किन परिस्थितियों में इन स्रोतों में से कोई एक या सभी का प्रयोग शोधकारों की रुचियों, उनके अध्ययनों के कार्यक्षेत्र और स्रोतों की उपलब्धता पर निर्भर करता है। जब इतिहासकारों ने अपनी वर्णित घटनाओं का विश्लेषण न किया हो और दूसरों ने व्यापक सांस्कृतिक ऐतिहासिक प्रतिवेशों संबंधी अपने लेखों में उन्हें अभी शामिल ही न किया हो तो आपके द्वारा उन दस्तावेज़ों का सीधा प्रयोग किया जा सकता है। सामाजिक स्थिति विशेष संबंधी हमारी जानकारी में कोई लुप्त कड़ी जोड़ने के लिए भी उनका प्रयोग किया जा सकता है।

जब ऐतिहासिक दस्तावेज़ पीढ़ीगत नहीं वरन् गत शताब्दियों की घटनाओं को बतलाते हैं तो यह सामाजिक शोधकारों के लिए आमतौर पर उपयोगी होता है कि विद्यमान गौण सामग्री को उपयोग में लाया जाये जो इतिहास की व्याख्याएं अथवा विश्लेषण हो सकते हैं। परन्तु इस विधि की कुछ निम्नांकित सीमा बद्धताएं भी हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अ) इतिहासकारों के लिए जीवन इतिहास लिखना संभव नहीं है

ब) इतिहास लिखने के समय समस्त देश व काल में हो रही समस्त घटनाओं को जानना संभव नहीं है।

स) अचेतन रूप से व्यक्तिगत पूर्वाग्रह और आत्म व्याख्याएं इतिहास लिखने में प्रवेश कर जाती हैं।

फिर भी ऐतिहासिक सामग्री को सामाजिक शोध के लिए विश्वसनीय और पर्याप्त माना जा सकता है यदि

अ) जब ऐतिहासिक दस्तावेज़ों को सामाजिक शक्तियों के संकुलों के रूप में प्रस्तुत किया जाये।

ब) जब सामाजिक प्रघटना जटिल सामाजिक प्रक्रियाओं को सार्थक रूप से बतलाते हैं और अन्तर्संबन्धों के पुंज (मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, धार्मिक) एक एकीकृत समष्टि, एक व्यवस्था अथवा जटिल विन्यास में योगदान देते हों।

इसके अतिरिक्त, जिन अध्ययन किये जाने वाले ऐतिहासिक दस्तावेज़, व्यक्तिगत दस्तावेज़ हो सकते हैं, जैसे जीवनियां, डायरियां, पत्रादि और संस्मरण या फिर सार्वजनिक दस्तावेज़ हो सकते हैं जैसे पत्रिकाएं एवं समाचार पत्र व अन्य प्रकाशित सामग्री।

आइए, अब सोचें और करें 13.3 को हल करें।

सोचें और करें 13.3

इकाई 13 के भाग 13.6 में उल्लिखित तीन अनुसंधान विधियों को पढ़ने के बाद, विचार करें कि समाजशास्त्री अथवा सामाजिक वैज्ञानिक द्वारा उद्विकासीय विधि, तुलनात्मक विधि और एक इतिहासमूलक विधि का प्रयोग क्यों किया जाये। एक शोध विषय चुनें और दर्शायें कि इन तीनों शोध विधियों में से प्रत्येक की दृष्टि से किस प्रकार इस विषय का अध्ययन किया जायेगा।

व्यक्तिगत दस्तावेज़

इनमें लोगों द्वारा विभिन्न उद्देश्यों से प्रलेखित सभी प्रकाशित और अप्रकाशित जानकारियां आती हैं। व्यक्तिगत दस्तावेज़ किसी वैज्ञानिक शैली में नहीं लिखे जाते हैं। वे आमतौर पर कुछ विचारों, मूल्यों एवं संवेदनाओं आदि को प्रकट करते हैं। आत्मपरक और अवैज्ञानिक होते हुए भी व्यक्तिगत दस्तावेज़ सामाजिक शोध के लिये बड़े मूल्यवान हैं। वे समसामयिक सामाजिक परिस्थितियों, प्रणालियों, जीने के तरीकों आदि के विषय में जानकारी उपलब्ध कराते हैं। आपने निम्नलिखित प्रकार के व्यक्तिगत दस्तावेज़ों को देखा होगा।

जीवनियां: कुछ महान राजनेता, समाजसुधारक और लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तियों ने अपनी आत्मकथाएं लिखी हैं। इन जीवनियों में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक दशाओं तथा उनके समय की घटनाओं के बारे में उपयोगी जानकारी होती है। चाहे जिस प्रकार की जीवनी हो उसमें कुछ न कुछ प्रमाणिक एवं विश्वसनीय जानकारी अवश्य मिलती है। हो सकता है कि लेखकों ने जानबूझकर घटनाओं एवं अपनी संवेदनाओं को बढ़ा चढ़ा कर लिखा हो या फिर कम महत्व दिया हो। उनमें जानबूझकर छिपाए गए तथ्य हो सकते हैं, जो जीवनी करके व्यक्तित्व को एक अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिप्रेक्ष्यों में दर्शा सकते हैं।

MAADHYAM IAS

डायरियां: डायरियां या दैनन्दिनियां भिन्न-भिन्न अभिप्रायों से लिखी जाती हैं। कुछ लोगों ने डायरियां अपने जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं को याद रखने के लिए लिखी हैं। कुछ अन्य ने अपने जीवन की समीक्षा की है कई और दूसरों ने डायरियों में न लिखकर समय समय पर अपने जीवन की समीक्षा की है।

डायरी में दी गई जानकारी सामाजिक शोध में बहुत उपयोगी हो सकती है। जहां अंतःक्रिया का प्रेक्षण पास से नहीं हो पाता ऐसे साक्षर समाजों में समाजशास्त्रीय शोध की तकनीक की तरह डायरी का उपयोग किया जाता है। अपने शोध में यदि चाहें तो आप भी जानकारी देने वालों से अपनी अंतःक्रियाओं को डायरी में लिखने के लिये करें। उदाहरणार्थ, क्यूबिट (1973) ने अपने शोध में दम्पतियों के एक समूह द्वारा एक सप्ताह के लिये डायरी लिखने की तकनीक को अपनाया और इस तरह उसने काफ़ी उपयोगी जानकारी प्राप्त की। परंतु कई जानकारी देने वाले एक सप्ताह से अधिक समय के लिये डायरी लिखने को तैयार नहीं थे।

अधिकांश डायरी लेखकों की इच्छा उन्हें प्रकाशित कराने की नहीं होती है। आमतौर पर यह उम्मीद की जाती है कि डायरी में दर्ज़ जानकारी भरोसे योग्य होगी। डायरियों की कुछ सीमाबद्धताएं निम्नलिखित प्रकार की हैं:

अ) चूँकि डायरी लेखन मुख्यतः व्यक्तिगत होता है, इसी कारण इसमें घटनाओं का विस्तृत और पूर्ण विवरण नहीं होता है बल्कि जानकारी काफ़ी ऊपरी और अविकसित रूप में होती है। नियमतः डायरी घटना के प्रसंग को दर्ज़ नहीं करती है। इससे घटनाओं की व्याख्या करने और उनका असली अर्थ समझने में कठिनाई होती है।

ब) डायरियां अनियमित रूप से लिखी जाती हैं और इसीलिए उनमें जानकारी का तारतम्य नहीं होता है। उनमें वर्णित भिन्न घटनाओं और संवेदनाओं को परस्पर जोड़ना बहुत मुश्किल होता है।

पत्रादि: पत्र प्रायः संवेदनाओं, पसंद-नापसंद, योजनाओं, अभिव्यक्तियों, इच्छाओं, भावनाओं, महत्त्वाकांक्षाओं और जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं की अभिव्यक्ति के साधन होते हैं। वे मैत्री, प्रेम एवं वैवाहिक संबंधों, तनावों, आदि जैसे अन्तर्संबंधों के विषय में बतलाते हैं। पत्रों की कुछ गौरतलब सीमाबद्धताएं इस प्रकार हैं।

अ) निजी पत्रों को प्राप्त करना मुश्किल होता है

ब) पत्र घटनाओं का विस्तृत और पूर्व विवरण प्रदान नहीं करते हैं।

संस्मरण: कुछ व्यक्तियों की अपनी यात्राओं, खुदाई कार्यों , अन्वेषणों आदि के संस्मरण लिखने में रुचि होती है। ऐसे संस्मरण सामाजिक शोध में उपयोगी जानकारी उपलब्ध कराते हैं।

सार्वजनिक या सरकारी दस्तावेज़

सरकारी या गैर-सरकारी संस्थाओं से आपको निम्नलिखित प्रकार के सार्वजनिक प्रलेख प्राप्त हो सकते हैं:

अभिलेख: अधिकांश सरकारी और गैर सरकारी विभाग अनेक प्रकार के अभिलेख सुरक्षित रखते हैं जिनमें महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है और वे सामाजिक शोध के लिए जानकारी के महत्वपूर्ण स्रोत सिद्ध हैं।

प्रकाशित सामग्री: इस प्रकार की सामग्री से आपको अनेक स्रोत मिल सकते हैं। उदाहरण के लिए, जनसंख्या, मृत्युदर, जन्मदर, विवाह एवं तलाक से संबंधित समय-समय पर हुए सर्वेक्षण। ऐसे प्रकाशित दस्तावेज़ बहुत उपयोगी होते हैं।

MAADHYAM IAS

पत्र पत्रिकाएं: ये महत्वपूर्ण सार्वजनिक दस्तावेज़ है जिनमें हमें विभिन्न पहलुओं पर जानकारी मिलती है। जिसे सामाजिक शोध में प्रयुक्त किया जा सकता है। जानकारी का यह स्रोत काफ़ी भरोसेमंद होता है।

समाचार पत्र: प्रकाशित ख़बरें, समसामयिक विषयों पर चर्चा, सभाओं सम्मेलनों की रिपोर्ट, निबन्ध एवं लेख, सम्पादक को पत्र, आदि जानकारी के उत्तम स्रोत हैं और इनमें भरपूर विश्वसनीयता होती है।

अनुभवजन्य परिस्थिति में प्राथमिक सामग्री के संग्रहण में विधियों के दो प्रकार देखे जाते हैं, जिनका चुनाव वांछित सामग्री के स्वरूप पर निर्भर करता है। ये हैं : सर्वेक्षण विधि और क्षेत्र कार्य विधि। जैसाकि पहले भी उल्लेख किया गया, इन तरीकों पर हमारी चर्चा एम.एस.ओ-002 के अन्य खंडों में होगी।

13.7 निष्कर्ष

इकाई 13 में भावी शोधकार के लिये सामाजिक शोध में सामान्यतया विधियों का एक बुनियादी परिचय प्रस्तुत किया है। शोध की आवश्यकता प्रायः सभी जगह पड़ती है और इसी कारण शोध विधियों को सीखना एक उत्तम विचार है, जो हमें यह समझने में मदद करता है कि जिन्हें हम तथ्य मानते हैं वे हमें पता कैसे चले। किसी न किसी के कहीं न कहीं कोई अध्ययन किया है और दुनिया के सामने शोध के विषय पर अपने अनुभव रखे हैं। अपने शोध की परिशुद्धता, विश्वसनीयता और बेहतर उपयोगिता के लिए आपको वैज्ञानिक तरीकों को अपनाना होता है। हमने शोध पद्धति के घटकों पर चर्चा की जो हमें

शोध करने और शोध पद्धति विशेष को अपनाने हेतु उचित साधन चुनने का समूचा ढांचा प्रदान करते हैं। हमने आमतौर पर अपनाई जाने वाली कुछ सामाजिक शोध विधियों पर चर्चा की जबकि अन्य विधियों के लिए हमें एम.एस.ओ-002 की पुस्तक 2 के खंड 5 और खंड 6 तथा पुस्तक 3 का खंड 7 को पढ़ना होगा।

13.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऐलन जी. एवं जी. स्किनर (1991), *हैण्डबुक फ़ॉर रिसर्च स्टुडेन्ट्स इन सोशल साइन्सिज़,* फ़ालमर प्रैस : लन्दन

बैब्नी ई. (1989), *द प्रैक्टिस ऑफ़ सोशल रिसर्च,* वर्डसवर्थ पब्लिशिंग कंपनी : बैलमॉण्ट, कैलिफ़ोर्निया।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 14

शोध प्रारूप के तत्व

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 शोध प्रक्रिया की संरचना करना

14.3 निष्कर्ष

14.4 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

इकाई 14 पढ़ने के बाद आपसे आशा की जाती है कि आपके द्वारा अपनी लघु शोध परियोजना का एक शोध प्रारूप तैयार किया जा सकेगा, जिसमें निम्नलिखित विवरण शामिल होंगे:

- शोध समस्या जिस पर आपने काम करना तय किया है;
- कार्य क्षेत्र स्थल का चुनाव जहाँ आपका शोध कार्य होगा;
- शोध में लगने वाला अनुमानित समय और उसकी लागत;
- आपके शोध विषय पर प्रकाशित सामग्री की समीक्षा;
- एक या एक से अधिक प्राक्कल्पना जो आपने जाँच हेतु निर्दिष्ट की हैं;
- आपके शोध का सैद्धान्तिक उन्मुखता;
- शोध का व्यापक दायरा एवं अध्ययन की इकाई तथा सामग्री संग्रहण के तरीके; तथा
- सामग्री की व्याख्या और शोध परिणामों को लिखना।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

14.1 प्रस्तावना

शोध प्रारूप एक प्रकार की रूपरेखा है जिसे आपको शोध के वास्तविक क्रियान्वन से पहले तैयार करना है। योजनाबद्ध रूप से तैयार एक खाका होता है जो उस रीति को बतलाता है जिसमें आपने अपने शोध की कार्य योजना तैयार की है। आपके पास अपने शोध कार्य पर दो पहलुओं से विचार करने का विकल्प है, नामतः अनुभवजन्य पहलू और विश्लेषणपरक पहलँ ये दोनों ही पहलू एक साथ आपके मस्तिष्क में रहते हैं जबकि व्यवहार में आपको अपना शोध कार्य दो चरणों में नियोजित करना है: एक सामग्री संग्रहण का चरण और दूसरे इस सामग्री के विश्लेषण का चरण। आपकी मनोगत सैद्धान्तिक उन्मुखता और अवधारणात्मक प्रतिदर्शताएं आपको उस शोध सामग्री के स्वरूप को निर्धारित करने में मदद करती हैं जो आपको एकत्र करनी है और कुछ हद तक यह समझने में भी कि आपको उन्हें कैसे एकत्र करना है। तदोपरांत, अपनी सामग्री का विश्लेषण करते समय फिर से आमतौर पर सामाजिक यथार्थ संबंधी सैद्धान्तिक और अवधारणात्मक समझ के सहारे आपको अपने शोध परिणामों को स्पष्ट करने में और प्रस्तुत करने के वास्ते शोध सामग्री को वर्गीकृत करने में और विन्यास विशेष को पहचानने में दिशानिर्देशन मिलता है।

शोध एक गतिमान प्रक्रिया है जिसमें एक सोपान-श्रृंखला होती है और जिसका आरंभ आपके द्वारा अपने शोध विषय की विभिन्न अवधारणाओं को पहचानने से होता है। एक बार शुरू होने के बाद शोध प्रक्रिया अपने निष्कर्ष तक पहुँचने के रास्ते में विधिबद्ध चरणों की एक श्रृंखला से गुज़रती रहती है। इकाई 14 इन चरणों के विषय में ही है जिनका विवरण आपके अपने शोध प्रारूप में दिया जाता है। इकाई 14 में हमने उन दस वृहद् चरणों में

प्रत्येक पर चर्चा की है जो आमतौर पर समाजशास्त्रीय शोध के मूल सिद्धांत या तत्व कहलाते हैं। एक लघु शोध परियोजना के कार्यान्वयन संबंधी अपने सत्र कार्य के लिए आपको प्रस्तुत इकाई में उल्लिखित दस चरणों की दृष्टि से एक शोध प्रारूप तैयार करना है।

14.2 शोध प्रक्रिया की संरचना करना

शोध प्रक्रिया की संरचना करना अर्थात् आधारभूत ढाँचा तैयार करना विज्ञान का एक अनिवार्य अंग है। इसका यह अर्थ नहीं है कि ये चरण सदा ही एक श्रृंखला में होते हैं। वस्तुतः, शोध के विभिन्न चरण एक दूसरे के आगे-पीछे होते हैं। कभी-कभी प्रथम चरण से ही अंतिम चरण के स्वरूप निर्धारित हो जाता है। अपनाये गये चरणों में ऐसा नहीं होता है कि यदि एक है तो दूसरे को बाहर करना होगा और न ही वे पृथक और भिन्न होते हैं। चित्र 14.1 में वे व्यापक चरण दिखाए गए हैं जिन्हें शोधकारों द्वारा शोध क्रिया में अपनाया जाता है।

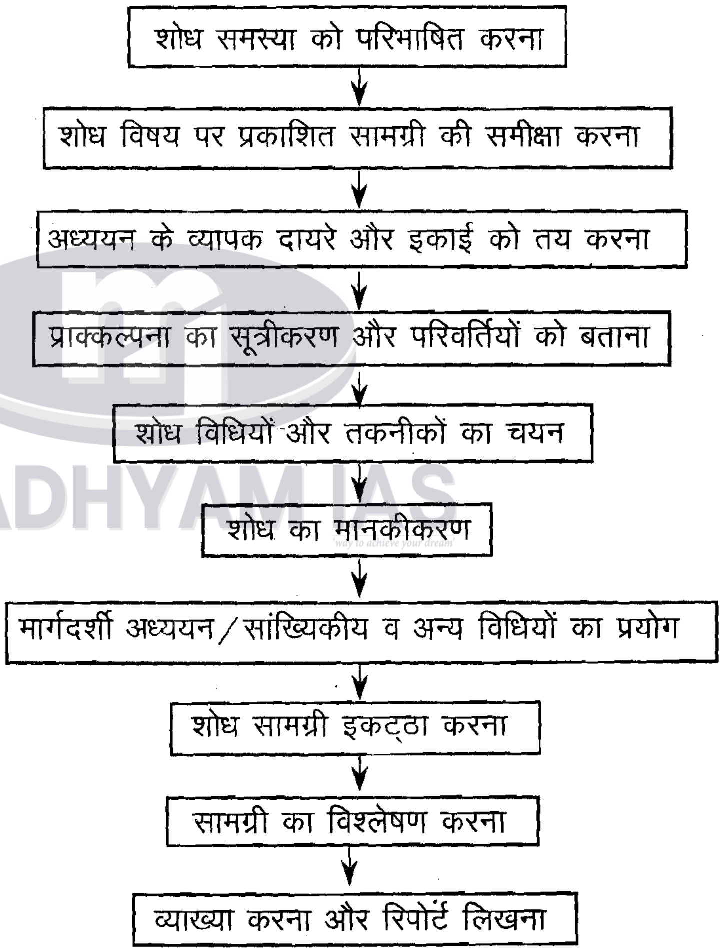

चित्र 14.1: शोध प्रारूप के दस चरण

MAADHYAM IAS

शोध प्रारूप ही परियोजना के अभियानार्थ वह युक्तिपूर्ण योजना है जिससे शोध के मोटी-मोटी संरचना तय होती है। शोध प्रारूप को तैयार करने के प्रकार्यों एवं प्रयोजनों की एक संक्षिप्त चर्चा कोष्ठक 14.1 में दी गई है।

कोष्ठक 14.1: शोध प्रारूप के प्रकार्य एवं प्रयोजन

ब्लैक एवं चैम्पियन (1976: 76-77) ने शोध प्रारूप के तीन प्रकार्यों का उल्लेख किया है:

i) शोध प्रारूप से शोधकार्य को चलाने के लिये एक रूपरेखा तैयार हो जाती है।

ii) शोध प्रारूप से शोध की सीमा और कार्यक्षेत्र परिभाषित होती है।

iii) शोध प्रारूप से शोधकार को शोध को आगे बढ़ाने वाली प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का पूर्वानुमान करने का अवसर मिलता है।

मैन्हाइम (1977: 142) ने शोध प्रारूप तैयार करने के निम्नलिखित पांच प्रयोजनों को बताया

i) अपनी प्राक्कल्पना का समर्थन करने और वैकल्पिक प्राक्कल्पनाओं का खंडन करने हेतु पर्याप्त साक्ष्य जुटाना।

ii) एक ऐसा शोध करना जिसे शोध की विषयवस्तु और शोध कार्य विधि की दृष्टि से दोहराया जा सके अर्थात् समाज के लिये प्रसांगिक अनुपम परिस्थिति का अध्ययन की अनुमति नहीं होती हैं।

iii) परिवर्तियों के बीच सहसंबंधों को इस ढंग से जांचने में सक्षम होना जिससे अंतर्सम्बद्ध प्रतिज्ञप्तियाँ निकलें।

iv) एक पूर्ण विकसित शोध परियोजना की भावी योजनाओं को चलाने के लिए एक मार्गदर्शी अध्ययन की आवश्यकता को दिखाना।

v) शोध सामग्री इकट्ठा करने की यथोचित तकनीकों के चयन द्वारा समय और संसाधनों का मितव्यय करने में सक्षम होना।

एक उच्च रूप से मानकीकृत मात्रात्मक शोध में शोध प्रारूप का शब्दशः पालन किया जाता है जबकि गुणात्मक शोध लचीला होता है जिसमें प्रारूप में संशोधन करना संभव होता है। फिर भी, शोध प्रारूप को पहले से बनाने का विचार उत्तम है। शोध प्रारूप में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। ये कार्य चित्र 14.1 में उल्लिखित सभी चरणों के लिए ज़रूरी हैं।

अपनी शोध समस्या को परिभाषित करना

शोध प्रक्रिया में प्रथम चरण है शोध की जाने वाली समस्या को चुनना और स्पष्ट रूप से परिभाषित करना। समस्या को ढूँढे जाने की आवश्यकता है और उसे इस प्रकार प्रतिपादित किए जाने की ज़रूरत है ताकि उस समस्या पर शोध किया जा सके। आमतौर पर शोध समस्या का अभिप्राय ऐसी खोज-बीन से होता है, जो शोधकार ने सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक स्थिति के प्रसंग में चुना है और शोधकार उसकी व्याख्या प्राप्त करना चाहता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

साधारण विषय का विशिष्ट शोध समस्याओं के रूप में रखने को वैज्ञानिक शोध का प्रथम चरण माना जाता है। अनिवार्यतः शोध समस्याओं के प्रतिपादन में दो चरण होते हैं, तथा समस्याओं को पूरी तरह से समझना और उन्हें विश्लेषणात्मक दृष्किोण से अर्थपूर्ण शब्दों में प्रकारान्तर से कहना। आपको ऐसा विषय चुनना है जो जाना-पहचाना हो और शोध सामग्री अथवा स्रोतों की दृष्टि से आपकी पहुँच में हो। शोध समस्या को विद्यमान साहित्य के प्रारंभिक अध्ययन से पूर्व ही चुन लेना बेहतर रहता है। शोध समस्या को तय करना अथवा उसकी परिभाषा देना शोध का अति महत्वपूर्ण चरण है और स्पष्ट रूप से समस्या व्यक्त कर पाने का अर्थ है कि आधा शोध कार्य हो ही गया माना जाये।

ज़रूरत है कि शोध विषय के आलोक में शोध प्रश्नों और उन सैद्धान्तिक आधारों को आप स्पष्ट तौर पर बतायें जिन पर शोध टिका है। आगे, आपको अपने शोध प्रश्नों की आवश्यकतानुसार शोध के लक्ष्य व उद्देश्य बतलाने होंगे। इससे शोध प्रक्रिया को एक सुपरिभाषित केंद्र बिंदु और दिशा प्राप्त होंगे। जब तक आप के पास शोध के उद्देश्यों का स्पष्ट अनुमान न होगा, शोध नहीं होगा और एकत्रित सामग्री में वांछित सुसंगति नहीं आएगी क्योंकि यह संभव है कि आपने विषय को देखा हो जिस स्थिति में हर परिप्रेक्ष्य भिन्न मुद्दों से जुड़ा होता है। उदाहरण के लिए, विकास पर समाजशास्त्रीय अध्ययन में अनेक

शोध प्रश्न हो सकते हैं, जैसे विकास में महिलाओं की भूमिका, विकास में जाति एवं नातेदारी की भूमिका, अथवा पारिवारिक एवं सामुदायिक जीवन पर विकास के सामाजिक परिणाम। शोध प्रारूप तैयार करते समय शोध के लक्ष्यों और उद्देश्यों तथा उसकी प्रमुख विशेषताओं को लिखकर शोध के केंद्रबिंदु को सीमांकित करें।

शोध क्षेत्र स्थल (लों) का चयन

शोध कार्य में लगते समय शोध क्षेत्र पर भी उतना ही ज़ोर दें जितना कि अपने विषय के चुनाव पर। कुछ हद तक क्षेत्र का चुनाव आपके शोध की सफलता को सुनिश्चित करता है। व्यावहारिक दृष्टि से क्षेत्र विशेष की समस्याओं के प्रति शोध विषय की उपयोगिता की दृष्टि से या ज्ञानमीमांसात्मक मुद्दों की सैद्धान्तिक समझ हासिल करने की दृष्टि से शोध विषय की प्रासंगिकता तय होती है। उदाहरणार्थ, जनजातीय गाँव में विभिन्न समुदायों (communal) के बीच संबंधों का अध्ययन नहीं किया जा सकता है। ऐसे अध्ययन में आपको विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच अंतःक्रिया का प्रेक्षण करना होगा और इसलिये आपको ऐसा क्षेत्र चुनना होगा जहाँ अनेक धार्मिक समुदायों के लोग रहते हों। एक बड़े क्षेत्र में आपके लिये दो या तीन उप-क्षेत्रों को चुनना अभीष्ट होगा। उदाहरण के लिए, कभी-कभी ज़िला स्तर अथवा ग्राम स्तर पर आपके सामने अप्रत्याशित एवं अनियंत्रणीय समस्याएं आ सकती हैं और तब आपको सहारे के लिये किसी विकल्प की जरूरत पड़ सकती है। सबसे पहले आप अपने पसंद के शोध क्षेत्र वाले स्थल (लों) को स्पष्टतः निश्चित करें और फिर उसके विषय में जानकारी एकत्र करना शुरू करें। इससे आपको उस क्षेत्र की भौगोलिक और सामाजिक-सांस्कृतिक दशाओं को समझने में मदद मिलेगी, आपके द्वारा सामग्री के एकत्रण पर असर डालेगी। इससे क्षेत्र-विशेष और उसके लोगों के उपयुक्त तरीके से आपकी शोध में युक्तियों और प्रश्नों को तैयार करने में मदद मिलती है।

समय और संसाधनों का विचार

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अपने शोध को प्रारूपित करते समय अपने संसाधनों की सीमाओं के प्रति पूरी तरह भिन्न होना और साथ ही समय-योजना को भी निरूपित करना आवश्यक है। यदि आपने अपने शोध के विभिन्न चरणों की समय सारणी नहीं तैयार की है तो संभव है कि शोध एक लंबी खिंचने वाली प्रक्रिया बन जाये, जो कि गुणवत्ता और प्रासंगिकता दोनों के लिए घातक है। ज़रा सोचें कि क्या होगा यदि हैज़ा महामारी पर शोध में वर्षों का समय लग जाये। विलंब का मतलब होगा घटिया किस्म का शोध और अनगिनत लोगों की मृत्यु। हमें यह भी मालूम है कि जब तक आपने अपने शोध में उदारतापूर्वक समय नहीं दिये तो शोध के असफल होने का अंदेशा रहता है क्योंकि सामाजिक यथार्थ के बाद में द्रुत परिणाम पाने के लिए प्रयोगशाला में रातभर मशीन परीक्षणों वाला शोध नहीं किया जा सकता है। अतः आपको शोध में लगने वाले समय की आवश्यकता का यथार्थपरक ढंग से मूल्यांकन करना होगा और तदनुसार ही अपनी शोध युक्ति तय करनी होगी। ध्यानपूर्वक नियोजन और एक समय-सारणी का अनुपालन आपको अपने संसाधनों को प्रभावशाली ढंग से प्रयोग करने और समय सीमा में रहकर ही शोध कार्य को समाप्त करने में मदद करेगा। इसके अलावा, आपको अपने संसाधनों की सीमाबद्धताओं के प्रति जागरूक होना होगा और शोध-युक्ति को यथार्थपरक एवं लागत-प्रभावी ढंग से तैयार करना होगा। यदि संसाधन बीच में ही पस्त हो जायें तो शोध को गंभीर आघात पहुँचेगा। यदि कोई एजेन्सी आपके शोध को वित्त प्रदान कर रही है तो आपकी विश्वसनीयता दाँव पर लग सकती है। अतः ज़रूरी है कि आप अपने शोध प्रारूप में लगने वाले समय और संसाधनों का स्पष्ट वर्णन करें।

आपको अपनी शोध प्रक्रिया में संसाधनों संबंधी अवरोधों के प्रभाव को आप पहले से जान लें और लिख लें। इन प्रभावों को दृष्टि में रखकर आप उनसे यथासंभव निबटने की

युक्तियाँ विकसित करें। अनियंत्रणीय संसाधन-सीमाओं का विवरण भावी शोधकारों को उनके शोध में कई युक्तियाँ खोजने के लिये प्रोत्साहित कर सकता है।

गौण सामग्री की समीक्षा करना

आपके शोध विषय पर विद्यमान साहित्य अर्थात् प्रकाशित सामग्री की समीक्षा करने का प्रयोजन न सिर्फ़ शोध की सम्भाव्यता का मूल्यांकन करने में मदद करना होता है बल्कि एक प्रभावशाली शोध पद्धति को तैयार करना भी होता है। समीक्षा हेतु आपको शैक्षिक पत्र-पत्रिकाएं, सम्मेलन/सभाओं की कार्यवाही रिपोर्टें, सरकारी रिपोर्टें, पुस्तकें, आदि को पढ़ने की ज़रूरत पड़ेगी (देखें कोष्ठक 14.2)।

कोष्ठक 14.2: प्रकाशित सामग्री खोजने में कम्प्यूटर का प्रयोग

शोध संबंधित उपलब्ध सामग्री खोजने हेतु इंटरनैट का प्रयोग करने के उद्देश्य से आपको पुस्तक 3 के खंड 8 में इकाई 32 पढ़ने की आवश्यकता है। यदि आपका शोध विषय निश्चित रूप से तय हो गया है तो आपकी यह खोज बहुत से संदर्भ ग्रंथों से जानकारी लेने की एक काफ़ी द्रुत और कारगार विधि हो सकती है।

आपके लिये दो प्रकार की प्रकाशित सामग्रियों की समीक्षा करना संभव हैं – पहला, अवधारणाओं और सिद्धांतों से जुड़ी सामग्री और दूसरा है अनुभवजन्य साहित्य। आपको ऐसे अध्ययन भी मिलेंगे जिनमें आपके शोध संबंधी सैद्धान्ति एवं विवरणात्मक दोनों पक्ष हों। ऐसे साहित्य की समीक्षा का परिणाम यह होगा कि आपको अपने शोध के विषय पर उपलब्ध विशेष सामग्री व अन्य पक्षों के बारे में परिचय मिलेगा। साहित्य समीक्षा के बाद शोध से जुड़े विशिष्ट प्रश्नों का अधिक परिष्कृत और स्पष्ट कथन सामने आता है।

शोध प्रारूप तैयार करते समय शोधकार द्वारा संपूर्ण शोध प्रक्रिया की रूपरेखा अंकित हो जाती है। उन्हें शोध प्रश्नों को सुलझाने में सहायता करने वाली सामग्री के स्वरूप की शोधकारों को एक स्पष्ट तस्वीर बनानी पड़ती है। उदाहरण के लिए, शोधकारों को पहले से ही तय करना होता है कि कितनी केस-स्टडी उन्हें सार्थक निष्कर्ष निकालने में मदद करेंगे अथवा कितनी संख्या में किन-किन श्रेणी के लोगों के जीवन-वृत्तांत वे एकत्र करें। इस प्रक्रिया में काफ़ी परिश्रम और अंतर्दृष्टिपूर्ण चिंतन की आवश्यकता होती है। शोधकार अपने विषयों पर किये गये पहले के अध्ययनों की समीक्षा करके एक यथार्थपरक शोध प्रारूप बनाने के लिए शोधकारों को अपने शोध पर काम करना होता है।

MAADHYAM IAS

शोध क्षेत्र में प्रेक्षणार्थ समय और घटनाओं को क्रम तय करना शोध प्रारूप एक महत्वपूर्ण घटक है। यह आपको शोध सामग्री एकत्र करते समय सही दिशा की समझ प्रदान करता है। इसका मतलब यह नहीं कि शोध क्षेत्र में परिस्थिति पर ध्यान दिए बग़ैर आपको अपनी समय सारणी का कठोरता से पालन करना ही है। शोध क्षेत्र वास्तविक दशायें अवश्य ही आपको दिशानिर्देशित करेंगी और तदनुसार आपको अपने शोध प्रारूप में अप्रत्याशित परिवर्तन करने पड़ सकते हैं। फिर भी, शोध क्षेत्र में बिना किसी तैयारी के और कर्तव्य विमूढ़ होकर तो नहीं जाया जा सकता है, अतएव आपको शोध की विभिन्न अवस्थाओं और युक्तियों की रूपरेखा तैयार करने की ज़रूरत है। साथ ही, आपको शोध क्षेत्र की तात्कालिक आवश्यकताओं के अनुसार ही समायोजन करने को तैयार रहना पड़ता है।

प्राक्कल्पना

व्यापक साहित्य समीक्षा के उपरांत, आपको शोध में प्रयोग की जाने वाली प्राक्कल्पना या प्राक्कल्पनाओं को स्पष्ट शब्दों में रखने की ज़रूरत है। प्राक्कल्पना के तार्किक अथवा

अनुभवजन्य परिणामों को जाँचने के लिए एक अंतरिम पूर्वाग्रह होता है। कुछ निर्दिष्ट प्रघटनाओं के घटित होने की व्याख्या के रूप में दी प्रतिज्ञप्ति अथवा प्रनिज्ञप्तियों के पुंज को प्राक्कल्पना कहा जाता है। शोध को निर्देशित करने के लिये प्राक्कल्पना को अन्तिम अनुमान के रूप में निश्चयपूर्वक कहा जाता है या फिर स्थापित तथ्यों के आलोक में उच्च रूप से संभावित तथ्य के रूप में स्वीकार किया जाता है। प्राक्कल्पना यथार्थ परिस्थिति से प्रतिकूल लग सकती है। यह सही या फिर ग़लत सिद्ध हो सकती है। हर रूप में प्राक्कल्पना एक अनुभवजन्य परीक्षण की ओर प्रवृत्त करती है। ज़रूरी है कि आपकी प्राक्कल्पना स्पष्ट और सटीक हो और परीक्षणतम हो। प्राक्कल्पना अपने दायरे में सीमित और विदित या स्थापित तथ्यों के साथ मेल खाती हुई होनी चाहिए, साथ ही निर्धारित समय के भीतर परीक्षणीय होनी चाहिए। वह प्राक्कल्पना उसे स्पष्ट करे जो स्पष्ट करने का उसका दावा है और साथ ही उसका अनुभवजन्य संदर्भ होना आवश्यक है।

प्राक्कल्पना में परिवर्तियाँ हो सकती हैं और प्राक्कल्पना परिवर्तियों के बीच संबंध के स्वरूप को निरूपित करती है। परिवर्तियाँ ही वे अनुभवजन्य विशेष गुण हैं जिनके दो या दो से अधिक मूल्य होते हैं। शोध के प्रयोजन से आपको निर्भर और स्वतंत्र परिवर्तियों के बीच भेद करने की आवश्यकता है। जिन परिवर्तियों की व्याख्या करनी है उन्हें निर्भर परिवर्तियाँ अथवा निकष परिवर्तियाँ कहते हैं। जो परिवर्ती निर्भर परिवर्ती में व्याख्या करें उन्हें स्वतंत्र परिवर्ती अथवा आगमकारी परिवर्ती कहते हैं। निर्भर परिवर्ती स्वतंत्र परिवर्ती का ही अपेक्षिक परिणाम होता है और स्वतंत्र परिवर्तियाँ ही निर्भर परिवर्तियों को जन्म देती हैं।

परिवर्तियों के बीच तीन प्रकार के संबंध होते हैं। सकारात्मक संबंध एक परिवर्ती में वृद्धि दूसरी परिवर्ती की वृद्धि की ओर ले जाती है। नकारात्मक संबंध में एक परिवर्ती में वृद्धि दूसरी परिवर्ती को ह्रास की ओर ले जाती है। अन्ततः, शून्य संबंध में दो परिवर्तियों के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं होता है। निर्भर और स्वतंत्र परिवर्तियों के बीच ये अंतर विश्लेषणात्मक हैं और केवल शोध के प्रयोजन से इनका संबंध है।

MAADHYAM IAS

उल्लेखनीय है कि प्राक्कल्पना हमेशा ही शोध प्रक्रिया का हिस्सा नहीं होती। जब प्राक्कल्पना तैयार करने हेतु परिस्थिति की आपके पास यदि पर्याप्त जानकारी न हो तो आप समन्वेषणात्मक (Exploratory) शोध करें।

सैद्धान्तिक उन्मुखता

आपको अपने शोध प्रारूप में सामग्री एकत्र करने की विधियों को स्पष्ट तौर पर दर्शाने की ज़रूरत है। आपकी शोध पद्धतीय एवं दर्शनशास्त्रीय उन्मुखताएं आपके विधि-चयन को प्रभावित करती हैं। आपका शोध प्रारूप ही शोध के शोध पद्धतीय एवं सैद्धान्तिक आधार को मुखर करेगा और सामग्री संग्रहण की उचित विधियों और तकनीकों को पहचानने में आपकी मदद करेगा। उदाहरण के लिए, यदि आपकी प्रत्यक्षवादी उन्मुखता है तो आपको प्रेक्षण विधि पर भरोसा होगा क्योंकि आपके लिए सामाजिक यथार्थ एक प्रेक्षणीय इकाई होगा। दूसरी ओर, यदि आपने प्रतिरूपशास्त्रीय प्रतिदर्श अपनाया है तो आपको संस्कृति के तर्कसंगत-गणितीय प्रतिदर्श को करने के लिये विभिन्न प्रकार के साक्षात्कारों को करना होगा। उत्तर-आधुनिकतावादी दृष्टिकोण के अनुपालक शोधकार को सामाजिक यथार्थ को बहुआयामी रूप में देखना होगा और एकाधिक स्वरों और व्याख्याओं को दर्ज करना होगा। सीमित समय व संसाधनों वाले क्रियात्मक शोध में त्रिभुजन◎ (जिसमें अनेक विधियाँ और अनेक शोधकार हों) अपनाया जाता है और उसमें सामूहिक चर्चा पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। समाजशास्त्रीय/नृशास्त्रीय विधियों के विशाल रंगपटल से आपको ध्यानपूर्वक अपने शोध के प्रयोजन के लिये उपयुक्त विधियों का चयन करना है।

शोध का व्यापक दायरा और अध्ययन की इकाई

सामग्री एकत्रण शुरू करने से पहले आपको शोध का व्यापक दायरा और अध्ययन की इकाई को तय करना है। शोध व्यापक दायरे को तय करने का मतलब है भौतिक क्षेत्र और अध्ययन की सामाजिक इकाई का सीमांकन करना। व्यापक दायरे अध्ययन के सुनिर्दिष्ट क्षेत्र में रहने वाली पूरी आबादी आती है। इस प्रकार का समूह प्रायः बहुत बड़ा होता है और किसी एक शोधकार के लिये इतने बड़े समूह को अध्ययन संभव नहीं होता। अतः प्रतिचयन द्वारा एक छोटा और अधिक नियंत्रणीय समूह चुना जाता है। व्यापक दायरे की रूपरेखा और उसके सहजगुणों की जनगणना लेकर और फिर अध्ययन किए जाने वाले समूह (हों) को चुनकर अधिक स्पष्ट रूप से अंकित किया जा सकता है। व्यापक दायरे के भीतर अध्ययन हेतु संभावित इकाइयों को निश्चित किया जाता है। अध्ययन के केंद्र-बिंदु के रूप में चयनित समूह(हों) को ही अध्ययन की इकाई कहा जाता है।

पथ-प्रदर्शक अध्ययन

आपके शोध क्षेत्र में पथ-प्रदर्शक अध्ययन शोध को आगे बढ़ाने का काम करता है। जनसंख्या के आकार तथा उपलब्ध समय सीमा पर निर्भर करते हुए यह मार्गदर्शी अध्ययन शोधकार को एक लंबे समय वाले शोध के लिए उन्मुख करता है। दूसरे शब्दों में, पथ-प्रदर्शक अध्ययन एक अन्वेषणात्मक अध्ययन है जो शोध क्षेत्र में वास्तविक कार्य की शुरुआत से पूर्व किया जाता है। यह आपकी अध्ययन विधियों एवं तकनीकों का सर्वोत्तम प्रयोग करने के लिये उनकी पूर्व-परीक्षण है। पथ-प्रदर्शक अध्ययन यह सुनिश्चित करेगा कि क्षेत्रीय शोधकार्य को विश्वसनीय बनाने के लिए आपकी प्रश्नावली में सही प्रश्न रखे गए हैं। यह आपको पहले से ही कठिनाइयों से अवगत करा देता है और शोध क्षेत्र की दशाओं से सुमेलित होने के लिए अपनी तकनीकों को परिष्कृत करने का आपको एक अवसर प्रदान करता है। पथ-प्रदर्शक अध्ययन जनसंख्या के आकार, उपलब्ध समय और आर्थिक सहायता की उपलब्धता पर निर्भर करता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

प्रतिचयन

शोध का व्यापक दायरा प्रायः एक व्यक्ति की कार्यक्षमता के हिसाब से काफ़ी बड़ा होता है। प्रतिचयनित इकाई एक बृहतर समष्टि का लघुतर प्रतिनिधित्व होता है। प्रतिचयन शोधकार को वैज्ञानिक रूप से काम करने में सक्षम बनाता है और इससे समय की बचत होती है। सामग्री की बृहद् मात्राओं का विश्लेषण करना अपव्ययी होता है और कुछ ही केस का गहन विश्लेषण मितव्ययी। प्रतिचयन करते समय आपको सचेत और सावधान रहने की ज़रूरत है। जैसा कि पहले भी स्पष्ट किया गया है, शोध के व्यापक दायरे का अर्थ है एक निर्दिष्ट जनसंख्या आकार। इस दायरे को आगे और विभाजित किया जा सकता है जो कि वांछित विनिर्देशनों पर निर्भर होगा। इसको उपजनसंख्या कहा जाता है। उपजनसंख्या एक विभाज्य श्रेणी है जो शोध चयनित समस्या के प्रकार पर निर्भर होती है। एक प्रतिचयनित ढांचे में उस जनसंख्या के सभी तत्व आते हैं जिससे कि प्रतिचयन लिया गया है। प्रतिचयन के दौरान हुई सांख्यिकीय अथवा गुणात्मक रूप से हुई त्रुटि को प्रतिचयन त्रुटि कहते है। प्रतिचयन शोध के व्यापक दायरे का एक सच्चा प्रतिनिधि होना चाहिए, साथ ही आकार में पर्याप्त होना चाहिए (प्रतिचयन के विभिन्न स्वरूपों के लिए पुस्तक 2 के खंड 5 और 6 की इकाइयाँ देखें)।

शोध सामग्री संग्रहण

अपने शोध क्षेत्र के विषय में कुछ धारणा बना लेने और उसे समझ लेने तथा सामग्री संग्रहण की अपनी विधियों एवं तकनीकों का पता लगा लेने के बाद शोध क्षेत्र तक पहुँचने की योजना बनायें। बहुधा सामाजिक शोध में अपने ही समाज का अध्ययन करने की बजाय

अन्य समाज का अध्ययन किया जाता है और शोधकारों को उस समाज में प्रवेश पाने के लिए व्यापक तैयारी करनी पड़ती है। हमें योजना बनाने की आवश्यकता होती है कि उस समाज में प्रवेश पाने में कौन मदद कर सकता है और ऐसे व्यक्तियों से किस प्रकार सम्पर्क किया जा सकता है।

यह भी संभव है कि कभी-कभार कोई शोधकार अपने ही समाज का अध्ययन करे। कुछ विद्वान (उदाहरण के लिए देखें मदान 1975) 'अन्य' समुदाय के ही अध्ययन के विचार तक ही सीमित नहीं रहना चाहते। कोष्ठक 14.3 में हमने (मदान 2004: 203) से लिया गया एक उद्धरण प्रस्तुत किया है। मदान ने हर नृशास्त्री के लिये एक अन्य संस्कृति के अध्ययन की वांछनीयता पर आपत्ति की।

कोष्ठक 14.3: अपने ही समुदाय का अध्ययन करना

इसकी (अन्य समाज के अध्ययन के) बजाय, मैंने दूरी पाटने की आवश्यकता पर बल दिया, अथवा विलोमतः इसे प्रेक्षक और प्रेक्षणीय के बीच दूरी बनाने पर ज़ोर दिया। मैंने क्षेत्रीय शोधकार्य का वर्णन 'अजनबियों के साथ घनिष्ठता से रहने' जैसे काम की तरह किया (मदान 1975)। मुझे इसमें जोड़ना चाहिए था 'या फिर घनिष्ठता से जुड़े लोगों के साथ अजनबियों की तरह रहना', जो मैंने ग्रामीण कश्मीर के पंडितों के बीच अपने क्षेत्रीय शोध कार्य के दौरान किया था। मैंने लिखा था कि 'अपनी ही संस्कृति का अध्ययन करने वाला नृशास्त्री एक अंदर का ही व्यक्ति है जो एक नृशास्त्री अथवा एक समाजशास्त्री के रूप में अपने प्रशिक्षण के आधार पर बाहरी व्यक्ति हो जाता है, और अपनी ही संस्कृति पर आश्चर्यचकित होने की उम्मीद से उस पर नज़र डालता है। यदि ऐसा हो जाता है, तभी उसे नया बोध प्राप्त होता है' (मदान 1975: 149)।

MAADHYAM IAS

अन्य अथवा अपने ही समुदाय का अध्ययन करने के प्रश्न के अलावा, आपको अपने मन में स्पष्ट करना है कि शोध के प्रयोजन को स्पष्ट रखना है या फिर अप्रत्यक्ष। जबकि अप्रत्यक्ष प्रयोजन वाले शोध में शोध कार्य छिपा रहता है और शोधकार को जानकारी देने वालों को विश्वास दिलाने के झमेले में नहीं जाना पड़ता है। दूसरी ओर स्पष्ट किये गए शोध में सूचनादाताओं को संतुष्ट करना और उनका विश्वास जीतना आवश्यक है। आपको अध्ययनाधीन समाज में एक अथवान् भूमिका निभानी होती है और साथ में सूचनादाताओं की संवेदनाओं के प्रति सचेत रहना होता है। यद्यपि परिस्थितियों के अनुसार शोधकार की पहुँच और भूमिका पर क्षेत्रीय शोधकार्य के दौरान जब तब समझौते कर लिए जाते हैं, सुविचारित योजना-निर्माण आपको शोध प्रक्रिया में पर्याप्त तैयारी के साथ शुरुआत का आधार प्रदान करता है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रथमतः, यदि आप पहले से ही सही सम्पर्क व्यक्तियों अथवा 'द्वारपालों' (समुदाय के प्रमुख व्यक्ति जो आपको कार्यक्षेत्र में पहुँचने दें अथवा पहुँचने से मना करें) को पहचान लें तो शोध क्षेत्र में आपका प्रवेश समय-गवाने वाला और कठिन नहीं होगा। 'द्वारपालों' के साथ पूर्ववर्ती परस्पर सक्रियता शोधक्षेत्र में एक उपयुक्त भूमिका ग्रहण करने में भी मदद करती है। दूसरे, यदि आपको पहले से ही स्पष्ट है कि आपको अपने शोध के प्रयोजन को स्पष्ट रखना है या गुप्त, तो आपके लिये अपने शोध क्षेत्र में प्रवेश पाने के लिये प्रभावशाली ढंग से वाद-संवाद करना संभव है।

सामग्री एकत्र करने के अनेक तरीके हैं। प्राथमिक सामग्री वह होती है जो शोधकार के रूप में आपके द्वारा स्वयं एकत्र की जाती है। गौण सामग्री के लिये आपको पुस्तकालय आदि जैसे संदर्भ स्रोतों का सहारा लेना होगा।

प्राथमिक सामग्री या तो परीक्षण द्वारा या फिर सर्वेक्षण के माध्यम से एकत्र की जाती है। सामग्री संग्रहण की दो मुख्य तकनीकें हैं, नामतः i) गहन क्षेत्रीय शोधकार्य विधियाँ और ii) सर्वेक्षण विधियाँ। गहन क्षेत्रीय शोध विधियों में आते हैं – प्रेक्षण, साक्षात्कार, केस-स्टडी,

वंशावली, आदि। सामग्री एकत्र करने के लिए शोध के स्वरूप, उद्देश्य एवं कार्यक्षेत्र, वित्तीय संसाधन उपलब्ध समय, विशुद्धता की मात्रा, आदि बातों का ध्यान रखते हुए आपको एक या एकाधिक विधियों को प्रयोग करना है। एकत्र किए जाने वाली सामग्री पर्याप्त और विश्वसनीय होनी चाहिए।

विश्लेषण करना तथा रिपोर्ट लिखना

सामग्री संग्रहण के बाद उसके विश्लेषण की बारी आती है। विश्लेषण में अनेक निकटता से सम्बद्ध कार्यकलापों की आवश्यकता पड़ती है, जैसे श्रेणियाँ निर्धारित करना और उनके माध्यम से सामग्री का कूटबद्धीकरण, सारणीयन, आदि जिससे आपको सांख्यिकीय निष्कर्ष मिल सकें। कूटबद्धीकरण तक कूटबद्ध प्रतीकचिन्हों के सारणीयन के लिए आवश्यक है कि आप पुस्तक 2 के खंड 5 और 6 तथा पुस्तक 3 के खंड 7 और 8 में दी गई इकाइयों को ध्यानपूर्वक पाएं। सारणीयन तकनीकी कार्यविधि का एक हिस्सा है जिसमें आपके लिये वर्गीकृत सामग्री को तालिकाओं के रूप में रखना संभव है (देखें कोष्ठक 14.4)।

कोष्ठक 14.4: सामग्री का वर्गीकरण एवं कूटबद्धीकरण

वर्गीकरण से संचित कार्यक्षेत्र सामग्री के द्रुत, विशुद्ध और सुबोध खोजों में मदद मिलती है, परंतु एक निकृष्ट वर्गीकरण या लापरवाह ढंग से सामग्री का पुनः निकालने से तो अच्छा है कि वर्गीकरण ही किया गया हो। इस संबंध में, उन वर्गीकरणों पर विशेष ध्यान दिया जाना है जो अन्यथा सम्बद्ध सामग्री को अलग-अलग करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि "नामकरण समारोहों" को केवल "अनुष्ठान" शीर्षक के तहत लिखा जायेगा तो 'नातेदारी' के तहत वर्गीकृत सामग्री में नामकरण से जुड़ी महत्वपूर्ण सामग्री शामिल नहीं होगी।

क्षेत्रीय शोध कार्य में बनाये सभी विवरणों को प्रथमतः कूटबद्ध करना आवश्यक है ताकि सामग्री के ढेर में तदोपरांत उन्हें सरलता से खोजा जा सके। आप संभवतः क्षेत्रीयशोध क्षेत्र करते समय भी बार-बार ही पहले इकट्ठी की गई सामग्री का संदर्भ लेना चाहें ताकि कुछ बातों को सुनिश्चित कर सकें और अनौपचारिक प्राक्कल्पनाओं की जांच कर सकें। ऐसे नितांत में आवश्यक है कि सामग्री के सभी पन्नों को क्रमबद्ध रूप से संख्यांकित किया जाए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

विश्लेषण के जिस स्वरूप को आपको अन्तोगत्वा अपनाना है उसका साफ़-साफ़ विवरण दें। यद्यपि प्रायः आपके द्वारा एकत्रित सामग्री का स्वरूप ही विश्लेषण के स्वरूप को निर्धारित करता है, परंतु सामग्री संग्रहण की कुछ विधियों को चुने जाने के समय भी आपको विश्लेषणपरक साधनों के विषय में भी कुछ न कुछ धारणाएं होती ही है। यदि आप कम्प्यूटर संवेष्टनों को अपनाना चाहें तो सामग्री संग्रहण के समय यह बात दिमाग़ में होनी चाहिए। जबकि विश्लेषण सामग्री के स्वरूप पर निर्भर करता है, आपको प्रतिकूल स्थिति के प्रति सचेत रहना चाहिए, अर्थात् विश्लेषण के पूर्व-निर्धारित ढंग से सामग्री संग्रहण की विधियाँ निर्धारित होती हैं। यदि आपने *केवल कम्प्यूटर-आधारित विधियों को ही* अपनाया तो हो सकता है कि सामाजिक यथार्थ की इकतरफ़ा तस्वीर ही आपके सामने आये, क्योंकि कम्प्यूटर संवेष्टन यथार्थ के एक आयाम के विश्लेषण को ही प्रस्तुत कर पाते हैं जबकि सामाजिक शोध में यथार्थ की यथासंभव वृहद् तस्वीर की अपेक्षा होती है। बेहतर होगा कि आप सामग्री एकत्र करते समय यथार्थ के अधिक से अधिक आयामों को शामिल करें। किसी भी स्थिति में, एकत्रित सामग्री के व्याख्यार्थ अपनाई गई विश्लेषण विधि के विषय में आपको एकदम स्पष्ट होना चाहिए। आपके शोध प्रारूप का अभिप्राय है आपकी सैद्धान्तिक उन्मुखता को प्रकट करना। इस प्रकार, शोध विषय और सामग्री एकत्रण विधि को चुनने से लेकर रिपोर्ट लिखे जाने तक, शोध के हर चरण में आप दरअसल नियोजन में रत हैं।

यदि आप उस ढंग का स्पष्ट वर्णन करें जिसमें आपके शोध परिणामों को प्रस्तुत किया जायेगा तो आपका शोध प्रारूप परिपूर्ण होगा। यह भी एक समानरूप से महत्वपूर्ण चरण है क्योंकि आपको प्रस्तुतिकरण की आचार-संहिता को ध्यान में रखना पड़ेगा, खासकर यदि आपके शोध में संवेदनशील मुद्दे शामिल हों। सामाजिक यथार्थ को स्पष्ट करने के प्रयास में आपको लोगों की गोपनीयता से खिलवाड़ करने की स्वतंत्रता नहीं है, जिन्होंने आपको जानकारी दी है तथा जो आपके शोध का विषय-मात्र न होकर अपने आप में स्वतंत्र अस्तित्व वाले हैं। शोध और क्षेत्रीय शोधकार्य के लोगों दोनों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करना आपकी ज़िम्मेदारी हैं सामग्री को प्रस्तुत करते समय छद्‌म नामों◎ का उपयोग करना तथा पहचानों, घटनाओं एवं स्थानों में किंचित् हेर-फेर करना काफ़ी प्रचलित है। आपको अपना शोध प्रारूप हमेशा उसी ढंग से रखना होगा जिस ढंग से आपको निष्कर्षों को लिखना है। प्रकाशनार्थ शोध परिणामों को प्रस्तुत करने का मतलब है कि वे आम जनता तक पहुँचेंगे जिसमें वे लोग भी शामिल होंगे जिन पर आपने अध्ययन किया है। यही वे बिंदु है जब अपने शोध विषय से सम्बंधित साहित्य में योगदान देने का आपका लक्ष्य पूरा होगा।

14.3 निष्कर्ष

इकाई 14 में समाजशास्त्रीय शोध करने के लिए आवश्यक विभिन्न चरणों को बताया गया है। इसका उद्देश्य यह है कि आप भी एक लघु शोध पूरा करें। एम. एस. ओ.-002 को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए अनिवार्य सत्रीयकाय क रूप में आपको यह लघु शोध करना होगा। अपनी लघु शोध परियोजना को असली अंजाम देने के लिए आपको एक शोध प्रारूप तैयार करने की आवश्यकता होगी। प्रस्तुत इकाई के लिए 'सोचें और करें' अभ्यास यह है कि आप अपने प्रस्तावित शोध के लिए एक शोध प्रारूप तैयार करें। अपने शोध प्रारूप में आवश्यक विभिन्न चरणों के विषय में और अधिक जानकारी प्राप्त होने पर आपके लिये निस्संदेह ही इसे परिष्कृत करना आवश्यक होगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सोचें और करें 14.1

अपनी रुचि का एक विषय चुनने के बाद अपने प्रस्तावित शोध का एक प्रारूप तैयार करें। इस शोध प्रारूप में चित्र 14.1 में दर्शाये गए सभी चरणों का समावेश होना चाहिए।

14.4 कुछ उपयोगी पुस्तकें

सिंगलटन, जूनियर रॉइस ए. एवं ब्रूस सी. स्ट्रेटस (1999), *एप्रोचिज़ टु सोशल रिसर्च.* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटि प्रैसः न्यूयार्क

सारनताकोए, एस. (1998). (प्रथम प्रकाशित 1993), *सोशल रिसर्च,* मैकमिलनः लंदन

खंड 5

मात्रात्मक विधियाँ

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 15

प्रतिचयन विधियाँ और प्रतिदर्श आकार का आकलन

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 प्रतिचयन

15.3 प्रतिचयन विधियों का वर्गीकरण

15.4 प्रतिदर्श आमाप

15.5 निष्कर्ष

15.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 15 पढ़ लेने के बाद आपके लिए संभव होगाः

- प्रतिचयन परिभाषित करना;
- प्रचियन विधियों का वर्गीकरण करना; तथा
- प्रतिदर्श आमाप परिकलित करना।

15.1 प्रस्तावना

इकाई 15 में प्रतिचयन विधि के बारे में बताया गया है जो कि आपके अनुसंधान में ली गई समष्टि के एक उप-समुच्चय तक पहुँचने में सहायक होता है। इसमें प्रतिचयन की विभिन्न विधियों पर चर्चा की गई हैं और यह बताया गया है कि किस प्रकार प्रतिदर्श आमाप प्राप्त किया जाता है। खंड 6 में प्रतिचयन के बारे में पुनः अध्ययन होगा। यह एक ऐसा विषय है जिस पर महारथ हासिल करना आवश्यक होता है, चाहे आपका शोध किसी प्रकार का भी क्यों न हो। प्रत्येक स्थिति में आपको प्रतिचयन की क्रियाविधि से संबंधित अपने कौशल को अवश्य लागू करना होता है।

MAADHYAM IAS

15.2 प्रतिचयन

प्रतिदर्श (sample) उस समष्टि (population) का एक उप समुच्चय (subset) होता है जो पूरे वर्ग को निरूपित करता है। जब समष्टि इतनी वृहत् होती है कि अनुसंधानकर्त्ता को लागत, रोजगार में लगाए गए कार्मिकों की संख्या, या समय व्यवरोध के कारण इस समष्टि के सभी सदस्यों का सर्वेक्षण करना संभव नहीं होता है तो इस समष्टि से सावधानी के साथ एक ऐसा लघु प्रतिदर्श लिया जाता है जो कि पूरी समष्टि को निरूपित करता है (देखिए चित्र 15.1)। चित्र 15.1 में लिया गया प्रतिदर्श समष्टि के अभिलक्षणों को अवश्य प्रतिबिंबित करेगा।

अच्छी तरक से चुने गए प्रतिदर्श से उत्तम परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक अनुसंधान में, जहाँ सुप्रशिक्षित साक्षात्कर्ताओं की आवश्यकता है, यह संभव है कि पूरी समष्टि का शोध करने के संबंध में प्रतिदर्श प्राप्त करने के लिए अनेक प्रशिक्षित साक्षात्कर्ताओं के स्थान पर कुछ ही प्रशिक्षित साक्षात्कर्ताओं को काम पर लगाया जाए। प्रशिक्षित साक्षात्कर्ताओं के लिए अप्रशिक्षित या कम प्रशिक्षित साक्षात्कर्ताओं की अपेक्षा अधिक उत्तम सूचनाएं एकत्रित करना संभव है। इसके विपरीत यदि समष्टि काफी लघु हो, तो ऐसी स्थिति में पूरी समष्टि पर अध्ययन करना चाहिए। जब समष्टि के प्रत्येक सदस्य

से संबंधित सामग्री एकत्रित किए गए हों, तो ऐसे अध्ययन को जनगणना अध्ययन कहा जाता है। शोधकार से यह आशा की जाती है कि वह लक्ष्य समष्टि को स्पष्ट रूप से परिभाषित करे।

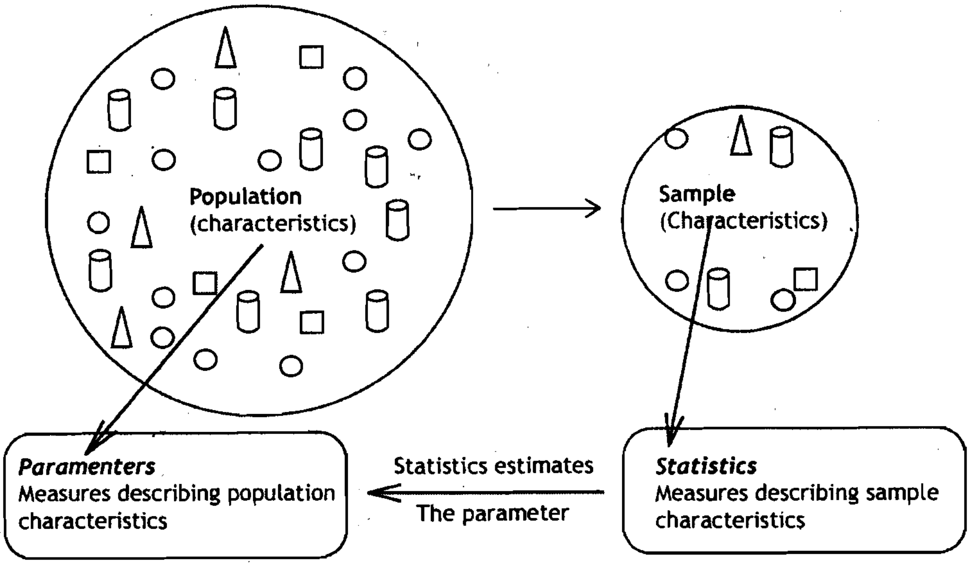

चित्र 15.1: समष्टि, प्राचल, प्रतिदर्श और प्रतिदर्शन में संबंध

समष्टि सर्वनिष्ठ विशेषक या विशेषकों वाले व्यष्टियों का एक समुच्चय होती है। इससे संबंधित दो महत्वूपर्ण कारक होते हैं; पहला कारक यह है कि समष्टि एक पूर्ण समूह होती है जिसके बारे में जानकारी प्राप्त करनी होती है; और दूसरा कारक यह है कि प्रत्येक व्यष्टि के कुछ विशिष्ट गुण वाले होते हैं।

आइए अब हम सोचें और करें 15.1 पूरा करें।

MAADHYAM IAS

> **सोचें और करें 15.1**
> अपने अनुसंधान परियोजना की इकाई की समष्टि के अभिलक्षणों को प्रतिबिंबित करने के लिए समष्टि, प्राचल, प्रतिदर्श और प्रतिदर्शज के बीच संबंध स्थापित करें।

15.3 प्रतिचयन विधियों का वर्गीकरण (Classification of Sampling Methods)

प्रतिचयन विधियों को प्रायिकता या अप्रायिकता में वर्गीकृत में वर्गीकृत किया जाता है। यदि अनुसंधान का उद्देश्य पूर्णरूप से समष्टि को प्रभावित करने वाले निष्कर्ष निकालना हो या प्रायुक्तियाँ करनी हों (जैसा कि प्रायः अधिकांश शोधों में होता है) तो ऐसी स्थिति में प्रायिकता प्रतिचयन का प्रयोग करना चाहिए। परन्तु, यदि कोई व्यक्ति केवल यह जानना चाहता हो कि दृष्टांत या व्याख्या देने के लिए एक लघु वर्ग या प्रतिनिधि वर्ग कार्य कर रहा है; तो ऐसी स्थिति में अप्रायिकता प्रतिचयन का प्रयोग किया जा सकता है।

आइए पहले हम प्रायिकता प्रतिचयन पर चर्चा करें।

क) **प्रायिकता प्रतिचयन (probability sampling)**

प्रायिकता प्रतिदर्शों में समष्टि के प्रत्येक सदस्य के चुने जाने की एक ज्ञात शून्यता प्रायिकता होती है। सभी प्रायिकतात्मक प्रतिचयन उपगमत का मुख्य बिन्दु यादृच्छिक चयन (random selection) है। प्रायिकता प्रतिचयन का लाभ यह है कि इसमें प्रतिचयन त्रुटि परिकलित की जा सकती है जो वह मात्रा है जिसतक प्रतिदर्श समष्टि से भिन्न हो सकता है। प्रायिकता विधियों के अंतर्गत यादृच्छिक प्रतिचयन (random sampling),

क्रमबद्ध प्रतिचयन (systematic sampling), और स्तरित प्रतिचयन (stratified sampling) आते हैं। अब हमें इनमें से प्रत्येक प्रतिचयन पर चर्चा करनी है।

क) **यादृच्छिक प्रतिचयन (random sampling)** प्रायिकता प्रतिचयन का शुद्धतम रूप है। इसमें समष्टि के प्रत्येक सदस्य के चुने जाने का समान और ज्ञात संयोग (chance) होता है। यादृच्छिक प्रतिदर्श के लिए यह आवश्यक है कि समष्टि के प्रत्येक मद को अभिज्ञापित कर लिया जाए। यादृच्छिक प्रतिचयन एक स्पष्ट परिभाषित समष्टि में अर्थात् अपेक्षाकृत लघु और स्वतःपूर्ण समष्टि में प्रभावी होता है। जब समष्टि वृहत् होती है तो प्रायः इसके प्रत्येक सदस्य को पहचानना कठिन अथवा असंभव होता है। अतः ऐसी स्थिति में उपलब्ध व्यष्टियों का समुच्चयन अभिनत (biased) हो जाता है। इसके लिए सभी निवासियों की सूची, मतदाताओं की सूची या टेलीफोन निर्देशिका लेकर यादृच्छिक संख्या सारणी से संख्याओं का एक अनुक्रम के अनुसार एक प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। अनेक कंप्यूटर साफ्टवेयरों में यादृच्छिक संख्याएं जनित की जा सकती हैं। चित्र 15.2 देखिए जिसमें यादृच्छिक संख्या सारणी की सहायता से प्रतिदर्श का चयन दर्शाया गया है।

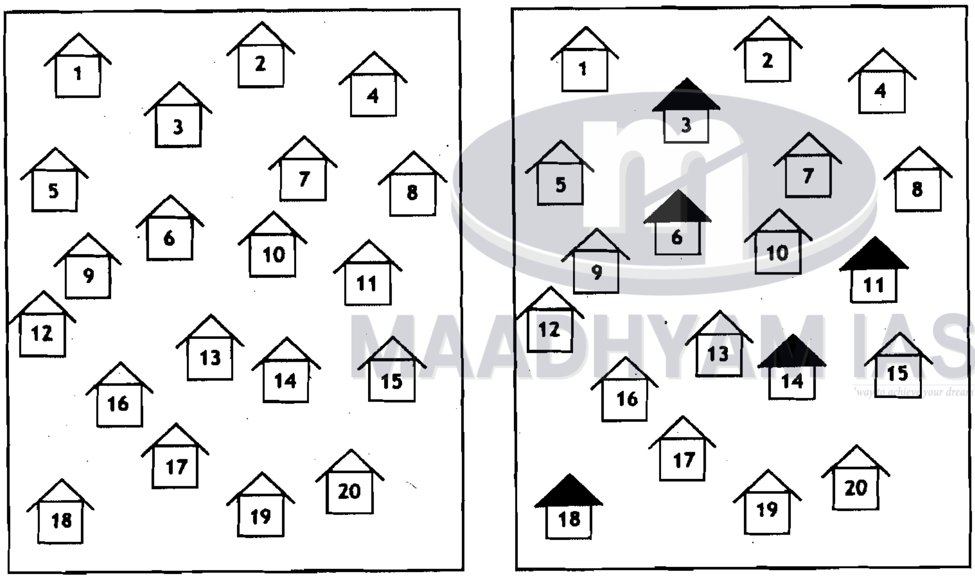

समष्टि

समष्टि यादृच्छिक संख्या सारणी की सहायता से (गाढ़े रंग में) लिया गया सरल यादृच्छिक प्रतिदर्श

चित्र 15.2: यादृच्छिक संख्या सारणी की सहायता से (गाढ़े रंग में) लिया गया सरल यादृच्छिक प्रतिदर्श

स्रोत: फिशर, आर.ए. और एफ. येट्स 1982. सांख्यिकीय सारणी लांगमैनः न्यूयार्क

ख) **क्रमबद्ध प्रतिचयन (systematic sampling)**, को "Nवाँ- नाम चयन" तकनीक भी कहा जाता है। अपेक्षित प्रतिदर्श आमाप परिकलित कर लेने के बाद समष्टि सदस्यों की सूची से प्रत्येक Nवाँ रेकार्ड चुन लिया जाता है। यदि सूची में कोई गुप्त क्रम न हो, तो यह प्रतिचयन विधि उतनी ही उत्तम होती है जितनी कि यादृच्छिक प्रतिचयन विधि। यादृच्छिक प्रतिचयन तकनीक की तुलना में इस विधि का केवल एक लाभ इसकी सरलता है। प्रायः क्रमबद्ध प्रतिचयन का प्रयोग कम्प्यूटर फाइल से निर्दिष्ट संख्या में रिकॉर्ड्स का चयन करने में किया जाता है। चित्र 15.3 में आप क्रमबद्ध यादृच्छिक प्रतिचयन विधि का प्रदर्शन देखें। यादृच्छिक संख्या से पहली संख्या (2) का चयन किया गया है। इसके बाद श्रेणी के प्रत्येक 5वें मद का चयन किया जाता है।

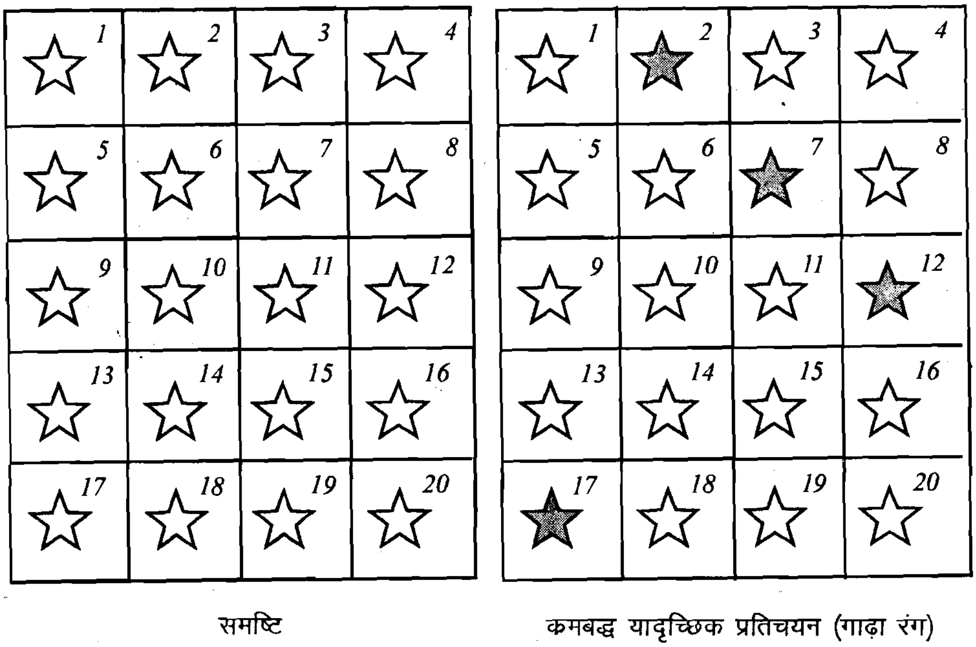

चित्र 15.3: कमबद्ध यादृच्छिक प्रतिचयन विधि

ग) **स्तरित प्रतिचयन (stratified sampling)** एक सामान्य प्रायिकता विधि है जो कि यादृच्छिक प्रतिचयन की तुलना में उत्तम है, क्योंकि यह प्रतिचयन त्रुटि को कम कर देता है। इसमें स्तर समष्टि का एक उपसमुच्चय होता है जिसमें कम से कम एक सर्वनिष्ठ अभिलक्षण अवश्य होता है। स्तर के उदाहरण पुरुष और महिलाएँ या प्रबंधक और ग़ैर-प्रबंधक हो सकते हैं। सबसे पहले शोधकार द्वारा प्रासंगिक स्तर और समष्टि में उनके वास्तविक प्रतिनिधित्व को पहचाना जाता है। तब यादृच्छिक प्रतिचयन का प्रयोग प्रत्येक स्तर से पर्याप्त संख्या में व्यष्टियों का चयन करने में किया जाता है। 'पर्याप्त' का प्रयोग उस प्रतिदर्श आमाप के लिए किया जाता है जो शोधकार के लिए इतना वृहत् होता है कि उसे विश्वास हो जाता है कि यह स्तर समष्टि को निरूपित करता है। स्तरित प्रतिचयन सबसे अधिक सफल तब होता है जबकि (i) प्रत्येक स्तर का प्रसरणांतर्गत समष्टि के समग्र प्रसरण से कम होता है; (ii) जबकि समष्टि के स्तर असमान माप के या असमान आनुषंगिक होते हैं; और (iii) जबकि स्तर प्रतिचयन सस्ता होता है। चित्र 15.4 में स्तरित यादृच्छिक प्रतिचयन विधि दिखाई गई है। तीन स्तरों से उनकी संख्याओं के अनुपात में प्रतिदर्श लिए गए हैं।

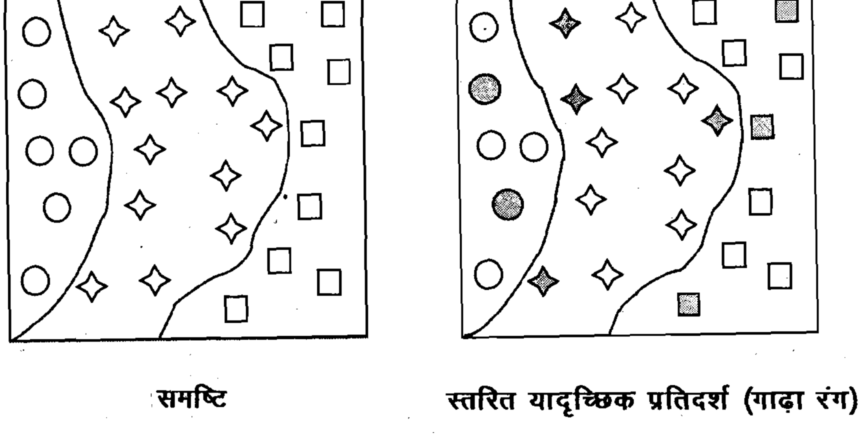

चित्र 15.4: स्तरित यादृच्छिक प्रतिचयन विधि

घ) **गुच्छ यादृच्छिक प्रतिचयन (cluster random sampling)** तब उपयोगी होता है जबकि समष्टि एक व्यापक भौगोलिक प्रदेश में प्रकीर्णित होती है। इस विधि में समष्टि को गुच्छों में विभाजित किया जाता है और इसके बाद गुच्छों को यदृच्छया (at random) चुन लिया जाता है। इसके बाद या तो चुने गए गुच्छों के सभी सदस्यों का अध्ययन किया जाता है या इन प्रतिदर्शित गुच्छों के यादृच्छिक (सरल या कमबद्ध) प्रतिदर्श पुनः लीजिए। यदि बाद वाली पद्धति का अनुसरण किया जाए तो इस प्रतिचयन को बहुचरणी प्रतिचयन (multistage sampling) कहा जाता है। उदाहरण के रूप में, यह विधि जनजाति समूह या बिखरे हुए समुदाय के अध्ययन में काफी प्रभावी हो सकती है। गाँवों को गुच्छ माना जा सकता है और इन्हें यदृच्छया चुना जा सकता है। चित्र 15.5 में यादृच्छिक संख्या से 14 खंडों में से पाँच खंडों (2,7,10,14) को चुना गया है। प्रत्येक खंड में अनेक प्रतिदर्श हैं जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

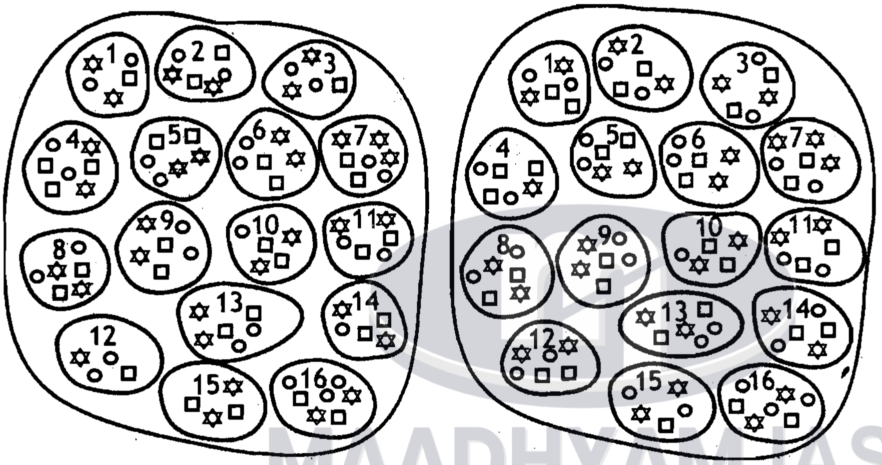

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

समष्टि　　　　लिया गया गुच्छ प्रतिदर्श (गाढ़ा रंग)

चित्र 15.5: गुच्छ यादृच्छिक प्रतिचयन विधि

> **सोचें और करें 15.2**
>
> पाठ में दिए गए चित्रों का अनुसरण करते हुए निम्नलिखित दर्शाने के R&A 13.1 & 13.2 का अभिकलन करते समय अपने द्वारा चुनी गई शोध परियोजना से संबंधित समष्टि पर आधारित चित्र बनाइएः
>
> i) यादृच्छिक संख्या सारणी की सहायता से गाढ़े रंग में लिया गया समष्टि सरल यादृच्छिक प्रतिदर्श
>
> ii) क्रमबद्ध यादृच्छिक प्रतिचयन विधि
>
> iii) स्तरित यादृच्छिक प्रतिचयन विधि
>
> iv) गुच्छ यादृच्छिक प्रतिचयन विधि

ख) **अ-प्रायिकता प्रतिचयन (Non-probability sampling)** अ-प्रायिकता प्रतिचयन में किसी अ-यादृच्छिक विधि से समष्टि से सदस्यों का चयन किया जाता है। इस विधि में समष्टि से प्रतिदर्श के अंतर की श्रेणी अज्ञात बनी रहती है। अप्रायिकता विधियों के अंतर्गत सुविधानुसार प्रतिचयन (Convenience sampling), स्वनिर्णय प्रतिचयन (judgement sampling), नियत मात्रात्मक प्रतिचयन (Quota sampling) और स्नोबॉल प्रतिचयन (Snow ball sampling) आते हैं। आइए हम प्रत्येक अप्रायिकता प्रतिचयन विधियों पर चर्चा करें।

क) **सुविधानुसार प्रतिचयन (convenience sampling),** का प्रयोग संर्वषणात्मक शोध में किया जाता है जहाँ शोधकार को तथ्य का सस्ता सन्निकटन प्राप्त करना हो। जैसा कि इस विधि के नाम से पता चलता है। इसमें प्रतिदर्श का चयन इसलिए किया जाता है क्योंकि यह सुविधाजनक होता है। इसे अव्यवस्थित या आकस्मिक भी कहा जाता है, क्योंकि यह विधि उन लोगों पर लागू होती है जो टहलते हुए अचानक मिल जायें या उन लोगों पर लागू होती हैं जिसकी शोध में विशेष रुचि हो। स्वयंसेवकों का उपयोग सुविधानुसार प्रतिचयन का एक उदाहरण है। इस विधि का प्रयोग परिणामों का सकल आकलन प्राप्त करने के लिए प्राथमिक अनुसंधान प्रयासों के दौरान किया जाता है। इस विधि से यादृच्छिक प्रतिदर्श का चयन करने में कोई खर्च या समय व्यर्थ नहीं जाता।

ख) **स्वनिर्णय प्रतिचयन (judgement sampling),** एक सामान्य अ-प्रायिकता विधि है। शोधकार द्वारा स्वनिर्णय के आधार पर प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। यह प्रायः सुविधानुसार प्रतिचयन का ही एक विस्तृत रूप है। उदाहरण के लिए शोधकार द्वारा एक ही 'प्रतिनिधि' गाँव से पूरा प्रतिदर्श प्राप्त करने का निर्णय लिया जा सकता है, जबकि जनसंख्या अनेक गाँवों में बँटी हो सकती है। इस विधि को लागू करते समय शोधकार को यह अनुभव होता है कि चयन किया गया प्रतिदर्श पूरी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व कर रहा है।

ग) **सोद्देश्य प्रतिचयन (purposive sampling),** यह स्वनिर्णय प्रतिचयन से काफी मिलता-जुलता है। इसे वहाँ लागू किया जाता है जहां शोधकार द्वारा उन लोगों के वर्ग को अपना लक्ष्य बनाया जाता है जो प्रतिरूपी या औसत हैं या वह वर्ग है जो कुछ विशेष उद्देश्य के लिए लिया जाता है। इस प्रतिचयन में शोधकार को कभी भी यह पता नहीं होता कि लिया गया प्रतिदर्श समष्टि का प्रतिनिधित्व करता है या नहीं। यह विधि अधिकांशतः अन्वेषी शोध तक ही सीमित होती है।

MAADHYAM IAS

घ) **नियत मात्रात्मक प्रतिचयन (Quota sampling),** स्तरित प्रतिचयन का एक अप्रायिकता पर्याय है। स्तरित प्रतिचयन की भांति शोधकर्ता द्वारा पहले समष्टि में स्तरों और उनके अनुपात को पहचाना जाता है और तब प्रत्येक स्तर से अपेक्षित संख्या में व्यष्टियों का चयन करने के लिए सुविधाजनक या निर्णय प्रतिचयन को लागू किया जाता है। शोधकार द्वारा अव्यस्तित अथवा आकस्मिक प्रतिचयन का सहारा तब लिया जाता है जब उसने उन लोगों के साथ कोई संपर्क बनाने का प्रयास नहीं किया जिनके पास पहुंचना कठिन होता है। इस प्रतिचयन में और स्तरित प्रतिचयन में, जहां स्तरों को यादृच्छिक प्रतिचयन से भरे होते हैं, यही अंतर है।

ङ) **स्नोबॉल प्रतिचयन (Snowball sampling),** एक विशेष प्रकार की अप्रायिकता विधि है जिसका प्रयोग तब किया जाता है जबकि अपेक्षित प्रतिदर्श का अभिलक्षण विरल होता है। इन स्थितियों में प्रत्यर्थियों का पता लगाना या तो काफी कठिन होता है या काफी खर्चीला होता है। अतिरिक्त व्यष्टियों को जनित करने के लिए प्रारंभिक व्यष्टियों के परामर्शियों पर आधारित होता है। दूसरे शब्दों में, स्नोबॉल प्रतिचयन में प्रत्यर्थियों की पहचान करनी होती है जो कि अनुसंधानों को अन्य प्रत्यर्थियों के पास भेजते हैं। यह तकनीक सापेक्षतः अदृश्य और समाज के दुर्बल वर्ग तक पहुंचने का एक साधन है। यद्यपि इस तकनीक को लागू करने पर अनुसंधान में होने वाले खर्च में काफी कमी आ जाती है परन्तु इस तकनीक का झुकाव एक ओर हो जाता है, जिससे तकनीक स्वयं संभाव्यता को कम कर देती है क्योंकि ऐसी स्थिति में प्रतिदर्श समष्टि के एक उत्तम वर्गगत (cross section) को निरूपित करता है। उदाहरण के

लिए, शोधकार को एक व्यक्ति में विरल आनुवंशिक विशेषक (genetic trail) मिलता है और तब उस व्यक्ति के रोग की उत्पत्ति, वंशागति और हेतुविज्ञान (etiology) को समझने के लिए उसकी वंशावली का पता लगाना प्रारंभ कर दिया जाता है। संभवतः आपने यह अवश्य सुना होगा कि केवल मात्रात्मक शोधों के लिए ही प्रतिचयन की आवश्यकता होती है। परन्तु, वास्तविकता यह है कि गुणात्मक शोधों में प्रतिचयन क्रियाविधि का प्रयोग होता है (देखिए कोष्ठक 15.1)

कोष्ठक 15.1: गुणात्मक शोध में प्रतिचयन का प्रयोग

जैसा कि बर्जर (1989) और सारंतकोस ने बताया है कि गुणात्मक शोधों में प्रायः प्रतिचयन क्रियाविधि का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है:

i) प्रतिचयन सापेक्षतः लघु होता है जिसमें प्रतिरूपी स्थितियों का अध्ययन किया जाता है।
ii) नम्य आमाप वाले प्रतिदर्श का प्रयोग जिसमें सांख्यिकीय परिकलन करने की आवश्यकता नहीं होती।
iii) अप्रायिकता से संबंधित सोद्देश्य प्रतिचयन का प्रयोग।
iv) प्रतिनिधित्व की अपेक्षा उपयोगिता प्राप्त करने के लिए प्रतिचयन का प्रयोग।
v) प्रतिचयन तब होता है जबकि अनुसंधान कार्य किया जा रहा होता है न कि इसे प्रारंभ करने से पहले एक प्रतिदर्श का चयन करना।

अब हमने प्रतिदर्श आमाप का परिकलन करने की विधि पर चर्चा की है।

15.4 प्रतिदर्श आमाप (Sample Size)

एक विशेष सर्वेक्षण के लिए प्रतिदर्श आमाप का चयन करते समय अनेक बातों पर ध्यान देना होता है जैसे जनशक्ति का संसाधन, प्रति प्रतिदर्श इकाई की लागत और उपलब्ध निधि, आकलित किए जाने वाले प्राचलों की संख्या और प्रकार। स्पष्ट है कि यह विशिष्ट बातें अलग-अलग सर्वेक्षण में अलग-अलग होगी। परन्तु, सभी में एक ढांचा तैयार किया जा सकता है जिसके अंतर्गत प्रतिदर्श आमाप के सापेक्ष व्यापक और व्यवहार्य निर्णय लिए जा सकते हैं। प्रतिदर्श आमाप के उत्तम आकलन प्राप्त करने में प्रतिचयन सिद्धांत सहायक होता है। यहां भी मानक त्रुटि से मुख्य तथ्य का पता चल जाता है।

MAADHYAM IAS

समष्टि के आमाप के अतिरिक्त प्रतिदर्श आमाप निम्नलिखित प्रतिबंधों पर निर्भर कर सकता है:

i) आकलन के लिए स्थापित विश्वस्यता सीमा (confidence limit)
ii) समष्टि की विषमांगता (heterogeneity)
iii) बारंबारता/विशेषक का अनुपात/गुण की जाँच

शोध किए जा रहे प्राचल या उद्देश्य के अनुसार प्रतिदर्श आमाप का आकलन अलग-अलग होता है। उदाहरण के लिए, प्रतिदर्श आमाप का आकलन माध्य या अनुपात का परिकलन करने या माध्यों की तुलना करने के लिए जा रहा हो। उदाहरण के रूप में आइए हम कोष्ठक 15.2 और कोष्ठक 15.3 में दो स्थितियों अर्थात् एक प्रसामान्यतः बंटित चर के माध्य का आकलन और अनुपात का आकलन लें। इन स्थितियों में दो कल्पनाएँ की गई हैं – पहली यह कि प्रतिचयन सरल यादृच्छिक और प्रतिस्थापन रहित (without replacement) है और दूसरी यह कि प्रतिचयित समष्टि अनंततः वृहत् है।

कोष्ठक 15.2: स्थिति एक

माध्य का आकलन करने में प्रतिदर्श आमाप

हमें मालुम है कि माध्य की मानक त्रुटि निम्नलिखित सूत्र से परिकलित की जा सकती है

$SE_X = \delta/vn$ 1

जहाँ SE_X माध्य की मानक त्रुटि है, δ मानक विचलन है और n प्रतिदर्श आमाप है। इस तरह समीकरण 1 से व्युत्पन्न निम्नलिखित समीकरण का प्रयोग करके प्रतिदर्श आमाप परिकलित किया जा सकता है।

$n = (\delta/SE_X)^2$ 2

प्रतिदर्श आमाप का परिकलन निम्नलिखित चरणों में किया जा सकता है।

चरण 1: इसमें समष्टि के मानक विचलन की आवश्यकता होती है जो अज्ञात होता है। फिर भी प्रतिदर्श आमाप का स्थूल रूप के लिए इस माप का एक स्थूल आकलन पर्याप्त होता है।

क) अनेक स्थितियों में इसी प्रकार की समस्याओं से प्राप्त हुआ अनुभव मानक विचलन का यह आकलन प्राप्त करने में मार्गदर्शक का काम करता है।

ख) अन्य स्थितियों में, छोटे पैमाने पर अन्वेषी प्रतिदर्श का अध्ययन 6 का एक आकलन प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है।

ग) समष्टि के मानक विचलन का आकलन करने के लिए समष्टि के मान परिसर आकलित किया जा सकता है और एक मार्गदर्शक के रूप में इसका प्रयोग किया जा सकता है। हम जानते हैं कि सामान्य बंटन में परिसर मानक विचलन से लगभग छः गुना होता है। व्यावहारिक रूप में प्रायः आकलित परिसर के लगभग एक-पांचवें आकलन का प्रयोग किया जाता है।

मान लीजिए परिसर लगभग 300 हैं; अर्थात् समष्टि में इसके न्यूनतम मान और अधिकतम मान के बीच का अंतर 300 है। इस स्थूल आकलन का एक-पांचवा भाग 60 है। अतः 60 को 6 का स्थूल आकलन माना जा सकता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चरण 2: यह निर्णय अवश्य ले लेना चाहिए कि भावी प्रतिचयन आकलन को आपको कितना परिशुद्ध रखना है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि वास्तविक माध्य का आकलन पर्याप्ततः परिशुद्ध तब होता है जबकि इसके साथ 12 की विश्वस्तता-सीमाएँ जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार का उत्तर इस विशेष समस्या के लिए व्यावहारिक हो सकता है।

चरण 3: इस चरण में शोधकर्ता को विश्वस्तता सीमा के बारे में निर्णय लेना होता है। उसे 95% की विश्वस्तता मात्रा के साथ इस बात के लिए लगभग निश्चितता या संतुष्टि हो सकती है कि निर्दिष्ट सीमाएँ वास्तविक माध्य को आविष्ट कर लेंगी। निर्णय ली गई विश्वस्तता मात्रा से चरण 2 में उल्लेखित अंतराल को मानक त्रुटि में रूपांतरित करना संभव हो जाता है। यदि व्यवहारिक रूप में कोई यह निश्चित कर लेता है कि प्रतिदर्श माध्य के प्रति वास्तविक माध्य ± 12 के अंतराल में स्थित होगा, तब ± 12 का अंतराल ± 3SE हो जाता है। अतः $SE_X = 4$ इसके विपरीत यदि कोई 95% की विश्वस्तता मात्रा पर स्थिर होना चाहता है, तो ± 12, ± $2SE_X$ हो जाता है और $SE_X = 6$

समीकरण 2 को लागू करने पर ऊपर दिए गए उदाहरण का प्रतिदर्श आमाप यह होगा

1) **स्थिति 1**

व्यावहारिक निश्चितता के स्तर पर:

प्रतिदर्श आमाप (n) = $(60/4)^2$ =152 = 225

2) **स्थिति 2**

95% की विश्वस्तता सीमा के स्तर पर:

प्रतिदर्श आमाप (n) = (60/6)2 =102 = 100

(स्थिति 1 में $SE_X = 4$, जबकि स्थिति 2 में $SE_X = 6$)

इस तरह, ऊपर के उदाहरण में, यदि कोई व्यक्ति माध्य के अंतराल में स्थित होगा, तो प्रतिदर्श आमाप लगभग 225 के आस-पास होगा; परन्तु, यदि कोई 95% की विश्वस्तता मात्रा पर इस बात के लिए स्थिर हो जाये कि वास्तविक माध्य ±12 के अंतराल में स्थित होगा तो प्रतिदर्श में केवल 100 मदों को आविष्ट होने की आवश्यकता होती है।

कभी-कभी प्रतिदर्श और इसके वास्तविक माध्य के बीच के स्वीकार्य अंतर को निरपेक्ष रूप में न व्यक्त करके प्रतिशत (मान लीजिए 3%) में व्यक्ति किया जाता है (उदाहरण के लिए, ऊपर के उदाहरण के चरण 2 में ± 12) मान लीजिए प्रत्याशित माध्य (expected mean) लगभग 500 है, तब स्वीकार्य अंतराल ± 15 होगा। परन्तु इसके लिए प्रत्याशित माध्य के सन्निकट ज्ञान का होना आवश्यक हो जाता है।

कोष्ठक 15.3: स्थिति 2

प्रतिदर्श आमाप जब समानुपात का प्रतिचयन करना हो

एक समष्टि में कुछ विशेष गुण वाले व्यक्तियों जैसे ऐसे व्यक्ति जिनके पास खेती के लिए ट्रैक्टर है, के अनुपात का आकलन करना है। यह अनुपात, जो शोधकार को परिशुद्ध रूप में नहीं मालुम है, कम से कम परिमाण कोटि के रूप में उसे मालूम है: अर्थात् प्रायः उसे यह पता है कि ट्रैक्टर का स्वामी होना काफी विरल है (मान लीजिए कि 1000 व्यक्तियों में 3 से भी कम व्यक्ति ट्रैक्टर के स्वामी हैं) यह सामान्य होता है (अर्थात् 10 में 3 से लेकर 100 में 3 व्यक्ति तक), या बहुत सामान्य होता है (10 में 3 व्यक्ति ट्रैक्टर के स्वामी हैं। यदि ट्रैक्टरों का स्वामी होना 100 में 3 की तुलना में बहुत सामान्य न हो, तो साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन निरंतर अदक्ष होगा और तब विरल घटनाओं के आकलन के लिए उपयुक्त अन्य प्रतिचयन विधियों का प्रयोग करना होता है। यादृच्छिक प्रतिचयन की तुलना करना इस बात की कल्पना करना है कि शोधकार की रुचि केवल उन गुणों पर केन्द्रित होती है जिनकी बारंबारताएँ कम से कम 100 में 3 हो। इन सीमाओं से यह स्पष्ट होता है कि यदि समष्टि अनुपात का ठीक-ठीक ज्ञान हो, तो पूरी समष्टि की जांच करनी चाहिए। परन्तु यह व्यावहारिक नहीं है और सामान्यतः अनावश्यक भी है, क्योंकि शोधकार को प्रायः यथार्तता की मात्रा अपेक्षित नहीं होती। उसकी अपेक्षताएं उस प्रयोग से संबंधित होती हैं जिसमें आकलन (या आकलनों) का प्रयोग होता है और इस तरह अलग-अलग शोधकारों के लिए आकलन अलग-अलग होता है और अनुपात भी अलग-अलग होता है।

हमें मालूम है कि एक समानुपात की मानक त्रुटि निम्नलिखित सूत्र से परिकलित की जा सकती है।

SE_p = v (PQ/n) 3

$SE_p^2 = PQ/n$ 4

जहाँ SE_P समानुपात की मानक त्रुटि है, P एक समष्टि में एक गुण का समानुपात है और Q = I – P और n प्रतिदर्श-आमाप है। इस तरह, समीकरण 4 से व्युत्पन्न निम्नलिखित समीकरण का प्रयोग करके प्रतिदर्श आमाप परिकलित किया जा सकता है।

$n = PQ/SE_p^2$ 5

प्रतिदर्श आमाप को निम्नलिखित चरणों में परिकलित किया जा सकता है:

चरण 1: इसके लिए P के आकलन की आवश्यकता होती है और इससे Q का (Q = I – P) परिकलित हो जाता है जो एक अज्ञात राशि है। फिर भी प्रतिदर्श आमाप ज्ञात करने के लिए इस माप का एक स्थूल आकलन पर्याप्त होता है।

1) अधिकांश स्थितियों में इसी प्रकार की समस्याओं से प्राप्त अनुभव समानुपात का आकलन प्राप्त करने में एक उत्तम मार्गदर्शक का काम करता है।

2) अन्य स्थितियों में समानुपात का एक आकलन प्राप्त करने के लिए छोटे पैमाने पर एक अन्वेषी प्रतिदर्श का अध्ययन किया जा सकता है।

फिर भी, यदि इन दोनों उपगमनों में से कोई भी उपगमन संभव न हो, तो यह कल्पना की जा सकती है कि P= 50% जो कि P के अन्य किसी मान की तुलना में एक वृहत् प्रतिदर्श-आमाप होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि 50% - 50% के ब्यौरे में समीकरण के सूत्र में अंश (PQ) ($n=PQ/SE_p^2$) वृहत्तम होता है। फिर भी नीचे दिए गए उदाहरण में आइए हम P = 30% या 0.3 लें।

चरण 2: इस बात का निर्णय अवश्य ले लेना चाहिए कि प्रतिचयन आकलन को कितना परिशुद्ध लेना है। इस स्थिति में अन्वेषक शोधकार के लिए एक प्रतिदर्श समानुपात के प्रति ± 6% को अंतराल लेना संभव है।

चरण 3: इस चरण में शोधकर्ता को विश्वस्तता सीमा के संबंध में निर्णय लेना होता है। उसे 95% की विश्वस्तता मात्रा पर इस बात से निश्चितता अथवा संतुष्टि हो सकती है कि निर्दिष्ट सीमाओं के अंतर्गत वास्तविक माध्य होगा। पहली स्थिति में ± 6%; $\pm 3SE_p$ के बराबर होगा और फलस्वरूप $SE_p = \pm 2\%$ जबकि बाद वाली स्थिति में $SE_p = \pm 6\%$, $\pm 2SE_p$ के बराबर होगा और $SE_p = \pm 3\%$

समीकरण 4 का प्रयोग करने पर ऊपर के उदाहरण का प्रतिदर्श आमाप यह होगा

1) **स्थिति 1**

व्यावहारिक निश्चितता के स्तर पर

प्रतिदर्श-आमाप (n) = $(0.3 * 0.7)/(0.02)^2 = 0.21/0.0004 = 525$

2) **स्थिति 2**

95% की विश्वस्तता सीमा के स्तर पर

प्रतिदर्श-आमाप (n) = $(0.3 * 0.7)/(0.03)^2 = 0.21/0.0009 = 233$

(P= 30% या 0.3; स्थिति 1 में $SE_P = .02$, जबकि स्थिति 2 में $SE_P = .03$)

प्रतिदर्श-आमाप का एक आकलन प्राप्त करने में सूत्र के प्रयोग से एक सन्निकट से अधिक कुछ और प्राप्त नहीं होता। अतः व्यवहार में यह उत्तम होता है कि प्रतिदर्श आमाप को न्यूनतम लिया जाए और उसमें सुरक्षा के लिए वृद्धि की जाए।

आइए अब हम सोचें और करें और 15.3 पूरा करें।

सोचे और करें 15.3

मान लीजिए माध्य का परिकलन करने के लिए आपकी इच्छा अपनी अनुसंधान परियोजना में प्रतिदर्श-आमाप का आकलन करने की है और आपकी यह कल्पना है कि प्रतिचयन सरल है और प्रतिदर्शित समष्टि अनंततः बृहत् है और आप पाठ में दी गई स्थिति एक में उल्लेख किए गए तीनों चरणों को लेने की स्थिति में हैं। आपके लिए एक प्रश्न यह है कि आप प्रत्येक चरण को विस्तार से हल करें और कोष्ठक 15.2 के ठीक बाद दिए गए फॉर्मूला के अनुसार उत्तर लिखें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

15.5 निष्कर्ष

इकाई 15 में प्रतिचयन जैसे महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा की गई है और आपको प्रतिचयन की विभिन्न विधियों से संबंधित सूचनाएं उपलब्ध करायी गई हैं। साथ ही, इसमें प्रतिदर्श-आमाप का परिकलन करने के कौशल से आपको परिचित कराया गया है।

आपकी इच्छा माइकेल (1984:239) द्वारा सांख्यिकी के प्रतिचयन सिद्धांत के बारे में दिए गए इस कथन को ध्यान में रखने की हो सकती है कि "यह इस संभाविता का संख्यात्मक आकलन उपलब्ध कराता है कि समष्टि-मान प्रतिदर्श द्वारा स्थापित कुछ परिभाषित परिसर के अंतर्गत हो जबकि प्रतिदर्श का चयन इस प्रकार किया गया हो कि वह संबंधित प्रायिकताओं के अभिकलन की पुष्टि के लिए गणितीय प्रतिबंधों को संतुष्ट करता हो।"

आगे चलकर उसने सैद्धांतिक निर्वचन के लिए मात्रात्मक आंकड़ों का प्रयोग करते समय व्युत्पन्न हुए एक अन्य प्रकार की अनुमिति का स्पष्टीकरण दिया और बताया कि इस प्रतिबंधित अर्थ में एक 'प्रतिनिधि' प्रतिदर्श का चयन करने की व्यवस्था ने उस अंतर्निहित अन्य प्रकार की अनुमिति को अंतर्ग्रहीत कर लिया है जबकि एक सांख्यिकीय प्रतिदर्श में अनावरित साहचर्य से वैश्लेषिक कथन दिए गएं हों। यह वह अनुमिति है जो कि प्रतिदर्श के अवधारणात्मकतः परिभाषित अवयवों का सैद्धांतिक संबंध मूल समष्टि पर भी लागू होगा। इस प्रकार की अनुमिति का आधार सैद्धांतिक तर्क की एक विधा है जो कि अवयवों को एक उत्तम विधि से जोड़ता है न कि प्रतिदर्श के सांख्यिकीय प्रतिनिधित्व से।

15.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बर्गेस, आर.जी. (संस्करण) 1982. *फील्ड रिसर्चः ए सोर्सबुक एण्ड फील्ड मैनुअल* (समकालिक सामाजिक अनुसंधान 4). जार्ज एलेन और अनविनः लंदन (यादृच्छिक और अ-यादृच्छिक प्रतिचयन पर की गई चर्चा के लिए पृ. 76 से आगे अध्ययन कीजिए)

डेनिजन, एन.के. (संस्करण) 1970. *सोशियोलॉजिकल मैथड्सः ए सोर्सबुक बटरवर्थ्सः* लंदन (प्रतिचयन तकनीक संबंधी उपयोगी सूचना प्राप्त करने के लिए पृष्ठ 81 के आगे अध्ययन कीजिए)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सांख्यिकीय शब्दावली का हिंदी अनुवाद

अनुमिति	inference
आमाप	size
कमबद्ध	systematic
गुच्छ	cluster
गुण	attribute
गुणात्मक	qualitative
परिक्षेपण	dispersion
प्रतिचयन	sampling
प्रतिदर्श	sample
प्रसरण	variance
मात्रात्मक	quantitative
मानक त्रुटि	standard error
मानक विचलन	standard deviation
विश्वास्यता-सीमा	limit of confidence
समष्टि	population
समाश्रयण	regression
स्तरित	stratified

इकाई 16

केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 माध्य
16.3 माध्यिका
16.4 बहुलक
16.5 माध्य, माध्यिका और बहुलक में परस्पर संबंध
16.6 केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप का चयन
16.7 निष्कर्ष
16.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 16 को पढ़ लेने के बाद आपके लिए संभव होगा:

- एकत्रित किए गए केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप प्राप्त करने की क्रियाविधि को समझना;
- केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप अर्थात् माध्य, बहुलक और माध्यिका ज्ञात करने की विधियां लागू करना; तथा
- यह निर्णय लेना कि आपके आंकड़ों में तीन मापों में से कौन माप अधिक उपयुक्त है।

MAADHYAM IAS

16.1 प्रस्तावना

वृहत् जटिल सामाजिक वर्ग का अध्ययन करने की प्रतिचयन तकनीकों के कौशल में से परिचित हो जाने के बाद अब हमने केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापन संबंधी तथ्यों और उनके अनुप्रयोग पर चर्चा की है।

इकाई 16 में जिनकी गणित में प्रबल पृष्ठभूमि नहीं रही है उन लोगों के लिए केन्द्रीय प्रवृत्ति के आधारभूत माप और उनके अनुप्रयोग पर चर्चा की गई है। इस चर्चा में सूत्रों के जटिल गणितीय व्युत्पन्नों को छोड़ दिया गया है। कम से कम अनिवार्य 'लघु' गणितीय प्रतीकों और सामाजिक विज्ञान के आंकड़ों से लिए गए सुपरिचित उदाहरणों को अगणितीय रूप में प्रस्तुत किया गया है।

16.2 माध्य

माध्य अति प्रचलित और व्यापक रूप से प्रयुक्त होने वाला केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक माप है। समष्टि के प्रत्येक प्रेक्षण को X_i (जिसे x सब i पढ़ा जाता है) मान से प्रकट किया जाता है। इस तरह, एक प्रेक्षण को X_1 से प्रकट किया जाता है। दूसरे को X_2 से, तीसरे को X_3 से, आदि-आदि। पादाक्षर i का N तक, जो कि समष्टि में X_i मानों की कुल संख्या है, कोई पूर्णांक मान हो सकता है। समष्टि के माध्य को यूनानी अक्षर μ (छोटे अक्षर में) से प्रकट किया जाता है।

अवर्गीकृत आंकड़ों से माध्य का परिकलन

माध्य (M) एक अति प्रचलित और उपयोगी माप है जिसका प्रयोग व्यष्टियों, वस्तुओं या घटनाओं के किसी वर्ग के स्कोर के बंटन के केन्द्रीय प्रवृत्ति औसत की व्याख्या करने के

लिए किया जाता है। इसे स्कोर के योगफल को स्कोरों की कुल संख्या से भाग देकर अभिकलित किया जाता है।

$M= \Sigma X_i / N$ 1

जहां M माध्य (प्रतिदर्श) है, X_i स्कोर है, N स्कोरों की कुल संख्या है और Σ योगफल का प्रतीक है। उदाहरण 1 और 2 के लिए कोष्ठक 16.1 और 16.2 देखिए।

कोष्ठक 16.1

उदाहरण 1: समुदाय के सदस्यों के पास निम्नलिखित संख्या में पशु हैं।

12, 11, 13, 20, 16, 18, 19, 17, 22 और 23

$\Sigma X_i = 12 + 11 + 13 + 20 + 16 + 18 + 19 + 17 + 22 + 23 = 170$

$N = 10$

$M=\sum X_i / N;\ M = 170 / 10 = 17$

माध्य किसी बंटन का एक ऐसा संतुलन बिन्दु होता है कि यदि आप बंटन के प्रत्येक मान को माध्य से घटाएं और इन सभी विचलन स्कोर को जोड़ें, तो परिणाम के रूप में शून्य प्राप्त होगा।

वर्गीकृत आंकड़ों से माध्य का परिकलन

वर्गीकृत आंकड़ों से माध्य का परिकलन अवर्गीकृत आंकड़ों से माध्य के परिकलन से थोड़ा भिन्न होता है।

$M=\sum F_i * X_i / \Sigma F_i$ 2

जहां M= माध्य है, X_i वर्ग अंतराल का मध्य बिन्दु हैं और F_i विभिन्न अंतरालों में स्थितियों की संख्या है। $\sum F_i$ स्कोरों की कुल संख्या या विभिन्न अंतरालों की बारंबारताओं का योगफल है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 16.2

उदाहरण 2: एक समुदाय के उन घरों की बारंबारता (8,9,12,9,7 और 5) दी गई है जिनके पास छः वर्गों में विन्यासित (1-3, 4-6, 7-9, 10-12, 13-16 और 16-18) मुर्गियाँ हैं।

मुर्गियों की संख्या	अंतराल का मध्य बिन्दु (X_i)	घरों की बारंबारता संख्या (F_i)	$F_i * X_i$
1-3	2	8	16
4-6	5	9	45
7-9	8	12	96
10-12	11	9	99
13-15	14	7	98
16-18	17	5	22
		50	376

$\sum F_i * X_i = 376\ \ \Sigma F_i = 50$

$M = \sum F_i X_i / \Sigma F_i = 376 / 50 = 7.52$

वर्गीकृत आँकड़ों से माध्य परिकलित करने की एक लघु विधि

वर्गीकृत आंकड़ों से माध्य परिकलित करने की एक लघुतर विधि है जिससे समय की बचत होती है, और अभिकलन करने में भी मेहनत कम लगती है, विशेष रूप से तब जबकि किसी को वृहत् संख्या में ली गई स्थितियों पर विचार करना होता है। इस विधि में एक माध्य मान लिया जाता है और फिर उस अंतराल को पहचानने में अनुमान लगाया जाता है जिसमें माध्य के होने की संभावना होती है (सामान्यतः यह अंतराल बीच का अंतराल होता है। अंतराल के संबंध में अलग अनुमान लगाने से परिकलन में तो अंतर आ जाता है, परन्तु माध्य में कोई अंतर नहीं आता।

$\therefore$ माध्य (M) $= AM + ((\sum F_i * D_i / \sum F_i)) * i$ 3

$\therefore$ $Di = (AM - X_i) / i$ 4

जहां M माध्य है, AM = कल्पित माध्य, X_i वर्ग-अंतराल का मध्य बिन्दु है, F विभिन्न अंतरालों में स्थितियों की संख्या है, Σ योगफल का प्रतीक है, D उस वर्ग के मध्य बिन्दुओं से, जिसमें कल्पित माध्य स्थित है। विभिन्न वर्गों के मध्य बिन्दुओं के विचलन को वर्ग-अंतराल के आमाप से भाग देने पर प्राप्त राशि है (समीकरण 4 और i वर्ग-अंतराल का आमाप है। उदाहरण 3 के लिए कोष्ठक 16.3 देखिए।

कोष्ठक 16.3: उदाहरण 3: वैवाहिक दूरी (पति-पत्नी के गाँवों के बीच की दूरी)

एक समुदाय की वैवाहिक दूरी का अन्वेषण किया गया निम्नलिखित बारंबारता (88,93,72,97,79 और 54) जबकि वैवाहिक दूरी के अनुसार छः समूहों में आंकड़े विन्यासित किए गए हैं (25-30, 30-35, 40-45, 45-50, 50-55) आइए हम माध्य वैवाहिक दूरी ज्ञात करें।

वैवाहिक दूरी (km)	बारंबारता (f_i)	अंतराल का मध्य बिन्दु (x_i)	$D_i = (AM - X)/i$	F_iD_i
25-30	88	37.5	+3	264
30-35	93	32.5	+2	186
35-40	72	37.5	+1	72
40-45	97	AM = 42.5	0	0
45-50	79	47.5	-1	79
50-55	54	52.5	-2	106
	483			335

$AM = 42.5$ $\quad \Sigma F_i = 483$ $\quad \Sigma F_i * D_i = 335$ $i = 5(30-25)$

माध्य (M) $= AM + ((\Sigma Fi * D_i) / \Sigma F_i)) * i$

$= 42.5 + (335/483) * 5 = 42.5 + 3.468 = 45.968$

अवर्गीकृत और वर्गीकृत आंकडों का माध्य परिकलन करने से संबंधित तीन उदाहरण दे देने के बाद अब हमने माध्यिका ज्ञात करने की तकनीक पर चर्चा की है।

16.3 माध्यिका

माध्यिका वह स्कोर है जो बंटन को दो अर्ध-भागों में विभाजित करता है। इनमें आधे स्कोर माध्यिक के ऊपर होते हैं और आधे इसके नीचे जबकि आंकड़ों को संख्यात्मक क्रम में विन्यासित किया गया हो। माध्यिका को बंटन के 50% शततमक पर भी स्कोर माना जाता है।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

- श्रेणी को संख्यात्मक क्रम (आरोही या अवरोही) में विन्यासित कीजिए।
- सूत्र (N+1)/2 से N संख्याओं का माध्यिका-स्थान ज्ञात कीजिए। जब N विषम संख्या हो, उदाहरण के रूप में मान लीजिए 7 हो तो चौथेमद का मान [(7+1)/2=4] माध्यिका होता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित क्रमित बंटन में चौथे मद का मान अर्थात् 9 माध्यिका है।

  2, 5, 8, 9, 12, 16, 16
- जब N एक सम संख्या, मान लीजिए 12 हो, तो माध्यिका छटवां और सातवें मदों के बीच में होती है [(12 + 11)/2 = 6.5]

उदाहरण 4 और 5 के लिए कोष्ठक 16.4 देखिए।

कोष्ठक 16.4: उदाहरण 4: माध्यिका ज्ञात करना

जब N एक विषम संख्या हो: संख्याओं के बंटन में माध्यिका ज्ञात करना: 1,13, 8, 3, 4, 11 और 7

माध्यिका स्थान (N + 1)/2 या (7 + 1) / 2 = 4 हैं

व्यवस्थित वितरण इस प्रकार है: 1, 3, 4, 7, 8, 11 और 13

बंटन में चौथे मद का मान 7 है। इस तरह माध्यिका 7 है।

उदाहरण 5: जब N एक सम संख्या हो

संख्याओं के बंटन में माध्यिका ज्ञात कीजिए: 1, 8, 3, 13, 11 और 7

माध्यिका स्थान है (6 + 1) / 2 = 3.5

क्रमित बंटन है: 1, 3, 7, 8, 11 और 13

तीसरे और चौथे मदों के बीच का मान 7.5 (7 + 8)/2 है, और इस तरह माध्यिका 7.5 है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

वर्गीकृत आंकड़ों से माध्यिका का परिकलन

बारंबारता बंटन में माध्यिका स्कोर ज्ञात करने के लिए नीचे दिए गए पांच चरण लागू करने होते हैं।

चरण 1: कुल संख्या (N या ΣF_i) को दो से भाग दीजिए

चरण 2: बारंबारता बंटन के निचले सिरे से प्रारंभ कीजिए और प्रत्येक अंतराल में स्कोर तब तक जोड़ते जाइए जब तक कि माध्यिका वाला अंतराल प्राप्त नहीं हो जाता (C.F)

चरण 3: ऊपर के चरण 2 से प्राप्त योगफल को माध्यिका तक पहुंचने के लिए आवश्यक संख्या (चरण 1 में परिकलित की गई संख्या) से घटा दीजिए (N/2 - C.F)

चरण 4: अब उस माध्यिका अंतराल के अनुपात का परिकलन कीजिए जिसे माध्यिका स्कोर तक पहुंचने के लिए, इसकी निम्न सीमा में जोड़ना होता है। इसके लिए ऊपर के चरण 3 में प्राप्त संख्या को माध्यिका अंतराल में स्कोरों की संख्या (f) से भाग देते हैं और तब वर्ग-अंतराल के आमाप से गुणा करते हैं अर्थात् [(N/2 – C.F.)/f] *i.

चरण 5: अंत में ऊपर चरण 4 में प्राप्त संख्या को माध्यिका अंतराल की यथातथ्य निम्न सीमा में जोड़ दीजिए

माध्यिका = $L + [(N/2 - C.F.) / f] * i$

जहां L= माध्यिका अंतराल की यथातथ्य निम्न सीमा

N= स्कोरों की कुल संख्या, माध्यिका अंतराल के नीचे के अंतरालों के स्कोरों की संख्या

i = वर्ग-अंतराल का आमाप

वर्गीकृत आंकड़ों से माध्यिका परिकलित करने का ग्राफीय निरूपण माध्यिका

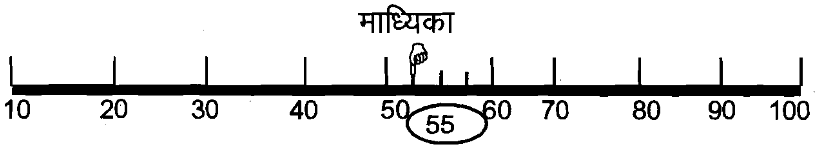

बारंबारता | 6 | 5 7 | 5 | 4 | 8 | 6 | 3 | 6 |

संचयी बारंबारता 6→|11 →|18→|23 →|27 →|35 →|41→|44→|50→|

वर्गीकृत आंकड़ों की माध्यिका ज्ञात करने के लिए उदाहरण 6 का कोष्ठक 16.5 देखिए।

कोष्ठक 16.5: उदाहरण 6: निम्नलिखित बंटन की माध्यिका ज्ञात करना

वर्ग अंतराल	18-21	21-24	24-27	27-30	30-33	33-36 36-39 39-42 42-45 45-48 48-51
बारंबारता						

वर्ग अंतराल	बरंबारता	संचयी बारंबारता
18-21	1	1
21-24	2	3
24-27	3	6
27-30	6	12
30-33	7	19
33-36	8	27
36-39	8	35
39-42	6	41
42-45	4	45
45-48	1	48
48-51	2	50
कुल योग	$\Sigma F_i = 50$	

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

माध्यिका= L + [(N/2 – C.F.)/f] *i

N या ?F_i / 2 = 50 / 2 = 25

माध्यिका वर्ग की निम्न सीमा (L) = 33

माध्यिका वर्ग के पूर्व वर्ग की संचयी बारंबारता (C.F.) = 19

माध्यिका वर्ग की बारंबारता (f) = 8

वर्ग अंतराल का आमाप = 3

माध्यिका = 33 + [(25 -19)/8] *3 = 33 + 2.25 = 35.25

यह देखने के लिए कि अब परिकलन विधियां सरल और स्पष्ट हो गई हैं कि नहीं, आइए अब हम सोचें और करें 16.1 पूरा करें।

सोचें और करें 16.1 के बाद हमें अवर्गीकृत और वर्गीकृत आंकड़ों का बहुलक परिकलना सीखना होगा।

> **सोचें और करें 16.1**
>
> अवर्गीकृत और वर्गीकृत आंकड़ों के माध्य और माध्यिका परिकलित करने के संबंध में पाठ में दिए गए उदाहरणों और वर्गीकृत आंकड़ों का माध्य परिकलित करने की विधि की सहायता से पाठ में दिए गए उदाहरणों की भांति आप पांच परिकलनों में से प्रत्येक परिकलन के लिए अपना उदाहरण दीजिए। इस अभ्यास से आपको इस प्रकार के परिकलनों को करने का अभ्यास हो जाएगा। परिकलन संबंधी ये अभ्यास आपको तब अधिक सुविधाजनक सिद्ध होंगे जब आपका अपनी लघु शोध परियोजना पर कार्य हो रहा होगा।

16.4 बहुलक (Mode)

एक बंटन का बहुलक बंटन में सर्वाधिक प्रायिक या सर्वनिष्ठ स्कोर होता है। बहुलक वह बिन्दु या मान है जो बंटन के उच्चतम बिन्दु के संगत होता है। यदि उच्चतम बारंबारता एक से अधिक मानों का हो तो बंटन को बहु-बहुलकी (multimodal) कहा जाता है। आपको ऐसे अनेक बंटन देखने को मिलते होंगे जिनके बंटन के दो विभिन्न बिन्दुओं पर द्वि-बहुलकी (bimodal) शिखर होते हैं।

अवर्गीकृत आंकड़ों का बहुलक परिलित करना

श्रेणी में सबसे अधिक बार आने वाला आंकड़ा बहुलक होता है। इसे श्रेणी (जबकि श्रेणी लघु हो) या बारंबारता बंटन (frequency distribution) (जबकि श्रेणी वृहत् हो) को देखकर ही ज्ञात किया जा सकता है। उदाहरण 7 के लिए कोष्ठक 16.6 देखिए।

कोष्ठक 16.6: उदाहरण 7: निम्नलिखित बंटन का बहुलक ज्ञात कीजिए।

परिवार का कमांक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
बच्चों की संख्या	1	2	3	4	3	3	2	1	2	3

ऊपर के उदाहरण में 3 सबसे अधिक बार (4 बार) आता है। अतः बंटन का बहुलक 3 है।

वर्गीकृत आंकड़ों का बहुलक परिकलित करना

निम्नलिखित चरणों को लागू करके वर्गीकृत आंकड़ों का बहुलक परिकलित किया जा सकता है:

चरण 1: देखकर या विश्लेषण करके बहुलक वर्ग (अधिकतम बारंबारता वाला वर्ग) पहचानिए।

चरण 2: निम्नलिखित सूत्र लागू कीजिए:

बहुलक $= L + [(f_m - f_1)/ (f_m - f_1) + (f_m - f_2)] * i$

या

बहुलक $= L + [(f_m - f_1)/ (2f_m - f_1 - f_2)] * i$

जहाँ $L =$ बहुलक अंतराल की यथातथ्य निम्न सीमा

$f_m =$ बहुलक वर्ग की बारंबारता

f_1 = बहुलक वर्ग के पूर्ववर्ती वर्ग की बारंबारता

f_2 = बहुलक वर्ग के परिवर्ती वर्ग की बारंबारता

i = वर्ग अंतराल का आमाप

चित्र 16.1 में वर्गीकृत आंकड़ों के बहुलक या ग्राफीय निरूपण ज्ञात किया जा सकता है।

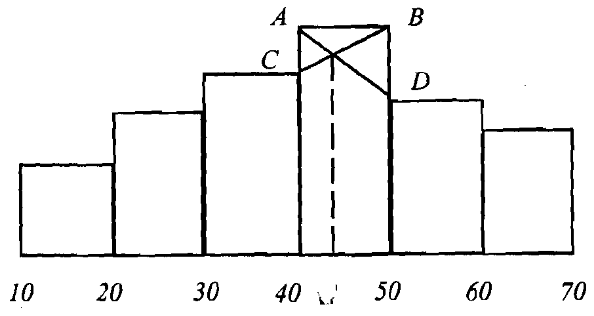

बहुलक

चित्र 16.1: वर्गीकृत आंकड़ों के बहुलक का ग्राफीय निरूपण

प्रतिदर्श बहुलक (sample mode) समष्टि बहुलक (population mode) का सर्वोत्तम आकलन होता है। जब सममित एक-बहुलक समष्टि (symmetrical unimodal population) का प्रतिदर्श लिया जाता है तो बहुलक अनमिनत (unbiased) और माध्य तथा माध्यिका का संगत आकलन होता है, परन्तु यह सापेक्षतः अदक्ष (inefficient) होता है। अतः इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। केन्द्रीय प्रवृत्ति के एक माप के रूप में माध्य या माध्यिका की अपेक्षा बहुलक पर वैषम्य (skewness) का कम प्रभाव होता है, परन्तु माध्य या माध्यिका की अपेक्षा इस पर प्रतिचयन का अधिक प्रभाव होता है। न तो माध्य का और न ही माध्यिका का, परन्तु बहुलक का प्रयोग निर्दिष्ट आंकड़ों और मापन के क्रमसूचक (ordinal), अंतराल और अनुपात मापक्रमों पर किया जा सकता है। प्रायः बहुलक का प्रयोग सामाजिक अथवा जैविक अनुसंधानों में नहीं किया जाता है यद्यपि यह देखा गया है कि समष्टि में एक से अधिक बहुलक होने पर समष्टि में अनेक बहुलक होते हैं। उदाहरण 8 के लिए कोष्ठक 16.7 देखिए

कोष्ठक 16.7: उदाहरण 8 निम्नलिखित आंकड़ों के आधार पर बहुलक आय ज्ञात कीजिए

आय (हजार में)	5-10	10-16	16-20	20-25	25-30	30-35
घरों की संख्या	8	16	29	22	14	12

आय (हजार में)	घरों की संख्या
5-10	8
10-15	15 f_1
बहुलक वर्ग 15-20	29 f_m
20-25	22 f_2
25-30	14
30-35	12

MAADHYAM IAS

बहुलक अंतराल (16-20) में स्थित है, क्योंकि इसकी अधिकतम बारंबारता (29) है।

बहुलक वर्ग की निम्न सीमा = 16

बहुलक वर्ग की बारंबारता (f_m) = 29

पूर्ववर्ती बहुलक वर्ग की बारंबारता (f_1) = 16

परवर्ती बहुलक वर्ग की बारंबारता (f_2) = 22

वर्ग-अंतराल का आमाप = 5

बहुलक = $L + [(f_m - f_1)/(2f_m - f_1 - f_2)] * i$

बहुलक = 16+ [29-16)/(2*29-16-22)] *5 = 16+ (14/21)*5 = 16 + 3.33 = 18.33

अतः बहुलक आय 18.33 हजार है।

माध्य, माध्यिका और बहुलक पर अध्ययन कर लेने के बाद हम भाग 16.5 में केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन मापों के परस्पर संबंध पर चर्चा करेंगे। परन्तु भाग 16.5 का अध्ययन करने से पहले आइए हम सोचें और करें 16.2 पूरा कर लें।

सोचें और करें 16.2

चित्र 16.1 के आधार पर अपने मन के वर्गीकृत आंकड़ों के बहुलक का ग्राफीय निरूपण कीजिए। तब आपके लिए अपनी लघु शोध परियोजना में इसी प्रकार के वर्गीकृत आंकड़ों के ग्राफीय निरूपण का प्रयोग करना संभव होगा।

16.5 माध्य, बहुलक और माध्यिका में परस्पर संबंध

माध्य, बहुलक और माध्यिका केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन माप परस्पर एक-दूसरे से संबंधित होते हैं और निम्नलिखित समीकरण को लागू करके इन्हें परिकलित किया जा सकता है।

बहुलक = 3 * माध्यिका - 2 * माध्य

जब बारंबारता प्रसामान्यतः बंटित (normally distribution) होता है तो माध्य, बहुलक और माध्यिका के मान समान होते हैं परन्तु जब बारंबारता धनात्मकतः या ऋणात्मकतः विषम होती हैं तो इनके मान अलग-अलग होते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

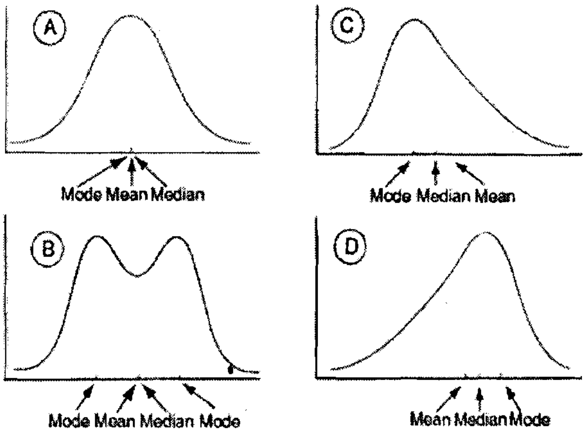

चित्र 16.2: विभिन्न प्रकार के बारंबारता बंटनों के माध्य, बहुलक और माध्यिका में परस्पर संबंध

चित्र 16.2 में, विभिन्न प्रकार के बारंबारता बंटनों अर्थात् (क) प्रसामान्य बंटन (normal distribution), (ख) द्वि-बहुलक बंटन (bimodal distribution),, (ग) धनात्मकतः विषम बंटन (positively skewed distribution), और (घ) ऋणात्मकतः विषम बंटन (negatively skewed distribution), के माध्य, बहुलक और माध्यिका के परस्पर संबंध को दर्शाया गया है। चरों (variables), के मान x-अक्ष के अनुदिश और बारंबारताएँ y-अक्ष के अनुदिश हैं। केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन मापों के परस्पर संबंध के बारे में अध्ययन कर लेने के बाद हम यह देखें कि किसी अनुसंधान में इन तीन मापों में से किस माप का प्रयोग किया जाए – इसका निर्णय किस प्रकार लिया जाता है।

16.6 केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप का चयन

कभी-कभी शोधकार को निर्णय लेने होते हैं कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीनों मापों में से कौन सा प्रयोग में लाये। इस कार्य में नीचे दिया गया सुझाव सहायक सिद्ध हो सकता है।

निस्संदेह माध्य केन्द्रीय प्रवृत्ति का सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाला माप है। इन तीन मापों में से केवल यही एक ऐसा माप है जो आंकड़ा समुच्चय में उपलब्ध सभी सूचनाओं का प्रयोग करता है अर्थात् यह बंटन के प्रत्येक स्कोर के मान को प्रतिबिंबित करता है। इसका एक लाभ यह भी है कि यह समान चर पर मापे गए अन्य वर्गों के माध्यों के साथ संयोजित हो सकता है। उदाहरण के लिए, भारत के विभिन्न राज्यों के औसत बेरोजगार स्तरों से भारत की समग्र बेरोजगार दर का अभिकलन किया जा सकता है और क्योंकि न तो माध्यिका और न ही बहुलक अंकगणित पर आधारित है, अतः इनके साथ यह उपयोगी अनुप्रयोग संभव नहीं है। परिशुद्ध रूप से परिभाषित माध्य के गणितीय मान से अन्य उन्नत सांख्यिकीय तकनीक भी इस पर आधारित हो सकते हैं।

फिर भी कुछ ऐसे अवसर होते हैं, जहां बंटन के प्रत्येक स्कोर के मान को ध्यान में रखने पर आंकड़ों का एक निरूपित चित्र प्राप्त हो सकता है। उदाहरण के लिए, पांच स्थितियों में वैवाहिक दूरी (दो सहयोगियों के निवास स्थानों के बीच की दूरी) 40,60,60,80 और 810 है। 810 के प्रतिरूपी स्कोर को छोड़ देने पर वर्ग का माध्य स्कोर 60 होता है और इसी प्रकार माध्यिका 60 होती है। 810 के स्कोर को भी सम्मिलित कर लेने पर माध्य चरम मान की दिशा की ओर खींच जाता है। तब माध्य 210 हो जाता है, जिसका श्रेणी में कोई प्रतिनिधित्व नहीं होता। माध्यिका तो 60 ही बनी रहती है जो कि माध्य की अपेक्षा बंटन का अधिक वास्तविक विवरण प्रस्तुत करती है।

इन बातों को ध्यान में रखकर माध्य का प्रयोग तब कीजिए:

i) जबकि बंटन के स्कोर एक केन्द्रीय बिन्दु के प्रति कमोबेश सममिततः (Symmetrically) वर्गित हो

ii) जबकि अनुसंधान समस्या में केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक ऐसा माप अपेक्षित हो जो कि अन्य प्रतिदर्शजों का भी आधार हो (जैसे परिवर्तनशीलता माप या साहचर्य माप)

iii) जबकि अनुसंधान समस्या में समान चर पर मापे गए अन्य वर्गों के माध्यों के साथ इस माध्य का संयोजन अपेक्षित हो।

iv) जबकि प्रेक्षणों के प्रतिदर्श में केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापने के लिए उस समष्टि के संगम माध्य के मान का आकलन करना आवश्यक हो, जिससे प्रतिदर्श लिया गया है।

v) जबकि अंतराल स्तर या अनुपात स्तर आंकड़ों से यह पता चलता है कि स्कोरों के बंटन से लगभग एक [illegible] वक्र प्राप्त होता है।

MAADHYAM IAS

i) जबकि अनुसंधान समस्या में बंटन के यथातथ्य मध्य-बिन्दु का ज्ञान होना अपेक्षित हो,

ii) जबकि श्रेणी में चरम स्कोर हो, क्योंकि ये माध्य को तो निरूपत कर सकते हैं, परन्तु माध्यिका को प्रभावित नहीं करते। विशेष रूप से तब जबकि हम विषम आकार के बंटन का अध्ययन कर रहे हों जिनमें चरम उच्च स्कोर अधिक अनुपात में हों और चरम निम्न स्कोर निम्न अनुपात में हों।

बहुलक का प्रयोग तब कीजिए जबकि

i) जबकि केन्द्रीय प्रवृत्ति को तुरंत और उपयुक्त विधि से ज्ञात करना अपेक्षित हो।

ii) जबकि 'औसत' के संबंध में इस शब्द का प्रयोग 'प्रतिरूपी' या 'अतिप्रायः' के अर्थ में किया जाता हो। उदाहरण के लिए, कॉफी बगान के श्रमिकों का औसत घर ले जाने वाला वेतन एक बहुलक मजूदरी है जो उपलब्ध कराया गया है न कि यथातथ्य समांतर माध्य।

सोचें और करें 16.3

उन आंकड़ों के उदाहरण प्रस्तुत कीजिए जिनमें आंकड़ों की केन्द्रीय प्रवृत्ति को प्रतिबिंबित करने के लिए माध्य, माध्यिका और बहुलक प्रकार के परिकलन अपेक्षित हों।

16.7 निष्कर्ष

जब नाभिक पैमाने (नॉमिनल स्केल) के प्रयोग से आंकड़ें एकत्रित किए गए हों, तो बहुलक एक उपयुक्त प्रतिदर्शज होगा जिसका प्रयोग एक अति लोकप्रिय माप के रूप में किया गया हो। माध्यिका का संबंध प्रायः क्रमसूचक स्तर के आंकड़ों के साथ किया जाता है। माध्य का प्रयोग अंतराल स्तर या अनुपात स्तर आंकड़ों के साथ किया जाता है जबकि स्कोरों के बंटन से लगभग एक प्रसामान्य वक्र प्राप्त होता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

आपके लिए माध्य को एक गणितीय माप मानना संभव है और माध्यिका और बहुलक को स्थिति माप। आपके लिए सदा ही एक केन्द्रीय मान के प्रति अपने प्रेक्षणों का गुच्छन करना संभव है। एक केन्द्रीय मान बंटन और विभिन्न बंटनों की तुलना दोनों ही अभिव्यक्ति करता है। शोधकार के लिए यह सदा ही उपयोगी होगा कि वह उन मापों को प्रस्तुत करे जो एक बारंबारता बंटन के औसत लक्षण को प्रदर्शित करता हो। इकाई 16 में केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन मापों पर चर्चा की गई है और अपने अनुसंधान में इनका अनुप्रयोग करने के लिए आधारभूत सांख्यिकीय साधनों के कौशल से परिचित्त कराया गया है।

अब आपको आभास हो गया होगा कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन माप अर्थात् (i) बंटन के सभी मानों का औसत या माध्य, (ii) बंटन का मध्य बिन्दु या माध्यिका और (iii) बंटन में घनत्व या बहुलक का अनुप्रयोग एक यांत्रिक विधि से नहीं किया जाता है। आपके अध्ययन के उद्देश्य को ध्यान में रखकर आपको यह निर्णय लेना होता है कि किस माप का प्रयोग आपको कब करना है। आपने इकाई 16 में यह पढ़ा ही है कि बंटनों का ग्राफीय निरूपण या तो सममित या विषम प्रतिरूप को प्रदर्शित करता है। सममित प्रतिरूप में आपको यह स्पष्ट होगा कि तीनों मान संपाती होते हैं। इससे आपको माध्य का प्रयोग करने का विकल्प मिल जाता है। द्वि-बहुलक या बहु-बहुलक निरूपण में बहुलक का प्रयोग उत्तम होगा। विषम बंटन में यदि पुच्छ दायीं ओर हैं तो यह बंटन के धनात्मक विषमता को प्रदर्शित करता है। और यदि पुच्छ बायीं ओर है तो यह बंटन के ऋणात्मक विषमता को प्रदर्शित करता है। बंटन के धनात्मक और ऋणात्मक दोनों प्रकार के विषमता में केन्द्रीय प्रवृत्ति के

माध्यिका माप अधिक उत्तम होगा। इकाई 16 की सहायता से आपके लिए केन्द्रीय प्रवृत्ति के उस प्रकार के माप का अध्ययन करना संभव है जिसका प्रयोग आपके द्वारा अपने लघु शोध परियोजना में किया जायेगा।

16.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ब्लैक, थामस आर. 1999, *डूइंग क्वान्टिटेटिव रिसर्च इन द सोशल साइंसः* एन इंटिग्रेटेड टु रिसर्च डिजाइन, मैजरमेंट एण्ड स्टैटिस्टिक्स

नैकमियास, डेविड और छावा नैकमियास 1981, *रिसर्च मैथड्स इन सोशल साइंसेज,* सेंट मार्टिन प्रेस, न्यूयार्क

सांख्यिकी शब्दावली का हिंदी अनुवाद

अवर्गीकृत आंकड़े	ungrouped data
केन्द्रीय प्रवृत्ति	central tendency
द्वि-बहुलक बंटन	bimodal distribution
प्रसामान्य बंटन	normal distribution
बहु-बहुलकी	multi-modal
बहुलक	mode
बारंबारता	frequency
माध्य	mean
माध्यिका	median
वर्गीकृत आंकड़े	grouped data
वैषम्य	skewness

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 17

परिक्षेपण-माप और परिवर्तिता

इकाई की रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना

17.2 परिसर

17.3 प्रसरण

17.4 मानक विचलन

17.5 विचरण-गुणांक

17.6 निष्कर्ष

17.7 कुछ उपंयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 17 पढ़ लेने के बाद आपके लिए संभव होगाः

- आंकड़ों का परिक्षेपण-माप प्राप्त करना;
- शब्द "परिसर" के अर्थ की व्याख्या करना और आंकड़ों के परिसर का माप ज्ञात करना;
- आंकड़ों के प्रसरण पर चर्चा करना और उसका मानक विचरण ज्ञात करना; तथा
- आंकड़ों का विचरण-गुणांक ज्ञात करना।

17.1 प्रस्तावना

केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के अतिरिक्त सामान्यतः आंकड़ों के एक परिक्षेपण-माप की आवश्यकता होती है। परिक्षेपण-माप (या जिसे कभी-कभी परिवर्तनशीलता माप भी कहा जाता है) बंटन के केन्द्र के प्रति मापों के गुच्छन के बारे में बताता है या विलोमतः वह बताता है कि माप कितने परिवर्तनशील है। सेन्डर्स (1955) का कहना था कि औसत मान किस सीमा तक आँकड़ों को प्रदर्शित करते हैं इसे ज्ञात करने के लिए परिक्षेपण का मापन करना आवश्यक होता है। परिक्षेपण का मापन करने का एक अन्य कारण उपस्थित विचरणों को नियंत्रित करने या सुधार लाने के संबंध में फैलाव ज्ञात करना है।

17.2 परिसर (Range)

आंकड़ों के एक वर्ग में उच्चतम माप और न्यूनतम माप के बीच के अंतर को परिसर कहा जाता है। यदि प्रतिदर्श के मापों को परिमाण के बढ़ते क्रम में विन्यासित किया जाए, जैसे कि माध्यिका ज्ञात करनी हो, तो

प्रतिदर्श-परिसर $= X_1 - X_n$ 1

जहां X_1 और X_n श्रेणी के न्यूनतम और उच्चतम मान है।

उदाहरण 1 के लिए कोष्ठक 17.1 देखिए।

कोष्ठक 17.1 उदाहरण 1

एक समुदाय के सदस्यों के पास निम्नलिखित संख्या में पशु हैं. 12,11,13,20,15,18,19,17,22 और 23 परिसर परिकलित कीजिए.

$X_1 = 11, X_n = 23$

प्रतिदर्श परिसर = 23 - 11 = 12

परिसर सापेक्षतः परिक्षेपण (dispersion) का एक स्थूल माप होता है क्योंकि इसमें उच्चतम और न्यूनतम माप के अतिरिक्त अन्य किसी माप का कोई महत्व नहीं होता। और, क्योंकि एक प्रतिदर्श में समष्टि के उच्चतम और न्यूनतम दोनों मानों का होना संभव नहीं है और प्रतिदर्श-परिसर प्रायः समष्टि-परिसर को अव-आंकलित करता है, इसलिए यह एक अभिनत (biased) और अदक्ष आकलन (estimater) होता है। फिर भी, कुछ परिस्थितियों में यह उपयोगी सिद्ध होता है जैसे प्रतिदर्श-परिसर को समष्टि-परिसर के एक आकलन के रूप में प्रस्तुत करना। जब कभी परिसर को रिपोर्ट आंकड़े में विनिर्दिष्ट किया गया हो, तो प्रायः यह उत्तम होता है कि एक अन्य परिक्षेपण-माप की भी रिपोर्ट कर दी जाए।

माध्य विचलन (Mean deviation)

यह तो स्पष्ट है कि परसिर से मापों के बंटन के बीच के मापों के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती। चँकि माध्य केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक इतना उपयोगी माप होता है कि प्रायः लोगों द्वारा परिक्षेपण को माध्य-विचलन के रूप में व्यक्त किया जाता है।

माध्य से सभी विचलनों का योगफल ($(\Sigma X_1 - M)$) सदैव ही शून्य होता है। अतः परिक्षेपण के एक माप के रूप में इस प्रकार का संकलन करना समय व्यर्थ करना है। इसके विपरीत, माध्य से विचलन के निरपेक्ष मानों का योगफल माध्य के प्रति परिक्षेपण को व्यक्त करता है। इस योगफल को कुल संख्या से भाग देने पर एक माप प्राप्त होता है जिसे प्रतिदर्श का माध्य विचलन या निरपेक्ष माध्य विचलन कहा जाता है और जो इस प्रकार प्राप्त होता है:

प्रतिदर्श का माध्य विचलन = $(\Sigma| X_1 - M |) / n$ 2

जहां M (प्रतिदर्श) माध्य है, X स्कोर है, n स्कोरों की कुल संख्या है और Σ योगफल है और खड़ी रेखाएं यह प्रकट करती हैं कि मान निरपेक्ष (चिह्न पर विचार किए बिना) है। उदाहरण 2 के लिए कोष्ठक 17.2 देखिए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 17.2 उदाहरण 2

एक समुदाय के सदस्यों के पास निम्नलिखित संख्या में पशु हैं: 12,11,13,20,15,18,19,17,22 और 23 माध्य विचलन परिकलित कीजिए.

$\Sigma X_1 = 12 + 11 + 13 + 20 + 15 + 18 + 19 + 17 + 22 + 23 = 170$

$N = 10$

$M = \Sigma X_1 / N; M = 170/10 = 17$

$(\Sigma|X_1 - M = (12-17) + (11-17) + (13-17) + (20-17) + (15-17) + (18-17) + (19-17) + (17-17) + (22-17) + (23-17) = 5 + 6 + 4 + 3 + 2 + 1 + 2 + 0 + 5 + 6 = 34$

प्रतिदर्श माध्य विचलन= 34 / 10= 3.4

यह तो संभव है कि दो प्रतिदर्श के परिसर समान हों, परन्तु दो प्रतिदर्शों का माध्य विचलन समान नहीं होता। माध्य विचलन की परिभाषा माध्य से न लेकर माध्यिका से लिए गए निरपेक्ष विचलनों के योगफल का प्रयोग करके भी दी जा सकती है।

17.3 प्रसरण (Variance)

माध्य से विचलनों के चिह्न का निराकरण करने की विधि यह है कि विचलनों का वर्ग कर दिया जाए। माध्य से विचलनों के वर्ग के योगफल को वर्गों का योगफल, जिसे संक्षेप में SS कहते हैं वर्गों का योग कहा जाता है और इसकी परिभाषा इस प्रकार दी जाती है।

प्रतिदर्श $SS = \Sigma(X_1 - M)^2$ 3

जहां M (प्रतिदर्श) माध्य है, X_1 स्कोर है, और Σ 'का योगफल' है।

प्रतिदर्श SS से समष्टि SS आकलित किया जा सकता है।

समष्टि $SS = \Sigma(X_1 - \mu)^2$ 4

जहां M (प्रतिदर्श) माध्य है, X_1 स्कोर है, और Σ 'का योगफल' है।

वर्ग के माध्य योगफल को प्रसरण (माध्य वर्ग, जो विचलन माध्य वर्ग का संक्षिप्त रूप है) कहा जाता है और समष्टि के लिए इसे δ से (सिग्मा वर्ग, जहाँ δ छोटा यूनानी अक्षर है) प्रकट किया जाता है।

अवर्गीकृत आंकड़ों का प्रसरण परिकलित करने पर

समष्टि प्रसरण= $\delta^2 = \Sigma(X_1 - \mu)^2 / N$ 5

समष्टि प्रसरण δ^2 का श्रेष्ठतम आकलन प्रतिदर्श प्रसरण S^2 होता है।

प्रतिदर्श प्रसरण= $S^2 = \Sigma(X_1 - M)_2 /(n-1)$ 6

जहां M (प्रतिदर्श) माध्य है, X_1 स्कोर है, n स्कोरों (प्रतिदर्श) की कुल संख्या है और Σ 'का योगफल' है।

ऊपर के समीकरण में μ के स्थान पर M और n के स्थान पर N का प्रतिस्थापन करने पर एक राशि प्राप्त होती है जो δ^2 का एक अभिनत आकलन है। प्रतिदर्श के वर्गों के योगफल को n-1 से (जिसे स्वातंत्र्य कोटि (degree of freedom) कहा जाता है और संक्षेप में DF से प्रकट किया जाता है) से न कि n से भाग देने से एक अनभिनत आकलन (unbiased estimate) प्राप्त होता है। ऊपर दिए गए समीकरण का प्रयोग प्रतिदर्श प्रसरण का परिकलन करने में करना चाहिए। यदि सभी प्रेक्षण समान हों, तब तो कोई परिवर्तनशील नहीं होती और $S^2 = 0$; परिवर्तनशीलता या परिक्षेपण की मात्रा में वृद्धि होने पर S^2 अत्यधिक वृहत् (large) हो जाता है। क्योंकि S^2 योगफल माध्य का वर्ग है, इसलिए यह ऋण राशि नहीं हो सकती।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

प्रसरण ठीक उसी प्रकार की सूचना व्यक्त करता है जैसा कि माध्य विचलन करता है, परन्तु इसमें प्रायिकता (probability) और परिकल्पना-परीक्षण के सापेक्ष कुछ ऐसे महत्वपूर्ण गुणधर्म हैं जो इसे स्पष्ट रूप से उत्तम बना देता है। इस तरह, सामाजिक और जैविक सांख्यिकीय विश्लेषण में माध्य विचलन का प्रयोग विरले ही होता है।

प्रसरण की वर्ग-इकाइयां होती हैं। यदि माप ग्राम में दिए हों तो प्रसरण ग्राम वर्ग होगा और यदि माप घन सेंटीमीटर में हों, तो उनका प्रसरण वर्ग घन सेंटीमीटर होगा, जबकि वर्ग इकाइयों का कोई भौतिक निर्वचन नहीं होता।

निम्नलिखित सूत्र से प्रतिदर्श प्रसरण® परिकलित किया जा सकता है–

प्रतिदर्श प्रसरण= $S^2 = [\Sigma(X_1{}^2) - (\Sigma X_i)^2) /n)]/ (n-1)$ 7

ऊपर वाले सूत्र को प्रायः यंत्र सूत्र कहा जाता है, क्योंकि इसके कुछ अभिकलनात्मक लाभ हैं। वास्तव में, समीकरण 6 की अपेक्षा समीकरण 7 की सहायता से SS परिकलित करने में दो बड़े लाभ होते हैं। पहला लाभ यह है कि इसमें अपेक्षाकृत कम अभिकलनात्मक (computational) चरणों का प्रयोग होता है, जो एक ऐसा तथ्य है जिससे त्रुटि होने का संयोग कम हो जाता है। एक अच्छे डेस्क कैलकुलेटर पर योग की गई राशियां Σx और

ΣX_1 दोनों ही आंकड़ों में केवल एक पास से प्राप्त हो सकते हैं जबकि समीकरण 6 को M का परिकलन करने के लिए आंकड़ों में एक पास की आवश्यकता होती है और विचलनों X-M के वर्गों का योगफल प्राप्त करने और परिकलन करने के लिए कम से कम एक और पास की आवश्यकता होती है। समीकरण 6 का प्रयोग करने पर प्रत्येक X-M के परिकलन में सन्निकट त्रुटि हो सकती है जिससे अभिकलन की परिशुद्धता में कमी आ सकती है परन्तु समीकरण 7 का प्रयोग करने में इससे बचा जा सकता है। उदाहरण 3 के लिए कोष्ठक 17.3 देखिए।

कोष्ठक 17.3: उदाहरण 3

एक समुदाय के सदस्यों के पास निम्नलिखित पशु हैं: 12,11,13,20,15,18,19,17,22 और 23

प्रतिदर्श प्रसरण परिकलित कीजिए.

ΣX_1 = 12 + 11 + 13 + 20 + 15 + 18 + 19 + 17 + 22 + 23 = 170

n= 10

M= $\Sigma X_1 / n$; M= 170 = 10 = 170

X_1	12	11	13	20	15	18	19	17	22	23	ΣX_1= 170
X_1-M	-5	-6	-4	+3	-2	+1	+2	0	+5	+6	
$(X_1-M)^2$	25	36	16	9	4	1	4	0	25	36	$(\Sigma X_1-M)^2$= 156

प्रतिदर्श प्रसरण = $S^2 = \Sigma(X_1-M)^2/(n-1) = 156/9 = 17.33$

वैकल्पिक सूत्र (जिसे प्रायः यंत्र सूत्र कहा जाता है)

प्रतिदर्श प्रसरण= $S^2 = [(\Sigma X_1{}^2) - (\Sigma X_1{}^2)/n)]/n-1$

X_1	12	11	13	20	15	18	19	17	22	23	ΣX_1 = 170
$X_1{}^2$	144	121	169	400	225	324	361	289	484	529	$\Sigma X_1{}^2$= 3046

MAADHYAM IAS

प्रतिदर्श प्रसरण= $S^2 = (3046-[170)^2/10)/9 = 156/9 = 17.33$

वर्गीकृत आंकड़ों के प्रसरण का परिकलन

निम्नलिखित सूत्र को लागू करके वर्गीकृत आंकड़ों का प्रतिदर्श प्रसरण परिकलित किया जा सकता है:

प्रतिदर्श प्रसरण = $S^2 = \Sigma f_1 \ (X_1-M)^2/n-1$ 8

जहां M (प्रतिदर्श) माध्य है, f परमाण X_i वाले प्रेक्षणों की बारंबारता है, n (प्रतिदर्श) स्कोर की कुल संख्या है और Σ 'का योगफल' है।

हस्तचल परिकलन जटिल होता है, जबकि माध्य मान में दशमलव के बाद अनेक स्थान हों। सामान्यतः प्रयुक्त होने वाली विधि कल्पित माध्य पर आधारित है। सूत्र नीचे दिया गया है

प्रतिदर्श प्रसरण= $S^2 = \{(\Sigma f_1 * d_1{}^2/ n - (\Sigma f_1 * d_1 / n)^2 \} * i$ 9

$d_1 = (X_1-A)/i.$

जहां i वर्ग-अंतराल का आमाप है, f परिमाण X_i वाले प्रेक्षण की बारंबारता है, n (प्रतिदर्श) स्कोर की कुल संख्या है और Σ 'का योगफल' है। उदाहरण 4 के लिए कोष्ठक 17.4 देखिए।

कोष्ठक 17.4: उदाहरण 4

विभिन्न घरों के (एकड़ में) खेतों को निम्नलिखित सात वर्गों में वर्गीकृत किया गया है। प्रत्येक संवर्ग में घरों की बारंबारता नीचे दी गई है। खेत के स्वामित्व का प्रसरण ज्ञात कीजिए।

खेत का स्वामित्व (एकड़ में)	बारंबारता (F)	अंतराल का मध्य बिन्दु(x)	$d_1 = (X_1\text{-}A)/i$	f_1*d_1	d_1^2	$f_1*d_1^2$
20-30	18	25	-3	-54	9	172
30-40	19	35	-2	-38	4	76
40-50	12*	45	-1	-12	1	2
50-60	19	कल्पित माध्य(A)	0	0	0	0
60-70	17	65	1	17	1	17
70-80	15	75	2	30	4	60
80-90	10	85	3	30	9	90
	110			-27		417

$\Sigma f_1{*}d_1^2 = 417$ $\Sigma f_1 {*}d_1 = 27$ $n = 110$

प्रतिदर्श प्रसरण $= [(\Sigma f_1{*}d_1^2) / n - (\Sigma f_1 {*}d_1 / n^2)]{*}\, i$

प्रतिदर्श प्रसरण $= [(417/110) - (-27/110)^2]\ 10 = (3\text{-}79\text{-}.06)/10 = 37.3$

निम्नलिखित समीकरण को (जिसे प्रायः यंत्र सूत्र कहा जाता है) लागू करके भी वर्गीकृत आंकड़ों का प्रसरण परिकलित किया जा सकता है।

प्रतिदर्श प्रसरण $= S^2 = [(\Sigma f_i X_i^2) - (\Sigma f_i X_i)^2 / n)] / (n-1)$ 10

जहाँ f_i परिमाण X_i वाले प्रेक्षणों की बारंबारता है।

परन्तु वर्गीकरण चाहे कुछ भी हो, डेस्क कैलकुलेटर से प्रत्येक व्यष्टि प्रेक्षण पर समीकरण 7 का प्रयोग काफी तेजी से होता है। उदाहरण 5 के लिए कोष्ठक 17.5 देखिए।

कोष्ठक 17.5: उदाहरण 5

एक समुदाय में ब्राइड की कीमत के संबंध में किए गए अन्वेषण से निम्नलिखित आंकड़े प्राप्त हुए। ब्राइड की कीमत का प्रसरण ज्ञात कीजिए।

ब्राइड की कीमत (हजार में)	बारंबारता (F_i)	अंतराल का मध्य बिन्दु (x_i)	f_1*X_1	X_1^2	$f_1*X_1^2$
10-20	8	15	120	225	1800
20-30	9	25	225	625	5625
30-40	12	35	420	1225	14700
40-50	9	45	405	2025	18225
50-60	7	55	385	3025	21175
60-70	5	65	325	4225	21125
	50		1880		82650

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

$\Sigma f_i{}^*X_i{}^2 = 82650$ $\Sigma f_i{}^*X_i = 1880$ $(\Sigma f_i{}^*X_i)^2 = (1880)^2 = 3534400$ $n = 50$

प्रतिदर्श प्रसरण $= S^2 = [(\Sigma f_i{}^*X_i{}^2) - (\Sigma f_i{}^*X_i)^2 / n)] / (n-1)$

प्रतिदर्श प्रसरण $= S^2 = (82650-(3534400/50/49=(82650-70688)/49$

$= 11962/49 = 244.12$

> **सोचें और करें 17.1**
>
> पाठ में दिए गए उदाहरणों को ध्यान में रखकर अवर्गीकृत और वर्गीकृत आंकड़ों का प्रसरण परिकलित करने से संबंधित आप अपने उदाहरण दीजिए।

17.4 मानक विचलन (Standard Deviation)

मानक विचलन प्रसरण का धन वर्गमूल होता है; अतः इसकी वही इकाइयां होती हैं जो मूल मापों की होती हैं। निम्नलिखित सूत्र को लागू करके इसका परिकलन किया जा सकता है।

मानक विचलन (s) = v प्रतिदर्श प्रसरण

उदाहरण 5 में आपने प्रतिदर्श प्रसरण= 244.12 प्राप्त किया था। अतः आप यह परिकलित करें कि मानक विचलन(s) = v 244.12= 15.62

इस तरह प्रसरण के परिकलन से संबंधित ऊपर दिए गए विभिन्न उदाहरणों से मानक विचलन का परिकलन करने की क्रियाविधि की व्याख्या हो जाती है।

17.5 विचरण-गुणांक (Coefficient of Variation)

सामाजिक विज्ञान के अनुसंधान कार्य में अनुपात मापक्रम तब उपयोगी होता है जबकि शोधकार को अन्य अभिलक्षण की तुलना में एक अभिलक्षण पर प्रतिदर्श की परिवर्तिता का पता लगाने की इच्छा हो।

विचरण-गुणांक मानक विचलन और माध्य का प्रतिशत अनुपात होता है।

विचरण-गुणांक= मानक विचलन *100/माध्य

इस स्थिति में यह परिक्षेपण का एक उपयोगी माप होता है जब असमान परिमाण वाले और/या माप के विभिन्न इकाइयों वाले, जैसे ऊँचाई और भार, चरों के बीच परिवर्तिता की तुलना की जा रही हो। उदाहरण 4 में आपने यह देखा है कि माध्य $(M) = AM + (\Sigma f_i{}^*d_n / n)^* i = 55 + (-27 / 110)^*10 = 55-2.45 = 52.55$

और मानक विचलन(s) = v प्रतिदर्श प्रसरण = v 37.3 = 6.107

विचरण-गुणांक= $S^*100/M = 6.107/52.55 = 11.62$

> **सोचें और करें 17.2**
>
> अनुचिंतन और क्रिया 17.1 के उदाहरणों का मानक विचलन और विचरण-गुणांक ज्ञात कीजिए।

17.6 निष्कर्ष

इकाई 16 में आंकड़ों की केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापने की परिकलन विधि से परिचित हो जाने के बाद इकाई 17 में आपने आँकड़ों के परिक्षेपण के मापन का कौशल अर्जित किया है जो बंटन के केन्द्र के प्रति मापों के गुच्छन का द्योतक है या यह कहा जा सकता है कि यह मापों की परिवर्तिता का द्योतक है।

MAADHYAM IAS

आप सैन्डर्स (1955:90-91) के इस कथन से अवश्य सहमत होंगे कि परिसर परिकलन करने और समझने का एक सरल माप होता है क्योंकि इसमें केवल एक बार घटाने की क्रिया करनी पड़ती है और यह चरम मानों पर ही विशेष बल देता है। इसके विपरीत निरपेक्ष माध्य विचलन में प्रत्येक प्रेक्षण के विचलन पर समान प्रभाव होता है और इसका परिकलन करना और इसे समझना भी सरल होता है। मानव विचलन के परिकलन में विचलनों के वर्णन में चरम मान पर विशेष बल होता है। मानक विचलन एक अति सामान्य परिक्षेपण माप है। श्रेणी के प्रत्येक प्रेक्षण का मान इस माप के मान को प्रभावित करता है। किसी भी प्रेक्षण के मान में परिवर्तन होने पर मानक विचलन के मान में भी परिवर्तन होता है। सापेक्ष रूप से कुल चरम मान से इस मान को निरूपित किया जा सकता है। एक विवृत्तांग बंटन (open ended distribution) के मानक विचलन का परिकलन संभव नहीं है। अंत में, विलचन गुणांक परिसर के समान ही होता है क्योंकि यह केवल उन दो मानों पर आधारित होता है जो मध्य के पचास प्रतिशत मानों का परिसर होता है। इसका प्रयोग अधिकांशतः विषम आंकड़ों वाले समुच्चय में होता है और इसे एक विवृत्तांग बंटन में अभिकलित किया जा सकता है।

17.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

सैन्डर्स, डोनाल्ड 1955: *स्टैटिस्टिकस,* मैक्ग्राहिल, न्यूयॉर्क

सांख्यिकी शब्दावली का हिंदी अनुवाद

अनभिनत	unbiased
अभिनति	bias
निरपेक्ष मान	absolute value
परिक्षेपण	dispersion
परिवर्तिता	variability
परिसर	range
मानक विचलन	standard deviation
विचरण-गुणांक	coefficient of variation
विवृत्तांग बंटन	open-ended distribution
श्रेष्ठतम आकलन	best estimate
स्वातंत्र्य कोटि	degree of freedom

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 18
सांख्यिकीय अनुमितिः प्राक्कल्पना परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना

18.2 सांख्यिकीय अनुमिति

18.3 स्थितियां

18.4 सार्थकता परीक्षण

18.5 निष्कर्ष

18.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 18 को पढ़ लेने के बाद आपके लिए संभव होगाः

- प्रायिकता की संकल्पना के आधार पर सांख्यिकीय अनुमितियाँ प्राप्त करना;
- परिकल्पनाओं के परीक्षण के लिए सांख्यिकीय अनुमिति वाले साधन का प्रयोग करना; तथा
- अनुसंधानाधीन समष्टि के अज्ञात प्राचल का आकलनन करने के लिए सांख्यिकीय अनुमिति वाले साधन को लागू करना।

18.1 प्रस्तावना

इकाई 18 में सांख्यिकीय अनुमिति पर चर्चा की गई है जिसमें निर्णयन की अनिश्चितता की व्याख्या करने के लिए प्रायिकता या संभाव्यता की संकल्पनाओं का प्रयोग किया जाता है। आपको स्पष्ट होगा कि यद्यपि सांख्यिकीय परीक्षणों में इसका प्रयोग काफी कम किया जाता है, फिर भी विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों में आपके लिए काई-वर्ग परीक्षण को लागू करना संभव होगा। यदि प्रतिदर्श अपेक्षाकृत लघु हो, तो ऐसे में छात्र परीक्षण को लागू करना उत्तम होता है जो कि एक प्राचलिक परीक्षण है। इकाई 18 में आपको काई-वर्ग परीक्षण और छात्र-परीक्षण दोनों के बारे में विस्तार से अध्ययन करने का अवसर मिलेगा। जहां तक प्राक्कल्पना के परीक्षण का संबंध है, आपकी लघु शोध परियोजना में इकाई 18 अति उपयोगी सिद्ध होगी जिसे आपको एमएसओ.-002 के सत्रीय कार्य के रूप में पूरा करना है।

18.2 सांख्यिकीय अनुमिति (Statistical inference)

निर्णयन की अनिश्चितता का अध्ययन करने के लिए सांख्यिकीय अनुमिति में प्रायिकता (probalility) की संकल्पना का प्रयोग किया जाता है। इसमें समष्टि (population) से लिए गए एक प्रतिदर्श (sample) के आधार पर एक समष्टि प्राचक के बारे में अनुमितियां निकालने के लिए एक प्रतिदर्श आंकड़ों का चयन किया जाता है और उसका प्रयोग किया जाता है। सांख्यिकीय अनुमिति में निम्नलिखित दो प्रकार की समस्याओं का अध्ययन किया जाता हैः

क) **प्राक्कल्पना परीक्षण (Hypothesis testing):** इसमें समष्टि से लिए गए प्रतिदर्श पर आधारित मूल समष्टि से लिए गए प्रतिदर्श पर आधारित मूल समष्टि के बारे में कुछ प्राक्कल्पनाओं का परीक्षण किया जाता है।

ख) **आकलन (estimation):** इसमें समष्टि से लिए गए प्रतिदर्श पर आधारित समष्टि के अज्ञात 'प्राचल' (parameter) के एक आकलन के रूप में प्रतिदर्श से प्राप्त किए गए आंकड़ों का प्रयोग किया जाता है।

क) **प्राक्कल्पना का परीक्षण**: नीचे आयेगा, इसमें सबसे पहले समष्टि प्राचल के संबंध में एक कल्पना की जाती है जिसे प्राक्कल्पना कहा जाता है।

प्राक्कल्पना के परीक्षण में निम्नलिखित चरण लागू किए जाते हैं:

i) एक प्राक्कल्पना का सूत्रण

ii) एक उपयुक्त सार्थकता-स्तर (significance level) का निर्णयन

iii) एक परीक्षण निकष (test criterion) का चयन

iv) परिकलन (calculation)

v) निर्णयन

आइए हम इन पांच चरणों में से प्रत्येक चरण पर संक्षेप में चर्चा करें।

i) **प्राक्कल्पना का सूत्रण:** सबसे पहले एक समष्टि प्राचल से संबंधित एक प्राक्कल्पना स्थापित की जाती है। इसके बाद प्रतिदर्श आंकड़े एकत्रित किए जाते हैं, प्रतिदर्श के आंकड़े परिकलित किए जाते हैं और इस प्रकार प्राप्त की गई सूचना का प्रयोग यह निर्धारित करने के लिए किया जाता है कि परिकल्पित प्राचल कितना सही है। प्रतिदर्श माध्य के परिकल्पित मान और वास्तविक मान के बीच के अंतर से कल्पना की मान्यता का परीक्षण हो जाता है।

पारंपरिक रूप से एक प्राक्कल्पना न करके, दो प्राक्कल्पनाएं निर्मित की जाती हैं। ये प्राक्कल्पनाएं इस प्रकार की जाती हैं कि यदि एक प्राक्कल्पना स्वीकार की जाती हो तो दूसरी प्राक्कल्पना अस्वीकार हो जाती है। ये दो प्राक्कल्पनाएं निम्न हैं

क) निराकरणीय प्राक्कल्पना (null hypothesis) जिसे H_0 से प्रकट किया जाता है

ख) वैकल्पिक प्राक्कल्पना (alternative hypothesis) जिसे H_A से प्रकट किया जाता है।

सरलतम रूप में निराकरणीय प्राक्कल्पना के अनुसार, प्रतिदर्श आंकड़ों और समष्टि प्राचल में कोई वास्तविक अंतर नहीं है। इसके अनुसार, प्रतिचयन (sampling) में उच्चावचन (fluctuations) होने के कारण प्रेक्षित अंतर आकस्मिक और/या अमहत्वपर्णू होता है। उदाहरण के रूप में यदि एक अनुसंधानकर्त्ता इस बात का परीक्षण करना चाहता है कि एक समुदाय के प्रति व्यक्ति की वार्षिक आय रु. 10,000/- से अधिक है, तो वह निराकरणीय प्राक्कल्पना और वैकल्पिक प्राक्कल्पना इस प्रकार सूत्रित कर सकता है।

निराकरणीय प्राक्कल्पना (H_O): $\mu = 10,000$

वैकल्पिक प्राक्कल्पना (H_A)): $\mu > 10,000$

एक अन्य उदाहरण के रूप में शोधकार की दो वर्गों की प्रति व्यक्ति की वार्षिक आय के बीच के माध्य अंतर का परीक्षण करने की इच्छा है। इस स्थिति में उसे निराकरणीय प्राक्कल्पना और वैकल्पिक प्राक्कल्पना इस प्रकार सूत्रित करनी होगी

निराकरणीय प्राक्कल्पना (H_O): $\mu_1 - \mu_2 = 0$

वैकल्पिक प्राक्कल्पना (H_O): $\mu_1 - \mu_2 \Sigma 0$

ii) **एक उपयुक्त सार्थकता स्तर की स्थापना:** प्राक्कल्पनाओं का परीक्षण करने में अगला चरण H_A के विरुद्ध H_0 की मान्यता का परीक्षण करने के लिए एक उपयुक्त सार्थकता-स्तर (significance level) स्थापित करना है। जिस विश्वस्तता से एक निराकरणीय प्राक्कल्पना को स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है वह अपनाए गए सार्थकता स्तर पर निर्भर करता है।

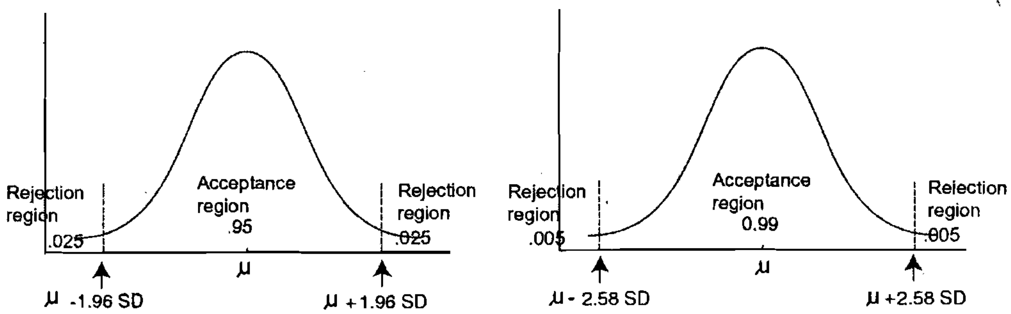

5% प्रायिकता स्तर   1% प्रायिकता स्तर

चित्र 18.1: निराकरणीय प्राक्कल्पना का स्वीकरण (या अस्वीकरण) 5% और 1% पर (द्विपुच्छ)

पारंपरिक रूप से सार्थकता-स्तर को प्रतिशत में, जैसे 5% या 1%, व्यक्त किया जाता है। पहली स्थिति में, इसका अर्थ यह होगा कि एक निराकरणीय प्राक्कल्पना के अस्वीकार करने की प्रायिकत 5% है, चाहे यह प्राक्कल्पना सत्य ही क्यों न हो। इसका अर्थ यह है कि एक शोधकार द्वारा एक सत्य प्राक्कल्पना को अस्वीकार करने का संयोग (chance) 100 में से 5 है (देखिए चित्र 18.1)

MAADHYAM IAS

iii) **एक परीक्षण निकष का चयन:** प्राक्कल्पना परीक्षण का अगला चरण एक परीक्षण निकष (criterion) स्थापित करना है। एक विशेष परीक्षण के लिए एक उपयुक्त प्रायिकता बंटन (probability distribution) का चयन किया जाता है जिसे लागू किया जा सकता हो। कुछ सामान्य प्रायिकता बंटन हैं $\div^2$, t और F

iv) **परिकलन:** विभिन्न प्रतिदर्शजों और प्रतिदर्श पर आधारित इनकी मानक त्रुटियों (standard error) का अभिकलन किया जाता है।

ख) **निर्णयन:** इस चरण में निराकरणीय प्राक्कल्पना को अस्वीकार या स्वीकार करने के लिए सांख्यिकीय निष्कर्ष निकाले जाते हैं और निर्णय लिए जाते हैं, जो इस बात पर निर्भर करता है कि अभिकलित मान स्वीकरण प्रदेश (region of acceptance) या अस्वीकरण प्रदेश (region of rejection) के अंतर्गत आता है या नहीं। (देखिए अनुभाग 18.3 में स्थिति 1 और स्थिति 2)

सोचें और करें 18.1

आइए हम यह मान लें कि आपका शोध ऐसा है जिसमें निराकरणीय प्राक्कल्पना और वैकल्पिक प्राक्कल्पना दोनों ही हैं। आपको वैकल्पिक प्राक्कल्पना के विरुद्ध निराकरणीय प्राक्कल्पना की मान्यता का परीक्षण करने के लिए एक उपयुक्त सार्थकता स्तर स्थापित करना है। इस कार्य और आगे आने वाले कार्यों के लिए पाठ में दी गई क्रियाविधि को अपनाइए। इसके बाद आपको एक परीक्षण निकष स्थापित करने की आवश्यकता होगी। इसके लिए आप एक उपयुक्त प्रायिकता बंटन का चयन कीजिए जिसे विशेष परीक्षण में लागू किया जा सकता है। इसके बाद विभिन्न प्रतिदर्शजों और उनकी मानक त्रुटियों का

अभिकलन कीजिए। अब प्रतिदर्श सांख्यिकीय निष्कर्षों के आधार पर निराकरणीय प्राक्कल्पना को अस्वीकार करने या स्वीकार करने के संबंध में निर्णय लीजिए। यह इस बात पर निर्भर करता है कि अभिकलित किया गया मान स्वीकरण प्रदेश के अंतर्गत आता है या अस्वीकरण प्रदेश के अंतर्गत। आप अपनी अनुसंधान परियोजना में लागू होने वाले चरण स्थापित कीजिए और इन्हें अपने शोध कार्य की रिपोर्ट में निगमित कीजिए।

18.3 स्थितियां (Case)

स्थिति 1: यदि प्राक्कल्पना का परीक्षण 5% स्तर पर किया गया हो और प्रेक्षित परिणाम की प्रायिकता 5% से कम हो तो प्रतिदर्श आंकड़ों और समष्टि प्राचल (population parameter) के बीच का अंतर सार्थक होता है और इसकी व्याख्या केवल संयोग से नहीं की जा सकती है। इस तरह निराकरणीय प्राक्कल्पना (H_O) अस्वीकार कर दी जाती है और वैकल्पिक प्राक्कल्पना (H_A) स्वीकार कर ली जाती है।

स्थिति 2: यदि प्राक्कल्पना का परीक्षण 5% के स्तर पर किया जा रहा हो और प्रेक्षित परिणाम की प्रायिकता 5% से अधिक हो तो प्रतिदर्श आंकड़ों और समष्टि प्राचल के बीच का अंतर सार्थक नहीं होता और तब इसकी व्याख्या संयोग विचरण (chance variation) से की जा सकती है। इस तरह, निराकरणीय प्राक्कल्पना (H_O) स्वीकार कर ली जाती है और तब वैकल्पिक प्राक्कल्पना (H_A) अस्वीकार कर दी जाती है।

प्राक्कल्पना का परीक्षण करने के लिए निम्नलिखित तथ्यों को समझना आवश्यक होता है:

i) एक-पुच्छ और द्वि-पुच्छ (two tailed) प्राक्कल्पना परीक्षण; और

ii) प्रथम और द्वितीय प्रकार की त्रुटियाँ (type I and type II errors)

i) एक-पुच्छ और द्वि-पुच्छ प्राक्कल्पना परीक्षण

शोध समस्या के अनुसार निराकरणीय और वैकल्पिक प्राक्कल्पनाओं को इस प्रकार परिभाषित किया जाता है कि परीक्षण को एक-पुच्छ परीक्षण और द्वि-पुच्छ परीक्षण कहा जाता है। प्राक्कल्पना का द्वि-पुच्छ परीक्षण उस स्थिति में निराकरणीय प्राक्कल्पना को अस्वीकार कर देता है जबकि प्रतिदर्श आंकड़े समष्टि प्राचल से सार्थक रूप में अधिक या कम हों। इस तरह, प्राक्कल्पना के द्वि-पुच्छ परीक्षण में अस्वीकरण प्रदेश दोनों पुच्छ पर स्थित होता है और अस्वीकरण प्रदेश का आमाप (size) .025 होता है, जबकि केन्द्रीय स्वीकरण प्रदेश .95 है (चित्र 18.2)। यदि प्रतिदर्श माध्य, $\mu \pm 1.96$ SD (अर्थात् स्वीकरण प्रदेश) के अंतर्गत आता हो तो प्राक्कल्पना स्वीकार कर ली जाती है और यदि इसके विपरीत यह $\mu \pm 1.96$ SD के परे होता हो तो प्राक्कल्पना अस्वीकार कर दी जाती है, क्योंकि यह अस्वीकरण प्रदेश के अंतर्गत आता है।

आइए हम दो-पुच्छ प्राक्कल्पना का एक उदाहरण लें। मान लीजिए एक शोधकार को यह ज्ञात करने की इच्छा है कि बुद्धि लब्धि में लिंग संबंधी कोई अंतर होता है या नहीं। इस संबंध में आपको निम्नलिखित प्राक्कल्पनाओं का सूत्रण करना होगा।

महिलाओं की बुद्धि लब्धि = पुरुषों की बुद्धि लब्धि (निराकरणीय प्राक्कल्पना)

महिलाओं की बुद्धि लब्धि ± पुरुषों की बुद्धि लब्धि प्राक्कल्पना) (वैकल्पिक प्राक्कल्पना) या दूसरे शब्दों में महिलाओं की बुद्धि लब्धि पुरुषों की बुद्धि लब्धि से कम या अधिक हो सकती है।

MAADHYAM IAS

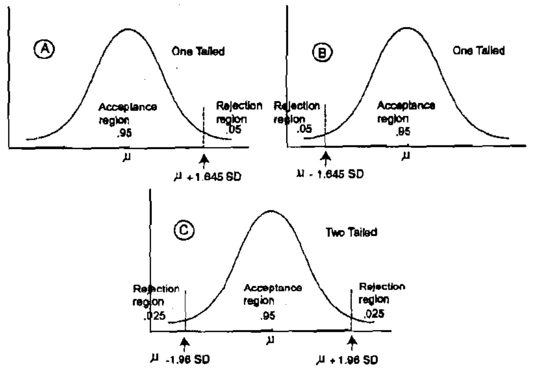

चित्र 18.2: प्राक्कल्पना का एक पुच्छ और द्वि-पुच्छ परीक्षण। (क) और (ख) एक पुच्छ हैं जबकि (ग) द्वि-पुच्छ है।

द्वि-पुच्छ प्राक्कल्पना के विपरीत एक-पुच्छ प्राक्कल्पना में अस्वीकरण प्रदेश केवल एक-पुच्छ पर स्थित होगा (देखिए चित्र 18.2) इस स्थिति में, यदि प्राक्कल्पना का परीक्षण 5 % के प्रायिकता स्तर पर किया जा रहा हो तो अस्वीकरण प्रदेश का आमाप .05 होगा। यदि प्रतिदर्श माध्य μ + 1.645 SD (स्थिति क, चित्र 2) से अधिक हो या μ - 1.645 SD (चित्र 18.2 की स्थिति ख देखिए) से कम हो, तो प्राक्कल्पना अस्वीकार कर दी जाती है, क्योंकि यह अस्वीकरण प्रदेश के अंतर्गत आता है।

आइए हम एक-पुच्छ प्राक्कल्पना से संबंधित एक उदाहरण लें। मान लीजिए एक शोधकार को यह ज्ञात करने की इच्छा है कि महिलाओं की बुद्धि लब्धि पुरुषों की बुद्धि लब्धि से अधिक है या नहीं, इस स्थिति में आपके द्वारा निम्नलिखित प्राक्कल्पनाओं का सूत्रण किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

महिलाओं की बुद्धि लब्धि > पुरुषों की बुद्धि लब्धि (निराकरणीय प्राक्कल्पना)

महिलाओं की बुद्धि लब्धि = पुरुषों की बुद्धि लब्धि (वैकल्पिक प्राक्कल्पना)

ii) प्रथम और द्वितीय प्रकार की त्रुटियां

i) उस स्थिति में शोधकार का निर्णय सही होता है जबकि वास्तविक प्राक्कल्पना को स्वीकार कर लिया जाता है और असत्य प्राक्कल्पना को अस्वीकार कर दिया जाता है। प्राक्कल्पना का एक-पुच्छ और द्वि-पुच्छ परीक्षण और

ii) प्रथम और द्वितीय प्रकार की त्रुटियाँ

	H_0 का स्वीकरण	H_0 का अस्वीकरण
H_0 सत्य है	सही निर्णय	प्रथम प्रकार की त्रुटि
H_0 असत्य है	द्वितीय प्रकार की त्रुटि	सही निर्णय

चित्र 18.3: प्राक्कल्पना के परीक्षण में प्रथम और द्वितीय प्रकार की त्रुटियां

प्रथम प्रकार की त्रुटि को α (अल्फा) से प्रकट किया जाता है जबकि द्वितीय प्रकार की त्रुटि को β (बीटा) से प्रकट किया जाता है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि दोनों प्रकार की त्रुटियां एक साथ कम नहीं हो सकती है क्योंकि यदि प्रतिदर्श-आमाप अपरिवर्तित हो, तो एक त्रुटि में कमी होने पर दूसरी त्रुटि में वृद्धि हो जाती है। इस तरह, प्रथम प्रकार की त्रुटि में कमी होने पर द्वितीय प्रकार की त्रुटि में वृद्धि होगी। अधिकांश सांख्यिकीय परीक्षण में सार्थकता स्तर (level of significance) 5% प्रायिकता स्तर (= 0.05) पर नियत कर दिया जाता है। इसका अर्थ यह है कि एक सत्य प्राक्कल्पना को स्वीकार करने की प्रायिकता 95% होनी चाहिए। कभी-कभी सार्थकता स्तर 1% प्रायिकता स्तर (= 0.01) पर नियत कर दिया जाता है। इस स्थिति में एक सत्य प्राक्कल्पना को स्वीकार करने की प्रायिकता 99% है। ऐसी स्थिति में, एक असत्य प्राक्कल्पना को स्वीकार करने की प्रायिकता भी अधिक होगी।

सोचें और करें 18.2

उसी उदाहरण को लेकर आप प्राक्कल्पना का परीक्षण कीजिए जिसे आपने सोचें और करें 18.1 में लिया था। यहाँ अब आपको अपनी प्राक्कल्पना के दोनों परीक्षण अर्थात् एक-पुच्छ परीक्षण और द्वि-पुच्छ परीक्षण करने की आवश्यकता है। यदि प्रतिदर्श-प्रतिदर्शज समष्टि प्राचल से सार्थकतः अधिक या कम हो, तो प्राक्कल्पना का द्वि-पुच्छ परीक्षण निराकरणीय प्राक्कल्पना को अस्वीकार कर देगा। प्राक्कल्पना के द्वि-पुच्छ परीक्षण में अस्वीकरण प्रदेश दोनों पुच्छ पर स्थित होता है और अस्वीकरण प्रदेश का आमाप 0.25 होता है, जबकि केन्द्रीय स्वीकरण प्रदेश .95 होता है। द्वि-पुच्छ प्राक्कल्पना के विपरीत आपको यह स्पष्ट होगा कि एक-पुच्छ प्राक्कल्पना में अस्वीकरण प्रदेश केवल एक पुच्छ पर स्थित होगा। इसी प्रकार, आपको प्रथम प्रकार की त्रुटि और द्वितीय प्रकार की त्रुटि परीक्षण करने की आवश्यकता होगी। प्रथम प्रकार की त्रुटि को α से और द्वितीय प्रकार की त्रुटि को β से प्रकट कीजिए। जैसा कि ऊपर स्मरण रखना चाहिए कि दोनों प्रकार की त्रुटियां एक साथ कम नहीं होती है; क्योंकि एक में कमी होने पर दूसरे में, दूसरे में वृद्धि हो जाएगी जबकि प्रतिदर्श आमाप अपरिवर्तित बना रहता हो। यदि आप भाग 18.3 के पाठ का अनुसरण करें तो आपके लिए अपने शोध की प्राक्कल्पना पर दोनों परीक्षण-समुच्च्य करना संभव होगा। ध्यान रहे कि इसे आप अपने शोध कार्य की रिपोर्ट में अवश्य सम्मिलित कर लें।

MAADHYAM IAS

18.4 सार्थकता परीक्षण (Tests of Significance)

i) काई-वर्ग परीक्षण ($\div^2$)

संभवतः सभी अप्राचलिक परीक्षणों में काई-वर्ग परीक्षण का सबसे अधिक प्रयोग होता है। यह तब लागू होता है जबकि आंकड़े थोड़े और वर्गीकृत होते हैं। आपको प्रेक्षित बारंबारता (observed frequency) और प्रत्याशित बारंबारता (expected frequency) में अंतर स्पष्ट हो सकता है।

$$\div^2 = \Sigma(O - E)^2 / E)$$

जहाँ O और E क्रमशः प्रेक्षित बारंबारता और प्रत्याशित बारंबारता है। एक निर्दिष्ट सार्थकता स्तर (अर्थात् 5%) पर दी हुई स्वातंत्र्य कोटि (degree of freedom) पर $\div^2$ के सारणी मान के साथ $\div^2$ के परिकलित मान की तुलना की जाती है। यदि $\div^2$ का परिकलित मान, $\div^2$ के सारणी मान से अधिक है तो सिद्धांत और प्रेक्षण के बीच के अंतर को सार्थक माना जाता है। इसके विपरीत, यदि $\div^2$ का परिकलित मान $\div^2$ के सारणी मान से कम है, तो सिद्धांत और प्रेक्षण के बीच के अंतर को असार्थक माना जाता है।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि $\div^2$ के सारणी मान (table value) के साथ $\div^2$ के परिकलित मान की तुलना करते समय स्वातंत्र्य कोटि (degree of freedom) वर्गों की वह संख्या है जिसे सीमाओं या प्रतिबंधों का उल्लंघन किए बिना इच्छानुसार या

स्वैच्छिक (arbitrarily) मान दिए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी को ऐसी चार संख्याओं को चुनना है जिनका योग 100 है तो चयन करने की स्वतंत्रता केवल तीन संख्याओं का चयन स्वतः हो जाता है। उदाहरण के लिए, यदि तीन संख्याएँ 14, 26, 32 हों, तो चौथी संख्या नियत हो जाती है और यह संख्या 28 (100-(14+26+32)) होगी। इस स्थिति में स्वातंत्र्य कोटि तीन है। काई-वर्ग का प्रयोग अनेक कार्यों में किया जाता है। ऐसे अनेक परीक्षण हैं जो कि $\div^2$ के काफी निकट है। यहां हमने समंजन सुष्ठुता परीक्षण (test of goodness of fit) और समांगता/साहचर्य (test of homogeneity/association) परीक्षण प्रस्तुत किये हैं।

ii) **समंजन सुष्ठुता परीक्षण (test of goodness of fit):** प्रायः हम यह जानना चाहते हैं कि प्रेक्षित बारंबारताएं प्रत्याशित सैद्धांतिक बंटन की प्रायिकता से मेल खाती है या नहीं। इस संबंध में निम्नलिखित चरण लागू किए जा सकते हैं।

चरण 1: निराकरणीय प्राक्कल्पना और वैकल्पिक प्राक्कल्पना परिभाषित कीजिए

चरण 2: प्रायिकता सतर निर्धारित कीजिए

चरण 3: सिद्धांत और प्रायिकता पर आधारित प्रत्येक संवर्ग के लिए प्रत्याशित बारंबारता E आकलित कीजिए।

चरण 4: काई-वर्ग परिकलित कीजिए।

चरण 5: स्वातंत्र्य कोटि ज्ञात कीजिए।

चरण 6: सारणी के काई-वर्ग के साथ प्रेक्षित काई-वर्ग की तुलना कीजिए। निराकरणीय प्राक्कल्पना को स्वीकार/अस्वीकार कीजिए

एक उदाहरण के लिए कोष्ठक 18.1 देखिए।

कोष्ठक 18.1 उदाहरणः परीक्षण कीजिए कि एक परिवहन विधा दूसरी परिवहन विधा से सार्थक रूप से उत्तम है या नहीं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

	परिवहन विधा					
बारंबारताएँ	कार	बस	मेट्रो	स्कूटर	ट्रेन	कुल जोड़
प्रेक्षित	18	21	19	20	22	100
प्रत्याशित	20	20	20	20	20	100

हलः

चरण 1: निराकरणीय प्राक्कल्पना। परिवहन के प्रकार के चयन में कोई सार्थक अंतर नहीं है। वैकल्पिक प्राक्कल्पना परिवहन के प्रकार के चयन में सार्थक अंतर है।

चरण 2: प्राक्कल्पना परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5% है।

चरण 3: सभी संवर्गों की प्रत्याशित बारंबारताएँ (20) इस बाता पर आधारित है कि परिवहन के प्रकार का समान चयन है।

चरण 4: परिकलन

$\div^2 = \Sigma(O - E)^2 / E)$

$\div^2 = [(18 - 20)^2 / 20)] + [(21 - 20)^2 / 20)] + [(19 - 20)^2/20)] + [(20-20)^2/20)] + [(22-20)^2/20)]$

$\div^2 = 4/20 + 1/20 + 1/20 + 0 + 4/20 = 10/20 = 0.5$

चरण 5: स्वातंत्र्य कोटि = k-1 = 5-1 = 4

चरण 6: स्वातंत्र्य कोटि 4 के लिए 5% के प्रायिकता स्तर पर काई-वर्ग का सारणी मान = 9.49 $\div^2$ का (0.5) काई-वर्ग के सारणी मान (9.49) से कम है। इस तरह, निराकरणीय प्राक्कल्पना स्वीकार कर ली जाती है और सिद्धांत और प्रेक्षण के बीच का अंतर सार्थक नहीं है और परिवहन के प्रकार के चयन में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

iii) **साहचर्य/समांगता परीक्षण (Test of association/homogeneity):** इस प्रकार के ÷² का प्रयोग दो कार्यों के लिए किया जाता है। पहला कार्य यह देखना है कि अनेक गुणों में से दो गुण सहचारी है या नहीं (साहचर्य परीक्षण) (test of association)। दूसरा कार्य यह ज्ञात करना है कि दो प्रतिदर्शों को एक ही समष्टि से लिया गया है या नहीं (समांगता परीक्षण) (test of homogeneity)। पहली स्थित में आंकड़े एक प्रतिदर्श पर आधारित है जबकि दूसरी स्थिति में दो या अधिक प्रतिदर्श है।

काई-वर्ग, जो एक अप्राचलिक परीक्षण है, विश्वास्यता (confidence) का एक स्थूल आकलन है। यह निवेश के रूप में प्राचलिक परीक्षणों, जैसे t- परीक्षण और प्रसरण-विश्लेषण की अपेक्षा यह दुर्बल, कम परिशुद्ध आंकड़ों को स्वीकार करता है। अतः सांख्यिकीय परीक्षणों के देवकुल में इसकी अवस्थिति कम होती है। फिर भी, इसकी सीमाएँ भी इसकी शक्ति हैं, क्योंकि आंकड़ों में काई-वर्ग अधिक पुराने हैं, इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों में किया जा सकता है।

समांगता परीक्षण के लिए काई-वर्ग विधि में वे ही चरण लागू किए जाते हैं जो समंजन सुष्ठुता परीक्षण (test of goodness of fit) में लागू किए जाते हैं। अंतर केवल यह है कि चरण 3 में प्रत्येक कोष्ठिका के लिए प्रत्याशित बारंबारताएँ परिकलित की जाती हैं। जैसा कि नीचे दिखाया गया है।

समष्टि	**गुण**			**कुल योग**
	संवर्ग 1	**संवर्ग 2**	**संवर्ग 3**	
समष्टि 1	A	B	C	N_1
समष्टि 2	D	E	F	N_2
समष्टि 3	N_3	N_4	N_5	N

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठिका A की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_1 * N_3) / N$

कोष्ठिका B की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_1 * N_4) / N$

कोष्ठिका C की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_1 * N_5) / N$

कोष्ठिका D की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_2 * N_3) / N$

कोष्ठिका E की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_2 * N_4) / N$

कोष्ठिका F की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_2 * N_5) / N$

यह ज्ञात करने के लिए कोष्ठक 18.2 को एक उदाहरण के रूप में लीजिए कि दो वर्गों की आय में कोई अंतर है या नहीं। इस उदाहरण के आधार पर साहचर्य/समांगता का परीक्षण करने के लिए आप एक अन्य स्थिति ले सकते हैं।

कोष्ठक 18.2: यह देखने का उदाहरण कि झीलों और मीनाओं की आय में कोई अंतर है या नहीं।

समष्टि	**आय वर्ग**		
	उच्च	मध्य	निम्न
झील	28	41	65
मीना	31	43	55

हल

चरण 1: निराकरणीय परिकल्पना : भीलों और मीणाओं की आय में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

वैकल्पिक परिकल्पना : भीलों और मीणाओं की आय में सार्थक अंतर है।

चरण : 2 परिकल्पना-परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5 प्रतिशत है।

चरण : 3 प्रत्याशित बारंबारताएं नीचे दी गई है।

		आय वर्ग					कुल योग
				प्रक्षित			
समष्टि		**उच्च**		**मध्य**		**निम्न**	
	प्रेक्षित	**प्रत्याशित**	**प्रेक्षित**	**प्रत्याशित**	**प्रेक्षित**	**प्रत्याशित**	
भील	28	30.06	41	42.80	65	61.14	1.34
मीणा	31	28.94	43	41.20	55	58.86	129
कुलयोग	59	59.00	84	84.00	120	120.00	263

कोष्ठिक A की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_1 * N_3)/N = 134 * 59 / 263 = 30.06$

कोष्ठिका B की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_1 * N_4)/N = 134 * 84/263 = 42.80$

कोष्ठिका C की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_1 * N_5)/N = 134 * 120/263 = 61.14$

कोष्ठिका D की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_2 * N_3)/N = 129 * 59/263 = 28.94$

कोष्ठिका E की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_2 * N_4)/N = 129 * 84/263 = 41.20$

कोष्ठिका F की प्रत्याशित बारंबारता $= (N_2 * N_5)/N = 129 * 120/263 = 58.86$

चरण 4 : परिकलनः

$\div^2 = \Sigma ((O - E)^2 / E)$

$\div^2 = ((28 - 30.06)^2 / 30.06) + ((41 - 42.80)^2 / 42.80) + ((65 - 61.14)^2 / 61.14) + ((31 - 28.94)^2 / 28.94) + ((43 - 41.20)^2 / 41.20) + ((55 - 58.86)^2 / 58.86)$

$= 0.141 + 0.076 + 0.244 + 0.147 + 0.079 + 0.253 = 0.940$

MAADHIYAM IAS

चरण 5 : स्वातंत्र्य कोटि (degrescs of freedum) :

= [(पंक्तियों की संख्या–1)* (स्तंभों की संख्या–1)] = (2-1) * (3 - 1) = 2

चरण 6 : स्वातंत्र्य कोटि 2 के लिए 5 प्रतिशत के प्रायिकता स्तर पर कोई वर्ग का सारणी मान = 5.991 $\div^2$ का परिकलित मान (0.940), X^2 के सारणी मान (5.991) से कम है। अतः निराकरणीय संकल्पना स्वीकार कर ली जाती है और सिद्धांत तथा प्रेक्षण के बीच का अंतर असार्थक है और भीलों तथा मीणाओं की आय में कोई सार्थक अंतर नहीं हैं।

$\div^2$ का परिकलन करने की एक लघु विधि है जबकि बारंबारता बंटन को 2×2 आसंग सारणी (contingency table) में विन्यासित किया गया हो जैसा कि चित्रा 18.3 में दिखाया गया है।

	चार 1 संवर्ग 1	**चार 2 संवर्ग 2**	**कुल योग**
प्रतिदर्श 1	A	B	A+B
प्रतिदर्श 2	A	D	C+D
कुल योग	A+C	B+D	N=A+B+C+D

चित्र 18.3: परिकलन करने की लघु विधि

$\div^2$ N* (A*D - B*C)^2/(A + B) * (C + D)* (A + C)* (B + D)

सार्थकता को सुनिश्चित करने के लिए निर्दिष्ट प्रायिकता स्तर पर सारणी के मान 1d.f के विरुद्ध $\div^2$ के परिकलित मान की जांच की जाती है। व्यवसायों के अनुसार पुरुषों और महिलाओं के बीच के सार्थक अंतर ज्ञात करने के लिए कोष्ठक 18.3 देखिए।

कोष्ठक 18.3: कुशल श्रमिकों के रूप में काम कर रहे लोगों के लिंग के आधार पर सार्थक अंतर की जांच से संबंधित उदाहरण।

लिंग	कुशल श्रमिक	अकुशल श्रमिक
पुरुष	47	56
महिला	32	71

हल :

चरण 1 : निराकरणीय परिकल्पना : कुशल और अकुशल श्रमिकों में कोई सार्थक लिंग अंतर है।

वैकल्पिक परिकल्पना : कुशल और अकुशल श्रमिकों में सार्थक लिंग अंतर हैं।

चरण 2 : परिकल्पना : परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5 प्रतिशत है।

चरण 3 : परिकलन

लिंग	कुशल श्रमिक	अकुशल श्रमिक	कुल योग
पुरुष	47	56	103
महिला	32	71	103
कुल योग	79	127	206

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

N = 206 A*D = 3337 B*C = 1792

A + B = 103 C + D = 103 A + C = 79 B + D = 127

$\div^2$ = N* (A*D - B*C)^2 / (A + B) * (C + D)* (A + C)* (B + D)

$\div^2$ = 206* (3337 - 1792)^2 / 103 + 103 + 79 + 127

$\div^2$ = 491727150/ 106440097 = 4.620

चरण 4 : स्वातंत्र्य कोटि = {(पंक्तियों की संख्या–1)* (स्तंभों की संख्या–1)} = (2.1)* (2–1)=1

चरण 5 : स्वातंत्र्य कोटि 1 के लिए 5 प्रतिशत की प्रायिकता स्तर पर कोई-वर्ग का सारणी मान है 3-841 $\div^2$ का परिकलित मान (4-620) $\div^2$ के सारणी मान (3-841) से अधिक है।

अतः निष्कर्ष के रूप में आपके लिए यह कहना संभव है कि निराकरणीय परिकल्पना अस्वीकार कर दी जाती हैं और कुशल तथा अकुशल श्रमिकों के बीच का लिंग अंतर सार्थक है।

iv) छात्र-टी-परीक्षण (Student's t test)

छात्र-टी-परीक्षण एक प्राचलिक परीक्षण है जो कि छोटे प्रतिदर्श के लिए अति उपयुक्त होता है। संभवतः व्यापक रूप से सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाला एक सांख्यिकीय परीक्षण हैं। साथ ही यह एक सबसे अधिक प्रचलित परीक्षण है। यह एक सरल और स्पष्ट परीक्षण है जिसका प्रयोग सरलता से किया जा सकता है और इसे विभिन्न प्रकार की स्थितियों के

अनुकूल बनाया जा सकता है। इसके बिना कोई भी सांख्यिकीय साधन पूर्ण नहीं माना जाना चाहिए। छात्र ने (जिसका वास्तविक नाम डब्ल्यू. एड. गोसट है) ब्रेवरी में (जहां वह काम कर रहा था) आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए सांख्यिकीय विधियां विकसित की। काई-वर्ग की भांति छात्र-ए-परीक्षण का प्रयोग करने के लिए निम्नलिखित चरण लागू किए जा सकते हैं।

चरण 1 : निराकरणीय और वैकल्पिक परिकल्पनाएं परिभाषित कीजिए।

चरण 2 : प्रायिकता स्तर निर्धारित कीजिए :

चरण 3 : उपयुक्त सूत्र को लागू करके t का मान परिकलित कीजिए।

चरण 4 : स्वातंत्र्य कोटि ज्ञात कीजिए।

चरण 5 : प्रेक्षित काई वर्ग की तुलना सारणीकृत काई वर्ग से कीजिए। निराकरणीय परिकल्पना को स्वीकार या अस्वीकार कीजिए।

स्टूडेंट t परीक्षण को विभिन्न स्थितियों में लागू किया जाता है, जैसे

क) एक यादृच्छिक प्रतिदर्श (random sample) के माध्य की सार्थकता का परीक्षण करना।

ख) दो स्वतंत्र प्रतिदर्शों के माध्यों के बीच के अंतर का परीक्षण करना।

ग) दो आश्रित प्रतिदर्शों के माध्यों के बीच के अंतर का परीक्षण करना,

घ) सहसंबंध गुणांक (Correlation Coeficient) की सार्थकता का परीक्षण करना।

आइए हम ऊपर उल्लेख किए गए प्रत्येक प्रतिबंध पर चर्चा करें।

क) एक यादृच्छिक प्रतिदर्श के माध्य की सार्थकता का परीक्षण करना। इस परीक्षण का प्रयोग तब किया जाता है जबकि शोधकार को यह देखना है कि सामान्य समष्टि (normal population) से लिए गए प्रतिदर्श का माध्य परिकल्पनात्मक समष्टि माध्य से सार्थकतः विचलित होता है या नहीं। इसके परिकलन के लिए निम्नलिखित सूत्र लागू किया जाता है :

$t = \{(M - \mu) * vn\} / 5$

जब वास्तविक माध्य का प्रयोग किया जाता है, तब

$S = v\,\Sigma\,[S\,(X - M)^2 / (n - 1)]$

जब कल्पित माध्य का प्रयोग किया जाता है, तब

$S = v\,[\{\Sigma d^2 - (d_m)^2 * n\} / (n - 1)]$

जहां M और U प्रतिदर्श और समष्टि के क्रमशः माध्य हैं।

n प्रतिदर्श आमाप है

s प्रतिदर्श का मानक विचलन है

d = X–A, जहां X एक चर है

d_m विचलन का माध्य है

A कल्पित माध्य है। आइए हम माध्य पोषण पदार्थ लेने का परीक्षण करने से संबंधित बाक्स 18 में एक उदाहरण लें।

बाक्स 18.4: 2000 कैलोरी वाली समष्टि में माध्य पोषण पदार्थ के अंतर्ग्रहण करने का परीक्षण करने से संबंधित एक उदाहरण पोषण पदार्थ (कैलोरी)

2300	2000	2150	1950	2000	2150	1900	1900	2250	2050

हल :

चरण 1 : निराकरणीय परिकल्पना : उस समष्टि का माध्य पोषण पदार्थ, जिससे प्रतिदर्श लिया गया है, 2000 कैलोरी है।

वैकल्पिक परिकल्पना : उस समष्टि का माध्य पोषण पदार्थ, जिससे प्रतिदर्श लिया गया है, 2000 कैलोरी नहीं है।

चरण 2 : परिकल्पना परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5 प्रतिशत है।

चरण 3 : परिकलन

पोषण पदार्थ (कैलोरी)	d=x-A	d^2
2300	300	90000
2000	0	0
2150	150	22500
1950	–50	2500
2000	0	0
2150	150	22500
1900	–100	10000
1900	–100	10000
2250	250	62500
2050	50	2500
20650	650	222500

$n = 10$ $\Sigma d^2 = 222500$ $d_m = 650 / 10 = 65$

$M = 20650 / 10 = 2065$ $\mu = 2000$

$S = v [\{\Sigma d^2 - (d_m)^2 * n\} / (n - 1)]$

$S = v [\{222500 - (65)^2 * 10\} / 9 = 141.52$

$t = \{(M - \mu) * vn\} / S = \{(2065 - 2000) * v (10)\} / 141.52 = 1.452$

चरण 4 : स्वातंत्र्य कोटि =10-1 = 9

चरण 5 : स्वातंत्र्य कोटि 9 के लिए 5 प्रतिशत के प्रायिकता स्तर पर t का सारणी मान 2.232 है। t का परिकलित मान (1.452) t के सारणी मान (2.232) से कम है।

इस तरह निराकरणीय परिकल्पना स्वीकार कर ली जाती है और अंतर सार्थक नहीं होता।

ख) **दो स्वतंत्र प्रतिदर्शों के माध्यों के बीच के अंतर का परीक्षण :** इस परीक्षण का प्रयोग तक किया जाता है जबकि शोधकार को यह देखना है कि दो स्वतंत्र प्रतिदर्शों के माध्यों में सार्थक अंतर है या नहीं। इसके परिकलन के लिए निम्नलिखित सूत्र को लागू किया जाता है

$t = [(M_1 - M_2) * v \{(n_1 * n_2) / (n_1 + n_2)\}] / S$

जब वास्तविक माध्य लिया जाता है, तब

$$S = v [\{\Sigma(X_1 - M_1)^2 + \Sigma(X_2 - M_2)^2\} / (n_1 + n_2 - 2)]$$

जब कल्पित माध्य लिया जाता है, तब

$$S = v [\{\Sigma d_1{}^2 + \Sigma d_2{}^2 - n_1 (M_1 - A_1)^2 n_2 (M_2 - A_2)^2] / (n_1 + n_2 - 2)]$$

जहां $d_1 = X_1 - A_1$ और $d_2 = X_2 - A_2$

M_1 और M_2 दो प्रतिदर्शों के माध्य हैं।

A_1 और A_2 दो प्रतिदर्शों के कल्पित माध्य हैं।

N_1 और N_2 प्रतिदर्श आमाप हैं और S उभयनिष्ठ मानक विचलन (standard deviation) है। संथालों और मुरियाओं के बीच की वैवाहिक दूरी ज्ञात करने के लिए हम कोष्ठक 18.5 में एक उदाहरण लें।

कोष्ठक 18.5: यह देखने के लिए लिया गया उदाहरण कि संथालों और मुरियाओं में वैवाहिक दूरी है या नहीं।

	वैवाहिक दूरी (किलोमीटर)									
संथाल	10	12	15	17	18	17	19	22	22	12
मुरिया	22	19	21	23	18	21	23	20	19	21

MAADHYAM IAS

हल

चरण 1 : निराकरणीय परिकल्पना : संथालों और मूरियाओं की वैवाहिक दूरी में कोई अंतर नहीं है।

वैकल्पिक परिकल्पना : संथालों और मूरियाओं की वैवाहिक दूरी में अंतर है

चरण 2 : परिकल्पना परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5 प्रतिशत है।

चरण 3 : परिकलन

संथाल			मुरिया				
X_1	$d_1=X_1-A_1$	$d_1{}^2$	X_2	$d_2=X_2A_2$	$D_2{}^2$	$A_1=$	$A_2=$
10	–6	36	22	2	4	16	20
12	–4	16	19	–1	1	16	20
15	–1	1	21	1	1	16	20
17	1	1	23	3	9	16	20
18	2	4	18	–2	4	16	20
17	1	1	21	1	1	16	20
19	3	9	23	3	9	16	20
22	6	36	20	0	0	16	20
22	6	36	19	–1	1	16	20
12	–4	16	21	1	1	16	20
164	4	156	207	7	–31		

$A_1 = 16$ $A_2 = 20$ $M_1 = 16.4$ $M_2 = 20.7$

$n_1 = 10$ $n_2 = 10$ $\Sigma d_1{}^2 = 156$ $\Sigma d_2{}^2 = 31$

$$S = v [\{\Sigma d_1{}^2 + \Sigma d_2{}^2 - n_1 (M_1 - A_1)^2 - n_2 (M_2 - A_2)^2 / (n_1 + n_2 - 2)]$$

$$S = v [\{156 + 31 - 10 (16.4 - 16)^2 - 10 (20.7 - 20)^2\} / (10 + 10 -2)]$$

$$S = v [\{156 + 31 - 10 (16.4 - 16)^2 - 10 (20.7 - 20)^2\} / (10 + 10 -2)]$$

S = v [180.5/18] = v10.028 = 3.167

t = [(M_1 - M_2) * v {(n_1*n_2) / (n_1 + n_2)}] / S

t = {(16.4 - 20.7)* v (10 / 20)}/ 3.167 = (4.3*2.236) / 3.167 = 3.036

चरण 4 : स्वातंत्र्य कोटि = 10+10-2=18

चरण 5 : स्वातंत्र्य कोटि 9 के लिए 5 प्रतिशत के प्रायिकता स्तर पर t का सारणी मान 2.101 है। t का परिकलित मान (3.036) t के सारणी मान (2.101) से अधिक है। तब आप यह कहें कि निराकरणीय परिकल्पना अस्वीकार कर दी जाती है और संथालों और मुरियों के बीच की वैवाहिक दूरी में अंतर सार्थक है।

ग) **दो आश्रित प्रतिदर्शों के माध्यों के बीच के अंतर का परीक्षण करना** : इस परीक्षण का प्रयोग तक किया जाता है जब शोधकार को यह देखना हो कि दो आश्रित प्रतिदर्शों के माध्यों में सार्थक अंतर है या नहीं। इसके परिकलन के लिए निम्नलिखित सूंत्र लागू किया जात है।

t = (d_m * v n) / S

S = v [Σ (d - d_m)^2 / (n - 1)] or

S = v [(Σ d^2 - (d_m)^2 * n) / (n - 1)]

जहां, d = X_1–X_2

d_m विचलनों का माध्य हैं;

n_1 और n_2 प्रतिदर्श आमाप हैं; और

s उभयनिष्ठ मानक विचलन है, दो शोधकारों के प्रेक्षणों के अंतरों को ज्ञात करने के लिए हमने कोष्ठक 18.6 में एक उदाहरण लिखा है।

कोष्ठक 18.6 उदाहरण : दो प्रेक्षकों ने 10 घरों की आप का विवरण लिया है। बताइए कि इनके पेक्षणों में सार्थक अंतर है या नहीं?

	घर संख्या									
प्रेक्षक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
प्रेक्षक 1	2400	1950	2200	1800	2050	2250	2000	1950	2300	2000
प्रेक्षक 2	2300	2000	2150	1950	2000	2150	1900	1900	2250	2050

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

हल :

चरण 1 : निराकरणीय परिकल्पना : दो प्रेक्षकों द्वारा किए गए प्रेक्षणों में अंतर सार्थक नहीं है। वैकल्पिक प्ररिकल्पना : दो प्रेक्षणों द्वारा किए गए प्रेक्षणों में अंतर सार्थक है।

चरण 2 : परिकल्पना परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5 प्रतिशत।

चरण 3 : परिकलन

घर संख्या	प्रेक्षक 1	प्रेक्षक 2	d=X_1-X_2	d^2
1	2400	2300	100	10000
2	1950	2000	–50	2500
3	2200	2150	50	2500
4	1800	1900	–150	22500
5	2050	2000	50	2500
6	2250	2150	100	10000
7	2000	1900	100	10000
8	1950	1900	50	2500
9	2300	2250	–50	2500
10	2000	2050	2.50	67500

$n = 10$ $\qquad d_m = 250/10 = 25$

$S = v\,[\Sigma\, d^2 - (d_m)^2 * n / (n - 1)]$

$S = v\,\{(67500 - (25)^2 * 10) / 9]$

$S = 82.496$

$t = (d_m * vn) / S$

$t = (25 * v\,10) / 82.496 = 0.958$

चरण 4 : स्वातंत्र्य कोटि = 10-1 = 9

चरण 5 : स्वातंत्र्य कोटि 9 के लिए 5 प्रतिशत के प्रायिकता स्तर पर t का सारणी मान 2.232 हैं। t का परिकलित मान (0.958) t के सारणी मान (2.232) से कम है।

अतः यह कहा जा सकता है कि निराकरणीय प्रकिल्पना स्वीकार कर ली जाती है और प्रेक्षकों के बीच का अंतर सार्थक नहीं है।

घ) **सहसंबंध गुणांक की सार्थकता का परीक्षण करना:** सह-संबंध गुणांक सार्थक है या नहीं, इसका परीक्षण निम्नलिखित सूत्र को लागू करके किया जा सकता है :

$$t = \frac{r * v\,(n - 2)}{v\,(1 - r^2)}$$

जहां r सह-संबंध गुणांक है और n प्रेक्षणों की संख्या है। स्वातंत्र्य कोटि n-2 है। सह-संबंध के महत्व का परीक्षण करने के लिए हमने कोष्ठक 18.7 में एक उदाहरण लिया है।

कोष्ठक 18.7 उदाहरण: सह-संबंध की सार्थकता का परीक्षण करने के लिए निम्नलिखित आंकड़ों का प्रयोग करने पर

$r = 0.45,\ n = 102$

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चरण 1 : निराकरणीय परिकल्पना : सह-संबंध गुणांक सार्थक नहीं है।

वैकल्पिक परिकल्पना : सह-संबंध गुणांक सार्थक है।

चरण 2 : परिकल्पना परीक्षण का प्रायिकता स्तर 5 प्रतिशत है

चरण 3 : **परिकलन**

$t = (r * v\,(n - 2)) / v(1 - r^2)$

$t = (0.45 * v\,(100)) / v\,(1 - 0.45 * 0.45)$

$t = (0.45 * 10) / v\,(1 - 0.2025) = 4.5 / v0.7975 = 4.5 / 0.893 = 5.039$

चरण 4 : **स्वातंत्र्य कोटि** = 102-2=100

चरण 5 : **स्वातंत्र्य कोटि** 100 के लिए 5 प्रतिशत के प्रायिकता स्तर पर t का सारणी मान 1.96 है। t का परिकलित मान (5.039), t के सारणी मान (1.96) से अधिक है। इस तरह हमें यह मिलता है कि निराकरणीय परिकल्पना अस्वीकार कर दी जाती है और सह-संबंध सार्थक होता है।

सोचें और करें 18.3

भाग 18.4 में दिए गए चार परीक्षणों में से एक परीक्षण लीजिए और अपने शोध कार्य के अनुसार इस पर क्रिया कीजिए। आप अपने शीघ्र कार्य की रिपोर्ट में इसका उल्लेख विस्तार से कीजिए।

18.5 निष्कर्ष

इकाई 18 में अनुमितियां निकालने की अनेक विधियों का उल्लेख किया गया है। इस संबंध में अनेक उदाहरण दिए गए हैं जिससे कि आप स्वयं उदाहरण बना सकें और उन्हें हल कर सकें। अधिक से अधिक उदाहरणों को हल करने से आपको परिकल्पनाओं का परीक्षण करने और समष्टि के अज्ञात प्राचलों का आकलन करने में महारथ हासिल हो जाएगी। परंतु यह बात ध्यान में रखनी आवश्यक है कि परिकल्पना के परीक्षण के लिए आपने जिस अभिकल्प का प्रयोग किया है, आपकी प्रायिकता के रूप में केवल सत्रिकर मान प्राप्त करने हैं। परिकल्पना का परीक्षण करने से आपको और अधिक परिकल्पनाओं को जनित करने का क्षेत्र मिल जाता है और इस तरह वैज्ञानिक ज्ञान में वृद्धि होती जाती है। प्रारंभिक सत्रिकरनों से मूल परिकल्पना का ठोस आधार मिल जाता है और तब आपके लिए और परिकल्पना प्राप्त करना संभव हो जाता है। यदि आप साध्यों के बीच संबंध स्थापित करें तो इसका अर्थ यह है कि आपने वैज्ञानिक ज्ञान जनित कर लिया है।

18.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

हैन्डेल, जे.डी. 1978, *स्टैटिस्टिक्स फॉर सोशियॉलोजी,* इंगलवुड क्लिफ. एन. जे.

वाट्सन, जी. और मैगाड 1980, *स्टैटिस्टिक्स इन्क्यारी : ऐलिमैंट्री स्टैटिस्टिक्स फॉर पोलिटिकल साइंस एंड पॉलिसी साइसेज,* जॉन वाइली न्यूयार्क।

सांख्यिकी शब्दावली का हिन्दी अनुवाद

अप्राचलिक	non-parametric
अनुमिति	interence
अभिकल्पना	hypothesis
अस्वीकरण प्रदेश	region of rejectim
आकलन	extimali
एक-पुच्छ परीक्षण	one-failed test
गुण	attribute
द्वि-पुच्छ परीक्षण	two-tailed test
निकष	criterion
निराकरणीय परिकल्पना	null hypothesis
परिकल्पना	hypothesis
प्रतिदर्श	sample
प्रतिदर्शज	statistic
मानक विचलन	standard deviation
विश्वस्यता स्तर	level of significane
वैकल्पिक परिकल्पना	alternative hypothesis
समंजन सुष्ठुता परीक्षण	tets of goodness of fit
समष्टि	population
सांख्यिकी अनुमिति	statistical interence
सार्थकता स्तर	level of significance
स्वातंत्र्य कोटि	degree of freedom
स्वीकरण प्रवेश	region of acceptance

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 19

सहसंबंध और समाश्रयण

इकाई की रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना

19.2 सहसंबंध

19.3 अवर्गीकृत आंकड़ों के सहसंबंध की गणना की विधियां धियां

19.4 वर्गीकृत आंकड़ों के सहसंबंध गुणांक की परिकलित करने की विधियां

19.5 समाश्रयण

19.6 निष्कर्ष

19.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 19 को पढ़ लेने के बाद आपके लिए संभव होगा:

- दो या अधिक चरों के बीच के सह विचरण विश्लेषण के महत्व को समझना;
- विभिन्न प्रकार के सहसंबंधों की व्याख्या करना;
- अवर्गीकृत और वगीकृत दोनों ही आंकड़ों के सहसंबंध की परिकलन विधियां बताना; तथा
- समाश्रयण विश्लेषण की विधि को समझना। यह एक या अधिक चर ज्ञात होने पर एक चर के मानों का आकलन करने में सहायक होती है।

MAADHYAM IAS

19.1 प्रस्तावना

इकाई 18 के अंतिम भाग में हमने साध्यों के बीच के संबंधों का उल्लेख किया है। आइए अब हम सहसंबंध और समाश्रयण के विषय पर चर्चा करें।

इकाई 19 सहसंबंध के बारे में है जो कि दो या अधिक चरों के बीच के सह-विचरण का एक विश्लेषण है। इस इकाई का अध्ययन करने पर आपको यह स्पष्ट होगा कि सहसंबंध का सांख्यिकीय साधन दो चरों के बीच के मात्रात्मक संबंध को मापने और व्यक्त करने में सहायक होता है। इकाई 19 में इस सांख्यिकीय साधन को लागू करने की विधियों की व्याख्या की गई है। इसमें सामाजिक विज्ञान में सहसंबंध गुणांक, निर्धारण गुणांक और समाश्रयण विश्लेषण का महत्व दर्शाया गया है। इसमें समाश्रयण विश्लेषण की व्याख्या भी की गई है जो कि एक या अधिक चरों को ज्ञात होने पर एक चर के मानों का आकलन करने की एक विधि है। इस बात की ओर ध्यान दिए बिना कि सहसंबंध का सांख्यिकीय साधन कठिन और जटिल होता है। इस इकाई में इस साधन को लागू करने के बारे में बताया गया है।

19.2 सहसंबंध (Correlation)

सहसंबंध दो या अधिक चरों के बीच के सह-विचरण का एक विश्लेषण है। जब दो चरों के बीच का संबंध मात्रात्मक होता है तो इस संबंध को मापने का और इसे एक संक्षिप्त सूत्र में व्यक्त करने के सांख्यिकीय साधन को सहसंबंध कहा जाता है। यदि एक चर में परिवर्तन होने पर दूसरे चर में संगत परिवर्तन होता है, तो ये दो चर सह-संबंधित होते हैं। आइए हम सहसंबंध के प्रकार पर चर्चा करें।

सहसंबंध के प्रकार (Types of correlation)

सहसंबध के प्रकार पर विचार करते समय हमने दो प्रकार के सहसंबंधों पर चर्चा की है:

क) धनात्मक (positive) और ऋणात्मक (negative) सहसंबंध

ख) रैखिक (linear) और अरैखिक (non-linear) सहसंबंध

क) धनात्मक और ऋणात्मक सहसंबंध

यदि दो चरों के मान एक ही दिशा में विचलित होते हों अर्थात् यदि एक चर के मान में वृद्धि होने पर दूसरे चर के मान में औसतन संगत वृद्धि होती हो या एक चर के मान में कमी होने पर दूसरे चर के मान में कमी होती हो, तो सहसंबंध को धनात्मक या अनुलोम (direct) सहसंबंध कहा जाता है। धनात्मक सहसंबंध के कुछ उदाहरण हैं: (i) ऊँचाई और भार (ii) भूमि का स्वामित्व और घरेलू आय। इसके विपरीत, यदि चर विपरीत दिशाओं में विचलित होते हों अर्थात् यदि एक चर के मान में वृद्धि (कमी) होने पर दूसरे चर के मान में कमी (वृद्धि) होती हो, तो इस स्थिति में सहसंबंध को ऋणात्मक या प्रतिलोम (indirect) सहसंबंध कहा जाता है। ऋणात्मक सहसंबंध के कुछ उदाहरण हैं: (i) भौतिक संपत्ति और गरीबी का स्तर, (ii) शरीर में ताकत और आयु। चित्र 19.1 में धनात्मक और ऋणात्मक प्रकार के सहसंबंध दिखाए गए हैं।

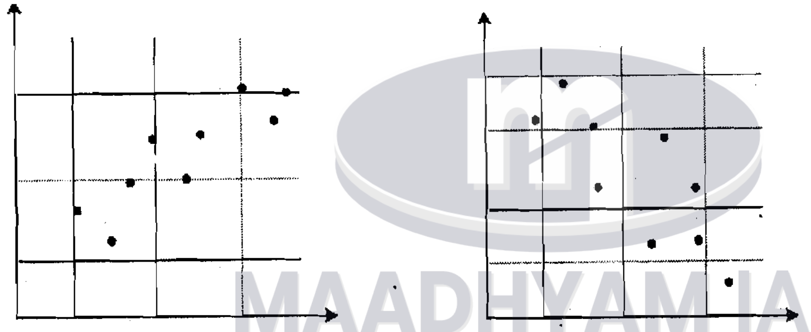

MAADHYAM IAS

चित्र 19.1:(क) धनात्मक सहसंबंध और (ख) ऋणात्मक सहसंबंध

सहसंबंध के मान -1 से +1 के बीच होता है। जब $r=+1$, तो इसका अर्थ यह है कि चरों के बीच परिपूर्ण धनात्मक सहसंबंध है और जब $r=-1$, तो इसका अर्थ यह है कि चरों के बीच परिपूर्ण ऋणात्मक सहसंबंध है। जब $r=0$, तो इसका अर्थ यह है कि दो चरों के बीच कोई सहसंबंध नहीं है (देखिए चित्र 19.2)

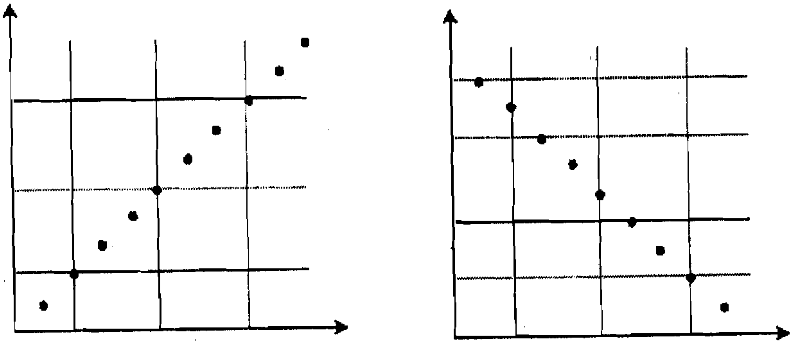

चित्र 19.2: (क) परिपूर्ण धनात्मक सहसंबंध ($r=+1$) और (ख) परिपूर्ण ऋणात्मक सहसंबंध ($r=-1$)

ख) रैखिक और अरैखिक सहसंबंधः (Linear and Non-linear correlation)

दो चरों के बीच के सहसंबंध को तब रैखिक कहा जाता है जबकि एक चर में इकाई परिवर्तन होने पर मानों के पूरे परिसर (range) के दूसरे चर में एक नियत परिवर्तन होता हो। चित्र 19.3 में दिए गए इन आंकड़ों को लीजिए।

x	1	2	3	4	5	6
y	3	5	7	9	11	13

चित्र 19.3: मानों के पूरे परिसर में दिखाया गया नियत परिवर्तन

इस स्थिति में चित्र 19.3 में दिखाए गए आंकड़ों के संबंध $y = 1 + 2x$ से निरूपित किया जा सकता है। सामान्यतया दो चरों को रैखिकतः संबंधित तब कहा जाता है जबकि इन चरों के बीच $y = a + bx$ के रूप का संबंध होता है।

इसके विपरीत, दो चरों के बीच के संबंध को अरैखिक या वक्ररेखी (curvilinear) तब कहा जाता है जबकि एक चर में इकाई परिवर्तन होने पर दूसरे चर में नियत या उच्चावचन (fluctuating) दर से परिवर्तन न होता हो। अरैखिक सहसंबंध का उदाहरण चित्र 19.4 में निम्नलिखित आंकड़ा समुच्चय (data set) से दिया गया है।

x	1	2	3	4	5	6
y	5	8	14	15	18	22

चित्र 19.4: अरैखिक सहसंबंध

क्योंकि चित्र 19.4 के उदाहरण में x के मान में इकाई परिवर्तन होने पर y के मान में उच्चावचन (नियत नहीं) परिवर्तन होता है, अतः यह एक अरैखिक सहसंबंध को निरूपित करता है।

MAADHYAM IAS

अब आपको यह जानने की इच्छा होगी कि सहसंबंध का अध्ययन किस प्रकार किया जाता है। आइए हम सहसंबंध का अध्ययन करने की विधियों पर संक्षेप में चर्चा करें। परन्तु, सहसंबंध का अध्ययन करने की विधियों पर चर्चा करने से पहले आइए हम सोचें और करें 19.1 को पूरा करें।

> **अनुचिंतन और क्रिया 19.1**
>
> अपनी परिकल्पना (hypothesis) से संबंधित धनात्मक और ऋणात्मक सहसंबंधों का चित्र बनाइए। इसके बाद परिपूर्ण धनात्मक और परिपूर्ण ऋणात्मक संबंधों का एक अन्य चित्र बनाइए। इसके अतिरिक्त, मानों के पूरे परिसर में प्रतिबिंबित नियत परिवर्तन और अरैखिक सहसंबंध के दो और चित्र बनाइए। चित्रों को बनाने के लिए ऊपर दिए गए 18.1 से 18.4 तक के चित्रों की सहायता आप लें।

सहसंबंध का अध्ययन करने की विधियाँ

दो चरों के बीच कोई सहसंबंध है या नहीं, इसे ज्ञात करने की विभिन्न विधियां हैं (i) प्रकीर्ण आरेख (scatter diagram);(ii) ग्राफीय विधि (graphic diagram);(iii) कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक (coefficient of correlation) ; (iv) कोटि विधि (rank method); (v) संगामी विचलन विधि (concurrnt deviation method); और (vi) न्यूनतम वर्ग विधि (method of least squares)।

इनमें से पहली दो विधियाँ आरेखों और ग्राफों के ज्ञान पर आधारित हैं और शेष विधियां गणितीय साधनों पर आधारित हैं। प्रयुक्त किए गए अनेक गणितीय साधनों में अति

लोकप्रिय साधन हैं कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक (r)। अतः हमने इस विधि पर विशेष ध्यान दिया हैं अवर्गीकृत आंकड़ों (ungrouped data) और वर्गीकृत आंकड़ों से सहसंबंध का परिकलन करने की क्रियाविधि अलग-अलग है।

19.3 अवर्गीकृत आंकड़ों के सहसंबंध की गणना की विधियां

अवर्गीकृत आंकड़ों से सहसंबंध गुणांक का परिकलन करने की विभिन्न विधियाँ हैं:

i) वास्तविक माध्य के प्रयोग से

ii) कल्पित माध्य के प्रयोग से

iii) अनुलोम विधि (direct method)

इन सभी विधियों के प्रयोग को नीचे दिए गए उदाहरण की सहायता से दर्शाया गया है।

उदाहरणः नीचे चित्र 19.5 में दिए गए आंकड़ों की सहायता से पतियों और पत्नियों की विवाह के समय की आयु के बीच (कार्ल पियर्सन) सह-संबंध गुणांक ज्ञात कीजिए।

विवाह के समय की आयु	स्थिति1	स्थिति2	स्थिति3	स्थिति4	स्थिति5	स्थिति6	स्थिति7	स्थिति8	स्थिति9	स्थिति10
पति	28	25	24	29	31	22	21	25	26	28
पत्नी	22	23	21	25	26	20	19	21	21	24

चित्र 19.5: पतियों और पत्नियों की विवाह के समय की आयु के बीच का सहसंबंध गुणांक

वास्तविक माध्य के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन करने की विधि

पहले वास्तविक माध्य का प्रयोग करके सहसंबंध गुणांक का परिकलन करने की विधि का अध्ययन कर लेने के बाद आपके लिए आपने आप ही सहसबंध गुणांक का परिकलन करना संभव हो जाएगा।

r का परिकलन करने के लिए इस सूत्र को लागू किया जाता है

$r = \Sigma xy / N * \delta_x * \delta_y$

जहाँ $x = (X - M_x)$, जहां M_x, X मानों की श्रेणी का माध्य है

$y = (Y-M_y)$ जहाँ M_y, Y मानों की श्रेणी माध्य है

∂x = श्रेणी X का मानक विचलन

∂y = श्रेणी Y का मानक विचलन

N = प्रेक्षण-युग्मों की संख्या

सूत्र को इस प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है:

$r = \Sigma xy/\Sigma [\partial x^2 * \partial y^2]$

निम्नलिखित चरणों में सहसंबंध गुणांक का परिकलन को दर्शाया गया है।

i) X के माध्य से X श्रेणी के विचलन लीजिए और उन्हें x से प्रकट कीजिए।

ii) इन विचलनों का वर्णन कीजिए और कुल योग अर्थात् ∂x^2 प्राप्त कीजिए:

iii) Y के माध्य से Y श्रेणी के विचलन लीजिए और इन्हें y से प्रकट कीजिए।

iv) इन विचलनों का वर्ग कीजिए और कुल योग अर्थात् ∂y^2 प्राप्त कीजिए।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

v) x और y के विचलनों को गुणा कीजिए और कुल योग ∂xy प्राप्त कीजिए; और

vi) ऊपर के सूत्र में ∂x^2, ∂y^2 और ∂xy के मान प्रतिस्थापित कीजिए।

वास्तविक माध्य का प्रयोग करके सहसंबंध गुणांक का परिकलन

इस विधि का अध्ययन कर लेने के बाद आइए अब हम परिकलन करें जैसा कि चित्र 19.6 में दिखाया गया है।

X	$x = X - M_X$	X^2	Y	$y = Y - M_Y$	y^2	xy
28	2.1	04.41	22	-0.2	00.04	-00.42
25	-0.9	00.81	23	0.8	00.64	-00.72
24	-1.9	03.61	21	-1.2	01.44	02.28
29	3.1	09.61	25	2.8	07.84	08.68
31	5.1	26.01	26	3.8	14.44	19.38
22	-3.9	15.21	20	-2.2	04.84	08.58
21	-4.9	24.01	19	-3.2	10.24	15.68
25	-0.9	00.81	21	-1.2	01.44	01.08
26	0.1	00.01	21	-1.2	01.44	-00.12
28	2.1	04.41	24	1.8	03.24	03.78
259	0	88.90	222	0	45.60	58.20

चित्र 19.6: वास्तविक माध्य के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन

$r = \Sigma xy / ? [\delta x^2 * \delta y^2]$

$M_x = 259 / 10 = 25.9$ $M_Y = 222 / 10 = 22.2$ $(\delta x^2) = 88.9$ $(\delta y^2) = 45.6$ $\delta xy = 58.2$

$r = 58.2 / v [88.9 * 45.6] = 0.914$

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कल्पित माध्य के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन करने की विधि

ऊपर बतायी गई विधि और इस विधि में अंतर केवल यह है कि ऊपर बताई गई विधि में विचलन वास्तविक माध्य से लिए गए हैं जबकि इस विधि में विचलन कल्पित माध्य से लिए गए हैं (अर्थात् x की श्रेणी और y की श्रेणी को देखकर x और y के माध्य कल्पित कर लीजिए और फिर वही विधि लागू कीजिए जो कि ऊपर बतायी गई विधि में लागू की गई है।

कल्पित माध्य के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन

अब हम चित्र 19.7 के अनुसार परिकलित करें।

X	$D_x = X - A_X$	d_x^2	Y	$d_Y = Y - A_Y$	d_Y^2	$d_x{*}d_Y$
28	3	9	22	0	0	0
25	0	0	23	1	1	0
24	-1	1	21	-1	1	1
29	4	16	25	3	9	12
31	6	36	26	4	16	24
22	-3	9	20	-2	4	6
21	-4	16	19	-3	9	12
25	0	0	21	-1	1	0
26	1	1	21	-1	1	-1
28	3	9	24	2	4	6
259	9	97	222	2	46	60

चित्र 19.7: कल्पित माध्य के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन

$$r = \frac{N\Sigma d_x * d_y - (? d_x * ?d_y)}{v \{N \Sigma d_x^2 - (\Sigma d_x)^2\} * v \{N \Sigma d_y^2 - (\Sigma d_y)^2}$$

$$r = \frac{10*60 - (9*2)}{v \{10*97 - (9)^2\} * v \{10*46 - (2)^2}$$

$$r = \frac{582}{636.697}$$

$$r = 0.914$$

सहसबंध गुणांक का परिकलन करने की प्रत्यक्ष विधि

वास्तविक अथवा कल्पित माध्य से विचलन लिए बिना ही x और y के वास्तविक मानों को लेकर भी सहसंबंध गुणांक परिकलित किया जा सकता है। निम्नलिखित सूत्र से इसका परिकलन किया जाता है:

$r = (N * \Sigma XY - \Sigma X * \Sigma Y) / v [N * \Sigma X^2 - (\Sigma X)^2] * v [N * \Sigma Y^2 - (\Sigma Y)^2]$

प्रत्यक्ष विधि का प्रयोग करने से वही परिणाम प्राप्त होता है जो कि वास्तविक या कल्पित माध्य से लिए गए विचलनों से प्राप्त होता है। इस उदाहरण को चित्र 19.8 में दर्शाया गया है।

X	Y	X^2	Y^2	XY
28	22	784	484	616
25	23	625	529	575
24	21	576	441	504
29	25	841	625	725
31	26	961	676	806
22	20	484	400	440
21	19	441	361	399
25	21	625	441	25
26	21	676	441	546
28	24	784	576	672
259	222	6797	4974	5808

MAADHYAM IAS

चित्र 19.8: प्रत्यक्ष विधि के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन

आइए अब हम सोचें और करें 19.2 पूरा करें और तब भाग 19.4 में वर्गीकृत आंकड़ों का सहसंबंध गुणांक का परिकलन करने की विधियों का अध्ययन करें।

सोचें और करें 19.2

निम्नलिखित दो परिकलनों में से एक परिकलन लीजिए और उसे अपनी परिकल्पना में लागू कीजिए। परिकलनों में हुई त्रुटियों को लेकर आपको चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इस समय आपका लक्ष्य कियाविधि को समझना है। यह आपके रिपोर्ट का एक अंश नहीं है।

i) कल्पित माध्य के प्रयोग से सहसंबंध गुणांक का परिकलन

ii) प्रत्यक्ष विधि से सहसंबंध गुणांक का परिकलन

19.4 वर्गीकृत आंकड़ों के सहसंबंध गुणांक की परिकलित करने की विधियां

जब प्रेक्षणों की संख्या वृहत् होती है, तो आंकड़ों को द्विधा बारंबारता-बंटन (two-way frequency distribution), जिसे सहसंबंध सारणी कहा जाता है, के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। y श्रेणी के वर्ग-अंतरालों को स्तंभ शीर्षक के रूप में लिखा जाता है और श्रेणी को पंक्ति शीर्षक के रूप में लिखा जाता है। दो चरों के बारंबारता-बंटन को उनकी कोष्ठिकाओं में लिखा जाता है। सहसंबंध गुणांक परिकलित करने का सूत्र यह है:

$$r = \frac{\Sigma f * d_X * d_Y - (\Sigma f_X * d_X * \Sigma f_Y * d_Y) / N}{v\{\Sigma f_X * d_X^2 - (\Sigma f_X * d_X)^2 / N\} * v\{\Sigma f_Y * d_Y^2 - (\Sigma f_Y * d_Y)^2 / N\}}$$

चरण:

i) चर x के सोपानी विचलन लीजिए और इन विचलनों को d_x से प्रकट कीजिए।

ii) चर y के सोपानी विचलन लीजिए और इन विचलनों को d_y से प्रकट कीजिए।

iii) $d_x * d_y$ और प्रत्येक कोष्ठिका (cell) की बारंबारताओं को गुणा कीजिए और प्राप्त अंक को कोष्ठिका की दायीं ओर के ऊपरी कोनों में लिख दीजिए।

iv) सभी मानों को एक साथ जोड़कर $\Sigma f * d_x * d_y$ प्राप्त कीजिए।

v) चर x की सभी बारंबारताओं को x के विचलनों से गुणा कीजिए और कुल योग $\Sigma f_x * d_n$ प्राप्त कीजिए।

vi) चर x के विचलनों का वर्णन कीजिए और उनकी बारंबारताओं से गुणा करके $\Sigma f_x * d_n^2$ प्राप्त कीजिए।

vii) चर y की सभी बारंबारताओं को y के विचलनों से गुणा कीजिए और कुल योग $\Sigma f_y * d_y$ प्राप्त कीजिए।

viii) चर y के विचलनों का वर्णन कीजिए और उनकी बारंबारताओं से गुणा करके $\Sigma f_x * d_y^2$ प्राप्त कीजिए।

ix) ऊपर के सूत्र में $\Sigma f_y * d^2_y$, $\Sigma f_y * d_y$, $\Sigma f_x * d^2_x$, $\Sigma f_x * d_x$,

$\Sigma f * d_x * d_y$ के मान प्रतिस्थापित करके r का मान प्राप्त कीजिए।

आइए अब हम चित्र 19.9 में दिए गए आंकड़ों से कार्ल पियर्सन का सहसंबंध गुणांक परिकलित करने से संबंधित एक उदाहरण लें।

विलास की वस्तुओं पर खर्च	आय (हजार रुपयों में)				
	20-25	25-30	30-35	35-40	40-45
0-4	28	12	05		
4-8	41	22	09	03	
8-12	05	33	28	14	16
12-16	18	22	29	37	
16-20	03	09	12		

चित्र 19.9: विलास की वस्तुओं पर किए गए खर्च से संबंधित सहसंबंध गुणांक

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

हमारे लिए प्रत्यक्ष विधि से वर्गीकृत आंकड़ों का सहसंबंध गुणांक परिकलित करना संभव है, जैसा कि चित्र 19.10 में दिखाया गया है। (देखिए चित्र 19.10)

विलास की वस्तुओं पर खर्च	आय (हजार रुपयों में)								
	20-25	25-30	30-35	35-40	40-45	fy	DY	fy*dy	fy*dy*dy
0-4	28	12	5			45	-2	-90	180
4-8	41	22	9	3		75	-1	-75	75
8-12	9	33	28	14	16	100	0	0	0
12-16		18	22	29	37	106	1	106	106
16-20			3	9	12	24	2	48	96
Fx	78	85	67	55	65	350		-11	457
dx	-2	-1	0	1	2				
fx*dy	-156	-85	0	55	130	-56			
$f_x*d_x*d_x$	312	85	0	55	260	712			

चित्र 19.10: वर्गीकृत आंकड़ों के सहसंबंध गुणांक का परिकलन

अब हमारे प्रत्यक्ष विधि से $f_x*d_x*d_y$ का परिकलन करना संभव है जैसा कि चित्र 19.11 में दिया गया है।

विलास की वस्तुओं पर खर्च	आय (हजार रुपयों में)					$f_x*d_x*d_y$
	20-25	25-30	30-35	35-40	40-45	
0-4	112	24	0	0	0	136
4-8	82	22	0	-3	0	101
8-12	0	0	0	0	0	0
12-16	0	-18	0	29	74	85
16-20	0	0	0	18	48	66
$f_x*d_x*d_y$	194	28	0	44	122	388

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 19.11: वर्गीकृत आंकड़ों के सहसंबंध गुणांक का परिकलन

$N = 350$ $\Sigma f*d_x*d_y = 388$ $\Sigma f_x*d_x = -56$

$\Sigma f_Y*d_Y = -11$ $\Sigma f_x*d_x^2 = 712$ $\Sigma f_Y*d_Y^2 = 457$

$$r = \frac{\Sigma f * d_x * d_Y - (\Sigma f_x * d_x * \Sigma f_Y * d_Y)/N}{v\{\Sigma f_x*d_x^2 - (\Sigma f_x*d_x)^2 / N\}* \; v\{\Sigma f_Y*d_Y^2 - (\Sigma f_Y*d_Y)^2 / N\}}$$

$$r = \frac{388 - (-56 * -11) / 350}{v\{712-(-56)^2 / 350\}* \; v\{457 - (-11)^2 / 350}$$

$r = 386.24 / (26.515 * 21.369) = .682$

अधिकांश चरों में किसी न किसी प्रकार का संबंध अवश्य होता है। सहसंबंध की सहायता से दो या अधिक चरों के बीच के संबंध की कोटि मापी जा सकती है। हमें मालूम है कि

सहसंबंध से कारण और प्रभाव संबंध के बारे में कुछ भी पता नहीं चलता। यहां तक कि उच्च कोटि के संबंध भी यह नहीं बताता कि कारण और प्रभाव संबंध का अस्तित्व है या नहीं। जबकि विलोमतः कारण और प्रभाव संबंध (या प्रकार्य संबंध) से सदैव ही सहसंबंध का व्यंजक प्राप्त हो जाता है। अब समाश्रयण विश्लेषण पर चर्चा की जाएगी।

19.5 समाश्रयण (Regression)

समाश्रयण◎ विश्लेषण (regression analysis) एक या अधिक चरों के ज्ञान से एक चर के मानों का आकलनन करने की विधि है। अनुसंधानकर्त्ता जिस चर का आकलन करने का प्रयास करता है उसे आश्रित चर (dependent variable) कहा जाता है और इसे y से प्रकट किया जाता है जबकि प्रागुक्ति (prediction) के लिए जिस चर का प्रयोग किया जाता है उसे स्वतंत्र चर (independent variable) कहा जाता है और इसे x से प्रकट किया जाता है। समाश्रयण समीकरण में एक या अधिक स्वतंत्र चर हो सकते हैं, परन्तु आश्रित चर केवल ही होता है। समाश्रयण समीकरण में एक चर है या अधिक चर हैं इसके अनुसार समाश्रयण को सरल या बहुल कहा जाता है। जब आश्रित और स्वतंत्र चर के बीच का संबंध रैखिक होता है तो इन समीकरणों में आगे एक शब्द 'रैखिक' जोड़ दिया जाता है। इस तरह, एक सरल रैखिक समाश्रयण समीकरण को इस प्रकार व्यक्त किया जाता है:

$Y = a + bX$

जहां Y आश्रित चर है

x स्वतंत्र चर है

'a' समाश्रयण अचर हैं

'b' समाश्रयण गुणांक हैं। यह X में हुए परिवर्तन संगत Y में हुए परिवर्तन को मापता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इसी प्रकार बहुरैखिक समाश्रयण समीकरण को इस प्रकार व्यक्त किया जाता है

$Y = a + b_1X_1 + b_2X_2 + ... b_n X_n$

जहां Y आश्रित चर हैं

$X_1, X_2,....... X_n$ स्वतंत्र चर हैं

'a' समाश्रयण अचर हैं

$b_1, b_2,....... b_n$ समाश्रयण गुणांक हैं।

सहसंबंध गुणांक का परिकलन करने की भांति समाश्रयण समीकरण का परिकलन करने की विभिन्न विधियाँ होती है।

1) X और Y के वास्तविक माध्य मानों से

2) X और Y के कल्पित माध्य मानों से

वास्तविक माध्य के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण का परिकलन

निम्नलिखित सूत्र को लागू करके (X पर Y के) समाश्रयण समीकरण का परिकलन किया जा सकता है।

$Y - M_y = b_{yx} * (X-M_x)$ या

$Y - M_y = r(\delta_y / \delta_x) * (X - M_x)$

As, $b_{yx} = r (\delta_y / \delta_x) = (?xy / ?x^2)$

इसलिए निम्नलिखित सूत्र को लागू करके समाश्रयण समीकरण परिकलित किया जा सकता है।

$Y - M_y = (\Sigma xy / \Sigma x^2) * (X - M_x)$

जहाँ Y और X क्रमशः आश्रित चर और स्वतंत्र चर हैं।

M_y और M_x और चर Y और X और के क्रमशः माध्य है, और

$y = Y - M_y$ और $x = X - M_x$

नीचे के उदाहरण में समाश्रयण समीकरण का परिकलन दर्शाया गया है।

उदाहरण: पतियों के विवाह के समय की आयु को स्वतंत्र चर मानकर और पत्नियों की आयु को आश्रित चर मानकर निम्नलिखित आंकड़ों से समाश्रयण समीकरण परिकलित कीजिए (देखिए चित्र 19.11)

विवाह के समय की आयु	स्थिति1	स्थिति2	स्थिति3	स्थिति4	स्थिति5	स्थिति6	स्थिति7	स्थिति8	स्थिति9	स्थिति10
पति	28	25	24	29	31	22	21	25	26	28
पत्नी	22	23	21	25	26	20	19	21	21	24

वास्तविक माध्य के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण का परिकलन (देखिए चित्र 19.12)

पत्नी की आयु Y	$y = Y - M_Y$	y^2	पति की आयु X	$X = X - M_x$	x^2	xy
22	-0.2	00.04	28	2.1	4.41	-0.42
23	0.8	00.64	25	-0.9	0.81	-0.72
21	-1.2	01.44	24	-1.9	3.61	02.28
25	2.8	07.84	29	3.1	9.61	08.68
26	3.8	14.44	31	5.1	26.01	19.38
20	-2.2	04.84	22	-3.9	15.21	8.58
19	-3.2	10.24	21	-4.9	24.01	15.68
21	-1.2	01.44	25	-0.9	0.81	01.08
21	-1.2	01.44	26	0.1	0.01	-0.12
24	1.8	03.24	28	2.1	4.41	03.78
222	0	45.60	259	0	88.9	58.20

चित्र 19.12: वास्तविक माध्य के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण

$M_Y = 222 / 10 = 22.2$ $M_X = 259 / 10 = 25.9$

$Y - M_Y = (\Sigma xy / \Sigma x^2) * (X - M_X)$

$Y - 22.2 = (58.2 / 88.9) * (X - 25.2)$

$Y - 22.2 = 0.655 * (X - 25.2)$

MAADHYAM IAS way to achieve your dream

$Y- 22.2 = 0.655X - 16.96$

$Y = 5.24 + 0.655X$

कल्पित मान के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण का परिकलन (देखिए चित्र 19.13)

कल्पित माध्य लेकर निम्नलिखित सूत्र से (X पर Y का) समाश्रयण समीकरण परिकलित किया जा सकता है।

$Y - M_Y = b_{yx} * (X-M_x)$

जहाँ

$b_{yx} = [\Sigma d_x * d_y - (\Sigma d_x * \Sigma d_y) / N] / [\Sigma d_x^2 - (\Sigma d_x)^2 / N]$

Y और X कमशः आश्रित चर और स्वतंत्र चर हैं।

M_y और M_x, चरों Y और X के कमशः माध्य हैं

$d_y = Y\text{-}AM_y$ और $d_x = X\text{-}AM_x$

AM_y और AM_x चरों Y और X के कमशः कल्पित माध्य हैं; और

कल्पित माध्य के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण का परिकलन

Age of Wives Y	$d_Y = Y\text{-}AM_Y$	d_y^2	Age of Husbands X	$d_x = X\text{-}AM_x$ x	d_x^2	$d_x * d_y$
22	0	0	28	3	9	0
23	1	1	25	0	0	0
21	-1	1	24	-1	1	1
25	3	9	29	4	16	12
26	4	16	31	6	36	24
20	-2	4	22	-3	9	6
19	-3	9	21	-4	16	12
21	-1	1	25	0	0	0
21	-1	1	26	1	1	-1
24	2	4	28	3	9	6
222	2	46	259	9	97	60

चित्र 19.13: कल्पित माध्य के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण का परिकलन

$M_Y = 222 / 10 = 22.2$ $M_x = 259 / 10 = 25.9$

$b_{yx} = [\Sigma d_x * d_y - (\Sigma d_x * \Sigma d_Y) / N [\Sigma d_x^2 - (\Sigma d_x)^2 / N]$

$b_{yx} = [60 - (9*2) / 10] / [97 - 9*9 / 10]$

$b_{yx} = 58.2 / 88.9 = 0.655$

$Y - M_Y = b_{yx} * (X-M_x)$

$Y- 22.2 = 0.655 * (X - 25.2)$

$Y-22.2 = 0.655X - 16.96$

$Y = 5.24 + 0.655X$

आकलन की मानक त्रुटिः समाश्रयण समीकरण की सहायता से तब तक परिपूर्ण प्रागुक्ति नहीं की जा सकती जब तक कि सहसंबंध का मान -1 या +1 न हो। इस तरह, अनुसंधानकर्त्ता की रुचि एक समाश्रयण समीकरण के आकलन की परिशुद्धता ज्ञात करने में होती है। आकलन की मानक त्रुटि आकलन के एक आधार के रूप में समाश्रयण समीकरण का प्रयोग करने से संबंधित त्रुटि मापती है। निम्नलिखित समीकरण को लागू करके इसे परिकलित किया जा सकता है।

$SEE_{y..x} = v\ \{\Sigma\{Y - Y_c)^2 / N - 2\}$

जहाँ $SEE_{y.x}$ आकलन की मानक त्रुटि है।

Y आश्रित चर है

Y_c, Y का प्रागुक्त मान है

N प्रेक्षणों की संख्या है

निम्नलिखित सूत्र से भी इसे परिकलित किया जा सकता है।

$SEE_{y.x} = v\ \{(\Sigma Y^2 - a?Y - b\Sigma XY) / N\text{-}2\}$

जहाँ $SEE_{y.n}$ आकलन की मानक त्रुटि है।

Y आश्रित चर है

X स्वतंत्र चर है 'a' समाश्रयण अचर हैं

'b' समाश्रयण गुणांक है

N प्रेक्षणों की संख्या है

निर्धारण-गुणांक (coefficient of determination): निर्धारण-गुणांक (r^2) सहसंबंध गुणांक (r) का वर्ग होता है और प्रायः इसका प्रयोग सहसंबंध गुणांक के मान का निर्वचन (interpretation) करने में किया जाता है। यदि r का मान 0.8 हो, तो निर्धारण-गुणांक या r^2 का मान 0.64 होगा। इसका अर्थ यह होगा कि एक (आश्रित) चर के प्रसरण (variance) के 64% की व्याख्या अन्य (स्वतंत्र) चर के पदों में की जाती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सोचें और करें 19.3

हमने यह समझने का प्रयास किया है कि कल्पित माध्य के प्रयोग से समाश्रयण समीकरण का परिकलन किस प्रकार किया जाता है, परन्तु हमें सफलता नहीं मिली। संभव है कि एक उदाहरण की सहायता से आप मुझे समझा सक एक या दो उदाहरण लेकर एक अलग कागज पर आप अपनी व्याख्या लिखें। संभव है कि मैं इसे समझ सकूँ। इसे आप एमएसओ-002 के समन्वयकर्त्ता के पास भेजने का प्रयास अवश्य करें।

19.6 निष्कर्ष

इकाई 19 मात्रात्मक विधियों पर खंड 5 की अंतिम इकाई है। इस खंड की सभी पांच इकाइयों में इस बात पर बल दिया गया है कि सामाजिक अनुसंधान में मात्रात्मक विधियों का प्रयोग तब करना चाहिए जबकि वे आवश्यक और प्रासंगिक हों और जिनसे अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते हों। कभी-कभी इनका प्रयोग गुणात्मक विधियों (qualitative methods) के संयोजन के साथ किया जा सकता है। आपको जानकारी के अभाव में मात्रात्मक विधियों से बचने की आवश्यकता नहीं है, या डरना नहीं चाहिए कि मात्रात्मक सामग्री की आवश्यकता नहीं है, समझना कठिन होता है। खंड 5 की पांचों इकाइयों में जहाँ कहीं भी संभव हो सका है और आवश्यक समझा गया है, हमने उपयुक्त उदाहरण आपको उपलब्ध कराए हैं जिससे आप उन साधनों को समझ सकें जो कि आपके शोध परियोजना कार्य में उपयोगी सिद्ध हों।

19.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बर्नस्, रॉबर्ट बी.: 2000, *इंट्रोडक्शन टू रिसर्च मैथड्स,* सेज पब्लिकेशनः लंदन

कोहेन, लुईस और माइकेल हॉलीडे 1982, *स्टैटिस्टिक्स फॉर सोशल रिसर्च* , हार्पर और रोः लंदन

सांख्यिकी शब्दावली का हिंदी अनुवाद

अरैखिक	non-linear
अवर्गीकृत	ungrouped
आकलन	estimate
निराकरणीय परिकल्पना	null hypotheses
न्यूनतम वर्ग विधि	method of least squares
परिकल्पना	hypothesis
प्रकीर्ण आरेख	scatter diagram
प्रसरण	variance
बारंबारता	frequency
मानक त्रुटि	standard error
रैखिक	linear
वर्गीकृत	grouped
विचलन	derivation
वैकल्पिक परिकल्पना	alternative hypothesis
समाश्रयण	regression
सहसंबंध	correlation

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

खंड 6

सर्वेक्षण शोध

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

खंड 6 का परिचय
सर्वेक्षण शोध

सर्वेक्षण शोध को लोकप्रिय रूप से मतदाता सर्वेक्षण और बाजार शोध के साथ जोड़ा जाता है। दूसरी ओर, सर्वेक्षण सामाजिक शोध की पारिभाषिक विशेषता हैं और ये नृशास्त्रीय जाँच का भाग भी हैं। सामाजिक विज्ञान संबंधी शोधों में किसी भी अवस्था पर किसी न किसी प्रकार का अंकीय सर्वेक्षण किया जाना एक आम बात है। प्रायः शोधकारों को समष्टि विशेष की व्याख्या करने से पहले उसका भौतिक मानचित्र तैयार करना होता है। जो कुछ भी बताया या देखा जाता है, शोधकारों को उसकी विशिष्टता को स्थापित करना होता है और शोध के दौरान बनाए गए परस्पर संबंधों की प्रामाणिकता की जाँच करनी होती है। सर्वेक्षण पद्धतियों और अन्य मात्रात्मक तकनीकों (जो खंड 5 में बताई गई है) का पक्ष लेने का कारण यह है कि सर्वेक्षणों से शोधकारों को विशाल एवं जटिल समाजों से एकत्रित शोध-सामग्री का प्रबंधन करने का तरीक़ा मिलता है। शहरी क्षेत्रों से संबंधित सामाजिक मुद्दों (उदाहरण के लिए ग्रामीण जनसंख्या का औद्योगिक शहरों की ओर पलायन का विषय) पर अध्ययन करने वाले शोधकारों द्वारा प्रव्रजन विन्यास का बड़े स्तर पर सामाजिक सर्वेक्षण किया जाता है। उन्हें प्रश्नावलियों को शोध उपकरणों के रूप में प्रयोग करना होता है तथा अपनी शोध-सामग्री को कंप्यूटरों पर संसाधित करने होते हैं। सर्वेक्षणों की उपयोगिता उनके प्रयोजन के संदर्भ में आँकी जाती है।

प्रायः घटनाओं/मतों/अन्य मुद्दों के पुंजों (sets) को गिनने तथा वर्गीकृत करने के लिए सर्वेक्षणों का प्रयोग किया जाता है। जानकारी की बृहद् मात्रा को अधिक विश्वसनीयता तथा सटीकता सर्वेक्षणों से प्राप्त मात्रात्मकता से उपलब्ध होती है। आप अपनी शोध के उद्देश्यों के संदर्भ में सर्वेक्षण की उपयोगिता को मापें। हमें यह ध्यान रखना है कि हमें मात्र एक पद्धति से सभी प्रकार की जानकारी नहीं प्राप्त हो सकती है। इसके अतिरिक्त, प्रत्यक्ष रू-ब-रू साक्षात्कार, प्रेक्षण से अनुमान करना तथा सर्वेक्षणों द्वारा शीर्षों की गणना करना जैसी विभिन्न पद्धतियाँ विभिन्न परिणाम देती हैं और प्रायः एक-दूसरे की पूरक बनकर व्याख्या एवं विश्लेषण के लिए शोध-सामग्री का एक अधिक समन्वित पुंज उपलब्ध कराती हैं। मिचेल (1967 : 21) के अनुसार, मात्रात्मक विधियाँ गुणात्मक शोध के अधीनस्थ होती हैं तथा मात्रात्मक सामग्री प्राप्त करना उस समझ को प्राप्त करने का एक साधन मात्र है जो सांख्यिकी द्वारा मिलना संभव नहीं है।

साथ-साथ, मात्रात्मक विधियों के प्रति रुझान बढ़ रहा है। जैसा कि ऐलन (1984: 259) ने बताया, क्या सर्वेक्षित किया जा सकता है और 'तथ्यों' के रूप में एकत्रित किया जा सकता है तथा प्रत्यर्थियों (respondents) द्वारा बताए गए सर्वेक्षण के तथ्यों के बीच अंतर करने की हमें ज़रूरत है। पहले प्रकार में मदों की साधारण गिनती होती है तथा दूसरे प्रकार में मदों के बारे में कथन की गिनती होती है। चूँकि प्रत्यर्थियों के मत भी सामाजिक तथ्य होते हैं, इसलिए उनपर ध्यान देना महत्वपूर्ण होता है। ऐसी शोध-सामग्री को उसके सामाजिक संदर्भ में रखकर तथा अन्य प्रकार की सामग्री के बारे में जानकर ही अधिक व्याख्या तथा विश्लेषण हेतु वैज्ञानिक रूप से विश्वसनीय तथा सटीक जानकारी पाने के लक्ष्य की शोधकार की आशा पूरी हो सकती है। अन्य प्रकार की सामग्री से हमारा तात्पर्य उन 'ठोस तथ्यों' से है जो जनगणना सामग्री तथा सरकारी सर्वेक्षणों से प्राप्त होती है।

सभी सर्वेक्षणों में, हमें शोध-सामग्री एकत्रित करने और उसकी व्याख्या के तरीक़े पर सावधानी से ध्यान देने की आवश्यकता होती है। अन्य शब्दों में, हमें अंकों और सांख्यिकी के बीच के अंतर तथा सांख्यिकीय और समाजशास्त्रीय अनुमान के अंतर को समझना

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

आवश्यक है। रोचक बात है कि अधिकांश उपयोगी सर्वेक्षण गहन क्षेत्रीय-शोध कार्य द्वारा पहले शोध-क्षेत्र को समीप से जान लेने की रणनीति का प्रयोग करते हैं। इस प्रक्रिया से उन्हें आम लोगों के साथ निकट संबंध स्थापित करने का अवसर मिल जाता है। उसके बाद ही प्रश्नावली में शामिल किए जाने वाले महत्वपूर्ण प्रश्नों को बना पाना संभव हो पाता है। प्रश्नावलियों को भरने के लिए प्रत्यर्थियों का सहयोग प्राप्त करने हेतु सर्वेक्षण को प्रचारित करना तथा प्रत्यर्थियों के साथ पूर्व-संबंध स्थापित करना आवश्यक होता है। खंड 5 की निम्नलिखित चार इकाइयाँ आपको सर्वेक्षण शोध के विभिन्न पक्षों पर आपको जानकारी देंगी जिसमें प्रश्नावलियों के माध्यम से शोध-सामग्री एकत्रित करने की विधि शामिल है, जो सर्वेक्षण शोध का एक महत्वपूर्ण अंग है।

आइए खंड 6 की प्रत्येक इकाई की विषय-वस्तु को संक्षेप में देखें :

सर्वेक्षण विधि पर इकाई 20 में सर्वेक्षण के स्वरूप तथा प्रयोजन की चर्चा की गई है। इसमें सर्वेक्षण विधि के उद्‌विकास का वर्णन किया गया है और सर्वेक्षण के सामाजिक संदर्भ को जानने की प्रासंगिकता बताई गई है। सर्वेक्षणों के लाभों तथा उसमें आने वाली समस्याओं का निरूपण इस इकाई का महत्वपूर्ण अंश है।

सर्वेक्षण प्रारूप पर इकाई 21 सर्वेक्षण शोध के प्रारंभिक चरणों के बारे में है। इसमें प्रतिचयन, प्रारूप, सर्वेक्षण शोध प्रारूप को तैयार करने के तथा सर्वेक्षण का कार्यान्वयन करने के चरणों का वर्णन किया गया है। इकाई में दिए विस्तृत निर्देशों से आपके अपने शोध कार्य में इन्हें लागू करने में मदद मिलेगी।

सर्वेक्षण उपकरण पर इकाई 22 सर्वेक्षण उपकरणों (विश्वसनीयता, वैधता आदि) के प्रारूप में आने वाले मुद्दों, प्रश्नावली बनाने, सर्वेक्षण उपकरणों के प्रकारों की चर्चा करती है।

सर्वेक्षण निष्पादन और शोध-सामग्री विश्लेषण पर इकाई 23 सर्वेक्षण शोध तथा शोध-सामग्री विश्लेषण के मुद्दों तथा समस्याओं की व्याख्या करती है। इसमें सर्वेक्षण के बाद रिपोर्ट लिखने तथा निष्कर्षों को प्रस्तुत करने के बारे में उपयोगी सामग्री दी गई है।

MAADHYAM IAS

इकाई 20
सर्वेक्षण विधि

इकाई की रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना

20.2 सर्वेक्षण शोध विधि के तर्काधार

20.3 सर्वेक्षण शोध का इतिहास

20.4 सर्वेक्षण शोध को परिभाषित करना

20.5 प्रतिचयन करना और सर्वेक्षण तकनीकें

20.6 सर्वेक्षण शोध उपकरणों को संचालित करना

20.7 सर्वेक्षण शोध के लाभ और उसमें आने वाली समस्याएँ

20.8 निष्कर्ष

20.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 20 का अध्ययन करने के बाद आपके लिए संभव होगाः

- शोध-सामग्री एकत्र करने के संदर्भ में लघु शोध प्रबंध को व्यवस्थित करने की दिशा में बढ़ना;
- अपने शोध के लिए शोध-सामग्री एकत्रीकरण की सर्वेक्षण विधि की प्रासंगिकता जानना;
- अपने शोध के लिए सर्वेक्षण करने की तकनीकों को जानना; तथा
- अपने शोध में इस्तेमाल की जाने वाली सर्वेक्षण विधि के लाभों और कमज़ोरियों को बताने में विश्वास करना।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

20.1 प्रस्तावना

खंड 5 में आपने शोध के दौरान एकत्र सामग्री से, जब आवश्यक हो, महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त करने के लिए सांख्यिकीय गणना करने का कौशल अर्जित किया। प्रश्न यह उठता है कि आप शोध-सामग्री कैसे एकत्र करें? अपने शोध के विषय के संदर्भ में आवश्यक सांमग्री को एकत्र करने के विभिन्न तरीक़े कौन से हैं? इकाई 20 आपकी शोध से संबंधित तथ्यों को एकत्र करने के एक तरीक़े के बारे में है। इकाई के शुरू में इस प्रश्न पर विचार किया गया है कि सामग्री एकत्र करने के लिए सर्वेक्षण विधि का इस्तेमाल क्यों किया जाता है। इसके बाद, सर्वेक्षण शोध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत की गई है और यह बताया गया है कि सर्वेक्षण शोध क्या है। इसमें सामग्री एकत्र करने में प्रतिचयन (Sampling) के प्रचलन का उल्लेख किया गया है किंतु विस्तार से नहीं बताया गया है क्योंकि खंड 5 की इकाई 15 और खंड 6 की इकाई 21 में इस बारे में विस्तार से बताया गया है। इकाई में यह चर्चा की गई है कि सर्वेक्षण वास्तव में कैसे किया जाता है और सर्वेक्षण शोध के लाभों तथा उसमें आने वाली समस्याओं को रेखांकित किया गया है।

इकाई 20 सर्वेक्षण विधि के महत्वपूर्ण विषय पर परिचयात्मक जानकारी देती है। इकाई 21, 22 और 23 में इस विधि के बारे में विस्तार से बताया गया है ताकि एम.एस.ओ-002 को पूरा करने के लिए अपेक्षित लघु शोध प्रबंध के एक भाग के रूप में आपके लिए वास्तव में सर्वेक्षण करना संभव हो सके। उम्मीद है आपने अपने शोध का विषय चुन कर उसकी शोध पद्धति का चयन कर लिया है।

20.2 सर्वेक्षण शोध विधि के तर्काधार

सामाजिक विज्ञान शोध तकनीकों को अक्सर दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है। ये हैं — गुणात्मक (qualitative) और मात्रात्मक (quantitative)। गुणात्मक शोध से हमें सामाजिक संबंधों के जटिल पक्षों के बारे में पता चलता है। ये विशेष तौर पर उनके लिए उपयोगी है जो किसी प्रश्न-विशेष को, उसके अर्थ और उसकी विभिन्न व्याख्याओं के बारे में गहराई से जानने के इच्छुक हैं। परंतु गुणात्मक विधि की अपनी सीमाएँ हैं। उदाहरण के लिए, छोटी व्यवस्था पर शोध करने या फिर विशिष्ट समूह या समुदाय पर केंद्रित शोध करने में गुणात्मक विधि ज़्यादा उपयुक्त होती है। अगर हमें किसी वृहद घटना के बारे में विस्तार से जानना चाहते हो, जैसे जनसंख्या की जनसांख्यिकीय संरचना अथवा ग़रीबी या रोग विशेष के विस्तार और प्रकृति के बारे में जानना हो, तो गुणात्मक शोध विधि अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होती।

मात्रात्मक विधि या सर्वेक्षण शोध से हमें इन प्रश्नों पर ज़्यादा विस्तार से अध्ययन करने की योग्यता प्राप्त होती है। सर्वेक्षण शोध में आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पूरे देश अथवा विश्व के क्षेत्र/ जनसंख्या को शामिल किया जा सकता है। इसलिए जब अध्ययन का क्षेत्र बड़ा हो और शोधकार को लोगों की प्रमुख प्रवृत्तियों अथवा विन्यासों को देखना हो तो उन्हें प्रायः सर्वेक्षण विधियों का उपयोग करना होता है। अन्य शब्दों में, गुणात्मक और मात्रात्मक शोध विधियाँ एक-दूसरे की विरोधी न होकर पूरक हैं। इन दोनों को मिलाया भी जा सकता है। एक-दूसरे में मिलकर ये दोनों तकनीकें शोध को समृद्ध करती हैं।

गुणात्मक विधियों को विशेषज्ञ-शोधकारों द्वारा इस्तेमाल किया जाता है, इसके विपरीत सर्वेक्षण शोध की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि सर्वेक्षण शोध पर समाजशास्त्रियों अथवा अर्थशास्त्रियों का एकाधिकार नहीं है। सर्वेक्षण तो आधुनिक जीवन का अनिवार्य अंग ही बन गया है, यह लगभग उद्योग का रूप धारण कर चुका है।

MAADHYAM IAS

आज के विश्व को अक्सर 'सूचना समाज' कहा जाता है। इसका अर्थ यह है कि सूचना का प्रवाह सबसे अधिक महत्वपूर्ण और केंद्रीय पक्ष बन गया है। दूरसंचार प्रौद्योगिकियों में अधुनातन उन्नति ने सूचना के प्रवाह को अपेक्षाकृत अधिक सरल और आज के समाज, उसकी राजनीति एवं अर्थव्यवस्था में काम करने के लिए महत्वपूर्ण बना दिया है।

सूचना समाज की भाँति 'कृषिक' और 'प्रौद्योगिक समाज' भी प्रौद्योगिकी की प्रमुख खोजों (breakthrough) के उत्पाद हैं। कुछ समाजशास्त्रियों का विचार है कि मानव इतिहास में तीन प्रमुख क्रांतियाँ हुईं — कृषि क्रांति, शहरी क्रांति और औद्योगिक क्रांति। किंतु कृषिक और औद्योगिक समाजों को मुख्य रूप से उनके उत्पाद की प्रकृति और साधन संबंधी प्रमुख आर्थिक कार्यकलाप के रूप में परिभाषित किया गया। जबकि 'सूचना समाज' का भिन्न अर्थ है। हालाँकि उत्पादन की दृष्टि से कृषि अथवा औद्योगिक प्रमुख बने रहे, परंतु यह प्रमुखता अब जानकारी के आधिपत्य में ही मुखर होती है। निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में किसानों और फैक्टरी मालिकों को उपलब्ध जानकारी के आधार पर काम करना होता है। कुछ मामलों में, विशिष्ट वस्तुएँ उत्पादित करने की योजना बनाने से पहले ही उत्पादकों ने स्वयं भाँति-भाँति की जानकारी सृजित की है।

इसी प्रकार, जनसंचार माध्यमों द्वारा उपलब्ध कराई गई जानकारी के आधार पर उपभोग के बारे में उपभोक्ताओं द्वारा निर्णय लिए जाते हैं। बाज़ार काफ़ी हद तक सूचना के प्रवाह पर निर्भर करते हैं। नए उत्पाद को शुरू करने से पहले कंपनी हर बार संभावित खरीदारों की क्रय-क्षमता और रुचि के बारे में विस्तारपूर्वक बाज़ार सर्वे करती हैं। उत्पादकों से यह

अपेक्षा की जाती है कि वे अपने उत्पाद के बारे में विज्ञापनों के माध्यम से संभावित खरीदारों को जानकारी उपलब्ध कराएँ। उत्पादकों से अपेक्षित होता है कि यह विज्ञापन विशेष तौर पर उन संचार माध्यमों से दें जिनका लोगों पर ज़्यादा प्रभाव है।

सूचना, उसका उत्पादन और वितरण भी आर्थिक प्रणाली का महत्वपूर्ण क्षेत्र बन गया है। इससे काफ़ी अधिक संख्या में लोगों को रोज़गार मिलता है और काफ़ी अधिक धन-संपत्ति अर्जित होती है। लगभग हर देश में काफ़ी अधिक संख्या में ऐसे पेशेवर संगठन और कंपनियाँ हैं जो व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से लेकर राजनीतिक दलों तक हर प्रकार के ग्राहकों के लिए सर्वेक्षण करती हैं। हमारे कहने का तात्पर्य भी यही है, जैसे हमने पहले ही कहा है कि आज के विश्व में सर्वेक्षण एक उद्योग बन चुका है।

आधुनिक राज्य और लोकतांत्रिक प्रणाली के कार्य-संचालन के लिए जानकारी लेना और देना महत्वपूर्ण बन चुका है। आधुनिक कल्याणकारी राज्य की लगभग पूरी नीति-निर्धारण प्रक्रिया सूचना पर ही आधारित होती है। (कोष्ठक 20.1 देखिए)

कोष्ठक 20.1: राज्य द्वारा जानकारी इकट्ठी करना

राज्य के विभिन्न घटक, समय-समय पर जनगणनाओं और सर्वेक्षणों के द्वारा राज्य की जनसंख्या के बारे में सभी संभावित जानकारी एकत्र करते हैं। उदाहरण के लिए, भारत सरकार का राष्ट्रीय प्रतिचयन सर्वेक्षण संगठन (National Sample Survey Organisation) नामक एक विशेष निकाय है जो विभिन्न सामाजिक और आर्थिक पैमानों पर भारत की जनसंख्या का समय-समय पर प्रतिदर्श सर्वेक्षण करता है। संगठन द्वारा एकत्रित आँकड़ों का नीतियाँ और कार्यक्रम बनाने के लिए विभिन्न सरकारी एजेंसियाँ इस्तेमाल करती हैं। इसी प्रकार, भारत के योजना आयोग का 'कार्यक्रम मूल्यांकन स्कंध' (Programme Evaluation Wing) है जो विभिन्न विकास कार्यक्रमों के कार्य-संचालन का मूल्यांकन करने के लिए सर्वेक्षण करता है। सरकार के अन्य विभाग भी अपने विभाग से संबंधित मुद्दों पर आधारित सर्वेक्षणों को प्रायोजित करते हैं। विश्व के अन्य भागों में भी इसी प्रकार के संस्थान हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जन-साधारण के बारे में जानकारी न केवल शासन के लिए अनिवार्य है बल्कि विकास के कार्यक्रम तैयार करने और उन्हें लागू करने के लिए भी अनिवार्य है और यह जानकारी समय-समय पर सर्वेक्षणों के ज़रिए सृजित की जाती है।

MAADHYAM IAS

विकास कार्यों में संलग्न वैश्विक एजेंसियाँ प्रायः विश्व के विभिन्न हिस्सों के लोगों के आर्थिक कल्याण के बारे में या तो स्वयं सूचना पैदा करती हैं या फिर विभिन्न विषयों (जैसे ग़रीबी, बेरोज़गारी, स्वास्थ्य आदि) के बारे में उपलब्ध आँकड़ों पर निर्भर करती हैं। विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्र संघ की विभिन्न एजेंसियाँ, समय-समय पर देश-विशेष की वर्तमान स्थितियों के विभिन्न पहलुओं पर प्रतिवेदन (Reports) प्रकाशित करती हैं।

राजनीतिक प्रक्रिया भी सूचना-उन्मुखी हो गई है। आधुनिक लोकतंत्र में राजनीतिक दल 'लोक अभिमत' (public opinion) पर कड़ी नजर रखते हैं और उसके अनुसार अपनी प्राथमिकताएँ निर्धारित करते हैं। इसी प्रकार, आधुनिक लोकतंत्रों में नागरिकों को विभिन्न स्रोतों से प्राप्त सूचना के आधार पर विभिन्न राजनीति दलों के बारे में अपनी राय बनाने का अवसर मिलता है। चुनावों से पूर्व लोगों की राय जानने के लिए सर्वेक्षण करने और चुनावों के संभावित नतीजों का पूर्वानुमान करने वाले चुनाव विश्लेषकों* (psephologists) को राजनीति और संचार माध्यमों में सम्मानजनक स्थान मिलने लगा है। दूरदर्शन के चैनल और समाचार-पत्र हमेशा चुनावों के दौरान विभिन्न राजनीतिक दलों के भविष्य और लोगों के मतदान के व्यवहार के बारे में व्यापक सर्वेक्षण करते हैं। इसी प्रकार, संयुक्त राज्य अमेरिका और अन्य पश्चिमी लोकतांत्रिक देशों में जनसंचार माध्यम और निगम देश की सत्तारूढ़ और सत्ता से बाहर के दलों और नेताओं की लोकप्रियता की प्रस्थिति पर लगातार नज़र रखते हैं।

आज सर्वेक्षणों ने भले ही आधुनिक विश्व में अपना विशेष स्थान बना लिया है। परंतु सच बात तो यह कि सर्वेक्षण हमेशा से ही एक महत्वपूर्ण शोध विधि रहे हैं। लोगों में उभरती हुई प्रवृत्तियों अथवा विन्यासों को समझने अथवा प्राक्कल्पनाओं को जाँचने के लिए सर्वेक्षणों का इस्तेमाल किया जाता रहा है। उनमें से कुछ नीति के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं जबकि कुछेक केवल सैद्धांतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं। उदाहरण के लिए, निरपेक्षीकरण की प्रक्रिया समझने के लिए समाजशास्त्रीय शोधकार को यह सर्वेक्षण करना हो सकता है कि अपने दैनिक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक नीति में लोग धार्मिक अनुष्ठान कितनी बार करते हैं।

20.3 सर्वेक्षण शोध का इतिहास

यद्यपि व्यवस्थित ढंग से सर्वेक्षण कराने का इतिहास ज़्यादा पुराना नहीं है, प्राचीनकाल में शासकों की हमेशा यह रुचि रहती थी कि उनके राज्य में क्या हो रहा है और उनकी प्रजा की हालत क्या है। ऐसे अनेक शासकों (अथवा उनके प्रतिनिधियों) के कई किस्से-कहानियाँ मशहूर हैं जो प्रजा के कल्याण और उनके किसी भी प्रकार के असंतोष के बारे में जानने के लिए भेष बदलकर उनसे मिलते थे। इसे भली प्रकार से शासन के लिए महत्वपूर्ण माना जाता था। प्राचीनकाल में रोमन सम्राट अपने नागरिकों के सर्वेक्षण करवाते थे। विक्टोरिया के समय के समाज सुधारकों ने सर्वेक्षण किए और अभिमतों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व पाने के लिए दस से बीस हजारी लोगों से साक्षात्कार किए।

किंतु, अपने व्यवस्थित रूप में सर्वेक्षण शोध यूरोप की औद्योगिक क्रांति और शहरीकरण के बाद शुरू हुआ। कदाचित कार्ल मार्क्स वह पहला समाजविज्ञानी था जिसने औद्योगिक श्रमिकों की स्थिति के बारे में कुछ महत्वपूर्ण सूचनादाताओं (informants) से जानकारी एकत्र की और उस जानकारी को वर्ग समाज एवं वर्ग संघर्ष के अपने सिद्धांत से जोड़ने की कोशिश की। इस प्रकार के आँकड़ों के आधार पर मार्क्स ने काम करने के घंटों और मजदूरों के रूप में श्रमिकों के शोषण की मात्रा को जानने की कोशिश की। आरंभिक सर्वेक्षणों के बारे में कोष्ठक 20.2 देखिए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कोष्ठक 20.2: कुछ आरंभिक सर्वेक्षण

माना जाता है कि सबसे पहला व्यवस्थित सर्वेक्षण स्कॉटलैंड के दार्शनिक और समाज-सुधारक हेनरी मैथ्यू ने किया। मैथ्यू ने उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में एडिनबरा में जीवनयापन की दशाओं के बारे में जानने का प्रयास किया और आम लोगों से अपनी परिस्थिति के बारे में बताने के लिए कहा। सुधारवादी उत्साह के साथ चार्ल्स बूथ ने लंदन के लोगों के जीवन और श्रम पर 1886 में सर्वेक्षण का सूत्रपात किया। उसके सर्वेक्षण के निष्कर्ष 1889 और 1902 के दौरान सत्रह खंडों में प्रकाशित हुए। लगभग इसी समय के दौरान, मुख्य तौर पर ग़रीबी मापने पर केंद्रित कई अन्य सर्वेक्षण भी हुए। ये सर्वेक्षण ज़्यादातर इंगलैंड और अन्य पश्चिमी देशों में किए गए।

20.4 सर्वेक्षण शोध को परिभाषित करना

सर्वेक्षण शोध, मूलतः विषय-विशेष पर लोगों से जानकारी एकत्र करने की विधि है। गुणात्मक शोध के विपरीत, सर्वेक्षण शोध ज़्यादा बड़ी जनसंख्या पर किया जाता है। किंतु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि इसमें हर व्यक्ति से जानकारी एकत्र की जाती है। सांख्यिकीविदों ने निर्दिष्ट लोगों में से प्रतिनिधित्व प्रतिचयन प्राप्त करने की वे विभिन्न विधियाँ विकसित की हैं जो पूरी जनसंख्या की प्रवृत्तियों को व्यक्त कर सकती हैं।

मात्रात्मक शोध विधियों को अक्सर दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है। ये हैं — जनगणना, और प्रतिचयन-आधारित सर्वेक्षण शोध। जब प्रत्येक व्यक्ति से सूचना एकत्र की

जाती है (अन्य शब्दों में, जब जनसंख्या की सभी इकाइयों को जानकारी के लिए शामिल किया जाता है) तो उसे जनगणना कहते हैं। किंतु यह बड़ी खर्चीली, लंबी और ज़्यादा समय लेने वाली प्रक्रिया है। इसलिए जनसंख्या के कुछ हिस्से (अथवा इकाई) पर ध्यान केंद्रित करके इस प्रकार के अध्ययन से सारी जनसंख्या के बारे में समझ पैदा की जाती है। जब जनसंख्या के कुछ हिस्से (अथवा भाग अथवा इकाई) का अध्ययन किया जाता है तो उसे 'प्रतिचयन सर्वेक्षण शोध' कहा जाता है। यहाँ 'प्रतिचयन' शब्द 'नमूने' के अर्थ में अध्ययन किए जाने वाले लोगों के एक हिस्से के लिए प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार के हिस्से को पहचानना अथवा नमूने के लिए लोगों को छाँटना आसान काम नहीं है। सर्वेक्षण को वैज्ञानिक एवं प्रातिनिधिक बनाने के लिए वैज्ञानिक कार्यविधि अपनानी होती है।

20.5 प्रतिचयन करना और सर्वेक्षण तकनीकें

प्रतिदर्श (sample) बनाने के लिए प्रतिचयन (sampling) करना वह विधि है जिसमें निर्धारित जनसंख्या में से प्रतिनिधि संख्या को पहचाना जाता है। प्रतिचयन (sampling) की दो मूलभूत विशेषताएँ होती हैं :

i) यह पर्याप्त होना चाहिए।

ii) इसमें सभी लोगों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए। (सम्पूर्ण जनसंख्या)

प्रतिचयन करने में सबसे महत्वपूर्ण बात यह ध्यान रखने की है कि प्रतिदर्श (sample) को चुनने की प्रक्रिया के दौरान शोधकार के अपने व्यक्तिगत मूल्य हावी नहीं होने चाहिए। कहने का अभिप्राय यह है कि शोधकार को पक्षपातरहित होना चाहिए। इस कारण, प्रतिदर्श के प्रतिचयन के लिए विभिन्न तकनीकें अथवा कार्यविधियां सुझाई जाती हैं। प्रतिचयन के बारे में और अधिक जानकारी के लिए खंड 5 की इकाई 15 और खंड 6 की इकाई 21 देखिए।

आइए इस बिंदु यहाँ पर हम सोचें और करें 20.1 को पूरा करें।

MAADHYAM IAS

सोचें और करें 20.1

सर्वेक्षण के प्रयोजन की दृष्टि से आपको उसकी उपयोगिता का मूल्यांकन करना है और इसलिए आपको जिस प्रकार की सामग्री इकट्ठी करनी है उसे लेकर संशय की स्थिति में न रहें। इस बारे में और अधिक स्पष्टता के लिए आप अलग से एक कागज पर निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दें:

क्या आपने सर्वेक्षण के जिन 'तथ्यों' को परिगणित किया है वे उत्तर देने वाले प्रत्यर्थियों (respondents) द्वारा बताए गए तथ्यों के सर्वेक्षण के जैसे ही हैं और शोधकार ने केवल उनका मिलान किया है?

मदों के बारे में उत्तर देने वालों की राय अथवा कथन अपने आप में सामाजिक तथ्य नहीं है? सामाजिक तथ्यों के रूप में क्या इन रायों या कथनों पर शोध किया जाना चाहिए?

क्या यह विचार करना आवश्यक नहीं है कि इन्हें कैसे और क्यों सामाजिक संदर्भ में अवस्थित किया जाएगा तथा आपके द्वारा गिने तथ्यों की आपकी समझ को पूरा करने के लिए इनका उपयोग किया जाएगा?

20.6 सर्वेक्षण शोध उपकरणों को संचालित करना

शोध उपकरणों को तैयार करना किसी भी प्रकार के शोध में महत्वपूर्ण चरण होता है। सर्वेक्षण शोध को अधिकतर प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची की सहायता से किया जाता है। सर्वेक्षण शोध में प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची को तैयार करना सबसे अधिक महत्वपूर्ण चरण है। प्रश्नावली और साक्षात्कार अनुसूची में अंतर जानने के लिए कोष्ठक 20.3 देखिए।

कोष्ठक 20.3
पूछे गए प्रश्नों के उत्तर जब उत्तर देने वाले स्वयं लिखकर दें तो प्रश्न-पत्रक को प्रश्नावली कहा जाता है। साक्षात्कार अनुसूची में अन्वेषक द्वारा उत्तर देने वालों के समक्ष प्रश्नों को पढ़ा जाता है और अन्वेषक द्वारा ही उत्तरों को प्रश्न-पत्र में भरा जाता है।

प्रत्यर्थी से कई तरीकों से संपर्क किया जाता है। सबसे सरल तरीका यह है कि संभावित प्रत्यर्थी से सीधे संपर्क किया जाए। अधिकांश सर्वेक्षण इसी प्रकार सम्पन्न किए जाते हैं। शोध-दल का सीधे गाँव अथवा स्थान-विशेष पर जाकर घर के मुखिया से बातचीत करने का प्रयास होता है। प्रश्नावलियों को डाक द्वारा भी भेजा जाता है, जिन्हें 'डाक प्रश्नावलियाँ' कहा जाता है।

प्रत्यर्थी से संपर्क करने का अन्य तरीक़ा घर-घर जाकर सर्वेक्षण करना है। इस सर्वेक्षण में शोधकार को प्रत्यर्थियों के घर (अथवा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों) पर जाना होता है और उन्हें प्रश्नावली सौंपना होता है। प्रश्नावली सौंपते समय यह अनुरोध किया जाता है कि उत्तर भरने के बाद शोधकार को डाक द्वारा भेज दिया जाए या फिर शोधकार बाद में किसी निर्धारित तिथि पर जाकर भरी हुई प्रश्नावली व्यक्तिगत रूप से लेना होता है।

कुछ शोधकारों ने प्रत्यर्थियों से संपर्क करने के लिए टेलीफ़ोन का उपयोग करना भी शुरू कर दिया है। प्रत्यर्थियों से फोन पर बात करके साक्षात्कार अनुसूची को भर लिया जाता है। टेलीफ़ोन साक्षात्कार के द्वारा सर्वेक्षण करना अमेरिका जैसे देशों में काफ़ी लोकप्रिय हो गया है। इस दृष्टिकोण के निश्चित ही कुछ लाभ हैं। टेलीफ़ोन साक्षात्कार से समय की काफी बचत होती है। टेलीफ़ोन सर्वेक्षण से शोधकार को यात्रा किए बिना ही काफ़ी अधिक संख्या में लोगों को अपने सर्वेक्षण में शामिल कर पाना संभव हो जाता है। टेलीफ़ोन पर प्रत्यर्थियों से बाद में भी किसी दिन संपर्क करके अन्य, नए प्रश्नों के उत्तर भी पूछे जा सकते हैं। आजकल प्रश्नावलियों को भेजने के लिए ई-मेल का भी इस्तेमाल किया जाना शुरू हो गया है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

किंतु, भारत जैसे देश में टेलीफ़ोन (अथवा ई-मेल) की सुविधा सभी के पास नहीं है। हालाँकि कुछ ग्रामीण क्षेत्र अब टेलीफ़ोन से जुडे हुए हैं, किंतु प्रत्येक घर में टेलीफ़ोन कनेक्शन नहीं है। वास्तविकता यह है कि शहरों की कुल जनसंख्या में से कुछ ही लोगों के पास टेलीफ़ोन कनेक्शन हैं। इसलिए कुछ विशेष प्रकार के ऐसे शोध में टेलीफ़ोन के द्वारा साक्षात्कार विधि का इस्तेमाल किया जा सकता है जिसमें उत्तर देने वाले ज़्यादातर लोग मध्यम वर्ग के हैं। ऐसे में भी यह जरूरी नहीं कि हर कोई फोन पर साक्षात्कार देने के अनुरोध पर सकारात्मक रुख अपनाने का इच्छुक हो ही। वैसे भी अगर कोई फ़ोन पर साक्षात्कार देने को तैयार हो भी जाए तो ऐसा साक्षात्कार आम तौर पर छोटा और संक्षिप्त ही होगा।

इसमें कोई संदेह नहीं कि सर्वेक्षण करने का सबसे अच्छा तरीका व्यक्तिगत रूप से साक्षात्कार ही है। डाक सर्वेक्षण अथवा टेलीफ़ोन (अथवा ई-मेल) साक्षात्कारों की तुलना में व्यक्तिगत साक्षात्कार में शोधकार को उत्तर देने वाले से सीधे उत्तर पूछने का मौका मिलता है। बातचीत के दौरान ऐसे प्रश्न भी पूछे जा सकते हैं जो प्रश्नावली में शामिल नहीं हैं किंतु जिनसे और अधिक सामग्री प्राप्त हो सकती है। इस तरह कुछेक महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर जानने एवं कभी-कभी और अधिक उपयुक्त प्रश्नों की खोज में मदद मिल सकती है।

जब एक बार सामग्री एकत्र कर ली जाती है तो शोधकार को उस सामग्री को कोडीकृत करना होता है और उसपर इस तरह काम करना होता है कि सामग्री में मिले आँकड़े

तालिकाबद्ध और चार्टो के रूप में प्रस्तुत किए जा सकें। सांख्यिकीय गणना करने के लायक उन्हें बनाने से हमें आँकड़ों के विभिन्न गुणों के बारे में पता चल सकता है। आँकड़ों को संसाधित करने और उन्हें रिपोर्ट में प्रस्तुत करने के बारे में खंड 8 की इकाई 32 में विस्तार से चर्चा की गई है।

20.7 सर्वेक्षण शोध के लाभ और उसमें आने वाली समस्याएँ

सर्वेक्षण शोध के निम्नलिखित लाभ हैं :

i) सर्वेक्षण शोध (विशेष तौर पर स्वयं किया जाने वाला सर्वेक्षण) अपेक्षाकृत कम खर्चीला होता है।

ii) ज़्यादा बड़ी जनसंख्या की विशेषताओं, जनसंख्या विशेष की जनसांख्यिकीय संरचना और उसमें उभरती प्रवृत्तियों एवं विन्यासों के बारे में वर्णन करने में सर्वेक्षण शोध उपयोगी है।

iii) दूर-दराज़ के क्षेत्रों में डाक, ई-मेल अथवा टेलीफ़ोन का इस्तेमाल करके सर्वेक्षण शोध की व्यवस्था की जा सकती है। फलस्वरूप बहुत अधिक संख्या में प्रतिदर्श मिलना संभव हो जाता है और उनमें बहु-चरों (multi-variables) का विश्लेषण होते हुए भी सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हो जाते हैं।

iv) सर्वेक्षण शोध में निर्धारित विषय पर कई प्रश्न पूछे जा सकते हैं, जिससे विश्लेषण में पर्याप्त लचीलापन आ जाता है।

v) सर्वेक्षण की व्यवस्था करने के लिए कई तरीक़ों को चुना जा सकता है। शोध-सामग्री को एकत्र करने के लिए अपनी आवश्यकताओं और सीमाओं के आधार पर प्रत्यक्ष साक्षात्कार, टेलीफ़ोन और ई-मेल आदि में से कोई भी तरीका अपनाया जा सकता है।

vi) गुणात्मक विधियों के विपरीत, सर्वेक्षण शोध मानकीकृत प्रश्नों के द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इससे प्रतिभागियों पर एक समान परिभाषा का दबाव पड़ता है जो मापन को अपेक्षाकृत अधिक सटीक बनाने में सहायक होता है। समूहों से एक ही प्रकार के आँकड़े एकत्र करने और बाद में उन्हें (अध्ययन समूहों के बीच) तुलनात्मक रूप से व्याख्यायित करने, अपेक्षाकृत निष्पक्षता से और उच्च विश्वसनीयता से लागू करने में मानकीकरण से सहायता मिलती है।

सर्वेक्षण शोध में आने वाली कुछ आम समस्याएँ इस प्रकार हैं :

i) चूँकि मानकीकरण लोगों के दिमाग पर छाया रहता है इसलिए जो सवाल बनाए जाते हैं उनकी सार्थकता बहुत बड़े क्षेत्र को लेकर होती है और ध्यान दिया जाता है कि प्रश्न सभी प्रत्यर्थियों के लिए एक न्यूनतम रूप से एक-साथ उपयुक्त हों। इससे एक प्रकार का सरलीकरण हो जाता है और हो सकता है कि हम यही भूल जाएँ कि कई प्रत्यर्थियों के लिए सबसे उपयुक्त क्या हो सकता है।

ii) सर्वेक्षण शोध इस अर्थ में कठोर है कि इसमें बहुत ही अचूक अध्ययन प्रारूप अपेक्षित है। इस्तेमाल किए जाने वाले उपकरणों और उपकरणों को प्रयुक्त करने के तरीक़े आदि हर चीज़ के बारे में पहले से ही निश्चित करना पड़ता है। सर्वेक्षण विधि को प्रविधिवत बनाने के लिए सामग्री एकत्रीकरण की पूरी अवधि के दौरान इसमें किसी भी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।

iii) सर्वेक्षण को अर्थपूर्ण और व्यावहारिक बनाने के लिए शोधकार को यह सुनिश्चित करना होता है कि चुने हुए प्रत्यर्थियों में से ज़्यादातर उत्तर देने को तैयार हों। किंतु ऐसा हमेशा हो पाना आसान काम नहीं है। ऐसी स्थिति में सर्वेक्षण कर पाना बहुत कठिन हो जाता है।

iv) सर्वेक्षण में प्रत्यर्थी की ओर से पर्याप्त ध्यान देना और ईमानदारी से जवाब देना अपेक्षित होता है। यह विशेष तौर पर उस स्थिति में लागू होता है जब प्रश्नावली का इस्तेमाल किया जा रहा हो और सर्वेक्षण की व्यवस्था स्वयं की जा रही हो। प्रत्यर्थी में प्रश्नावली को ध्यान से भरने में इच्छा हो ही — यह आवश्यक नहीं है। कभी-कभी कुछ जानकारी को याद करना या फिर विवादास्पद मुद्दों पर स्पष्ट रुख अपनाना प्रतिभागियों के लिए मुश्किल हो जाता है।

v) सर्वेक्षण शोध के साथ एक अन्य समस्या यह भी है कि इसमें हमेशा संदर्भ की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाता यानी यह हमेशा संदर्भहीन होता है। जबकि सामाजिक विश्व में, वह संदर्भ और परिवेश भी बहुत महत्वपूर्ण हैं जिनसे प्रश्न पूछे जा रहे हैं और उत्तर दिए जा रहे हैं। उदाहरण के लिए, घर में पति और परिवार के अन्य सदस्यों की उपस्थिति में किसी महिला-प्रत्यर्थी से महिला-पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव से जुड़े प्रश्न के उत्तर और नौकरी करने के स्थान पर पूछे गए इस प्रश्न के उत्तर में बहुत अंतर हो सकता है। सर्वेक्षण शोध में 'संदर्भ' की ओर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है।

सोचें और करें 20.2

मिचेल (1984 : 272) ने 'प्रोड्यूसिंग डाटा' अध्याय में सामाजिक सर्वेक्षण पर अपनी टिप्पणी में लिखा है :

स्पष्टतः सामान्य सर्वेक्षण कार्य में शोध-सामग्री एकत्र करने पर सीमाओं का अर्थ यह है कि एकत्रित सामग्री अवश्य ही प्रेक्षण और साक्षात्कार से इकट्ठी की गई सामग्री से भिन्न गुणवत्ता वाली होगी। सर्वेक्षण से प्राप्त सामग्री द्वारा परिवर्तनशीलता और सम्बद्धता के विभिन्न विन्यासों के विस्तार का अंदाज़ा लगाना अपेक्षित है। दूसरी ओर, यह स्वाभाविक है कि सर्वेक्षण से प्राप्त सामग्री द्वारा हमें नई दिशाएँ ढूँढ पाने या प्रत्यर्थियों के संबंधों की श्रृंखला में संज्ञानात्मक और भावनात्मक निहितार्थों की तलाश करने में कठिनाई हो।

MAADHYAM IAS

मिचेल की टिप्पणी का उपर्युक्त उद्धरण पढ़िए और इकाई 20 के अपने अध्ययन के आधार पर एक कागज़ पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

i) सामान्य सर्वेक्षण कार्य में सामग्री के एकत्रीकरण में क्या सीमाएँ हैं?

ii) क्या आपके लिए ऐसे सर्वेक्षण का उदाहरण देना संभव है जिसने परिवर्तनशीलता और सम्बद्धता के विभिन्न विन्यासों के विस्तार का आकलन किया हो? इसके लिए आप *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकली वीकली* के विभिन्न अंकों का इस्तेमाल करें और इस सामग्री से सर्वेक्षण का उदाहरण प्राप्त करें।

iii) उपर्युक्त अनुच्छेद में 'संबंधों की श्रृंखला' शब्द का क्या अर्थ है? क्या यह सर्वेक्षणों में नेटवर्क के बारे में सामग्री से जुड़ी है?

20.8 निष्कर्ष

सर्वेक्षण विधि और सामाजिक शोध में सर्वेक्षण की प्रासंगिकता की जानकारी देना इकाई 20 का लक्ष्य था। सर्वेक्षण पद्धति के इतिहास को बताते हुए इसमें सर्वेक्षण करने की क्रियाविधि बताई गई और साथ ही सर्वेक्षण के लाभ और उसमें आने वाली समस्याओं की जानकारी भी दी गई। इकाई 20 में खंड 5 की सर्वेक्षण्ण प्रारूप, उपकरण और क्रियान्वयन से जुड़ी अगली तीन इकाइयों को समझने के लिए पर्याप्त आधारभूमि तैयार की गई है।

20.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मोज़र, सी.ए. और जी. काल्टन 1973. *सर्वे मैथ्ड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशनस्*, द इंग्लिश लैंग्वेज बुक सोसाइटीः लंदन।

डि वास डी.ए, 1986. *सर्वेज़ इन सोशल रिसर्च*, जॉर्ज एलन एंड अनविनः लंदन।

यंग, पी.वी, 1988. *साइंटिफ़िक सोशल सर्वेज़ एंड रिसर्च*, प्रेंटिस हॉलः नई दिल्ली।

गुडी, विलियम जे एंड पॉल के. हैट 1952, *मैथ्ड्स इन सोशल रिसर्च*, मैक्ग्रा-हिलः न्यूयॉर्क।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 21

सर्वेक्षण प्रारूप

इकाई की रूपरेखा

21.1 प्रस्तावना

21.2 प्रारंभिक विचारणीय तत्व

21.3 सर्वेक्षण शोध के चरण

21.4 शोध प्रश्न का निर्धारण

21.5 सर्वेक्षण शोध के प्रारूप

21.6 प्रतिचयन करने का प्रारूप

21.7 निष्कर्ष

21.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 21 को पढ़ने के बाद आपके लिए संभव होगा :

- (क) जाँच का उद्देश्य, (ख) वह इकाई जिस पर सर्वेक्षण केंद्रित होना है, तथा (ग) संसाधनों की उपलब्धता को तय करना;
- सर्वेक्षण शोध को चरणों अथवा अवस्थाओं में विभाजित करना;
- सर्वेक्षण के दौरान पूछे जाने वाले विभिन्न प्रकारों के प्रश्न तैयार करना;
- प्रयुक्त होने वाली सर्वेक्षण प्रारूप का प्रकार निश्चित करना; तथा
- सर्वेक्षण के लिए एक प्रतिचयन करने की योजना चुनना।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

21.1 प्रस्तावना

सर्वेक्षण करने की जटिलता को समझने में प्रारूप तत्वों का बहुत महत्व है। सर्वेक्षण विधि में विभिन्न पक्ष होते हैं जो उसके व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक रूप से कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण होते हैं। इकाई 21 सामाजिक शोध में सर्वेक्षण के मूलभूत आयामों का विवरण देती है। इस इकाई में चर्चा के विषय हैं — सर्वेक्षण शोध करने से पूर्व प्रारंभिक विचारणीय तत्व, सर्वेक्षण के विभिन्न चरण, शोध समस्या का निर्धारण, शोध प्रारूप के प्रकार तथा प्रतिचयन करने के प्रारूप के विवरण।

21.2 प्रारंभिक विचारणीय तत्व

सामाजिक शोध की एक विधि के रूप में सर्वेक्षण करने से पूर्व, निम्नलिखित तीन प्रारंभिक विचारणीय तत्व हैं जिनका शोधकार को ध्यान रखना है:

i) जाँच का प्रयोजन

ii) जनसंख्या, जिसपर सर्वेक्षण को केंद्रित करना है; और

iii) संसाधन उपलब्धता।

इनमें से प्रत्येक तत्व, सर्वेक्षण शोध के लिए आवश्यक है।

सर्वेक्षण शोध करने की पहली आवश्यकता है — स्पष्ट तथा सुपरिभाषित उद्देश्य, प्रयोजन अथवा शोध प्रश्न। शोधकार को स्पष्ट होना चाहिए कि सर्वेक्षण विधि उसके उद्देश्यों (प्रयोजनों अथवा शोध प्रश्नों) के अध्ययन के लिए सर्वोत्तम विधि है। यदि शोध अध्ययन के

उद्देश्यों के विषय में स्पष्ट ज्ञान है तो शोध की विधि के रूप में उपयुक्त सर्वेक्षण का चयन हो पाता है।

दूसरी आवश्यकता है, अध्ययन की जाने वाली जनसंख्या को सुनिश्चित करना। इससे प्रतिचयन तथा संसाधनों के बारे में निर्णयों पर प्रभाव पड़ता है। सर्वेक्षण प्रारूप को विकसित करने में जनसंख्या तक पहुँच एक महत्वपूर्ण तत्व है। इससे अध्ययन की अवधि, शामिल किए जाने वाले लोगों के विभिन्न स्तरों तथा शोध कर्मचारियों और प्रतिचयन के माप की जाँच होती है।

सर्वेक्षण प्रारूप की तीसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता अध्ययन के लिए संसाधनों की उपलब्धता का आकलन करना है। संसाधनों में वित्तीय लागत, मानव-शक्ति की आवश्यकता तथा सर्वेक्षण को पूरा किए जाने के कुल समय को गिना जाता है। सर्वेक्षण प्रायः श्रम-सघन होते हैं जिसमें क्षेत्रीय शोध कार्य में सर्वाधिक लागत का व्यय होता है। क्षेत्रीय शोध कार्य में साक्षात्कार समय, यात्रा अवधि एवं परिवहन लागत आदि शामिल होते हैं। सर्वेक्षण शोध में अतिरिक्त लागतें होती हैं, जैसे साक्षात्कारकर्ताओं का प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन, प्रश्नावली निर्माण, प्रश्नावली का प्रथम परीक्षण, छपाई, डाक प्रेषण, कोडीकरण, कंप्यूटर प्रोग्राम बनाना आदि। अतः सर्वेक्षण शोध शुरू करने से पहले शोधकार को संसाधनों की उपलब्धता का अनुमान लगा लेना चाहिए।

21.3 सर्वेक्षण शोध के चरण

सर्वेक्षण शोध के लिए लोगों की मनोवृत्तियों, विश्वासों और व्यवहार संबंधी जानकारी को व्यवस्थित एवं विस्तृत रूप से एकत्रित करना होता है। सर्वेक्षण में शोधकार को निगमनात्मक दृष्टिकोण (deductive approach) अपनाना होता है। वह सैद्धांतिक अथवा अनुप्रयोगमय शोध समस्या से शुरू करके और आनुभविक माप (empirical measurement) और सामग्री विश्लेषण के साथ शोधकार का अध्ययन समाप्त होता है। एक बार शोधकार जब अपनी शोध के लिए सर्वेक्षण की सर्वोत्तम तथा उपयुक्त विधि निश्चित कर ले तो उस विधि के अनुप्रयोग को अधिक वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित बनाने के लिए उसके द्वारा नाना प्रकार के क़दम उठाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, चरणों की वास्तविक संख्या अथवा उनके क्रम को लेकर शोधकारों एकमत नहीं होता है। यहाँ हमने तीन चरणों के कुछ मुख्य बिंदुओं पर चर्चा की है। इनमें सर्वेक्षण शोध की तैयारी, नियोजन और कार्यान्वयन शामिल हैं। चित्र 21.1 देखिए।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

प्रारूप बनाना तथा नियोजन करने का चरण	**सामग्री एकत्रीकरण का चरण**	**सामग्री विश्लेषण तथा रिपोर्ट का चरण**
1. शोध प्रश्न का निर्धारण 2. सर्वेक्षण शोध प्रारूप को सुनिश्चित करना 3. प्रतिचयन को सुनिश्चित करना 4. सामग्री एकत्रीकरण तकनीकें 5. प्रश्नावली निर्माण 6. मार्गदर्शी (pilot) सर्वेक्षण 7. सर्वेक्षण उपकरण को अंतिम रूप देना 8. अन्वेषकों का प्रशिक्षण-	1. प्रत्यर्थियों को खोजना 2. प्रत्यर्थियों तथा क्षेत्र परिवेश तक पहुँचना 3. मुख्य सर्वेक्षण का मार्गदर्शन और अनुश्रवण (monitoring)	1. संपादन 2. कोडीकरण 3. सारणी निर्माण और विश्लेषण 4. रिपोर्ट लेखन

चित्र 21.1 : सर्वेक्षण शोध के तीन चरणों के मुख्य बिंदु

पहले चरण में सर्वेक्षण के लिए प्रारूप बनाना और नियोजन करना होता है। यह अत्यधिक विस्तृत तथा लंबा चरण होता है। जिसमें सर्वेक्षण करने के बारे में विस्तार से तैयारी की जाती है। यह वास्तविक सर्वेक्षण की आधारभूमि तैयार करने वाला यह चरण महत्वपूर्ण होता है।

इस चरण के महत्वपूर्ण बिंदु हैं — शोध प्रश्न का निर्धारण करना, सर्वेक्षण शोध प्रारूप को सुनिश्चित करना, प्रतिचयन प्रणाली को तैयार करना, सामग्री एकत्रित करने की तकनीकों को सुनिश्चित करना, प्रश्नावली का निर्माण, मार्गदर्शी सर्वेक्षण करना, सर्वेक्षण उपकरण को संशोधित करना, क्षेत्र अन्वेषकों/साक्षात्कारकर्ताओं का प्रशिक्षण।

दूसरे चरण में सामग्री एकत्रित करने के लिए मुख्य सर्वेक्षण का कार्यान्वयन होता है। इसमें प्रत्यर्थियों और क्षेत्र परिवेश की अवस्थिति को जानना और उन तक पहुँचना, सर्वेक्षण करना, क्षेत्रकर्मियों का मार्गदर्शन और अनुश्रवण शामिल होता है।

तीसरे और अंतिम चरण में, शोधकार को एकत्रित सामग्री का संपादन करना होता है, कोड पुस्तक तैयार करनी होती है और सामग्री विश्लेषण के लिए सारणी सुनिश्चित करना होता है। अंत में, शोधकार अध्ययन पर लेख/ रिपोर्ट तैयार करनी होती है।

क्रमिक रूप से इन चरणों तथा इनके बिंदुओं की चर्चा से यह आभास हो सकता है कि किसी चरण के पूर्ण होने के पश्चात दोबारा लौटना नहीं होता है। इसके विपरीत, शोध के बाद के चरणों के दौरान होने वाले विकास के संदर्भ में किसी आरंभिक स्थान पर लिए गए निर्णयों को बदलना प्रायः आवश्यक हो जाता है। उदाहरण के लिए, कार्यान्वयन चरण के दौरान आने वाली समस्याओं के लिए प्रतिचयन प्रारूप अथवा उपकरण के प्रकार अथवा प्रश्नावली में परिवर्तन करना पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त, यह मानना भी एक भूल है कि इन चरणों को एक-एक करके और बाद के चरणों पर बिना विचार किए उठाया जा सकता है। वास्तव में, एक चरण की तैयारी करते समय अन्य चरणों को ध्यान रखना प्रायः आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए, प्रश्नावली बनाते समय वांछित सामग्री विश्लेषण गतिविधियों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

21.4 शोध प्रश्न का निर्धारण

सर्वेक्षण प्रारूप का पहला चरण शोध प्रश्न का निर्धारण होता है। यहाँ शोध प्रश्न का तात्पर्य अध्ययन के प्रमुख ध्येय, समस्या अथवा उद्देश्य से है। वास्तव में सामग्री एकत्रित करने के लिए सर्वेक्षण विधि के चयन से पूर्व प्रश्न का निर्धारण होना चाहिए। यद्यपि, सामाजिक विज्ञानों में सर्वेक्षण के विस्तृत रूप से अनुप्रयोग होते हैं, कभी-कभी यह हो सकता है कि सामग्री एकत्रीकरण की अन्य पद्धतियाँ (जैसे गहराई में जाकर साक्षात्कार अथवा सहभागी प्रेक्षण आदि) चुनी हुई समस्या के लिए अधिक उपयुक्त अथवा सही हो। अतः किसी विशिष्ट शोध समस्या के अन्वेषण के लिए सर्वेक्षण विधि की उपयुक्तता के बारे में सतर्कतापूर्वक सोचना आवश्यक होता है।

इसके अतिरिक्त, यह ध्यान में रखना ज़रूरी है कि शोध के आरंभ में ही शोध प्रश्न के निर्धारण की आवश्यकता होती है। किंतु इस बात पर बल देने का अर्थ यह नहीं है कि सबसे पहले सोचा गया शोध प्रश्न ही अंतिम प्रश्न हो (कोष्ठक 21.1 देखिए)। अक्सर ज्ञापक के साथ वार्तालाप के बीच ही शोध प्रश्न अकस्मात 36 जाता है। इसे अनदेखा नहीं कर सकते। उनके प्रश्नों का योग अथवा परिष्करण पूर्व निर्णित होना एक उपयोग अभ्यास है।

कोष्ठक 21.1: अपने शोध प्रश्नों को परिष्कृत कीजिए

डेविड डि वास (2002) के अनुसार, यह जानना आवश्यक है कि हमें किसकी खोज है। सबसे पहले सोचे हुए केंद्रीय विषय से भ्रमित होकर उन अन्य अनपेक्षित प्रश्नों को न देखना एक भूल है जो प्रारंभिक प्रश्न की तुलना में अधिक रोचक, महत्वपूर्ण अथवा प्रबंधनीय हो सकते हैं। शोध प्रश्नों को परिष्कृत किया जा सकता है तथा सर्वेक्षण शोध के दौरान नए मुद्दे उभरते हैं।

शोध प्रश्न तक कैसे पहुँचा जाता है? प्रायः सामाजिक प्रतिरूप विशेष के विषय में शोधकार की जिज्ञासा उसे विशिष्ट शोध प्रश्न को चुनने का मार्गदर्शन करती है। यद्यपि, शोधकार के लिए अपने शोध प्रश्न का एक से अधिक तरीक़ों से निर्धारण करना संभव है। प्रथमतः, प्रारंभिक बिंदु कोई सिद्धांत अथवा मॉडल हो सकता है। सैद्धांतिक रूपरेखा अथवा मॉडल के चयन का प्रभाव निर्धारित किए जाने वाले प्रश्नों के प्रकार पर होगा और एकत्रित की जाने वाली सामग्री के प्रकार पर होगा। द्वितीयतः, महत्वपूर्ण सामाजिक नीति के निहितार्थ शोधकारों को उनकी शोध समस्या के गठन के लिए मार्गदर्शन देते हैं। अन्य शब्दों में, चुनी गई समस्या सामाजिक सुधार, सामाजिक परिवर्तन अथवा सामाजिक कार्य के मुद्दों के लिए प्रासंगिक होनी चाहिए। तृतीयतः, कुछ शोधकारों द्वारा सामाजिक आलोचना उत्पन्न करने के लक्ष्य के अनुसार उपयुक्त शोध प्रश्नों का गठन किया जा सकता है। कुछ शोध प्रश्न इन मानदंडों में से अनेक अथवा कुछ की पूर्ति कर सकते हैं किंतु यह दुर्लभ होता है कि कोई एक शोध प्रश्न इन सभी की पूर्ति कर सके।

इसके अतिरिक्त, यह महत्वपूर्ण है कि सर्वेक्षण का सामान्य प्रयोजन विशिष्ट केंद्रीय समस्या/लक्ष्य/उद्देश्य में परिवर्तित किया जाए। उदाहरण के लिए, यह कहना पर्याप्त नहीं होगा कि 'मुझे असमानता के विषय में कुछ उत्तर पाने की इच्छा है।' जिनका उत्तर अपेक्षित है, उन प्रश्नों के बारे में हमें स्पष्ट होना चाहिए। किन प्रश्नों के क्या उत्तर? क्या उसे असमानता की सीमा, उसका वितरण, उसके कारण, उसके प्रभाव, अन्यथा क्या मालूम करना है? सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि किस प्रकार की असमानता में उसकी रुचि है? कितनी अवधि में? कहाँ? उसे असमानता का अध्ययन करना है?

प्रश्न निर्धारण की प्रक्रिया रुचि के सामान्य क्षेत्र से सिमट कर ऐसे स्तर तक आती है जो ठोस अनुभविक शोध करने के लिए पर्याप्त रूप से विशिष्ट हो। सर्वेक्षण का प्राथमिक उद्देश्य निर्धारित करने के बाद, अगला सोपान केंद्रीय उद्देश्य से जुड़े सहायक विषयों की पहचान और उन्हें अलग-अलग करने का होता है। उदाहरण के लिए, कॉलेज में स्नातकीय शिक्षा की गुणवत्ता के प्रति विद्यार्थियों की मनोवृत्ति के अध्ययन में शिक्षकों की गुणवत्ता, मूलभूत सुविधाएँ, भर्ती प्रणालियाँ, पाठ्यक्रमों के प्रकार, पाठ्यक्रमों की विषय-वस्तु, शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच संबंध, निदानात्मक (remedial) अध्ययन के लिए सुविधाएँ, पाठ्येतर गतिविधियों के लिए सुविधाएँ और अवसर आदि शामिल किए जा सकते हैं। एक बार सहायक मदों की पहचान होने के बाद, शोधकार उन मदों में से प्रत्येक से संबंधित विशिष्ट जानकारी की तलाश करनी होती है। उदाहरण के लिए, वांछित पाठ्यक्रमों के प्रकार के संदर्भ में, पाठ्यक्रमों की अवधि, पाठ्यक्रमों की प्रस्थिति (आकलित अथवा अनाकलित), पाठ्यक्रमों की उन्मुखता (सैद्धांतिक अथवा व्यावहारिक) आदि के विषय में विस्तृत जानकारी की आवश्यकता होती है।

विषय से संबंधित मौजूदा साहित्य (पुस्तकें और पत्रिकाएँ) की गहन समीक्षा से निर्धारित विषय तक सीमित होने, सहायक विषयों की पहचान करने, सहायक विषयों को अलग-अलग करने और सामग्री एकत्रित करने के लिए इन विषयों पर आवश्यक जानकारी मिलती है। साहित्य की समीक्षा से मदद मिलती है क्योंकि इससे हमें पहले ही हो चुके शोधों में उपलब्ध जानकारी और उनके दायरों का ज्ञान होता है। इस प्रक्रिया से अभी तक हुए शोध में महत्वपूर्ण कमियों को पहचानने में मदद मिलती है। सर्वेक्षण शोध द्वारा अब उन कमियों को पूरा करने का प्रयास करने का अवसर मिलता है।

ऐसे और भी अन्य तरीके हैं जो शोधकार को उसके शोध प्रश्न के निर्धारण में मदद कर सकते हैं। ऐसा एक तरीक़ा समन्वेषणात्मक (exploratory) अध्ययन है जो ऐसे लोगों का अंतरिम और सापेक्षतः असंरचित समन्वेषण होता है जो लोग कई रूपों में उनके समान होते

हैं जिनका हमें मुख्य शोध के लिए अध्ययन करना है। उदाहरण के लिए, यदि हमें स्नातकीय स्तर की शिक्षा में गुणवत्ता का अध्ययन करना है तो हमें कॉलेज जाकर कुछ विद्यार्थियों का साक्षात्कार करना होगा और अध्ययन के लिए विशिष्ट शोध प्रश्नों की पहचान करनी होगी। इस प्रकार के समन्वेषणात्मक अध्ययन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्ष्य यह है कि यह शोधकार की सोच को जाग्रत करता है और अध्ययन में शामिल किए जाने लायक विशिष्ट मुद्दों को पहचानने में उसकी मदद करता है। कभी-कभी यह हमें उन अवधारणाओं को समझने में मदद करता है जो विभिन्न लोगों द्वारा अलग-अलग ढंग से समझी जाती है। जैसे, हमारे उदाहरण में, स्नातकीय शिक्षा में 'गुणवत्ता' की अवधारणा को विभिन्न छात्र-छात्राओं द्वारा अलग-अलग ढंग से देखा जाता है। कुछ के लिए इसका अर्थ कुशल शिक्षक/ शिक्षण से हो सकता है। अन्य के लिए इसका अर्थ अच्छी आधारभूत संरचना अथवा अध्ययन के आवश्यक पाठ्यक्रमों तक पहुँच से हो सकता है।

शोध प्रश्न के निर्धारण का एक अन्य पक्ष यह है कि इसमें विषय के ज्ञाता लोगों से और उन लोगों से परामर्श किया जाता है जिन्होंने इस प्रकार का शोध किया हो। इन विशेषज्ञों के साथ मुलाकात, शोधकार के प्रस्तावित शोध अध्ययन की अप्रत्याशित कठिनाइयों का पूर्व-ज्ञान कराने में मदद करती है।

सोचें और करें 21.1

मान लीजिए, आपको अपशिष्ट नियंत्रण (waste disposal) प्रणालियों पर एक सर्वेक्षण करना है और इसके लिए आपको शोध प्रश्नों का निर्धारण करना है। अपने अध्ययन के मुख्य लक्ष्य, समस्या अथवा उद्देश्य तैयार कीजिए। एक कागज पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

प्रश्न

- अपने अध्ययन के उद्देश्य के संदर्भ में, क्या आपको सामग्री एकत्रीकरण के लिए सर्वेक्षण विधि एक उपयोगी तथा उपयुक्त तरीका लगता है? सामग्री एकत्रीकरण की विधि के रूप में सर्वेक्षण विधि को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने के विशिष्ट कारण बताइए।
- आपने प्रत्येक शोध प्रश्न को किस प्रकार तय किया? अपने सैद्धांतिक मॉडल के चयन को स्पष्ट रूप से बताइए।
- क्या आपने अपशिष्ट नियंत्रण के संदर्भ में सामाजिक नीति को देखा है? अपनी शोध समस्या में इस नीति के अभिप्रायों को सामाजिक नीति द्वारा दिए गए मार्गदर्शन के संदर्भ में विस्तार से बताइए। क्या आपके अध्ययन से सामान्य जनता के लिए महत्वपूर्ण मुद्दे पर सामाजिक आलोचना उत्पन्न हो सकती है? यदि हाँ तो आपको यह बताना होगा कि आपका अध्ययन इसी क्षेत्र में अन्य शोधार्थियों को आगे शोध का निर्धारण करने में किस प्रकार सहायक होगा?
- क्या आपने अपने अध्ययन के सामान्य उद्देश्य को किसी विशिष्ट केंद्रीय समस्या में रूपांतरित किया है? यह महत्वपूर्ण है कि आप इस अभ्यास को अभी करें और बताएँ कि समस्या को सामान्य से विशिष्ट में सीमित करके ठोस शोध करने के लिए निर्धारित स्तर तक लाने के लिए आपने क्या-क्या किया?
- शोध क्षेत्र से आप क्या अपेक्षा करें तथा कौन-सी अप्रत्याशित कठिनाइयाँ शोध के दौरान आ सकती हैं और किन बातों से सतर्क रहने की जरूरत है आदि प्रश्नों को समझने के लिए क्या आपने शोध क्षेत्र के विशेषज्ञों से परामर्श किया है। यदि हाँ, तो बताइए आपको क्या मालूम हुआ। यदि नहीं, तो बताइये कि आपने अभी तक ऐसा क्यों नहीं किया?

21.4 में प्रासंगिक विषय की मदद से उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर लिखें।

MAADHYAM IAS

शोध प्रश्नों को परिभाषित करने का कोई सरल तरीका नहीं होता है। डेविड डि वॉस के अनुसार विभिन्न प्रकार के प्रश्नों को अलग-अलग किया जा सकता है और विवरणात्मक शोध प्रश्न अथवा व्याख्यात्मक शोध प्रश्न अथवा दोनों प्रकारों के शोध हेतु आइए, पहले विवरणात्मक शोध प्रश्नों को देखें।

क) **विवरणात्मक शोध प्रश्न**

विवरणात्मक प्रश्न को केंद्रित करना कठिन होता है, किंतु निम्नलिखित पाँच प्रश्न इसमें मदद कर सकते हैं :

- हमारी रुचि की समयावधि क्या है?
- हमारी रुचि की भौगोलिक स्थिति क्या है?
- उप-समूहों के लिए विन्यास क्या हैं?
- विषय के किस पक्ष में हमारी रुचि है?
- हमारी रुचि किस सीमा तक अमूर्त है?

ख) **व्याख्यात्मक शोध प्रश्न**

व्याख्यात्मक शोध प्रश्न के निर्धारण में पहला सोपान यह सुनिश्चित करना है कि हमें प्रतिरूप का कारण खोजना है अथवा इसका प्रभाव खोजना है। हमें संभावित कारणों और प्रभावों की सूची बनानी चाहिए और उसके बाद संबंधित सामग्री एकत्रित करनी चाहिए। इस प्रकार की सूची बनाने के अनेक तरीक़े हैं, जैसे, पूर्व शोध, तथ्य, हमारे अपने अनुमान, सूचनादाताओं के साथ अंतःक्रिया। निम्नलिखित चार प्रश्न व्याख्यात्मक शोध प्रश्न के निर्धारण में सहायता कर सकते हैं :

- मुझे किसकी व्याख्या करनी है?
- इसके संभावित कारण क्या हैं?
- मुझे किन कारणों का अन्वेषण करना है?
- इसकी संभावित प्रणालियाँ क्या हैं?

इस प्रकार, ऐसे अनेक मुद्दे हैं जिन्हें सामग्री एकत्रीकरण की विधि के रूप में सर्वेक्षण का प्रस्ताव करने वाले शोध प्र्न के निर्धारण के दौरान ध्यान में रखना चाहिए। इस तरह की विचारणा से शोधकार के मस्तिष्क में नए-नए भाव आते हैं कि किस प्रकार शोध को संचालित किया जाए।

21.5 सर्वेक्षण शोध के प्रारूप

शोध प्रश्न के निर्धारण के बाद हमें सर्वेक्षण के प्रारूप को सुनिश्चित करना चाहिए। सर्वेक्षणों के लिए शोध प्रारूप मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं : (i) प्रयोगात्मक; और (ii) विवरणात्मक प्रारूप। प्रयोगात्मक प्रारूप पर्यावरणीय व्यवस्थाओं का उपयोग करते हैं और प्रतिभागियों अथवा प्रेक्षणों के दो अथवा दो से अधिक समूहों पर निर्भर करते हैं। जब यादृच्छिक रूप से गठित सौ बच्चों के एक समूह की तीन बार तुलना की जाती है तो सर्वेक्षण प्रारूप को प्रयोगात्मक कहा जाता है। विवरणात्मक प्रारूप, पहले से ही मौजूद समूहों और प्रतिरूपों पर जानकारी देता है। इसमें नए समूहों की रचना नहीं की जाती है। विवरणात्मक प्रारूपों को 'प्रेक्षण' अथवा 'व्याख्यात्मक' प्रारूप भी कहा जाता है। आइए दोनों प्रकारों की विस्तारपूर्वक चर्चा करें

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

i) प्रयोगात्मक प्रारूप

आर्लीन फिंक (1995) के अनुसार दो या अधिक समूहों की तुलना प्रयोगात्मक प्रारूपों की विशेषता है। इनमें से कम से कम एक समूह प्रयोगात्मक होता है। दूसरा समूह नियंत्रण (अथवा तुलना) समूह होता है। प्रयोगात्मक समूह को एक नया अथवा बग़ैर जाँचा हुआ, रचनात्मक कार्यक्रम, हस्तक्षेप अथवा उपचार दिया जाता है। नियंत्रण समूह को एक विकल्प दिया जाता है (जैसे परंपरागत कार्यक्रम अथवा कोई कार्यक्रम ही नहीं)। समूह एक समष्टिवाची इकाई होता है। कभी-कभी इस इकाई में समान अनुभव वाले लोग होते हैं, जैसे ऐसे लोग जिन्हों युद्ध में भाग लिया हो अथवा जिन्होंने एक ही अस्पताल में उपचार करवाया हो अथवा जो एक ही विद्यालय में पढ़े हुए हों। और समयों में, इकाई प्राकृतिक रूप से होती है जैसे कक्षा, व्यापार, संस्थान, अस्पताल अथवा जेल।

नियंत्रण विभिन्न प्रकार के होते हैं।

प्रथमतः, समवर्ती नियंत्रण होते हैं। इनमें प्रतिभागियों को यादृच्छिक रूप से समूहों में नहीं रखा जाता है। 'समवर्ती' का अर्थ है कि प्रत्येक समूह को एक ही समय में एकत्रित किया गया है। उदाहरण के लिए, जब 20 में से 10 स्कूलों को यादृच्छिक रूप से किसी प्रयोगात्मक समूह में रखा जाता है और इसी समय 10 को एक नियंत्रण समूह में रखा जाता है तो आपके पास एक यादृच्छिक परीक्षण अथवा एक सत्य प्रयोग हो जाता है।

द्वितीयः, ऐसे समवर्ती नियंत्रण होते हैं जिनमें प्रतिभागियों को यादृच्छिक रूप से समूहों में नहीं रखा जाता है। इन्हें ग़ैर-यादृच्छिक नियंत्रित परीक्षण, प्रयोग-कल्प अथवा ग़ैर-समतुल्य नियंत्रण कहा जाता है।

तृतीयतः, 'स्व-नियंत्रण' में, एक समूह का दो विभिन्न समय पर सर्वेक्षण किया जाता है। इनके लिए पूर्व-माप तथा पश्च-माप की आवश्यकता होती है और इन्हें 'लंबे समय समय तक चलने वाला' अथवा 'पूर्व-पश्च' प्रारूप कहा जाता है।

चतुर्थतः, 'ऐतिहासिक नियंत्रण' होता है जिसमें अन्य सर्वेक्षणों में प्रतिभागियों से एकत्रित सामग्री का उपयोग किया जाता है। अंत में, पूर्व अथवा पश्च मापों सहित अथवा इन मापों के बिना सभी प्रकारों के 'संयोजन' से बने समवर्ती नियंत्रण होते हैं। सभी प्रकार की प्रयोगात्मक प्रारूपों में से, सामाजिक शोध में प्रायः लंबे समय तक चलने वाले (longitudenal) प्रारूप का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है।

MAADHYAM IAS

लंबे समय तक चलने वाले प्रारूप (Longtudinal designs)

लंबे समय तक चलने वाले* प्रारूप में सामग्री को व्यवस्थित रूप से कई महीनों अथवा वर्षों की अवधि में इस प्रकार एकत्रित किया जाता है जिससे उस निर्धारित अवधि में मनोवृत्तियों अथवा व्यवहारों की प्रवृत्ति को देखना संभव हो सके। इस संबंध में आइए एक उदाहरण को देखें। यदि एक शोधकार को सफ़ेदपोश कर्मचारियों के खर्चीले व्यवहार में परिवर्तनों के अध्ययन करना है तो उसे यह अध्ययन एक वर्ष के दौरान भिन्न-भिन्न समय बिंदुओं पर अथवा हर दूसरे या तीसरे महीने के अंतराल पर करना होगा। समस्या के इस प्रकार के अध्ययन में लंबे समय तक चलने वाले (अथवा समय-श्रृंखला वाले) प्रारूप शामिल होते हैं।

प्रवृत्ति अध्ययन (Panel study) और पैनल अध्ययन (Trend study)

लंबे समय तक चलने वाले प्रारूप दो प्रकार की होते हैं — पैनल अध्ययन और प्रवृत्ति अध्ययन। पैनल अध्ययन में उन्हीं प्रत्यर्थियों (लोगों) को दो अथवा अधिक बार साक्षात्कार किया जांता है। प्रवृत्ति अध्ययन में, लोगों (प्रत्यर्थियों) के दो अथवा अधिक भिन्न प्रतिचयनों को एक ही जनसंख्या में से अलग-अलग समय पर लिया जाता है (उदाहरण के लिए, कोष्ठक 21.2 देखिए)।

कोष्ठक 21.2: पैनल अध्ययन और प्रवृत्ति अध्ययन के उदाहरण

मान लीजिए, हमें संसद के आम चुनावों से दो महीने पहले प्रमुख राजनीतिक दलों के प्रति बदलते हुए समर्थन को समझना है। इस अध्ययन के लिए, मत देने वाले आयु समूह में से वयस्कों के एक प्रतिचयन को लेना होगा। मान लीजिए, उनमें से 60 प्रतिशत का समर्थन राजनीतिक दल-I के लिए है। चुनाव से एक महीना पहले हम उन लोगों का दोबारा साक्षात्कार करें जो हमारे प्रतिचयन का हिस्सा थे। संभवतः उनमें से अब 55 प्रतिशत का समर्थन राजनीतिक दल-I के लिए होगा। यह पैनल अध्ययन कहलाएगा। दूसरी ओर, यदि हम एक महीना पहले मतदाताओं का एक नया प्रतिचयन लें और पाएँ कि नए मतदाताओं में से 55 प्रतिशत का समर्थन राजनीतिक दल-I के लिए है तो यह प्रवृत्ति अध्ययन कहलाएगा।

प्रवृत्ति अध्ययनों से कुल (net) परिवर्तनों के विषय में जानकारी मिलती है और पैनल अध्ययनों में कुल (net) एवं सकल (gross) दोनों परिवर्तनों के विषय में जानकारी मिलती है। मान लीजिए, समय बिंदु-1 पर प्रत्येक 100 लोगों में से 60 का कहना है कि उनका मत राजनीतिक दल-I को जाएगा। संभव है कि समय बिंदु-1 और समय बिंदु-2 के बीच में राजनीतिक दल-I के मतदाताओं में से दस अपनी राय बदल कर राजनीतिक दल-II को अपना मत दें। दूसरी ओर, राजनीतिक दल-II के पाँच मतदाता राजनीतिक दल-I को मत दें। अतः समय बिंदु-1 और समय बिंदु-2 के बीच में, कुछ लोगों ने अपनी राय बदल दी– इसे सकल परिवर्तन कहा जाता है। इन व्यक्तिगत परिवर्तनों का कुल परिणाम यह है कि समय बिंदु-2 पर प्रत्येक 100 लोगों में से 55 लोगों ने राजनीतिक दल-I को मत देने का इरादा बनाया। इसलिए यदि हमने पैनल प्रारूप का प्रयोग किया है तो हमें अपने प्रतिचयन से उन लोगों की संख्या मिली जिन्होंने समय बिंदु-1 और समय बिंदु-2 के बीच अपनी राय बदली। यदि हमने प्रवृत्ति प्रारूप का प्रयोग किया तो हमें जनसंख्या के कुल परिवर्तन के बारे में समझ मिलती है। किंतु इसमें हमें व्यक्तिगत परिवर्तन की संख्या नहीं मिलती है। यदि कुल परिवर्तन 5 प्रतिशत है (राजनीतिक दल-I को समर्थन देने वाले 60 प्रतिशत से 55 प्रतिशत), तो सकल परिवर्तन 5 से 85 प्रतिशत तक कुछ भी हो सकता है। प्रवृत्ति अध्ययन बताते हैं कि किस प्रकार अध्ययन की जा रही जनसंख्या के लिए एक परिवर्ती का वितरण बदल रहा है। पैनल अध्ययन बताते हैं कि किस प्रकार जनसंख्या के व्यक्तिगत सदस्य बदल रहे हैं (पैनल प्रारूप के एक उदाहरण के लिए कोष्ठक 21.3 देखिए)।

कोष्ठक 21.3: पैनल प्रारूप का एक उदाहरण

लज़ार्सफ़ैल्ड तथा अन्य सहलेखकों को 'द पीपल्स चॉइस' (1994) नामक पुस्तक में पैनल प्रारूप का एक उत्तम उदाहरण मिलता है। शोधकारों ने 1940 के मई और नवंबर के महीनों के बीच ऐरी काउंटी, ओहायो (संयुक्त राज्य अमेरिका) के 600 नागरिकों के एक समूह/पैनल का हर महीने एक बार इस संदर्भ में साक्षात्कार किया कि 1940 के राष्ट्रपति चुनाव में उनका मत किसे जाएगा। इन अन्वेषकों की विशेष रुचि इस बात में थी कि उन्हें मालूम हो कि किस प्रकार पैनल सदस्यों ने वे निर्णय लिए जिनके आधार पर उन्होंने वास्तव में मतदान किया।

पैनल प्रारूपों के लाभ और हानियाँ, दोनों ही हैं। अधिकांश लाभ इस तथ्य से संबंधित होते हैं कि कुछ महीनों अथवा वर्षों की अवधि के दौरान बार-बार उन्हीं प्रत्यर्थियों का साक्षात्कार किया ज़ा सकता है ताकि यह देखा जा सके कि उनकी सोच अथवा मनोवृत्तियों में क्या परिवर्तन हुआ है। यदि हम मनोवृत्तियों अथवा बताए गए व्यवहारों में कोई परिवर्तन दिखाई देता है तो हमारे लिए यह कहना संभव है कि जनसंख्या में ठोस परिवर्तन हुआ है।

MAADHYAM IAS

पैनल प्रारूप का एक अन्य लाभ यह है कि वे प्रत्येक प्रत्यर्थी के विषय में, अन्य प्रारूपों की तुलना में, अधिक जानकारी प्रदान करते हैं। पैनल प्रारूप पैनल में व्यतीत समय संबंधी जानकारी के लिए प्रत्यर्थियों की स्मृति पर अत्यधिक निर्भरता से भी बचने का प्रत्यन करते हैं फिर भी प्रत्यर्थियों के अतीत के विषय में प्रश्नों के लिए ये प्रारूप भी स्मृति पर निर्भर होते हैं।

पैनल अध्ययन की प्राथमिक हानि प्रतिदर्श (sample) नश्वरता है; अर्थात, सहयोग की कमी, मृत्यु अथवा आवास परिवर्तन आदि के कारण पैनल सदस्यों में कमी आ सकती है। एक अन्य हानि यह है कि सामग्री एकत्रित करने में काफ़ी समय लगता है और इसलिए लागत भी अधिक होती है। इसके अतिरिक्त, उसी जनसंख्या पर सर्वेक्षणों की पुनरावृत्ति के कारण, अपने 'चयनित' प्रत्यर्थी होने की भूमिका के प्रति प्रत्यर्थी में अति-संवेदनशीलता पैदा हो सकती है।

विवरणात्मक प्रारूप

विवरणात्मक प्रारूप दो प्रकार के होते हैं — (i) सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक (cross-sectional) प्रारूप; और (ii) प्रसामूहिक (cohort) प्रारूप।

i) **सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक (cross-sectional) प्रारूप**

सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक* प्रारूप में, किसी एक समय-बिंदु पर सामग्री एकत्रित की जाती है। सामाजिक सर्वेक्षण शोध में यह सर्वाधिक प्रयुक्त और मूलभूत प्रारूप है और इसे कभी-कभी 'एक बार में किया (सिंगल-शॉट) सर्वेक्षण' भी कहा जाता है। यह प्रतिचयनित जनसंख्या की विशेषताओं के विषय में निष्कर्ष निकालने के लिए तथा सामग्री एकत्रीकरण वाले समय-बिंदु के परिवर्तियों के बीच संबंध के विषय में निष्कर्ष निकालने के लिए सर्वोत्तम प्रारूप है। इस प्रकार के अध्ययनों के लिए साक्षात्कार, कभी-कभी, एक सप्ताह से भी कम समय में हो जाता है। किंतु प्रायः इसके लिए कुछ सप्ताह और कुछ मामलों में कई महीने भी लग जाते हैं। उदाहरण के लिए, राजनीतिक दल विशेष के प्रति वर्तमान में लोगों की रुचि का सर्वेक्षण को सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक (cross-sectional) सर्वेक्षण कहा जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

शोधकार सामग्री के लिए सामग्री प्रयोग एक परिवर्ती अथवा अनेक परिवर्तियों के साथ प्रतिदर्श (sample) को समझाने के लिए किया जा सकता है अथवा इन परिवर्तियों के बीच संबंध को दर्शाने के लिए किया जा सकता है। निम्नलिखित उदाहरण पर विचार कीजिए। एक शोधकार को अभिभावकों की अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति प्रवृत्ति का पता लगाना है। उसने एक समुदाय (ग्रामीण/शहरी) में स्कूल जाने वाले बच्चों वाले घरों का एक प्रतिदर्श चुना है तथा उन चुने हुए घरों के अभिभावकों का साक्षात्कार किया है। साक्षात्कारों के समाप्त होने के उपरांत, शोधकार ने एकत्रित सामग्री का विश्लेषण किया है और निष्कर्ष निकाला है। यहाँ प्रयुक्त शोध प्रारूप को सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक प्रारूप कहा जाता है।

इस प्रारूप का एक लाभ यह है कि शोधकार के लिए शोध विषय के विभिन्न आयामों को खोजने के लिए प्रतिदर्श को कई भिन्न उप-समूहों में वर्गीकृत करना संभव है। शोधकार ने यहाँ इस प्रारूप को कारणात्मक विश्लेषण में प्रयुक्त किया है। यह रोचक है कि अतीत के विषय में प्रश्न पूछने से सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक प्रारूप द्वारा कुछ लंबे समय में होने वाले (अतिरिक्त समय) सामाजिक प्रतिरूपों, जैसे सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन कर पाना संभव होता है।

तथापि सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक प्रारूपों की दो महत्वपूर्ण सीमाएँ होती हैं — (1) परिवर्तियों के कालक्रम को निर्धारित करना कठिन होता है, (2) समय के अंतराल में परिवर्तन का विश्लेषण करना कठिन होता है। पहले बिंदु का उदाहरण देने के लिए, मान लीजिए एक अध्ययन में हमें पता लगता है कि संगठनात्मक संबंध राजनीतिक प्रभावशीलता के साथ जुड़ा है, यह आभास होता है कि कोई भी व्यक्ति राजनीतिक तंत्र को प्रभावित कर सकता

है। यह प्रश्न उठता है कि क्या हमारे प्रत्यर्थी संगठन से पहले जुड़े और बाद में उस संगठन में अपने अनुभवों के कारण स्वयं को प्रभावशाली महसूस करने लगे अथवा वे पहले से ही स्वयं को प्रभावशाली समझते थे और इसी कारण से उन्होंने एक विशिष्ट संगठन से अपना संबंध जोड़ा। वैकल्पिक रूप से क्या दोनों कारणात्मक श्रृंखलाएँ भिन्न लोगों के लिए अथवा उन्हीं लोगों के लिए कार्यरत हैं। यदि हमने एक समय बिंदु पर सामग्री एकत्रित की है तो यह जान पाना कठिन है कि प्रत्येक परिवर्ती में अंतर कब विकसित हुआ। चूँकि प्रभावों से पहले कारण आते हैं, इसलिए यह जान पाना कठिन होता है कि सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक प्रारूपों में किस परिवर्ती को स्वतंत्र, कारणात्मक माध्यम माना जाना चाहिए।

सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक प्रारूप की दूसरी सीमा यह है कि कालांतर में होने वाले परिवर्तनों की व्याख्या करने के लिए इसका उपयोग करना कठिन है। मतदान व्यवहार के विश्लेषण पर विचार कीजिए। एक चुनाव के दौरान एक प्रदत्त समय-बिंदु पर हमें प्रत्यर्थियों से पूछना होता है कि 'यदि चुनाव आज होते तो उनका मतदान किस प्रकार होता'। लेकिन, मतदान के निर्णय प्रचार के दौरान बदल सकते हैं और संभव है कि विभिन्न मतदाता परिवर्तन के विभिन्न विन्यास दिखाएँ। कुछ लोगों को आरंभ से अपनी पसंद पता होती है और वह कभी परिवर्तित नहीं होती, कुछ लोग प्रत्याशियों के बीच दुविधा में रहते हैं, कुछ लोग चुनाव के दिन तक भी निर्णय नहीं ले पाते हैं। इसके अतिरिक्त इस तरह के लोग भी हैं जो प्रचार में जल्दी निर्णय लेकर और अपनी राय कभी नहीं बदलते, उनकी विभिन्न विशेषताएँ होती हैं और जो लोग देर से निर्णय लेते हैं, उनकी तुलना में जल्दी निर्णय लेने वालों को भिन्न प्रकार के दबाव महसूस होते हैं। कुल मिलाकर, एक समय-बिंदु पर एकत्रित की गई सामग्री कालांतर में होने वाली सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने में कठिनता पैदा करती है।

ii) प्रसामूहिक (cohort) प्रारूप

ये अग्रदर्शी अथवा भावी प्रारूप जनसंख्या-विशेष में परिवर्तनों के विषय में सामग्री उपलब्ध कराता है। मान लीजिए, 1996 के ओलम्पिक खेलों में भाग लेने वाले धावकों की आकांक्षाओं का एंक सर्वेक्षण, 1996, 2000 तथा 2004 में किया गया है। यह 'प्रसामूहिक* प्रारूप' है और 1996 ओलम्पिक खेल प्रसमूह (cohort) है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

प्रसामूहिक प्रारूप अनुदर्शी भी हो सकते हैं, अथवा अतीत में झाँक सकते हैं (ऐतिहासिक प्रसमूह) यदि अध्ययन की जा रही घटनाएँ वास्तविक रूप से सर्वेक्षण शुरू होने से पहली घटी है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि कुछ व्यक्तियों के एक समूह में दस वर्ष पूर्व एक बीमारी x पाई गई थी। यदि आप उनके आज तक के चिकित्सा रिकॉर्डों का सर्वेक्षण करें तो कहा जाएगा कि आपने अनुदर्शी प्रसमूह का उपयोग किया है।

सोचें और करें 21.2

अपशिष्ट नियंत्रण प्रणालियों के अध्ययन में आपने अब तक शोध प्रश्नों का निर्धारण कर लिया होगा और उन्हें परिष्कृत भी कर लिया होगा। अपने द्वारा निर्धारित एवं प्रयुक्त शोध प्रश्नों के प्रकार शोध प्रारूप के प्रकार को स्पष्ट करने के लिए, एक कागज़ पर निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

प्रश्न

- क्या आपके द्वारा बनाए गए प्रश्न, पाठ में बताए गए विभिन्न प्रकारों का सम्मिश्रण हैं अथवा केवल एक ही प्रकार के हैं?
- अपशिष्ट नियंत्रण प्रणालियों पर अपने शोध में सर्वेक्षण के लिए आपने किस प्रकार के सर्वेक्षण प्रारूप को चुना है?

अपने द्वारा चुने गए प्रारूप के विषय में विस्तार से लिखिए और उसे चुनने तथा पाठ में दिए गए अन्य प्रारूपों को न चुनने के कारण भी बताइए।

21.6 प्रतिचयन करने का प्रारूप

सर्वेक्षण प्रारूप का चयन करने के बाद, एक प्रतिचयन योजना का चुनाव किया जाना चाहिए। खंड 4 और 5 की इकाइयों में प्रतिचयन के विषय में अनेक विवरण पहले ही दिए जा चुके हैं। इसलिए अब यहाँ उन्हें ही शामिल किया जा रहा है, जो नए हैं।

प्रतिचयन क्यों?

चूँकि शोधकार द्वारा लागत तथा मानव-शक्ति की सीमाओं के कारण सर्वेक्षण शोध में संपूर्ण जनसंख्या को शामिल नहीं किया जा सकता है अतः जनसंख्या की विशेषताओं को समझने के लिए जनसंख्या का एक अंश लिया जाता है। अतः शोध परियोजना में विभिन्न केसों (cases) को शामिल करने के लिए व्यवस्थित रूप से चयन करने की प्रक्रिया को प्रतिचयन कहते हैं। सभी केसों के समूह के अध्ययन पर होने वाले व्यय की तुलना में शोधकार को केसों का समूह (अथवा प्रतिदर्श) अधिक प्रबंधनीय और कार्य करने के लिए कम खर्चीला होता है। उदाहरण के लिए, 20,000 लोगों की तुलना में 2,000 लोगों पर परिवर्तियों को नापने में व्यय और समय कम लगेगा। शोधकार की केसों के छोटे उप-समूह में अपने आप में ऐसी कोई रुचि नहीं होती है, बल्कि उसे तो इस उप-समूह के अध्ययन के माध्यम से समग्र समूह के विषय में सामान्यीकरण करने में रुचि है। यदि सही ढंग से किया गया है तो प्रतिचयन शोधकार को केसों के छोटे समूह पर परिवर्तियों को नापने का अवसर देकर उसे सभी केसों में परिणामों का सटीक सामान्यीकरण करने योग्य बनाता है। उदाहरण के लिए, यदि प्रतिचयन ठीक तरह से किया जाए तो एक शोधकार के लिए लगभग 2000 केसों के साथ परिवर्तियों को माप कर 20 करोड़ केसों के बारे में सामान्यीकरण करना संभव होता है। सर्वेक्षण शोधकारों का यह ठोस मत है कि अध्ययन के लिए यदि सभी 20 करोड़ केसों को लिया जाए तो मात्र 2-4 प्रतिशत का ही अंतर होगा।

अगला प्रश्न यह है कि मुट्ठी भर केसों के आधार पर सामान्यीकरण करना किस प्रकार संभव है। यह किसी जादू पर नहीं बल्कि तर्कसंगत सांख्यिकीय कारणों पर आधारित है जिसका अनुभविक प्रमाण द्वारा बार-बार परीक्षण किया जाता है। इसके अतिरिक्त, शोधकार द्वारा सामान्यीकरण के उद्देश्य से किसी भी प्रतिदर्श का उपयोग नहीं किया जा सकता है। अध्ययन में सटीकता के स्तर को बढ़ाने के लिए कठिन परिश्रम की अपेक्षा करने वाली भली-भाँति निर्धारित प्रतिचयन प्रक्रियाएँ होती हैं।

MAADHYAM IAS

प्रतिचयन में प्रयुक्त मूलभूत शब्द

i) प्रतिचयन तत्व

जनसंख्या में विश्लेषण की इकाई (अथवा केस) को प्रतिचयन तत्व कहते हैं। यह कोई व्यक्ति, समूह, संगठन, लिखित दस्तावेज़ अथवा प्रतीकात्मक संदेश या फिर कोई सामाजिक क्रिया (तलाक, झगड़ा आदि) भी हो सकता है जिसे मापा जा रहा है।

ii) जनसंख्या

यह तत्वों का एक बड़ा समूह है जिसमें से कोई एक प्रतिदर्श लिया जाता है। कभी-कभी 'जनसंख्या' के स्थान पर 'समष्टि' (universe) शब्द का प्रयोग किया जाता है। समष्टि अथवा जनसंख्या को परिभाषित करने के लिए शोधकार द्वारा प्रतिचयनित इकाई, भौगोलिक स्थान तथा जनसंख्याओं की सामयिक सीमाओं को निर्धारित किया जाता है। 'लक्षित जनसंख्या' शब्द का अभिप्राय केसों के उस विशिष्ट समूह से है जिसका शोधकार को अध्ययन करना है।

iii) प्रतिचयन अनुपात

प्रतिदर्श के आकार का अभिलक्षित (target) जनसंख्या के आकार से अनुपात, 'प्रतिचयन अनुपात' कहलाता है। उदाहरण के लिए, यदि एक कॉलेज में 2000 विद्यार्थी हैं तथा शोधकार ने उसमें से 200 का एक प्रतिदर्श लिया है तो प्रतिचयन अनुपात 200/2000 = 0.1, या 10 प्रतिशत है।

iv) प्रतिचयन रचना

जनसंख्या एक अमूर्त अवधारणा है। विशिष्ट लघु जनसंख्याओं के अतिरिक्त, कोई व्यक्ति जनसंख्या को पूरी तरह से और सही अर्थों में स्थिर नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, शहर विशेष में किसी भी एक समय-बिंदु पर, कुछ का देहावसान हो रहा होता है तो कुछ शहर के बाहर भ्रमण में हैं, कुछ अस्थायी रूप से दूसरे शहरों में कार्यरत हैं तो कुछ का जन्म हो रहा होता है। शोधकार को यह स्पष्ट निर्णय करना होता है कि उसे किसको गिनना है। क्या उसे शहर के उस निवासी को भी गिनना है जो छुट्‌टी पर है अथवा शोधकार के अध्ययन के निर्धारित समय के दौरान शहर से बाहर हो? स्पष्ट है कि 'जनसंख्या' की अवधारणा अमूर्त है और हमारे मस्तिष्क में है। किंतु उसे स्थूल रूप से सुनिश्चित करना पाना असंभव होता है। चूँकि यह एक अमूर्त अवधारणा है, लघु जनसंख्याओं को छोड़कर, शोधकार को जनसंख्या का अनुमान लगाना पड़ता है। इसलिए, जनसंख्या का अनुमान लगाने को एक प्रचालनीय (operational) परिभाषा की आवश्यकता है।

शोधकार को एक निश्चित सूची विकसित करके जनसंख्या विशेष को प्रचालन करना होता है। यह सूची उस जनसंख्या के सभी तत्वों का नजदीक से अनुमान लगाती है। इस सूची को 'प्रतिचयन रचना' कहा जाता है। शोधकार के पास विभिन्न प्रकार की प्रतिचयन रचनाओं में से किसी को चुनने की वरीयता है, जैसे टेलीफ़ोन निर्देशिकाएँ, ड्राइविंग लाइसेंस, राशन कार्ड, किसी क्लब की सदस्यता, विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों का पंजीकरण आदि। अच्छे प्रतिचयन के लिए एक अच्छी प्रतिचयन रचना आवश्यक है। प्रतिचयन रचना तथा अवधारणात्मक रूप से परिभाषित जनसंख्या के बीच की बेमेलता अवश्य ही त्रुटि का एक मुख्य स्रोत हो सकती है। उदाहरण के लिए, यदि आपने प्रतिचयन रचना के रूप में टेलीफ़ोन निर्देशिका को चुना है तो वह शहर विशेष (मान लीजिए, दिल्ली) की जनसंख्या का केवल 5-10 प्रतिशत दर्शाती है। निर्देशिका में उन लोगों की सूची नहीं होती है जिसके पास टेलीफ़ोन नहीं है। शहर में होने वाले आवासीय तथा टेलीफोन नंबर में परिवर्तनों को भी इस सूची में शीघ्रता से अद्यतन नहीं किया जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

v) प्राचल (पैरामीटर) और सांख्यकी

जनसंख्या की कोई भी विशेषता 'जनसंख्या प्राचल' कहलाती है। उदाहरण के लिए, 6-11 वर्ष की आयु के विज्ञान विषयों का अध्ययन करने वाले छात्र-छात्राओं से चयनित विद्यार्थी आदि। यह जनसंख्या की सही विशेषता है। प्राचलों को तभी निर्धारित किया जाता है जब जनसंख्या के सभी तत्व माप लिए जाते हैं। बड़ी जनसंख्याओं के लिए प्राचल को कभी पूर्ण सटीकता (accuracy) से नहीं जाना जा सकता है। इसलिए शोधकार को प्रतिदर्शों के आधार पर इसका अनुमान लगाना होता है।

प्रतिदर्श से मिली सामग्री का उपयोग करके जनसंख्या प्राचलों का अनुमान लगाने को 'सांख्यिकी' (statistic) कहा जाता है।

प्रतिचयन त्रुटियाँ

यदि एक ही जनसंख्या से अनेक प्रतिदर्श लिए जाएँ तो उन सभी की विशेषताओं में एक-दूसरे के साथ अथवा जनसंख्या के साथ समरूप होने की संभावना नहीं होती है। संक्षेप में,

'प्रतिचयन त्रुटि' उत्पन्न हो जाती है। यह आवश्यक नहीं है कि प्रतिचयन प्रक्रिया में हुई किसी भूल के कारण प्रतिचयन त्रुटि हुई हो। वस्तुतः विभिन्न व्यक्तियों के यादृच्छिक चयन के कारण अंतर होते हैं।

प्रतिचयन करने के प्रारूपों के प्रकार

प्रतिचयन प्रारूप दो प्रकार के होते हैं। पहला, संभाव्यता-प्रतिचयन प्रारूप (probability sampling design) तथा दूसरी, असंभाव्यता-प्रतिचयन प्रारूप (non-probability sampling design) कहलाता है। खंड 5 की इकाई 15 में हमने इस बात पर ध्यान केंद्रित किया था कि परिकलन किस प्रकार किए जाते हैं जबकि यहाँ हमने प्रत्येक प्रकार की प्रतिचयन प्रारूप पर उसके आवश्यक चरित्र एवं प्रक्रिया के संदर्भ में चर्चा की है। आपको यहाँ विषय-वस्तु में कुछ पुनरावृत्ति मिलने की संभावना है। विषय-वस्तु की इस समझ को पुनर्स्थापित करने के लिए इस पुनरावृत्ति को रखा गया है।

i) **संभाव्यता प्रतिचयन प्रारूप (probability sampling design)** : संभाव्यता प्रतिचयन से एक सांख्यिकीय आधार मिलता है जो बताता है कि प्रतिदर्श विशेष 'अभिलक्ष्य जनसंख्या' का प्रतिनिधि है। संभाव्यता प्रतिदर्श में, जनसंख्या के प्रत्येक तत्व को प्रतिदर्श में शामिल होने का एक ज्ञात अवसर मिलता है। इसका आशय है कि अभिलक्ष्य जनसंख्या के प्रत्येक सदस्य की अध्ययन/प्रतिदर्श में शामिल होने की संभाव्यता शून्यरहित है। इस प्रारूप में प्रतिदर्श परिणामों की सटीकता के अनुमानों से यह जानने का अवसर मिलता है कि यदि हमने कुल जनसंख्या की जनगणना की होती तो हमें क्या पता लगता।

ii) **असंभाव्यता प्रतिचयन प्रारूप (non-probability sampling design)** : असंभाव्यता प्रतिचयन प्रारूपों में हमें यह नहीं पता लगता कि जनसंख्या के किसी तत्व के पास चयनित होने का कोई अवसर है अथवा नहीं। असंभाव्यता प्रतिचयन में भी चयन की संभाव्यता को निर्धारित नहीं किया जा सकता है। ऐसा इस लिये कि संभाव्यता प्रतिचयन प्रत्येक तत्व की चुने जाने की संभावना 50 प्रतिशत तथा प्रतिदर्श में शामिल न होने की संभावना 50 प्रतिशत होती है। असंभाव्यता प्रतिदर्शों को अभिलक्ष्य जनसंख्या की विशेषताओं तथा सर्वेक्षण की आवश्यकताओं के अनुसार बनाया जाता है। असंभाव्यता प्रतिचयन में निर्वाचन-योग्य अभिलक्ष्य जनसंख्या के कुछ सदस्यों को चुने जाने का अथवा नहीं चुने जाने का अवसर मिलता है। इसलिए इस प्रतिदर्श के आधार पर सटीकता के सांख्यिकीय अनुमान नहीं लगाए जा सकते हैं। असंभाव्यता प्रतिचयन प्रारूपों का वहाँ उपयोग किया जाता है जहाँ संभाव्यता प्रतिचयन की कोई संभावना नहीं होती है। जब भी संभव हो, संभाव्यता प्रतिचयन प्रारूपों को प्राथमिकता दी जाती है।

संभाव्यता प्रतिचयन प्रक्रियाएँ

संभाव्यता प्रतिचयन प्रक्रियाओं को निम्नलिखित पाँच रूपों में समझा जा सकता है:

i) **साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन (simple random sampling)**

साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन में अध्ययन के अंतर्गत जनसंख्या के प्रत्येक सदस्य के पास चुने जाने का समान अवसर होता है। इस प्रक्रिया में, जनसंख्या (प्रतिचयन रचना) की सूची में से प्रतिदर्श के लिए विषयों की आवश्यक संख्या यादृच्छिक रूप से चुन ली जाती है। संभाव्यता तथा अवसर के कारण प्रतिदर्श में ऐसे विषय होने चाहिए जिनकी विशेषताएँ समग्र जनसंख्या के जैसी हो। उदाहरण के लिए, कुछ वृद्ध, कुछ युवा, कुछ लंबे, कुछ छोटे, कुछ अमीर, कुछ गरीब आदि। इस प्रकार के प्रतिचयन के लिए ज़रूरी शर्त है कि जनसंख्या (प्रतिचयन रचना) की एक संपूर्ण सूची की हो।

MAADHYAM IAS

साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि शोधकार को पूर्वाग्रह से रहित प्रतिदर्श बिना अधिक तकनीकी कठिनाई के मिल जाता है। उदाहरण के लिए, एक बार यदि कोई सदस्य (या तत्व) चयनित होता है तो उसे दूसरा अवसर नहीं मिलता है तथा उसे समूह में पुनः नहीं रखा जा सकता है। इसी वजह से साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन पूर्वाग्रह रहित होता है। साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्श को चुनने के सामान्य तरीक़ों में लाटरी द्वारा यादृच्छिक संख्याओं की सारणी द्वारा अथवा अब कंप्यूटर द्वारा दी गई यादृच्छिक संख्याओं द्वारा चुनने की प्रक्रिया होती है। लॉटरी प्रणाली को छोटी जनसंख्या अथवा प्रतिचयन रचना के लिए उपयोग में लाया जाता है। बड़ी प्रतिचयन रचनाओं के लिए कंप्यूटर द्वारा निकाली गई संख्याओं को चुना जाता है।

यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन द्वारा जनसंख्या के आदर्श प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है। अन्य शब्दों में, यह कहना बुद्धिमत्ता होगी कि अधिकतर यादृच्छिक प्रतिदर्श अधिकांश बार जनसंख्या के निकट होते हैं किंतु यह आवश्यक नहीं है कि संपूर्ण जनसंख्या के साथ उनका पूरी तरह से मेल हो ही।

ii) व्यवस्थित प्रतिचयन (systematic sampling)

यह साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन का संशोधित रूप है। इसमें जनसंख्या सूची में से केसों का यादृच्छिक न होकर व्यवस्थित रूप से चयन किया जाता है। यहाँ शोधकार को यादृच्छिक संख्याओं की सूची के स्थान पर 'प्रतिचयन अंतराल' का परिकलन करना होता है। यह अंतराल शोधकार के लिए अर्ध-यादृच्छिक चयन प्रक्रिया बन जाती है। इसलिए एक व्यवस्थित प्रतिदर्श में प्रत्येक 'n' वें तत्व को प्रतिदर्श में शामिल होने का अवसर मिलता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें कुल 100 केसों में से 10 को चुनना हो तो प्रत्येक दसवें तत्व को चयनित होने का अवसर मिलेगा। इस केस में, 'n' वास्तव में 1 से 10 तक की कोई भी संख्या है। इस प्रकार, व्यवस्थित प्रतिचयन में, प्रारंभिक बिंदु को यादृच्छिक रूप से चुना जाता है।

MAADHYAM IAS

अधिकांश केसों में, साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्श तथा व्यवस्थित प्रतिदर्शों का वस्तुतः समतुल्य परिणाम होता है जिसमें साधारण यादृच्छिक प्रतिचयन के स्थान पर व्यवस्थित प्रतिचयन का प्रयोग नहीं किया जा सकने की एक महत्वपूर्ण स्थिति तब होती है जब प्रतिदर्श के तत्व किसी चक्रण अथवा विन्यास में संगठित होते हैं। उदाहरण के लिए, यदि विवाहित दंपतियों के प्रतिचयन को संगठित किया जाए, जिसमें पुरुष की संख्या प्रथम और महिला की संख्या द्वितीय हो तो इस प्रकार का विन्यास शोधकार को अप्रतिनिधिक प्रतिदर्श देता है, यदि शोधकार ने व्यवस्थित प्रतिदर्श का उपयोग किया है। उसका व्यवस्थित प्रतिदर्श गैर-प्रतिनिधिक हो सकता है तथा इसमें केसों के संगठित तथा विन्यासित करने पर निर्भर करेगा कि संभवतः प्रतिदर्श में केवल पत्नियाँ अथवा केवल पति हों।

iii) स्तरित प्रतिचयन (stratified sampling)

स्तरित प्रतिचयन में जनसंख्या को समरूप समूहों (उप-समूहों अथवा स्तरणों) में विभाजित किया जाता है जिसमें प्रत्येक समूह में समान विशेषताओं वाले व्यक्ति या विषय होते हैं। उदाहरण के लिए, अभी लिए गए उपर्युक्त उदाहरण में, समूह 'क' में केवल पुरुष हो सकते हैं तथा समूह 'ख' में केवल महिलाएँ। जनसंख्या को स्तरणों अथवा उप-समूहों में विभाजित करने के बाद, शोधकार को प्रत्येक उप-समूह में से साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्श लेना होता है अथवा व्यवस्थित प्रतिदर्श लेना होता है।

उप-समूहों के विषय में निर्णय कैसे लिए जाते हैं? स्तरण अथवा उप-समूहों का चयन किया जाता है क्योंकि इस बात का प्रमाण उपलब्ध है कि उप-समूह परिणाम से जुड़े होते हैं। स्तरण के चयन के लिए न्यायसंगति साहित्य तथा विशेषज्ञों की राय मिल सकती है।

स्तरित प्रतिचयन में यादृच्छिक प्रक्रियाओं के नियंत्रण की बजाए स्वयं शोधकार का प्रत्येक स्तरण के सापेक्ष आकार पर नियंत्रण होता है। इससे एक प्रतिदर्श के भीतर विभिन्न स्तरणों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो जाता है। यद्यपि एक शर्त है कि स्तरित प्रतिचयन प्रणालियाँ ऐसे प्रतिदर्श उत्पन्न करती हैं जो यदि स्तरण सूचना सही हो तो साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्श अथवा व्यवस्थित प्रतिदर्श की तुलना में अधिक प्रतिनिधिक होते हैं।

iv) **समूह प्रतिचयन (cluster sampling)**

सर्वेक्षण शोध में समूह प्रतिचयन सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाला संभाव्यता प्रतिदर्श प्रारूप है। यह दो समस्याओं का निदान करता है — पहली समस्या है एक अच्छी प्रतिचयन रचना का अभाव, तथा दूसरी समस्या है प्रतिदर्शित तत्व अथवा केसों तक पहुँचने में लगने वाली लागत। उदाहरण के लिए, शहर विशेष के कॉलेजों के पूर्व-स्नातकों की एक सूची उपलब्ध नहीं है। यदि एक सही प्रतिचयन रचना बनाई भी जाए तो शहर-भर में बड़े भौगोलिक क्षेत्र में फैले कॉलेजों के सभी पूर्व-स्नातकों को शामिल करने वाली सूची की लागत बहुत ज़्यादा आएगी। इस केस में, किसी एक प्रतिचयन रचना का प्रयोग करने के स्थान पर, शोधकारों द्वारा ऐसे प्रतिचयन प्रारूपों का प्रयोग कियां जाता है जिनमें 'समूह' को शामिल किया जाता है। इस उदाहरण में, कॉलेज एक समूह है।

समूह, एक प्राकृतिक रूप से उपलब्ध इकाई है (जैसे, कॉलेज, जिसमें अनेक कक्षाएँ हों, विद्यार्थी, शिक्षक होते हैं, शहर में पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, मध्य, उत्तर आदि नामक क्षेत्र होते हैं, राज्य आदि)। समूहों का यादृच्छिक रूप से चयन किया जाता है तथा चयनित समूह के सभी सदस्यों को प्रतिदर्श में शामिल किया जाता है अथवा प्रत्येक समूह में से साधारण यादृच्छिक अथवा व्यवस्थित अथवा स्तरित प्रतिदर्श लिए जाते हैं। समूह प्रतिचयन का उपयोग बृहत् सर्वेक्षणों में किया जाता है। यह स्तरित प्रतिचयन से इस संदर्भ में भिन्न है कि समूह प्रतिचयन में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध इकाई क्षेत्र से आरंभ किया जाता है। शोधकार द्वारा समूहों में से चयन किया जाता है तथा चयन के सभी सदस्यों का सर्वेक्षण किया जाता है अथवा उनमें से यादृच्छिक रूप से चयन होता है। आवश्यक नहीं कि परिणामस्वरूप मिला प्रतिदर्श छात्रों द्वारा शामिल नहीं किए छात्रों का प्रतिनिधित्व करे और न ही यह आवश्यक है कि एक समूह, दूसरे समूह का प्रतिनिधित्व करे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

v) **चरण-प्रतिचयन (stage sampling)**

चरण-प्रतिचयन को बहुचरण-प्रतिचयन भी कहा जाता है। यह समूह-प्रतिचयन का ही विस्तार है। इसमें विभिन्न चरणों में एक प्रतिदर्श का चयन शामिल होता है। अर्थात प्रतिदर्श से प्रतिदर्श ग्रहण करना। मान लीजिए, हमें एक बड़े शहर के स्कूलों में बच्चों की शैक्षणिक योग्यता का सर्वेक्षण करना है। एक प्रकार के चरण-प्रतिचयन में कुछ स्कूलों का चयन किया जा सकता है और यादृच्छिक रूप से प्रत्येक स्कूल में से कुछ कक्षाओं का चयन और इन कक्षाओं में से कुछ बच्चों का चयन करना होगा। एक अन्य प्रकार के चरण-प्रतिचयन में, या तो शहर/समाज में भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर या स्कूल के प्रकार (पब्लिक/प्राइवेट सहायता-प्राप्त/प्राइवेट बे-मदद आदि) के आधार पर एक स्कूल का चयन हो सकता है और तब उनका सरल यादृच्छिक प्रतिचयन, व्यवस्थित प्रतिचयन या स्तरित प्रतिचयन या इन सबके मिश्रण से प्रतिचयन किया जा सकता है।

असंभाव्यता-प्रतिचयन प्रारूप (non-probability sampling design)

i) **प्रासंगिक अथवा सुविधाजनक प्रतिचयन (accidental or convenience sampling)**

यह 'आम व्यक्ति' (man-on-the-street) सर्वेक्षण भी कहलाता है और इसमें उन व्यक्तियों/

केसों का चयन शामिल होता है जो सड़क, बाजार, स्कूल या सिनेमाघर आदि में मौजूद होते हैं। इसे तब तक किया जाता है जब तक कि अपेक्षित प्रतिदर्श का आकार प्राप्त नहीं हो जाता। इस प्रकार के सर्वेक्षण से प्रभावहीन तथा अत्यंत अप्रतिनिधिक प्रतिदर्श प्राप्त होते हैं और इसलिए इस प्रकार के प्रतिचयन के उपयोग की सलाह नहीं दी जाती है। जब एक शोधकार द्वारा सुविधानुसार एक अविचारित प्रतिदर्श का चयन किया जाता है तो उसे आसानी से ऐसा प्रतिदर्श मिलता है जो जनसंख्या का निरा मिथ्या-निरूपण करता है। ऐसे प्रतिदर्श सस्ते और जल्दी मिल जाते हैं और इनमें पूर्वाग्रहों तथा त्रुटियों की कमी नहीं होती है। इस प्रकार के सर्वेक्षण का एक उदाहरण टेलीविज़न के कार्यक्रमों के लिए सड़कों पर लिए गए साक्षात्कार होते हैं।

ii) निर्धारित मात्रा प्रतिचयन (quota sampling)

निर्धारित मात्रा वाले प्रतिचयन का वर्णन प्रायः स्तरित प्रतिचयन की अ-संभाव्य समतुल्यता की तरह से किया जाता है। निर्धारित मात्रा वाले प्रतिचयन में शोधकार द्वारा जनसंख्या को उप-समूहों अथवा श्रेणियों में विभाजित किया जाता है जैसे पुरुष तथा महिला, आरक्षित जातियाँ और अनारक्षित जातियाँ, कला और वाणिज्य, युवा और वृद्ध आदि। इसके बाद शोधकार को प्रत्येक वर्ग अथवा उप-समूह में व्यक्तियों का अनुपात निर्धारित करना होता है। इसलिए प्रतिदर्श की भिन्न श्रेणियों में प्रत्यर्थियों की संख्या निश्चित होती है।

निर्धारित मात्रा वाला प्रतिचयन संशोधित प्रतिचयन है क्योंकि इसमें शोधकार द्वारा प्रतिदर्श की जनसंख्या के कुछ अंतरों को सुनिश्चित किया जा सकता है। परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि यह पूरी तरह से प्रतिनिधिक होता है। उदाहरण के लिए, एक बार निर्धारित मात्रा वाला प्रतिचयन में निर्धारित श्रेणियों को चुन लिया गया तो सुविधा अथवा प्रासंगिक प्रतिचयन के आधार पर प्रत्येक श्रेणी में व्यक्तियों की वास्तविक संख्या का चयन होता है। इसके अतिरिक्त, शोधकार अध्ययन में शामिल व्यक्तियों के वास्तविक केसों के चयन में शोधकार के पूर्वाग्रह का प्रवेश हो सकता है।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

iii) सप्रयोजन अथवा निर्णयपरक प्रतिचयन (purposive or judgmental sampling)

सप्रयोजन प्रतिचयन में शोधकार द्वारा प्रतिदर्श में शामिल केसों को उनके विशिष्ट मूल्यांकन के आधार पर चुना जाता है अर्थात अपने मस्तिष्क में सुस्पष्ट लक्ष्य के अंतर्गत केसों के चयन के लिए शोधकारों को अपने निर्णय का प्रयोग करना होता है। सप्रयोजन प्रतिचयन तीन परिस्थितियों में उचित होता है। ये हैं — पहला, इसका प्रयोग ऐसे केसों का चयन के लिए किया जाता है जो विशेष रूप से सूचनात्मक होते हैं। दूसरा, सप्रयोजन प्रतिचयन का प्रयोग दुर्गम और विशिष्ट जनसंख्या के सदस्यों के चयन के लिए भी किया जा सकता है। तीसरा, सप्रयोजन प्रतिचयन को वहाँ प्राथमिकता दी जाती है जहाँ शोधकार को विशिष्ट प्रकार के केसों की जड़ तक खोज करनी हो।

iv) आयात्मक प्रतिचयन (dimensional sampling)

निर्धारित मात्रा वाले प्रतिचयन के और अधिक परिष्कृत रूप को आयात्मक प्रतिचयन कहा जाता है। इसमें जनसंख्या की विशेष रुचि के विभिन्न कारकों को पहचानना तथा उन कारकों के प्रत्येक सम्मिश्रण में से कम से कम एक प्रत्यर्थी को लेना होता है।

v) हिमकुंदक प्रतिचयन (snowball sampling)

इस प्रकार के प्रतिचयन को नेटवर्क अथवा श्रृंखला प्रेषण अथवा ख्याति प्रतिचयन भी कहा जाता है तथा यह एक नेटवर्क में केसों को पहचानने और प्रतिचयन (अथवा चयन) करने

का एक तरीका है। हिमकुंदक प्रतिचयन हिमकुंदक सादृश्य पर आधारित है जो छोटे आकार से आरंभ होता है परंतु जैसे-जैसे यह गीली बर्फ पर घूमता है वह अतिरिक्त बर्फ को समेटकर अपने आकार में बड़ा होता जाता है। इस प्रकार के प्रतिचयन के अधिकांश मुख्य स्रोत में मित्रता तंत्र होते हैं। इसके अतिरिक्त, व्यावसायिक संगठन, गप्प-सड़ाका करने वाले समूह आदि भी इस प्रकार के प्रतिचयन के आधार बनते हैं।

प्रतिदर्श आकार

प्रतिदर्श के आकार के विषय में अक्सर प्रश्न पूछा जाता है कि यह कितना बड़ा होना चाहिए। सर्वोत्तम उत्तर होगा 'यह निर्भर करता है' अर्थात इस प्रश्न का कोई स्पष्ट उत्तर नहीं है। सर्वेक्षण प्रतिचयन के साहित्य से भावी सर्वेक्षण शोधकारों को व्यापक जानकारी मिल सकती है। यदि शोधकार सामग्री विशेष का सांख्यिकीय विश्लेषण करना है तो कुछ लोगों के अनुसार कम से कम तीस का प्रतिदर्श होना चाहिए। प्रतिदर्श का आकार सदैव ही शोधकार की योजना पर निर्भर करता है तथा इस पर कि उसके प्रयोजनों तथा जनसंख्या के लक्षणों की दृष्टि से प्रतिदर्श को कितना सही होना है। यहाँ, यह कहा जा सकता है कि बड़ा प्रतिदर्श मात्र, प्रतिनिधिक प्रतिचयन की गारंटी नहीं होता है। इसके अतिरिक्त, जब प्रतिदर्श का आकार बढ़ाया जाता है तो उसकी लागत भी बढ़ा जाती है। प्रतिदर्श के आकार का मूल्यांकन करते समय एक शोधकार को अपने मस्तिष्क में इन सभी विचारों को भी रखना होता है।

इकाई 15 के भाग 15.3 में आपने यह पढ़ा है कि जब औसत का आकलन करना हो तथा अनुपात का प्रतिचयन करना हो तब प्रतिदर्श के आकार का परिकलन कैसे किया जाता है। आइए अब सोचें और 21.3 को पूरा किया जाए।

सोचें और करें 21.3

लगभग पाँच सौ शब्दों में अपशिष्ट नियंत्रण प्रणालियों पर अपने शोध में प्रतिचयन के प्रकार और सर्वेक्षण प्रारूपों के विषय में विवरणात्मक टिप्पणी तैयार कीजिए। टिप्पणी लिखते समय इकाई में संदर्भित पाठ्य-पुस्तकों की यथासंभव सहायता लीजिए।

MAADHYAM IAS

21.7 निष्कर्ष

इस इकाई में सर्वेक्षण शोधकार की आरंभिक आवश्यकताओं को विवेचित करने का प्रयास किया गया है। इसमें सर्वेक्षण करने के लिए आवश्यक ज़रूरतों और सर्वेक्षण शोध को अधिक व्यवस्थित बनाने के लिए उठाए जाने वाले क़दमों के बारे में बताया गया है। इकाई में शोध प्रश्न निर्धारण, सर्वेक्षण शोध प्रारूपों, और प्रतिचयन प्रारूपों को विस्तार से बताया गया है। इसलिए इसके द्वारा एम.एस.ओ-002 पाठ्यक्रम के छात्र-छात्राओं को मूलभूत शब्दों और अवधारणाओं तथा उपयुक्त उदाहरणों सहित सर्वेक्षण प्रक्रिया से अवगत कराने का प्रयास किया गया है।

21.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऑल्ड्रिज, ऐलन एंड कैन लवाइन, 2101, *सर्वेइंग द सोशल वर्ल्ड - प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिस इन सर्वे रिसर्च*, ओपन यूनिवर्सिटी प्रेसः बकिंघम.

फिंक, आरलीन. 1995, *द सर्वे हैंडबुक*, सेज पब्लिकेशन्सः थाउज़ेंड ओक्स.

कोयन, लुइस एंड लॉरेंस मॅनियन, 1994, *रिसर्च मैथड्स इन एजूकेशन*, रटलजः लंदन एवं न्यूयॉर्क.

मोज़र, सी.ए, एंड जी. काल्टन, 1973, *सर्वे मैथड्स इन सोशल इन्वैस्टिगेशन*, इ दंग्लिश लैंग्वेज बुक सोसाइटीः लंदन.

द वास, डेविड 2002, *सर्वेस इन सोशल रिसर्च*, रटलजः लंदन.

इकाई 22

सर्वेक्षण उपकरण

इकाई की रूपरेखा

22.1 प्रस्तावना

22.2 शोध-सामग्री को एकत्र करने की तकनीकें/उपकरण

22.3 प्रश्नावली निर्माण

22.4 सर्वेक्षण उपकरण के प्रारूप से जुड़े मुद्दे

22.5 निष्कर्ष

22.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 22 को पढ़ने के बाद आपके लिए संभव होगा :

- आँकड़े एकत्र करने की तकनीक को समझना;
- प्रश्न निर्माण की कला का अभ्यास करना; तथा
- सर्वेक्षण उपकरण के प्रारूप से जुड़ी विश्वसनीयता तथा वैधता के मुद्दों को उजागर करना।

22.1 प्रस्तावना

विश्वसनीय एवं वैध उपकरण (reliable and valid instrument) एकत्रित की गई सामग्री की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। यदि कोई विश्वसनीय उपकरण, एकरूप और वैध है तो वह सही भी होता है। अन्य शब्दों में, कोई भी उपकरण हर बार के उपयोग के साथ विश्वसनीय हो जाता है और इससे एक ही प्रकार की जानकारी मिलती है। ख़राब ढंग से तैयार किया गया सर्वेक्षण उपकरण परिशुद्धता को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है, जिसके कारण संपूर्ण शोध प्रक्रिया प्रभावित हो सकती है। गुणवत्ता एवं उपयोग को बढ़ाने के लिए शोधकार को उपकरण के विकास के दौरान सतर्क रहना चाहिए।

22.2 शोध-सामग्री को एकत्र करने की तकनीकें/उपकरण

इस भाग में हमने जिन बिंदुओं पर चर्चा करेंगे, वे हैं: (i) सर्वेक्षण उपकरण के प्रकार (ii) साक्षात्कारक की भूमिका, (iii) साक्षात्कार के चरण, और (iv) साक्षात्कार पूर्वाग्रह।

i) सर्वेक्षण उपकरण के प्रकार

सर्वेक्षण शोध में मुख्य रूप से पाँच प्रकार के उपकरणों (अथवा तकनीकों) का प्रयोग किया जाता है। ये हैं: (क) स्वतः संचालित प्रश्नावली (ख) रू-ब-रू साक्षात्कार, (ग) टेलीफ़ोन साक्षात्कार (घ) इंटरनेट सर्वेक्षण, तथा (च) संरचित प्रेक्षण। प्रत्येक उपकरण के अपने लाभ तथा हानि हैं, जिनकी चर्चा नीचे की गई है।

क) स्वतः संचालित प्रश्नावली

एक स्वतः संचालित प्रश्नावली में वे प्रश्न होते हैं जिन्हें प्रत्यर्थी द्वारा अपने आप पूरा किया जाता है। स्वतः संचालित प्रश्नावली को डाक द्वारा भेजा जा सकता है अथवा कंप्यूटर की 'साइट पर' अथवा हाथ से कक्षा, विश्राम कक्ष या कार्यालय मे पूरा किया जा सकता है। प्रत्यर्थी (respondent) द्वारा प्रश्नों को पढ़ा जाता है, तत्पश्चात उसके द्वारा उनके उत्तरों को लिखा जाता है।

लाभ : लागत की दृष्टि से स्वतः संचालित प्रश्नावली का स्पष्ट लाभ है। चूँकि साक्षात्कार को सामग्री एकत्रित करने की प्रक्रिया का भाग नहीं बनाया जाता है, इसलिए साक्षात्कार का व्यय न्यूनतम होता है। इसी एक कारण की वजह से, संभवतः अधिकांश सर्वेक्षण शोध को स्वतः संचालित प्रश्नावली द्वारा ही संपन्न किया जाता है। इस उपकरण का एक अन्य लाभ यह भी है कि प्रत्यर्थियों के पास प्रश्नों को समझने और सावधानीपूर्वक सोचने का पर्याप्त समय होता है। साक्षात्कार की भाँति इसमें प्रश्नों के उत्तर तुरंत देने का दबाव नहीं होता है। कुछ प्रत्यर्थियों को साक्षात्कार की अपेक्षा, स्वतः संचालित प्रश्नावली में संवेदनशील मुद्दों (सैक्स, राजनीति तथा धर्म) पर अपनी वास्तविक प्रतिक्रियाएँ देने में अधिक बेहतर महसूस होता है।

डाक द्वारा भेजी गई प्रश्नावली में शोधकार के लिए विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में प्रश्नावली को भेजना संभव होता है तथा प्रत्यर्थी के लिए सुविधानुसार उसे पूरा करना संभव होता है। यदि आवश्यक हो तो प्रत्यर्थी के लिए अपने निजी स्रोतों की जाँच करना भी संभव होता है। डाक द्वारा भेजी गई प्रश्नावली से पहचान गुप्त रह सकती है तथा साक्षात्कारकर्ता के पूर्वाग्रह से बचा जा सकता है। स्वतः संचालित प्रश्नावली अत्यंत प्रभावी होती है और इसमें उत्तर देने की दर ऐसी लक्षित जनसंख्या के लिए काफ़ी ऊँची होती हैं जो शिक्षित होती है अथवा जिसकी विषय में या सर्वेक्षण संगठन में काफ़ी रुचि होती है।

हानियाँ : प्रश्नावली की सबसे बड़ी हानि उसकी निम्न उत्तर-दर है। प्रत्यर्थियों को प्रश्नावली को भरना समय की बर्बादी लग सकता है। प्रश्नावलियाँ उन सामाजिक संदर्भों में कम सफल होती हैं जहाँ मौखिक परंपराएँ प्रमुख एवं लिखित परंपराएँ गौण होती हैं। जब जनसंख्या विशेष के सभी वर्गों तक पहुँचने का प्रयास होता है तो 10 प्रतिशत (और इससे कम) की उत्तर-दर प्रश्नावलियों के लिए असामान्य नहीं होती है। शोधकारों द्वारा इन उत्तर-दरों को अनुस्मारक (reminder) भेजकर बढ़ाया जा सकता है, किंतु इससे सामग्री को एकत्रित करने में समय और व्यय में बढ़ोत्तरी होती है। इसके अतिरिक्त, अनुस्मारक कितने भी विनीत भाव से क्यों न भेजे गए हों, इनसे चिढ़ ही पैदा होती है। इस निम्न उत्तर-दर का एक आंशिक स्पष्टीकरण यह है कि कुछ लोगों को प्रश्नावलियाँ भरने में परेशानी होती है। यहाँ तक कि सरल लिखित प्रश्नावलियों को पूरा करने के लिए भी शिक्षा-स्तर ऊँचा होना चाहिए।

MAADHIYAM IAS

साथ में, प्रश्नावली भरने की दशाओं पर शोधकार का नियंत्रण नहीं होता है। उदाहरण के लिए, प्रत्यर्थी प्रश्नावली को घर में चल रही दावत के समय भरे तो संभव है कि आसपास के अन्य लोगों की रायों द्वारा उसके उत्तर प्रभावित हो जाएँ। कुछ प्रत्यर्थियों द्वारा परिवार के सदस्यों की उपस्थिति में उत्तर भरने के समय उसे परिवार वालों की तरफ से तरह-तरह की रायें मिल सकती हैं। कई बार, शोधकार की जानकारी के बिना चुने गए प्रत्यर्थी के स्थान पर प्रश्नावली किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पूरी करके भेजी जा सकती है। कुछ प्रत्यर्थियों को प्रश्नावली भरने में कई हफ़्ते लग सकते हैं अथवा शोधकार की अपेक्षा के प्रतिकूल प्रश्नों के उत्तर प्रत्यार्थियों द्वारा भिन्न क्रम में दिए जा सकते हैं। आधी-अधूरी भरी हुई प्रश्नावलियाँ भी गंभीर समस्या हो सकती हैं। शोधकार के लिए अपनी आँखों से प्रश्नों पर प्रत्यर्थी की प्रतिक्रियाएँ, शारीरिक विशेषताएँ अथवा प्रश्नावलियाँ भरे जाने की परिस्थिति को नहीं देखा जा सकता है।

शोधकार द्वारा पूछे जा सकने वाले प्रश्नों को स्वतः संचालित प्रश्नावली का प्रारूप सीमित कर देता है। दृश्य सहायकों की आवश्यकता वाले प्रश्नों (उदाहरण के लिए, चित्र की ओर देखिए और मुझे बताइए कि आपको क्या दिखता है?) ग़ैर - 'हाँ ' या 'न ' प्रश्नों, अनेक अनायास उठने वाले प्रश्नों तथा जटिल प्रश्नों के उत्तर स्वतः संचालित प्रश्नावलियों में असंतोषजनक होते हैं।

ख) **रू-ब-रू साक्षात्कार**

साक्षात्कार के लिए कम से कम दो व्यक्तियों की आवश्यकता होती है — एक प्रश्न पूछने वाला व्यक्ति (साक्षात्कारक/इंटरव्यूअर), और दूसरा उत्तर देने वाला व्यक्ति (इंटरव्यूयी)। यद्यपि कुछ केसों में सामूहिक साक्षात्कार भी संभव होते हैं।

लाभः सर्वेक्षण शोध के लिए रू-ब-रू साक्षात्कार सामग्री एकत्र करने की सामान्यतः सर्वश्रेष्ठ तकनीक है। स्वतः संचालित प्रश्नावलियों (विशेष कर जो डाक द्वारा भेजी जाती हैं) की तुलना में इस विधि से शोधकार को चुने हुए व्यक्तियों की कहीं अधिक संख्या से जानकारी प्राप्त करना संभव होता है। इसका एक कारण यह है कि प्रश्नावली प्राप्त होने पर उसे स्वयं भरने की तुलना में प्रत्यक्ष बात करने तथा प्रश्नों के उत्तर देने का अनुरोध करने पर प्रत्यर्थियों के लिए सहयोग देने से इनकार करना अधिक मुश्किल होता है। साक्षात्कारकर्त्ता की परिस्थिति में उत्तर-दर में भी वृद्धि होती है क्योंकि अनेक प्रत्यर्थियों को (जो प्रश्नावली को स्वयं भर पाने में असक्षम होते हैं) साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा वही प्रश्न पूछे जाने पर उत्तर देने में कठिनाई नहीं होती हो और अधिकांश रूप से उनसे उत्तर मिलते ही हैं।

रू-ब-रू साक्षात्कार से न केवल उत्तर-दर में बल्कि उत्तर की गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है। प्रत्यर्थी के प्रश्न समझ नहीं आ सकने की स्थिति में साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा 'कुरेदते हुए प्रश्नों' (probing questions) के उपयोग से उनके अर्थ को स्पष्ट किया जा सकता है। यदि प्रत्यर्थी ने किसी प्रश्न का उत्तर सही संदर्भ में नहीं दिया है तो साक्षात्कारकर्त्ता के लिए यह कहकर - 'आपने अभी जो कुछ कहा, कृपया इसका आशय समझाएँ' बात को आगे बढ़ाना संभव हो है। ऐसे कुरेदते हुए प्रश्नों के उपयोग से अंततः प्रत्यर्थी को किसी विशिष्ट प्रश्न द्वारा वांछित सूचना प्राप्त करने के निकट लाया जा सकता है। शंकाओं के स्पष्टीकरण के साथ, ये अतिरिक्त प्रश्न प्रत्यर्थी द्वारा दी गई जानकारी को अधिक सारपूर्ण बनाते हैं। रू-ब-रू साक्षात्कारों का एक अन्य लाभ यह है कि प्रत्यर्थी प्रश्नों के स्पष्टीकरण माँग सकता है। प्रत्यर्थियों द्वारा साक्षात्कारकर्त्ता को प्रत्यक्ष रूप से ग़लत उत्तर देने की संभावना कम होती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

हानियाँ : स्वतः संचालित प्रश्नावलियों की तुलना में रू-ब-रू साक्षात्कारों के लाभ बहुत बातों पर निर्भर होते हैं, जैसे बातचीत की प्रभावशीलता अच्छे साक्षात्कारकों पर निर्भर करती है जिन्हें प्रत्यर्थियों से सकारात्मक रुख प्राप्त होता है। रू-ब-रू साक्षात्कारों की एक बड़ी हानि यह है कि इन पर व्यय अधिक होता है। वास्तव में अनेक सर्वेक्षण शोध परिस्थितियों के लिए कीमत निषेधात्मक हो सकती है, विशेष तौर पर साक्षात्कारों के लिए प्रशिक्षण, मार्गदर्शन तथा कार्मिकों को दी जाने वाली लागतें बहुत ऊँची हो सकती हैं। रू-ब-रू साक्षात्कार की एक अन्य हानि यह है कि इसमें साक्षात्कारक के अपने पूर्वाग्रह के प्रवेश करने की संभावना होती है। साक्षात्कारक का रूप-रंग, बोलने का ढंग, प्रश्नों में प्रयुक्त शब्द आदि का प्रत्यर्थी पर प्रभाव हो सकता है।

ग) **टेलीफ़ोन साक्षात्कार**

टेलीफ़ोन साक्षात्कार का अभिप्राय उन साक्षात्कारों से है जो टेलीफ़ोन पर किए जाते हैं। इन साक्षात्कारों में साक्षात्कारक की आवाज़ का उपयोग होता है।

लाभः तुलनात्मक रूप से कहें तो टेलीफ़ोन साक्षात्कार कम खर्चीला होता है। रू-ब-रू साक्षात्कार की तुलना में यह प्रायः आधी कीमत पर प्रतिनिधि प्रतिदर्श उपलब्ध करा सकता है। टेलीफ़ोन साक्षात्कार एक लोकप्रिय सर्वेक्षण उपकरण हो जाता है जब प्रत्यर्थियों के पास बड़ी संख्या में टेलीफ़ोन हों। इसके अतिरिक्त, टेलीफ़ोन कंपनियों से यदि रियायतें एवं छूट मिल सके तो सामग्री एकत्र करने का यह बहुत ही कम खर्चीला उपकरण बन जाता है।

हानियाँ : टेलीफ़ोन सर्वेक्षणों में उन लोगों को शामिल नहीं किया जा सकता है जिनके पास टेलीफ़ोन नहीं है जैसे गरीब लोग और वे लोग जिनका टेलीफ़ोन नंबर सूची में नहीं है, या ऐसे लोग जिन्होंने हाल ही में मकान बदला हो। रू-ब-रू साक्षात्कारों से प्राप्त होने वाली जानकारी की तुलना में टेलीफ़ोन साक्षात्कारों में प्रायः उसकी मात्र एक-तिहाई सूचना प्राप्त हो पाती है। टेलीफ़ोन साक्षात्कार में स्वतः संचालित एवं रू-ब-रू साक्षात्कारों की भाँति दृश्य प्रश्न तकनीक (उदाहरण के लिए, प्रत्यर्थी को वैकल्पिक उत्तर-श्रेणियों की एक लंबी सूची देना) का प्रयोग साक्षात्कारकर्ता द्वारा नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, विश्व के अनेक भागों में टेलीफ़ोन कॉल की अत्यंत ऊँची दरें तथा साक्षात्कार की सीमित अवधि, इस उपकरण की मुख्य कमियाँ हैं।

इसके अतिरिक्त, टेलीफ़ोन साक्षात्कार में लंबे उत्तरों की अपेक्षा करने वाले प्रश्नों का प्रयोग करना कठिन होता है। साक्षात्कारकर्ता के लिए केवल गंभीर रुकावटों (उदाहरण के लिए पृष्ठभूमि का शोर) तथा प्रत्यर्थी के स्वर का लहजा (उदाहरण के लिए, क्रोध, चंचलता अथवा झिझक) पर ही ध्यान देना संभव होता है।

घ) **इंटरनेट सर्वेक्षण**

1990 के दशक के मध्य से प्रश्नावलियों के संचालन के लिए इंटरनेट एक व्यावहारिक एवं लोकप्रिय साधन बन गया है। सर्वेक्षण के उपकरण के रूप में इंटरनेट मुख्य रूप से दो प्रकार से प्रयोग किया जाता है — (i) ई-मेल; तथा (ii) वेब-पृष्ठों द्वारा।

i) **ई-मेल सर्वेक्षण**: सर्वेक्षण शोध की सभी तकनीकों में से ई-मेल प्रश्नावलियाँ सबसे सस्ती होती हैं। ये तीन भिन्न रूपों में होती हैं। पहला, ई-मेल के अंश के रूप में जोड़े गए प्रश्न। यह ई-मेल सर्वेक्षण का सर्वाधिक मूलभूत तरीका है। इसमें प्रत्यर्थी द्वारा अपने उत्तर को दर्शाने के लिए मेल-संदेश (mail message) में ही उत्तरों को भरा जाता है। दूसरा, ई-मेल अटैचमेंट के रूप में भेजी गई प्रश्नावली। तीसरा, अन्तर्क्रियात्मक (Interactive) प्रश्नावली जिसे संलग्न (Attachment) के रूप में भेजा जा सकता है तथा जिसका उत्तर देकर ई-मेल द्वारा वापस भेजा जा सकता है।

MAADHYAM IAS

ii) **वेब-पृष्ठ आधारित सर्वेक्षण**: इन सर्वेक्षणों में प्रत्यर्थी को यू.आर.एल.पृष्ठ पर जाना पड़ता है। (इंटरनैट आधारित शब्दों के अर्थों के लिए देखिए एम.एस.ओ-002 पाठ्यक्रम की पुस्तक 3 में इकाइयाँ............) इस पृष्ठ पर उन्हें एक प्रश्नावली दी जाती है। सामान्य रूप से प्रत्यर्थियों को वेब-पृष्ठ प्रश्नावलियों के लिए निम्नलिखित में से किसी एक प्रकार से चुना जाता है :

- पॉप-अप प्रश्नावलियाँ: यदि कोई अनायास ही इंटरनैट में अपनी किसी खोज के दौरान उस वेब पृष्ठ पर पहुँच जाए तो एक प्रश्नावली कंप्यूटर स्क्रीन पर आ जाती है अथवा प्रत्यर्थी से पूछा जाता है कि क्या उसे प्रश्नावली का उत्तर देने के लिए यू.आर.एल. (वैब-पता) पर जाना है? प्रतिदर्श नियुक्ति की यह पद्धति पूरी तरह से इस बात पर निर्भर करती है कि इंटरनैट प्रयोगकार उस साइट पर जाएँ तथा बाद में प्रश्नावली का उत्तर देने के लिए सहमत हों।

- अन्य साइटों पर विज्ञापन: अन्य वेबसाइटों पर सर्वेक्षण का विज्ञापन हो सकता है। इस प्रणाली की मदद से विभिन्न साइटों से लोगों को आकर्षित किया जा सकता है तथा बड़ी संख्या में उत्तर प्राप्त किए जा सकते सकते हैं। किंतु यह सोच पाना कठिन है कि इस प्रकार का प्रतिदर्श किस जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है।

- *लिस्टसर्व, समाचार समूह और वार्ता (चैट) समूह विज्ञापनः* शोधकार द्वारा प्रश्नावली का विज्ञापन दिया जा सकता है अथवा इंटरनैट आधारित सूचियों से लोगों को भाग लेने के लिए आमंत्रित किया जा सकता है।

- ई-मेल निमंत्रणः ये उन लोगों को भेजे जासकते हैं जिनके ई-मेल पते शोधकार को उपलब्ध हैं। शोधकार द्वारा ई-मेल तथा वेब पृष्ठ आधारित दोनों प्रकार के सर्वेक्षणों को एक-साथ उपयोग किया जा सकता है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि इस उपकरण की कमियाँ कमोबेश टेलीफ़ोन साक्षात्कार की कमियों की ही भाँति होती हैं।

सर्वेक्षण प्रकारों की उपर्युक्त चर्चा को तालिका 22.1 में सारणीबद्ध करके दिखाया गया है।

तालिका 22.1: सर्वेक्षणों के प्रकार तथा उनकी विशेषताएँ

	उपकरण के प्रकार		
विशेषताएँ	**स्वतः संचालित साक्षात्कार**	**टेलीफ़ोन साक्षात्कार**	**रू-ब-रू साक्षात्कार**
क) **प्रशासनिक मुद्दा**			
1. कीमत	सबसे सस्ता	मध्यम	मँहगा
2. गति	सबसे धीमा		धीमे से मध्यम
3. लंबाई (प्रश्नों की संख्या)	मध्यम		सबसे लंबा
4. उत्तर दर	सबसे कम		सबसे अधिक
ख) **शोध नियंत्रण**			
1. जाँच संभव	नहीं	हाँ	हाँ
2. विशिष्ट उत्तर	नहीं	हाँ	हाँ
3. प्रश्न क्रम	नहीं	हाँ	हाँ
4. केवल एक प्रत्यर्थी	नहीं	हाँ	हाँ
5. दृश्य अवलोकन	नहीं	हाँ	हाँ
ग) **विभिन्न प्रश्नों के साथ सफलता**			
1. दृश्य सहायता सामग्री	सीमित	कोई नहीं	हाँ
2. खुले प्रश्न	सीमित	सीमित	हाँ
3. अनिश्चित प्रश्न	सीमित	हाँ	हाँ
4. जटिल प्रश्न	सीमित	सीमित	हाँ
5. संवेदनशील प्रश्न	सीमित	समान	समान
घ) **पूर्वाग्रह के स्रोत**			
1. सामाजिक वांछनीयता	नहीं	समान	बुरा
2. साक्षात्कारकर्ता पूर्वाग्रह	नहीं	समान	बुरा
3. प्रत्यर्थी का पठन पूर्वाग्रह	हाँ	नहीं	नहीं

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

च) संरचित प्रेक्षण

संरचित प्रेक्षण सामग्री को दृश्य रूप में एकत्रित करता है तथा प्रेक्षक द्वारा विशिष्ट कार्यों अथवा विशेषताओं पर ध्यान देने के लिए मार्गदर्शिका की तरह इसे तैयार किया जाता है। उदाहरण के लिए, संरचित अवलोकन में भाग लेने वाले दो व्यक्तियों द्वारा लाभकारी प्रेक्षण तभी संभव होगा जब उन्हें पहले से बताया जाए कि वे देखे गए कंप्यूटरों की संख्या गिनकर लिखें, वातानुकूलन की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति पर गौर करें तथा कमरे के क्षेत्रफल को वर्ग फ़ीट में मापें। सर्वेक्षण शोध में प्रयोग की जाने वाली तकनीकों/उपकरणों में इसे बहुत कम प्रयोग किया जाता है। इसका अधिकतर सहभागी प्रेक्षण में प्रयोग किया जाता है।

सोचें और करें 22.1

मान लीजिए कि आपको अपने क्षेत्र में अपशिष्ट नियंत्रण पद्धतियों पर एक सर्वेक्षण करना है। ऊपर जिन सर्वेक्षण उपकरणों की चर्चा की गई है अपने सर्वेक्षण के लिए आपके द्वारा उनमें से कौन-सा उपकरण चुना जाएगा? उपकरण-विशेष को चुनने और भाग 22.2 में बताए गए अन्य उपकरणों को न चुनने के कारण बताइए।

ii) सामाजिक सर्वेक्षण में साक्षात्कारकर्त्ता की भूमिका

जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से साक्षात्कार भिन्न परिवेशों में किए जाते हैं जैसे मालिक द्वारा अपने भावी कर्मचारियों का चिकित्सक द्वारा मरीज़ों का, मानसिक स्वास्थ्य पेशेवर द्वारा अपने मरीज़ों का, सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा ज़रूरतमंदों का, संवाददाता द्वारा नेताओं का, पुलिस द्वारा गवाहों और पीड़ितों का साक्षात्कार किया जाता है। किंतु, सर्वेक्षण शोध साक्षात्कार प्रायः एक विशिष्ट प्रकार का साक्षात्कार होता है। अधिकांश साक्षात्कारों की भाँति, इसका उद्देश्य भी जहाँ तक संभव हो सके सही-सही जानकारी प्राप्त करना होता है।

सर्वेक्षण साक्षात्कार एक प्रकार का सामाजिक संबंध है। अन्य सामाजिक संबंधों की भाँति, इसमें सामाजिक भूमिकाएँ, प्रतिमान तथा अपेक्षाएँ होती हैं। साक्षात्कार दो अजनबी लोगों के बीच एक अल्पावधिक, गौण सामाजिक अंतःक्रिया होता है जिसमें एक व्यक्त प्रयोजन के साथ एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति से विशिष्ट जानकारी प्राप्त की जाती है। साक्षात्कारकर्त्ता और साक्षात्कार देने वाले अथवा प्रत्यर्थी दोनों की ही सामाजिक भूमिकाएँ होती हैं। संरचित बातचीत में जानकारी प्राप्त की जाती है जिसमें साक्षात्कारकर्त्ता के द्वारा पूर्व-निर्धारित प्रश्नों को पूछा जाता है और प्रत्यर्थी द्वारा उत्तर दिए जाते हैं। यह प्रक्रिया सामान्य बातचीत से अनेक रूपों में भिन्न होती है (तालिका 22.2 देखिए)।

साक्षात्कारकर्त्ता के लिए एक महत्वपूर्ण समस्या यह है कि अनेक प्रत्यर्थियों को सर्वेक्षण प्रत्यर्थियों की भूमिका के बारे में मालूम नहीं होता है और प्रत्यर्थियों को प्रायः यह स्पष्ट नहीं होता कि उनसे क्या अपेक्षित है। परिणामस्वरूप, उनके द्वारा यदि किसी अन्य भूमिका का उपयोग हो तो उनके उत्तर उस भूमिका से प्रभावित हो सकते हैं। कुछ मानते हैं कि साक्षात्कार एक अंतरंग वार्तालाप अथवा उपचार सत्र है, कुछ अन्य लोगों के लिए यह फ़ॉर्म भरने की नौकरशाही कसरत है तो कुछ अन्य लोगों द्वारा इसे परीक्षण सत्र आदि माना जाता है। अच्छी तरह से तैयार और व्यावसायिक सर्वेक्षण में भी, अनुवर्ती (follow-up) शोध से पता लगा कि शोधकारों द्वारा पूछे गए प्रश्नों को केवल आधे प्रत्यर्थियों ने सही प्रकार से समझा। प्रश्नों की पुनर्व्याख्या करके प्रत्यर्थियों ने उन्हें अपने हिसाब से व्यक्तिगत परिस्थितियों के अनुकूल बना लिया है अथवा उत्तर देने के लिए सरल बना लिया।

तालिका 22.2: संरचित साक्षात्कार एवं सामान्य वार्तालाप में अंतर

क्र.सं.	सामान्य वार्तालाप	संरचित सर्वेक्षण साक्षात्कार
1.	प्रत्येक सहभागी द्वारा पूछे गए प्रश्न एवं उत्तर सापेक्षतः समान रूप से संतुलित होते हैं।	अधिकांश समय में साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा पूछा जाता है तथा प्रत्यर्थी द्वारा उत्तर दिया जाता है।
2.	भावों तथा मान्यताओं का खुला आदान-प्रदान होता है।	केवल प्रत्यर्थी द्वारा अपने भावों और मान्यताओं को व्यक्त किया जाता है।
3.	निर्णय बताए जाते हैं तथा दूसरे व्यक्ति को किसी विशेष दृष्टिकोण की ओर प्रेरित करने के प्रयास किए जाते हैं।	साक्षात्कारकत्ता गैर-निर्णायक है तथा उसके द्वारा प्रत्यर्थी के विचारों एवं मान्यताओं को बदलने का प्रयास नहीं किया जाता है।

MADHYAM IAS

4.	संभव है कि व्यक्ति सहानुभूति प्राप्त करने के लिए या चिकित्सीय निर्मुक्ति के रूप में अपनी गहन आंतरिक भावनाओं को उजागर करे।	साक्षात्कारकत्ता द्वारा विशिष्ट प्रश्नों के सीधे उत्तर प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।
5.	परंपरागत उत्तर सामान्य बात है (उदाहरण के लिए, 'ऊँ हूँ', सिर हिलाना, 'आपका क्या हाल है?', 'ठीक है')।	साक्षात्कारकत्ता का परंपरागत उत्तर देने से बचने का प्रयास होता है ताकि प्रत्यर्थी प्रभावित न हो तथा उसे उपयुक्त उत्तर जानना है, न कि परंपरागत उत्तर।
6.	वार्तालाप में सहभागियों द्वारा जानकारी का आदान-प्रदान होता है तथा ज्ञात तथ्यात्मक भूलों को सुधारा जाता है।	प्रत्यर्थियों द्वारा लगभग सभी जानकारी दी जाती है। साक्षात्कारकत्ता द्वारा प्रत्यर्थी की तथ्यात्मक भूलों को ठीक नहीं किया जाता है।
7.	विषय उठते हैं और छूट जाते हैं तथा नए विषय का आरंभ हो सकता है। विषय केंद्र की दिशा बदल सकती है अथवा कम महत्वपूर्ण मुद्दों की ओर भी जाना संभव है।	साक्षात्कारकत्ता विषय, उसकी दिशा एवं गति को नियंत्रित किया जाता है। प्रत्यर्थी को 'कार्यरत' रखकर अनावश्यक भटकाव को साक्षात्कारकत्ता द्वारा रोका जाता है।
8.	भावनात्मक स्वर कभी-कभी मजाक, प्रसन्नता, लगाव, दुख, क्रोध आदि की ओर परिवर्तित हो सकता है।	साक्षात्कार द्वारा आरंभ से अंत तक समान रूप से गंभीर एवं निष्पक्ष स्वर बनाए रखने का प्रयास किया जाता है।
9.	लोगों द्वारा प्रश्नों से बचने का प्रयास संभव है अथवा उनकी उपेक्षा करना संभव है तथा चंचल और गैर-गंभीर उत्तर दिए जा सकते हैं।	प्रत्यर्थी को प्रश्नों से बचना नहीं चाहिए तथा सत्य और विचारपूर्ण उत्तर देने चाहिए।

इस प्रकार साक्षात्कारकर्त्ता की भूमिका अति-महत्वपूर्ण होती है। साक्षात्कारकर्त्ता को सहयोग प्राप्त करना होता है, अच्छी जान-पहचान बनानी होती है और साथ ही निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ रहना होता है। उसे ऐसी जानकारी को प्राप्त करने के लिए प्रत्यर्थी के समय एवं निजत्व पर अतिक्रमण करना होता है जो प्रत्यर्थी के लिए सीधे तौर पर लाभकारी हो, यह ज़रूरी नहीं है। अन्वेषकों को आकुलता, भय तथा शंका के भावों को कम करना होता है ताकि जानकारी प्रदान करते समय प्रत्यर्थी सहज महसूस कर सकें। अच्छे साक्षात्कारकर्त्ता, सामाजिक अंतःक्रिया की गति और दिशा पर ध्यान रखने के साथ उत्तरों की विषय-वस्तु तथा प्रत्यर्थियों के व्यवहार पर भी ध्यान रहता है। साक्षात्कारकर्त्ता को गैर-निर्णायक रहना होता है तथा मौखिक अथवा अमौखिक रूप से (जैसे, स्तब्ध निगाह से देखना) अपनी राय व्यक्त नहीं करनी है। यदि प्रत्यर्थी साक्षात्कारकर्त्ता की राय जानना चाहे तो उसे प्रत्यर्थी को दोबारा प्रश्न की ओर ले जाना है। उदाहरण के लिए, यदि कोई प्रत्यर्थी पूछे कि 'आपका क्या विचार है?' तो साक्षात्कारकर्त्ता को विनम्रता से कहना है कि 'यहाँ, हमारी रुचि इसमें है कि *आप* क्या विचार है, मेरा विचार महत्त्वपूर्ण नहीं है।' इसी तरह, यदि प्रत्यर्थी आश्चर्यजनक उत्तर (जैसे, मैं अपनी पत्नी को पीटने के लिए तीन बार गिरफ़्तार किया जा चुका हूँ) तो साक्षात्कारकर्त्ता को स्तब्धता, आश्चर्य अथवा तिरस्कार का भाव नहीं व्यक्त करना है बल्कि उसे उत्तर को एक तथ्य के रूप में मानना है। प्रत्यर्थियों द्वारा सही-सही उत्तर दिया जाए — इसमें साक्षात्कारकर्त्ता उनकी मदद करता है।

कोई यह पूछ सकता है कि 'यदि सर्वेक्षण साक्षात्कारकर्त्ता को तटस्थ और वस्तुनिष्ठ होना चाहिए तो किसी रोबोट अथवा मशीन का उपयोग क्यों नहीं किया जा सकता है?' मशीन की मदद से साक्षात्कार अधिक सफल साबित नहीं हुए हैं क्योंकि मशीन में वह मानवीयता,

विश्वास का भाव तथा अच्छी जान-पहचान या मित्रता का अभाव होता है जो एक साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा सृजित होते हैं। साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा परिस्थिति को परिभाषित किया जाता है और यह सुनिश्चित किया जाता है कि माँगी गई जानकारी प्रत्यर्थियों के पास है, उन्हें मालूम है कि उनसे क्या अपेक्षित है, उनके उत्तर प्रासंगिक एवं संजीदा हैं तथा उनका पूरा सहयोग मिल रहा है। साक्षात्कार एक सामाजिक अंतःक्रिया है जिसमें साक्षात्कारकर्त्ता और प्रत्यर्थी के व्यवहार मूलतः उनकी मनोवृत्तियों, उद्देश्यों एवं परिप्रेक्ष्यों से पैदा होते हैं।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि साक्षात्कारकर्त्ता वास्तव में केवल साक्षात्कार ही नहीं करते, वरन अन्य काम भी करते हैं (कोष्ठक 22.1 देखिए)।

कोष्ठक 22.1: साक्षात्कारकर्त्ता की कार्य-योजना का समय आबंटन

मोज़र और काल्टन (1973) ने पाया कि रू-ब-रू साक्षात्कार के कुल समय का मात्र लगभग 35 प्रतिशत समय ही साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्त्ता व्यतीत किया है। लगभग 40 प्रतिशत समय उपयुक्त प्रत्यर्थी को खोजने में जाता है, 15 प्रतिशत यात्रा में एवं 10 प्रतिशत समय सामग्री पढ़ने में और प्रशासनिक मुद्दों एवं प्रलेखन संबंधी बातों से निपटने में जाता है।

iii) साक्षात्कार के चरण

परिचय तथा आगमन से प्रारंभ होकर साक्षात्कार कई चरणों में सम्पन्न होता है। साक्षात्कारकर्त्ता को अंदर आने के बाद अपना पहचान-पत्र दिखाना होता है और प्रत्यर्थियों को दरवाज़े से आश्वस्त करते उसका सहयोग प्राप्त करता है। साक्षात्कारकर्त्ता का प्रत्यर्थियों का इस प्रकार की प्रतिक्रियाओं के लिए तैयार होना होता है जैसे, 'आपने मुझे कैसे चुना?', 'इससे क्या लाभ होगा?', 'मुझे इस विषय में पता नहीं है।' साक्षात्कारकर्त्ता को बताना होगा कि प्रत्यर्थी विशेष को साक्षात्कार हेतु क्यों चुना गया है और उसका स्थान किसी अन्य को क्यों नहीं दिया जा सकता है।

MAADHYAM IAS

साक्षात्कार के मुख्य भाग में प्रश्न पूछना तथा उत्तर रिकॉर्ड करना शामिल होता है। साक्षात्कारकर्त्ता को यथोचित क्रम में प्रश्न पूछने हैं तथा जब तक निर्देशों में उल्लिखित न हो, उसे प्रश्नों पर पुनः लौटना या उन्हें छोड़ना नहीं है। उसे सुविधाजनक गति से चलना होता है तथा प्रक्रिया में रुचि बनाए रखने के लिए गैर-निर्देशात्मक प्रतिपुष्टि (feedback) देनी होती है।

प्रश्न पूछने के अतिरिक्त, साक्षात्कारकर्त्ता को उत्तर रिकॉर्ड करने होते हैं। यह 'हाँ-नहीं' के उत्तर वाले प्रश्नों के लिए आसान है क्योंकि इनमें साक्षात्कारकर्त्ता को केवल सही कोष्ठक पर निशान लगाना होता है। ग़ैर 'हाँ-नहीं' के उत्तर वाले प्रश्नों के लिए साक्षात्कारकर्त्ता का कार्य कठिन होता है। उसे प्रत्यर्थी को ध्यान से सुनना होता है तथा व्याकरण अथवा खोटी भाषा को ठीक किए बिना, कही गई बात को अक्षरशः साफ़ लिखावट में रिकॉर्ड करना होता है। इसके अतिरिक्त, साक्षात्कारकर्त्ता को संक्षिप्तिकरण अथवा पदान्वय (paraphrasing) से बचना होता है क्योंकि इसके कारण जानकारी का ह्रास हो जाता है अथवा उत्तर विकृत हो जाते हैं।

साक्षात्कारकर्त्ता को पता होना चाहिए कि कुरेदने (probing) का काम कब करना चाहिए। कुरेदना एक तटस्थ अनुरोध है जिसे अपूर्ण उत्तर को पूर्ण करने के लिए या अस्पष्ट उत्तर को स्पष्ट करने के लिए साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा किया जाता है। साक्षात्कारकर्त्ता को जल्दी ही अनुपयुक्त अथवा ग़लत उत्तर की पहचान हो जाती है तथा आवश्यकतानुसार उसे कुरेदने का उपयोग करना होता है। कुरेदनी का काम कई प्रकार से किया जाता है :

- तीन से पाँच सेकंड के लिए रुकना,

- अमौखिक संचार (जैसे सिर को झुकाना, उठी हुई भृकुटि, आँखों में देखना आदि)
- प्रश्न अथवा उत्तर की पुनरावृत्ति और फिर विराम देना
- तटस्थ प्रश्न पूछना (जैसे, कहना 'कोई अन्य कारण')

अंतिम चरण समापन है। इसमें साक्षात्कारकर्त्ता को प्रत्यर्थी को धन्यवाद देकर विदा लेनी होती है। उसके बाद एक शांत निजी स्थान पर जाकर प्रश्नावली को संपादित करना होता है तथा अन्य विवरणों को रिकॉर्ड करना होता है क्योंकि वे इस समय तक उत्तर मस्तिष्क में ताज़े होते हैं। अन्य विवरणों में साक्षात्कार की तिथि, समय तथा स्थान होते हैं, प्रत्यर्थी की मनोवृत्ति का एक रेखाचित्र (गंभीर, क्रोधी, हँसमुख आदि) होती है। साक्षात्कारकर्त्ता को अपने निजी भावों को भी एक ओर रिकॉर्ड करना होता है। उदाहरण के लिए, 'आय के विषय में पूछे जाने पर, प्रत्यर्थी में घबराहट दिखाई दी।'

iv) साक्षात्कारकर्त्ता के पूर्वाग्रह

साक्षात्कारकर्त्ता पूर्वाग्रह छह प्रकार के होते हैं :

i) प्रत्यर्थी द्वारा की गई भूलें : भूलना, झेपना, ग़लतफहमी, अथवा दूसरों की उपस्थिति के कारण झूठ बोलना।

ii) बिना जान-बूझकर की गई भूलें अथवा साक्षात्कारकर्त्ता का बेढंगापन : ग़लत प्रत्यर्थी के पास चले जाना, प्रश्न को ग़लत पढ़ना, प्रश्नों को छोड़ देना, प्रश्नों को ग़लत क्रम में पढ़ना, प्रश्न का ग़लत उत्तर लिख देना, प्रत्यर्थी को ठीक से न समझना।

iii) साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा जान-बूझकर उलट-फेर करना: उत्तरों पर प्रयोजनपूर्वक ध्यान देना, प्रश्नों को छोड़ना अथवा उन्हें विशेष रूप से पूछना आदि।

iv) प्रत्यर्थी के रूप-रंग, रहन-सहन की स्थितियों आदि के आधर पर प्रत्यर्थी के उत्तरों के विषय में साक्षात्कारकर्त्ता की अपेक्षाओं के कारण प्रभाव।

v) साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा कुरेदने अथवा सही प्रकार से कुरेदने में विफलता।

vi) साक्षात्कार के बाहर साक्षात्कारकर्त्ता के रूप-रंग, लहज़ा, मनोवृत्ति, उत्तरों पर प्रतिक्रियाओं अथवा टिप्पणियों के कारण उत्तरों पर प्रभाव।

MAADHYAM IAS

इसके अतिरिक्त, कुछ अन्य घटक हैं जो साक्षात्कारकर्त्ता को प्रभावित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, सामाजिक परिवेश जिसमें साक्षात्कार किया गया तथा साक्षात्कारकर्त्ता की सामाजिक पृष्ठभूमि (प्रजाति, जाति, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि) भी उत्तरों को प्रभावित कर सकते हैं।

22.3 प्रश्नावली निर्माण

सामग्री एकत्रित करने की अब तक चर्चा की गई सभी तकनीकों (अथवा उपकरणों) में प्रश्नों की सूची का उपयोग किया जाता है। प्रत्यर्थियों को इनका उत्तर देने के लिए कहा जाता है। प्रश्नों की यह सूची स्वतः संचालित प्रश्नावलियों, डाक द्वारा प्रेषित प्रश्नावलियों तथा इंटरनैट सर्वेक्षण के लिए प्रश्नावली हो सकती है और रू-ब-रू साक्षात्कारों एवं टेलीफ़ोन साक्षात्कारों को साक्षात्कार अनुसूची (schedule) कहा जाता है। इकाई के इस अनुभाग में प्रश्नावलियों तथा प्रश्नों के प्रकार पर विचार किया जाएगा तथा एक अच्छी प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार सूची के निर्माण के लिए दिशा-निर्देशों पर चर्चा की जाएगी।

यहाँ हमारी चर्चा के मुद्दे हैं : (i) प्रश्नावलियों के प्रकार, (ii) प्रश्नों के प्रकार, (iii) एक अच्छी प्रश्नावली का प्रारूप; तथा (iv) प्रश्नावली निर्माण के समय न करने की बातें।

i) प्रश्नावलियों के प्रकार

प्रश्नावलियाँ तीन प्रकार की होती हैं, अर्थात संरचित (structured), असंरचित (unstructured) तथा अर्ध-संरचित (semi-structured) प्रश्नावलियाँ। संरचित प्रश्नावलियों में संरचित ('हाँ' अथवा 'न' उत्तर वाले (बंद) प्रश्नों का प्रयोग किया जाता है जिसमें प्रत्यर्थी के पास विकल्पों का एक समूह होता है तथा उससे यह अपेक्षित होता है कि वह अनेक में से एक विकल्प को चुने। इसमें प्रत्यर्थी के पास अधिक स्वतंत्रता अथवा चुनाव की छूट नहीं होती है। ये प्रश्नावलियाँ उस समय प्रयोग की जाती हैं, जब प्रत्यर्थी कोई महान व्यक्ति अथवा व्यावसायिक व्यक्ति है और साक्षात्कार के लिए उसके पास अधिक समय नहीं है। असंरचित प्रश्नावली में केवल ग़ैर उत्तर वाले (खुले) खुले प्रश्न होते हैं, जिनमें प्रत्यर्थी को कोई विकल्प नहीं दिया जाता है। अर्ध-संरचित प्रश्नावलियों में संरचित (बंद) तथा असंरचित (खुले), दोनों ही प्रश्न होते हैं। सामाजिक शोध में इस अर्ध-संरचित प्रश्नावली का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है।

ii) प्रश्नों के प्रकार

क) संरचित (बंद) तथा असंरचित (खुले) प्रश्न

जैसा कि पहले कहा गया है, संरचित प्रश्नों में वैकल्पिक (बहु-विकल्प) उत्तर दिए जाते हैं, जिनमें से प्रत्यर्थी को एक विकल्प चुनना होता है। इस प्रकार के प्रश्न का एक उदाहरण है :

उदाहरण-1 : यदि आज आम चुनाव हों, तो आपका वोट किस पार्टी के लिए होगा?

- कांग्रेस
- बी.जे.पी.
- सी.पी.आई. (एम)
- कोई अन्य (बताइए)
- पता नहीं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संरचित प्रश्न के लिए वैकल्पिक उत्तर प्रश्नावली पर छपे होते हैं तथा प्रत्यर्थी अथवा साक्षात्कारकर्त्ता (उपकरण के प्रकार के आधार पर) उपयुक्त उत्तर पर निशान लगाता है। संरचित प्रश्न का एक अन्य उदाहरण निम्नलिखित है।

उदाहरण-2 : शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने की सरकार की पहल के विषय में आपकी क्या प्रतिक्रिया है?

- कड़ाई से अनुमोदन
- अनुमोदन
- उभयभावी (ambivalent) प्रतिक्रिया
- अस्वीकृति
- कड़ाई से अस्वीकृति
- पता नहीं।

दूसरा प्रश्न, पहले की तुलना में संरचित (बंद) प्रश्न का बेहतर उदाहरण है क्योंकि वैकल्पिक उत्तरों के अंतर्गत सहमति अथवा असहमति के सभी प्रकार के संभावित उत्तरों को शामिल किया गया है। पहला प्रश्न, स्पष्ट रूप से पूर्णता के इस मापदंड पर खरा नहीं उतरता है क्योंकि इसमें मौजूदा सभी राजनीतिक पार्टियाँ शामिल नहीं हैं, जो कि शक्तिशाली

विकल्प हैं। ध्यान दीजिए कि दोनों प्रश्नों में 'पता नहीं' श्रेणी है। संरचित प्रश्नों के लिए एक ऐसी श्रेणी आवश्यक है क्योंकि कुछ प्रत्यर्थियों को सचमुच पता नहीं होता कि ऐसे मुद्दों पर उन्हें कैसा लगता है। यद्यपि, शोधकार द्वारा प्रायः इसे उत्तर विकल्प के रूप में रखने की सबसे पहले नहीं रखा जाता है क्योंकि संभव है कि अनेक प्रत्यर्थियों द्वारा अन्य विकल्पों में से एक निर्णय लेने से बचने मात्र के लिए इसका उपयोग किया जाने लगे।

दूसरी ओर, असंरचित (खुले) प्रश्न संभावित उत्तरों को पहले से निर्धारित नहीं करते, जिसमें से प्रत्यर्थी को चुनाव करना होता है। इस प्रकार के प्रश्नों का एक उदाहरण इस प्रकार है :

उदाहरण-3 : आपके विचार से आज हमारे देश के समक्ष प्रमुख समस्याएँ कौन-सी हैं?

....

....

....

संभावित उत्तर उपलब्ध करवाने के स्थान पर, प्रश्नावली में प्रत्यर्थी के लिए उसके अपने शब्दों में उत्तर देने के लिए जगह छोड़ी जाती है। अन्य शब्दों में, मुद्दे को खुला छोड़ दिया जाता है। ऐसे प्रश्नों का यह लाभ होता है कि ये विषय-विशेष पर प्रत्यर्थी को भावनाओं एवं मनोवृत्तियों की गहराई और जटिलता को अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता देते हैं।

असंरचित प्रश्नावलियों की एक हानि यह है कि ये ऐसी सामग्री/आंकड़े उत्पन्न करती हैं जिन्हें संख्यात्मक रूप से विश्लेषित करना कभी-कभी मुश्किल हो जाता है क्योंकि उत्तरों का वर्गीकरण सामग्री एकत्रित होने के पश्चात ही होता है। कुछ केसों में, प्रत्यर्थियों द्वारा दिए गए उत्तरों में इतनी अधिक भिन्नता होती है कि उत्तरों के विन्यास की सापेक्ष रूप से एक छोटी संख्या का पता लगा पाना मुश्किल हो जाता है। यह समस्या संरचित प्रश्नों के साथ नहीं होती क्योंकि प्रश्नावली पर उत्तर की श्रेणियाँ ही सामग्री का विश्लेषण करने के लिए प्रयुक्त श्रेणियाँ बन जाती हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संरचित प्रश्नों का एक अन्य महत्वपूर्ण उपयोग प्रतिमानहीनता (एनोमी), सामाजिक कोटि, आदि जैसी अमूर्त अवधारणाओं को मापने के लिए किया जाता है। इसमें अनुसूची (इंडैक्स)/(Index) अथवा मान का प्रयोग होता है जिसमें विभिन्न संरचित प्रश्न होते हैं।

यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि संरचित (बंद) तथा असंरचित (खुले) प्रश्नों के अपने-अपने लाभ और हानियाँ हैं तथा कुछ विषय-क्षेत्रों के लिए दोनों में से कोई एक प्रकार का प्रश्न सर्वश्रेष्ठ रहता है। उदाहरण के लिए, उन मुद्दों के लिए संरचित प्रश्नों का प्रयोग श्रेष्ठ होता है जिनमें संभावित वैकल्पिक उत्तरों के विषय में आम सहमति होती है। वैसे इसमें भी कोई दो राय नहीं कि संरचित प्रश्न कभी-कभी प्रत्यर्थी को अनुपयुक्त रूप से अनावश्यक तथा पूर्व-निर्धारित विकल्पों/उत्तरों में से एक उत्तर को चुनने के लिए बाध्य कर देते हैं। संरचित प्रश्नों के साथ यह एक मुख्य तथा संभाव्य कमी है।

दूसरी ओर, असंरचित प्रश्न प्रत्यर्थी को 'खुलने' का तथा अपनी इच्छा से प्रश्नों के उत्तर देने का अवसर देते हैं। दुर्भाग्य से, ऐसे उत्तरों का कभी-कभी अर्थ निकालना अथवा उनका विश्लेषण करना कठिन हो जाता है।

ख) आशंकाजनित बनाम अनाशंकाजनित प्रश्न

शोधकारों द्वारा कभी-कभी संवेदनशील अथवा प्रत्यर्थियों को आशंकित करने वाले मुद्दों के विषय में पूछा जाता है। यौन आचरण, नशा अथवा मदिरापान, अपराध अथवा विचलन

व्यवहार, मानसिक स्वास्थ्य, ग़ैर-कानूनी गतिविधि, विवादास्पद लोक मुद्दे आदि से संबंधित प्रश्नों को आशंकाजनित समझा जाता है। इस प्रकार के प्रश्न पूछने वाले शोधकारों को यह कार्य अत्यंत सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

आशंकाजनित प्रश्न प्रायः एक वृहत्तर विषय का अंश होते हैं। सही-सही उत्तर देने में प्रत्यर्थियों को शर्म, झिझक अथवा भय लग सकता है। इसके स्थान पर, उनके द्वारा सकारात्मक अथवा सामाजिक रूप से स्वीकार्य उत्तर दिए जाते हैं। इसे 'सामाजिक वांछनीयता पूर्वाग्रह' कहा जाता है। यह सामाजिक दबाव वास्तविक स्थिति को अधिक बड़ा या अधिक छोटा बना देते हैं। उदाहरण के लिए, विचलन, यौन, बीमारी आदि से संबंधित गतिविधि के विषय में लोगों द्वारा वास्तविकता से कम जानकारी दी जाती है। अच्छा नागरिक होने (जैसे मत देना, विषयों को जानना आदि), पूर्णतः प्रबुद्ध तथा सुसंस्कृत होने (जैसे पढ़ना, सांस्कृतिक आयोजनों में जाना), नैतिक उत्तरदायित्वों को पूरा करना (जैसे नौकरी होना, दान देना) अथवा अच्छा पारिवारिक जीवन (जैसे सुखी दांपत्य जीवन तथा बच्चों के साथ मधुर संबंध) आदि के विषय में उनके द्वारा सचमुच ही अधिक जानकारी दी जाती है।

आशंकाजनित प्रश्नों को संशोधित करने का एक तरीक़ा यह है कि गोपनीयता का स्पष्ट विश्वास दिया जाए तथा प्रत्यर्थियों को यह बताया जाए कि सर्वेक्षण का उद्देश्य सत्यपूर्ण उत्तर प्राप्त करना है न कि यह जानना कि वे कौन हैं, क्या हैं आदि। संवेदनशील विषयों पर प्रश्न तभी पूछने चाहिए जब प्रत्यर्थियों का साक्षात्कारकर्त्ता पर पूरी तरह से विश्वास बन जाए। उन्हें शुरू में कुछ कम आशंकाजनित प्रश्न पूछकर तथा सार्थक संदर्भ देकर पारस्परिक सौहार्द बढ़ाकर सही समय की प्रतीक्षा करनी है। प्रश्नों की भाषा इस प्रकार की बनाई जा सकती है जिससे प्रत्यर्थी के लिए आशंकित व्यवहार करने को अभिव्यक्त करने में आसानी हो जाए। एक अन्य पद्धति यह है कि एक परिचयात्मक वक्तव्य दिया जाए जिसमें यह कहा जाए कि अकेला प्रत्यर्थी नहीं बल्कि अनेक लोगों का इस प्रकार का व्यवहार होता है। इसके अतिरिक्त, एक अन्य तरीक़ा यह है कि ऐसे सर्वेक्षण उपकरणों का प्रयोग किया जाए जिनसे गोपनीयता रखी जा सके। उदाहरण के लिए, रू-ब-रू साक्षात्कारों की अपेक्षा डाक द्वारा भेजी गई अथवा स्वतः संचालित प्रश्नावली या इंटरनैट सर्वेक्षण अथवा टेलीफ़ोन साक्षात्कार का प्रयोग बेहतर होता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ग) ज्ञान प्रश्न

सर्वेक्षण पर किए गए अध्ययन दर्शाते हैं कि अधिकांश जनता तथ्यों अथवा ज्ञान की जानकारी देने वाले प्रश्नों का सही उत्तर नहीं दे पाती है। शोधकार को कभी-कभी यह जानना है कि क्या प्रत्यर्थी को किसी मुद्दे अथवा विषय के संबंध में मालूम है या नहीं। किंतु ज्ञान प्रश्न उसे आशंकित कर सकते हैं हो सकता है कि प्रत्यर्थी अपने अज्ञान को प्रकट नहीं करें।

घ) प्रश्न को छोड़ देना या अनायास ही नया प्रश्न पूछना

शोधकार को ऐसे प्रश्न पूछना अच्छा नहीं लगता जो प्रत्यर्थी के लिए अनावश्यक हों। फिर भी, कुछ प्रश्न केवल कुछ विशिष्ट प्रत्यर्थियों पर लागू होते हैं। 'अनायास दिये गए प्रश्न' में दो (अथवा अधिक) भाग होते हैं। पहले भाग का उत्तर यह निर्धारित करता है कि दूसरा प्रश्न, जिन प्रत्यर्थियों के लिए आवश्यक है वे कौन-सा प्रश्न चुनें। कभी-कभी, इन्हें 'स्क्रीन अथवा स्किप प्रश्न' भी कहा जाता है। पहले प्रश्न के उत्तर के आधार पर, प्रत्यर्थी अथवा साक्षात्कारकर्त्ता को दूसरे प्रश्न पर जाने अथवा कुछ विशेष प्रश्नों को छोड़ने का निर्देश दिया जाता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रश्न देखिए :

उदाहरण-5: क्या आपने समाज विज्ञान धारा ली है?

1) हाँ (2) नहीं

(यदि नहीं तो कृपया प्रश्न 2 पर जाएँ)।

1) क) यदि हाँ, तो समाजविज्ञान का कौन-सा विषय लिया है?

2) ख) आपने इस विषय को कितनी अवधि तक पढ़ा है?

iii) एक अच्छी प्रश्नावली का प्रारूप : कुछ दिशा-निर्देश

एक अच्छी प्रश्नावली संघटित रूप से एक समष्टि होती है। शोधकार को प्रश्नों को परस्पर इस प्रकार जोड़ना होता है कि वे अनवरत रूप से चलते हैं। एक अच्छी प्रश्नावली स्पष्ट, एकार्थी और समान रूप से कारगर होती है। इसका प्रारूप प्रत्यर्थियों द्वारा हो सकने वाली संभावित भूलों को कम से कम करता है।

एक अच्छी सर्वेक्षण प्रश्नावली के दो मुख्य सिद्धांत होते हैं — दुविधा को दूर रखना, तथा प्रत्यर्थियों के परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखना। प्रश्नावली निर्माण एक कला है। इसके लिए प्रवीणता, अभ्यास, धैर्य तथा सृजनात्मकता की आवश्यकता होती है। एक अच्छी प्रश्नावली के निर्माण के लिए निम्नलिखित सिद्धांत/दिशा-निर्देश हैं :

क) **भूमिका**

प्रत्येक प्रश्नावली की एक भूमिका होनी चाहिए जिसमें यह बताया गया हो कि अध्ययन किस विषय में किया जा रहा है। भूमिका में प्रश्नावली के उत्तर देने के लिए निर्देश भी होने चाहिए तथा गोपनीयता का वायदा भी।

ख) **प्रश्नों का क्रम**

अधिकतर शोधकारों को प्रश्नावली का आरंभ एक-दो ऐसे सरल प्रश्नों से करना पसंद है, जिनके उत्तर देना सरल हो। जैसे, घर का आकार, व्यवसाय, गाँव आदि। यद्यपि यह महत्वपूर्ण है कि ये प्रश्न इतने निजी न हो जाएँ कि प्रत्यर्थी रक्षात्मक हो जाए अथवा साक्षात्कार को तुरंत समाप्त कर दे।

सामान्य नियमानुसार, आगे आने वाले प्रश्नों की तुलना में प्रारंभ में प्रश्नावली के प्रश्नों की शैली अधिक व्यापक होती है। उदाहरण के लिए, किसी अराजनीतिक सर्वेक्षण में, आरंभिक प्रश्नों में प्रत्यर्थी के दृष्टिकोण से, समसामयिक महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रश्नों को सामान्य रूप में (कुछ खुले प्रश्नों सहित) पूछा जा सकता है। प्रश्नावली में आगे चलकर, साक्षात्कारकर्त्ता के लिए कुछ विशिष्ट मुद्दों की सूची पढ़ सकना है और प्रत्यर्थी को प्रत्येक मुद्दे के सापेक्ष महत्व को आकलित करने के लिए करना संभव है।

प्रश्नों को ऐसे क्रम में रखना चाहिए कि जिससे साक्षात्कारकर्त्ता तथा प्रत्यर्थी के बीच विचार-विनिमय क्रमिक श्रृंखला में हो सके। उदाहरण के लिए, किसी भी शोधकार के लिए ऐसा करना उचित नहीं है कि दिन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रश्न पूछ कर राजनीतिक नेताओं पर प्रश्न पूछे और फिर दिन के मुद्दों पर अधिक प्रश्न पूछे, फिर प्रत्यर्थी की विशेषताओं पर कुछ प्रश्न पूछे और फिर राजनीतिक नेताओं के विषय में प्रश्न पूछे।

इसके अतिरिक्त, सर्वाधिक निजी प्रश्नों को प्रायः प्रश्नावली के अंत तक बचाकर रखा जाता है ताकि यदि प्रत्यर्थी उत्तर देने से इनकार कर दे अथवा साक्षात्कार को उसी स्थान पर रोक दे तो अधिकांश जानकारी पहले ही मिल चुकी होती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ग) **प्रश्नों का रूप**

यह निर्धारित करना आवश्यक होता है कि उद्देश्य विशेष के लिए संरचित प्रश्न उपयुक्त होंगे अथवा असंरचित प्रश्न। चूँकि दोनों प्रकार के प्रश्न परस्पर पूरक होते हैं इसलिए हमने प्रत्यर्थी की रुचि को बनाए रखने तथा बंद एवं खुली जानकारी प्राप्त करने के लिए पूरी प्रश्नावली में दोनों प्रकार के प्रश्नों को रखने के महत्व पर बल दिया है। अधिक विवरणपूर्ण निर्णय भी आवश्यक होते हैं। एक संरचित प्रश्न अंकीय मान (जैसे, वांछनीयता के संदर्भ में 0 से 9 तक मान निर्धारण) अथवा मौखिक मान (अत्यधिक वांछनीय, थोड़ा वांछनीय, अत्यधिक अवांछनीय, थोड़ा अवांछनीय) के रूप में हो सकता है।

घ) **स्पष्टता**

यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि प्रत्यर्थियों को प्रत्येक प्रश्न का अर्थ समझ में आए। अन्य शब्दों में, शोधकार को प्रश्न इस प्रकार बनाने चाहिए जो प्रत्यर्थी को समझ में आ जाएँ। वहीं उसे इस आधार पर सावधान भी रहना चाहिए कि वह प्रत्यर्थियों के संरक्षणक की तरह प्रतीत न हो। यह संतुलन प्राप्त करना प्रायः कठिन होता है तथा वैकल्पिक प्रश्नों के विस्तृत पूर्व-परीक्षण द्वारा अक्सर इसे श्रेष्ठ ढंग से बनाया जा सकता है।

च) **प्रामाणिकता जाँच-प्रश्न**

एक विषय क्षेत्र से पर विभिन्न प्रश्नों को शामिल करना अच्छी नीति है। इससे यह सिद्ध होता है कि प्रत्यर्थी द्वारा सभी प्रश्नों के समान रूप से उत्तर दिए जाते हैं। ऐसे प्रश्नों से प्रश्नावली की वैधता तथा प्रत्यर्थियों की अपनी रिपोर्ट की सत्यता का मूल्यांकन संभव होता है। एक विशिष्ट प्रकार की प्रामाणिकता जाँच प्रश्न 'यादृच्छिक' (random probe) प्रश्न होता है। प्रत्येक प्रत्यर्थी को यह समझाने के लिए कहा जाता है कि यादृच्छिक रूप से चयनित कुछ प्रश्नों के उसके उत्तरों से उसका क्या आशय है? विभिन्न प्रत्यर्थियों को विभिन्न संरचित प्रश्नों के लिए ऐसा करने को कहा जाता है। यह विधि शोधकार को शोध की विश्लेषण अवस्था में से ऐसे संरचित प्रश्नों को निकाल देने में मदद करती है जो अनेक प्रत्यर्थियों द्वारा ग़लत समझे गए होते हैं।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

छ) **साक्षात्कारकर्त्ता का नियंत्रण**

प्रश्नावली से केवल जानकारी ही प्राप्त नहीं होती, यह साक्षात्कारकर्त्ता के कार्य की गुणवत्ता के नियंत्रण में भी मदद करती है। उदाहरण के लिए, प्रश्नावली में साक्षात्कारकर्त्ता के लिए स्पष्ट निर्देश होने चाहिए कि विधि विशेष के संदिग्धावस्था में होने पर क्या किया जाना चाहिए? यह अनुदेश 'प्रश्न के विषय में सोचने के लिए प्रत्यर्थी को दो या तीन मिनट का समय दीजिए', कुछ मामलों में आवश्यक हो सकता है क्योंकि कुछ साक्षात्कारकर्ता अन्य से अधिक अधीर होते हैं।

प्रश्नावली के माध्यम से साक्षात्कारकर्त्ता को यह बता देना आवश्यक होता है कि साक्षात्कारकर्त्ता के कार्य का मूल्यांकन प्रश्नावली पूरी होने के बाद ही किया जाएगा। प्रश्नावली के अंत में, न केवल साक्षात्कारकर्त्ता के हस्ताक्षर के लिए एक स्थान तय होना चाहिए बल्कि इस भाग के ऊपर एक वाक्यांश यह भी होना चाहिए कि 'मेरे द्वारा यह प्रमाणित किया जाता है कि यह साक्षात्कार पूरा है तथा ईमानदारी के साथ, अनुदेशों के अनुपालन सहित किया गया है।' इस वाक्यांश से एक तरह की प्रतिबद्धता झलकती है, जो साक्षात्कारकों को उनके सर्वोच्च प्रयास के लिए प्रेरित करती है।

वैधता पर एक अन्य अनुभाग बनाना कभी-कभी काफी होता है। प्रत्येक साक्षात्कारकर्त्ता के कार्य का एक अंश, प्रायः शोध दल के एक सदस्य द्वारा 'वैध' किया जाना चाहिए। इस

शोध दल के सदस्य द्वारा साक्षात्कारकर्त्ता के कुछ प्रत्यर्थियों (प्रायः लगभग 15 प्रतिशत) को टेलीफ़ोन किया जाता है अथवा लिखा जाता है तथा यह सुनिश्चित किया जाता है कि साक्षात्कार पूरा हो गया था, लगभग कितना समय लगा, प्रत्यर्थी को किन बातों से परेशानी हुई और क्या प्रत्यर्थी दो या तीन प्रश्नों के उत्तरों की पुष्टि करने को तैयार है। साक्षात्कारकर्त्ता को यह बताना आवश्यक है कि इस प्रकार की 'वैधता' की जाएगी, तथा प्रश्नावली के अंत में ऐसा अनुभाग हो सकता है जहाँ वैधकर्ता की टिप्पणियों तथा संस्तुतियों के लिए स्थान होगा।

ज) **पूर्व-परीक्षण**

साक्षात्कार का सारा अनुभव तथा दुनिया-भर का सारा ज्ञान कभी भी पूर्व-परीक्षण की प्रणाली का स्थान नहीं ले सकता क्योंकि पूर्व-परीक्षण प्रणाली के द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है कि ऊपर चर्चित सभी बातों का प्रश्नावली में यथासंभव ध्यान रखा गया है। पूर्व-परीक्षण में प्रस्तावित प्रश्नावली को प्रत्यर्थियों के एक बहुत छोटे समूह (वास्तविक संख्या के आधार पर, 10 से 100 के बीच कुछ भी) को दिया जाता है। शोधकारों के लिए कुछ साक्षात्कार लेना अच्छा विचार है तथा जिन्हें वास्तविक रूप से अंततः साक्षात्कार करना है, उन लोगों के लिए दूसरों का साक्षात्कार करना एक अच्छा विचार है। अतः पूर्व-परीक्षण की मदद से शोधकार के लिए प्रश्नावली में निहित वास्तविक समस्याओं के प्रति सजग होना संभव होता है। कभी-कभी अनेक पूर्व-परीक्षण आवश्यक होते हैं, क्योंकि प्रश्नावली को पूर्व-परीक्षणों के दौरान संशोधित किया जाता है।

iv) प्रश्नावली निर्माण के समय न करने की बातें

प्रश्नावली बनाते समय निम्नलिखित बातों से बचना चाहिए :

क) **विशिष्ट शब्दावली (jargon), अपभाषा (slang) और संक्षिप्ताक्षरों (abbreviations) से बचना**: आम व्यक्तियों के लिए विशिष्ट शब्दावली*, तथा तकनीकी शब्द (जैसे अलगाव (alienation), प्रतिमानहीनता (anomie), ओडीपस कांप्लेक्स (oedipus complex) आदि) समझना मुश्किल होता है। इसलिए प्रश्नावली में इनका प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। उप-संस्कृति विशेष में प्रयुक्त होने वाली बोली अपभाषा कहलाती है। इसलिए अपभाषा (जैसे हॉट डॉग, स्नोबर्ड आदि) का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जब तक कोई जनसंख्या विशेष का सर्वेक्षण न किया जा रहा हो तब तक अपभाषा, विशिष्ट शब्दावली तथा संक्षिप्ताक्षरों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

ख) **द्वयर्थकता, दुविधा एवं अस्पष्टता से बचना**: प्रश्नावली निर्माण में जुटे अनेक शोधकारों को द्वयर्थकता एवं अस्पष्टता परेशान करती है। प्रत्यर्थियों के विषय में सोचे बिना शोधकार द्वारा अव्यक्त मान्यताएँ स्थापित की जा सकती हैं। उदाहरण के लिए, एक प्रश्न 'आपकी आय क्या है?' का आशय साप्ताहिक, मासिक अथवा वार्षिक आय हो सकता है; पारिवारिक अथवा व्यक्तिगत; कर-पूर्व अथवा कर-पश्चात; चालू वर्ष अथवा पिछले वर्ष के लिए; वेतन से अथवा सभी स्रोतों से हो सकता है। इस दुविधा के कारण प्रत्यर्थियों द्वारा लगाए गए अर्थों से दिए गए उत्तरों में बहुत अधिक विभ्रम पैदा हो सकता है।

द्वयर्थकता का एक अन्य स्रोत विशिष्ट शब्दावली अथवा उत्तर श्रेणियों का प्रयोग है। उदाहरण के लिए, 'क्या आपके द्वारा नियमित रूप से दौड़ने का व्यायाम किया जाता है?' प्रश्न का उत्तर 'हाँ......., नहीं ....', 'नियमित रूप से शब्द पर निर्भर करता है। यदि प्रत्यर्थी 'नियमित' शब्द को प्रतिदिन, प्रति सप्ताह अथवा प्रति माह के रूप में समझे तो उत्तर अलग-अलग आधार पर होंगे। दुविधा को कम करने के लिए स्पष्ट होना बेहतर है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ग) **भावुक भाषा एवं प्रतिष्ठा पूर्वाग्रह से बचना** : शब्दों के अव्यक्त गुणार्थक अर्थ भी होते हैं तथा अभिव्यक्ति सूचक अर्थ भी। इसी प्रकार, समाज में पदवियों अथवा पदों के साथ प्रतिष्ठा या सम्मान जुड़ा होता है। उच्च सामाजिक प्रस्थिति वाले लोगों से जुड़े मुद्दों पर सशक्त भावुक गुणार्थ और दृष्टिकोण अक्सर प्रत्यर्थियों द्वारा सर्वेक्षण प्रश्न सुनने एवं उनके उत्तर देने को प्रभावित कर सकते हैं। तटस्थ भाषा का प्रयोग कीजिए। भावनात्मक 'भार' वाले शब्दों से बचिए क्योंकि सर्वेक्षण संबंधी मुद्दे की अपेक्षा भावनात्मकता से भरे शब्दों पर की प्रतिक्रिया हो सकती है। प्रतिष्ठा पूर्वाग्रह से भी बचना चाहिए। प्रतिष्ठा पूर्वाग्रह का अर्थ है — किसी वाक्यांश को प्रतिष्ठित व्यक्ति अथवा समूह से संबद्ध करना। प्रतिष्ठा पूर्वाग्रह के चलते प्रत्यर्थी द्वारा मुद्दे पर ध्यान देने के बदले व्यक्ति अथवा समूह के प्रति अपनी भावनाओं के आधार पर उत्तर दिया जा सकता है।

घ) **दुनाली प्रश्नों (double-barreled questions) से बचना** : प्रत्येक प्रश्न को केवल एक ही विषय से जोड़िए। दुनाली प्रश्न में दो या अधिक प्रश्न परस्पर जुड़े होते हैं। इससे प्रत्यर्थी का उत्तर द्वयर्थक हो जाता है। उदाहरण के लिए, यदि यह पूछा जाए कि 'क्या आपको छात्रावास में आवास तथा भोजन उपलब्ध है?' तो केवल आवास या केवल भोजन पाने वाले प्रत्यर्थी के लिए समस्या हो जाएगी। इस मामले में प्रत्यर्थी को स्पष्टता नहीं होगी कि वह क्या उत्तर दे।

च) **उत्तर की ओर इशारा करने वाले प्रश्नों से बचनाः** प्रत्यर्थियों को ऐसा महसूस करवाइए कि सभी उत्तर सही हैं। उन्हें इस बात की जानकारी नहीं होनी चाहिए कि शोधकार को कौन-सा उत्तर चाहिए। उत्तर की ओर इशारा करने वाला प्रश्न वह होता है जो शब्दों के आधार पर एक उत्तर की अपेक्षा किसी दूसरे उत्तर को चुनने के लिए प्रत्यर्थी को प्रोत्साहित करे। उदाहरण के लिए, 'आपको धूम्रपान तो पसंद नहीं है, क्यों?' प्रश्न प्रत्यर्थियों को यह कहने के लिए प्रेरित करता है कि उसे धूम्रपान पसंद नहीं है। इसके अतिरिक्त उत्तर की ओर इशारा करने वाले प्रश्न नकारात्मक अथवा सकारात्मक उत्तर प्राप्त करने के लिए पूछे जा सकते हैं।

MAADHYAM IAS

छ) **प्रत्यर्थियों की क्षमता से परे प्रश्नों को पूछने से बचनाः** जो केवल कुछ ही प्रत्यर्थियों को पता हो, ऐसा कुछ पूछने से अन्य प्रत्यर्थियों को हतोत्साहित कर, निम्न गुणवत्ता वाले उत्तरों की प्राप्ति होती है।

ज) **झूठे वादों से बचना** : प्रश्न को किसी ऐसे वादे से आरंभ मत कीजिए जिसके लिए प्रत्यर्थी सहमत न हों तथा उसके विषय में विकल्प पूछने लगें। संभव है कि वादे से असहमत होने वाले प्रत्यर्थी हतोत्साहित हों और उन्हें यह नहीं पता लेगे कि उत्तर कैसे देना है। उदाहरण के लिए, 'पुस्तकालय काफी अधिक समय तक खुला रहता है। क्या आपकी इच्छा है कि यह प्रतिदिन चार घंटे देर से खुले अथवा चार घंटे जल्दी बंद हो जाए?' यह प्रश्न इस बात से सहमति और असहमति व्यक्त करने वाले दोनों ही प्रकार के लोगों के लिए, बिना किसी सार्थक विकल्प के, दोनों विकल्प चुनने का अवसर देता है।

झ) **भावी इरादों के विषय में पूछने से बचनाः** लोगों से यह नहीं पूछना चाहिए कि काल्पनिक परिस्थितियों में उन्हें क्या करना है। इस तरह के प्रश्नों से भविष्य के बारे में कुछ नहीं पता लगता है। ऐसे प्रश्न समय की बर्बादी करते हैं क्योंकि इनके उत्तर तत्काल अनुभवों के विषय में कुछ न बताकर अमूर्त विचार मात्र होते हैं।

ट) **दोहरे नकारात्मकों से बचनाः** सामान्य भाषा में दोहरे नकारात्मक, व्याकरणिक रूप में ग़लत तथा दुविधाजनक होते हैं। उदाहरण के लिए, 'मैं बेरोज़गार नहीं हूँ ' का तार्किक रूप से अर्थ यह है कि प्रत्यर्थी के पास रोज़गार है।

ठ) **परस्पर व्यापी अथवा असंतुलित उत्तर श्रेणियों से बचना** : उत्तर श्रेणियों अथवा विकल्पों को परस्पर अनन्य (mutually exclusive), संपूर्ण तथा संतुलित बनाइए। परस्पर अनन्य का अर्थ है कि उत्तर श्रेणियाँ एक-दूसरे को आच्छादित (overlap) न करें।

सोचें और करें 22.2

इस विचार को आगे बढ़ाते हुए कि आपको अपने क्षेत्र में अपशिष्ट नियंत्रण प्रणालियों पर सर्वेक्षण करना है, एक प्रश्नावली बनाइए और उसमें शामिल किए जाने वाले प्रश्नों के प्रकार बताइए।

22.4 सर्वेक्षण उपकरण के प्रारूप से जुड़े मुद्दे

सर्वेक्षण उपकरण का प्रारूप बनाने के दौरान दो महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना चाहिए। पहली, विश्वसनीयता तथा दूसरी सर्वेक्षण उपकरण की वैधता।

i) **विश्वसनीयता**

विश्वसनीय सर्वेक्षण उपकरण वह होता है जो सापेक्षतः 'माप त्रुटि' (measurement error) से मुक्त होता है। इस त्रुटि के कारण, व्यक्तियों से प्राप्त गणना उनकी वास्तविक गणना से भिन्न होती है, जिन्हें केवल आदर्श माप द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यह त्रुटि क्यों होती है? कुछ मामलों में माप के अपने ही कारण से त्रुटि होती है। यह बात समझने में कठिन हो सकती है अथवा खराब ढंग से संचालित हो सकती है। उदाहरण लिए, बचावपूर्ण स्वास्थ्य देखभाल के महत्व पर एक स्वतः संचालित प्रश्नावली तब अविश्वसनीय परिणाम दे सकती है यदि उसको पढ़ने का स्तर उन किशोर माताओं के लिए ऊँचा हो, जिन्हें उन प्रश्नों का उत्तर देना है। यदि पढ़ने का स्तर लक्ष्य पर होगा किंतु उत्तर देने के निर्देश अस्पष्ट हों तो भी माप अविश्वसनीय हो जाएगा। वास्तव में, सर्वेक्षण करने वाला शोधकार के लिए अपनी प्रश्नावली की भाषा को सरल करना है और निर्देशों को स्पष्ट करना संभव है। इसके बावजूद, फिर भी माप संबंधी त्रुटि हो सकती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि माप संबंधी त्रुटियाँ सीधे प्रत्यर्थियों से भी आ सकती है। उदाहरण लिए, यदि किशोर माताओं को कोई प्रश्नावली पूरी करने के लिए कहा जाता है और यदि वे विशेष रूप से आतुर अथवा थकी हुई होती हैं तो उनके उत्तरों के द्वारा प्राप्त गणना उनकी वास्तविक गणना से भिन्न होती है।

सर्वेक्षण शोध के संदर्भ में यहाँ चार प्रकार की विश्वसनीयताओं की चर्चा की गई है। ये हैं– स्थिरता, समानता, एकरूपता; तथा अंतर-एवं-अंतः-दर-विश्वसनीयता।

क) **स्थिरताः** स्थिरता को *कभी-कभी परीक्षण-पुनर्परीक्षण* विश्वसनीयता कहा जाता है। यदि एक समय की गणना और दूसरे समय की गणना के बीच का काफी ऊँचा मिलान हो माप विशेष को स्थिर माना जाता है। मान लीजिए, विद्यालय 'क' के विद्यार्थियों के उसी समूह का विद्यार्थी मनोवृत्तियों का एक सर्वेक्षण अप्रैल में किया जाता है और फिर दोबारा अक्तूबर में किया जाता है। यदि सर्वेक्षण विश्वसनीय है और बीच में कोई विशेष कार्यक्रम अथवा अवरोध नहीं हुआ है तो, औसतन, हमारे लिए समान मनोवृत्तियों की अपेक्षा करना संभव है।

ख) **समानताः** 'समानता' (अथवा 'एकांतर-रूप विश्वसनीयता') का आशय यह है कि कठिनता के समान स्तर पर कौन-सी दो वस्तुएँ समान *अवधारणाओं* को मापती हैं। मान लीजिए, विद्यार्थियों को एक कंप्यूटर पाठ्यक्रम में भाग लेने से पहले प्रौद्योगिकी के विषय में उनके विचार जानने के लिए प्रश्न किया जाए और दोबारा दो महीने बाद पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद वही प्रश्न किया जाए। जब तक शोधकार आश्वस्त न हो

MAADHYAM IAS

कि सर्वेक्षणों में मदें समान थी, दूसरे सर्वेक्षण में प्रौद्योगिकी के ऊपर अधिक परिष्कृत विचारों की जगह सर्वेक्षण के भाषा-स्तर (उदाहरण के लिए) की झलक मिल सकती है।

ग) **एकरूपताः** एकरूपता से आशय उस सीमा तक है जहाँ तक सभी विषय अथवा प्रश्न समान निपुणता, विशिष्टता अथवा गुण का आकलन करते हैं। कभी-कभी इस प्रकार की विश्वसनीयता को आंतरिक सामंजस्य भी कहते हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि एक शोधकार ने एक पाठ्य-पुस्तक के प्रति विद्यार्थियों की संतुष्टि को जानने के लिए एक प्रश्नावली तैयार की है। एकरूपता का विश्लेषण हमें बताएगा कि प्रश्नावली के सभी विषय संतुष्टि पर किस सीमा तक केंद्रित हैं।

घ) **अंतर-एवं-अंतः-दर-विश्वसनीयता** : अंतर-दर विश्वसनीयता का अर्थ है कि दो अथवा दो से अधिक व्यक्ति किस सीमा तक सहमत होते हैं। अंतः-दर का अर्थ विश्वसनीयता की माप के संदर्भ में एक व्यक्ति के सामंजस्य के माप से होता है।

ii) **वैधताः** वैधता से आशय है कि एक सर्वेक्षण उपकरण किस सीमा तक वह माप सकता है जिसे वह मापना चाहता है। उदाहरण के लिए, सूचना प्रौद्योगिकी में जीविका के प्रति विद्यार्थी मनोवृत्ति का एक सर्वेक्षण उस समय अवैध हो जाएगा यदि सर्वेक्षण में सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर प्रौद्योगिकियों में हुई नवीनतम प्रगति के बारे में केवल उनके ज्ञान पर ही प्रश्न पूछे जाएँ। इसी प्रकार, कोई मनोवृत्ति सर्वेक्षण तब तक वैध नहीं मानी जा सकती जब तक आप यह सिद्ध न कर दें कि सर्वेक्षण के अपने उत्तरों के आधार पर अच्छी मनोवृत्ति वाले लोग उन लोगों से प्रेक्षणीय रूप से भिन्न हैं, जिन्हें असंतुष्ट के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

प्रायः चार प्रकार की वैधता की चर्चा की जाती है। ये हैं — विषय-वस्तु, रूपाकार, मापदंड; तथा विन्यास।

MAADHYAM IAS

क) **विषय-वस्तुः** विषय-वस्तु वैधता का अर्थ है कि एक माप किस सीमा तक पूरी तरह से और उपयुक्तता से उन प्रवीणताओं अथवा विशिष्टताओं का मूल्यांकन करता है जिन्हें मापना उसका उद्देश्य है। उदाहरण के लिए, जिसे मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययन में रुचि है ऐसे शोधकार को पहले मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा को परिभाषित करना ('मानसिक स्वास्थ्य क्या होता है?', 'यह स्वास्थ्य रोग से किस प्रकार भिन्न है?') और फिर उन मुद्दों पर लिखना है जिनमें परिभाषा से संबंधित सभी बातें पर्याप्त रूप से होती हैं ताकि वह अवधारणा अपने माप की दृष्टि से अच्छी तरह से समझाई जा सकती है।

ख) **रूपाकारः** रूपाकार वैधता का तात्पर्य यह है कि एक माप सतह पर कैसा दिखता है — क्या यह सभी वांछित प्रश्नों को पूछता हुआ प्रतीत होता है? ऐसा करने के लिए क्या यह उपयुक्त भाषा तथा भाषा स्तर का प्रयोग करता है? विषय-वस्तु वैधता से भिन्न, रूपाकार भिन्नता अपने समर्थन हेतु स्थापित सिद्धांत पर नहीं टिकी होती है।

ग) **मापदंडः** भावी कार्य-निष्पादन के साथ अथवा अन्य अधिक सुस्थापित सर्वेक्षणों से प्राप्त उत्तरों के साथ मापदंड वैधता उत्तरों की तुलना करती है। मापदंड वैधता की दो उप-श्रेणियाँ होती हैं — भविष्यसूचक (predictive) तथा समवर्ती (concurrent)। भविष्यसूचक वैधता का आशय उस माप से है जो भावी कार्य-निष्पादन की भविष्यवाणी की सीमा बताता है। समवर्ती वैधता का दर्शन तब होता है जब दो मूल्यांकन परस्पर सहमत होते हैं अथवा किसी नए माप की तुलना वांछनीय रूप वाले ऐसे माप से की जाती है जो पहले से ही वैध माना गया हो।

घ) **विन्यासः** विन्यास वैधता प्रायोगिक तौर पर यह दर्शाने के लिए स्थापित की जाती है कि सर्वेक्षण ऐसे लोगों के बीच भेद करता है जिनमें कुछ विशेषताएँ होती हैं तथा जिनमें वे नहीं होती हैं। उदाहरण के लिए, शोधकार को वैज्ञानिक ढंग से यह सिद्ध करना होगा कि संतुष्ट प्रत्यर्थी किस प्रकार असंतुष्ट प्रत्यर्थियों से भिन्न रूप में व्यवहार करते हैं।

22.5 निष्कर्ष

इकाई 22 में सर्वेक्षण उपकरणों पर चर्चा की गई है। इसमें शोध-सामग्री एकत्रित करने की तकनीकों/ उपकरणों के प्रकार तथा उनके लाभ एवं हानियाँ, साक्षात्कारकर्त्ता की भूमिका, साक्षात्कारकर्त्ता का पूर्वाग्रह, प्रश्नावली निर्माण के दिशा-निर्देश तथा प्रश्नावली बनाते समय ध्यान में रखने योग्य कुछ सिद्धांत के साथ-साथ सर्वेक्षण उपकरणों की विश्वसनीयता तथा वैधता से संबंधित मुद्दों की भी चर्चा की गई है। सर्वेक्षण शोध की सफलता के लिए इनमें से प्रत्येक मुद्दा महत्वपूर्ण है क्योंकि विश्वसनीय तथा वैध सामग्री प्राप्त करने के लिए यह अवस्था महत्वपूर्ण है। इसलिए सर्वेक्षण उपकरण का विकास प्रायः शोध प्रश्न को प्रश्नावली में अनूदित कर देता है जिसे फिर सामग्री सृजित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

22.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऑल्ड्रिज, ऐलन एंड कैन लवाइन, 2001, *सर्वेइंग द सोशल वर्ल्ड — प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिस इन सर्वे रिसर्च*, ओपन यूनिवर्सिटी प्रेसः बकिंघम।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 23

सर्वेक्षण निष्पादन और शोध-सामग्री विश्लेषण

इकाई की रूपरेखा

23.1 प्रस्तावना

23.2 सर्वेक्षण शोध निष्पादन की समस्याएँ और मुद्दे

23.3 सामग्री विश्लेषण

23.4 सर्वेक्षण शोध में नैतिक मुद्दे

23.5 निष्कर्ष

23.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 23 को पढ़ने के बाद आपके लिए संभव होगाः

- सर्वेक्षण के निष्पादन में अनुभव की जाने वाली समस्याओं को पहचानना;
- सामग्री विश्लेषण के विभिन्न चरणों के नामतः संपादन, कोडीकरण, सारणीयन और सामग्री विश्लेषण करना और अंततः रिपोर्ट लिखना; तथा
- शोधकार के सामने आने वाली नीतिशास्त्रीय तथा नैतिक मुद्दों के प्रकार को पहचानना।

23.1 प्रस्तावना

सर्वेक्षण शोध को निष्पादित करने की प्रक्रिया के दौरान कई मुद्दे उठ खड़े होते हैं। सर्वेक्षण की गुणवत्ता और विश्वसनीयता को बढ़ाने के उद्देश्य से हमने उनमें से कुछ मुद्दों का इस इकाई में परीक्षण किया है। शोधकार को ऐसी कई स्थितियों का सामना करना पड़ सकता है जो उसे सर्वेक्षण योजना को कार्यान्वित करने के बारे में गंभीरता से सोचने के लिए प्रेरित कर सकती हैं। क्षेत्र में किसी भी समस्या से निपटने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि व्यक्ति को किसी भी प्रकार की अप्रत्याशित घटना के लिए तैयार रहना चाहिए।

MAADHYAM IAS

23.2 सर्वेक्षण शोध निष्पादन की समस्याएँ और मुद्दे

सर्वेक्षण की रूपरेखा निर्मित करने की तैयारी और योजना के बाद शोधकार के समक्ष कई समस्याएँ आती हैं। ये समस्याएँ साक्षात्कारकर्त्ताओं को अथवा अन्वेषकों के खराब प्रशिक्षण, प्रत्यर्थियों (respondents) और क्षेत्र-विन्यास (field-setting) को खोजने तथा उन तक पहुँचने, सामग्री संग्रहण तकनीकों के कार्यान्वयन के साथ-साथ लागत और संसाधन प्रबंध से जुड़ी हो सकती हैं। इकाई के इस भाग में हमने कुछ उन मुद्दों को प्रस्तुत किया है जिनका शोधकार को क्षेत्र में सामना करना पड़ता है।

i) क्षेत्र-विन्यास (field-setting) को खोजना तथा वहाँ तक पहुँचना

जब साक्षात्कारकर्त्ताओं का प्रशिक्षण पूरा हो जाता है तो प्रत्यर्थियों और उनके क्षेत्र-विन्यास तक पहुँचने की वास्तविक प्रक्रिया शुरू हो जाती है। इस चरण पर लक्षित लोगों को पहचानना और सर्वेक्षण करने के लिए संबंधित संगठनों एवं संस्थाओं को पत्रादि लिखना शोधकार का पहला काम है। यह वह चरण है जिसमें व्यक्ति को यह ध्यान रखना होता है कि क्षेत्र-विन्यास दो प्रकार की होती है — औपचारिक (सरकारी) और अनौपचारिक (ग़ैर-सरकारी) विन्यास। प्रत्येक विन्यास में कुछ लोग होते हैं जिन्हें 'द्वाररक्षक* (गेटकीपर)'

कहा जा सकता है। 'गेटकीपर' वे लोग हैं जिन्हें क्षेत्र-विन्यास में प्रवेश करने की अनुमति देने का अधिकार होता है।

क) औपचारिक संगठन में गेटकीपर

सरकारी गेटकीपर वे लोग हैं जो स्कूल, सरकारी विभागों, सरकारी संगठनों आदि जैसे औपचारिक संगठनों में सर्वेक्षण करने की अनुमति प्रदान करते हैं। (स्कूल में मुख्य अध्यापक अथवा ज़िला स्तर पर ज़िला शिक्षा अधिकारी अथवा ग़ैर-सरकारी संगठन का निदेशक)। यदि हमने गेटकीपरों की अनुमति के बिना संगठन में प्रवेश किया है तो अनुमति प्राप्त नहीं करने की वजह से हमारे सर्वेक्षण के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जा सकती है क्योंकि यह संस्थान का अधिकार है कि वह सर्वेक्षण-अध्ययन में भाग ले अथवा नहीं। इसलिए स्कूल, सरकारी विभागों, ग़ैर-सरकारी संगठनों, अस्पतालों आदि औपचारिक संस्थाओं में प्रवेश करने से पूर्व शोधकार को चाहिए कि वह गेटकीपरों का अनुमोदन अथवा सहमति अवश्य प्राप्त कर ले।

ख) अनौपचारिक विन्यास में गेटकीपर

केवल औपचारिक विन्यास में ही नहीं बल्कि परिवार, समुदाय आदि अनौपचारिक विन्यासों में भी गेटकीपर होते हैं। शोधकार को सर्वेक्षण शोध करने से पूर्व अनौपचारिक विन्यासों के गेटकीपरों से भी अनुमति लेनी होती है। यदि शोधकार को बच्चे से घरेलू परिवेश में बातचीत करनी है तो पहले उसे बच्चे के माता-पिता से ही बात करनी होगी। आम तौर पर, माता-पिता द्वारा अपने बच्चों से यह कहा जाता है कि वे सर्वेक्षक से बात करें। यदि शोधकार को घर की महिलाओं या पुरुषों से बातचीत करनी है तो उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह पहले घर के मुख्य व्यक्ति से बातचीत करने की अनुमति प्राप्त कर ले। इसी प्रकार, यदि शोधकार को समुदाय के किसी सदस्य से बात करनी है तो पहले उसे समुदाय के अध्यक्ष (ग्राम प्रधान, पंचायत अध्यक्ष, जाति के नेता आदि) से अनुमति लेनी होगी। अनौपचारिक विन्यास में गेटकीपरों की अनुमति के बिना हो सकता है कि परिवार या समुदाय के सदस्य सहयोग न करें या फिर साक्षात्कार के अनुरोध को ही अस्वीकार कर दें। इसलिए साक्षात्कारकर्त्ता को अनौपचारिक विन्यास में गेटकीपरों के महत्व के प्रति सावधान रहना चाहिए।

MAADHYAM IAS

ग) अनुमति प्राप्त करने के लिए द्वार रक्षकों गेटकीपरों से कैसे संपर्क करें?

प्रत्यर्थियों और उनकी विन्यास को पहचानने के बाद शोधकार को पहला काम यह करना होगा कि वह गेटकीपर को सर्वेक्षण के समग्र लक्ष्यों से अवगत कराते हुए उसे सर्वेक्षण के मूल में निहित उद्देश्यों और लक्ष्यों की जानकारी दे। उदाहरण के लिए, किए जा रहे सर्वेक्षण का मुख्य उद्देश्य यदि अक्षम बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (Integrated Education for the Disabled Children) के प्रभाव का मूल्यांकन करना है तो प्रत्यर्थियों को यह बताया जाए कि योजना को लागू करने और कार्यान्वियन की गुणवत्ता को सुधारने के लिए सर्वेक्षण के परिणामों का इस्तेमाल किया जाएगा और इसमें उनका सहयोग सराहनीय एवं उपयोगी सिद्ध होगा। साथ ही, शोधकार को चाहिए कि वह गेटकीपर और प्रत्यर्थी के संशयों और आशंकाओं का निवारण करे। इसके लिए, शोधकार को सर्वेक्षण के विशिष्ट उद्देश्यों का भली प्रकार से बोध होना चाहिए। उदाहरण के लिए, ऊपर बताए गए सर्वेक्षण के मुख्य उद्देश्य हैं :

- यह अध्ययन करना कि योग्य बच्चों को उनकी विशेष आवश्यकताओं के साथ एकीकृत करने में एकीकृत स्कूल कहाँ तक सफल रहे हैं।
- स्कूलों द्वारा अपनाई गई युक्तियों का परीक्षण करना।

- यह अध्ययन करना कि क्या एकीकृत स्कूलों में विभिन्न रूप से अक्षम बच्चों के मूल्यांकन और समुचित प्लेसमेंट के लिए सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

निष्पादित हो रहे सर्वेक्षण के कई विशिष्ट उद्देश्य हो सकते हैं। इसलिए साक्षात्कारकर्त्ता को इन उद्देश्यों को समझने की कोशिश करनी चाहिए और उसे प्रत्येक उद्देश्य के बारे में स्पष्ट बोध होना चाहिए। इससे सर्वेक्षण निष्पादन के बाद के चरण में सहायता मिलती है। वहीं, दूसरी ओर, इससे अपने सहायकों को इसी प्रकार का प्रशिक्षण देने और सर्वेक्षण को सही तरह से पूरा करने में मदद मिलेगी। साक्षात्कारकर्त्ता को सर्वेक्षण की अवधारणा और उसके सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और राजनीतिक संदर्भ की भी जानकारी होनी चाहिए।

उक्त उदाहरण के संदर्भ में शोधकारार्थी/साक्षात्कारकर्त्ता को कुछ विशिष्ट प्रश्नों के बारे में साफ-साफ पता होना चाहिए कि :

- विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चे कौन-से हैं?
- उनकी विशिष्ट आवश्यकताएँ क्या हैं?
- विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए विशेष कार्यक्रमों की क्या आवश्यकता है?
- अध्ययन का हिस्सा बनने वाले परिवारों, समुदायों और स्कूलों का सांस्कृतिक संदर्भ क्या है?
- अक्षम अथवा विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों और उनके माता-पिताओं की मनोवैज्ञानिक स्थिति क्या होगी?
- अक्षम बच्चों के लिए एकीकृत शिक्षा (Integrated Education for the Disabled Children) जैसी योजना चलाने की वित्त-व्यवस्था क्या है? उपकरण के संभावित उपयोग और उनकी उपयोगिता क्या है और वे कैसे इस्तेमाल किए जाते हैं? मदों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए कुछ मदों में निवेश करना क्या उचित है?
- विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को स्कूली शिक्षा देने का राजनीतिक संदर्भ क्या है? कार्यान्वयन एजेंसियों आदि का ध्यान आकर्षित करने की दृष्टि से हो सकता है कि योजना की ओर ज़्यादा या कम ध्यान दिया जा रहा हो। आज के समय में यह योजना इतनी महत्वपूर्ण क्यों हो गई है? योजना में सुधार करने के इच्छुक दबाव समूह कौन-से हैं? कार्यक्रम के हित-समूह में कौन हैं और उनकी स्थिति के साथ-साथ योजना के उद्देश्य की दृष्टि से उनका क्या स्थान है?

MAADHYAM IAS

इसके अलावा, शोधकार को चाहिए कि वह उसकी एवं संगठन द्वारा उपलब्ध कराई गई जानकारी की गोपनीयता के बारे में द्वार रक्षक (गेटकीपर) को आश्वस्त करे। यदि कोई संस्था/संगठन के बारे में साफ-साफ बताना चाहता है तो उसे ऐसा करने के लिए अनुमति प्राप्त करनी चाहिए। जब वह क्षेत्र में हो तो विन्यास में प्रवेश लेने या पहुँचने के बाद शोधकार को हर प्रत्यर्थी के पास जाना चाहिए। प्रत्यर्थियों तक पहुँचने में मदद के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव हैं :

- प्रत्यर्थियों तक पहुँचना और उनके साथ घनिष्ठता* स्थापित करनाः

  यह याद रखें कि साक्षात्कार की स्थिति एक सामाजिक अंतःक्रिया है। सामाजिक अंतःक्रिया में, यदि आप संबंध बनाए रखना चाहते हैं तो घनिष्ठता स्थापित करना अनिवार्य है। घनिष्ठता और कुछ नहीं केवल 'संबंध बनाना' ही है।

- प्रत्यर्थी से संपर्क करके उसे अपने अध्ययन में शामिल करने के लिए अनुमति प्राप्त करनाः

प्रत्यर्थी की सर्वेक्षण में भाग लेने की इच्छा अवश्य होनी चाहिए। प्रतिदर्श में प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह सर्वेक्षण का हिस्सा बने अथवा नहीं। यदि किसी को सर्वेक्षण में भाग लेने के लिए मजबूर किया जाता है तो इससे जानकारी की विश्वसनीयता ख़तरे में हो सकती है। ऐसे में यह भी संभव है कि प्रत्यर्थी ग़लत, अधूरे अथवा भ्रामक उत्तर दे।

- यह मत सोचिए कि यह प्रत्यर्थी का दायित्व है कि वह शोधकार को साक्षात्कार दे और उसके साथ अवश्य सहयोग करे। इसलिए अध्ययन में शामिल करने से पूर्व शोधकार को यह अवश्य समझना चाहिए कि प्रत्यर्थी के लिए क्या महत्वपूर्ण है (अक्सर सर्वेक्षणों की इसीलिए आलोचना की जाती है क्योंकि वे शोधकार के हित के आधार पर संचालित होते हैं)।
- प्रत्यर्थियों में अंतर को पहचानिएः यदि सभी प्रत्यर्थी अपने विचारों और कार्य में एक जैसे होंगे तो फिर सर्वेक्षण करने की आवश्यकता ही क्यों पड़ेगी। तब तो हमें केवल एक केस लेकर उसे सामान्यीकृत करना होगा। परंतु हर प्रत्यर्थी के विचारों तथा कार्य में भिन्नता ही तो सर्वेक्षण को रोचक और सार्थक बनाती है।
- प्रत्यर्थी के बारे में ग़ैर-वाजिब पूर्व-धारणाओं और जमी-जमाई धारणाओं से ग्रस्त होने से बचनाः प्रायः शोधकारों पर दूसरे व्यक्तियों के प्रति पूर्व-धारणाओं तथा जमी-जमाई धारणओं का प्रभाव हावी हो जाता है। उदाहरण के लिए, अक्षम अथवा विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के प्रति हरेक दृष्टि भिन्न हो सकती है। ऐसी दृष्टि-भिन्नता के चलते पूछे जाने वाले प्रश्नों और संपर्क किए जाने वाले प्रत्यर्थियों के प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाया जा सकता है। सरल शब्दों में यही कहा जा सकता है कि प्रत्यर्थी के साथ अंतःक्रिया साक्षात्कारकर्त्ता को निर्णायक न हो और न ही वह सर्वेक्षण के विषय, जानकारी प्राप्त करने के लिए जिन संस्थाओं से संपर्क करता है उनके प्रति, अथवा माता-पिताओं की भूमिका आदि के प्रति भाँति-भाँति के मूल्यपरक विचार रखे।
- अच्छे वक्ता के स्थान पर साक्षात्कारकर्त्ता अच्छे श्रोता बने।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सोचें और करें 23.1

मान लीजिए कि आपको अपने क्षेत्र की अपशिष्ट नियंत्रण पद्धति का सर्वेक्षण करना है। ऐसे में प्रत्यर्थियों से संपर्क बनाने के लिए आपको किन युक्तियों को अपनाना होगा? सर्वेक्षण के लिए नियुक्त किए जाने वाले साक्षात्कारकर्त्ताओं में जिन योग्यताओं-गुणों की आपको अपेक्षा है, उनके बारे में एक टिप्पणी लिखिए।

ii) सामग्री एकत्रीकरण तकनीक को लागू करना

मुख्य सर्वेक्षण शुरू करते समय क्षेत्र में प्रवेश करने पर अनेक समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। ये समस्याएँ मुख्य रूप से स्वयं संचालित प्रश्नावलियों और रू-ब-रू साक्षात्कार जैसी सामग्री एकत्रीकरण तकनीक को लागू करने से जुड़ी होती हैं।

क) स्वयं-संचालित प्रश्नावलियाँ (Self-administered Questionaires)

डाक द्वारा भेजी गई स्वयं-संचालित प्रश्नावलियों की मुख्य समस्या उन्हें वापस प्राप्त करने की होती है। जैसा कि हमें पहले से ही मालूम है कि प्रत्यर्थी में प्रश्नावलियों को भरने और फिर उन्हें डाक द्वारा भेजने के मामले में काफ़ी आलस होता है। इस प्रकार की प्रश्नावलियाँ भेजने के मामले में यह मानकर चला जाता है कि सर्वेक्षण भरी हुई कम से कम 50 प्रतिशत प्रश्नावलियों पर आधारित होना चाहिए। इस अनुपात को तब प्राप्त किया जा सकता है यदि कक्षा, कार्यालय परिसर आदि में शोधकार स्वयं जाकर प्रश्नावलियाँ वितरित करे। किंतु

डाक द्वारा प्रश्नावलियाँ भेजकर सामग्री एंकत्र करने में इस संख्या के उक्त स्तर को प्राप्त करना कठिन होता है। वैसे, अधिकतम प्रश्नावलियाँ प्राप्त करने में निम्नलिखित सुझाव सहायक सिद्ध हो सकते हैं:

- डाक द्वारा भेजने जाने वाली प्रश्नावली के साथ परिचायक पत्र अवश्य हो। इस पत्र में अध्ययन के उद्देश्य का वर्णन होना चाहिए और इसमें यह भी बताया जाना चाहिए कि इस परियोजना का प्रायोजक कौन है। एक अच्छा परिचायक पत्र अक्सर प्रत्यर्थी को प्रश्नावली भरने के लिए प्रोत्साहित करता है।
- भरी हुई अधिक प्रश्नावलियाँ प्राप्त करने के लिए परिचायक पत्र के साथ स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा लिफाफा भी भेजा जाना चाहिए जिसमें प्रत्यर्थी भरी हुई प्रश्नावली भेज सके।
- कुछ केसों में, संभावित प्रत्यर्थी को सहयोग देने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए पेन अथवा कुछ रुपए आदि के रूप में विशेष प्रोत्साहन भी दिया जा सकता है। हालाँकि, इस तरह का क़दम उठाने से जहाँ सर्वेक्षण में खर्चा अधिक होगा वहीं नैतिक प्रश्न भी उठ खड़े हो सकते हैं।
- जो प्रत्यर्थी निर्धारित तिथि तक अपनी प्रश्नावलियाँ नहीं भेजते, उनसे लगातार संपर्क करते हुए प्रश्नावलियाँ भेजने के लिए प्रोत्साहित करने से भी प्राप्त प्रश्नावलियों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो सकती है।

कभी-कभी इन सभी चरणों को लागू कर लिया जाए तो प्राप्त होने वाली प्रश्नावलियों की संख्या 70 प्रतिशत तक हो सकती है। ऐसे में हालाँकि यह समस्या बनी रहेगी कि जिन 30 प्रतिशत प्रत्यर्थियों ने जवाब नहीं दिया है, उससे सर्वेक्षण के नतीजों पर प्रभाव पड़ेगा। ऐसे में हमारा यह कहना है कि नमूने का प्रतिनिधित्व बना हुआ है? इसका उत्तर हाँ भी हो सकता है और नहीं भी।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

उदाहरण के लिए, प्रतिनिधित्व के अभाव के परिणामस्वरूप कभी-कभी भरी हुई प्रश्नावलियों की कम संख्या में प्राप्ति से शोध के निष्कर्ष प्रभावित हो सकते हैं। वैसे, यह भी हो सकता है कि इससे सर्वेक्षण के निष्कर्ष प्रभावित न हों। इस समस्या से निपटने का एक तरीका यह हो सकता है कि जिन लोगों ने उत्तर नहीं दिया है, जानकारी न देने वालों की तुलना नमूने के बारे में कुछ अन्य स्रोतों से प्राप्त जानकारी से की जाए। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि कॉलेज के यादृच्छिक ढंग से चुने विद्यार्थियों को भेजी गई प्रश्नावलियों में से साठ प्रतिशत ने अपनी भरी हुई प्रश्नावलियाँ भेज दी हैं। प्रत्यर्थियों की आयु, लिंग और अध्ययन के विषय के बारे में सर्वेक्षण से जानकारी की तुलना कुल विद्यार्थी संख्या के बारे में प्राप्त जानकारी से की जा सकती है। यदि सर्वेक्षण सामग्री और अन्य स्रोतों से प्राप्त सामग्री में कोई अंतर नहीं है तो इस नतीजे पर पहुँचा जा सकता है कि जिन चालीस प्रतिशत विद्यार्थियों ने प्रश्नावली नहीं भेजी है उनकी प्रश्नावली साठ प्रतिशत विद्यार्थियों की प्रश्नावली के समान ही है। इस मामले में प्रतिनिधित्व की समस्या का यह सकारात्मक समाधान हो सकता है। किंतु यहाँ यह उल्लेख करना भी अनुचित न होगा कि यह दोषरहित समाधान नहीं है और इस समस्या को अन्य तरीक़े से भी हल किया जाना चाहिए।

ख) रू-ब-रू साक्षात्कार

हालाँकि यह सही है कि साक्षात्कार के द्वारा सर्वेक्षण में प्रत्युत्तर दर अपेक्षाकृत अधिक होती है, किंतु रू-ब-रू साक्षात्कार में भी इसी प्रकार की समस्याएँ होती हैं। साक्षात्कार में प्रत्युत्तर दर में सुधार के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार हैं :

- प्रत्यर्थियों के साथ घनिष्ठता स्थापित करने के लिए साक्षात्कारकर्त्ताओं को पहले प्रशिक्षण देकर संभावित प्रत्यर्थियों के सहयोग की अस्वीकृति को कम किया जा सकता है।
- कुछेक प्रत्यर्थियों को नज़रअंदाज करने की साक्षात्कारकर्त्ताओं की प्रवृत्ति को वैधता कार्यविधि पर बल देकर कम किया जा सकता है और प्रत्येक अपूर्णता के लिए साक्षात्कारकर्त्ताओं से हिसाब माँगा जा सकता है। उदाहरण के लिए, घर-घर जाकर सर्वेक्षण करते समय संभव है कि शोधकार उस घर का सर्वेक्षण न करे जिसके बाहर यह लिखा हो कि 'कुत्तों से सावधान'!
- जब शोधकार ने प्रत्यर्थी से संपर्क करने का प्रयास किया हो तो उस समय प्रत्यर्थी अक्सर घर पर न मिला हो। इसलिए दिन में अलग-अलग समय पर सप्ताह के अलग-अलग दिनों में जाना उपयुक्त रहता है।

यदि इन युक्तियों को प्रभावी ढंग से अपनाया जाता है तो प्रत्युत्तर दर औसत अथवा बेहतर हो सकती है। ऐसे में, फिर भी, यह प्रश्न तो बना ही रह सकता है कि अध्ययन किए जाने वाले पूरे समूह के प्रत्यर्थियों का प्रतिनिधित्व कैसे हो। स्वयं-संचालित प्रश्नावलियों के केस में प्रत्यर्थियों की सर्वेक्षण जानकारी की तुलना पूरे समूह के बारे में अन्य जानकारी से करने संबंधी जो सुझाव दिया गया है, उसे रू-ब-रू साक्षात्कार के केस में भी लागू किया जा सकता है।

इसके अलावा, साक्षात्कार प्रक्रिया के क्रियान्वयन की सफलता के मामले में महत्वपूर्ण मुद्दा साक्षात्कारकर्त्ताओं के चयन और प्रशिक्षण से जुड़ा है। साक्षात्कारकर्त्ताओं को प्रशिक्षित करते समय निम्नलिखित पक्षों को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए:

- साक्षात्कारकर्त्ताओं को इस प्रकार प्रशिक्षित कीजिए कि वे प्रत्यर्थियों से किस प्रकार घनिष्ठता स्थापित करें। किंतु घनिष्ठता का अभिप्राय रोचक उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित करना नहीं है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

- साक्षात्कारकर्त्ताओं को यह अवश्य बताया जाए कि वे यह हमेशा ध्यान रखें कि साक्षात्कार स्थिति एक प्रकार की सामाजिक अंतःक्रिया है। साक्षात्कारकर्त्ता और प्रत्यर्थी में जाति, वर्ग, लिंग, सामाजिक वर्ग, धर्म आदि जैसी विशेषताओं में मत-विभिन्नता का साक्षात्कार के दौरान प्राप्त किए जाने वाले उत्तरों पर प्रभाव पड़ता है।
- साक्षात्कारकर्त्ता कभी भी प्रत्यर्थियों के प्रति निर्णायक की भूमिका न निभाएँ। तभी प्रत्यर्थियों को अपने सच्चे उद्‌गार व्यक्त करने में सरलता महसूस होगी।
- बेहतर यह रहता है कि उन साक्षात्कारकर्त्ताओं को लिया और प्रशिक्षित किया जाए जो उन लोगों से मूलतः भिन्न न हों जिनका साक्षात्कार लिया जाना है।
- साक्षात्कारकर्त्ता के लिए सारणी (Manual) तैयार किया जा सकता है जिसमें साक्षात्कार लेने संबंधी सामान्य तकनीकों और अध्ययन-विशेष की अद्वितीय अपेक्षाओं के बारे में बताया गया हो।

जब साक्षात्कार लेने की प्रक्रिया वास्तव में शुरू हो जाए तो साक्षात्कारकर्त्ताओं से यह अवश्य कहा जाए कि वे पहले पूरे किए जा चुके कुछेक साक्षात्कारों को पर्यवेक्षक कार्मिकों को दे दें ताकि वे उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन कर सकें और तब टेलीफोन पर अथवा व्यक्तिगत रूप से कुछ पुष्टि-साक्षात्कार (validation interview) किए जाएँ जिससे यह पता चल सके कि साक्षात्कार लेने वाले व्यक्ति प्रत्यर्थियों को परेशान नहीं कर रहे हैं और

वे दिए गए निर्देशों के अनुसार वास्तव में साक्षात्कार ले रहे हैं। इस प्रकार के मूल्यांकन से वास्तविक क्षेत्र स्थितियों में प्रश्नावली का मूल्यांकन करने के उद्देश्य में मदद मिलेगी। इस प्रकार के स्वतंत्र पुष्टि-साक्षात्कारों को पूरे साक्षात्कारों के दौरान जारी रखना चाहिए। निर्देशों के लिए कोष्ठक 23.1 देखिए।

कोष्ठक 23.1: सामग्री एकत्रीकरण तकनीकों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए कुछ दिशा-निर्देश

प्रत्यर्थियों से जानकारी एकत्र करने में आने वाली कुछ समस्याओं को दूर करने के लिए शोधकार को निम्नलिखित दिशा-निर्देशों को ध्यान में रखना चाहिए:

- यदि आपने अंग्रेज़ी में प्रश्नावली तैयार की है और प्रत्यर्थियों को अंग्रेज़ी में उत्तर देने में कठिनाई हो रही है तो उनसे प्रश्न पूछते समय प्रश्नों का प्रादेशिक भाषा में अनुवाद करने की कोशिश कीजिए।
- प्रश्न स्पष्ट, असंदिग्ध, सूक्ष्म और अर्थवान होने चाहिए। भाषा का प्रयोग आयु, क्षेत्र, सामाजिक वर्ग आदि जैसे कारकों पर भी निर्भर करता है।
- भाषा में विशिष्ट उपयोगों के बारे में सामाजिक समझ का बोध होना चाहिए। उदाहरण के लिए, दोपहर का खाना 'डिनर' न होकर 'लंच' है, उस कमरे को 'सिटिंग रूम' कहते हैं जिसमें सारा परिवार बैठता है न कि 'लिविंग रूम', और 'पत्रिका (मैगजीन)' को कभी भी 'किताब/पुस्तक' नहीं कहा जाता।
- कभी-कभी लोगों की यह सोच हो सकती है कि उनका साक्षात्कार लेते समय भाषा के आधार पर आप अशिष्ट या अभद्र या असभ्य या ग़लत हैं। इससे साक्षात्कार की पूरी प्रक्रिया ही खत्म हो सकती है। इसलिए सही भाषा का प्रयोग करें।
- अस्पष्ट अथवा संदिग्ध/द्वयर्थक शब्दों से निपटने की युक्तियाँ
- उनका उपयोग न करें/विकल्पों का प्रयोग करें
- एक अन्य तरीक़ा यह है कि शब्द की व्याख्या कर दें अर्थात प्रत्यर्थी के सामने यह व्याख्या कर दें कि शब्द-विशेष का क्या अभिप्राय है। किंतु इस प्रकार की व्याख्या की एक समस्या यह हो जाती है कि इसके द्वारा अर्थ अथवा उत्तर को प्रत्यर्थी पर लगभग थोप दिया जाता है।
- स्पष्टीकरण। यह भी एक प्रकार की व्याख्या ही है। किंतु इसमें संभावित संदिग्धता/द्वयर्थकता को ही स्पष्ट किया जाता है।
- उदाहरण दीजिए। किंतु इसमें एक प्रकार से उत्तर के सुझाव का ख़तरा बना रहता है। या फिर यह भी हो सकता है कि इससे प्रत्यर्थी का अन्य उत्तर देने के बारे में विचार करते समय ध्यान भंग हो जाए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

23.3 सामग्री विश्लेषण

जब एक बार सामग्री एकत्र हो जाए तो उसे विश्लेषण के लिए उपयुक्त रूप में ढालने का काम करना होता है। इससे एकत्रित सामग्री के ढेर में भी कमी हो जाती है। इस प्रक्रिया को 'सामग्री घटाना' कहा जाता है। सामग्री घटाने की इस प्रक्रिया में संपादन, कोड देना और अगर बड़ा सर्वेक्षण किया गया है तो कंप्यूटर की सहायता से उन्हें संसाधित करना एवं अगर छोटा सर्वेक्षण किया गया है तो स्वयं अपने आप सामग्री को संसाधित करना शामिल है।

क) **संपादन**

भरी हुई प्रश्नावलियों को संपादित करना संसाधित करने के लिए सामग्री को तैयार करने का पहला चरण है। यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि प्रश्नावलियाँ सही तरह से भरी गई हों। हालाँकि संपादन करना काफ़ी थकाने वाला और उबाऊ काम है, किंतु यह काफी उपयोगी होता है। सार रूप में यही कहा जा सकता है कि भली प्रकार से किया गया संपादन कार्य, एकत्रित सामग्री की गुणवत्ता को बढ़ा देता है।

साक्षात्कार अनुसूचियाँ अथवा स्वयं-संचालित प्रश्नावलियों के संपादन से साक्षात्कारकर्त्ताओं और प्रत्यर्थियों द्वारा की गई गलतियों को पहचाना जाता है एवं उन्हें दूर किया जाता है। मोज़र और काल्टन (1973) ने संपादन में तीन कार्य बताए हैं :

- **संपूर्णताः** यह देखा जाता है कि क्या सभी प्रश्नों के उत्तर दिए गए हैं अथवा नहीं। अधिकांश सर्वेक्षणों में, साक्षात्कारकर्त्ताओं से प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दर्ज करना अपेक्षित होता है। जिन प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए गए हैं, उनकी कभी-कभी सर्वेक्षण के अन्य उत्तरों से जाँच की जाती है। यदि कोई और विकल्प न हो तो अनुपलब्ध जानकारी पाने के लिए प्रत्यर्थियों से दोबारा संपर्क किया जा सकता है।
- **परिशुद्धताः** जहाँ तक संभव हो, यह जाँच की जाती है कि सभी प्रश्नों के उत्तर सही हैं या नहीं। प्रत्यर्थियों या साक्षात्कारकर्त्ताओं की लापरवाही की वजह से गलतियाँ हो सकती हैं। कई बार, जान-बूझकर भ्रमित करने की कोशिश की जाती है। अगर ग़लत कोष्ठक पर सही का निशान (टिक) या ग़लत कोड पर गोल निशान, छोटी-मोटी गणितीय ग़लती आदि को अगर संपादन प्रक्रिया के दौरान न पकड़ा जाए तो यह सामग्री की वैधता कम हो जाती है।
- **एकरूपताः** यह जाँच की जाए कि साक्षात्कारकर्त्ता ने निर्देशों और प्रश्नों की एकरूपता के साथ व्याख्या की है अथवा नहीं। कभी-कभी प्रत्यर्थियों के उत्तरों की व्याख्या के बारे में स्पष्ट निर्देश देने में विफल रहने के कारण साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा एक ही कोड के स्थान पर विभिन्न उत्तर कोडों में सही उत्तर दर्ज कर दिया जाता है। एकरूपता की जाँच से इस प्रकार की ग़लती का सुधार किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS

ख) **कोडीकरण**

सर्वेक्षण के मात्रात्मक विश्लेषण में उत्तरों को संख्या में बदलना अपेक्षित होता है। उत्तरों को श्रेणियों में वर्गीकृत करने के लिए भी कई चरों की आवश्यकता होती है। उत्तरों को संख्या में बदलने और उन्हें वर्गीकृत करने की प्रक्रिया कोडीकरण* (coding) कहलाता है। इस प्रकार, सामग्री को कम करने का मुख्य काम कोडीकरण कहलाताहै। इसमें प्रश्नावली/साक्षात्कार अनुसूची के प्रत्येक प्रश्न के उत्तर को एक कोड नंबर दे दिया जाता है। प्रश्नावली की सामग्री को कोडीकृत और वर्गीकृत करने के छह प्रमुख चरण हैं। ये हैं :

i) उत्तरों को वर्गीकृत करना

ii) प्रत्येक उत्तर को कोड आबंटित करना

iii) प्रत्येक चर को कॉलम नंबर आबंटित करना

iv) कोड बुक तैयार करना

v) कोडिंग ग़लतियों की जाँच करना

vi) सामग्री प्रविष्ट करना।

i) **उत्तरों को वर्गीकृत करना**: कोडीकरण में केवल उत्तरों को नंबर आबंटित करना ही नहीं होता है। इसमें वर्गीकरण प्रणाली तैयार करना भी शामिल है जिसे सामग्री में विशिष्ट क्रम लागू किया जा सके। यह सामग्री को विश्लेषित करने के तरीके को प्रभावित करता है। श्रेणियाँ बनाने वाली ये प्रणालियाँ वस्तुनिष्ठ नहीं होतीं क्योंकि ये लोगों द्वारा बनाई जाती हैं और इनमें वे ऐतिहासिक और सांस्कृतिक तौर-तरीके झलकते हैं जिनके द्वारा हमने आसपास की दुनिया को समझने की कोशिश की है। डेविड डि वॉस (2002) ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि शोध के सर्जक और उपभोक्ता होने के नाते हमें यह मालूम होना चाहिए कि वर्गीकरण प्रणालियाँ उस सामग्री को आकार देती हैं जिन्हें हमने इकट्ठा किया है।

ii) **प्रत्येक चर को कोड आबंटित करना**: जब वर्गीकरण योजना तैयार कर ली जाती है तो वर्गीकरण की प्रत्येक श्रेणी को कोड आबंटित किया जाता है। इन वर्गीकरण योजनाओं को प्रश्नावली/साक्षात्कार अनुसूची को संचालित करने से पहले अथवा बाद में भी तैयार किया जा सकता है। उत्तरों को वर्गीकृत करने का ज़्यादातर काम उस प्रश्नावली निर्माण प्रक्रिया के चरण में ही पूरा कर लिया जाता है जब निश्चित उत्तरों का समूह प्रत्यर्थियों को दिया जाता है। इन उत्तरों को कोड संख्या आबंटित कर दी जाती है और सामान्यतः ये कोड मुद्रित प्रश्नावली में देखे जा सकते हैं ताकि बाद में आँकड़ों को प्रविष्ट करने में मदद मिल सके।

खुले प्रश्नों को तब कोड दिया जाता है जब सामग्री एकत्र कर ली जाती है। व्यवस्थित, पहले से ही विद्यमान मानक कोडीकरण योजना का उपयोग करके या फिर प्रत्यर्थियों द्वारा उपलब्ध कराए गए उत्तरों के आधार पर नई कोडीकरण योजना बनाकर उत्तर-कोडीकरण किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, रोजगार, धर्म, जाति, परिवार का प्रकार आदि मानक प्रश्नों को मानकीकृत कोडीकरण योजना से कोडीकृत किया जा सकता है। मानकीकृत कोडीकरण योजनाएँ व्यवस्थित होती हैं और इसे विशेषज्ञ लोगों द्वारा पर्याप्त परामर्श के बाद तैयार किया जाता है। ये सार्वजनिक रूप से उपलब्ध हैं और इनमें कोड त्रुटियाँ कम होती हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

प्रत्येक चर की कम से कम दो श्रेणियाँ अवश्य होती हैं और हर व्यक्ति को किसी न किसी एक श्रेणी से अवश्य जुड़ा होता है। चर की प्रत्येक श्रेणी को विशिष्ट कोड देना कोडीकरण का सार है।

iii) **प्रत्येक चर को कॉलम नंबर आबंटित करना**: कोडों को कंप्यूटर में प्रविष्ट करने के लिए उन्हें 'रिकॉर्ड' में अवश्य दर्ज किया जाना चाहिए। कंप्यूटिंग के शुरुआती दौर में, 80 अंकों वाला कंप्यूटर कार्ड रिकॉर्ड होता था और सभी प्रत्यर्थियों के उत्तरों के लिए यदि 80 से अधिक अंक चाहिए तो उस सूरत में दूसरा कार्ड अथवा रिकॉर्ड इस्तेमाल किया जाता था। किंतु, आजकल इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्डिंग का युग है, 80 अंकों से अधिक को भी एक बार में ही रिकॉर्ड किया जा सकता है। प्रत्येक केस में रिकॉर्ड को पहले सामग्री (डाटा) फाइल में दर्ज किया जाता है जिसमें पहला रिकॉर्ड, पहले प्रत्यर्थी के रिकॉर्ड को दर्शाता है और दूसरा रिकॉर्ड दूसरे प्रत्यर्थी के रिकॉर्ड को और इसी तरह आगे का क्रम चलता रहता है।

iv) **कोड बुक तैयार करना**: जब यह निर्णय कर लिया जाता है कि प्रत्येक चर के प्रत्येक उत्तर को क्या कोड दिया जाना है तो लिए गए सभी निर्णयों का व्यवस्थित रिकॉर्ड रखना महत्वपूर्ण हो जाता है। यह रिकॉर्ड 'कोड बुक' कहलाता है और इसमें आम तौर पर निम्नलिखित सूचना शामिल होती है :

क) प्रश्न के निश्चित शब्द

ख) वह कोई एक नाम जिसके द्वारा कार्यक्रम में चर का उल्लेख किया गया है। कोड बुक की सूची में प्रत्येक चर को एक नाम दिया जाता है।

ग) उस चर के लिए इस्तेमाल की गई सामग्री का प्रकार

घ) पहला और अंतिम कॉलम नंबर, जिसमें चर अवस्थित है

च) प्रत्येक प्रश्न के वैध कोड

छ) प्रत्येक प्रश्न के लिए अप्राप्त/लुप्त/अविद्यमान सामग्री (डाटा) कोड

ज) विशिष्ट प्रश्नों का कोडीकरण करने के लिए प्रयुक्त विशेष कोडीकरण निर्देश

v) **कोडिंग त्रुटियों की जाँच करनाः** सामग्री को विश्लेषित करने के दौरान कोडीकरण त्रुटियों की वजह से गंभीर समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। सबसे गंभीर ग़लती तब होती है जब सामग्री को ग़लत कॉलमों में दर्ज कर दिया जाता है। किंतु ग़लत कोड भरना अपेक्षाकृत अधिक आम समस्या है। ये ग़लतियाँ सामग्री एकत्र करने के दौरान या उत्तरों को स्वयं कोडीकरण करने के दौरान या फिर सामग्री को दर्ज के दौरान हो सकती हैं। कोडिंग की सभी ग़लतियों को पकड़ पाना तो लगभग असंभव है, किंतु जहाँ तक हो सके ज़्यादा से ज़्यादा ग़लतियों को ढूँढकर और उनमें सुधार करके समस्या को कम किया जा सकता है।

vi) **सामग्री प्रविष्ट करनाः** पहले लोगों द्वारा स्वयं सामग्री को कोडीकृत किया जाता था और फिर उन्हें की-पंच ऑपरेटर कंप्यूटर में दर्ज करते थे। किंतु कंप्यूटर प्रौद्योगिकी में हुई उन्नति की वजह से सामग्री को प्रविष्ट करने की पूरी प्रक्रिया में आमूलचूल परिवर्तन हो गया है। इसके लिए आप एम.एस.ओ-002 पाठ्यक्रम की पुस्तक 3 के खंड को देखें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ग) सारणीयन और सामग्री विश्लेषण

कंप्यूटर को एक सरल-सा निर्देश (कमांड) देने पर सामग्री विश्लेषण के लिए अपेक्षित सभी सारणियाँ आदि तैयार हो जाती हैं। यहं पूरे एकत्र की सामग्री का सबसे अधिक सरलीकृत रूप होता है जिसमें प्रत्यर्थियों के उत्तरों के विवरण को अंकों में दिया जाता है। इस चरण तक पहुँचने के लिए शोधकार को कई चरणों में कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। सारणीयन का चरण सर्वेक्षण शोध का ढाँचे के रूप में निष्कर्ष होता है। वैसे सामग्री को ढाँचे का रूप प्रदान करने के लिए शोधकार को सामग्री का गणनात्मक विश्लेषण करने की क्रियाविधि का ज्ञान अवश्य होना चाहिए।

ऑल्ड्रिज और लेवाइन का मानना है कि सर्वेक्षण विश्लेषण के तीन विभिन्न पक्ष हैं। उनके अनुसार, भले ही सभी सामग्री का अथवा उनका समान रूप से इस्तेमाल न भी किया गया हो, तब तक ये तीनों आयाम किसी भी सर्वेक्षण के विश्लेषण की संभावित प्रस्तुति तैयार कर सकते हैं। ये आयाम हैं — वर्णनात्मक (descriptive), विश्लेषणात्मक (analytical); और संदर्भपरक (contextual)। वर्णनात्मक सर्वेक्षणों में मुख्य रूप से वर्णनात्मक विश्लेषण की ही प्रधानता होती है। विश्लेषणात्मक और संदर्भपरक पक्ष को विश्लेषणात्मक सर्वेक्षणों में अपेक्षाकृत अधिक प्रधानता दी जाती है। किंतु इन तीनों के विकास को प्रोत्साहित करना ही विश्लेषण की कला है ताकि सर्वेक्षण की शोध संभाव्यता को पूरी तरह से प्राप्त किया जा सके।

यहाँ यह उल्लेख करना अनुचित न होगा कि सामग्री विश्लेषण केवल तकनीकी मामला नहीं है। सामाजिक विज्ञानियों का यह नैतिक दायित्व है कि वह उनके द्वारा सामग्री का सही तरह से विश्लेषण किया जाए और निष्पक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए। अपने आँकड़ों को विश्लेषित करने से पूर्व किन चीज़ों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है, इसके लिए आप कोष्ठक 23.2 देखिए।

कोष्ठक 23.2: सामग्री का विश्लेषण करने से पूर्व चार मुख्य बातों को ध्यान में रखना

- विश्लेषण विशेष में प्रत्येक चर के माप का स्तर क्या है?
- विश्लेषण विशेष के लिए कितने चरों की आवश्यकता है?
- किस तरह का विश्लेषण अपेक्षित है? क्या वर्णनात्मक विश्लेषण अपेक्षित है अथवा विश्लेषणात्मक या फिर संदर्भपरक विश्लेषण?
- विश्लेषित और प्रस्तुत किए जाने वाली सामग्री को चुनते समय क्या समग्र, निष्पक्ष, यथोचित एवं चुनौतीपूर्ण विश्लेषण के नैतिक सिद्धांतों को लागू किया गया है?

घ) रिपोर्ट लेखन

जब सामग्री उपलब्ध हो जाती है तो सर्वेक्षण शोधकारों को लिखित रूप में रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होती है अथवा मौखिक तौर पर उसे प्रस्तुत करना होता है। भले ही रिपोर्ट लिखकर प्रस्तुत करनी हो अथवा मौखिक रूप से, जहाँ तक संभव हो, सर्वेक्षण के परिणाम स्पष्ट और पूरे होने चाहिए। सर्वेक्षण शोध रिपोर्ट के निष्कर्षों की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने के लिए कुछ निम्नलिखित प्रश्न उपयोगी हो सकते हैं :

i) रिपोर्ट में उपलब्ध कराई गई जानकारी के आधार पर क्या पाठक द्वारा रिपोर्ट को दोहराया जा सकता है? क्या सर्वेक्षण शोध प्रक्रिया के सभी चरणों की व्याख्या विस्तार से की गई है?

MAADHYAM IAS

ii) क्या संभावित प्रासंगिक सामग्री प्रस्तुत की गई है अथवा उसमें से केवल चुने हुए उद्धरण ही शामिल किए गए हैं? अधिकांश अध्ययनों में आरंभिक सांख्यिकीय विश्लेषण के रूप में अपेक्षाकृत अधिक अध्ययन किया जाता है, जबकि अंतिम रिपोर्ट में हो सकता है उतनी सामग्री शामिल न की जाए। इसलिए किसी न किसी प्रकार का चयन तो होता ही है। किंतु इस चयन की प्रकृति पर उस समय प्रश्न किया जा सकता है जब अध्ययनाधीन प्रतिरूपों के श्रेष्ठ संकेतकों वाली सामग्री को प्रस्तुत नहीं किया गया हो और इसे शामिल न करने का तर्काधार भी नहीं बताया गया हो?

iii) क्या सभी सामग्री शोधकार की प्राक्कल्पना में सहायक है? जब शोधकार की मूल प्राक्कलपना के विरोध में कोई भी सामग्री न हो तो हमें प्रस्तुत परिणामों तक पहुँचने के लिए प्रयुक्त चयन प्रक्रिया के बारे में प्रश्न पूछने का अधिकार है। इसके साथ ही, रिपोर्ट की टोन भी जुड़ी हुई है। क्या रिपोर्ट की टोन अपनी प्राक्कल्पना को न्यायोचित ठहराती है अथवा उसको आलोचनात्मक रूप से मूल्यांकित करती है?

iv) क्या अध्ययन के निष्कर्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर प्रामाणिक हैं? अन्वेषकों के लिए यह आम बात है कि उनके द्वारा अपनी सामग्री के वास्तविक महत्व को इस हद तक बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाए कि रिपोर्ट के पाठकों को ऐसा लगने लगे कि संबंध कहीं अधिक मजबूत हैं। जबकि असली सांख्यिकीय विश्लेषण यह दर्शाता है कि संबंध कमज़ोर या मामूली है। यह बुद्धिमानी नहीं है कि रिपोर्ट में तालिकाओं को छोड़ दिया जाए और रिपोर्ट में प्रस्तुत तालिकाओं की विषय-वस्तु के बारे में लेखक के निष्कर्षों पर ही विश्वास कर लिया जाए।

v) क्या लेखकों ने अपनी प्राक्कल्पनाओं को ख़तरे में डालते हुए किसी विरोधी साक्ष्य को खोज निकालने का प्रयास किया है? या विपरीततः क्या उन्होंने केवल अपनी प्राक्कल्पना का समर्थन करने वाले निष्कर्षों को प्रस्तुत करने में अपनी रुचि दिखाई है?

vi) क्या लेखक के मूल्यों और अध्ययन के नतीजों पर उसके प्रभाव के तरीकों के बारे में कोई चर्चा की गई है?

जैसे-जैसे ज़्यादा से ज़्यादा शोध किया जाता है, शोधकार को काफी ज़्यादा मात्रा में सामग्री उपलब्ध होती जाती है। सामग्री को अपेक्षातः सरल रूप में प्राप्त करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति एकत्रित सामग्री का पुनर्विश्लेषण करके पाया जा सकता है। इसे सामग्री का द्वितीयक विश्लेषण (secondary analysis of data) कहा जाता है और रिपोर्ट लेखन की प्रक्रिया के दौरान शोध के विषय विशेष पर पहले से किए गए शोधों को प्रमाणित अथवा खंडित करने के लिए इस विधि का उपयोग किया जा सकता है।

23.4 सर्वेक्षण शोध में नैतिक मुद्दे

सभी सामाजिक शोधों की भाँति, लोगों द्वारा नैतिक अथवा अनैतिक तरीक़े से सर्वेक्षण सम्पन्न किए जा सकते हैं। सर्वेक्षण शोध में प्रमुख नैतिक मुद्दा निजी स्वतंत्रता (प्राइवेसी) पर हमला है। सर्वेक्षण शोधकार द्वारा प्रत्यर्थी के निजी कार्यों और व्यक्तिगत विश्वासों के बारे में प्रश्न पूछकर उसकी निजी स्वतंत्रता (प्राइवेसी) में घुसपैठ हो सकती है। लोगों को निजी स्वतंत्रता (प्राइवेसी) का अधिकार है। प्रत्यर्थियों को यह निर्णय करना होता है कि उनके द्वारा व्यक्तिगत जानकारी को कब और किसके सामने प्रकट किया जाए। प्रत्यर्थियों से जब आपसी विश्वास के साथ सलीके से पूछा जाए और जब उन्हें यह विश्वास हो जाए कि उनके उत्तर को गोपनीय रखा जाएगा तभी उनके द्वारा ऐसी जानकारी दी जा सकती है। शोधकारों को चाहिए कि वे सभी प्रत्यर्थियों की प्रतिष्ठा को ध्यान में रखें और उनकी चिंता अथवा असुविधा को कम करें। सामग्री की गोपनीयता को बनाए रखना भी शोधकार का दायित्व है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सर्वेक्षण शोधकार के समक्ष दूसरा नैतिक मुद्दा है कि प्रत्यर्थियों को सर्वेक्षण में स्वेच्छा से भाग लेने या न लेने का अधिकार है। प्रत्यर्थी द्वारा प्रश्नों के उत्तर देने के लिए किसी भी समय मना किया जा सकता है। शोध में भाग लेने के लिए उनके द्वारा 'समझ-बूझकर (informed) स्वीकृति'* दी जाती हैं। शोधकार को प्रत्यर्थी के स्वैच्छिक सहयोग पर निर्भर होना पड़ता है। इसलिए शोधकार को भली प्रकार से तैयार किए प्रश्नों को सही तरह से पूछने, प्रत्यर्थियों से आदर-सम्मान का व्यवहार करने और गोपनीयता के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील होने की आवश्यकता है।

तीसरा, सर्वेक्षण शोधकार द्वारा काफी अधिक संख्या में लोगों को बहकाने की प्रवृत्ति भी महत्वपूर्ण नैतिक मुद्दा है। कभी-कभी सर्वेक्षण परिणामों का ग़लत उपयोग अथवा खराब ढंग से प्रारूपित अथवा जान-बूझकर कामचलाऊ ढंग से तैयार या छलपूर्वक* किए सर्वेक्षणों में उपयोग किया जा सकता है। ऐंसी भी संभावना है कि सर्वेक्षक से ऐसी अपेक्षा हो जिसे करना सर्वेक्षक के लिए संभव नहीं है या सर्वेक्षक की सीमाओं को समझा ही न जा सके। हो सकता है कि सर्वेक्षण का प्रारूप बनाने तथा तैयार करने वालों को वैध सर्वेक्षण निष्पादित करने के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण नहीं मिला हो। कभी-कभी शोधकार द्वारा सर्वेक्षण विधा का उपयोग इसलिए किया जाता है कि कोई भी साक्षात्कारकर्त्ता प्रत्यर्थी से जानकारी ले आए चाहे उसे इस तरह के सर्वेक्षण में कोई रुचि हो या न हो।

सोचे और करें 23.2

मान लीजिए कि आपको अपने क्षेत्र में अपशिष्ट नियंत्रण के तरीक़ों पर सर्वेक्षण करने के लिए सर्वेक्षण दल का मार्गदर्शन करना है। बताए कि आपके द्वारा कैसे निम्नलिखित प्रश्नों को हल किया जाएगा :

- लापरवाही से या बुरी तरह बनाए गए सर्वेक्षणों पर आधारित नीतिगत निर्णयों के परिणामस्वरूप लोगों को होने वाली कठिनाइयों और नुक़सानों से बचने के लिए आपकी रणनीतियाँ क्या होंगी?
- आपके द्वारा सर्वेक्षण को किस प्रकार क्रियान्वित किया जाएगा ताकि सही शोधकार, शोध पद्धति की दृष्टि से सर्वेक्षण शोध कर सकें।
- आपके द्वारा शोधकार को कैसे सर्वेक्षण शोध की सीमाओं के बारे में सचेत किया जाएगा तथा कैसे इन सीमाओं को व्यक्त किया जाएगा?
- शोधकार बेईमान राजनीतिज्ञों, व्यापारियों और सर्वेक्षण के भ्रामक परिणाम देने वाले अन्य लोगों का सामना कैसे किया जाएगा?

आप उपर्युक्त प्रश्नों के अलग कागज़ पर उत्तर लिखिए और उसमें कम से कम चार और वे नैतिक मुद्दे जोड़िए जिनके लिए शोधकार सर्वेक्षण आयोजित करते समय तैयार रहना पड़ता है। इनमें से कुछ परियोजना के प्रायोजित होने और उसकी वित्त-व्यवस्था, शोधकार की व्यक्तिगत प्राथमिकताओं और पूर्वाग्रहों, प्रत्यर्थी की भ्रामकता आदि से जुड़े हो सकते हैं। और अंत में, इस प्रश्न उत्तर दें कि : इन समस्याओं से निपटने और शोध प्रयास को सफल एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने की दृष्टि से नैतिक मुद्दों से दूर रहने अथवा बचने के लिए कौन उत्तरदायी है?

23.5 निष्कर्ष

इस इकाई में हमने सर्वेक्षण को कार्यान्वित करते समय शोधकार के समक्ष उपस्थित मुद्दों और समस्याओं का अध्ययन किया है। इसमें मुख्य रूप से क्षेत्र विन्यास और प्रत्यर्थियों को चुनने एवं उन तक पहुँचने, और सामग्री एकत्र करने की तकनीकों का उपयोग करने के दौरान सामने आने वाली समस्याओं की चर्चा शामिल की गई है। इकाई में सामग्री एकत्र करने और मुख्य सर्वेक्षण कर लिए जाने के बाद सामग्री के विश्लेषण चरण की व्याख्या की गई है। इकाई के अंत में सर्वेक्षण आयोजित करने से जुड़े नैतिक मुद्दों पर चर्चा की गई है।

सार रूप में कहा जा सकता है कि सर्वेक्षण वह प्रक्रिया है जिसमें शोधकार द्वारा शोध प्रश्न को उस प्रश्नावली में अंतरित किया जाता है जिसका प्रत्यर्थियों से सामग्री एकत्र करने के लिए उपयोग किया जाता है। इस प्रकार एकत्रित सामग्री को संपादन, कोडीकरण और कंप्यूटरीकरण की जटिल प्रक्रिया द्वारा संसाधित किया जाता है और अंत में सामग्री को सारणीबद्ध रूप में लाया जाता है। इस विधि से सर्वेक्षण शोध के शुरू में तैयार किए गए शोध प्रश्न का विश्लेषण करने का प्रयास किया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया में ग़लतियों से बचने और कम से कम ग़लतियाँ हों — इसके लिए शोधकार को पूरी सावधानी से काम करना होता है ताकि शोध के प्रयोजन अर्थात सत्य की खोज में कोई विकृति न आने पाए।

23.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऑल्ड्रिज, ऐलन एंड एन लेवाइन, 2001. *सर्वेइंग द सोशल वर्ल्ड प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिस इन सर्वे रिसर्च*, ओपन यूनिवर्सिटी प्रेस : बकिंघम.

फिंक, आरलीन, 1995. *द सर्वे हैंडबुक.* थाउज़ेंड ओक्स : सेज पब्लिकेशन्स.

शब्दावली

(इंटरनैट और अन्य स्रोतों में उपलब्ध जानकारी के माध्यम से शब्दावली शब्दों की व्याख्या को तैयार किया गया है)।

काई-स्क्वैयर (Chi-Square): यह द्विचर सारणी विश्लेषण के लिए सांख्यिकीय महत्व का गैर-प्राचलिक (non-parametric) परीक्षण है (इसे क्रॉस ब्रेक्स भी कहते हैं)। सांख्यिकीय महत्व के किसी भी उपयुक्त परीक्षण को करने से आपको एक प्राक्कल्पना को स्वीकार करने या इसे अस्वीकृत करने में आत्मविश्वास की मात्रा का पता चलता है। अधिकांशतः, काई-स्क्वैयर से परीक्षित प्राक्कल्पना है; क्या दो भिन्न प्रतिदर्श (जैसे लोगों के विषयों आदि के) अपने व्यवहार के कुछ पहलुओं या अपने लक्षणों में एक दूसरे से इतने भिन्न हैं या नहीं कि हमारे लिये अपने प्रतिदर्शों से इस बात का सामान्यीकरण करना संभव हो सके कि हमारे प्रतिदर्श जिन जनसंख्याओं से निर्मित किये गये हैं वे जनसंख्याएं भी अपने लक्षणों या व्यवहारों में भिन्न भिन्न हैं। काई-स्क्वैयर जैसा गैर-प्राचलिक परीक्षण विश्वास का मोटा आकलन हैं। यह टी-परीक्षण और भिन्नता के विश्लेषण जैसे प्राचलिक परीक्षणों की तुलना में अपेक्षाकृत कम शुद्ध सामग्री तथा कमज़ोर सामग्री को स्वीकार कर लेता है और इसलिए सांख्यिकीय परीक्षणों के संपुट में इसकी प्रस्थिति निम्न है। फिर भी इसकी सीमाएं ही इसकी शक्ति हैं, क्योंकि काई-स्क्वैयर स्वीकृत आंकड़ों के संदर्भ में काफ़ी उदारवादी है और विविध शोध-संदर्भों में इसका प्रयोग किया जा सकता है।

कोडीकरण (Coding): नियमों का क्रमबद्ध ढंग से एवं विस्तृत संग्रहण या नियमों एवं विनियमों की गतिविधियों सुव्यवस्थित संग्रहण या किसी विशिष्ट संदेश को दर्शाने में प्रयुक्त संकेतों या अक्षरों की पद्धति या गोपनीय बातों को दर्शाने के लिए अलग तरीके से निर्मित संकेतों की पद्धति।

प्रसामूहिक (Cohort): इस शब्द की उत्पत्ति लेटिन शब्द कोहोर्ट से हुई है जिसका अर्थ है 'एक अहाता या बाड़ा, प्रांगण'। सांख्यिकी में 'कोहोर्ट' का अर्थ है, ऐसा प्रतिदर्श जो समग्र समष्टि का प्रतिनिधित्व करता हो। अनौपचारिक रूप से इसका अर्थ है विविधता या भिन्नता।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संभाव्यता की अवधारणा की संकल्पना (Concept of probability): संभाव्यता या प्रायिकता के सिद्धांत के आधार बिंदु पर आनुमानिक सांख्यिकी को निर्मित किया जाता है और सामग्री से प्राप्त परिणामों के बारे में राय को निर्देशित करने में यह विशेष रूप से सफल रही है। फिर भी उल्टी बात है कि संभाव्यता का मात्र विचार ही विषय की शुरुआत से लेकर आज तक विवाद से घिरा रहा है। संभाव्यता की अवधारणा का एक रूप सम्मितीय परिणामों के विचार से लिया गया है। जैसे दो सिक्कों को उछालने के संभावित परिणाम में कोई अंतर नहीं आएगा चाहे किसी भी तरीक़े से उन्हें उछाला जाये।

सहसंबंध-गुणांक (Correlation Coefficient): यह दो चरों के बीच के रैखिक संबंध की डिग्री का माप है। ऐसे दो चरों को आमतौर पर X और Y कहते हैं। इसका पूरा नाम है; पियर्सन प्रोडक्ट-मोमेंट कोरिलेशन कोएफ़िशियंट। जहाँ समाश्रयण (regression) में एक परिवर्ती या चर से दूसरे परिवर्ती या चर का पता लगाने पर ज़ोर दिया जाता है वहीं सहसंबंध (correlation) में उस डिग्री पर ज़ोर दिया जाता है जिससे रैखिक मॉडल दो परिवर्तियों या चरों के बीच के संबंध को व्यक्त करता है। समाश्रयण में हमारी रुचि दिशात्मक है अर्थात् एक चर को पूर्वानुमानित किया जाता है और दूसरा पूर्वानुमान लगाता है। सहसंबंध में हमारी रुचि दिशात्मक न होकर संबंधमुखी है जिसमें सम्बद्धता ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिंदु है। सांख्यिकीय परिकलक की सहायता से सहसंबंध गुणांक को आसानी से गिना जा सकता है। खंड 5 की अंतिम इकाई अर्थात् इकाई 19 में समाश्रयण

पैरामीटरों के आकलन के दौरान तक का मूल्य सांख्यिकीय परिकलक पर देखा गया। यह (+) और (-) के बीच का कोई भी मान ले सकता है।

सर्वतोमुखी प्रतिनिधिक (Cross Sectional): सांख्यिकी में इसका अर्थ ऐसे प्रतिदर्श से है जो समान समष्टि का प्रतिनिधित्व करता है। भौतिकशास्त्र में इसका अर्थ संभाव्यता के ऐसे माप से है जो अणुओं के बीच मुठभेड़ में आण्विक विशेष या नाभिकीय प्रतिक्रिया के घटने से सम्बद्ध है। एक अक्ष के समकोण पर अवस्थित वस्तु को काटते हुए समतल द्वारा गणित भाग को अनुप्रस्थ-कार कहा जाता है।

भूतकालिक एवं समकालिक (Diachronic and Synchronic): भूतकालिक (डायाक्रोलिक) वह है जो समय के साथ बदलती है जबकि समकालिक (सिक्रौनिक) वह चीज़ है जो एक ही समय में घट रही है।

द्विभाजन (Dichotomous): दो भागों में बांटना विशेष रूप से विवादास्पद समूहों या एक दूसरे से भिन्न को दो में बांटना।

सारसंग्रहवाद (Electicism): यह विचार का ऐसा उपागम है जो एकल प्रतिमान या अवधारणाओं या निष्कर्षों के समुच्चय मात्र पर ही आधारित नहीं होता है। प्रतिरूपों में सम्पूरकीय अंतर्दृष्टियों को पाने के लिये इसमें विविध सिद्धांतों का सहारा लिया जाता है। केस विशेष में कभी-कभी केवल कुछ सिद्धांतों को लागू किया जाता है। सारसंग्रहवाद कभी कभी अपरिभार्षित (inelegant) होता है और सारसंग्रहवादियों के चिंतन में सुसंगति का अभाव पाया जाता है परंतु अध्ययन के अनेक क्षेत्रों में सारसंग्रहवाद का समर्थन किया जाता है। जैसे अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने व्यवहारवाद के अंशों को स्वीकारा है लेकिन मानव व्यवहार के सभी पक्षों की व्याख्या करने के लिए उन्होंने व्यवहारवाद के सिद्धांत का प्रयोग नहीं किया है। इसी तरह एक भौतिकशास्त्री द्वारा बेसबाल की गति का पूर्वानुमान लगाने के लिए न्यूटन के नियमों का प्रयोग किया जा सकता है लेकिन उपआण्विक कणों के एक कण का पता लगाने के लिए उसे क्वान्टम मैकेनिक्स को देखना होगा या गैलेक्सी की गति के पूर्वानुमान के लिए सापेक्षता की ओर रूख करना होगा। एक सांख्यिकीय विज्ञानी द्वारा एक अवसर पर आवृत्ति अनुपात की तकनीक अपनाई जा सकती है तो दूसरे अवसर उसे बेज़ियन (Bayesian) तकनीकों का प्रयोग करना होगा। अर्थशास्त्र में सारसंग्रहवाद का उदाहरण है जॉन उनिंग का अंतर्राष्ट्रीय उत्पादन का सारसंग्रहवादी सिद्धांत। मनोविज्ञानं में सारसंग्रहवाद को काफ़ी बढ़ावा मिला है। क्योंकि यथार्थ में व्यवहार एवं चित्त (psyche) को कई कारक प्रभावित करते हैं इसलिए पहचानने, बदलने, व्याख्या करने और व्यवहार के निर्धारण में सभी परिप्रेक्ष्यों पर विचार करना अनिवार्य हो जाता है।

सारसंग्रहवाद शब्द को सबसे पहले प्राचीन दर्शनशास्त्रियों के समूह ने गढ़ा था। उन्होंने उस समय मौजूद दर्शनशास्त्रीय विश्वासों से ऐसे सिद्धांतों का चयन किया जो उन्हें सर्वाधिक विवेकपूर्ण लगे। ऐसी सेंलित सामग्री से उन्होंने दर्शनशास्त्र के अपने नयें सिद्धांत का निर्माण किया। यह शब्द ग्रीक एकलेक्टिकोस (eklektikos) से उत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है सर्वोत्तम का चयन। यूनानी दर्शनशास्त्र में जाने-माने सारसंग्रहवादियों में थे; निर्लिप्त (स्टोइक) दर्शनशास्त्री पैनेटियस, वोसीडोनियस एवं नये विद्वान कार्नेडान एवं फ़िलो ऑफ़ लेरिसा, रोमन विद्वानों में सिसरो पूर्णतः सारसंग्रहवादी था क्योंकि उसने पेरिपेरिटिक, स्टोइक एवं नव अकादमिक सिद्धांतों को संकलित किया था। बाद के संकलनवादियों में वरो एवं सेनेका के नाम उल्लेखनीय हैं।

कार्योत्तर (Ex-post-facto): यह लेटिन शब्द हैं जिसका अर्थ है कार्य के बाद। इसका प्रयोग विशिष्ट रूप से क़ानूनी भाषा में किया जाता है। जब कोई क़ानून पीछे की ओर जाकर जब अपराध किया गया हो उस समय की दशा को देखा जाता हैं इकाई 12 के संदर्भ में इस शब्द का प्रयोग पहले किये गये शोध के पुनर्अध्ययन के लिये किया गया है।

द्वाररक्षक (Gatcheeper): द्वाररक्षक वे हैं जो द्वार पर या किसी क्षेत्र में आने-जाने वालों पर निगरानी रखें। इकाई 23 में इस शब्द का प्रयोग उन महत्वपूर्ण व प्रभावशाली लोगों के लिये किया गया है जो क्षेत्र विशेष में आने-जाने वालों पर नज़र रखें तथा उस क्षेत्र में आने वाले नये आगंतुकों को प्रवेश की अनुमति दें या न दें।

समांगता/सजातीयता (Homogeneity): सांख्यिकी में समांगता की अवधारणा विश्वसनीयता से जुड़ी है। जहाँ आंतरिक संगतता विश्वसनीयता की मात्रा दिखाती है, वहीं समांगता आदर्श समतुल्य-स्केल को दर्शाती है। समाजशास्त्र में समांगता/सजातीयता शब्द को समाज विशेष के समान लक्षणों को अभिव्यक्त करने के लिये किया जाता है।

प्राक्कल्पना या परिकल्पना परीक्षण (Hypothesis testing): प्राक्कल्पना या परिकल्पना बनाना एवं इसका परीक्षण करना सांख्यिकीय अनुमान का अनिवार्य भाग है। ऐसे परीक्षण को सूत्रबद्ध करने के लिए आमतौर पर कोई एक सिद्धांत को आगे किया गया है क्योंकि यह माना जाता है कि यह सही है या इसे तर्क के आधार के रूप में प्रयोग किया जाता है लेकिन अभी तक इसे सिद्ध नहीं किया गया। उदाहरणार्थ, समान लक्षणों के उपचार के लिए नयी औषधि मौजूदा औषधि से बेहतर है। विचारित प्रत्येक समस्या में हमारी रुचि दो प्रतिस्पर्धात्मक दावों में है अर्थात् निराकरणीय प्राक्कल्पना या परिकल्पना (HU) एवं वैकल्पिक परिकल्पना (HI) के बीच। इन्हें समान आधार पर प्रयोग में नहीं लाया जाता। निराकरणीय प्राक्कल्पना या परिकल्पना पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

समझ-बूझकर स्वीकृति (Informed consent): किसी कार्य या कार्रवाई में भागीदारी के लिये समझ-बूझकर स्वीकृति देना।

MAADHYAM IAS

सूचना समाज (Information Society): ऐसा समाज जहाँ सूचना की उत्पत्ति, वितरण या परिचालन महत्वपूर्ण आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिविधि बन रहा है। ज्ञान अर्थव्यवस्था इसका आर्थिक पहलू है जिसमें ज्ञान के आर्थिक उपयोग के माध्यम से धन अर्जित किया जाता है। यह एक नये किस्म का समाज है। इस किस्म के समाज में आर्थिकी और उत्पादन के लिये सूचना प्रौद्योगिकी का विशेष महत्व है। इसे औद्योगिक समाज का उत्तराधिकारी समझा जाता है। इससे जुड़ी अवधारणाएं है उत्तर-औद्योगिक समाज (डेनियल बैल), पोस्ट-फोर्डिज़म, उत्तर-आधुनिक समाज, नालेज सोसायटी, टेलीमेटिक सोसाइटी, सूचना क्रांति एवं सूचना सोसायटी (मैनुअल केस्टल्स)।

सूचना समाज की अवधारणा को सबसे पहले विकसित करने वालों में अर्थशास्त्री फ़्रिट्ज मैकलप था। 1933 में उसने रिसर्च पर पेटेंट के प्रभाव का अध्ययन करना शुरू किया। इसके बाद "द प्रोडेक्शन एंड डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ नालेज इन द यूनाइटेड स्टेट्स" पुस्तक ने उन्हें काफ़ी ख्याति प्रदान की। यह पुस्तक बाद में रूसी एवं जापानी भाषा में अनुपित हुई।

विशिष्ट शब्दावली (Jargon): व्यापार, पेशे या समान समूह की विशिष्ट या तकनीकी भाषा। कभी-कभी इसका असाधारण या बहुत आडम्बरपूर्ण शब्दावली का प्रयोग करने वाले लेखन या भाषण के लिये भी प्रयुक्त किया जाता है। इस तरह की भाषा में चक्करदार शब्द प्रयोग तथा अस्पष्ट अर्थों वाले शब्दों की भरमार होती है।

लंबे समय तक चलने वाला (Logitudinal): लेटिन लांगिट्यूडो शब्द से बना जिसका अर्थ है लंबाई। इसका अर्थ है लंबवत्, लंबाई वाला या लंबे समय तक चलने वाला।

माध्य (Mean): माध्य का अर्थ सामान्य तौर पर औसत निकालने से है। जब 'माध्य' का प्रयोग विशेषक (modifier) के बिना किया जाता है तो इसका अर्थ अंकगणितीय माध्य माना जा सकता है। माध्य ऐसे सभी अंकों का योगफल होता है जिन्हें अंकों की संख्या से विभाजित किया गया हो। इसका सूत्र है: पत्र OX/N जहां I समष्टि माध्य है और छ अंकों

की संख्या है। यदि अंक प्रतिदर्श से लिए गए हैं तब संकेत ड का अर्थ माध्य और N का अर्थ प्रतिदर्श आकार है। M के लिए सूत्र वहीं है जो I के लिए है। मोटे-मोटे रूप में सममितिक (symmetric) वितरणों के लिए केंद्रीय प्रवृत्ति का माध्य अच्छा माप है लेकिन विषम बंटन में माध्य भ्रामक भी हो सकता है क्योंकि यह चरम अंकों द्वारा काफ़ी प्रभावित हो सकता है। इसलिए, माध्यिका जैसी अन्य सांख्यिकी पारिवारिक आय या प्रतिक्रिया समय जैसे बंटनों के लिए अधिक लाभप्रद हो सकती है क्योंकि आमतौर पर ये बहुत विषम होती हैं।

परिवर्तनशीलता का माप (Measure of Variability): परिवर्तनशीलता, फैलाव एवं प्रकीर्णन समानार्थक शब्द हैं और इनसे आशय है; बंटन का फैलाव कितना है। परिवर्तनशीलता के चार प्रयुक्त माप हैं, रैंज (परिसर), अंतश्चतुर्धक परिसर, प्रसरण, मानक विचलन।

माध्यिका (Mediam): बीच में या अन्तर्वर्ती स्थान में होने को माध्यिका कहा जाता है। यह सांख्यिकीय माध्यिका से सम्बद्ध अवधारणा है।

बहुलक (Mode): आंकड़ों के समुच्चय का सर्वाधिक सामान्य मान; यादृच्छिक चर या परिवर्ती का मान जिसके लिए इस पर परिभाषित संभाव्यताओं या प्रायिकताओं का फलन सापेक्षिक रूप से अधिकतम की प्राप्ति करता है।

प्राचलिक (Parametric): यह ऐसा माप या मान है जिस पर कोई और निर्भर करता है। जैसे प्राचलिक समिता (equialism) एक टोन नियंत्रण परिधि या चक्र है जो अधिकतम निकास की बारंबारता को एक नियंत्रण द्वारा निबद्ध (set) करता है और अन्य नियंत्रण द्वारा निकास के आकार को निबद्ध निर्धारित करता है। नोक या नाली की बारंबारता एवं स्तर वाले दो निबद्धन बारंबारता प्रतिक्रिया वक्र के दो प्राचल हैं और द्वि-नियंत्रण समिता में ये वक्र का पूरी तरह वर्णन करते हैं। अधिक परिष्कृत प्राचलिक समिताओं में विषम वक्र जैसे अन्य प्राचलों की भिन्नता मिलती है। इन प्राचलों में से प्रत्येक सभी बारंबारताओं पर समग्र रूप से नज़र आने वाले प्रतिक्रिया वक्र के पहलू का वर्णन करता है। तुलना की दृष्टि से आरेखीय समिता द्वारा विविध बारंबारता मंडलों (bands) के लिए वैयक्तिक स्तर का नियंत्रण प्रदान किया जाता है जिनमें से प्रत्येक उस विशिष्ट बारंबारता मंडल पर काम करता है।

MAADHYAM IAS

छद्म नाम (Pseudonym): यह ऐसा कृत्रिम नाम है जो व्यक्ति द्वारा अपने क़ानूनी नाम के विकल्प के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। जबकि संकरनाम (औलोनिम) किसी ऐसे दूसरे व्यक्ति का असल नाम है जिसका प्रयोग किसी व्यक्ति द्वारा कला के कार्य में, लेखन के क्षेत्र में किया गया हो जैसा नाटक, पुस्तक या व्यंग लिखने में भूतलेखकों द्वारा किया जाता है। कुछ मामलों में छद्म नाम ही प्रयोगकर्ता का क़ानूनी नाम भी बन गया है। कभीकभार लेखकों द्वारा अपनी पहचान छुपाने के लिए भी छद्म नाम का प्रयोग किया जाता है। कई लेखकों द्वारा सड़कीली पत्रिकाओं के एक ही अंक में दो या तीन लघु कथाएं लिखने के लिए कई छद्म नामों का सहारा लिया जाता है ताकि पाठकों को यह बात पता नहीं लगे।

प्रत्यक्षवाद (Positivism): समाजशास्त्र, नृशास्त्र एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों में यह शब्द गूढ़ रूप से समाजशास्त्रीय प्रकृतिवाद से संबद्धथा और उन्नीसवीं शताब्दी में ऑगस्ट कॉम्टे के दर्शनशात्रीय चिंतन में इसकी झलक देखी जा सकती है। 1966 में प्रत्यक्षवाद का वर्णन करते समय हैनरी मायर्स लैक्चर देते समय संरचनावादी नृशास्त्री एडमंड लीच ने कहा कि "प्रत्यक्षवाद से आशय है कि गंभीर वैज्ञानिक शोध में बाहरी स्रोत से उत्पन्न अंतिम कारणों की खोज नहीं होनी चाहिए बल्कि इसे ऐसे तथ्यों के मौजूदा संबंधों के अध्ययन तक स्वयं को सीमित करना चाहिए जिन तक प्रेक्षण से सीधे तौर से पहुँचा जा सके"। समकालीन समाजशास्त्र के कई वर्गों में प्रत्यक्षवाद की जगह प्रति-प्रत्यक्षवाद ने ले ली हैं।

चुनाव विश्लेषक (Psephologists): चुनावों का वैज्ञानिक विश्लेषण करने वालों को चुनाव विश्लेषक कहा जाता है।

विशेषक (Qualifiers): किसी भी व्यक्ति, पेशेवर या विद्यार्थी के लिए ऐसा साधन विशेषक है, जिससे उसे शोध सामग्री का विश्लेषण, मूल्यांकन एवं उन्हें संगठित करना संभव हो। विशेषक सहायता से एक ही जगह में शोध सामग्री, श्रव्य, दृश्य आदि को एकत्र किया जा सकता हैं और इसे अपने उद्देश्य के अनुसार श्रेणियों में व्यवस्थित किया जा सकता है। संभावित गुणात्मक सामग्री में शामिल हैं; बातचीत, संभव है कि "ट्रांसक्राइबर प्ले" एवं "मार्क बैक" जैसे साधनों से आप ऑडियों की धुन सुनें व विडियो को पुनः देखें। अपने कम्प्यूटर से आप छपी सामग्री निकालें तथा सामग्री का परियोजना विश्लेषण प्रस्तुति तथा प्रवृत्तियाँ प्राप्त करें।

परिसर (Range): परिकलन की दृष्टि से परिवर्तनशीलता का सरलतम माप परिसर कहलाता है। इसका अनुभव जीवन में सभी को कई बार होता है। इसका साधारण अर्थ है: अधिकतम अंक -न्यूनतम अंक।

घनिष्ठता (Rapport): घनिष्ठता आपसी भरोसे या संवेगात्मक संबंध से बनती है। यह फ़्रेंच शब्द रेपोर्टर (raporter) से बना है जिसका अर्थ हैं वापिस लाना।

समाश्रयण (Regrerion): दो या अधिक सहसंबद्ध चरों या परिवर्तियों के बीच का प्रकार्यात्मक संबंध जो आनुभविक रूप में सामग्री से निर्धारित होता है और इसका प्रयोग विशेष रूप से जब दूसरे चरों के मान दिए गए हो तो एक परिवर्ती या चर के मानों का पूर्वानुमान लगाने के लिए किया जाता है। एक शास्त्रीय या क्लासिक सांख्यिकीयं समस्या है; X और Y दो यादृच्छिक चरों के बीच के संबंध का निर्धारण करने का प्रयास करना। उदाहरणार्थ वयस्कों के एक प्रतिदर्श में उनकी लंबाई और वज़न पर विचार कीजिए। रैखिक समाश्रयण में इस संबंध को सामग्री से सीध फिट करके हल करने का प्रयास किया जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

छलपूर्वक (Rigged): निजी स्वार्थ के लिए छल तथा बेईमानी से काम करना।

प्रतिदर्श प्रसरण (Sample variance): सांख्यिकीय S स्क्वैयर यादृच्छिक प्रतिदर्श पर एक माप हैं जिसका प्रयोग ऐसी समष्टि के प्रसरण का आकलन करने में किया जाता है जिससे प्रतिदर्श बनाया जाता है। संख्यात्मक रूप से यह यादृच्छिक प्रतिदर्श के माध्य के आसपास वर्गित विचलन का योगफल हैं। जो कि प्रतिदर्श आकार से विभाजित और जिसे एक से घटाया जाता है। समष्टि के आकार एवं यादृच्छिक प्रतिदर्श के आकार पर ध्यान दिए बिना अंकगणितिय रूप से दर्शाया जा सकता है कि यदि हम बारंबार समान समष्टि से समान आकार के यादृच्छिक प्रतिदर्श लें और प्रत्येक प्रतिदर्श पर प्रसरण आकलन निकालें तो ये मान समष्टि प्रसरण के सही मान के आसपास एकत्र होंगे। संक्षेप में प्रतिदर्शन S वर्गित समष्टि के प्रसरण का अनगिनत आकलन जिससे प्रतिदर्श निकाला जाता है।

प्रतिचयन विधि (Sampling method): शोधकार के द्वारा लक्ष्य समष्टि को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना ज़रूरी है। अनुसरण करने के कोई कड़े नियम नहीं हैं और शोधकार को तर्क एवं निर्णयन पर अवश्य भरोसा करना चाहिए। अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर समष्टि को परिभाषित किया जाता है। कभीकभार समग्र समष्टि काफ़ी छोटी होती हैं और शोधकार द्वारा अध्ययन में समग्र समष्टि को शामिल किया जा सकता है। इस क़िस्म के शोध को जनगणना अध्ययन कहा जाता है क्योंकि समष्टि के प्रत्येक सदस्य पर आंकड़े एकत्र किए जाते हैं। आमतौर पर शोधकार के लिए समष्टि इतनी बड़ी होती है कि इसके सभी सदस्यों का सर्वेक्षण करना संभव नहीं होता। छोटे लेकिन सजगता से चुने गए

प्रतिदर्श का प्रयोग समष्टि को दर्शाने के लिए किया जा सकता है। प्रतिदर्श से ऐसी समष्टि की विशेषताओं का पता चलता है ज़िससे इसे चुना जाता है। प्रतिदर्श बनाने को ही प्रतिचयन विधि कहा जाता है।

मानक विचलन (Standard deviation): यह एक तरीके से "माध्य का माध्य है" और इससे आंकड़ों के पीछे छिपी कहानी का पता चलता है। इससे आंकड़ों के प्रसामान्य बंटन को सीखने में सहायता मिलती है। इसका अर्थ है कि आंकड़ों के समुच्चय में अधिकांश उदाहरण "औसत" के निकट हैं।

सारणीयन (Tabulation): चार्ट, सारणी में आंकड़ों का क्रमबद्ध स्तंभाकार प्रदर्शन/आंकड़ों को सारणीबद्ध करना।

त्रिभुजन (Triangulation): त्रिकोणमिति एवं प्रारंभिक ज्यामिती में त्रिभुजन, त्रिभुज की एक तरफ की लंबाई का पता लगा कर एक बिंदु तक दूरी ज्ञात करने की प्रक्रिया है, यदि उस बिंदु से त्रिभुज के कोण एवं भुजाओं का माप दिया गया हो। इसका प्रयोग बहुत से उद्देश्यों के लिए किया जाता है जैसे सर्वेक्षण करना, दिशा ज्ञात करना, खगोलमिती, दूरबीन से लक्ष्य को देखना और बंदूक की दिशा साधना। सर्वेक्षण की बहुत सी समस्याओं में त्रिकोणों को ज्ञात करना पड़ता है और इसमें सैंकड़ों या यहाँ तक कि हज़ारों प्रेक्षण शामिल होते हैं। जटिल त्रिभुजन में वास्तविक जगत की त्रुटियों सहित प्रेक्षण होते हैं। इनमें हल निकालने के लिये विशाल प्रणालियों के समकालिक समीकरणों के हलों की ज़रूरत होती है। ग्रेट ब्रिटेन का पुनर्त्रिभुजन त्रिभुजन का प्रसिद्ध उदाहरण है।

वैधता (Validity): निगमनात्मक तर्क तभी और केवल तभी ठोस होता है जब यह वैध हो और इसके सभी तर्क वास्तव में सत्य हों। अन्यथा निगमनात्मक तर्क गलत होगा। निगमनात्मक तर्क की परिभाषा के अनुसार निगमनात्मक तर्क लेखक की सदैव इच्छा होगी कि निष्कर्ष के लिए पुष्टि ऐसी हो कि यदि तर्क सही हैं तो निष्कर्ष लाज़िमी तौर पर सही होगा। मोटे तौर पर कहें जो यदि लेखक की तर्क प्रक्रिया अच्छी है, यदि पूर्वकालीन तथ्य (premises) वास्तव में निष्कर्ष को प्रमाणित करते हैं तो उसका तर्क वैध माना जायेगा।

MAADHYAM IAS

प्रतिवर्ती या चर (Variables): प्रतिवर्तियों या चरों को खुले वाक्यों में प्रयोग किया जाता है। जैसे $x+1=5$ सूत्र में x ऐसा चर है जो "अज्ञात" संख्या को दर्शाता है। गणित में चर आमतौर पर रोमन अक्षरों द्वारा दर्शाए जाते हैं। लेकिन ये अन्य अक्षरों एवं विविध किस्म के संकेतों से भी दर्शाए जाते हैं। कंप्यूटर प्रोग्रामन में चर आमतौर पर या तो एकल अक्षरों द्वारा दर्शाए जाते हैं या अल्फपन्यूमैटिक तारतम्य (स्ट्रिंग) से दर्शाए जाते हैं। चर क्यों उपयोगी हैं? ये गणित एवं कंप्यूटर प्रोग्रामन में उपयोगी होते हैं क्योंकि ये अनुदेशों (insturctions) को सामान्य तरीके से विनिर्दिष्ट करने में सहायता करते हैं। यदि हमें वास्तविक मूल्यों या मानों का उपयोग करना पड़े तो अनुदेशों को केवल अत्याधिक सीमित और विशिष्ट परिस्थितियों के पुंज में ही दिया जा सकता है। इस कठिनाई से उबरने के लिये चरों या परिवर्तियों का उपयोग किया जाता है।

References

(Please note that the list of references includes all the sources that the authors of the units have cited in the text. It includes also the books mentioned as Further Reading at the end of each unit of Book 2.)

Aldridge, Alan. and Ken, Levine 2001. *Surveying the Social World - Principles and Practice in Survey Research*. Open University Press: Buckingham

Allen G. and G. Skinner 1991. *Handbook for Research Students in Social Sciences*. Falmer Press: London

Babbie, E. 1989. *The Practice of Social Research*. Wadsworth Publishing Company: Belmont, California

Barnes, Robert B. 2000. *Introduction to Research Methods*. Sage Publications: London

Bernard, H. Russel, 1994. *Research Methods in Anthropology: Qualitative and Quantitative Approaches*. Sage: New York

Black, Thomas R. 1999. *Doing Quantitative Research in the Social Science*. An Integrated Approach to Research Design, Measurement and Statistics

Boas, Franz 1940. The Limitations of the Comparative Method in Anthropology. IN *Race, Language and Culture*. Macmillan: New York

Brewer, John B. 2000. *Ethnography*. Open University Press: Buckingham

Bryman, Alann 1988: *Quantity and Quality in Social Research*. Unwin Hyman: London

Burgess, R.G. (ed.) 1982, *Field Research: A Sourcebook and Field Manual*. (Contemporary Social Research 4), George Allen and Unwin, London

Chandler, Dawn and Bill Torbert 2003. Transforming Inquiry and Action: Interviewing 27 Flavors of Action Research. *Action Research* 1 (October):

Cohen, Louis and Michael Holliday 1982. *Statistics for Social Sciences*. Harper and Row; London

Cohen, Louis and Lawrence, Manion 1994. *Research Methods in Education*. Routledge: London and New York

Cubitt, T. 1973. Network density among urban families. In *Network Analysis: Studies in Human Interaction* (eds J. Boissevain and J.C. Mitchell). The Hague: Mouton

de Vaus, David. 2202. Surveys in Social Research, Routledge: London

Denzin, N.K. (ed). 1970. *Sociological Methods: A Sourcebook*. Butterworths, London

Eggan, Fred. 1954. Social Anthropology and the Method of Controlled Comparison. *American Anthropologist* 56: 743-763

Ellen, R. F. 1984. *Ethnographic Research: A Guide to General Conduct*. Academic Press: London

Fink, Arlene. 1995. *The Survey Hand Book*. Sage Publications: Thousand Oaks

Fisher, R.A. and F. Yates 1982 *Statistical Tables*, Longman: New York

Godde, William J. and Paul K. Hatt 1952. *Methods in Social Research*. McGraw-Hill: New York

Gustavsen, Bjorn 2003. New Forms of Knowledge Production and the Role of Action Research. *Action Research* 1 (October): 153-164

Handel, J.D. 1978, *Statistics for Sociology*, Englewood Cliffs, N.J.

Hughes, John A. and Wes Sharrock 1990. *The Philosophy of Social Research*. Addison Wesley Longman: Essex

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

Lazarsfeld, Paul F., Bernard Berelson and Hazel Gaudet 1944. *The People's Choice*. Columbia University Press:

Levi-Strauss, C. 1963. *Structural Anthropology.* Penguin

Lewis, Oscar 1955.Comparisons in Cultural Anthropology. IN W. I. Thomas Jr (ed.) *Current Anthropology.* Chicago University Press: Chicago

Madan, T. N. 1975. On Living Intimately with Strangers. IN Andre Beteille and T. N. Madan (eds.) *Encounter and Experience: Personal Accounts of Fieldwork*. Vjkas: New Delhi

Madan, T. N. 2004. In Pursuit of Anthropology. IN V. K. Srivastava (ed) *Methodology and Fieldwork*. Oxford University Press: New Delhi

Mark, Melvin, M. and Gary T Henry 2004. The Mechanisms and Outcomes of Evaluation Influence. *Evaluation* 10:35-37

Mitchell, J. Clyde 1984. Social Surveys. IN R. F. Ellen (ed) *Ethnographic Research*. Academic press: London. Pp. 271-272

Moser, C. A. and G. Kalton 1973. *Survey Methods in Social Investigation*. The English Language Book Society: London

Mukherji, P. N. 2000. *Methodology in Social Research; Dilemmas and Perspectives*. Sage Publications: New Delhi

Mukherji, P. N. and Chandan Sengupta 2000. Conversations with Ramkrishna Mukherjee. IN P. N. Mukherji (ed.) *Methodology in Social Research; Dilemmas and Perspectives*. Sage Publications: New Delhi

Murdock, G.P. 1940. The Cross-Cultural Survey. *American Sociological Review* 5: 369-370

Myrdal, Gunnar1944. *An American Dilemma: The Negro Problem and Modern Democracy*. Harper: New York

Nachmias, David and Chava Nachmias 1981. *Research Methods in Social Sciences*. St. Martin Press: New York.

Neuman, W. Lawrence. 1997. Social Research Methods. Allyn and Bacon: Boston

Reid, William J. 1955. Research Overview, *19th Encyclopaedia of Social Wor.*, NASW Press: Washington

Sanders, Donald 1955. *Statistics*. Mc Graw Hill: New York

Sarantakos, S.1998 (first published in 1993). *Social Research*. Macmillan: London

Singleton, Jr Royce A. and Bruce C. Straits 1999. *Approaches to Social Research*. Oxford University Press: New York

Sjoberg, Gideon and Roger Nett, 1992. *A Methodology for Social Research*. Rawat: Jaipur and New Delhi

Srivastava, Vinay Kumar (ed.) 2004. *Methodology and Fieldwork*. Oxford University Press

Wallerstein, Immanuel 1997. Social Science and the Quest for Just Society. *American Journal of Sociology* 102 (5): 1241-1257

Watson, G. and McGraw, D. 1980. *Statistical Inquiry: Elementary Statistics for the Political Science and Policy Sciences*. John Wiley: New York

Young, P. V. 1988. *Scientific Social Surveys and Research*. Prentice Hall: New Delhi

MAADHYAM IAS

इकाई 24
क्षेत्र शोध-I

इकाई की रूपरेखा

24.1 प्रस्तावना

24.2 क्षेत्र शोध का इतिहास

24.3 मानवजाति वर्णन/नृजातिवर्णन

24.4 विषय चयन

24.5 शोध अभिकल्पना

24.6 क्षेत्र में प्रवेश प्राप्ति

24.7 मुख्य सूचक

24.8 सहभागी अवलोकन (क्षेत्रीय अनुसंधान)

24.9 सारांश

24.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 24 पढ़ने के बाद, आप:

- क्षेत्र शोध के इतिहास की खोज कर पाएंगे;
- नृजाति वर्णन के अर्थ की चर्चा कर पाएंगे;
- शोध के विषय चुनकर उसकी योजना की अभिकल्पना तैयार कर सकेंगे;
- क्षेत्र में प्रवेश के तरीके सीख पाएंगे और ऐसे लोगों को खोज पाएंगे जो सूचना देने के इच्छूक हों तथा सूचना दे सकते हैं; और
- सहभागी के रूप में अवलोकन की कला का प्रयोग कर सकेंगे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

24.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम क्षेत्रशोध के विषय में ओर इसे करने की पद्धति से संबद्ध हैं। सामाजिक विज्ञान में क्षेत्रकार्य द्वारा किए गए शोध का विशिष्ट निहितार्थ है। क्षेत्र कार्य का अर्थ लोगों से उनके प्राकृतिक आवास में मिलना उन्हें देखना ताकि एक लंबी अवधि के दौरान उनके जीवन के विषय में सामाजिक रूप से आवश्यक तथ्य एकत्रित करना होता है।

क्षेत्रकार्य की इस अवधारणा और पत्रकारों के कार्य में भेद करना चाहिए क्योंकि वे भी क्षेत्र में सूचना एकत्रित करने जाते हैं और समाचार रिपोर्ट तैयार करते हें। क्षेत्रकार्य, बाज़ार संस्थाओं के कार्य से भी भिन्न होता है, जो अन्वेषकों को विशिष्ट सामान या ब्रांड के उपभोक्ताओं (और संभावित ग्राहकों) की प्रतिक्रिया पर सामग्री/आंकड़ें एकत्रित करने के लिए भेजती हैं। इसकी तुलना में, क्षेत्रकार्य किसी समुदाय (किसी गांव, शहरी झोपड़ पट्टी या संस्था आदि) के सदस्यों के साथ लंबे समय तक रहकर किसी विषय पर गहन सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण होता है।

24.2 क्षेत्र शोध का इतिहास

क्षेत्रकार्य का शास्त्रीय अर्थ, ब्रोनिसलॉ मेलिनास्की (1922 ए) के कार्य से लिया गया है। उसने मानवविज्ञानी क्षेत्रकार्य के लिए सहभागी अवलोकन की पद्धति की आधार शिला

रखी। 1900 के आंरभिक काल से पूर्व, अधिकांश मानव जाति वर्णन संबंधी सूचना , ऐसे लोगों द्वारा एकत्रित की जाती थी जिन्हें मेलिनोस्की अनाड़ी (मिशनरी, उपनिवेशी प्रशासक और यात्री) कहता है और खोपड़ियों के नाप तथा शारीरिक विशेषताओं के उल्लेख द्वारा सर्वेक्षण का कार्य किया गया है। (ओ' रेली 2005 : 7)

मेलिनोस्की का मानना था कि मानव जाति वर्णन कर्ता को कम से कम एक वर्ष किसी समुदाय में रहकर, उन लोगों की भाषा सीखकर और उनका व्यवहार रिकॉर्ड करके क्षेत्रकार्य करने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में , क्षेत्रकार्य की अवधारणा का अर्थ "वहां जाना" है अथवा, जॉन बॅटी (1964) के शब्दों में "अन्य संस्कृति" का अध्ययन करना है। पाश्चत्य परंपरा के अंतर्गत, मानवविज्ञानी को किसी अन्य समाज का अध्ययन करना होता था, जिसके तरीके मानव विज्ञानी के लिए अंजान होते हैं और उसे समाज को देखना, उसका विवरण देना और विनिबंध के रूप में विश्लेषण करना होता हैं। यह मुख्यतः इस तथ्य का प्रत्युतर था कि लघु स्तर की जनजाति संस्कृतियां तेजी से लुप्त हो रही थीं तथा उनकी संस्कृतियों, प्रथाओं और पद्धतियों को रिकॉर्ड करने की आवश्यकता थी। इसलिए क्षेत्रकार्य लोगों से मूल सूचना एकत्रित करने के लिए "वैज्ञानिक पद्धति" के रूप में उभरा।

क्षेत्रकार्य के महत्व को बीसवीं शताब्दी के आरंभ में भी माना गया तब शिकागो यूनिवर्सिटी के समाजशास्त्रियों ने विषय अध्ययन पद्धति "**केस अध्ययन पद्धति** (case study method)" के माध्यम से कार्य करना आरंभ किया। इस पद्धति के लिए शिकागों और न्यूयार्क जैसे बड़े शहरों के भीतर छोटे समुदायों जैसे शहरी झोपड़पट्टी से गहन केस अध्ययनों को एकत्रित करने की आवश्यकता थी। इस पद्धति के माध्यम से, समाजशास्त्रीयों ने उस समय की प्रभावशाली "वैज्ञानिक सांख्यिकीय पद्धति" के समक्ष एक बड़ी चुनौती रख दी। शिकागो के समाजशास्त्रियों ने रोजमर्रा की स्थितियों में न केवल आमने सामने की अन्तर्क्रियाओं (यानि सरल व अनौपचारिक) का अध्ययन किया, बल्कि उन्होंने सामाजिक जगत के विवरण भी प्रस्तुत किए जिससे जीवन इतिहास की पद्धति तथा डायरियों और पत्रों जैसे दस्तवेज़ों का प्रयोग भी प्राप्त हुआ। ब्रिटिश तथा अमरीकी क्षेत्र शोध की परंपराओं का उल्लेख करने का यह अर्थ नहीं है कि क्षेत्र से सामग्री/आंकड़ें प्राप्त करने की अन्य महत्वपूर्ण परंपराएं नहीं हैं। उदाहरण के लिए, क्षेत्र शोध की जर्मन परंपरा में अन्य सूचना और क्षेत्रीय परिकल्पना के निर्माण के लिए क्षेत्र सामग्री सहित संग्रहालय नमूनों का संग्रह शामिल है। फ्रांसिसी परंपरा दुर्खाइमवादी समाजशास्त्र से काफी प्रभावित है जबकि डच परंपरा मानवविज्ञान, भाषा और साहित्य में प्रशासकों के शैक्षिक प्रशिक्षण पर केंद्रित है। मैज (1963), ईस्के (1974) और वैक्स (1971) ने समाजशास्त्र में क्षेत्र पद्धतियों के विकास पर चर्चा की है।

गहन क्षेत्रकार्य द्वारा 'देशी' दृष्टिकोण को समझने पर मेलिनोस्की द्वारा दिए जाने वाले बल के लिए यह आवश्यक था कि मानवविज्ञानी को 'वास्तविक जीवन तथा विशिष्ट व्यवहार की अतोलनीयता' अर्थात् किसी संस्कृति प्रबंधन तथा कार्य करने के तरीके को पूर्णतः समझने के लिए संस्कृति के प्रत्येक पक्ष से संबंधित सामग्री/आंकड़ें एकत्रित करना होता था। मेलिनोस्की के अतिरिक्त, फ्रांसबोआस (1920) ने भी क्षेत्रकार्य को मानवविज्ञानियों के लिए प्रशिक्षण के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में प्रचलित किया। बोआस का अत्याधिक प्रभाव था क्योंकि वह "प्राचीन समाजों" से न केवल उनके सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ में बल्कि उनके शारीरिक, भाषिक, मनोवैज्ञानिक तथा भौगोलिक आयामों के संदर्भ में भी सामग्री/आंकड़े एकत्रित करने पर बल देता था। इसलिए बीसवीं शताब्दी के आरंभ से, क्षेत्रकार्य सामाजिक शोध का एक आवश्यक पक्ष बन गया और सामाजिक जगत के प्रत्येक शोधार्थी का उसमें प्रवेश करना अपेक्षित था।

सहभागी अवलोकन के प्रयोग द्वारा किसी एकाकी समुदाय के अध्ययन पर केंद्रित होना मानवजाति वर्णन संबंधी कार्य की विशेषता बन गया। "मानवजाति वर्णन" शब्द का महत्व एकाकी समुदाय में सामाजिक व्यवहार के अवलोकन और विवरण की अवधारणा के फलस्वरूप है। भारत में अधिकांश मानवविज्ञानी गहन अध्ययन के लिए गांव पर ध्यान देते थे। उदाहरण के लिए रामपुरा पर श्रीनिवास (1976) का अध्ययन क्षेत्र आधारित शोध कार्य का अच्छा उदाहरण है।

समय के साथ क्षेत्र कार्य की परिभाषा और प्रकृति में बदलते सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ और क्षेत्र में हो रही सैद्धांतिक प्रगति के अनुसार अत्यधिक परिवर्तन हुआ है। क्षेत्र की अवधारणा किसी अन्य संस्कृति के अध्ययन से हटकर स्वयं अपनी संस्कृति के अध्ययन और अतिलघु स्तर की इकाई के अध्ययन से हटकर बड़ी सामाजिक इकाई के अध्ययन पर आ गई है। हांलाकि "क्षेत्र में जाने" की अवधारणा सामाजिक वैज्ञानिकों में अब भी प्रचलित है, यह किसी आबद्ध/बंद समुदाय की छवि को नही उभारती है। आज, हम पाते हैं कि सामाजिक वैज्ञानिक न केवल गांव, जातियों, जनजातियों का अध्ययन करते हैं बल्कि सहकारियों, गैर-सरकारी संस्थाओं, सिनेमा, बाज़ार, बेघर लोगों, बच्चों और साहित्य तक का अध्ययन करते हैं। आजकल सामाजिक वैज्ञानिक बहुस्थानीय क्षेत्र शोध करते हैं और इस प्रकार के विनिबंध तैयार करते हैं जो वास्तविकता पर प्रतिस्पर्धी परिप्रेक्ष्यों के प्रति संवेदनशील होते हैं (क्लीफोर्ड और मार्कस 1986)।

24.3 मानवजाति वर्णन

मानवजाति वर्णन को शोध करने के तरीके के रूप में देखा जाता है जिसमें कुछ निर्धारित प्रक्रियाओं और नियमों के अनुसार लोगों के प्रतिदिन के जीवन के सामाजिक अर्थ को समझने के लिए उनके प्राकृतिक विन्यास अथवा क्षेत्रों में उनका अध्ययन किया जाता है। यह सहगामी अवलोकन के द्वारा मानवीय समूहों के क्षेत्र-आधारित, गुणात्मक शोध को दर्शाता है। मानवजाति – वर्णन को हम ऐसे विषय के रूप में भी परिभाषित कर सकते हैं जिसमें नृज़ातीय समूहों का तुलनात्मक अध्ययन शामिल हो। प्रायः लघु ओर बृहत् मानवजाति वर्णन के बीच भेद किया जाता है (कभी-कभी जिसे सामान्य मानवजाति वर्णन भी कहा जाता है) बृहत और लघु मानवजाति वर्णन के बीच अंतर के लिए बॉक्स 24.1 देखें।

MAADHYAM IAS

बॉक्स 24.1: बृहत और लघु मानवजाति वर्णन के बीच अंतर

बृहत मानवजाति वर्णन में एक समूह के जीवन की संपूर्ण पद्धति का विवरण देने का प्रयास किया जाता है जबकि लघु मानवजाति वर्णन में किसी बड़े विन्यास, समूह अथवा संस्था में विशिष्ट बिंदुओं पर विशिष्ट पक्षों पर ध्यान दिया जाता है। इन बिंदुओं का इस प्रकार चयन होता है कि वे सहभागियों के जीवन और बदले में बड़े समूह के जीवन के महत्वपूर्ण तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इन दोनों में दूसरा महत्वपूर्ण अंतर यह है कि बृहत मानवजाति वर्णन अनवेषणाधीन समूह अथवा संस्था के सदस्यों के आमने सामने की परस्पर क्रियाओं पर विश्लेषणात्मक रूप से अधिक ध्यान देता है। इन अंतरों के बावजूद, ये दोनों सहभागियों के दृष्टिकोण से सामान्य सामुदायिक जीवन को काफी महत्व देते हैं (बर्ज़ 2001 : 136)। प्रायः दोनों एक दूसरे के पूरक होते हैं।

'ओ.' रेली (2005:3) मानवजाति वर्णन भी न्यूनतम परिभाषा निम्नलिखित शब्दों में देता है।

> यह पुनरावृतीय आगमनात्मक शोध है जो अध्ययन द्वारा विकसित होता है। यह पद्धतियों के एक परिवार पर आधारित है जिसमें मानवीय ऐजेंट के प्रतिदिन के

> जीवन के संदर्भ में उनके साथ प्रत्यक्ष तथा निरंतर संबंध बना रहता है। क्षेत्रकार्यकर्ता सभी गतिविधियों को देखता है, प्रत्येक बात को सुनता है, प्रश्न पूछता है और समृद्ध रूप से लिखित वर्णन प्रस्तुत करता है। यह विवरण मानवअनुभव की अखंडनीयता को दर्शाता है और सिद्धांत की तथा शोधार्थी की भूमिका को स्वीकार करता है। मानवजाति वर्णन, मनुष्य को आंशिक रूप से वस्तु और आंशिक रूप से विषय के रूप में देखता है।

क्षेत्र तथा उसके विश्लेषण के प्रस्तुतीकरण की अनेक प्रक्रियात्मक पद्धतियों की उपस्थिति के बावजूद, क्षेत्रकार्य की पद्धतियों में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है। दूसरे शब्दों में, क्षेत्र कार्य करने के लिए कुछ मानक पद्धतियां और तकनीकें होती हैं। अनेक शोधार्थी मूल्य निष्पक्ष स्थिति अपनाने के पक्ष में होते हैं यानि ना तो अपने दृष्टिकोण को थोपना और ना ही सामाजिक अथवा राजनीतिक मुद्दों पर कोई पक्ष लेना। यद्यपि अनेक सामाजिक शोधार्थियों ने मूल्य निष्पक्षता के इस दिखावे के विरोध में तर्क दिए हैं। नारीवादियों ने ऐसी शोध उन्मुखता बनाई है जो शोधार्थी और उसके विषयों दोनों के लिए सुविधाजनक है (बॉक्स 24.2 देखें)। शोधार्थी सुनते अधिक और बोलते कम हैं। इस रूझान ने शोध प्रक्रिया को मानवीकृत किया है और इस बात पर बल दिया है कि शोधार्थियों को अपने विषयों के साथ संबद्ध और अपने विचारों के प्रति निजवाचक (reflexive) होना चाहिए।

बॉक्स 24.2: नारीवादी उपदेश के क्षेत्र में सुगम्यता

उर्सुला शर्मा (1981 : 37) कहती हैं,

अनेक क्षेत्रों में पुरुष तथा स्त्री के अनुभव भिन्न नहीं होते हैं और इनमें कोई विशिष्ट पुरुष/स्त्री मॉडल नहीं होता है। किंतु कुछ आगे वह कहती है, मानवजाति वर्णनकर्त्ता के लिए स्त्रियों की उपस्थिति के प्रति संवेदनशीलता ही नहीं बल्कि विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों और उसके अनुसार उनके द्वारा व्यक्त विभिन्न विचारों और अनुभवों में अंतर के प्रति संवेदनशीलता की भी आवश्यकता होती है।

शर्ले आर्डनर (1984) ने उपरोक्त में यह जोड़कर लिखा है कि उस दबाव के अनुरूप है जो "मूकता (muting)" को समझने के लिए आवश्यक बृह्मांड अथवा उपदेश क्षेत्र को पहचानने के महत्व पर दिया गया है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

24.4 विषय चयन

हांलाकि मानवजाति वर्णन की प्रक्रिया में, सर्वेक्षण से भिन्न काफी लचीलापन होता है, क्षेत्र शोध को नियोजित, संयोजित और व्यवस्थित करने की आवश्यकता होती है। क्षेत्र का दौरा करने से पूर्व, शोधार्थी सावधानीपूर्वक शोध अभिकल्पना तैयार करता है जिसमें संबंधित विषयों जैसे शोध का विषय, पूछे जाने वाले प्रश्न, प्रयोग की जाने वाली आंकड़े एकत्रीकरण की तकनीकें, त्रिभुजन का प्रयोग, आंकड़ें विश्लेषण की तकनीक तथा ध्यान दिए जाने योग्य नैतिक प्रणालियों की रूपरेखा होती है।

समाज विज्ञान में एक प्रचलित मत यह है कि क्षेत्र शोध से पूर्व कोई सुगठित परिकल्पना नहीं होनी चाहिए क्योंकि क्षेत्र स्वयं कुछ प्रश्न देता है। मानवविज्ञानियों से एक कोरी स्लेट की भांति क्षेत्रकार्य आरंभ करने की अपेक्षा की जाती है क्योंकि यह नहीं चाहता/चाहती कि कोई पूर्वाग्रह, रूढ़ि या प्राथमिकता घेर ले। हालांकि नवीन सोच यह सुझाव देती है कि शोध अभिकल्पना, मानवजाति वर्णनकर्ताओं के लिए महत्वपूर्ण होती है क्योंकि वह परियोजना का मार्गदर्शन करती है। इस अभिकल्पना का निर्माण क्षेत्र में लचीलनपन तथा तत्काल निर्णय लेने की अनुमति देता है अर्थात् यह समस्या उत्पन्न होने के साथ ही अनिर्धारित परिवर्तनों की अनुमति प्रदान करता है। शोध किसी निष्पक्ष कारण से मात्र ही कभी किया जाता है। शोध के विषय का चयन सामान्यतः किसी शोधान्मुखी स्थिति से प्राप्त होता है।

इसके आगे, सभी स्त्री पुरुष, सामाजिक समूहों के उत्पाद हैं जिनमें मूल्य, व्यवहार तथा विश्वास किसी विशिष्ट प्रकार से लोगों को उन्मुख बनाते हैं।

निजी जीवनवृत अथवा किसी विषय के साथ गहन परिचय, मानवजाति वर्णकारों में अधिक सामान्य तथा स्वीकृत हो गया है। निष्पक्षता के दिखावे को बनाए रखने से, शोधार्थी सदैव अपनी सांस्कृतिक मान्यताओं या निजी अनुभवों की जांच से बच जाता है जबकि, शोधार्थियों द्वारा दिए गए विषयात्मक उपदेश पाठक को बेहतर तरीके से यह समझने का अवसर देते हैं कि किसी शोध क्षेत्र को क्यों चुना गया है, उसका किस प्रकार अध्ययन किया गया और वह किसने किया। उदाहरण कि लिए, यदि कोई नर्स कैंसर के मरीजों पर अध्ययन करती है तथा बताती है कि उसने इस विषय का चुनाव, अपने घर में किसी सदस्य के इस बिमारी से रोगग्रस्त होने के बाद किया, तो उससे उसके शोध की गुणवत्ता कम नहीं होती है। यद्यपि इससे उस पर अधिक अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है कि शोध कौन और क्यों कर रहा है। इससे पाठक को यह समझने में मदद मिलती है कि कुछ विशेष प्रकार के प्रश्न क्यों पूछे गए तथा कुछ अन्य प्रश्न क्यों नहीं पूछे गए। आज, अनेक शोधार्थी विकास संबंधी मुद्दों, लिंग, पर्यावरण तथा मानवाधिकार से जुड़ी समस्याओं पर कार्य करना पसंद करते हैं, जो धन तथा नौकरी की संभावनाओं की उपलब्धता के संदर्भ में महत्वपूर्ण लगती हैं।

व्यक्तिपरक निबन्धों (subjective discourses) के प्रस्तुतीकरण या शोधार्थी के विचारों को भी सुनने से शोध जगत की अंतर्दृष्टि मिलती है। रोजमर्रा की वास्तविकताएं मानवीय भावनाओं द्वारा अत्याधिक प्रभावित होती हैं और इन भावनाओं का प्रस्तुतीकरण वैध है।

विषय में निजी अथवा सैद्धांतिक रुचि के अतिरिक्त, क्षेत्र शोध की संभावना पर भी विचार किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, भारत के उत्तरपूर्वी राज्यों में, आंतकवाद के कारण क्षेत्र शोध करना सरल नहीं है। इसी प्रकार, बिहार और आंध्र प्रदेश के कुछ जिलों में, नक्सलवादी आंदोलन के कारण क्षेत्र शोध कठिन हो सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अभ्यास 24.1

वी. के. श्रीवास्तव द्वारा संपादित पुस्तक, मेथेडोलॉजी एंड फील्डवर्क में गेराल्ड डी. बेरेमान (2004:157.190) का मानवजाति वर्णन तथा उत्पाद पर अध्याय 7 पढ़ें। 'मानवजाति वर्णनाकार क्राफ्ट' विषय पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें तथा अपने द्वारा पढ़े गए पाठ और लिखित टिप्पणी के आधार पर अपने शोध के विषय का एक संभावित विषय चुनिए। इस विषय को चुनने के कारण बताइए तथा लगभग 500 शब्दों में इसके सैद्धांतिक और व्यवहारिक पक्ष समझाइए।

24.5 शोध अभिकल्पना

ब्रियूअर (2000 : 58) मानवजाति वर्णन संबंधी शोध अभिकल्पना की सामान्य योजना पर चर्चा करता है जिसमें विषय की मुख्य विशेषताएं तथा शोध के लक्ष्य एवं उद्देश्य होते हैं (बॉक्स 24.3 देखें)।

बॉक्स 24.3: मानवजाति वर्णन संबंधी शोध अभिकल्पना की सामान्य योजना

- क्षेत्र और सूचकों के चुनाव के लिए प्रयुक्त प्रतिदर्श (Sampling) के रूप ओर शोध स्थान/क्षेत्र का चयन।
- समय और धन सहित शोध के लिए उपलब्ध संसाधन।
- क्षेत्र में अनुभव किए जाने वाली घटनाओं और समय का प्रतिदर्श अर्थात मानवजाति वर्णनकर्त्ता किन घटनाओं का अध्ययन करना चाहता है और समय प्रबंधन की सामान्य समझ।

- क्षेत्र में प्रयुक्त सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण की पद्धतियां/तकनीकें।
- क्षेत्र में किस द्वारा प्रवेश, विश्वास और संबंध की किस प्रकार स्थापना।
- व्यक्ति की आयु, लिंग, प्रस्थिति और वर्ग के आधार पर भूमिकाओं का संभावित अनुपालन।
- मत्रिक और गुणात्मक विवरणों के लिए विशिष्ट प्रकार से प्रयोग किए जाने वाले विश्लेषण के प्रकार।
- क्षेत्र से बाहर निकलना और परिणाम बताने के लिए प्रयोग किए जाने वाले प्रसार के रूप।

मानवजाति वर्णन शोध, सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण की कोई विशिष्ट पद्धति नहीं है, बल्कि शोध की एक शैली है जो उसके उद्देश्यों द्वारा पहचानी जाती है जिसमें किसी क्षेत्र के लोगों की गतिविधियों और उनके अर्थों को समझना होता है और एक अभिगम होता है जिसमें इस विन्यास के साथ निकट संबंध, प्रायः भागीदारी होती है (ब्रियूअर 2000 : 59)। आरंभ करने के लिए स्वयं को रुचिकर लगने वाली समस्याओं या मुद्दों की सामान्य अवधारणा से क्षेत्र शोधार्थियों में विन्यास के प्रति समझ पैदा होती है जो इन समस्याओं या मुद्दों की जांच के लिए आवश्यक है। कुछ संभावित परिकल्पनाएं तैयार करते हैं जबकि शोध प्रश्नों को विस्तृत रूप से बहुत कम पूर्वगठित किया जाता है। विन्यास के उजागर होने के साथ शोध प्रश्न और सैद्धांतिक मुद्दे उभरने लगते हैं। इसलिए क्षेत्र विन्यास को निर्धारित करना और उस विन्यास के प्रति सुगमता प्राप्त करना आवश्यक होता है। यहां पर शोध विन्यास में प्रवेश पाने का प्रश्न उठता है। यह निर्णय लेना होता है कि क्षेत्र में शोधार्थी के रूप में उन्मुक्त रूप से प्रवेश किया जाए अथवा विन्यास में मौजूद होने का वास्तविक उद्देश्य बताए बिना गुप्त रूप से शोध किया जाए। क्षेत्र शोधार्थियों में गुप्त शोध की नैतिकता को लेकर निरंतर बहस होती रहती है। (डेंजिन 1970 और 1978)। शोध विन्यास के प्रति सुगमता "प्रतिक्रियात्मक" प्रभावों के मुद्दों, अर्थात शोधार्थियों की उपस्थिति के चलते विन्यास में परिवर्तन से भी जुड़ी होती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इस प्रकार के सामाजिक शोध में सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण की विभिन्न पद्धतियां प्रयोग की जाती हैं। जैसे सहभागी अवलोकन (Participant Observation), गहन साक्षात्कार, निजी दस्तावेज़ों का प्रयोग और उपदेश विश्लेषण। चूंकि इस शोध में अनेक पद्धतियां होती हैं, इसमें डेंजिन (1970) द्वारा आरंभ किया गया शब्द, त्रिभुजन (Triangulation) का प्रयोग होता है। शोधार्थियों का विन्यास में निभाई जाने वाली भूमिकाओं पर निर्णय ले लेना चाहिए– पूर्ण प्रेक्षक, सहभागी के रूप में प्रेक्षक, प्रेक्षक के रूप में सहभागी अथवा पूर्ण सहभागी। सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण में अध्ययनशील विन्यास की प्रत्येक गतिविधि को ध्यान से देखना, सुनना और उसके विवरणों को रिकॉर्ड करना शामिल होता है। इसके अतिरिक्त इस प्रक्रिया में इन प्रेक्षणों को व्यवस्थित रूप से प्रबंधित सामग्री/आंकड़े में अनूदित करना शामिल होता है।

गैर-सरकारी संस्थाओं और विकास की ऐजेंसियों ने क्षेत्रकार्य के एक अन्य रूप को प्रचलित किया है जिसका मुख्य कारण लोगों को उनके प्राकृतिक विन्यास में अध्ययन करने और उनके दृष्टिकोण को समझने की शास्त्रीय मान्यता है। यद्यपि उनकी क्षेत्रकार्य प्रणालियां, प्रक्रिया और रणनीति दोनों प्रकार से काफी भिन्न है। गैर-सरकारी संस्थाओं के कार्यकर्ताओं के द्वारा किया गया क्षेत्रकार्य प्रायः परियोजना प्रेरित (Project driven) होता है और उसे कम समय में पूरा किया जाना होता है इसलिए उन्होंने लोगों की सामान्य गतिविधियों के अतिविवरणशील अर्थों की उपेक्षा करके जल्दी सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण और उसके विवरण का अधिक महत्व है। इस प्रकार के अभ्यास को विभिन्न नाम दिए गए हैं जैसे

सहभागी ग्राम मूल्यांकन (पी.आर.ए.), तीव्र ग्राम मूल्यांकन (आर. आर.ए.) आदि। इन तकनीकों पर अधिक चर्चा इस इकाई में बाद में की जाएगी। यहां एक महत्वपूर्ण बात यह है कि इन रणनीतियों का गठन विशिष्ट उद्देश्यों के लिए होता है और ज्ञान की खोज इसका उद्देश्य नहीं है, जैसा मानवजाति वर्णन में होता है।

24.6 क्षेत्र में प्रवेश प्राप्ति

शोधार्थी को सावधानी से क्षेत्र में प्रवेश करना होता है। क्षेत्र में प्रवेश प्रायः क्षेत्र की प्रकृति और शोधार्थी की सामाजिक पृष्ठभूमि जैसे घटकों पर निर्भर करता है। आरंभिक दिनों में मानव विज्ञानी/समाजशास्त्री (जैसे श्वेत पुरुष एवं स्त्रियां) जनजातीय उपनिवेशों में मालिकों, प्रशासकों, मिशनरियों अथवा यात्रियों की तरह प्रवेश करते थे। भारत जैसे विकासशील देशों में क्षेत्र शोधार्थी प्रायः मध्यम वर्गीय शहरी शिक्षित व्यक्ति होता है। क्षेत्र में सफल प्रवेश को निर्धारित करने वाले अन्य महत्वपूर्ण घटक प्रजाति, जाति, जातीयता, आयु और लिंग है। लीला दुबे (1975) बताती हैं कि किस प्रकार उसके जीवन में क्षेत्रकार्य की तीन भिन्न अवस्थाओं में लिंग, वैवाहिक प्रस्थिति, आयु और सामाजिक प्रस्थिति प्रतिवादियों के साथ संबंध स्थापित करने में महत्वपूर्ण थे।

प्रवेश में गलतियों से क्षेत्रकार्यकर्ता की सफलता को खतरा हो सकता है। सही प्रकार से प्रवेश द्वारा संबंध बनाने में मदद मिलती है। क्षेत्र में प्रवेश बिंदुओं पर स्थित महत्वपूर्ण व्यक्तियों को "द्वारपाल" कहते हैं। प्रवेश पाने के लिए व्यक्ति को औपचारिक तथा अनौपचारिक संबंधों का उपयोग करना पड़ता है। पुरानी जान पहचान तथा शोध संस्थाओं अथवा प्रायोजक ऐजेंसियों से परिचय पत्र प्रवेश पाने में सहायक होते हैं। प्रायोजकों की प्रतिष्ठा और द्वारपालों का सहयोग प्रभाविकता सिद्ध करने में मदद करता है। दूसरी ओर, शोधार्थी को यह ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्ति का व्यवहार उसकी प्रतिष्ठा को प्रभावित करता है। द्वार पालों से बिना अनुमति प्राप्त किए क्षेत्र में प्रवेश करने से शोधार्थियों के लिए समस्या उत्पन्न हो सकती है। शोधार्थी जैसे द्वारापालों के माध्यमों से प्रवेश करता है, वह वैसे ही उनको सूचित करने के बाद बाहर निकलता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संपूर्ण समुदाय के अध्ययन के दौरान प्रवेश के सर्वाधिक खुले स्थान उन लोगों के बीच होते हैं जो व्यक्ति की सामाजिक वर्गीय पृष्ठभूमि से जुड़े होते हैं। किंतु किसी निर्धारित स्तर पर सभी संपर्कों का समान महत्व नहीं होता है। आरंभिक अवस्था में, शोधार्थी नेतृत्व के स्थानों पर मौजूद लोगों को इस आशा में पहचानने का प्रयास करता है कि वे महत्वपूर्ण संपर्क और अनौपचारिक प्रायोजकता उपलब्ध करवाएंगे। कुछ महत्वपूर्ण लोगों की स्वीकृति प्राप्त करने के पश्चात् शोधार्थी ऐसे तरीकों द्वारा भाग लेने का प्रयास करता है जो एक स्वीकृत निजी पहचान स्थापित करते हैं जिससे आरंभिक प्रायोजकता की सीमाओं के पार निकलना संभव हो पाता है।

परियोजना के आरंभिक चरणों में, जब शोधार्थी अभी सामाजिक आधार को सुदृढ़ कर रहा होता है, अपनी प्रक्रिया गठित करना उपयुक्त नहीं होता है। जब व्यक्ति सामाजिक आधार स्थापित करने में सफल हो जाता है तो उसे बिना प्रश्न पूछे ही सूचना मिल जाती है। संभावित सहभागियों के साथ पहला संपर्क ऐसा होना चाहिए जिससे उनके भय दूर हो जाए और उनका विश्वास बढ़े तथा वे शोध परियोजना में भाग लेने के लिए इच्छुक हो जाएं। यदि व्यक्ति अपने सगे संबंधियों के माध्यम से संपर्क स्थापित करता है तो उसे स्वीकृति प्राप्त करने में आसानी होती है। हांलाकि किसी विशिष्ट परिवार के साथ स्वयं को संबद्ध करने से अपनी स्वतंत्रता पर बंधन हो जाता है।

पहला कार्य लोग यह करते हैं कि शोधार्थी को विशेष स्थिति में रखने की कोशिश करते हैं। जिस स्थान पर व्यक्ति स्थित हैं वह स्थान उन लोगों को स्वीकार्य होना चाहिए जिन

लोगों का अध्ययन होना है। उदाहरण के लिए व्यक्ति की पहचान केवल उच्च जाति अथवा निम्न जाति से नहीं की जा सकती । व्यक्ति को स्थिति के व्यापक अध्ययन के लिए बराबर भागों में विभाजित करना पड़ता है। किंतु उसी समय यह दावा करना असंभव है कि सभी लोगों को समान रूप से जाना जा सकता है। स्थानीय लोगों के पूछे जाने पर, यदि व्यक्ति अपनी परिवारिक पृष्ठभूमि के विषय में सत्यनिष्ठ एवं ईमानदार होता है तो लोगों पर उसका अच्छा प्रभाव पड़ता है तथा वह उनकी स्वीकृति प्राप्त कर पाता है। क्षेत्र में शोधार्थी एक परिचित अजनबी की भूमिका निभाता है। क्षेत्र में प्रवेश करने के बाद, व्यक्ति को स्वयं भी सहज होना चाहिए और दूसरों को भी सहज करने का प्रयास करना चाहिए। क्षेत्र में पहला दिन महत्वपूर्ण होता है। क्योंकि शोधार्थी उस दिन लोगों को अपने बारे में बताता/बताती है तथा उनके बीच वहां होने का कारण भी व्यक्त करता/करती है। अत्याधिक सावधानी रखी जाती है कि लोगों के दिमाग में भय न पैदा हो। शोधार्थी क्षेत्र में लोगों से संपर्क स्थापित करता है और उनसे परिचित होना आरंभ करता है। उसे किसी का पक्ष नहीं लेना होता, किसी को नाराज़ नहीं करना होता अथवा उनके जीवन में हस्तक्षेप नहीं करना होता है। शोधार्थी न तो क्रांतिकारी होता है और न ही मिशनरी। वह लोगों को सुधारने अथवा परिवर्तित करने का प्रयास किए बिना देखता/देखती है और अपने जीवन से भिन्न उनके जीवन को देखने, अनुभव करने और विश्लेषित करने के उद्देश्य से भाग लेता है।

अपनी भूमिका सही प्रकार से निभाने के लिए, शोधार्थी को अपने अध्ययनाधीन लोगों के साथ अच्छे संबंध स्थापित करने होते हैं। संबंध स्थापित करने के लिए उसे उन लोगों के साथ रहना तथा उनके वातावरण के अनुसार स्वयं को ढालना पड़ता है। एक अच्छे व्यक्ति के रूप में अपनी छवि और प्रतिष्ठा स्थापित करना आवश्यक होता है। शोधार्थी की ऐसी स्वीकृति से खुले तथा प्राकृतिक उत्तर मिलने में मदद मिलती है। अंतर्दृष्टियां प्राप्त करने के लिए प्रेक्षक अपने विषयों के साथ समानुभूति विकसित करता/करती है। समानुभूति स्वयं को दूसरे के स्थान पर रखकर उनके विचारों और क्रियाओं को काल्पनिक रूप से अनुभव करने की क्षमता होती है। शोधार्थी अविवेकी नहीं होता, वह एक व्यक्ति की बातें दूसरे को नहीं कहता और अपने विषयों के मन से डर नहीं व्याप्त होने देता/देती है। कहीं भी और कभी भी उनके साथ मेलजोल रखते हुए और प्रतिष्ठा के लिए उनके साथ बिना किसी प्रतिस्पर्धा के शोधार्थी जल्दी में नहीं होता और वह कुछ लोगों के साथ तथा उनके माध्यम से कुछ अन्य लोगों के साथ निजी समीकरण बनाता है। इसके लिए उसे लोगों के साथ संपर्क स्थापित करने की कला विकसित करनी होती है। शोधार्थी लोगों से मिलने और बात करने में अच्छा लगता है और वह उनसे दुखी या व्यथित नहीं होता है। उसे क्षेत्र में बिना विवादास्पद बने परिस्थितियों से चतुराई के साथ निपटना होता है और सूचना एकत्रित करनी होती है। वह सभी वक्तव्यों को यूँ ही स्वीकार नहीं करता और उनकी अन्य लोगों से पुष्टि तथा जांच करता है और अपने निष्कर्ष निकालता है।

यद्यपि शोधार्थी परिचित लोगों के साथ निकट संबंध बनाता है, अत्यधिक निकटता और परिचय से बचना चाहिए क्योंकि उससे वस्तुनिष्ठता में बाधा उत्पन्न होती है। शोधार्थी को अपनी सीमाओं का पता होता है और वह संबंधों के बिगड़ने से पहले ही पीछे हट जाता है। आरंभ में, शोधार्थी एक या दो महत्वपूर्ण सूचकों पर ध्यान देता है और फिर धीरे-धीरे अन्य की ओर बढ़ता है। कुछ लोग स्वयं को शोधार्थी से दूर रखने का प्रयास कर सकते हैं तथा शोधार्थी को भी अन्य लोगों के साथ संबंध स्थापित करने के लिए कुछ लोगों से दूरी बनानी पड़ती है। शुरू में शांत रहने वाले लोग जरूरी नहीं बाद में भी ऐसे ही रहें।

MAADHYAM IAS

24.7 मुख्य सूचक

सभी संपर्कों का समान महत्व नहीं होता है। आरंभिक अवस्था में शोधार्थी नेतृत्व के स्थानों पर मौजूद लोगों को इस आशा में पहचानने का प्रयास करता है कि वे महत्वपूर्ण संपर्क और अनौपचारिक प्रायोजकता उपलब्ध करवाएंगे। आरंभिक संबंधों को साधने के लिए व्यक्ति मार्गदर्शक अथवा किसी महत्वपूर्ण सूचक की तलाश करता है। मार्गदर्शक अध्ययनाधीन समूह अथवा विन्यास में पाए जाने वाले देशी व्यक्ति होते हैं। उन्हें यह आश्वस्त करने की आवश्यकता होती है कि मानवजाति वर्णनकर्त्ता वही लोग हैं जो वे स्वयं को बता रहे हैं ओर उनके अध्ययन का महत्व है। अध्ययन के महत्व को समझा जाना चाहिए तथा मार्गदर्शकों और उनके समूहों के लिए वह अध्ययन सार्थक होना चाहिए। मुख्य सूचक के लिए यह आश्वासन आवश्यक है कि शोधार्थी की उपस्थिति से उन्हें या समूह के अन्य सदस्यों को कोई हानि नहीं होगी। मार्गदर्शक (अथवा मुख्य प्रतिवादी) समुदाय में अन्य लोगों को आश्वस्त कर सकते हैं कि शोधार्थियों के आस पास होने से कोई हानि नहीं है।

संस्था अथवा समुदाय के मुखिया को मुख्य सूचक बनाने का परामर्श नहीं दिया जाता है क्योंकि मुखिया के पास गलत सूचना हो सकती है अथवा वह सामान्य लोगों के बीच हो रही घटना से अनभिज्ञ हो सकता हैं कई बार मार्गदर्शक अथवा सूचक बनने के इच्छुक लोग अपने ही समूहों तक सीमित होते हैं। कुछ लोग समूह के वंशज हो सकते हैं अथवा दूसरे लोगों को नापसंद हो सकते हैं; क्षेत्रकार्यकर्ताओं को सलाह दी जाती है कि वे ऐसे लोगों को अपना मार्गदर्शक अथवा मुख्य सूचक ना चुनें। आदर्श रूप से, चुने गए मार्गदर्शकों अथवा मुख्य सूचकों का विश्वासपात्र होना और समूह में अन्य लोगों द्वारा पसंद किया जाना आवश्यक होता है। परिणामस्वरूप मार्गदर्शकों और सूचकों के "फैल जाने या तीव्रगति से आगे बढ़ना (Snowballing)" से मानवजाति वर्णनकर्त्ता को क्षेत्र में उपस्थित होने के दौरान गतिशीलता में मदद मिलती है। फैल जाने या तीव्र गति से आगे बढ़ना (Snowballing) का अर्थ उन लोगों का उपयोग करना है जिन्हें आरंभिक सूचक ऐसे लोगों के रूप में परिचित करवाता है जो शोधार्थी की वैधता और सुरक्षा का समर्थन भी कर सकते हैं। मानवजाति वर्णनकर्त्ता के विश्वसनीय मार्गदर्शकों और सूचको का तानाबाना जितना बड़ा होता है उतना ही अधिक सहयोग प्राप्त करने की उनकी क्षमता और सुगमता अधिक होती है। समय के साथ जैसे-जैसे प्रतिवादियों का ताना बाना आकार में बढ़ता है, वैसे-वैसे विशिष्ट मार्गदर्शकों की आवश्यकता कम होती जाती है और शोधार्थी उस स्थान पर अपनी सामान्यतः स्वीकृत उपस्थिति के द्वारा अनौपचारिक जान पहचान बनाने लगते हैं।

अभ्यास 24.2

अभ्यास 24.1 में चुने गए विषय को आगे बढ़ाते हुए, भाग 24.5 से 24.7 तक पढ़ने के बाद, अपने शोध के विषय पर आधारित शोध अभिकल्पना तैयार कीजिए और यह निर्णय लीजिए की आप क्षेत्र में किस प्रकार प्रवेश करके अपने मुख्य सूचकों की पहचान के उद्देश्य से वहां लोगों के पास जाएंगे। एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए और निम्नलिखित विवरणों को उसमें शामिल कीजिए।

- मेरे शोध की अभिकल्पना
- मैं क्षेत्र में कैसे प्रवेश करूंगा
- मैं मुख्य सूचकों की पहचान कैसे करूंगा

24.8 सहगामी अवलोकन (क्षेत्रीय अनुसंधान)

सामान्यतः देखने की प्रक्रिया और अवलोकन में अंतर होता है: अवलोकन अधिक केंद्रित और उद्देश्यपूर्ण होता है तथा किसी घटना को समझने के लिए किया जाता है। सामाजिक

शोध में अवलोकन का विशेष स्थान हैं क्योंकि इसे लोगों के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए मूलभूत उपकरणों में से एक माना जाता है और शास्त्रीय ब्रिटिश सामाजिक मानवविज्ञान और समाजशास्त्र के शिकागो विद्यालय में इसके उद्‌गम का बहुत अच्छी तरह प्रतिपादन किया गया है। सकारात्मक परंपरा इस पद्धति को अत्यंत महत्वपूर्ण मानती है क्योंकि यह माना जाता है कि सामाजिक व्यवहार का अवलोकन किया जा सकता है और यह संवेदी बोध के अधीन होता है। (एक अन्य पद्धति जिसके द्वारा शोधार्थी सामग्री/आंकड़े एकत्रित करते हैं को साक्षात्कार कहते हैं।)

अवलोकन द्वारा शोधार्थी लोगों को और उनके प्राकृतिक विन्यास में उन्हें अमौखिक रूप से प्रत्यक्ष देखते हुए उनके व्यवहार को समझता है जबकि साक्षात्कार में मौखिक संचार पर अधिक ध्यान होता है। समाजशास्त्रीय क्षेत्रकार्य में अवलोकन का प्रयोग सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण की मुख्य तकनीकों में से एक के रूप में किया जाता है, जो अंतर्वेधी (intrusive) अर्थात् सहभागी के रूप में (बॉक्स 24.4 देखें) और गैर अंतर्वेधी (non-intrusive) अर्थात, गैर सहगामी के रूप में हो सकता है। ऐसे शोधार्थी जिनकी जांच के विषय में लोगों के साथ घुलना मिलना आवश्यक नहीं होता है, गैर सहगामी प्रकार के अवलोकन का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए, कोई शोधार्थी विद्यार्थी शिक्षक के बीच परस्पर संबंध का, बिना उसमें हस्तक्षेप किए, एक लंबे समय तक अवलोकन कर सकता है। इस प्रकार के अवलोकन की एक पूर्व आवश्यकता यह है कि इसमें एक अवलोकन सूची के साथ कार्य करना पड़ता है जिसमें ऐसे विषयों का उल्लेख होता है जो शोधार्थी को किसी खास प्रकार के व्यवहार का अवलोकन करने के लिए मार्गदर्शन करते हैं। जटिल सामाजिक स्थितियों में गैर सहगामी अवलोकन को अधिक उपयोगी पाया गया है। साहित्य में एक अन्य शब्द, अर्ध सहभागी अवलोकन (quasi-participent observation) का भी प्रयोग होता है जिसका अर्थ यह है कि लोगों के सामाजिक जीवन में प्रेक्षक की आंशिक रूप से परिस्थिति-आधारित भागीदारी होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बॉक्स 24.4: सहभागी अवलोकन

सहभागी अवलोकन में सूचकों के प्राकृतिक विन्यास में उनके प्रतिदिन के जीवन में भागीदारी द्वारा सामग्री/आंकड़ें एकत्रित किया जाता है। सामाजिक शोधार्थी लोगों की व्यवस्थाओं, सामाजिक अर्थों और उनकी गतिविधियों को समझने के लिए उन्हें देखता और उनसे बात करता है। ऐसी प्रक्रियाओं के पीछे शास्त्रीय मान्यता लोगों द्वारा सोचने, करने और कहने के बीच अंतर को खोजना है। शोधार्थी इसमें अध्ययनाधीन लोगों के प्रतिदिन के जीवन से जुड़े अपने निजी अनुभव का आयाम जोड़ देता है।

मेलिनोस्की द्वारा विवेचित सहभागी अवलोकन की पद्धति के लिए शोधार्थी को लोगों से अलग होकर उनके व्यवहार की व्याख्या करनी पड़ती है। यद्यपि आज विषयनिष्ठ स्थितियों (subjectivist positions) क्लिफोर्ड गीटर्स जिसका अग्रगामी है, का मानना है कि सहभागी अवलोकन में सामग्री/आंकड़ें एक्रत्रीकरण का मुख्य साधन शोधार्थी होता है (बर्गेस 1982: 45 देखें)। मेलिनोस्की के अनुसार अवलोकन विवरण से अलग है जबकि गीटर्स अवलोकन और विवरण के बीच व्याख्यात्मक बोध को कड़ी मानता है। सकारात्मक परंपरा का प्रतिनिधित्व करते हुए मेलिनोस्की ने वस्तुओं और आवासियों के सामाजिक जीवन के प्रति अलगाववादी दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता पर बल दिया जबकि गीटर्स (1973, 1988) के लिए, मानवजाति वर्णन अभ्यास, "गहन विवरण" का एक अभ्यास है जिसमें लोगों के समझने, सोचने और अपने व्यवहार के बताने के संदर्भ में व्याख्या करने का प्रयास किया जाता है। यहां यह बोध पूर्णतः अंतर-व्यक्तिनिष्ठ होता है क्योंकि अवलोकन करने वाला सामाजिक जीवन में डूब जाता है और वास्तविक अर्थों में सहभागी बन जाता है।

अंतरंगी और बाहरी व्यक्ति के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए मानवजाति वर्णनकर्त्ता को कुछ विशेष निजी गुण विकसित करने पड़ते हैं। बर्गिस (1982 : 45) के अनुसार ये अन्य "निजीक्षमताएं" अन्य लोगों के लिए जीवन और गतिविधियों से जुड़ने की क्षमता, उनकी भाषा और अर्थों को समझना, क्रिया तथा भाषण को याद रखना, विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में अनेक प्रकार के लोगों से मिलने की क्षमता हैं।

ब्रियूअर (2000 : 60) लिखता है कि ऐसे दो तरीके हैं जिनके द्वारा सामाजिक विज्ञान जगत को उसके यथार्थ रूप में समझने और उस जगत की सुनिश्चित मान ली गई सामान्य बोध प्रकृति को उजागर करने के लिए सहभागी अवलोकन का प्रयोग करता है। पहला तरीका सामाजिक विज्ञान में परंपरागत प्रयोग हैं जहां सामाजिक समूहों अथवा विशिष्ट क्षेत्रों का अंदर से अध्ययन किया जाता है। हालांकि 1960 के दशक में समाज विज्ञान में मानवजातीय प्रणाली विज्ञान और परस्पर क्रियावाद के कुछ नए रूपों से सामान्य ज्ञान की पद्धतियों और प्रणालियों में रुचि पैदा हुई जिससे रोजमर्रा की गतिविधियां पूर्ण होती हैं । ऐसे शोधार्थी अन्य बातों के साथ, चलते और सोते हुए भी किसी संस्थागत विन्यास में संवाद निर्णय लेने की प्रक्रिया के गठन का अध्ययन कर रहे हैं।

कुछ मामलों में सहभागी उन क्षेत्रों को देखता है जिनका वो पहले से ही हिस्सा होता है सहभागी अवलोकन को पद्धति के रूप में प्रयोग करने की आवश्यकताएं और समस्याएं उन समस्याओं से काफी भिन्न होती हैं जिनके लिए पारंपरिक मामले की भांति विन्यास अपरिचित होता है। कई बार नए विन्यास/क्षेत्र, जिसमें भूमिका स्वतः प्रेक्षक को खोज लेती है के आयामों को ढूंढने के लिए किसी मौजूदा भूमिका का प्रयोग किया जाता है। इसका एक अच्छा उदाहरण कोहेन और टेलर (1972) द्वारा कैदियों और जेल के जीवन के अध्ययन के लिए अंशकालिक शिक्षकों की भूमिका का उनका उपयोग हैं। अधिकांश भूमिकाओं में अवलोकन की रणनीति गुप्त हो सकती है और शोधार्थी को सफल होने के लिए विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए नई भूमिकाओं में प्रेक्षक को लोगों का विश्वास जीतना पडता है, समूह की प्रथाओं और मूल्यों के साथ जुड़ना पड़ता है और गतिविधियों और घटनाओं के पूर्ण अनुभव के लिए क्षेत्र में लंबा समय व्यतीत करना पड़ता हैं यदि भूमिका गुप्त होती है तो प्रेक्षक को इमानदारी मेहनती होनी चाहिए और अंतरंगी का दिखावा बनाए रखना चाहिए। क्षेत्र परिस्थिति के आधार पर शोधार्थी को सहभागिता के प्रकार के विषय में प्रायः निर्णय लेना पडता है। परिस्थितियां ये निर्धारित करती है कि भाग लेना है अथवा नहीं और वह किस सीमा तक होना हैं । और ऐसे संदर्भो में क्षेत्र परिस्थिति में पूर्णतः समाहित हो जाने की अपेक्षा शोधार्थी अपने हिसाब से भाग लेते हैं। ऐसी क्रियाओं को सामाजिक विज्ञान क्षेत्र कार्य में अर्थसहभागिता समझा जाता है। सहभागी अवलोकन में ना केवल अवलोकन होता है बल्कि शोधार्थी त्रिभुजन का भी प्रयोग करता है। अर्थात क्षेत्र के प्राथमिक और गौण स्रोत एकत्रित करने के लिए अनेक तकनीकों का प्रयोग किया जाता है जैसे अवलोकन, वंशक्रम, साक्षात्कार, प्रश्नावलियां, सूचियां, जीवनवृत्त, केस अध्ययन, मौखिक इतिहास और अब सहभागी ग्राम मूल्यांकन (पी. आर. ए) तथा तीव्रग्राम मूल्यांकन (आर. आर. ए) । हालांकि गुणात्मक शोध का अधिक प्रयोग होता है, तर्कों को सुदृढ़ करने तथा केस अध्ययनों को तैयार करने के लिए मात्रिक विवरणों का भी प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार सहभागी अवलोकन, सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण की मेहनती तथा कठिन प्रक्रिया है और जल्दबाजी में तैयार मानवजाति वर्णन इसका स्थान नही ले सकते हैं। इस पद्धति के मूल में लगाव और अलगाव होता है। सकारात्मक छोर पर अन्य किसी तकनीक द्वारा सामाजिक अर्थ, और इस पद्धति द्वारा प्राप्त प्रतिदिन की गतिविधि से जुड़ी मान्यताएं और विश्वास तथा भेद प्राप्त करना कठिन है। हालांकि सहभागी अवलोकन का दायरा और

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सीमाएं शोधार्थियों की भूमिका और स्थान की भौतिक सीमाओं से प्रतिबंधित होती हैं। चूँकि यह पद्धति लघु विन्यास में सर्वाधिक उपयोगी होती है, प्राप्त किए गए सामान्यीकरण आंशिक चित्र प्रस्तुत करते हैं। बृहत तथा लघु विन्यास की कड़ियों की विवेचना करते समय निजवाचक शोधार्थियों (reflexsive researchers) को अपने मत के मूल्य के महत्वपूर्ण होने का पता लगता है।

अभ्यास 24.3

इस इकाई का भाग 24.8 पढ़िए और अपने अध्ययन केंद्र पर केवल एक महीने के लिए सहभागी अवलोकनकर्ता की भूमिका निभाईए जिससे इग्नू के विद्यार्थियों और केंद्र के बीच परस्पर संबंधों के विषय में जानकारी प्राप्त हो सके। सहभागी अवलोकनकर्ता के रूप में अपने अनुभव के आधार पर "सहभागी अवलोकन की कला" विषय पर पांच सौ शब्दों का एक निबंध लिखिए। अपने अध्ययन केंद्र पर एम.एस.ओ.-002 के अन्य विद्यार्थियों के निबंधों के साथ अपना निबंध बदलिए और अपने आस पास की सामाजिक वास्तविकता को समझनें के लिए जानकारी एकत्रित करने के उद्देश्य से सहभागी अवलोकन पर एक दूसरे के अनुभव पर चर्चा कीजिए।

24.9 सारांश

इकाई 24 में आपको क्षेत्र शोध के विस्तृत विषय पर जानकारी मिली, जो सामाजिक जगत के बारे में नवीन सूचना प्राप्त करने का मुख्य आधार हैं और जिसे समाजशास्त्री तथा मानवविज्ञानी समझने और समझाने का प्रयास करते हैं। इस इकाई में, संक्षेप में, क्षेत्र शोध का इतिहास खोजा गया है तथा मानवजाति वर्णन के विषय पर चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त इसमें शोध विषय के चयन, शोध योजना की अभिकल्पना और क्षेत्र में प्रवेश प्राप्ति से संबंधित मुद्दों पर विस्तार से बताया गया है। क्षेत्र में सूचना प्राप्त करने के मुख्य स्रोतों के विषय में बताते हुए इकाई 24 में यह भी बताया गया है कि सहभागी अवलोकनकर्ता होने का क्या अर्थ है और अपने क्षेत्र के सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के दौरान इस अनुभव का प्रयोग कैसे किया जाता है। क्षेत्र शोध की इस विस्तृत प्रस्तावना ने क्षेत्र शोध पद्धतियों पर इकाई 25 में चर्चा का मार्ग प्रशस्त किया है जिसे हम अब देखेंगे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

24.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऐलेन, आर. एफ.1984, *ऐकनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टू जनरल कंडक्ट*। ऐकेडेमिक प्रेसः लंदन (अध्याय 3 और 4, पृ. 13-62)।

श्री वास्तव, वी. के. 2004, *मेथेडोलॉजी एंड फील्डवर्क*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड (प्रस्तावना, पृ. 1-50 तथा 149-156)।

इकाई 25
क्षेत्र शोध-II

इकाई की रूपरेखा

25.1 प्रस्तावना

25.2 वंशक्रम

25.3 साक्षात्कार, उसके प्रकार तथा प्रक्रिया

25.4 साक्षात्कार पर नारीवादी तथा पश्च-आधुनिक परिप्रेक्ष्य

25.5 विवरणात्मक विश्लेषण

25.6 व्याख्या

25.7 केस अध्ययन तथा उसके प्रकार

25.8 जीवन इतिहास

25.9 मौखिक इतिहास

25.10 भागेदारी ग्राम मूल्यांकन (पीआरए) तथा तीव्र ग्राम मूल्यांकन (आरआरए) तकनीक

25.11 निष्कर्ष

25.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 25 को पढ़ने के बाद, आपः

- बताई गई क्षेत्र पद्धतियों पर चर्चा कर सकेंगे;
- बाद में, अपनी लघु शोध परियोजना के लिए इन पद्धतियों में से कुछ को चुनकर प्रयोग कर सकेंगे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

25.1 प्रस्तावना

इस इकाई में कुछ ऐसी तकनीकें तथा पद्धतियाँ बताई गई हैं, जिन्हें गुणात्मक शोधार्थी सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण के दौरान प्रयोग करते हैं। निस्संदेह, क्षेत्र शोध सदैव निजी शैली द्वारा किया जाता रहा है। फिर भी, क्लैमर (1984:69) ने इन शैलियों के चार मुख्य स्रोत बताए हैं, अर्थात्,

- प्रत्येक क्षेत्र कार्यकर्त्ता की व्यक्तिगत तथा रूढ़िबद्ध विशेषताएँ
- विचारधारा तथा दर्शन संबंधी मान्यताएँ।
- पद्धति की सामान्य अवधारणा।
- अध्ययनाधीन समस्या की प्रकृति

आप पाएँगे कि सभी शोधार्थी, इकाई 25 में बताई गई सभी पद्धतियों और तकनीकों का प्रयोग नहीं करते हैं। निजी शैली के स्रोत के आधार पर, कोई शोधार्थी किसी पद्धति या तकनीक का प्रयोग कर सकता अथवा नहीं कर सकता है। गुणात्मक शोध की अधिकांश पद्धतियों और तकनीकों से अवगत हो जाना आपके लिए अच्छा होगा। इस विचार के साथ, हम वंशक्रम, साक्षात्कार, केस अध्ययन, जीवन इतिहास, मौखिक इतिहास और पीआरए/आरआरए तकनीकों जैसी पद्धतियों तथा तकनीकों पर चर्चा करेंगे। हम वंशक्रम संबंधी पद्धति से चर्चा आरंभ करते हैं।

25.2 वंशक्रम

नातेदारी, परिवार विवाह के अध्ययन के लिए, वंशक्रम का उपयोग एक विशिष्ट पद्धति है। वंशक्रमों को अवलोकन और साक्षात्कार की तकनीकों के प्रयोग से तैयार किया जाता है।

डब्ल्यू.एच.आर. रिवर्स (1900) ने सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययनों में वंशक्रम का महत्व दर्शाया और वंशक्रम संबंधी सामग्री/आंकड़े एकत्रित करने की प्रक्रिया को अलग किया (सामाजिक शोध में वंशक्रम पद्धति के महत्व के आरंभिक बोध के लिए बॉक्स 25.1 देखें)। मेलिनोस्की (1925:14-15) ने वंशक्रम को नातेदारी के अनेक संबंधित रिश्तों के संक्षिप्त चार्ट के रूप में परिभाषित किया। अन्वेषक प्रतिवादी (अहं कहा गया) से पूछताछ करके उसके वंशक्रम चार्ट को तैयार करता है। यद्यपि, यह हो सकता है कि वह अपने सभी रिश्तेदारों को जन्म के सही क्रम में लगाए या उनके बारे में उसकी स्मृति में दोष हो। अतः अन्य प्रतिवादियों से सूचना प्राप्त करके क्षेत्र कार्यकर्त्ता वंशक्रम को पूर्ण करता है। हालांकि, हो सकता है कि यह वंशक्रम पूर्ण न हो क्योंकि लोगों को कुछ पीढ़ियों के बाद अपने पूर्वजों के नाम तथा विवरण याद नहीं रहते। याद रखने की यह समस्या उन समुदायों में बढ़ जाती है जहाँ वंश को दोनों ओर से खोजा जाता है।

बॉक्स 25.1: सामाजिक शोध के लिए वंशक्रम पद्धति का महत्व

1904 में, हेड्डोन ने सुझाव दिया कि क्षेत्र शोध के नए अभिगम में: लोगों के सीमित समूह के व्यापक अध्ययन, जिसमें टॉरेस स्ट्रेट द्वीपवासियों तथा टोडाओं के लिए डॉ. रिवर्स द्वारा अनुपालित व्यापक पद्धतियों में उनके वंशक्रमों के सभी विस्तार खोजे गए (1905:478)। टोडाओं में रिवर्स के कार्य (1901-02, प्रकाशित 1906) ने इस अभिगम का आरंभ किया और उसके उदाहरण का वेद्दा में सी.जी. तथा बी.जेड. सेलिगमॅन द्वारा (1907-08, प्रकाशित 1911) और अंडमानियों में ए.आर. (रैडक्लिफ) ब्राउन (1906-1908, प्रकाशित 1922) द्वारा अनुसरण किया गया।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

उपरोक्त पद्यांश 'ए हिस्ट्री ऑफ फील्ड रिसर्च' (1984:47) विषय पर यूरे के लेख से उद्धत है और यह एकाकी समुदायों में गहन क्षेत्रकार्य के प्रति स्पष्ट पूर्वाग्रह को दर्शाता है।

वंशक्रम का निर्माण केवल क्षेत्रकार्यकर्ता ही नहीं करते बल्कि वे लोग भी अपने रिश्तेदारों तथा विवाहजन्य संबंधियों का विवरण रखते हैं जिनके चार्ट वे बनाते हैं। इसलिए नातेदारी का चार्ट एक विश्लेषणात्मक उपकरण होने के साथ-साथ, ऐसे नियमों का संकलन भी है जिनके अनुसार चलने की अपेक्षा अभिनेताओं से की जाती है (बार्नेस 1947)। ऐसे समाजों में, जहाँ लेखन तकनीक ने अंतर्मार्ग बनाए हैं, उस समय की मौखिक परंपरा का भाग रहे नातेदारी चार्ट अब लिखित रूप में होते हैं (श्रीवास्तव 2004:32)। कुछ समाजों में वंशक्रम तैयार करने वाले विशेषज्ञ समूह होते हैं जो अपने ग्राहकों से उनकी नातेदारी और विवाह के रिकॉर्ड रखकर अपनी आजीविका कमाते हैं।

शोधार्थी के लिए महत्वपूर्ण नातेदारी और विवाह से संबंधित तथ्य लोगों के लिए उतने महत्वपूर्ण नहीं होते हैं इसलिए लोगों द्वारा उनके अपने उद्देश्य के लिए तैयार चार्ट, क्षेत्र कार्यकर्ताओं द्वारा लगातार साक्षात्कार और अवलोकन के बाद तैयार चार्ट से भिन्न होते हैं। फोर्टेस (1949) के अनुसार, अभिनेताओं द्वारा बनाए गए नातेदारी के चार्ट को वंशवृक्ष कहते हैं जबकि अपनी शोध रुचियों के आधार पर, सामग्री/आंकड़े के रूप में क्षेत्र कार्यकर्ता द्वारा बनाया गया चार्ट वंशक्रम कहलाता है। वंशक्रम संबंधी सामग्री/आंकड़े का प्रयोग नातेदारी के अध्ययन के अतिरिक्त अनेक कार्यों के लिए किया जाता है। जनसांख्यिकीकार वंशक्रम संबंधी वक्तव्यों का प्रयोग करते हैं। इस पद्धति द्वारा लोगों के प्रवासी इतिहास का भी अध्ययन किया जा सकता है। वंशक्रम से लोगों के साथ संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया में भी मदद मिलती है।

अभ्यास 25.1

वंशक्रम संबंधी आरेख बनाना सीखने के लिए इग्नू के बी.ए. समाजशास्त्र पाठ्यक्रम के ईएसओ-12 की इकाई पढ़िए। उसके बाद स्वयं से कम से कम तीन पीढ़ियों पूर्व सहित विवाहों द्वारा जन्य सभी संबंधों का क्षैतिज विस्तार दिखाते हुए अपने परिवार के वंशक्रम का चार्ट बनाइए। चार्ट बनाते समय, संबद्ध व्यक्ति का नाम, लिंग, व्यवसाय तथा आवास स्थान आदि नोट कीजिए। उसके बाद, यथासथव सटीकता के साथ यह जानने का प्रयास कीजिए कि उस व्यक्ति का जन्म कब और कहाँ हुआ तथा वह किस स्थान पर रहा है। प्रत्येक व्यक्ति के *पति/पत्नी* का नाम लिखिए, विवाह संबंध अभी जीवित है अथवा नहीं तथा प्रत्येक मामले में यह लिखिए कि विवाह कहाँ आरंभ हुआ और कब तथा कहाँ समाप्त हुआ, यदि अब मौजुद नहीं है। *पति/पत्नी* के जन्म की तिथि और स्थान नोट कीजिए और वह अब कहाँ *रहता/रहती* है तथा उसकी मृत्यु की तिथि और स्थान क्या है। जन्म, विवाह तथा मृत्यु से संबंधित सूचना के सही होने की अधिक संभावना है। जन्म की तुलना में धात्री–प्रथा (adoption) द्वारा प्राप्त रिश्तेदारी में अंतर कीजिए। इस चार्ट को बनाने की प्रक्रिया से ही आपको सीखने को मिलेगा। चार्ट पूर्ण करने के बाद, उसका अध्ययन करने से आपको अपने परिवार के क्षेत्रीय विस्तार, उसके व्यावसायिक ढाँचे, वैवाहिक संबंधों के प्रकारों, विवाह की औसत आयु, पुरुष तथा स्त्री की जीवनावधि के ढाँचे आदि के विषय में जानने को मिलेगा। अपने चार्ट तथा उसके निष्कर्षों को, अपने अध्ययन केंद्र पर एमएसओ-002 के साथियों द्वारा तैयार समान दस्तावेजों के साथ तुलना करना रोचक होगा।

25.3 साक्षात्कार, उसके प्रकार तथा प्रक्रिया

सूचना प्राप्त करने के उद्देश्य से किए गए संवाद को साक्षात्कार करते हैं। यद्यपि, प्रतिदिन के संवाद और साक्षात्कार में अंतर होता है। साक्षात्कार में असमान स्थिति होती है जिसमें प्रायः शोधार्थी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से बात को निर्णीत तथा नियंत्रित करता है (श्रीवास्तव 2004:29)। साक्षात्कार इस मान्यता पर आधारित होता है कि प्रतिवादी (respondent) के मौखिक विवरण उसके व्यवहार, अर्थों, आचार तथा भावनाओं के विश्वसनीय सूचक हैं तथा प्रेरक (प्रश्न) अध्ययनाधीन विषय के विश्वसनीय सूचक हैं। यह द्विमार्गी प्रक्रिया है जिसमें साक्षात्कारकर्त्ता और प्रतिवादी दोनों का अपना-अपना दृष्टिकोण होता है, वे दोनों परस्पर बात करने की स्थिति में होते हैं और विचारों के संचार से दोनों के बीच आरंभिक संबंध उत्पन्न होता है। कुछ विशिष्ट प्रकार के मतों से संबंधित सूचना प्राप्त करने के लिए साक्षात्कार एक प्रभावी पद्धति है, विशेषकर जब अन्वेषक यह जानना चाहते हों कि सहभागियों की विचारधारा क्या है या सहभागी किस प्रकार कुछ घटनाओं को अर्थ प्रदान करते हैं। ऐसी स्थितियों में, साक्षात्कार एक सुगम साधन उपलब्ध करवाता है। अवलोकन से भिन्न, इसमें समय कम लगता है और व्यक्ति अमूर्त चीजों से संबंधित सामग्री/आंकड़ें भी एकत्रित कर सकता है। साक्षात्कार एक लचीला उपकरण है, जिसका प्रयोग उस स्थान के विषय में अतिरिक्त जानकारी प्राप्त करने के लिए होता है जो पूर्व निर्धारित न हो। हाव-भाव और संकेतों को देखकर सहज ही झूठ और असंगतियों का पता लगाया जा सकता है। साक्षात्कार से पूर्व शोध समस्या से संबंधित विषयों पर प्रश्नों की एक सूची बनाई जाती है। इस सूची को साक्षात्कार गाइड कहते हैं। इसका उपयोग साक्षात्कारकर्ता द्वारा सीमित समय में अधिक से अधिक मुद्दों पर बात करने के लिए किया जाता है।

साक्षात्कार के लिए परिकलित्र होना ठीक है किंतु इससे सूचना के संचार में बाधा उत्पन्न हो सकती है। इसी कारण, अनेक शोधार्थी विभिन्न प्रकार की साक्षात्कार सूचियों का प्रयोग करना पसंद करते हैं। साक्षात्कार के प्रकारों पर अनेक मापदंडों के आधार पर हम चर्चा कर सकते हैं। साक्षात्कार के प्रकारों पर अनेक मापदंडों के आधार पर हम चर्चा कर सकते हैं (साक्षात्कार के प्रकारों के मापदंडों के लिए बॉक्स 25.2 देखें)

MAADHYAM IAS

बॉक्स 25.2: साक्षात्कार के प्रकारों के मापदंड

पहला मापदंड पूछे जाने वाले प्रश्नों के पूर्व-निर्धारण की सीमा है (इसमें मानक एजेंडा के माध्यम से औपचारिक प्रश्न तथा साक्षात्कार के दौरान उठने वाले प्रश्नों की जाँचसूची शामिल होती है)। दिशात्मकता की सीमा दूसरा मापदंड है (इसमें विशिष्ट विषयों पर निष्पक्ष से अत्यधिक विशिष्ट होते प्रश्नों की दिशा शामिल होती है)।

तीसरा मापदंड, दूसरे से जुड़ा है। यह सीमा पूछे गए प्रश्नों के खुले या बंद होने की है (उदाहरण के लिए, आप कैसे हैं? बनाम क्या आज आप विद्यालय नहीं जा रहे हैं?)

चौथा मापदंड, साक्षात्कार की अवधि है (अर्थात्, संक्षिप्त मुलाकात बनाम गहन पूछताछ)।

पाँचवा मापदंड, पूर्व प्रबंधन का है (नियोजन द्वारा साक्षात्कार निर्धारित करना)।

साक्षात्कार का विन्यास छठा मापदंड है (समूह बनाम दो लोग, व्यक्ति का निवास, मानव जाति वर्णनकर्त्ता का घर, निष्पक्ष स्थान, आदि)।

उपरोक्त पद्यांश कैंप और एलेन (1984:231) पर आधारित है।

विभिन्न मापदंडों को देखने के बाद, हम साक्षात्कार के विभिन्न प्रकार देखते हैं।

साक्षात्कार के प्रकार

साक्षात्कार प्रायः तीन प्रकार के होते हैं, अर्थात्,

- संरचित साक्षात्कार (Structured interview)
- असंरचित साक्षात्कार (Unstructured interview)
- अर्ध-संरचित साक्षात्कार (Semi-structured interview)

अब हम प्रत्येक प्रकार के साक्षात्कार पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

MAADHYAM IAS

संरचित साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कर में प्रश्नों की औपचारिक रूप से संरचित सूची का प्रयोग होता है। इसका तर्क यह है कि प्रत्येक विषय को समान प्रोत्साहन दिया जाए ताकि प्रश्नों के उत्तरों की आदर्श रूप से तुलना की जा सके। इन प्रश्नों की रचना सूचना प्राप्ति के उद्देश्य से पूर्व निर्धारित प्रश्नों के प्रयोग से होती है जिनसे यह अपेक्षित होता है कि वे व्यक्ति के विचारों, मतों और अध्ययन पर आधारित मुद्दों के आधार पर सूचना दे पाएंगे।

असंरचित साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार में कोई औपचारिक प्रश्न सूची नहीं होती है। साक्षात्कारकर्त्ता इस धारणा के साथ आरंभ करते हैं कि उन्हें पहले से आवश्यक प्रश्नों के बारे में पता नहीं है। वे यह भी मानते हैं कि सभी प्रतिवादी एक जैसे प्रश्नों को समान रूप से नहीं समझेंगे। साक्षात्कारकर्त्ताओं को, परिस्थिति के अनुसार और अन्वेषण के उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही प्रश्नों को विकसित और तैयार करना चाहिए। असंरचित साक्षात्कारों द्वारा शोधार्थी प्रश्न पूछकर विभिन्न घटनाओं के बारे में अतिरिक्त जानकारी प्राप्त कर पाते हैं।

अर्ध-संरचित साक्षात्कार

इस प्रकार के साक्षात्कार में अनेक पूर्व-निर्धारित प्रश्नों अथवा केवल पूर्वनिर्धारित विषयों का क्रियान्वयन होता है। प्रत्येक प्रतिवादी से, व्यवस्थित तथा लगातार रूप से ये प्रश्न पूछे जाते हैं किंतु साक्षात्कारकर्त्ताओं के पास अपने पूर्वनिर्धारित तथा मानक प्रश्नों के उत्तरों के पार जाकर पूछताछ करने की छूट होती है।

यह जानने के लिए कि किस प्रकार का साक्षात्कार प्रयोग किया जाना चाहिए, आपको पूछे जाने वाले प्रश्नों तथा अपेक्षित उत्तरों को ध्यान में रखना चाहिए। प्रश्न की प्रकृति (प्रत्यक्ष या परोक्ष, खुला या बंद, लंबा या छोटा) अध्ययन की प्रकृति पर निर्भर करती है।

साक्षात्कार की प्रक्रिया

साक्षात्कार की प्रक्रिया को समझना भी आवश्यक होता है। साक्षात्कार प्रायः खुले प्रश्नों (जैसे जनसांख्यिकीय प्रश्न, सामान्य प्रश्न) से आरंभ होते हैं जो साक्षात्कारकर्त्ता तथा प्रतिवादी (respondent) के बीच संबंध स्थापित करने के लिए आवश्यक है। अध्ययन के केंद्र से जुड़े प्रश्नों को एक साथ भी रखा जा सकता है और पूरी सूची में फैलाया भी जा सकता है। अतिरिक्त प्रश्न, यानी, कुछ आवश्यक प्रश्नों के समतुलय किंतु कुछ भिन्न शब्दों में तैयार, उत्तरों की प्रामाणिकता की जाँच के लिए पूछे जाते हैं। प्रश्न पूछने से प्रतिवादियों से पूर्ण कथाएँ प्राप्त हो जाती हैं। जाँच के दौरान ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं जिनसे पहले ही पूछे गए प्रश्न के उत्तर में प्राप्त सूचना का अधिक विस्तार होता है।

अन्वेषक को सर्वेक्षण के महत्त्व के बारे में प्रतिवादियों को विश्वास दिलाना चाहिए। व्यक्ति को यह विश्वास होना चाहिए कि जो भी उसे कहना है, वह महत्वपूर्ण है। प्रश्नों की सूची साक्षात्कार को आगे बढ़ाने में मदद करती है और संवाद रूक जाने की स्थिति में सहायक सिद्ध होती है। व्यक्ति को उपयुक्त संवाद शैलियाँ, बैठने की स्थितियाँ तथा आँखों की गतिशीलता को विकसित करना चाहिए। साक्षात्कार के दौरान, यदि संवाद कमजोर पड़ता है तो उसे पुनः यह बताकर सुदृढ़ करना चाहिए कि आपको कुछ पता है; आप राय देते हैं अथवा जानबूझ कर कोई गलत बात कहते हैं ताकि प्रतिवादी अपने विचार और मत प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित होता है। रुकने वाले संवाद के मामले में, आपको उपयुक्त जाँच द्वारा उसे आगे बढ़ाना चाहिए। जाँच करना एक कला है जिसे विकसित करना पड़ता है। प्रतिवादी को बीच में अकस्मात् टोकना नहीं चाहिए और यदि ऐसा करना ही पड़े तो सम्मानजनक ढंग से करना चाहिए। प्रश्नों को शिल्प तथ्यों, शो-कार्डों, चित्रों या तस्वीरों जैसे गैर-मौखिक प्रेरकों के प्रयोग से स्पष्ट किया जाना चाहिए। साक्षात्कार के सभी चरणों में स्थिति को नियंत्रित करने के लिए केंद्रित करने की आवश्यकता होती है। साक्षात्कार में मदद करने वाले कुछ सुझावों के लिए बॉक्स 25.3 देखें:

बॉक्स 25.3: साक्षात्कार के लिए उपयोगी सुझाव

- संबंध बनाने के लिए साक्षात्कार को छोटी-छोटी बातों से आरंभ करें।
- कपड़े उपयुक्त पहनें और सहज बने रहें।
- साक्षात्कार के लिए आरामदायक स्थान चुनें।
- प्रतिवादी के प्रति सजग, प्रशंसनीय, आदरणीय और सौहार्दपूर्ण रहें।
- एकाक्षरीय उत्तरों से संतुष्ट न हों।
- साक्षात्कार के उद्देश्य को याद रखें।

साक्षात्कार की अनेक स्थितियों में, कई बार एक व्यक्ति का एक व्यक्ति से साक्षात्कार संभव नहीं हो पाता है विशेषकर गाँवों, चाय की दूकानों, झोपड़ पट्टियों आदि में जहाँ बातचीत सार्वजनिक रूप से होती है। प्रायः शोधार्थी पाता है कि एकाकी साक्षात्कार सामूहिक साक्षात्कार में परिवर्तित हो जाता है जहाँ उन दोनों को अन्य लोग घेर लेते हैं, हस्तक्षेप करते हैं तथा उत्तरों की पूर्ति करते हैं। सामूहिक साक्षात्कार वहीं उपयोगी होते हैं, यदि व्यक्ति सार्वजनिक सूचना माँगता है जैसे पानी की समस्या या झोपड़पट्टी में सफाई आदि।

MAADHYAM IAS

25.4 साक्षात्कार पर नारीवादी (Feminist) तथा पश्च-आधुनिक (Postmodernist) परिप्रेक्ष्य

आपकी लघु शोध परियोजना के लिए उपयोगी साक्षात्कार के दो और परिप्रेक्ष्यों को हम आपके लिए यहाँ जोड़ रहे हैं जिन्हें आप समय आने पर प्रयोग कर सकें।

साक्षात्कार पर नारीवादी परिप्रेक्ष्य

नारीवादी प्रणाली विज्ञान इस मत को अस्वीकार करता है कि शोधार्थी और शोध्य के बीच अंतर होने से अधिक वैध तथा वस्तुनिष्ठ विवरण प्राप्त होता है। एक तरीका, जिससे नारीवादी लोग अपने प्रतिवादियों को मात्र ज्ञान की वस्तु नहीं समझना चाहते हैं, यह है कि प्रतिवादी को बदले में अन्वेषक से बात करने की अनुमति होती है। इसका उद्देश्य शोधार्थी और प्रतिवादियों के बीच घनिष्ठता द्वारा और अधिक जानकारी प्राप्त करना होता है। इसके लिए शोधार्थी ऐसे तरीकों से साक्षात्कार करता है जिनसे स्त्रियों के अनुभवों के अपूर्ण रूप से व्यक्त पक्षों को खोजने में मदद मिलती है। साक्षात्कार का एन्न ओकले का नारीवादी दृष्टिकोण (1987) प्रतिवादी के वस्तुकरण को न्यनीकृत करना चाहता है जिसके लिए साक्षात्कार को अन्योन्य क्रियात्मक विनिमय (interactional exchange) के रूप में देखा जाता है। उसके अनुसार, साक्षात्कारकत्ताओं के प्रश्नों के उत्तर देने से शोधार्थी निजता तथा मानवीय प्राप्त करता है और इससे परस्पर क्रिया अधिक समान स्तर पर आ पाती है। साक्षात्कारकर्त्ता और प्रतिवादी दोनों के लिए साक्षात्कार का अर्थ तथा दो भागीदारों के बीच अन्योन्यक्रिया की गुणवत्ता, सभी महत्वूपर्ण मुद्दे होते हैं जब कोई नारीवादी स्त्रियों का साक्षात्कार करता है। ओकले यह भी बताती है कि अन्योन्यक्रियात्मक साक्षात्कार एक ऐसा अभियान है जो स्त्रियों के अनुभवों को दर्ज करता है और समाजशास्त्री को केवल ज्ञान के लिए नहीं बल्कि, सूचना देने वाली स्त्रियों के लिए ज्ञान प्राप्त करने की अनुमति देता है।

MAADHYAM IAS

पारंपरिक रूप से, गुणात्मक शोधार्थियों ने, शोधार्थी के परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में अंतःक्रिया की संरचना से बचने के प्रयास में खुले और गहन साक्षात्कार किए हैं। किंतु स्त्रियों को बात करने के लिए प्रेरित करने से महत्वपूर्ण विवरण प्राप्त अधिक होता है। समाज के अधिकांश सदस्य वर्चस्व वाली भाषा तथा अर्थ के संदर्भ में अपने अनुभवों की व्याख्या करना सीख जाते हैं तथा स्त्रियों को अपने अनुभव के विषय में बात करने में कठिनाई होती है। शोधार्थी, समाजशास्त्री के रूप में सीखी गई अवधारणाएं किस प्रकार स्त्रियों के विवरणों को विकृत करते हैं, इसकी जिम्मेदारी उठा सकते हैं। हम अपने अध्ययनों के स्रोत के रूप में विशिष्ट विन्यास में की गई गतिविधियों की ओर लौट सकते हैं और अपने साक्षात्कार को प्रतिदिन की गतिविधि के विवरणों – ऐसे विवरण कि किस प्रकार कुछ स्त्रियाँ घर पर अपना समय बिताती हैं, जैसे, गृहकार्य की पूर्व परिभाषित अवधारणा की अपेक्षा पर आधारित करते हैं। चूँकि उपलब्ध शब्द सही अर्थ नहीं देते, इसलिए स्त्रियाँ अपने अनुभवों के विषय में बात करते समय अनुवाद करना सीख जाती हैं। ऐसा करते समय, उनके जीवन के अंश गायब हो जाते हैं क्योंकि वे विवरण की भाषा में शामिल नहीं होते हैं। स्त्रियों के जीवन के इन अंश की पुनर्प्राप्ति के लिए, शब्दों को सुनने और उनके पार जाने की पद्धतियाँ शोधार्थियों को विकसित करना पड़ता है।

साक्षात्कार पर पश्च-आधुनिक परिप्रेक्ष्य

पश्च आधुनिकवादी साक्षात्कार में प्रतिवादियों और शोधार्थियों दोनों के निजी और सामाजिक अनुभवों का आदान-प्रदान शामिल होता है, जिसमें वे विकसित हो रहे संबंधों की कथा सुनाते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान, शोधार्थी और प्रतिवादी के बीच का भेद धुँधला पड़ जाता

है। शोधार्थियों द्वारा किए गए खुलासों को हम प्रतिवादियों को बोलने के लिए प्रेरित किए जाने वाले प्रयासों से कुछ अधिक मानते हैं। शोधार्थियों द्वारा अन्योन्यक्रियात्मक भेंट में शामिल की जाने वाली भावनाओं, अंतर्दृष्टियों और कथाओं का महत्त्व प्रतिवादियों की भावनाओं आदि के महत्व के ही समान होता है। इसलिए, हमारा कार्य साक्षात्कार की प्रक्रिया, साक्षात्कार के दौरान शोधार्थियों तथा प्रतिवादियों द्वारा एक-दूसरे के साथ बाँटी गई कथाओं और भावनाओं और इस परस्पर क्रिया के दौरान उत्पन्न संबंध पर केंद्रित होता है।

अन्योन्यक्रियात्मक साक्षात्कार के लिए काफी समय, अनेक साक्षात्कार सत्रों तथा संचार एवं भावनाओं के प्रति ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इसमें औपचारिक साक्षात्कार स्थिति के परे आपसी गतिविधियों में भाग लेना भी शामिल हो सकता है। हमारी पद्धति लचीली है तथा साक्षात्कार संदर्भ के अंतर्गत चल रही प्रतिक्रिया से लगातार प्रेरित होती है।

इस प्रकार के शोध में रत सहभागी, संवेदनशील मुद्दों की ज़टिलताओं पर कार्य करते हुए भेद्यता (Vulnerability) तथा भावुक निवेश के प्रति खुले होने चाहिए। अन्योन्यक्रियात्मक साक्षात्कार वास्तविक जीवन में संबंधों के विकसित होने के ढंग को दर्शाता है, संवाद के रूप में जहाँ एक व्यक्ति द्वारा किए गए खुलासे तथा आत्ममंथन, दूसरे व्यक्ति के खुलासों तथा आत्ममंथन को आकर्षित करते हैं, जहाँ अत्यंत और विश्वसनीय संदर्भ स्वयं को अधिक उद्घाटित करने और दूसरों की भावनाओं और विचारों की जाँच की अनुमति देता है, जहाँ दूसरे के दुख को सुनने और प्रश्न पूछने से स्वयं के कष्टों को समझने में मदद मिलती है, और जहाँ अनुभवों की जाँच और तुलना द्वारा दोनों के जीवन में अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है। वह अंतर-व्यक्तिनिष्ठ प्रक्रिया समझ तथा व्याख्या के ऐसे स्तर के लिए एक संदर्भगत आधार देता है जो पारंपरिक अनुक्रम वाले साक्षात्कार की स्थितियों में विद्यमान नहीं होता – जहाँ साक्षात्कारकर्त्ता अपने बारे में बहुत कम बताते हैं, एक या दो संक्षिप्त सत्रों में अलगाव के साथ प्रश्न पूछते हैं तथा प्रतिवादियों के साथ बहुत कम या नहीं जैसे संबंध रखते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

नारीवादियों ने शोधार्थियों से उनकी रुचियों और सहानुभूतियों को समझने के लिए आग्रह किया है। उन्होंने शोधार्थी और प्रतिवादी के बीच अंतर पर भी प्रश्न किए हैं और वे शोध को सशक्तीकरण, चैतन्य-वृद्धि तथा जीवन की परिस्थितियों में सुधार के उद्देश्यों के रूप में देखते हैं। पारंपरिक शोध मॉडल से दूर हटते हुए, व्याख्याकार शोधार्थी को अपने बारे में बताने के लिए प्रेरित करते हैं। शोधार्थी की भागदारी से प्रतिवादी सूचना बाँटने में अच्छा महसूस करते हैं और साथ ही, शोधार्थियों और प्रतिवादियों के बीच अनुक्रमिक अंतर को बंद करता है, जिसे पारंपरिक शोध से बढ़ावा मिलता है। प्रतिवादी कथाकार बन जाते हैं जो शोधार्थी के प्रश्नों, जाँच तथा कथाओं के उत्तर में नयी कथाएँ सुनाते हैं।

अभ्यास 25.2

अपने अध्ययन केंद्र पर एमएसओ.-002 के तीन साथियों का एक दल बनाइए और दल के प्रत्येक सदस्य को साक्षात्कार की तीन पद्धतियों में से किसी एक को चुनना होगा और खुले तथा पत्राचार पाठ्यक्रम की संस्थाओं में परीक्षा प्रणाली में सुधार के विषय पर अपने पसंद के शिक्षक का साक्षात्कार करना होगा। प्रत्येक सदस्य को अपने निष्कर्षों के आधार पर लगभग पाँच सौ शब्दों की एक संक्षिप्त टिप्पणी तैयार करनी है। उसके बाद इस पाठ्यक्रम के किसी एक परामर्श सत्र में एमएसओ.-002 के अन्य प्रशिक्षुओं के समक्ष एक मौखिक प्रस्तुतीकरण में प्रत्येक मामले में किए गए साक्षात्कार के तरीके में भिन्नता के कारण निष्कर्षों में आए अंतरों को समझाना होगा।

25.5 विवरणात्मक विश्लेषण

विवरणात्मक विश्लेषण, प्रतिवादियों के विवरणों (घटनाओं, दृष्टिकोणों) को विश्लेषित करने का प्रयास करता है। दास (1999) ने विवरणात्मक विश्लेषण में प्रयुक्त समकालीन पद्धतियों पर चर्चा की है (मौखिक सामग्री/आंकड़े एकत्रित करने की विभिन्न तकनीकों के लिए बॉक्स 25.4 देखें)

बॉक्स 25.4: विवरणात्मक विश्लेषण में मौखिक सामग्री/आंकड़े एकत्रित करने के लिए प्रयुक्त तीन तकनीकें

विवरणात्मक विश्लेषण पर अपने लेख में दास (1999:48-50) ने सामग्री/आंकड़े एकत्रित करने की तीन तकनीकों के बारे में बताया है।

1) विवरणात्मक तकनीक: यह समान सामाजिक विन्यास में लोगों के जीवन इतिहास में परिवर्तनों को खोजने में सहायक होता है। यह विवरण 'रेखीय तथा अभिमुखित' होता है और इसमें व्यक्ति के जीवन में हुई घटनाओं या घटनाओं की श्रृंखला पर ध्यान दिया जाता है।

2) प्रबंधनकारी तकनीक: इस तकनीक में जीवन इतिहास बताने वाले व्यक्ति को अपने जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं के विषय में बताने का अवसर मिलता है।

3) उत्पन्नकारी साक्षात्कार:® यह तकनीक किसी काल्पनिक तथ्य की जाँच करने के लिए प्रयोग की जाती है तथा इस उद्देश्य से शोधार्थी सूचना उत्पन्न करने पर ध्यान देता है।

प्रतिवादियों के साथ परस्पर क्रियाओं द्वारा प्राप्त विवरण सदैव पर्याप्त नहीं होते और अतिरिक्त सामग्री/आंकड़े के साथ इसकी पूर्ति करनी पड़ती है। विवरणों के विश्लेषण के दौरान, व्यक्ति को छिपे हुए अर्थों को खोजना पड़ता है और उन परिस्थितियों का अध्ययन करना पड़ता है जिनके अंतर्गत किसी प्रतिवादी ने किसी प्रश्न का कोई विशिष्ट प्रकार से उत्तर दिया है। प्रतिवादी की स्थिति पर उससे प्राप्त होने वाला उत्तर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, किसी युद्ध में विधवा हुई स्त्री सरकार पर यह कहकर अपना क्रोध व्यक्त कर सकती है कि सरकार उसकी आवश्यकताओं का ध्यान नहीं रखती क्योंकि वह आर्थिक रूप से अपना पोषण नहीं कर सकती जबकि किसी समृद्ध परिवार की स्त्री इस सहायता को अनावश्यक बताकर अस्वीकार कर सकती है। यदि प्रतिवादी उत्तर देने से मना करते हैं तो इसका यह अर्थ नहीं है कि उनके पास व्यक्त करने के लिए मत नहीं है। इसी के साथ, व्यक्ति को यह तथ्य भी ध्यान में रखना चाहिए कि मत उसी समय भी बन जाते हैं जब प्रतिवादी ने उनके विषय में पहले नहीं सोचा हो। ऐसे मामलों में, उस स्थिति से उत्तर प्रभावित होगा। एकत्रित सामग्री/आंकड़े केवल कहे गए शब्दों तक सीमित नहीं होना चाहिए बल्कि, अवलोकनों, व्यवहार विभिन्न रिकार्डों और प्रतिवादियों के दृष्टिकोण को भी इसमें सम्मिलित करना चाहिए। सत्य के उद्‌घाटन पर प्रश्न लग सकते हैं (विश्वेश्वरण 1996) क्योंकि विशिष्ट प्रकार की ज्ञान मीमांसा द्वारा विशिष्ट प्रकार के सत्य सामने आते हैं। यहाँ तक कि मौन की भी अपनी भाषा होती है और कुछ प्रकार्यों की पूर्ति के लिए व्यक्ति को उत्तर के प्रति जागरूक होना चाहिए।

25.6 व्याख्या

प्रश्न पूछने की तुलना में व्याख्या के लिए अधिक सावाधानी की आवश्यकता होती है। प्रतिवादी के उत्तर को सापेक्ष स्थान देना पड़ता है। इसमें अर्थों का सांस्कृतिक संदर्भ होता है। कुछ उत्तर केवल औपचारिकता के लिए दिए जाते हैं और उनका सटीकता से कोई संबंध नहीं होता (जोन्स, 1964 देखें), कुछ उत्तर अधीरता के कारण दिए जाते हैं और कुछ राजनीतिक, नैतिक तथा अन्य सामाजिक प्रतिबंधों के कारण दिए जाते हैं जैसा कि कैम्प

और ऐलेन (1984:230-235) ने कहा है, "व्याख्या की समस्याओं से निपटने का एक तरीका यह है कि सभी संभावित प्रश्नों अथवा प्रश्नों की व्याख्याओं को व्यवस्थित रूप से प्रदान किया जाए जिनसे प्राप्त किए गए वास्तविक उत्तर मिले हैं"।

व्याख्या में शक्ति गतिकी का बोध शामिल होता है जो साक्षात्कारकर्ता और प्रतिवादी के बीच परस्पर क्रिया को संरचित करता है। व्यक्ति को किसी विशिष्ट प्रकार का उत्तर उत्पन्न करवाने वाली विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों से अवगत होना चाहिए। मौन तथा प्रतिवादी की अस्वीकृति की अपनी-अपनी व्याख्या होती है और इसे सार्थक सामग्री/आंकड़ें मानना चाहिए क्योंकि केवल बोले गए शब्दों का ही नहीं बल्कि हाव-भाव, व्यवहार, संकेतों तथा मौन अथवा इंकार का भी अर्थ होता है।

25.7 केस अध्ययन तथा उसके प्रकार

केस अध्ययन पद्धति में किसी विशिष्ट व्यक्ति, सामाजिक विन्यास, घटना अथवा समूह के बारे में व्यवस्थित रूप से पर्याप्त सूचना एकत्रित की जाती है जिससे शोधार्थी प्रभावी ढंग से यह समझ सकता है कि वे किस प्रकार प्रचालन अथवा प्रकार्य करते हैं। केस अध्ययन वास्तविक रूप से सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण की तकनीक नहीं है बल्कि यह प्रणाली विज्ञान संबंधी अभिगम है जिसमें अनेक सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण के तरीके शामिल होते हैं। केस अध्ययन अभिगम में सामान्य क्षेत्र अध्ययन से लेकर एक व्यक्ति अथवा समूह का साक्षात्कार होता है। केस अध्ययन किसी एक व्यक्ति, समूह या संपूर्ण समुदाय पर केंद्रित होते हैं और अनेक सामग्री/आंकड़ें तकनीकों का प्रयोग करते हैं जैसे जीवन इतिहास, दस्तावेज, मौखिक इतिहास, गहन साक्षात्कार और सहभागी अवलोकन।

केस अध्ययनों का केंद्र सीमित हो सकता है अथवा इसमें जीवन और समाज के प्रति वृहत् दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कोई अन्वेषक अपनी जाँच को किसी व्यक्ति के जीवन के केवल एक पक्ष तक सीमित रख सकता है जैसे चिकित्सा विज्ञान पढ़ रहे विद्यार्थी की चिकित्सा विद्यालय में क्रियाएँ एवं व्यवहार।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

व्यक्ति को समस्या की प्रकृति के अनुसार अध्ययन किए जाने वाले सामाजिक जीवन के पक्ष का निर्धारण करना चाहिए। व्यक्तिगत केस अध्ययन की जाँच करते समय इसी प्रकार का मूल्यांकन करना चाहिए। अवलोकन के दौरान क्षेत्र टिप्पणियों, जर्नल की प्रतियों, प्रतिवादी की डायरी की प्रविष्टियों अथवा अन्य दस्तावेजों के साथ सामग्री/आंकड़ें की पूर्ति करने के लिए एक लंबा साक्षात्कार पर्याप्त हो सकता है अथवा अनेक साक्षात्कारों की आवश्यकता हो सकती हैं। किसी व्यक्ति के सामाजिक जीवन के सभी पक्षों की वृहत् और विस्तृत जाँच के पीछे अनेक कारण हो सकते हैं क्योंकि ये सभी पक्ष एक-दूसरे से संबंधित होते हैं और अन्य पक्षों को समझे बिना किसी एक पक्ष को पूर्णतः नहीं समझा जा सकता है।

केस अध्ययन के प्रकार

यिन (1994) और विंसटन(1990) के अनुसार केस अध्ययन तीन प्रकार के होते हैं–

1) **अन्वेषणात्मकः** अन्वेषणात्मक केस अध्ययनों में शोध प्रश्न परिभाषित करने से पूर्व क्षेत्र कार्य (और सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण) किया जा सकता है। इस प्रकार के अध्ययन को किसी बृहत् सामाजिक वैज्ञानिक अध्ययन की भूमिका के रूप में देखा जा सकता है।

2) **व्याख्यात्मकः** इस प्रकार के अध्ययन में कुछ विशिष्ट घटनाओं की व्याख्या का प्रयास किया जाता है और यह विशेष रूप से संस्थाओं या समुदायों के जटिल अध्ययनों में उपयोगी होता है।

3) **विवरणात्मकः** इस अध्ययन में अन्वेषक को विवरणात्मक सिद्धांत प्रस्तुत करना पड़ता है जो संपूर्ण अध्ययन के दौरान अन्वेषक के लिए अनुसरण करने योग्य समग्र ढाँचे की स्थापना करता है। शोध आरंभ करने से पूर्व अन्वेषक को यह निर्धारित कर लेना चाहिए कि अध्ययन में विश्लेषण की इकाई क्या होगी।

केस अध्ययनों और सामान्य मानव जाति वर्णन रिपोर्ट में मुख्य अंतर विवरण और उसकी विशिष्टता होता है। प्रत्येक केस अध्ययन किसी विशिष्ट संरूप घटनाओं का वर्णन होता है जिसमें अभिनेताओं के एक समूह को किसी विशेष समय पर एक निर्धारित स्थिति में सम्मिलित किया जाता है। केस अध्ययन के निर्धारण के दौरान, विश्लेषणकर्ता को यह पहले से निर्णय ले लेना चाहिए कि चल रही घटनाओं में किस समय प्रवेश करना है और उनमें से कब बाहर निकलना है। इसका बल स्वयं घटनाओं पर ना होकर घटनाओं के बीच सैद्धांतिक संबंध पर होना चाहिए। सामग्री/आंकड़ें एकत्रित करने के लिए किसी भी तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है और "सामाजिक क्षेत्रों" (ग्लकमैन 1961) की विस्तारित केस पद्धति में शोधार्थी एक विशेष प्रकार के विस्तृत पदार्थ को एकत्रित करता है। इसमें इस क्षेत्र पर्दा का कुछ विशिष्ट उपयोग किया जाता है जबकि मानवजाति वर्णनकर्त्ता इसका विश्लेषण करता है। अधिकांशतः, समाजशास्त्रियों और मानव विज्ञानियों ने विस्तारित-केस पद्धति अथवा स्थितिपरक विश्लेषण का प्रयोग सामाजिक परिवर्तन के सामान्य पक्ष के रूप में चर्चा करने के लिए किया है। विस्तारित-केस पद्धति/स्थितिपरक विश्लेषण के प्रयोग पर वॉन वेल्सन (1967:148-149) के विचारों के लिए बॉक्स 25.5 देखें।

बॉक्स 25.5: विस्तारित-केस पद्धति और स्थितिपरक विश्लेषण पर वॉन वेल्सन के विचार

... अधिक विनम्र किंतु समाजशास्त्रीय रूप से अधिक संरचनात्मक पद्धति से अनियोजित ढंग से एकत्रित प्रथाओं की तुलना द्वारा मैंने विश्लेषण और क्षेत्रकार्य की पद्धतियों की रूपरेखा तैयार की है जिसका उद्देश्य एक ओर, संरचनात्मक ('सर्वव्यापी') निरंतरता के अंतर्संबंध को और दूसरी ओर, व्यक्तियों के ('विशिष्ट') व्यवहार का विश्लेषण करना है।

यद्यपि, मेरा यह मत है कि क्षेत्रकार्यकर्ता द्वारा इच्छित पदार्थ के प्रकार के संदर्भ में उसके सैद्धांतिक अभिगम का काफी महत्व है और हालांकि मुझे यह लगता है कि क्षेत्र कार्य पद्धतियों को केवल सामान्य अर्थों में निर्धारित किया जा सकता है, मैंने ऐसे पदार्थों के एकत्रीकरण के संबंध में सुझाव दिए हैं जो संभवतः कुछ वर्तमान सिद्धांतों की मांगों को पूरा कर देंगे। ये माँगे सामान्य संरचनात्मक सिद्धांतों के एकनिष्ठ विश्लेषण की हैं जो विशिष्ट स्थितयों में विशिष्ट अभिनेताओं द्वारा इन सिद्धांतों के ऐतिहासिक विश्लेषण के साथ निकटता से अंतर्संबंधित हैं।

MAADHYAM IAS

केस अध्ययन पद्धति, सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण और विश्लेषणात्मक तकनीक की कोई नयी शैली नहीं है। उदाहरण के लिए, चिकित्सा और दर्शनशास्त्र के क्षेत्रों में, प्रकृतिस्वरूप, मरीजों की जाँच के लिए चिकित्सकों और दार्शनिकों की आवश्कता होती है। केस अध्ययनों का प्रयोग व्यापार तथा विधि के पाठ्यक्रमों में विद्यार्थियों को आधारपरक अध्ययनों और उनके अनुप्रयोग के बीच अंतर को दूर करने में मदद करने के लिए किया जाता है। कुछ नारीवादियों तथा अन्य सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त एक प्रचलित पद्धति में डायरियों और जीवनवृत्तों का प्रयोग किया जाता है जिससे केस अध्ययन पद्धति का अनुमान लग पाता है। एॅडवर्ड सूथरलैंड की *'दि प्रोफेशनल थीफ'* (1937), क्लीफोर्ड आर. शॉ की *'दि जॅक रोलर'* (1930) और बोगडॅन की *'बींग डिफरेंटः दि ऑटोबायोग्राफी ऑफ जेन फ्राइ'* (1974) कलास्कि केस अध्ययनों के कुछ उदाहरण हैं।

अभ्यास 25.3

कानून के क्षेत्र में केस अध्ययन पद्धति की उपयोगिता का वर्णन करते समय एप्सटीन (1967:229) ने कानून को ऐसी जटिल सामाजिक परिघटना माना जो उन समस्याओं से जुड़ा हुआ है जिसका सभी मानवीय समूहों को सामना करना पड़ता है तथा जिसके लिए हल जरूर ढूँढ़ना चाहिए' और उन्होंने यह भी बताया कि 'किस प्रकार केस अध्ययन पद्धति, जिसका प्रयोग क्षेत्र तकनीक और विश्लेषण के साधन दोनों ही रूपों में होता है, इन समस्याओं के ऊपर रोशनी डालने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। इस बहस का केंद्र बिन्दू कानून को नियमों की एक निकाय, पूछताछ व अधिनिर्णय की क्रियाविधियों की लिपिबद्धता तथा सामाजिक नियंत्रण के एक साधन के रूप में समझना है। कानून के बारे में एप्सटीन एक और बात सामने रखते हैं कि 'इसको मूल्यों की व्यवस्था के रूप भी देखा जा सकता है, इसके अलावा एक सामाजिक संस्था के रूप में इसकी जाँच होनी चाहिए। यहाँ पर हमारा मुख्य उद्देश्य उन मूल परिकल्पनाओं या विचारों को समझना है जो समुदाय के सामाजिक जीवन का आधार है, तथा उन तरीकों से जिनके द्वारा कानून के कार्य व उद्देश्य को विचारा जाता है।

एप्सटीन ने जो कुछ ऊपर कहा है उसके तहत, कानून के क्षेत्र में से कोई एक केस दीजिए, जो समाजशास्त्रीय जाँच-पड़ताल के स्रोत में से चुना गया हो (या अखबार में वर्णित रिपोर्ट से जुड़ा कोई केस) और बताइए कि यह विशिष्ट केस एप्सटीन द्वारा बताई गई पद्धति के मुख्य लक्षणों को कैसे दर्शाता है।

25.8 जीवन इतिहास

सामाजिक शोध और सिद्धांत का जीवन इतिहास अभिगम सामग्री/आंकड़ें की विभिन्न प्रणाली विज्ञान संबंधी तकनीकों और प्रकारों को सम्मिलित करता है। इनमें केस अध्ययन, साक्षात्कार, पत्रों, डायरियों, पुराने रिकॉर्डों, मौखिक इतिहास और विभिन्न प्रकार के वृतांतों सहित दस्तावेज का प्रयोग होता है। इसको शिकागो विद्यालय द्वारा पहचाना गया और 1920 तथा 1930 के दशकों के दौरान इसका भरपूर प्रयोग किया गया। किंतु बाद में, मात्रिक तकनीकों तथा सर्वेक्षण सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण में वृद्धि के साथ जीवन इतिहास अभिगम में सापेक्षतः कमी आई। हालांकि, 1970 के दशक में, यूरोप में ही नहीं बल्कि अमरीका में भी जीवन इतिहास में रुचि पुनः विकसित हुई। इस अभिगम की मुख्य मान्यताएँ ये हैं कि व्यक्तियों और समूहों की क्रियाएँ एक साथ उभरती हैं तथा संरचित होती हैं तथा यह कि विश्लेषण के लिए व्यक्तिगत तथा समूह परिप्रेक्ष्य का प्रयोग किया जाना चाहिए। अतः ऐसा कोई भी पदार्थ जो इन परिप्रेक्ष्यों की पूर्ति करे, उसे सामाजिक जीवन के अनुभवजन्य अध्ययन के लिए आवश्यक माना जाना चाहिए।

ऐसा प्रथम अध्ययन थॉमस तथा जॅनेकी का *दि पॉलिश पीजेंट इन यूरोप ऐंड अमेरिका'* था। पाँच भागों की इस 2200 पृष्ठों की पुस्तक में, उन्होंने अपने निष्कर्षों तथा सामान्यीकरणों के समर्थन में लगभग 800 पृष्ठों का जीवन इतिहास सामग्री/आंकड़ें प्रस्तुत किया। उस सामग्री/आंकड़ें में समाचार पत्रों के लेख, पारिवारिक सदस्यों के नाम पत्र, न्यायालयों और सामाजिक कार्य की एजेंसियों से प्राप्त रिकॉर्ड तथा प्रतिनिधिक मामले के रूप में एक व्यक्ति का 300 पृष्ठों की जीवनवृत शामिल था। इस अभिगम का प्रयोग प्रजाति संबंधों, बाल-अपराध, मीडिया, प्रवास, व्यवसाय तथा मानव जाति और शहरी अध्ययनों से मुख्यतः जुड़े मुद्दों पर शोध के लिए किया जाता था। जीवन इतिहास शोध के वर्तमान प्रयोगों में पर्याप्त परावर्तन तथा अधिक सटीक अवधारणात्मक भेद देखने को मिलते हैं। "जीवन कथा", "संदर्भित पुस्तकें", "उपदेश", "इतिहास", ""मौखिक इतिहास', "निजी अनुभव वृतांत", "सामूहिक वृतांत" और "कथाएँ" जैसे शब्द अब एक-दूसरे से भिन्न हैं और मौखिक विवरणों को सामान्यीकरण के प्रकारों को जोड़ने वाले ढाँचे विकसित किए जा चुके हैं।

जीवन इतिहास को सामग्री/आंकड़ें का वैध रूप मानना अब आम बात है। वृतांतीय सिद्धांत में मौजूद मतों के माध्यम से, कुछ शोधार्थियों ने विवरणात्मक साक्षात्कार कही जाने वाली चीज विकसित कर ली है। यह अभिगम साक्षात्कार सामग्री/आंकड़ें के आधार पर जीवन-इतिहास अभिगम का समर्थक रहा है। सामाजिक आंदोलनों पर सामूहिक शोध (1990) में, अमरीका, इंग्लैंड, आयरलैंड, इटली, पश्चिमी जर्मनी और फ्रांस में विद्यार्थी आंदोलनों के सदस्यों से प्राप्त जीवन-इतिहास सामग्री/आंकड़ें का प्रयोग किया गया। उसने इस पद्धति का वृहत्-स्तरीय तुलनात्मक शोध परियोजनाओं में अनुप्रयोग दर्शाया है।

लोककथाकार, डॉल्बी-स्ट्हाल (1989) ने जीवन इतिहास अभिगम का एक परावर्ती विकसित किया है। वह इसे ''साहित्यिक लोककथाकार'' कहती है जो निजी विवरणात्मक सामग्री/आंकड़े पर केंद्रित है। वह पाठक प्रतिक्रिया सिद्धांत का प्रयोग करती है और निजी विवरणों (कथाओं) और सामूहिक विवरणों (मानव-जाति समूह लोककथा) की अंतर्निभरता के अध्ययन के लिए व्याख्यात्मक पद्धति विकसित करती है। इस अभिगम की मान्यता यह है कि निजी तथा सामूहिक विवरण वंशानुगत रूप से संबंधित हैं तथा इसलिए किसी निजी कथा में सामूहिक आयाम होता है। ''व्याख्यात्मक जीवनवृत्त'' की अभिकल्पना लोगों द्वारा पारगमन काल के दौरान अनुभव की जाने वाली समस्याप्रद स्थितियों या बदलाव के क्षणों का अध्ययन करने के लिए होती है। मूलभूत प्रश्न जो वह पूछता है, वह यह है कि लोग किस प्रकार अपने जीवन को जीते तथा उसे अर्थ देते हैं और उन अर्थों को लिखित विवरण और मौखिक रूपों में व्यक्त करते हैं।

भारतीय संदर्भ में, दलित समाजशास्त्र चयनित अस्पृश्यों के जीवन वृत्तांतों का उपयोग कर रहा है। अनुसूचित जातियों ने अस्पृश्यों के द्वारा लिखित-कविता, लघु कथा, जीवन वृत्त, आत्मकथा के माध्यम से ऐसे जीवन-वृतांत लिखे हैं जिनमें सामाजिक और आर्थिक मुक्ति का महत्वपूर्ण तत्व है। फ्रीमैन (1978) द्वारा मुली नामक एक दलित का जीवन इतिहास भारत समाज में जाति दमन की प्रकृति को दर्शाता है। लेखक के अनुसार, उसके जीवन की अनेक घटनाएँ अन्य संस्कृतियों की घटनाओं से समानता रखती है और उसका मामला जाति और अन्य जैसे स्तरित तंत्रों के अभियोग पत्र जैसा लगता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

25.9 मौखिक इतिहास

अधिकांश समकालीन सामाजिक वैज्ञानिक, सामाजिक शोध में प्रलेखन और प्रमाणीकरण के लिए लिखित तथा मौखिक स्रोतों का उपयोग करते हैं। डायरियाँ, पत्र, लिखित दस्तावेज, निजी कागजात, आत्मकथाएँ, जीवन वृत्त, पुरातन सामग्री और आज, फिल्में, विज्ञापन, समाचार, काल्पनिक साहित्य, रचनात्मक कलारूप जैसे नृत्य, संगीत और चित्रकारी आदि का प्रयोग पाठ्य सामग्री के रूप में किया जाता है। इस सामग्री के बाद वाले रूपों की रचना क्षेत्रकार्यकर्ताओं द्वारा प्रायः साक्षात्कारों, लोगों से उनके बारे में लिखने के लिए कहने या जीवन इतिहास एकत्रित करके प्रथम सूचना प्राप्त की जाती है। मानव विज्ञानियों ने बहुत समय से सूचना प्राप्ति की इस पद्धति को अपनाया है, विशेषकर उन समाजों में जहाँ लिखित रिकॉर्ड मौजूद ही नहीं थे।

मौखिक इतिहास में संपूर्ण जीवन पर ध्यान न देकर, जीवन के किसी विषय या अंश पर ध्यान दिया जाता है। पहले से एकत्रित ऐतिहासिक सामग्री/आंकड़े में महत्वपूर्ण योगदान के अतिरिक्त, इस पति का उपयोग अल्पसंख्यक समूहों का साथ देने, महान व्यक्तियों के विचारों पर ध्यान देने अथवा दलितों, महिलाओं, जनजातियों, विकलांगों, आदि जैसे प्रायः मूक कर दिए गए समूहों को सम्मिलित करने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग उपचार के लिए भी किया जाता है (ओ. रेली, 2005)।

इतिहासकार, आज, मौखिक इतिहास का उपयोग ऐतिहासिक बोध की पूर्ति के लिए कर रहे हैं। नारीवादियों ने विशेषकर, इतिहास की पुनर्रचना करने के लिए मौखिक इतिहास के प्रयोग पर बल दिया है। गौण इतिहास के इतिहासकारों ने इस पद्धति का प्रयोग किसान आंदोलनों और विरोध प्रदर्शनों के इतिहास की पुनर्रचना के लिए किया है।

25.10 भागेदारी ग्राम मूल्यांकन (पीआरए) तथा तीव्र ग्राम मूल्यांकन (आरआरए) तकनीक

ऐसी संस्थाओं जो भागादारी प्रतिमान को अपनाती हैं (अधिकतर मामलों में, गैर-सरकारी संस्थाएँ), ने समुदायों के बीच प्रभावी संबंधों के लिए अनेक तकनीकें विकसित की हैं। इनमें से दो तीव्र ग्राम मूल्यांकन (आर आर ए) तथा भागीदारी ग्राम मूल्यांकन (पी आर ए) हैं। पी आर ए और आर आर ए का विकास, आरंभिक विकास कार्य पर आधारित मान्यताओं के प्रति निराशा तथा आलोचना के उत्तर में हुआ था।

आर.आर.ए. तथा पी.आर.ए. एक-दूसरे से जुड़े हुए अभिगम हैं। ये विकासात्मक गतिविधियों और शोध के विषयों और बाहरी व्यक्ति के बीच संबंध में पारस्परिक अध्ययन प्रक्रिया ने एक तरफा "तकनीक हस्तांतरण" विचार का स्थान ले लिया है।

पी.आर.ए. शब्द ऐसे अभिगमों और पद्धतियों के बढ़ते हुए परिवार के बारे में बताता है जो स्थानीय लोगों को मिलकर रहने, अपने जीवन और परिस्थितियों के बोध को बढ़ाने और विश्लेषित करने, योजना बनाने और उसके क्रियान्वित करने में सहायक होते हैं। पी.आर.ए. क्रियावादी विचारधारा से निकलता है। सहभागी शोध, कृषि पारस्थतिक तंत्र विश्लेषण, अनुप्रयुक्त मानव विज्ञान, कृषि प्रणालियों पर क्षेत्र शोध और आर.आर.ए. सूचना में तीव्र ग्राम मूल्यांकन की सूचना बाहरी लोगों को अधिक मिलती है; पी.आर.ए. में यह सूचना स्थानीय लोगों के पास अधिक होती है। सबसे आवश्यक सिद्धांत "सदैव अपने उत्कृष्ट निर्णय का प्रयोग करें" है जिसका अर्थ तात्कालिक प्रबंध होता है।

MAADHYAM IAS

रोबर्ट चिंबर्स (1992) द्वारा आर.आर.ए. और पी.आर.ए. में भेद बताया गया है। आर.आर.ए. द्वारा कम लागत में बाहरी लोगों को सूचना प्राप्त होती है। दूसरी ओर पी.आर.ए. ग्रामीण लोगों को अपनी परिस्थितियों को जानने और उनका विश्लेषण करने में अभूतपूर्व ढंग से सहायक होता है और अनुकूलतम मामलों में यह अपनी धारणाओं के अनुसार नियोजन और कार्यान्वयन करने में मदद करता है।

आर.आर.ए. और पी.आर.ए. दोनों को सामग्री/आंकड़ें मितव्ययता अथवा सामग्री/आंकड़ें अनुकूलता अभिगमों के रूप में देखा जाता है। 1980 के दशक में आरंभिक वर्षों के दौरान आर.आर.ए. के अनुप्रयोग से प्राप्त अनुभव यह दर्शाता है कि आर.आर.ए. इस आलोचना के प्रति संवेदनशील था कि उसने "शीघ्र तथा गंदे" विकासकार्य और "विकास पर्यटन" को संतुलन किया था।

सहभागी मूल्यांकन और गतिविधियाँ, वार्ता एवं सूचना एकत्रित करने की पद्धतियाँ हैं। प्रवीणता और लचीलापन इसकी विशेषताएँ हैं और अनुप्रयोग किए जाने वाली पद्धतियाँ विशिष्ट संदर्भ पर निर्भर करती हैं। पी.आर.ए. तकनीक विशिष्ट समस्याओं और उनके संभावित समाधानों को उजागर करने में काफी उपयोगी सिद्ध हुई हैं। कुछ चयनित पी.आर.ए. पद्धतियों, तकनीकों और उपकरणों की सूची यहाँ दी गई है:

1) गौण संसाधनों की समीक्षा

2) प्रत्यक्ष अवलोकन

3) मुख्य सूचनांक

4) अर्ध-संरचित साक्षात्कार
5) स्थान तथा अंक निर्धारण
6) मानचित्रों, मॉडलों और रेखाचित्रों का निर्माण और विश्लेषण
7) रेखाचित्रण
8) केस अध्ययन और कथाएँ
9) नाटक, खेल और भूमिका-नाटक
10) संभावित भविष्य और परिदृश्य कार्यशालाएं
11) त्रिभुजन
12) निरंतर विश्लेषण और रिपोर्ट करना
13) भागीदारी नियोजन, बजट बनाना, प्रबंधन, मूल्यांकन और स्वसर्वेक्षण
14) स्वयं कीजिए

भागेदारी ग्राम मूल्यांकन (पीआरए) तकनीक अधिक औपचारिक पद्धतियों की पूर्ति करती हैं। अधिकांशतः ये तकनीकें प्राथमिक अभ्यास होती हैं। ये प्रायः लोगों के साथ वार्ता, सूचना प्राप्ति, कुछ मामलों में विश्लेषण और भूमि अधिकार, जल, सार्वजनिक वितरण योजना आदि जैसे कुछ मुद्दों पर गतिशील बनाने का कार्य करती है। चूँकि गैर-सरकारी संस्थाओं में बहुअनुशासनिक दल होते हैं, पी.आर.ए. अभ्यासों का परिप्रेक्ष्य बहुअनुश्यासनिक होता है।

पी.आर.ए. व्यवसायियों ने स्वयं इसके प्रयोग में तीन मुख्य खतरों, कमियों और चुनौतियों की पहचान की है

- विस्तार की दर,
- व्यवसायी की अभिरुचि, और
- पथभ्रष्ट होना

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

विस्तार की गति व्यक्तिगत संस्थाओं के लिए सर्वाधिक उपयुक्त चीज खोजने के लिए सामाजिक एवं संस्थागत प्रयोग को करने की क्षमता से अधिक नहीं होनी चाहिए। व्यवसायी के निजी व्यवहार को नियंत्रित करना कठिन होता है।

सभी संबद्ध समूहों तक न पहुंच पाने की समस्या विशेषकर महिलाओं, भूमि रहित, मानवजाति अल्पसंख्यकों, गरीबों आदि में होती हैं। उच्च स्तरीय योजना लक्ष्य ऊपर की ओर बढ़ती माँगों और इच्छाओं में बाधा उत्पन्न करते हैं।

पी.आर.ए. से अंतिम उत्तर प्राप्त नहीं होते हैं। इस प्रक्रिया से स्थिति का बेहतर बोध होता है।

अभ्यास 25.4

स्कॉनहच (2002: 152-153) के निम्नलिखित पद्यांश को सावधानी से पढ़िए और क्षेत्र शोध के पी आर ए/ आर आर ए अभिगम के लाभ और हानि पर चर्चा कीजिए। अपने पड़ोस की बालिका की शिक्षा की सुगमता के बारे में जल्दी से जानकारी प्राप्त करने के लिए इस पद्धति के अनुप्रयोग के एकदिवसीय अनुभव की संभावना को खोजिए। यदि इस विषय पर नहीं तो एकदिवसीय पी आर ए अभ्यास के लिए आप किसी अन्य विषय को चुन सकते हैं ताकि आपको इस पद्धति का आभास हो सके।

पद्यांश

यह माइकल स्कॉनहच के लेख, 'निगोशिएटिंग विद नालेज एंड डेवलपमेंट इंटरफेसिस एनथरोपाइलिजी एंड दि क्वेसट फार पारटिसिपेशन' में से लिया गया है।

यदि सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त ढंग से प्रयोग किया जाए तो मेरे अनुभव से, लोगों और स्थानीय स्थिति की तीव्र तस्वीर प्राप्त करने के माध्यम के रूप में उपकरणों के बारे में सोचना बाहरी व्यक्ति के लिए असामान्य रूप से उपयोगी हो सकता है। वस्तुनिष्ठ होने से दूर, ये तस्वीरें उत्कृष्ट आधार प्रदान करती हैं और विभिन्न समूहों के बीच तथा सजातीय समूह के अंतर्गत वास्तविकता की स्थानीय विशेषताओं, स्थानीय ज्ञान और स्थानीय विचारों पर चर्चा करने के लिए उत्प्रेरक का काम करती है। ... प्रणाली विज्ञान के सतर पर, सामूहिक चर्चाओं पर ध्यान देने और वास्तविकता के सांस्कृतिक मानचित्रों को तैयार करने के लिए दृश्य संकेतों का अधिक उपयोग करने से मानव विज्ञान को लाभ हो सकता है। स्थानीय लोगों के साथ शोध परिणामों पर चर्चा की जा सकती है और उन्हें क्षेत्र में ठीक किया जा सकता है, जिन्हें सामान्यतः क्षेत्र कार्य के बाद मानव विज्ञानी द्वारा घर पर विश्लेषित किया जाता है।

25.11 निष्कर्ष

इकाई 25 में, समाजशास्त्रियों/मानवविज्ञानियों द्वारा उनके क्षेत्र शोधों के दौरान प्रयुक्त कुछ सामान्य पद्धतियों पर चर्चा की गई हैं। आपको इन पद्धतियों में से किसी एक का प्रयोग एम एस ओ-002 के लघु शोध परियोजना अभ्यास में करना पड़ सकता है। हमारा सुझाव यह है कि अपनी शोध रिपोर्ट के प्रणाली विज्ञान पर चर्चा में आपके द्वारा प्रयुक्त पद्धतियों को शामिल किया जाना चाहिए और आपके द्वारा इस पद्धति के प्रयोग के कारणों का उल्लेख किया जाना चाहिए। अपने द्वारा प्रयोग की जाने वाली पद्धतियों के विषय में उपयोगी पुस्तकों में से कुछ को चुनिए और पढ़िए।

25.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

MAADHYAM IAS

बार्नेस, जे.ए. 1961, *फिजिकल एंड सोशल किनशिप / फिलोसॉफी ऑफ साइंस* 28:296-299 (वंशक्रम पद्धति के बारे में)

दास, वीना 1999, *कॉन्टैम्परेरी मैथड्स इन नैरेटिव एनॉलिसिस* / इन आर. एल. कपूर (सं.) क्वालिटेटिव मेथड्स इन मेंटल हेल्थ रिसर्च। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीः बंगलूर (विवरणात्मक विश्लेषण पद्धति के लिए)

ड्यूबोले जूलियट तथा रोरी विलियम्स 1984, कलैक्टिंग लाइफ हिस्ट्रीज़। इन आर.एफ. एलेन (सं.) एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइट टू जनरल कंडक्ट। एकेडेमिक प्रेसः लंदन, पृ. 247-257 (जीवन इतिहास पद्धति के लिए)

जैन शोभिता 1999, *1. पार्टिसीपेट्री ऐपरोचिज़; 2. टाइप्स ऑफ पार्टिसिपेशन; 3. कन्सट्रैक्ट्स एंड प्राब्लम्स ऑफ पार्टिसिपेशन; 4. द रिटौरिक ऑफ पार्टिसिपेशन; 5. लैवलिंग द प्लेयिंग फील्ड्स / रैकोग्नाइजिंग लोकल-नो-हॉस* / इन पार्टीसिपेटरी फॉरेस्ट मेनेजमेंट, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली (पी आर ए/ आर आर ए तकनीकों के लिए)

जैन, शोभिता एवं नीति भार्गव 2001, *1. पार्टिसिपेशन फिलॉसफी, नेचर एंड ऐप्रोच; 2. ऑपरेशनलाइजेशन ऑफ पार्टिसिपेट्री प्रौसेस; 3. डेटा कलैक्शन टैक्नीकस फॉर मौबिलाइजिंग पार्टिसिपेशन; 4. टैक्नीकस ऑफ डेटा एनालिसिस एंड मोड्स ऑफ एनासिसि; पार्टीसिपेटरी*

गुणात्मक शोध पद्धति और तकनीकें	*मैनेजमेंट ऑफ डिस्प्लेसमेंट रिसेटलमेंट एंड रिहेबीलिटेशन की एम आर आर.02 की इकाइयाँ,* इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली (पी आर ए/आर आर ए तकनीकों के लिए)

क्वाले स्टेनर 1996, इंटरव्यूसः एन इंट्रोडक्शन टू क्वालिटेटिव रिसर्च इंटरव्यूइंग । सेजः लंदन (साक्षात्कार पद्धति के लिए, विशेषकर पृ. 1-10)

मुखर्जी, एन, 1993, *पार्टीसिपेटरी रूरल अप्रेजल – मेथेडोलॉजी एंड एप्लीकेशन्स*। कांसेप्टः नई दिल्ली (पी आर ए/ आर आर ए तकनीकों के लिए)

वॉन वेल्सन 1967, *दि एक्सैन्डिड केस मैथड एंड सिच्युएशनल एनालिसिस* इन ए.एल. एप्स्टेन (सं.) ' दि क्राफ्ट ऑफ सोशल एंथ्रोपोलॉजी'। सोशल साइंस पेपर बैक्सः लंदन (केस अध्ययन पद्धति के लिए)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 26
विश्वसनीयता, वैधता और त्रिभुजन

इकाई की रूपरेखा

26.1 प्रस्तावना

26.2 विश्वसनीयता तथा वैधता की अवधारणाएँ

26.3 तीन प्रकार की "विश्वसनीयता"

26.4 विश्वसनीयता की ओर

26.5 प्रक्रियात्मक वैधता

26.6 वैधता जाँच के रूप में क्षेत्र शोध

26.7 पद्धति उपयुक्त मापदंड

26.8 त्रिभुजन

26.9 गुणात्मक शोध में नैतिक विचार

26.10 निष्कर्ष

26.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि इकाई 26 पढ़ने के बाद, आप यह सुनिश्चित कर सकेंगे कि:

- आपके द्वारा एकत्रित सामग्री/आंकड़े सामंजस्य, सटीकता और पुनरावृत्ति के संदर्भ में विश्वसनीय है;
- विश्वसनीय होने के साथ, एकत्रित सामग्री/आंकड़े "सामाजिक वास्तविकता" के सही *विवरण/माप* देने के अर्थ में वैध भी है;
- त्रिभुजन *तकनीक/प्रणाली* विज्ञान संबंधी *बहुलवाद/अनेक* पद्धतियों के अनुप्रयोग से आपको सामाजिक वास्तविकता के सटीक *विवरण/माप* देने में सहायता मिली है; तथा
- शोधार्थी होने के नाते, आप अपने शोध के विषय को शारीरिक/मनोवैज्ञानिक हानि, गोपनीयता और विश्वस्तता पर धोखे से बचाने के लिए नैतिक बातों पर विचार करेंगे तथा क्षेत्र शोध करने के लिए संबद्ध व्यक्ति से सूचित अनुमति प्राप्त करेंगे।

MAADHYAM IAS

26.1 प्रस्तावना

इस पाठ में, हम विश्वसनीयता, वैधता तथा त्रिभुजन से संबंधित मुद्दों की बात करेंगे। हम उन विभिन्न तकनीकों का अध्ययन करेंगे जो शोधार्थी और पाठक को उस सीमा का मूल्यांकन करने देते हैं जहाँ तक एकत्रित तथा विश्लेषित सामग्री/आंकड़े ठोस वास्तविकता को दर्शाता है। हम आपको गुणात्मक शोध के मूल्यांकन के लिए कुछ पद्धति विषयक मापदंडों से भी परिचित करवाएँगे जो हाल ही के वर्षों में लोकप्रिय हुए हैं। एकत्रित सामग्री/आंकड़े की सटीकता को सुनिश्चित करने के लिए हम त्रिभुजन की तकनीक पर चर्चा करेंगे और फिर अंत में गुणात्मक अध्ययन आरंभ करते समय, ध्यान में रखने योग्य कुछ महत्वपूर्ण नैतिक मुद्दों की भी जाँच करेंगे जो शोध के दौरान हर चरण जैसे शोध का विषय चुनने से लेकर, अध्ययन क्षेत्र, निधि (Fund) का स्रोत तथा शोध-निष्कर्षों के छपने तक हमारे सामने आ खड़े होंगे।

26.2 विश्वसनीयता तथा वैधता की अवधारणाएँ

गुणात्मक शोध का उद्देश्य घटनाओं के विषय में तथ्यों को उजागर करना होता है। इस अर्थ में, यह ''वस्तुनिष्ठ'' है। कर्क और मिलर (1986:12-13) के अनुसार–

यह हमारा मत है कि गुणात्मक शोध को सामाजिक विज्ञान की तरह किया जा सकता है। वैज्ञानिक कार्य की कार्यशैली चाहे वह प्राकृतिक अथवा सामाजिक प्रकार की हो, को समझने के लिए इसकी वस्तुनिष्ठता को जानना होता है। इस मतानुसार, गुणात्मक शोध के किसी कार्य की वस्तुनिष्ठता को जानना होता है। इस मतानुसार, गुणात्मक शोध के किसी कार्य की वस्तुनिष्ठता का मूल्यांकन इसके अवलोकनों की विश्वसनीयता और वैधता के संदर्भ में किया जाता है।

विश्वसनीयता का अर्थ यह है कि किसी मापक प्रक्रिया को कितनी भी बार करने पर समान उत्तर की प्राप्ति किस सीमा तक होती है। वैधता का अर्थ यह है कि वह उत्तर किस सीमा तक सही है। किर्क और मिलर भौतिक जगत् से एक उदाहरण देते हैं। मान लीजिए कि कोई थर्मोमीटर है। किंतु यदि कोई थर्मोमीटर उबलते हुए पानी में डालने से 100 से. के आस-पास प्रत्येक बार भिन्न तापमान दर्शाता है तो वह विश्वसनीय नहीं है किंतु वह निश्चित रूप से वैध है। दूसरे शब्दों में, वैधता किसी निष्कर्ष के सत्य-मूल्य को दर्शाती है। किसी शोध को ''वस्तुनिष्ठ'' मानने के लिए, उसे विश्वसनीय और वैध दोनों होना चाहिए। आइए, हम एक-एक करके दोनों अवधारणाओं को पूर्णतः समझते हैं।

विश्वसनीयता: आप स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि विश्वसनीयता सामंजस्य से संबंधित है। आपका शोध तभी विश्वसनीय होता है यदि, उन्हीं पद्धतियों के प्रयोग से, बार-बार करने पर समान परिणाम प्राप्त होते हैं। समाजशास्त्रियों को एकत्रित किए गए सामग्री/आंकड़े की उपयोगिता स्थापित करनी होती है जिससे वे निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दे सकें।

- सामाजिक जीवन पार्श्वक (Profile) का कितना सटीक रूप व्यक्ति को प्राप्त हो सकता है
- प्राप्त निष्कर्ष क्या इतने प्रतिनिधिक हैं कि उन्हें प्रत्येक व्यक्ति पर लागू किया जा सके
- यदि अन्य लोग करना चाहें, तो क्या शोध को दोहराना संभव है और यदि वे करें तो क्या समान परिणाम प्राप्त होंगे।

MAADHYAM IAS

उपरोक्त उपयोगिता को सुनिश्चित करने के लिए हम विश्वसनीयता तथा वैधता की दोनों अवधारणाओं का प्रयोग कर सकते हैं। सामग्री/आंकड़े की विश्वसनीयता हमारा मुख्य उद्देश्य है क्योंकि यदि हमारे पास विश्वसनीय सामग्री/आंकड़े नहीं है तो उसके आधार पर प्राप्त निष्कर्ष बिल्कुल निरर्थक होंगे।

बॉक्स 26.1: सामग्री/आंकड़े की विश्वसनीयता किससे संबद्ध है?

निम्नलिखित बातें सामग्री/आंकड़े को विश्वसनीय बनाती हैं–

- **सामंजस्य:** समान परिस्थितियों में समान प्रश्नों के समान उत्तर लगातार प्राप्त करना महत्वपूर्ण है।
- **सटीकता:** व्यक्ति को यह जानना होता है कि कम जानकारी वाले प्रश्नों के बारे में लोगों से पूछने के आधार पर प्राप्त सामग्री/आंकड़ें का रूप कितना व्यवस्थित है।

पुनरावृत्ति: यदि आपके द्वारा पूर्ण किए गए शोध को अन्य लोग करना चाहें तो क्या समान परिणाम मिलेंगे? यदि उत्तर हाँ है तो आपके शोध में सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण पद्धति की पुनरावृत्ति होती है।

किर्क और मिलर (1986) के निष्कर्षों के अनुसार, विश्वसनीयता तीन प्रकार की होती है। किर्क और मिलर को आधार बनाते हुए, निम्नलिखित भाग में हम प्रत्येक पर चर्चा करेंगे।

26.3 तीन प्रकार की "विश्वसनीयता"

किर्क और मिलर तीन प्रकार की विश्वसनीयता पर चर्चा करते हैं। उनके बीच में भेद को समझने से आपको यह जानने में मदद मिलेगी कि अपने गुणात्मक शोध में एकत्रित सामग्री/आंकड़े क्या विश्वसनीय है।

1) **"अव्यावहारिक" विश्वसनीयता:** यह उन परिस्थितियों को दर्शाती है जिनमें अवलोकन की एक ही पद्धति से बार-बार समान माप प्राप्त होते हैं। नृजातिवृत्त अध्ययन में, सामग्री/आंकड़े की इस प्रकार की "विश्वसनीयता" यह इंगित करती है कि अन्वेषक "प्रशिक्षित" अथवा "राजनीतिक रूप से सही" सूचना प्राप्त करने में सफल रहा है। उदाहरण के लिए, लिंग भेद पर एक अध्ययन किया जाता है और लोगों से यह प्रश्न पूछा जाता है, "क्या आप पुरुषों और स्त्रियों की समानता में विश्वास रखते हैं –" निस्संदेह रूप से, प्राप्त उत्तर है, "हाँ"। यद्यपि, आसपास मौजूद वास्तविकता बिल्कुल भिन्न है। तब हम यह मान सकते हैं कि निष्कर्ष की केवल "अव्यावहारिक विश्वसनीयता" है, क्योंकि लोग किसी को नाराज नहीं करना चाहते, इसलिए लोग वे उत्तर देते हैं जिसे वे "सही" समझते हैं। ऐसी स्थिति में भिन्न प्रकार से प्रश्न पूछना अच्छा होता है, जैसे, "क्या आपको लगता है कि महिला व्यवसायी अपने पुरुष सहकर्मियों जितनी ही योग्य होती हैं–" शायद, इस प्रश्न के उत्तर भिन्न होंगे और वास्तविकता को बेहतर ढंग से दर्शाएँगे।

2) **"ऐतिहासिक" विश्वसनीयता:** यह कुछ समय में किए गए अवलोकन की स्थिरता को दर्शाती है। इसके कुछ उदाहरणों में प्रयोगात्मक मनोविज्ञान और सर्वेक्षण शोध के परीक्षण-पुनरपरीक्षण उदाहरण होते हैं जिनमें सर्वेक्षण को कुछ समय के अंतराल के बाद नए सिरे से यह देखने के लिए किया जाता है कि समान परिणाम मिल रहे हैं अथवा नहीं। हालांकि तीव्र परिवर्तन की दर वाले सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाओं के संदर्भ में किसी समयावधि पर समान परिणाम प्राप्त करने की संभावना कम होती है। लिंग-भेद के उदाहरण को जारी रखते हुए यह देखा गया है कि पिछले कुछ वर्षों में कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी में परिवर्तन हुआ है, कुछ विशेष कार्यों के लिए उनके चयन की उपेक्षा नहीं की जाती है और वास्तव में उन्हें टेलीमार्केटिंग और आतिथ्य सत्कार उद्योग के क्षेत्रों में पुरुषों की तुलना में प्राथमिकता दी जाती है।

3) **"समकालिक" विश्वसनीयता:** यह समान समयावधि में अवलोकनों की समानता को दर्शाती है जिसका विभिन्न पद्धतियों द्वारा समान सामग्री/आंकड़े की तुलना करके मूल्यांकन किया जा सकता है। अव्यावहारिक विश्वसनीयता से भिन्न, समकालिक विश्वसनीयता में सामंजस्य वाले अवलोकन होते हैं। हालांकि किर्क और मिलर हमें एक अत्यंत रोचक विरोधाभास के विषय में बताते हैं; समकालिक विश्वसनीयता प्रायः तब अधिक उपयोगी होती है जब वह अनुपस्थित होती है, दूसरे शब्दों में, किसी समस्या की विभिन्न पद्धतियाँ या अनिगम भिन्न परिणाम देते हैं तो इससे गुणात्मक शोधार्थी समस्या के कुछ अन्य पक्षों के प्रति सावधान हो जाता है जिनके विषय में उसने पहले नहीं सोचा होता है।

26.4 विश्वसनीयता की ओर

कोई गुणात्मक शोधार्थी अपने सामग्री/आंकड़े और उसकी व्याख्याओं की विश्वसनीयता को किस प्रकार बढ़ा सकता है? सामग्री/आंकड़े की रिकार्डिंग और उसके प्रलेखन की गुणवत्ता एक मुख्य घटक होता है। शोधार्थी द्वारा तैयार की गई क्षेत्र टिप्पणियों का प्रलेखन इस प्रकार होना चाहिए ताकि अन्य क्षेत्र कार्यकर्ताओं और सहकर्मियों के साथ उनकी तुलना की जा सके। वेरैमैन (1966) "विस्तृत, स्पष्ट और संवेदी क्षेत्र टिप्पणियों,

शोध प्रक्रियाओं और शोध संदर्भों की रिपोर्ट बनाना, स्रोतों का प्रलेखन, निष्कर्षों के आधारों का प्रलेखन तथा मानवजाति वर्णनकर्त्ता के सामाजिक सिद्धांतों और उसके पूर्वाग्रहों के प्रलेखन'' की सिफारिश करता है। अपनी क्षेत्र टिप्पणियों को दूसरे लोगों के लिए सुगम बनाने के लिए कुछ दिशा निर्देशों का पालन किया जाना चाहिए जो अन्य लोगों को अवलोकित और अवलोकनकर्ताओं की अवधारणाओं को अलग करने में मदद करें।

फ्लिक (1998) ने क्षेत्र टिप्पणियों के पारंपरिककरण के लिए एक प्रारूप तैयार किया है जो नीचे सारणी 26.1 में दिया गया है।

सारणी 26.1: क्षेत्र टिप्पणियों के अभिसामयिककरण के लिए प्रारूप

चिह्न	परंपरा	उपयोग
" "	दोहरे उद्धरण चिह्न	शब्दशः उद्धरण
' '	उद्धरण चिह्न	व्याख्या
( )	कोष्ठक	संदर्भगत सामग्री/आंकड़े अथवा क्षेत्रकार्यकर्ता की व्याख्या
< >	कोणिय कोष्ठक	एमिक अवधारणाएं (सदस्य की)
/ /	काट	एटिक अवधारणएं (शोधार्थी की)
______	ठोस रेखा	भाग का आरंभ तथा अंत।

साक्षात्कारकर्ताओं के प्रशिक्षण द्वारा तथा परीक्षण साक्षात्कारों अथवा प्रथम साक्षात्कार के बाद साक्षात्कार गाईड की जाँच द्वारा साक्षात्कार सामग्री/आंकड़े की विश्वसनीयता में वृद्धि की जा सकती है।

MAADHYAM IAS

अवलोकन के मामले में, क्षेत्र में प्रवेश से पूर्व प्रशिक्षण और अवलोकित वस्तुओं के नियमित मूल्यांकन से निष्कर्षों की विश्वसनीयता को बढ़ावा मिलता है।

संक्षेप में, गुणात्मक शोध में विश्वसनीयता की माँग यह है कि सामग्री/आंकड़े को इस रूप में प्रस्तुत किए जाएं ताकि पाठक प्रतिवादियों की आवाज को शोधार्थी की व्याख्या से स्पष्ट रूप से अलग कर सके। इसकी एक मांग यह भी है कि शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रक्रियाओं की नियमित रूप से जाँच होती रहे ताकि प्राप्त सामग्री/आंकड़े को विश्वसनीय माना जा सके।

अभ्यास 26.1

मान लीजिए कि आपके अध्ययन केंद्र पर एम.एस.ओ.-002 का एक सह-प्रशिक्षु आपके राज्य में शिक्षा की दशा अध्ययन करना और विद्यालय के उत्सव में कुछ इच्छुक लोगों के साक्षात्कारों के आधार पर निष्कर्ष निकालना चाहता है। सामग्री/आंकड़े को शिक्षा तंत्र में होने वाली गतिविधियों के सूचक के रूप में अधिक विश्वसनीय बनाने के लिए आप उसे क्या परामर्श देंगे? अपने सुझावों को एक कागज पर तीन सौ शब्दों में लिखिए ताकि वह सामग्री/आंकड़े में बेहतर विश्वसनीयता प्राप्त कर सके।

अभ्यास 26.1 पूर्ण करने के बाद, अब हम वैधता के मापदंड की ओर बढ़ते हैं। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, वैधता का अर्थ ''सत्य का मूल्य'' है। गुणात्मक शोध के संदर्भ में वैधता, यह दर्शाती है कि प्रतिवादियों के विचारों, मतों, क्रियाओं और अनुभवों को सामग्री/आंकड़े कितनी सटीकता से दर्शाता है।

26.5 प्रक्रियात्मक वैधता

वैधता, शोध उपकरण द्वारा उत्पन्न सामग्री/आंकड़े की सटीकता को दर्शाती है, चाहे वह साक्षात्कार हो या प्रश्नावली अथवा शोध का कोई अन्य माध्यम। यदि हम ये प्रश्न पूछें: क्या मेरे द्वारा प्रयुक्त पद्धतियां मेरे शोध के परिणामों को प्रभावित करती है? क्या मार्ग में कुछ अन्य घटक थे? इन प्रश्नों के उत्तर शोध की आंतरिक वैधता को दर्शाते हैं।

शोध की वैधता इन प्रश्नों के उत्तर देने से भी संबंधित है: स्थिति के विषय में व्यक्ति की अवधारणा कितनी वैध है? व्यक्ति के परिणामों को किस सीमा तक सामान्यीकृत किया जा सकता है? इन प्रश्नों के उत्तर शोध की बाहरी वैधता को दर्शाते हैं।

प्रत्यक्ष वैधता का अर्थ वैधता का सांख्यिकीय माप है। उदाहरण के लिए, श्रेणी I त्रुटि के लिए आवश्यक होगा कि सत्य होने की स्थिति में मान्यता को अस्वीकार कर दिया जाए। श्रेणी II त्रुटि के लिए मत के गलत होने की स्थिति में उसे स्वीकार करना आवश्यक होगा।

मात्रक शोध की तुलना में गुणात्मक शोध के वैध होने की संभावना अधिक है। जब तक पर्याप्त प्रतिदर्शन और अवलोकन में सटीकता है तथा पर्यावरण में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों तथा लोगों को ध्यान से देखा जाए, व्यक्ति की सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण पद्धति की वैधता को स्थापित करना कठिन नहीं है। आप सुरक्षित रूप से कह सकते हैं कि वैधता की अवधारणा सामग्री/आंकड़े द्वारा प्रदत्त सामाजिक वास्तविकता के सही माप की सीमा को दर्शाती है। उर्जा आपूर्ति में अभाव का उदाहरण लीजिए। आपको उर्जा में कमी से संबंधित सांख्यिकी के बारे में भलीभांति पता होना चाहिए, आपको यह भी पता होना चाहिए कि आपकी साख्यिकी संपूर्ण शहर अथवा राज्य में उर्जा की कमी की कितनी वैध अथवा सटीक तस्वीर प्रस्तुत करती है। यदि आपको अपने आँकड़ों की तुलना किसी सरकारी एजेंसी द्वारा एकत्रित आँकड़ों से करनी होती तो उस एजेंसी के आँकड़े विश्वसनीय हो सकते हैं किन्तु उर्जा की कमी की सरकारी परिभाषा आपके शोध में प्रयुक्त भाषा से भिन्न हो सकती है। यदि ऐसा हो तो सांख्यिकी के ये दोनों आँकड़े तुलना के उद्देश्य से वैध नहीं है क्योंकि तुलना दो असमान चीजों के बीच है और इसलिए यह वैध नहीं है। अपने शोध में हम किस प्रकार वैधता प्राप्त कर सकते हैं? अब हम प्रक्रियात्मक वैधता को देखते हैं।

MAADHYAM IAS

प्रक्रियात्मक वैधता के मार्गदर्शी सिद्धांत/दिशानिर्देश

शोध प्रक्रिया में वैधता लाने के लिए, वॉल्कॉट (1990) ने निम्नलिखित दिशा निर्देश दिए हैं.

i) बोलने से बचिए। जब आप क्षेत्र में हो तो अधिक से अधिक सुनिए।

ii) ऐसी क्षेत्र टिप्पणियां तैयार कीजिए जो यथासंभव सटीक हो।

iii) आरंभ से ही लिखना शुरू कर दीजिए ताकि आप उन सूक्ष्म विवरणों को ना भूल जाए जो एक अच्छे शोध को सामान्य शोध को अलग करते हैं।

iv) इस प्रकार लिखिए कि आपके पाठक स्वयं उन बातों को देख सकें जिन्हें आप उजागर करना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में पर्याप्त रूप से सामग्री/आंकड़े उपलब्ध कराइए जिससे पाठक अपने निष्कर्ष स्वयं निकाल सके और आपके द्वारा प्राप्त निष्कर्षों का अनुसरण कर सके।

v) आपकी रिपोर्ट यथासम्भव होनी चाहिए।

vi) यह यथासंभव सरल होनी चाहिए।

vii) अपने सहकर्मियों से अपने निष्कर्षों और प्रस्तुतीकरणों पर प्रतिक्रिया लीजिए।

viii) आपके प्रस्तुतीकरण में किसी एक पक्ष पर अत्यधिक निर्भरता ना होकर अध्ययन किए गए विभिन्न पक्षों में संतुलन होना चाहिए।

ix) आपके प्रस्तुतीकरण में लेखन की सटीक्ता दिखनी चाहिए।

आप क्षेत्र शोध को अपने शोध की वैधता जाँचने के माध्यम के रूप में किस तरह प्रयोग कर सकते हैं? इस प्रश्न के उत्तर के लिए अगला भाग पढ़िए।

26.6 वैधता जाँच के रूप में क्षेत्र शोध

क्षेत्र कार्य की मूल प्रवृत्ति उसका खुलापन तथा स्पष्टता होती है जो आपको अपने सामग्री/आंकड़े को विभिन्न तरीकों से अध्ययन करने में सहायक होती है। किसी क्षेत्र परिस्थिति में, एक लंबे समय तक प्रतिदिन लोगों के साथ नियमित संबंध आपके उभरती हुई परकल्पनाओं की जाँच में मदद करता है। यह पद्धति जाँच के दौरान परिकल्पित अर्थों और लक्ष्य जनसंख्या द्वारा समझे गए अर्थों के बीच विसंगतियों के प्रति अत्यंत संवेदनशील होती है।

क्षेत्र ऐसा इलाका होता है जिस पर अन्वेषक से अधिक अन्वेषणाधीन लोगों का नियंत्रण होता है; शोधार्थी अपने प्रतिवादियों की दया पर निर्भर होता है जबकि, नियंत्रित प्रयोग में प्रतिवादी शोधार्थी की दया पर निर्भर होते हैं। क्षेत्र के साथ आपका संबंध जितना अनुशासित होगा तथा भिन्न, कभी-कभी विरोधी, प्राप्त निवेशों के प्रति आपकी स्वीकृति जितनी अधिक होगी, आपके सामग्री/आंकड़े के विश्वसनीय होने की संभावना उतनी ही अधिक होगी।

संचारात्मक वैधीकरण प्रक्रिया में प्रतिवादियों/अभिनेताओं को विश्वास में लेना होता है तथा उन्हें शोध प्रक्रिया में शामिल करना पड़ता है ताकि आप यह सुनिश्चित कर सकें कि आपने वही समझा है जो वे कहना चाहते थे। अपने प्रतिवादियों को उनके साथ किए प्रथम साक्षात्कार को लिपिबद्ध करके बात या भावना को ठीक से लिखा है। हाँ, इसमें एक खतरा है कि वे बाद में अपनी कही हुई बात से बदल सकते हैं जिनसे उनसे ऐसा लगता हो कि उससे उनकी "छवि" खराब होगी। ऐसे "वास्तविक" उत्तर को अलग करना होता है।

MAADHYAM IAS

26.7 पद्धति उपयुक्त मापदंड

गुणात्मक सामग्री/आंकड़े के मूल्यांकन के लिए क्या "विश्वसनीयता" और "वैधता" पर्याप्त मापदंड हैं? अनेक सामाजिक वैज्ञानिकों का मत है कि इन मापदंडों का यदि अकेले प्रयोग किया जाए तो ये गुणात्मक शोध की मूल प्रकृति को नहीं समझ पाते हैं। उन्होंने ऐसे अधिक "पद्धति उपयुक्त" मापदंड विकसित करने के प्रयास किए हैं जो शोधार्थी को अपने सामग्री/आंकड़े को आलोचनात्मक रूप से देखने में सहायक होते हैं। हम लिंकन और ग्यूबा (1985) के मतों को संक्षेप में प्रस्तुत करेंगे, जिन्होंने अपनी योजना में विश्वसनीयता, प्रत्येयता, निर्भरता, स्थानांतरणता और पुष्टिकरणता जैसे मापदंडों को शामिल किया है। पहले हम केवल दो मापदंडों, विश्वसनीयता और प्रत्येयता पर चर्चा करेंगे क्योंकि लिंकन और ग्यूबा की योजना में ये दोनों सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। प्रत्येयता को बढ़ाने के लिए वे निम्नलिखित बातों की सलाह देते हैं।

i) **प्रवर्द्धित परियुक्ति तथा सतत अवलोकन:** प्रवर्द्धित परियुक्ति, शोधार्थी द्वारा क्षेत्र में बिताए गए समय को दर्शाता है। यह विस्तारित समयावधि के दौरान शोधार्थी को किसी सामाजिक विन्यास की संस्कृति के बारे में जानने में और प्रतिवादियों के साथ संबंध तथा विश्वास विकसित करने में मदद करता है। यदि अन्वेषक क्षेत्र में अत्यधिक सीमित समय बिताए तो विकृतियाँ पैदा हो सकती हैं। यदि शोध आवासीय

विद्यालय विन्यास में किया जाए तो क्षेत्रकार्यकर्ता को गर्मियों की छुट्टियों से पहले वाले माह में परेशानी होगी क्योंकि शिक्षक और विद्यार्थी परीक्षाओं, मूल्यांकन तथा परिणाम निकालने के कारण अत्यधिक दबाव में होते हैं। विद्यालय जीवन के केवल इस एक महीने के अवलोकन द्वारा शोधार्थी को विकृत तस्वीर मिल सकती है। हालांकि, यदि वह इस महीने की गतिविधियों को नहीं देखता तो वह इस सामाजिक विन्यास की समग्रता को नहीं समझ सकता है।

अन्य विकृतियों, शोधार्थी के अपने "पूर्वाग्रहों" के कारण भी होती हैं, जैसे, वह केवल उन शिक्षकों के विचारों को *सुनेगा/सुनेगी* जिसके विचार, उसके अपने विचारों से मेल खाते हों, कुछ प्रतिवादी जान-बूझकर अन्वेषक को प्रसन्न अथवा उसे दुविधाग्रस्त करने या उसे धोखा देने का प्रयास कर सकते हैं। प्रवर्द्धित परियुक्ति शोधार्थी को तथ्य से "कल्पना" को अलग करने में मदद करती है (सतत अवलोकन के लिए बॉक्स 26.2 देखें)।

बॉक्स 26.2: सतत अवलोकन

सतत अवलोकन का आशय उस अवलोकन से है जो शोध को गहनता प्रदान करता है जिससे आवश्यक और अनावश्यक को अलग करने में मदद मिलती है। सतत अवलोकन में किसी भी विचित्र या भिन्न प्रकार की घटना या व्यवहार को देखा जाता है जिससे समस्या पर रोशनी पड़ सकती है। विद्यालय के उदाहरण को आगे बढ़ाते हुए, शोधार्थी आवासीय विद्यालय में बच्चों के व्यवहार को देख सकता है और यह परिकल्पना तैयार कर सकता है कि जिन बच्चों ने विद्यालय में अधिक समय व्यतीत किया है, उनमें विश्वास और आत्मनिर्भरता अधिक होती है। यद्यपि, बच्चों को किसी दूसरे शहर ले जाते समय, शोधार्थी देखता है कि एक "पुराना" विद्यार्थी, जिसे शोधार्थी ने "आत्मविश्वासी" और "आत्मनिर्भर" समझा था, वह शिक्षक का हाथ पकड़े रखता है। इस प्रकार के "असामान्य" उत्तर से संवदेनशील शोधार्थी इस संभावना पर विचार करता है कि इन बच्चों में "आत्मविश्वास" और "आत्मनिर्भरता" उनके विद्यालय की परिचित परिस्थितियाँ में देखने को मिलती है और उस परिचित वातावरण से बाहर, वे किसी नए विद्यार्थी की ही भांति असुरक्षित महसूस करता है।

MAADHYAM IAS

इसके अतिरिक्त, लिंकोला और ग्यूबा विभिन्न पद्धतियों, शोधार्थियों तथा सामग्री/आंकड़े के "त्रिभुजन" की सिफारिश करते हैं (भाग 26.8 देखें)।

ii) **समकक्ष व्यक्तियों का विवरण निर्धारण:** यह उन लोगों के साथ नियमित बैठकों को दर्शाता है जो शोध में शामिल नहीं होते ताकि निष्कर्षो, परिकल्पनाओं और परिणामों पर चर्चा हो सके तथा अंतर्दृष्टि प्राप्त हो सके। यह महत्वपूर्ण है कि विवरण निर्धारक कोई समकक्ष व्यक्ति हो तथा कोई प्राधिकारी न हो (जैसे अपने विभाग का प्रोफेसर) ताकि दृष्टिकोण "आरोपित" न हो सकें। दोस्त तथा सहकर्मी आदर्श विवरण निर्धारक होते हैं। आवासीय विद्यालय का अध्ययन करने वाले शोधार्थी का विवरण निर्धारक कोई ऐसा मित्र होना चाहिए जो किसी विद्यालय जाने वाले बच्चे का पिता/माता भी हो। ऐसी स्थिति में, विवरण निर्धारक, अभिभावक के परिप्रेक्ष्य को शामिल करके शोधार्थी के बोध, चुनौती और उसके निष्कर्षो में योगदान दे सकता है।

ii) **सदस्य जाँच:** लिंकोला और ग्यूबा (1985) के अनुसार, प्रत्येयता की स्थापना में यह तकनीक सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह उसकी प्रक्रिया को दर्शाती है जिसके द्वारा पणधारक समूहों के सदस्यों को श्रेणियों, व्याख्याओं तथा निष्कर्षो की जाँच की अनुमति दी जाती है। इसलिए उनके पास यह जानने का अवसर होता है कि क्या अन्वेषक ने अपनी रचनाओं को उनपर आरोपित किया है अथवा उनके विचारों को भली-भांति व्यक्त किया गया है। सदस्य जाँच मूलतः संचारात्मक वैधीकरण होती है जिसका संदर्भ "वैधता" पर पिछली इकाई में दिया गया है।

iii) **निजवाचक पत्रिका को बनाना:** लिंकोला और ग्यूबा (1985) के अनुसार, निजवाचक पत्रिका एक प्रकार की डायरी होती है जिसमें अन्वेषक नियमित रूप से उसके बारे में सूचना रिकॉर्ड करता है। यह शोधार्थी की सूची, पद्धतियों तथा अंतर्दृष्टियों के संबंध में सूचना उपलब्ध करवाती है और शोध प्रक्रिया की दिशा के बोध के बारे में मूल्यवान गाइड उपलब्ध करवाती है।

v) **विश्लेषणात्मक अधिष्ठापन के अर्थ में नकारात्मक मामलों का विश्लेषण:** विश्लेषणात्मक अधिष्ठापन का आशय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा किसी घटना को समझने के लिए तैयार की गई परिकल्पना को किसी विशिष्ट मामले में अनुप्रयुक्त किया जाता है। यदि यह इस मामले में ठीक नहीं बैठता तो इसे पुनः तैयार करके अनुप्रयुक्त किया जाता है। प्रत्येक नकारात्मक मामला परिकल्पना को परिष्कृत करने में सहयोग देता है। अधिक मामलों का अध्ययन किया जाता है जब तक ऐसी अवस्था नहीं आती कि एक सर्वव्यापी संबंध स्थापित हो जाता है। अतः प्रत्येक नकारात्मक मामले में समस्या को पुनर्गठित या पुनर्परिभाषित करने की आवश्यकता होती है, जिससे प्रत्येयता में वृद्धि होती है।

शोध की निर्भरता की जाँच करने के लिए, ''लेखा परीक्षा'' की अवधारणा का वित्त के क्षेत्र में लेखा परीक्षा की प्रक्रिया के आधार पर प्रयोग होता है। संक्षेप में, लेखा परीक्षा में जिन बातों की जाँच होनी चाहिए, वे हैं:

- सामग्री, उसका एकत्रीकरण तथा रिकॉर्डिंग;
- सामग्री/आंकड़े न्यूनीकरण अर्थात्, मामलों, ज्ञापनों आदि का संक्षिप्तीकरण, संक्षिप्त विवरण;
- सामग्री/आंकड़े का विषयों, परिभाषाओं और संबंधों तथा उनसे प्राप्त निष्कर्षों में पुनर्गठन;
- प्रक्रिया टिप्पणियाँ तथा पद्धति से संबंधित निर्णय;
- व्यक्ति के इरादों के बारे में व्यक्तिगत टिप्पणियाँ, शोध एवं सहभागियों की अपेक्षाओं के बारे में व्यक्ति के विचार; तथा
- शोध का आरंभिक अध्ययन और प्रारंभिक योजनाएँ।

MAADHYAM IAS

लेखा परीक्षा से शोध करने के तरीकों और इसके परिणाम का पता लगता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, गुणात्मक शोध में शोधार्थी की व्यक्तिपरक निष्ठता शामिल होती है और फिर भी, अंततः इसका मूल्यांकन ''वस्तुनिष्ठता'' के संदर्भ में होता है (अर्थात्, लोगों के जीवन, अनुभवों और संबंधों को सामने लाने की इसकी क्षमता)।

अन्य वैज्ञानिकों से भिन्न, गुणात्मक शोधार्थी अध्ययनाधी वस्तुओं पर रिपोर्ट नहीं बनाते बल्कि, वे उन अध्ययनाधीन वस्तुओं, अर्थात्, संस्कृतियों के साथ अपने अंतःक्रिया पर रिपोर्ट बनाते हैं। इसीलिए, किर्क और मिलर (1986) के अनुसार, वस्तुनिष्ठता कठिन होते हुए भी आवश्यक है। इस संदर्भ में, हॉर्वे सॅक्स (1992) के विचारों को उद्धरत किया जा सकता है। सॅक्स का मानना है कि गंभीर कार्य में विवरणों पर विशेष ध्यान दिया जाता है और यदि कोई चीज महत्वपूर्ण है तो उसे देखा जाना चाहिए। सॅक्स के लिए, ''अवलोकन अध्ययन'' का अर्थ समाज के सदस्यों की गतिविधियों को देखने से था, ना कि उनके उद्देश्यों और उनके आंतरिक विचारों में अनुमान लगाने का।

अब हम समाजशास्त्र में बहुलपद्धतियों के प्रयोग को देखेंगे। इसे त्रिभुजन/प्रणाली विज्ञान संबंधी बहुलवाद भी कहते हैं। लेकिन हम अभ्यास 26.2 पूर्ण करने के बाद त्रिभुजन के विषय की ओर बढ़ेंगे।

अभ्यास 26.2

अपने एक ऐसे मित्र का उदाहरण लीजिए जो आपके राज्य में बेरोजगारी की समस्या का अध्ययन कर रही हो। वह रोजगार कार्यालय से बेरोजगारी के आँकड़े एकत्रित करती है। हम उन आँकड़ों को अत्यधिक विश्वसनीय और वार्षिक रूप से रिकार्ड किए हुए मान सकते हैं। उसे एक दशक से संबंधित आँकड़ों का अपना प्रतिदर्श किसी परंपरा को ज्ञात करने के लिए पर्याप्त लगता है लेकिन आप पाते हैं कि एक दशक की अवधि के दौरान बेरोजगारी की परिभाषा में अनेक परिवर्तन हुए हैं। ऐसी स्थिति में आपको उस शोध पद्धति में किस प्रकार की समस्याएँ मिलती हैं? अपने मित्र के शोध में समस्या को देखने में उसकी मदद करने तथा शोध पद्धति के संदर्भ में अपने राज्य में बेरोजगारी की अधिक सटीक तस्वीर प्राप्त करने पर एक टिप्पणी लिखिए।

26.8 त्रिभुजन

अब तक आपको पता लग चुका होगा कि सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण की विभिन्न पद्धतियों के अलग-अलग लाभ और हानियाँ होते हैं। उपरी तौर पर, शोधार्थी होने के नाते आप ऐसी पद्धतियों का प्रयोग करना चाहेंगे जिनकी हानियाँ कम और लाभ अधिक हो। आप किसी एक पद्धति की कमी से बचना भी चाहेंगे और ऐसी किसी दूसरी पद्धति का प्रयोग करना चाहेंगे जो उस क्षेत्र में मजबूत हो जिसमें पहली पद्धति कमजोर थी। साक्षात्कार पद्धति का उदाहरण लीजिए। आप कह सकते हैं कि साक्षात्कार पद्धति में एक कमी होती है कि हमें यह निश्चित तौर पर सदैव पता नहीं होता कि साक्षात्कार देने वाला व्यक्ति सत्य बोल रहा है। साक्षात्कार पद्धति की इस कमी से बचने के लिए प्राप्त की गई सूचना को आप प्रतिवादी के प्रतिदिन के जीवन के अवलोकन की पद्धति के प्रयोग द्वारा जाँच कर सकते हैं जिससे यह पता लग सकता है कि वह व्यक्ति वास्तव में क्या करता है और वह क्या कहता है।

MAADHYAM IAS

अपने शोध की वैधता की जाँच करने के लिए बहुत पद्धतियों के प्रयोग को अधिक विशिष्टतापूर्ण रूप से मध्य-पद्धति अथवा पार-पद्धति त्रिभुजन कहा जा सकता है। इस प्रकार आप विभिन्न पद्धतियों को जोड़कर अपने शोध के विषय की बेहतर तस्वीर प्राप्त कर सकते हैं। सामान्यतः सर्वेक्षणकर्ता अपने काम में त्रिभुजन की तकनीक का प्रयोग करते हैं। त्रिभुजन की अवधारणा के पीछे अत्यंत सरल सिद्धांत है। त्रिभुजन का उद्देश्य ऐसे दो बिंदुओं के बीच माप में सटीकता प्राप्त करने का है जिनके लिए आपको एक विश्वसनीय माप पद्धति की आवश्यकता है। आप प्रतिवलन द्वारा विश्वसनीयता प्राप्त कर सकते हैं किंतु एक ही प्रक्रिया को दोहराने से पूर्व विश्वसनीयता को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है। यहाँ गणित हमारी मदद करता है। यदि हम तीन बिंदुओं के बीच तीन भिन्न माप लें तो हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि बिंदु क और बिंदु ख के बीच की दूरी का माप गणित के इस सिद्धांत के प्रयोग से बिल्कुल सही है कि समभुज त्रिभुज का प्रत्येक कोण 60 का होता है। इसलिए हम तीन भिन्न माप लेकर त्रिभुजन करते हैं। त्रिभुजन का सिद्धांत, सामाजिक शोध में हमें एकत्रित सामग्री/आंकड़े की सटीकता पर कुछ नियंत्रण उपलब्ध करवाता है। त्रिभुजन दो प्रकार का होता है, अर्थात्, प्रणालीतंत्रीय त्रिभुजन और सैद्धांतिक त्रिभुजन।

- प्रणालीतंत्रीय त्रिभुजन हमारे द्वारा शोध प्रक्रिया में प्रयोग की जाने वाली विभिन्न पद्धतियों को दर्शाता है।
- सैद्धांतिक त्रिभुजन उस तरीके को दर्शाता है जिसके द्वारा हम अपने शोध में विभिन्न सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों का उपयोग करते हैं।

अब हम दोनों पर संक्षेप में चर्चा करते हैं।

प्रणालीतंत्रीय त्रिभुजन

'डूइंग सोश्योलोजी: ए प्रैक्टिकल इंट्रोडक्शन' (Doing Sociology: A Practical Introduction) में, हार्वे और मैकडानेल्ड प्रणालीतंत्रीय त्रिभुजन के निम्नलिखित तीन प्रकारों के बारे में बताते हैं–

i) एक शोधार्थी दो या अधिक शोध तकनीकों का प्रयोग करता है।

ii) दो या अधिक शोधार्थी एक ही शोध तकनीक का प्रयोग करते हैं।

iii) दो या अधिक शोधार्थी, दो या अधिक शोध तकनीकों का प्रयोग करते हैं।

आप प्रणालीतंत्रीय त्रिभुजन का प्रयोग निम्नलिखत कार्यों के लिए कर सकते हैं।

- विभिन्न प्रकार की सूचना एकत्रित करने के लिए, जैसे गुणात्मक तथा मात्रिक
- दो या अधिक शोधार्थी एक ही पद्धति का प्रयोग करते हैं और यह जानने के लिए अपने परिणामों की तुलना करते हैं कि क्या वे इस बात पर सहमत है कि उनके निष्कर्ष समान हैं।
- यह जाँचने के लिए कि एक रूप में एकत्रित सामग्री विश्वसनीय तथा वैध है।

सैद्धांतिक त्रिभुजन

त्रिभुजन का यह प्रकार समाजशास्त्रियों में प्रचलित नहीं है। हालाँकि किसी भी सामाजिक समूह के सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों का अध्ययन संरचनावादी तथा अंतःक्रियावादी कोणों से किया जा सकता है। संरचनावादी परिप्रेक्ष्य के लिए सामाजिक समूह में मौजूद संस्थागत संबंधों को देखने की आवश्यकता होती है जैसे ''परिवार''। अन्योन्य क्रियावादी परिप्रेक्ष्य से आप पारिवारिक जीवन की ओर विभिन्न परिवारों के प्रत्येक सदस्य अथवा विशिष्ट पारिवारिक समूह के दृष्टिकोण से देखते हैं।

MAADHYAM IAS

प्रायः एक परिप्रेक्ष्य से देखने वाले समाजशास्त्री शोध के विषय को दूसरे सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य से देखने के इच्छुक नहीं होते हैं। इसलिए हम पाते हैं कि सैद्धांतिक त्रिभुजन काफी असामान्य है।

स्पष्ट रूप से बहुल पद्धतियों अथवा एक से अधिक पद्धति के प्रयोग द्वारा आप प्रत्येक पद्धति के लाभ और उससे उत्पन्न होने वाले विभिन्न प्रकार के सामग्री/आंकड़े का आनंद ले सकते हैं, जैसे सांख्यिकीय और मौखिक विवरण। एक पद्धति के लाभ दूसरी पद्धति की सीमाओं को दूर करने में मदद करते हैं।

अब हम कुछ ऐसे महत्वपूर्ण नैतिक मुद्दों पर बात करेंगे जिन्हें एक गुणात्मक शोधार्थी को ध्यान में रखना चाहिए। अगले भाग पर जाने से पहले अभ्यास 26.3 पूर्ण कीजिए।

अभ्यास 26.3

यह सोचिए कि एक शोध में विभिन्न पद्धतियों का प्रयोग करना क्या सदैव संभव होता है। यह बताइए कि जब आप मात्रिक और गुणात्मक पद्धतियों को संयोजित करने का प्रयास करते हैं तो शोधार्थी होने के नाते, आपको किस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है?

26.9 गुणात्मक शोध में नैतिक विचार

गुणात्मक शोध में क्षेत्र कार्य, एक महत्वपूर्ण प्रणाली विज्ञान संबंधी उपकरण है। क्षेत्र कार्य कुछ विशिष्ट नैतिक मुद्दे उठाता है क्योंकि शोधार्थी अध्ययनाधीन लोगों के जीवन में भाग

लेता है। प्रायः शोधार्थी की "सहभागी" और "अवलोकनकर्त्ता" के रूप में भूमिकाओं के बीच रेखा खींचना प्रायः कठिन हो जाता हैं। कुछ सामाजिक वैज्ञानिकों का मानना है कि शोधार्थी को अपने प्रतिवादियों को यह स्पष्ट रूप से बता देना चाहिए कि वह क्या कर रहा है तथा उसे किसी भी स्थिति में, अपने वास्तविक उद्देश्य को छिपाना नहीं चाहिए। दूसरे शब्दों में, उसे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि वह एक शोध जाँच कर रहा है।

हालांकि, वास्तव में, यह कहना सरल है किंतु करना कठिन है। मान लीजिए, एक शोधार्थी अपने अध्यनाधीन समुदाय में किसी विवाह में सम्मिलित होता है। यह समुदाय के विभिन्न सदस्यों के साथ परस्पर बात करने का और सूचना प्राप्त करने का श्रेष्ठ अवसर होता है। यदि शोधार्थी ऐसे मौके पर अपना उद्देश्य जाहिर कर दें तो सदस्य उससे दूर हो सकते हैं अथवा उन्हें इससे काफी असुविधा हो सकती है। शिल्स (1959) "प्रतिदिन के जीवन के अवलोकन" और " क्षेत्र शोध के अवलोकन" के बीच भेद करने का प्रयास करता है। पहले अवलोकन का आशय उन अवलोकनों से है जो अवलोकनों से उत्पन्न ना होकर उद्देश्यों से उत्पन्न होने वाले सामाजिक संबंधों का परिणाम होते हैं। अवलोकनकर्ता यह संबंध केवल शोध करने के उद्देश्य से ही नहीं बनाता। हालांकि क्या होता जब दैनिक जीवन के अवलोन जिनपर शोध करने का इरादा न हो बाद में शोध के लिये महत्वपूर्ण बन जाते हैं? किडर और जड्ड (1986) एक अस्पताल के आपातकालीन कक्ष में उस शोधार्थी का उदाहरण देते हैं जो वहाँ बलात्कार के पीड़ितों के बीच स्वयंसेवी का कार्य करती हैं। स्वयंसेवी के रूप में उसका कार्य पीड़ितों द्वारा अपनाए गए तरीकों पर अंतर्दृष्टि प्रदान करने में मदद करता है जो ऐसे हालातों से निपटने और उन पर नियंत्रण पाने के वर्तमान मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के विरुद्ध दिखाई पड़ता है। क्या वह अपने निष्कर्षों का प्रयोग कर सकती है? जिस महिला से उसने बात की, उसे यह नहीं बताया गया कि वह शोध कर रही है क्योंकि उनके साथ कार्य करते समय वह शोध ना करके वास्तव में स्वयंसेवी का कार्य कर रही थी (एक अन्य उदाहरण के लिए बॉक्स 26.3 देखें)।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बॉक्स 26.3: शोध में नैतिक महत्व का उदाहरण

किडर और ज़ड्ड (1986) द्वारा उद्धत एक अन्य उदाहरण एक श्वेत अमरीकी महिला शोधार्थी से संबंधित है जिसने आर्थिक रूप से गरीब पड़ोस में रहने वाली अश्वेत महिलाओं के जीवन पर अध्ययन किया। चूँकि शोधार्थी के पास एक गाड़ी थी, उसे प्रायः अश्वेत महिलाओं द्वारा यहाँ-वहाँ ले जाने के लिए कहा जाता था (जैसे– बीमार बच्चों को अस्पताल ले जाना, प्रावधान एकत्रित करना, लांडरी आदि)। उसकी वहाँ अनेक महिलाओं के साथ अच्छी मित्रता भी हो गई थी। उसकी मित्रता और उसके द्वारा इन महिलाओं को दी गई मदद से क्या उसके अवलोकन नैतिक रूप से अधिक सही निकले अथवा कम? अन्वेषक के लिए अत्यधिक परिपक्वता की आवश्यकता है ताकि वह एकत्रित सूचना का दुरुपयोग ना करें और सभी प्रकार की संवेदनशील और निजी सूचना को "सामग्री/आंकड़े" ना मानें।

अलैंडसन (1993) ने निम्नलिखित नैतिक बातों की पहचान की है जिन्हें एक शोधार्थी को ध्यान में रखना चाहिए:

i) अपने प्रतिवादी को शारीरिक अथवा मनोवैज्ञानिक क्षति से बचाना;

ii) अपने प्रतिवादी की निजता और गोपनीयता की रक्षा करना;

iii) अपने प्रतिवादी को अनौचित्यपूर्ण धोखे से बचाना; और

iv) प्रतिवादी की सहमति प्राप्त करना।

उपरोक्त सभी बातें परस्पर संबंधित है। उदाहरण के लिए, अपने प्रतिवादी को शारीरिक/मनोवैज्ञानिक क्षति से बचाने के लिए शोधार्थी को उसकी निजता की भी रक्षा

करना चाहिए और उसे धोखा नहीं देना चाहिए। अलैंडसन (1993) कारागार तंत्र का अध्ययन कर रहे एक शोधार्थी का उदाहरण देता है। चूँकि कुछ कर्मचारी और कैदी अत्यंत संवेदनशील परिस्थिति में थे, उनकी पहचान बताने से उनकी निजी सुरक्षा और भविष्य को गंभीर क्षति हो सकती थी। यही बात समलैंगिकों, वेश्याओं आदि से संबंधित शोध पर भी लागू होती है जिन्हें हमारे समाज पर धब्बा माना जाता है। शोधार्थी को भागीदारों की पहचान हो जाने की स्थिति में उनके लिए संभावित खतरों को ध्यान में रखना चाहिए। कारागार शोधार्थी ने कल्पित नामों का प्रयोग करने का निर्णय लिया और क्षति पहुँचाने वाली सूचनाओं को छोड़ दिया। उसने अपनी भूमिका अथवा संस्था में होने के कारण को नहीं छुपाने का भी निर्णय लिया। "धोखे" (अथवा अपनी पहचान छुपाना) से जुड़ा मुद्दा अत्यंत पेचीदा होता है। ऐसा कहा जाता है कि कई बार शोधार्थी समाज के "बुरे पक्ष" तक पहुँचने के लिए उसमें प्रवेश करता है और उसके "समूह का एक सदस्य" बनता है। हमलोग पत्रकारिता में ऐसी "चालों" के बारे में पढ़ते हैं जिनमें लेखक कैदी "बनकर" "अंदर की सूचना" प्राप्त करने के लिए कारागार में रहता है अथवा वेश्याओं या "सैक्स की दुकानों" के वेश में चल रहे मसाज पार्लर में ग्राहक बनकर जाते हैं ताकि उनके भेद को सबके सामने ला सके। हालांकि गंभीर सामाजिक विज्ञान पत्रकारिता नहीं होता है। अलैंडसन (1993) का मानना है कि धोखा शोध प्रयास के लिए ठीक नहीं है और लोगों की बहुल सामाजिक रचनाओं की खोज के विरुद्ध है।

सहभागियों की "सूचित सहमति" को प्राप्त करने के लिए शोधार्थी को उन्हें अपने शोध के उद्देश्यों के बारे में स्पष्ट रूप से बताना चाहिए और उनके स्वाभाविक भय को दूर करना चाहिए। मान लीजिए कि कोई शोधार्थी अंतधार्मिक विवाह का अध्ययन कर रहा है और ऐसे दंपत्तियों की सहमति प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है जिन्होंने इस प्रकार के विवाह किए हैं। इसमें भाग लेने वाले लोगों के स्वाभाविक डर निम्नलिखित हो सकते हैं: क्या शोधार्थी किसी ऐसी राजनीतिक, धार्मिक संस्था के लिए कार्य कर रहा है जो उनको "पहचानने" या "सबके सामने लाना" चाहती है? क्या उनकी गोपनीयता की रक्षा की जायेगी? क्या उनके परिवारों को समाज में शर्म या तानों का सामना करना पड़ेगा? क्या उनके माता-पिता को उनके छोटे भाई-बहनों के विवाह में समस्याएँ होंगी यदि यह पता लग जाए कि बड़ी बहन ने अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध किसी अन्य धर्म में विवाह किया है?

इन मुद्दों पर खुलकर चर्चा करने से उनकी निजता तथा गोपनीयता की रक्षा करने की रणनीतियों को स्पष्ट करने से शोधार्थी को उनकी "सूचित सहमति" मिल सकती है और वह उन्हें सम्मान दे सकता है तथा उनकी अस्मिता तथा मानवाधिकारों की रक्षा कर सकता है। मानव जाति वर्णनकर्त्ता के लिए नैतिक महत्व की बात को अधिक समझने के लिए अभ्यास 26.4 पूर्ण कीजिए।

अभ्यास 26.4

बेटेली (1975) ने स्वयं को उस गाँव के आवासी ब्राह्मणों के सामने अपनी छवि को दिखा दिया जहाँ तमिलनाडु में उन्होंने अपना क्षेत्र शोध किया। उन्हें ब्राह्मणों के घरों और मंदिरों में जाने की अनुमति थी। जब उनके हरिजन सूचनक उनके पास आते थे तो ब्राह्मण पड़ोसी और जजमान को आपत्ति होती थी तथा उसके बाद बेटेली ने अपने संबंध का तरीका बदल दिया। इस उदाहरण में आपको अध्ययनाधीन लोगों के मूल्यों के सम्मान की समस्या का प्रमाण मिल सकता है। अध्ययनाधीन नागरिकों के हितों के सम्मान के कम से कम दो और उदाहरण खोजिए। आपको बेटेली और मदान (1975) में ये उदाहरण मिल जायेंगे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

26.10 निष्कर्ष

गुणात्मक शोध में वैधता और विश्वसनीयता के मुद्दे समस्याजनक होते हैं क्योंकि गुणात्मक पद्धतियों में शोधार्थी को निजी रूप से काफी कार्य करना पड़ता है। शोधार्थी के लिए निवासी बनने का खतरा, अर्थात्, स्वयं को अध्ययनाधीन लोगों के साथ इतना अधिक संबद्ध करना कि वह उनके हितों तथा उनसे जुड़े मुद्दों के लिए उनका प्रवक्ता बन जाता है, भी महत्वपूर्ण होता है। शोधार्थी को एक ही समय में सहभागी और अवलोकनकर्ता दोनों बनना पड़ता है जो शोध करने के साथ अपने प्रतिवादियों के साथ उनकी शर्तों पर उन्हीं के क्षेत्र में उनसे बात भी करें। ऐसी अनेक तकनीकों की पहचान की गई है जिनके द्वारा शोधार्थी किए गए कार्य का पूर्ण और विस्तृत विवरण रखता है जिसमें अभिनेताओं के विचारों को अपने विचारों से अलग रखा जाता है। इसमें त्रिभुजन की तकनीक शामिल होती हैं। इस प्रणाली में विज्ञानसंबंधी बातों के साथ यह नैतिक आवश्यकता जुड़ी हुई है कि इस तथ्य को पहचानने और इसका सम्मान करने की आवश्यकता है कि शोध से संबद्ध व्यक्ति मनुष्य होते हैं जिन्हें वह सम्मान और आदर दिया जाना चाहिए जिसके लिए प्रत्येक मनुष्य लायक होता है।

26.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

फॉस्टर, जे. 2003, *गुणात्मक शोध,* सोश्योलोजी रिव्यू 12(4)

हॉबसन, ए. 2000, *सामाजिक शोध में बहुल पद्धतियाँ,* सोश्योलोजी रिव्यू 10(2):

शॉ, एम. तथा आर. विडोफील्ड 2003, *नैतिकता और स्वास्थ्य शोध* सोश्योलोजी रिव्यू 12(4):

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 27
गुणात्मक आँकड़ों का आरूपण (Formatting) एवं संसाधन (Processing)

इकाई की रूपरेखा

27.1 प्रस्तावना
27.2 आँकड़ों का गुणवत्तापरक संसाधन और विश्लेषण
27.3 वर्णन
27.4 वर्गीकरण
27.5 संबंध बनाना
27.6 सैद्धांतिक कोडिंग
27.7 विषय-वस्तु का गुणवत्तापरक विश्लेषण
27.8 निष्कर्ष
27.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह अपेक्षा की जाती है कि इकाई 27 को पढ़ने के बाद आप अपने विषय से संबंधित एकत्रित की गई क्षेत्र सामग्री की लघु शोध परियोजना के आँकडों की इयान डे (1993) द्वारा निर्धारित गुणवत्तापरक विश्लेषण का चक्रीय प्रक्रिया (Circular Process of Qualitative Analysis) के अनुसार आरूपण (Formatting) कर सकेंगे और उन आँकड़ों को संसाधित कर सकेंगे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

27.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली इकाई में आपको आँकड़े एकत्रित करने की कुछ महत्वपूर्ण पद्धतियों के बारे में बताया गया है। आँकड़ों को खोजने की प्रक्रिया और जब आँकड़े एकत्रित हो जाएँ तो उनके अध्ययन की प्रक्रिया काफी रोचक और याद विस्मरणीय है। किंतु इसके पश्चात वह क्षण आ जाता है जब क्षेत्र टिप्पणियों और साक्षात्कार के रूप में एकत्रित की गई सामग्री को आरूपित (Formatting) संसाधित (Processed) और विश्लेषित (Analysed) करना जरूरी हो जाता है। इस दिशा में आगे बढ़ते समय शोधार्थी के समक्ष कुछ प्रश्न उठ खड़े होते हैं जैसे, एकत्रित की गई सामग्री को अर्थपूर्ण कैसे बनाया जाए? अन्य लोगों और स्वयं के लिए इसे अर्थपूर्ण बनाने के लिए एकत्रित सामग्री को किस प्रकार व्यवस्थित किया जाए? इन सभी को मैं किस प्रकार तैयार करूँ ताकि वे अपने अध्ययन के विषय के अंतर्गत संक्षिप्त और अर्थवत्तापूर्ण ढंग से प्रस्तुति के लायक हो सकें?

एकत्रित की गई सामग्री की कम से कम मानसिक तौर पर जाँच किए बिना शायद ही कोई शोधार्थी शोध-कार्य प्रक्रिया में आगे बढ़ता हो। अध्ययन किए जाने वाले विषय को व्यवस्थित ढंग से सूचीबद्ध करना उपयोगी रहता है। एलीन (Ellen 1984 : 275) ने जाँच करने के जो तीन तरीके बताए हैं, वे हैं :

i) प्रश्नावली रूपों में कोडीकृत जाँच सूचियाँ
ii) अर्ध-अनौपचारिक (semi-informal) साक्षात्कारों के संदर्भ में प्रयुक्त जाँच सूचियाँ
iii) अनियमित संदर्भ और अनुसंधान के लिए सामान्य दिशा-निर्देश उपलब्ध कराने के लिए पृष्ठभूमि जाँच सूचियाँ

इकाई 27 की प्रस्तावना में इन जाँच-सूचियों का उल्लेख इसलिए किया जा रहा है ताकि अपनी क्षेत्र सामग्री को फॉर्मेट करने और उस पर काम करने से पहले आप उपर्युक्त सूची के अनुसार यह जाँच कर लें कि आपने शोध के लिए जो कार्य करना सुनिश्चित किया है क्या उसे कर लिया है अथवा नहीं। इस शुरुआती कार्य करने के बाद ही आप आँकड़ों का गुणवत्तापरक संसाधन और विश्लेषण कर सकेंगे।

27.2 आँकड़ों का गुणवत्तापरक संसाधन और विश्लेषण

इस प्रक्रिया के लिए आवश्यक मुख्य शब्द है — विश्लेषण। गुणवत्तापरक विश्लेषण के अंतर्गत विचारों और गुणवत्तापरक आँकड़ों के मध्य तार्किकता की आवश्यकता होती है। आप पूछ सकते हैं कि गुणवत्तापरक आँकड़े क्या हैं? इस प्रश्न के उत्तर के लिए बॉक्स 27.1 देखिए।

बॉक्स 27.1: गुणवत्तापरक आँकड़ों की परिभाषा

गुणवत्तापरक आँकड़े का अर्थ है — क्षेत्र अनुसंधान पद्धतियों के द्वारा एकत्रित की गई सामग्री। क्षेत्र अनुसंधान पद्धतियों के बारे में इकाई 26 में पहले ही चर्चा की जा चुकी है। खुलापन और समावेशन इस पद्धति के लक्षण हैं। इस जगत के लोगों के जीवनानुभवों और उनके द्वारा दिए गए अर्थों को जानने के उद्देश्य से शोधार्थी इन पद्धतियों को लागू करता है। गुणवत्तापरक आँकड़ों में किसी एक पद्धति अथवा तकनीक के स्थान पर विभिन्न प्रकार की पद्धतियों और तकनीकों की आवश्यकता होती है। इसका परिणाम यह होता है कि गहन अथवा असरेचित साक्षात्कारों, क्षेत्र टिप्पणियों, असरेचित क्षेत्र डायरियों, व्यक्तिगत दस्तावेजों, फोटोग्राफ आदि अनेक प्रकार के आँकड़े एकत्रित हो जाते हैं। अपनी आरंभिक अवस्था में गुणवत्तापरक विश्लेषण का अर्थ है अत्यधिक मात्रा में आँकड़े एकत्रित करना — भले ही शोधार्थी ने अपेक्षाकृत कम आकार के प्रतिदर्श का इस्तेमाल किया हो।

हम विचारों के बिना गुणवत्तापरक आँकड़ों को विश्लेषित नहीं कर सकते। किंतु हमारे विचारों को विश्लेषित आँकड़ों के द्वारा ही जांचा और आकार दिया जाना चाहिए। जिस प्रकार अंडे को तोड़े बिना और दो अंडों को एक-दूसरे के साथ से फेंटे बिना ऑमलेट नहीं बनाया जा सकता उसी प्रकार विश्लेषण में भी आँकड़ों को छोटे-छोटे हिस्से में तोड़ना होता है और उन छोटे-छोटे हिस्सों को एक-दूसरे के साथ विश्लेषित किया जाता है। इस तरह, आँकड़ों का अपने घटकों के द्वारा समाधान हो जाता है और इसकी चरित्रगत तत्व उजागर हो जाते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आँकड़ों को संसाधित करने संबंधी काम को दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है। ये हैं :

1) आँकड़ों की जाँच करना और उन्हें बदलना (अंडे तोड़ना); और

2) मेटाडाटा (metadata) सृजित करना (दो अंडों को अच्छे से फेंटना)।

पहले कार्यकलाप में (क) आँकड़ों की समग्रता और गुणवत्ता, आँकड़ों (उदाहरण के लिए, साक्षात्कारों, क्षेत्र टिप्पणियों, ऑडियो/वीडियो रिकॉर्डिंग आदि) के बीच संबंध और अनामकता (anonymisation) की जाँच; तथा (ख) आँकड़ों को इस्तेमाल में लाने के लिए उन्हें सबसे अधिक उपयुक्त आरूप में बदलना अथवा रूपांतरित करना शामिल है। इस समय आँकड़ों की समग्रता (completeness) और गुणवत्ता (भौतिक स्थिति, पठनीयता/सुनाई देने संबंधी स्पष्टता, पुनःउपयोग किए जाने के संदर्भ में) की जाँच करने के अलावा शोधार्थी को विश्वस्तता/अनामकता (confidentiality/anonymity), दोबारा इस्तेमाल किए जाना, अंकीय प्रस्तुति के लिए उपयुक्तता आदि से संबंधित किसी भी प्रकार की समस्या पर भी ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

MAADHYAM IAS

ऊपर हमने 'अनामकता' (anonymisation) शब्द का उल्लेख किया है। आइए इस शब्द के अर्थ को समझें। इसका अर्थ है — प्रत्यर्थियों अथवा किसी अन्य व्यक्ति अथवा उसके अस्तित्व की गोपनीयता को बनाए रखना। यहाँ यह चर्चा करना महत्वपूर्ण है कि आप अपने शोध कार्य में 'अनामकता' (anonymisation) को किस स्तर तक बनाए रख सकते हैं। कुछ मामलों में, आँकड़ों में अस्वीकार्य रूप से तोड़-मरोड़ (distortion) किए बिना शोध के विषयों की पहचान को 'छिपाना' (disguse) सरल नहीं है। इसका यह अभिप्राय है कि विशिष्ट आँकड़ों को किसी अन्य उद्देश्य के लिए बहुत ही कम दोबारा इस्तेमाल में लाया जा सकता है। यह अध्ययन की प्रकृति और प्रत्येक मामले की विशिष्ट अपेक्षाओं-आवश्यकताओं के आधार पर निर्भर करता है कि डाटासेट के लिए किस स्तर तक अनामकता को बनाए रखा जाता है। यहाँ पर नैतिक और विधिक प्रकृति का मुद्दा उठ खड़ा होता है क्योंकि यदि छिपाव को बनाए रखने का अनुरोध किया गया है तो यह हमारा नैतिक (अथवा विधिक) दायित्व हो जाता है कि हम उसे बनाए रखें। व्यावहारिक संदर्भ में इसका यह अभिप्राय है कि आपको सभी पहचान स्थापित करने वालों को मिटा देना होगा और जहाँ उपयुक्त हो वहाँ उनके छद्मनाम (pseudonyms) रख देने होंगे। इन छद्मनामों को पूरे अनुसंधान-कार्य में बनाए रखना होगा। हम आपको यह सलाह भी देना चाहते हैं कि आप आँकड़ों में किसी भी प्रकार की निंदात्मक अथवा अपमानजनक टिप्पणियों को पूरी तरह से अवश्य हटा दें।

मेटाडाटा सृजित करने की दूसरी प्रक्रिया का संबंध उपयोगी सूचना से है। इस सूचना को शोधार्थी आँकड़ों को संसाधित करने के दौरान प्राप्त करता है। उदाहरण के लिए, आप लिप्यंतरित सामग्री (transcript) को अपेक्षाकृत अधिक आसानी से पहचानने अथवा साक्षात्कार देने और लेने वालों के नामों और प्रश्न/विषयक संदर्शिका सूचक (टॉपिक गाइड हैडर्स) सही स्थान पर रख सकते हैं जैसे जीवनी संबंधी आदानों के रूप में आँकड़ों की सूचियाँ बना सकते हैं। इस कार्य को करने का मुख्य उद्देश्य है — शोधार्थी को आँकड़ा-समूह में से लिप्यंतरित सामग्री अथवा विशिष्ट इकाइयों के बारे में आसानी से पता चल पाए (सैद्धांतिक कोडीकरण के लिए भाग 27.6 देखिए)। मेटाडाटा प्रकारों की बॉक्स 27.2 में परिभाषा दी गई है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

बॉक्स 27.2: मेटाडाटा के प्रकारों की परिभाषा

शोधार्थी को कच्चे आँकड़ों के समुद्र को पार करना होता है। समुद्र पार करने की प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए (क) आँकड़ों की सूची, और (ख) अभिलेख का कैटलॉग तैयार करना बेहतर रहता है। इसके अलावा, (ग) प्रयोक्ता संदर्शिका (user guide) भी तैयार की जा सकती है ताकि आँकड़ों का कोई भी इस्तेमाल कर सके। इन तीन प्रकार के आँकड़ों को मेटाडाटा कहते हैं। अच्छी अनुसंधान पद्धति वही है जिसमें व्यक्ति क्षेत्र-अनुसंधान के दौरान तैयार की गई सामग्री और पूरे विश्लेषण के दौरान अनुसंधान कार्य को लिपिबद्ध किए रहे। यानी पूरे अनुसंधान में प्रत्येक चरण पर जानकारी को लिखकर रखने को एक अच्छा शोध व्यवहार कहा जा सकता है। आँकड़ा सूची से आँकड़ों की प्रमुख विशेषताओं के बारे में पता चलता है। इससे शोधार्थी को साक्षात्कारों अथवा उसके लिप्यंतरणों के विशिष्ट प्रकारों को पहचानने में मदद मिलती है। उदाहरण के लिए, व्यक्तियों के साक्षात्कार पर आधारित आँकड़ों के मामले में मेटाडाटा सूची में उनकी जन्म तिथि, लिंग, रोजगार, भौगोलिक स्थिति और नमूने के लिए शोधार्थी द्वारा परिभाषित कोई अन्य विशेषता आदि शामिल होंगे।

आँकड़ों को यंत्रवत तरीके से संसाधित किए बिना इन दोनों प्रक्रियाओं को हम कैसे कर सकते हैं? हमें अपने आँकड़ों को विश्लेषित करने की प्रक्रिया में आगे बढ़ना है। विश्लेषण करने का उद्देश्य केवल वर्णन करना ही नहीं है। इसके अंतर्गत वर्णन, व्याख्या, समझ और संभवतः पूर्वानुमान भी शामिल है। वर्णन, विश्लेषण के आधार उपलब्ध कराती है जिसके

आधार पर आगे वर्णन किया जाता है। हम अपने आँकड़ों के आधार पर अवधारणाएँ निर्धारित कर सकते हैं, जिनका हम आँकड़ों के वर्गीकरण के लिए इस्तेमाल करते हैं। हम विभिन्न अवधारणाओं में संबंध निर्धारित कर सकते हैं और ये संबंध ही आगे वर्णन के आधार सिद्ध होते हैं। इआन डे (1993) ने निम्नलिखित आरेख प्रस्तुत किया है जो गुणवत्ता विश्लेषण में शामिल चक्रीय प्रक्रियाओं को दर्शाता है।

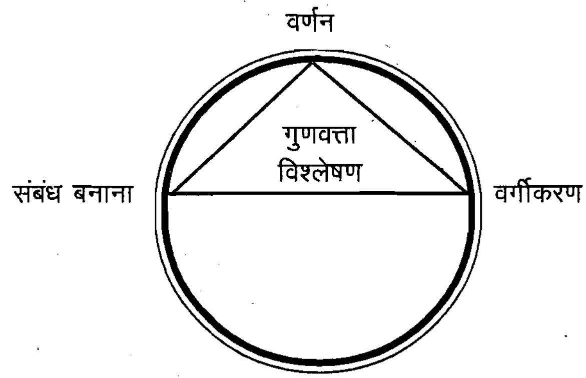

चित्र 27.1 : गुणवत्तापरक विश्लेषण की चक्रीय प्रक्रिया

आइए अब ऊपर बताई गई प्रत्येक प्रक्रिया पर संक्षेप में विचार करें।

27.3 वर्णन

गुणवत्तापरक विश्लेषण के पहले चरण में अध्ययन संबंधी परिघटना (phenomenon) के अंतर्गत विस्तृत वर्णन तैयार करना शामिल है। ग्रीट्ज़ (1973) ने इसके लिए स्थूल वर्णन 'thick description' शब्द गढ़ा है। स्थूल वर्णन के अंतर्गत (क) कार्य का संदर्भ, (ख) कार्य के प्रति काम करने वालों की इच्छा तथा अर्थ; और (ग) वह प्रक्रिया शामिल है जिसमें काम किया जाना है। वैसे, 'स्थूल वर्णन' के विपरीत 'महीन वर्णन' (thin description) में तथ्यों का बहुत ही कम उल्लेख होता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

आइए इन तीनों बिंदुओं पर संक्षेप में विचार-विमर्श करें।

क) **संदर्भः** 'संदर्भ' का अर्थ सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पृष्ठपट के भीतर कार्य की वह स्थिति है जिसमें वह घटित होता है। संदर्भ, अर्थ की मुख्य विशेषता है क्योंकि यदि संदर्भ समझ में आ जाएगा तभी अर्थ को 'सही-सही' बताया जा सकता है।

ख) **आशयः** गुणवत्तापरक विश्लेषण में कर्ताओं द्वारा किए गए कार्य को संगठित किए जाने के तरीके में व्यक्तिपरक अर्थों (subjective meanings) से अनुप्राणित वस्तुनिष्ठ अर्थों की समझ पर बहुत अधिक ज़ोर दिया जाता है।

ग) **प्रक्रियाः** प्रक्रिया के विचार को परिवर्तन से जोड़ा जाता है। प्रक्रिया पर ध्यान केंद्रित करते हुए हम संदर्भ और इच्छा को कार्य के परिणामों की ओर मोड़ते हैं। उदाहरण के लिए, 1980 के दशक के मध्य में पूर्व सोवियत संघ में मिखाइल गोर्बाचोव द्वारा शुरू की गई 'पेरेस्त्रोइका' की नीति से आप संभवतः परिचित ही होंगे। इस नीति का संदर्भ अर्थव्यवस्था और समाज पर राज्य के नियंत्रण के निष्प्रभावी होने के प्रति मोहभंग होने से था। संभवतः अपेक्षाकृत अधिक न्यायपूर्ण, स्वतंत्र व्यवस्था स्थापित करना गोर्बाचोव की इच्छा थी। किंतु इसका परिणाम यह हुआ कि सोवियत संघ का विघटन हो गया और विश्व व्यवस्था, संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में एकध्रुवीय की दिशा में बढ़ने लगी।

27.4 वर्गीकरण

इसमें अत्यधिक मात्रा में एकत्रित आँकड़ों को कुछ निश्चित विशेषताओं के आधार पर 'वर्गों' में छाँटा जाता है। इन वर्गों से वैचारिक ढाँचा तैयार करने में मदद मिलती है, ताकि कार्यों और घटनाओं को बोधगम्य रूप में प्रस्तुत किया जा सके। आपने अवश्य ही जिगसॉ पज़ल्स किए होंगे। आप अपने आँकड़ों को जिगसॉ के सैकड़ों हिस्से मान लीजिए, जिन्हें सावधानी से एक-साथ रखना होगा ताकि इससे जो तस्वीर बने वह आपके द्वारा अध्ययन किए जा रहे सामाजिक यथार्थ को बिल्कुल सही-सही दर्शाएं। आप चित्र को किस प्रकार जोड़ेंगे? हिस्सों को एक प्रकार से वर्गों में बाँटिए। सभी एक-साथ 'नीले हिस्सों' से नीला आकाश बनेगा, 'हरे हिस्सों' से वन और भूरे रंग वाले हिस्सों से ज़मीन। आँकड़ों को समूहों में कुछ निश्चित विशेषताओं के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है। व्यवस्थित किए जाने की यह प्रक्रिया **वर्गीकरण** कहलाती है। अपने अध्ययन को लिखने के समय यही वर्गीकरण आपकी पुस्तक के विषय-क्रम का रूप धारण कर लेगा। (इंडैक्सिंग के लिए बॉक्स 27.5 देखिए) अध्ययन के हिस्सों का वर्गीकरण वे व्यवस्थित उपकरण हैं जिनकी सहायता से उपयोगी/प्रासंगिक विशेषताओं के अनुरूप जिगसॉ पज़ल्स के हिस्सों के ढेर की छँटाई की जा सकती है। वर्गीकरण हमेशा शोध उद्देश्यों के आधार पर होना चाहिए। इस इकाई के 'कोडिंग' संबंधी भाग में चर्चा करते समय ऊपर बताए गए तथ्यों पर विस्तार से बताया जाएगा।

बॉक्स 27.3: सूचीकरण (Indexing)

विषय-क्रम में तीन तत्व होते हैं। ये हैं --- (1) स्मृति-सहायक (mnemonics) (2) संदर्भ; और (3) संरचना। स्मृति-सहायक सूचना का लघु रूप होता है। संदर्भों से यह पता चलता है कि आपको सूचना कहाँ से प्राप्त हुई है और संरचना स्मृति-सहायकों को व्यवस्थित करने की व्यवस्था है। ऐसी स्थिति में, आदर्श व्यवस्था यह रहती है कि सूचना के एक-दूसरे पर आरोपित होने वाले भागों को दोनों वर्गों में डाल दिया जाए। संदर्भ के बारे में यही कहा जा सकता है कि सूचना के स्थान को पहचानने के लिए यथार्थता की उचित मात्रा की आवश्यकता होती है। आप आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी का सहारा ले सकते हैं (खंड 8 में इकाइयाँ देखिए)। स्मृति-सहायकों की संरचना सामान्यतः वर्णक्रम के अनुसार व्यवस्थित होती है और उसे उप-भागों में विभाजित किया होता है। सूचना के एक-दूसरे पर आरोपित होने वाले भाग (ओवरलैपिंग) से बचने के लिए कई वर्गों में क्रॉस-संदर्भों का उल्लेख किया जाता है। उपर्युक्त तीन संदर्भों के अनुसार पूरे विषय-अनुक्रम, आँकड़ों का विश्लेषण करने और शोध सामग्री लिखने के चरण में अवश्य ही उपयोगी सिद्ध होंगे। जिस क्षेत्र में आपने अध्ययन किया है, उसी क्षेत्र में उसी विषय पर दोबारा अध्ययन करते समय आपके अथवा अन्य व्यक्तियों के लिए भी यह उपयोगी सिद्ध होगा।

MAADHYAM IAS

आइए अब हम इआन डे द्वारा बनाए गए चित्र (चित्र 27.1) की तीन प्रक्रियाओं में से संबंध बनाने के बारे में संक्षेप में चर्चा करें।

27.5 संबंध बनाना

वर्णन और वर्गीकरण स्वयं में साध्य नहीं हैं। इनसे हमारे विश्लेषण का लेखा तैयार करने जैसा महत्वपूर्ण उद्देश्य पूरा हो सकेगा। इन अवधारणाओं को ब्लॉक्स बनाने की भाँति देखा जा सकता है, जिन्हें विचारों के चालक के साथ अवश्य संबद्ध करना होता है। हमें विभिन्न चरों के बीच संबंध को देखना होगा और आँकड़ों के प्रतिरूप को देखने की कोशिश करनी होगी ताकि हम नियमितताओं, विचलनों और अपेक्षाओं को पहचान सकें। अब हम 'कोडिंग' विषय पर विचार करेंगे। किंतु इस पर चर्चा करने से पहले आइए अभ्यास 27.1 करें।

अभ्यास 27.1

निम्नलिखित उद्धरण को पढ़िए और यह पता लगाइए कि उनके सामाजिक संदर्भ में अनुष्ठानों को समझने के लिए व्यक्ति को किस प्रकार के आँकड़ों की आवश्यकता है और उन अनुष्ठानों को करने वाले के लिए उनके महत्व को जानने की कोशिश कीजिए–

> धार्मिक व्यवहार पूरी तरह से धार्मिक संदर्भों पर आधारित नहीं होता है किंतु यह सामान्यतः व्यवहार का मानव रूप है जिसे लोकोत्तर वस्तुओं के स्थान पर उनकी अभिप्रेरणा (motivation) से पहचाना जाता है......इसकी स्वायत्ता की स्थिति में, धार्मिक जीवन विशेष रूप से केवल धार्मिक ही नहीं सामाजिक तत्व भी होते हैं......केवल जब (ये तत्व)समाजशास्त्रीय पद्धति के साधन के द्वारा पृथक किए जाते हैं तब समग्र धार्मिक व्यवहार के संकुल में इन्हें विशुद्ध रूप से धार्मिक अर्थ दिया जा सकता है, किसी भी सामाजिक अर्थ से स्वतंत्र होकर! (सिमेल 1950 : 15)

ऊपर उठाए गए प्रश्न का उत्तर देने के लिए आप विक्टर टर्नर (1967 : 181-204) के 'आस्पैक्ट्स ऑफ साओरा रिच्युअल एंड शमनिज़्म' (Aspects of Saora Ritual and Shamanism) शीर्षक आलेख की मदद ले सकते हैं। इस आलेख में टर्नर ने बताया है कि 'उच्च धर्मों में रहस्यवाद, तपस्या, धर्मांतरण और पवित्र भिक्षावृत्ति की परिघटना' (phenomena of mysticism, asceticism, coversion and holy mendicancy in the higher religions) को समझने और इसकी व्याख्या करने के लिए किस प्रकार के आँकड़ों और संबंधों की आवश्यकता है।

27.6 सैद्धांतिक कोडिंग

अपने आँकड़ों का विश्लेषण करने के लिए हमें इसे आपसी बातचीत के तरीके से पढ़ना होगा और हमें लगातार ये प्रश्न करने होंगे – 'कौन?', 'क्या?', 'कब?', 'कहाँ?' और 'क्यों?'। इससे हमारे लिए हमारे आँकड़े खुलेंगे और इनके बारे में सर्जनात्मक ढंग से सोचने में मदद मिलेगी। क्षेत्र सामग्री जब एकत्रित कर ली जाती है तो उसे संसाधित करते समय उन शोधार्थियों को कड़ी मेहनत करनी पड़ती है जिन्हें क्षेत्र आँकड़ों को संसाधित करने का कोई अनुभव नहीं होता। आँकड़ों को संसाधित करने के लिए कई सूचना और संचार प्रौद्योगिकीय साधन-उपकरण अब उपलब्ध हैं। इन साधन-उपकरणों के बारे में हमने खंड 8 में चर्चा की है। यहाँ हम मुख्य रूप से क्षेत्र सामग्री के सैद्धांतिक कोडीकरण के बारे में विचार करेंगे।

अनुसूचियों में शामिल सामग्री को उपयुक्त कोड रूप में बदलना इसका मुख्य काम है। कोडीकरण एक थकाने वाला किंतु आवश्यक कार्य है। इसके अलावा, यह वह क्षेत्र है जिसमें आँकड़ों के मात्रात्मक और गुणात्मक विश्लेषण की पद्धतियाँ एक-दूसरे की पूरक सिद्ध होती हैं। उदाहरण के लिए, टर्नर (1957 और 1961) ने नेम्बू (Ndembu) सामाजिक संरचना के अपने वर्णन में ग्रामीण संघटन के बारे में मात्रात्मक सामग्री का इस्तेमाल किया।

आइए अब हम आँकड़ों को गुणात्मक अर्थवत्ता प्रदान करने वाली कुछ तकनीकों और कार्यविधियों के बारे में चर्चा करें। 'आधार सिद्धांत' (grounded theory) को तैयार करने की दृष्टि से सबसे पहले 'सैद्धांतिक कोडीकरण' (theoretical coding) की कार्यविधि पर चर्चा करते हैं। इस कार्यविधि को ग्लेज़र और स्ट्रॉस (1967) ने शुरू किया और बाद में ग्लेज़र (1978), स्ट्रॉस (1987) तथा कोर्बिन (1990) ने इसे आगे बढ़ाया। इस कोडीकरण में आँकड़ों को विभाजित करने, उन्हें वैचारिक आधार देने और नए तरीके में दोबारा एक-साथ डालने संबंधी कार्य शामिल हैं। आधार सिद्धांत 'समृद्ध, कसावट लिए हुए वह व्याख्या सिद्धांत है जो यथासंभव सटीक यथार्थ को दर्शाता है।' (स्ट्रॉस और कोर्बिन 1990:57)

MAADHYAM IAS

'आधार सिद्धांत' में विश्लेषण में मुख्य रूप से तीन प्रकार के कोडीकरण शामिल हैं। ये हैं:

i) खुली कोडिंग (open coding)

ii) अक्षीय कोडिंग (axial coding); और

iii) चयनात्मक कोडिंग (selective coding)।

आइए इनमें से प्रत्येक के बारे में संक्षेप में विचार करें।

बॉक्स 27.4

ग्लेज़र (Glaser) के द्वारा परिभाषित 'आधार सिद्धांत' (Grounded Theory) की निम्नलिखित चर्चा ग्लेज़र के द्वारा दी गई। (और अधिक वर्णन के लिए एम.एस.ओ-002 के खंड 3 के अंत में दी गई शब्दावली देखिए)। ग्लेज़र के अनुसार आधार सिद्धांत के लक्ष्य इस प्रकार हैं

GT का लक्ष्य अवधारणात्मक विचारों के आधार पर परिकल्पना (hypothesis) का निर्माण करना है जिसे अन्यों के द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है। अवधारणात्मक आँकड़ों की जब हम अमूर्तता के विभिन्न स्तरों पर निरंतर तुलना करते हैं तो परिकल्पनाओं का निर्माण होता है तथा इन तुलनाओं में निगमनात्मक (deductive) सोपान निहित होते हैं। GT का मुख्य लक्ष्य 'सत्य' (Truth) नहीं है बल्कि आनुभविक आँकड़ों (empirical data) द्वारा इस अवधारणा को जानना है कि 'क्या हो रहा है'। इस प्रकार GT के द्वारा व्यवस्थित ढंग से सिद्धांत का निर्माण आँकड़ों द्वारा किया जाता है जिसमें आगमनात्मक तथा निगमनात्मक, दोनों ही प्रकार के विचार शामिल हैं। एक तरह से GT उसी अवस्था के समान है जब शोधार्थी सोच-विचार के पश्चात अपने आँकड़ों में नई परिकल्पना का निर्माण करते हैं। परंतु GT में शोधार्थी पहले से ही निर्मित परिकल्पना के होने का दिखावा नहीं कर सकते क्योंकि पूर्व-निर्मित परिकल्पनाएँ इसमें निषिद्ध हैं (ग्लेसर तथा स्ट्रास 1967)। मुख्यतः शोध में व्यक्ति या मरीज ही जाँच की इकाइयाँ होते हैं परंतु GT में घटना जाँच की ग्लेसर और स्ट्रास 1967)। GT अध्ययन में संख्या कई सौ तक चली जाती है क्योंकि हर प्रतिभागी (participant) अनेक अनुभवों की जानकारी देगा। किसी निश्चित क्षेत्र में जब हम कई घटनाओं की तुलना कर रहे होते हैं, उभर कर आने वाली अवधारणाएँ और उनके मध्य संबंध एक प्रकार से संभावित कथन होते हैं। इस प्रकार ग्लेज़र (2001) के अनुसार GT एक गुणात्मक पद्धति नहीं परंतु एक सामान्य पद्धति है जो किसी भी प्रकार के आँकड़े का इस्तेमाल कर सकती है। संभावित मतों के साथ कार्य के दौरान ज्यादातर GT अध्ययनों को गुणात्मक ही माना जाता है क्योंकि न तो इसमें सांख्यिकीय पद्धतियों का इस्तेमाल होता है और न ही चित्र प्रस्तुत किए जाते हैं। GT के निष्कर्ष, इस प्रकार, तथ्यों की सूचना नहीं देते विभिन्न विचारों के संबंधों के बारे में संभावित मत प्रस्तुत करते हैं, या आनुभविक आँकड़ों से अवधारणात्मक परिकल्पनाओं को एकीकृत स्वरूप प्रस्तुत करते हैं (ग्लेसर 1998)। पारंपरिक रूप से देखा जाए तो सत्यापन की स्थापना GT का मुख्य मुद्दा नहीं है, इसके विपरीत इसका पड़चोलना उसकी उपयुक्तता, सार्थकता, कार्य-क्षमता तथा सुधारात्मकता से होनी चाहिए (ग्लेसर और स्ट्रास, 1967, ग्लेज़र 1978, ग्लेज़र 1998)। उपयुक्तता का संबंध अवधारणाओं का उन घटनाओं के योग्य होना है जिसको वह दर्शा रही है, तथा यह इससे संबंधित है कि कितने गहन ढंग से विचारों और घटनाओं की निरंतर तुलना की गई है।

सार्थकता: एक सार्थक अध्ययन वही है जो भागीदारी यानी प्रतिभागियों में पूरे तौर पर रुचि दिखाए, 'grab' (ध्यान खींचना) को उजागर करे और जो सिर्फ शास्त्रीय रुचि (academic interest) के न हों।

कार्य-क्षमता: एक सिद्धांत तभी कार्य कर सकता है जब वह बताए कि समस्या का निदान भिन्न-भिन्न तरीकों से कैसे हो।

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

सुधारात्मकता: एक सुधारीकृत सिद्धांत में तभी बदलाव आ सकता है जब नए सार्थक आँकड़ों की तुलना पहले से मौजूद आँकड़ों से की जाए। GT कभी भी सही या गलत नहीं होता, यह सिर्फ, कम या अधिक उपयुक्त, सार्थक, कार्य-सक्षम तथा सुधारात्मक हो सकता है, तथा पेपर पाँच के पाठ्यकर्ताओं को इसके सिद्धांतों के आधार पर इसकी गुणवत्ता को जाँच करनी होगी।

GT का लक्ष्य भागीदारों के मुख्य महत्त्व के क्षेत्र को जानना, तथा यह देखना है कि वे निरंतर इसका हल कैसे निकालते हैं। एक प्रश्न जो GT में आप बार-बार पूछते हैं वह है 'क्या हो रहा है'? और 'भागीदारों की मुख्य समस्या क्या है तथा वे इसका हल कैसे ढूँढेंगे?' इन प्रश्नों का उत्तर मुख्य चर (core-variable) तथा उप-मुख्य चर (sub-core variable) एवं उनकी विशेषताओं से, आने वाले समय में, प्राप्त हो जाएगा। अगर आपके शोध का मुख्य लक्ष्य बिल्कुल सही वर्णन देना है तो अन्य पद्धति का चयन करना होगा क्योंकि GT एक वर्णनात्मक पद्धति नहीं है। इसके विपरीत इसका लक्ष्य अवधारणाओं का निर्माण करना है जो समय और स्थान से ऊपर जाकर व्यक्तियों की क्रियाओं का वर्णन करती है। GT के वर्णनात्मक अंश केवल अवधारणाओं पर प्रकाश डालने के लिए होते हैं।

अब हम कोडिंग के तीन प्रकारों की चर्चा की ओर लौटते हैं।

क) **ओपन कोडिंग (open coding)**

ओपन कोडीकरण का अर्थ है — आँकड़ों को नजदीकी से जाँचना ताकि परिघटना को नाम दिया जा सके और उसे वर्गीकृत किया जा सके। साक्षात्कार के लिप्यंतरित संस्करण (interview transcript) में से कोई एक वाक्य अथवा अनुच्छेद के रूप में अवलोकन करके उसे नाम दिया जाए जो परिघटना का द्योतक हो या उसका प्रतिनिधित्व करे। हम 'यह क्या है?', 'यह क्या निरूपित करता है' जैसे प्रश्न कर सकते हैं। इस प्रकार हम तुलना कर सकते हैं ताकि इसी प्रकार की परिघटना को वही नाम दिया जा सके। मान लीजिए, आप यह अध्ययन कर रहे हैं कि बच्चे एक-साथ कैसे खेलते हैं। आपने देखा कि एक बच्चा दूसरे बच्चे से खिलौना छिनकर ले गया और आपने उसे 'छिनना' (grabbing) के रूप में लेबल कर दिया। इसके बाद आपने देखा कि एक और बच्चा अपने खिलौने को छिपा (hiding) रहा है। जबकि तीसरा बच्चा अपने खिलौने को बचाने के लिए अन्य सभी बच्चों के साथ खेलने को ही 'नज़रअंदाज' (avoiding) कर रहा है। इस तरह आप अनगिनत लेबल करते जाएँगे, किंतु इससे आपको कुछ हासिल नहीं होगा। ऐसे आपको अपनी अवधारणाओं को वर्गों के रूप में समूहीकृत करना पड़ेगा। आप स्वयं से यह पूछ सकते हैं कि छीनना 'grabing', छिपाना 'hiding' और नज़रअंदाज़ करना 'avoiding' क्या दर्शाता है और आप इस नतीजे पर पहुँच सकते हैं कि यह एक प्रकार से 'खिलौने को दूसरों के साथ न बाँटने की युक्तियाँ' हैं। इस प्रकार, वर्गों को बनाने के बाद स्ट्रॉस और कोर्बिन (1990 : 70) का यह सुझाव है कि इनकी विशेषताओं को पहचाना जाए और फिर उन्हें आयाम दिए जाएँ। अर्थात विषय-वस्तु को अपेक्षाकृत अधिक संक्षिप्त ढंग से परिभाषित करने के लिए सतत क्रम (continuum) के साथ पहचाना जाए। आइए 'रंग' की श्रेणी को देखें। इसकी विशेषताओं में रंगत (shade) प्रगाढ़ता, वर्ण आदि शामिल हैं। इनमें से प्रत्येक विशेषता को आयाम दिए जा सकते हैं, जिसके अंतर्गत सतत क्रम के अनुसार भिन्नता दर्शाई जा सके। यह रंग ज्यादा से कम प्रगाढ़ता में भिन्नता लिए हुए है, वर्ण की दृष्टि से गहरे से हल्के वर्ण वाला है आदि।

ओपन कोडीकरण करने के कई तरीके हैं। स्ट्रॉस और कोर्बिन ने पहले साक्षात्कार को पंक्ति-दर-पंक्ति विश्लेषित करने का सुझाव दिया है ताकि अवधारणाओं और श्रेणियों को आराम से बनाया जा सके। बाद में इसे एक-एक अनुच्छेद के हिसाब से या फिर पूरे

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

दस्तावेज अथवा मामले के आधार पर भी किया जा सकता है। इस संबंध में यह महत्वपूर्ण है कि आँकड़ों को विभाजित करने के रूप में कोडीकरण के लक्ष्य को किसी भी प्रकार से ढीला नहीं छोड़ना चाहिए और आपस में तुलना करने के लिए श्रेणियाँ बनाने की दृष्टि से पाठ को समझने में ढिलाई नहीं बरतनी चाहिए। खुले कोडीकरण का परिणाम कोडों और श्रेणियों की सूची के रूप में नजर आता है जो पाठ में 'कोड टिप्पणियाँ' के साथ नजर आता है। ये कोड टिप्पणियाँ ही कोडों की विषय-वस्तु की व्याख्या करती हैं। सामग्री पर अवलोकन और इसके बारे में आपके विचार को दर्शाने वाले 'अनुबोधक' (memos) भी आधार-सिद्धांत तैयार करने में काफी मददगार साबित होते हैं।

ख) **अक्षीय कोडीकरण (axial coding)**

खुले कोडीकरण में बनाई गई श्रेणियों में अंतर करना और उनमें सुधार करना अगले चरण के अंतर्गत शामिल है। उन श्रेणियों को चुन लिया जाता है जो आगे विकास के लिए आशा को दर्शाने वाली हों। स्ट्रॉस और कोर्बिन (1990 : 99) ने कोडीकरण प्रतिमान सुझाया है, जो इस प्रकार हैः

क अस्थायी स्थिति

↓

ख परिघटना

↓

ग संदर्भ

↓

घ मध्यवर्ती स्थिति

↓

च क्रिया/अंतर्क्रिया युक्तियाँ

↓

छ परिणाम

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 27.2 : स्ट्रॉस और कोर्बिन (1999 : 99) के अनुसार कोडीकरण प्रतिमान

अक्षीय कोडीकरण में श्रेणियों को अस्थायी स्थितियों के रूप में तैयार किया जाता है। ये स्थितियाँ परिघटना के उदय, परिघटनाओं (अर्थात् अपनी विशेषताओं के रूप में परिघटनाओं) की स्थिति, संदर्भ, संदर्भ के बारे में परिघटना से निपटने, व्यवस्थित करने और उसका उत्तर देने के साथ-साथ की गई क्रिया/अंतर्क्रिया के परिणाम हैं।

विकसित कोडों और संबंधित कोड टिप्पणियों में से अक्षीय कोडीकरण में अनुसंधान प्रश्न के लिए सबसे अधिक उपयुक्त श्रेणियों को चुना जाता है। इसके बाद इन उपयुक्त कोडों के साक्ष्य के रूप में पाठ में कई अलग-अलग अनुच्छेदों का अवलोकन किया जाता है।

ग) **चयनात्मक कोडिंग (selective coding)**

चयनात्मक कोडिंग के रूप में तीसरा चरण कल्पना के उच्च स्तर के अक्षीय कोडीकरण में जारी रहता है। केंद्रीय वर्गीकरण श्रेणी को उद्‌घाटित करना इसका लक्ष्य है। इसी केंद्रीय श्रेणी के इर्द-गिर्द अन्य श्रेणियों को व्यवस्थित किया जाता है। अन्य शब्दों में, यह ''केस की कहानी'' को उद्‌घाटित करती है। कहानी को तैयार करने से पहले केस की कथा को संक्षेप में निर्धारित कर लिया जाता है (कहानी को पहचानने के लिए बॉक्स 27.3 देखिए)। आप देखेंगे कि कोडीकरण दृष्टिकोण अनिवार्यतः एक प्रेरक है। पाठ की विषय-वस्तु और

अर्थ का अध्ययन करने से शोधार्थी कोड और श्रेणियों को निर्धारित करने की व्याख्यात्मक क्षमताओं (interpretative abilities) का इस्तेमाल करता है, उन्हें कल्पना के उच्चतर स्तर तक ले जाता है और उसके बाद वह कहानी अथवा हिसाब-किताब बनाता है जिसे पूरे आँकड़ों पर लागू किया जा सके। शोधार्थी कह सकता है कि 'इन स्थितियों में क्या होता है' (स्ट्रॉस और कोर्बिन, 1990 : 131)।

बॉक्स 27.5: कहानी की पहचानना (स्ट्रॉस और कोर्बिन 1990 : 119-120)

निम्नलिखित उदाहरण कोर्बिन द्वारा एकत्रित किए आँकड़ों के इस्तेमाल के बारे में स्ट्रॉस और कोर्बिन (1990) से लिया गया है। कोर्बिन ने यह अध्ययन किया कि लंबी बीमारी से पीड़ित 20 गर्भवती महिलाएँ अपनी गर्भावस्था को किस प्रकार बनाए रखती हैं। कोर्बिन ने डायबिटीज, हृदयरोग, किडनी संबंधी रोग और चर्म-यक्ष्मा (lupus erythematosus) जैसी बीमारियों से पीड़ित महिलाओं का अध्ययन किया। इन महिलाओं का साक्षात्कार लेते हुए कोर्बिन ने यह महसूस किया कि वे काफी अधिक खतरनाक गर्भावस्था को बनाए रखने में किस प्रकार सक्रिय हैं। उन्होंने जो 'कहानी' पहचानी, वह इस प्रकार है

मुख्य कथा यह दर्शाती है कि भयंकर रोगों से ग्रस्त गर्भवती महिलाएँ गर्भावस्था के दौरान किस प्रकार जोखिम को उठाती हैं। प्रत्येक गर्भावस्था/बीमारी को क्रम के अन्तर्गत (on-course) कहा जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि जोखिम से किस प्रकार निपटा जा रहा है अथवा क्रम से परे (off-course) यह दर्शाता है कि जोखिम से किस प्रकार नहीं निपटा जा रहा है। महिलाएँ स्वस्थ बच्चे के लिए जोखिम उठाने को तैयार होती हैं। इस इच्छा-शक्ति की वजह से जोखिमों को कम करने के लिए उन्हें जो भी आवश्यक लगता है, वे करती हैं देखभाल के संबंध में वे निष्क्रिय प्राप्तकर्ता (passive recipients) नहीं हैं, किंतु प्रबंध प्रक्रिया में वे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे न केवल अपने घर पर अपनी बीमारी और गर्भावस्था की देखभाल करने के लिए उत्तरदायी हैं बल्कि उन निर्णयों को लेने में भी बहुत सक्रिय होती हैं जिनका पालन करने के लिए उन्हें कहा जाता है। बाद वाले मामले में, वे amniocentesis अथवा गर्भावस्था के दौरान ज्यादा मात्रा में दवाइयाँ लेने जैसी कार्यविधियों से बच्चे को होने वाले नुकसान पर विचार करती हैं। वे खतरों के प्रति सावधान रहती हैं और सही काम करने का निर्णय लेती हैं। यदि वे यह सोचती हैं कि डॉक्टर गलत है तो वे वही करती हैं जिसके बारे में उन्हें लगता है कि वे स्वयं ठीक हैं।

आइए अब हम आँकड़ों के आरूपण करने और उन्हें संसाधित करने संबंधी अन्य तकनीक पर विचार करें। यह तकनीक है — विषयवस्तु का गुणवत्तापरक विश्लेषण। इस प्रकार के विश्लेषण के बारे में पढ़ने से पहले अभ्यास 27.2 करना उचित रहेगा।

अभ्यास 27.2

ग्लेज़र और स्ट्रॉस (1967) का आधार-सिद्धांत सामाजिक अनुसंधान के सामान्यीकृत दृष्टिकोण का पोषक है और अनुसंधान में सैद्धांतिक प्रतिपादन के बारे में किसी भी प्रकार की पूर्वधारणा को पसंद नहीं करता है। ऐसे उपागम में कोडिंग की प्रक्रिया स्पष्ट होती है। भाग 27.6 को ध्यान से पढ़िए और अपनी लघु शोध परियोजना से कोडीकरण के तीन प्रकारों के उदाहरण दीजिए।

27.7 विषय-वस्तु का गुणवत्तापरक विश्लेषण

विषय-वस्तु विश्लेषण, साक्षात्कार अथवा मीडिया उत्पाद का रूप लिए हुए पाठ्य-सामग्री का विश्लेषण करने की संस्थापित क्रियाविधि है। यह कोडीकरण से इस अर्थ में भिन्न है कि स्वयं आँकड़ों से श्रेणियाँ बनाने के स्थान पर बाहर से श्रेणियाँ लेकर जहाँ आवश्यक हो,

उनमें आवश्यक संशोधन करते हुए उन्हे प्रयोगाश्रित सामग्री में प्रयोग करने से है। गुणवत्तापरक विषय-वस्तु विश्लेषण का उद्देश्य सामग्री को कम करना है ताकि उसे व्यवस्थित किया जा सके। शिक्षण संबंधी अध्यापकों के अनुभव के बारे में पीटर मैरिंग (1983) के कार्य के आधार पर गुणवत्ता विषय-वस्तु विश्लेषण की तकनीकों का क्लाइव फ्लिक द्वारा किए गए विवरण में से निम्नलिखित सामग्री यहाँ प्रस्तुत की जा रही है :

i) **विषय-वस्तु विश्लेषण का संक्षेपण (Summarising content analysis)** : इसमें सामग्री की काट-छाँट की जाती है। अर्थात इस विश्लेषण में अपेक्षाकृत कम उपयोगी अथवा एक ही प्रकार के अर्थ व्यक्त करने वाले अन्य अनुच्छेदों को हटा दिया जाता है। यह सामग्री को पहली बार कम करना कहा जाएगा। इसी प्रकार काट-छाँट करते हुए सामग्री का एक-साथ सार-संक्षेप किया जाता है। यह सामग्री को दूसरी बार कम करना कहा जाएगा। इस प्रकार सामग्री अपेक्षाकृत अधिक संगत, मितव्ययी और कम होकर इतनी हो जाएगी कि उसे आसानी से व्यवस्थित किया जा सके। सामग्री के इस प्रकार के संपादन से सार-संक्षेप प्राप्त किया जा सकता है।

ii) **व्याख्यात्मक विषय-वस्तु विश्लेषण (Explicative content analysis)**: यह उपर्युक्त उल्लिखित विश्लेषण के बिल्कुल विपरीत है। यहाँ उलझे हुए, परस्पर विरोधी अथवा अस्पष्ट विवरणों की उनके संदर्भ अथवा पाठ के अन्य भागों के संकेतों (जो उनके अर्थों को स्पष्ट करने में सहायक हो), को ध्यान में रखते हुए व्याख्या की जाती है अथवा उन्हें स्पष्ट किया जाता है।

iii) **विषय-वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा बनाना (Structuring content analysis)**: इस प्रकार के विश्लेषण में शोधार्थी उन श्रेणियों को लागू करता है जो शोध प्रश्न तैयार करने और उसके अनुसार सामग्री को व्यवस्थित करने के दौरान निर्धारित की गई थी। इस प्रकार गुणात्मक विषय-वस्तु विश्लेषण से शोधार्थी को श्रेणियों की एकसमान योजना का इस्तेमाल करते हुए अत्यधिक मात्रा के पाठ को व्यवस्थित करने में मदद मिलती है। यह पूरी शोध-सामग्री में शामिल विभिन्न केसों में तुलनात्मक अध्ययन में सहायक सिद्ध होती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

गुणवत्तापरक विश्लेषण के उदाहरणों के लिए बॉक्स 27.6 देखिए।

बॉक्स 27.6: गुणवत्तापरक विषय-वस्तु विश्लेषण के उदाहरण (फ्लिक 1998: 194 से)

निम्नलिखित उदाहरण फ्लिक (1998) में उद्धृत हैं और अध्यापन व्यवहार के संबंध में अध्यापकों के अनुभवों के बारे में पीटर मेरिंग (1983) द्वारा एकत्रित आँकड़ों से संबंधित है।

उदाहरण : विषय-वस्तु विश्लेषण का संक्षेपण

बेरोजगार अध्यापक के साक्षात्कार से इस कथन 'और वास्तव में, इसके विपरीत, मैं पहली बार अंततः अध्यापन करने को बहुत उत्सुक था।' को छोटा करके 'इसके विपरीत, व्यवहार को बहुत इच्छुक' किया और इसे सामान्यीकृत करते हुए 'जबकि अध्यापन करने के लिए मैं उत्सुकता से इंतजार कर रहा था' यह कथन कि 'इसलिए मैं पहले से ही बहुत इंतजार कर चुका था, सेमिनार स्कूल में जाने के लिए, जब तक कि मैं पहली बार पढ़ा नहीं चुका।' (1983 : 104) को छोटा करके 'अंततः अध्यापन करने के लिए इंतजार' और 'अध्यापन के लिए उत्सुकता से इंतजार करना' के रूप में सामान्यीकृत किया जा सकता है। इन दोनों दो प्रकार के सामान्यीकरणों में से दूसरे को हटा दिया और उसके स्थान पर यह शामिल किया' अध्यापन कार्य दहशत की बजाए एक मज़ेदार अनुभव था (practice not experienced as shock but as big fun) (1983:59)। इस प्रकार, सामान्यीकरण के स्तरों से संबंधित दोहराने वाले विवरणों को छोड़ते हुए स्रोत पाठ में कमी की जा सकती है।

उदाहरण : व्याख्यात्मक विषय-वस्तु विश्लेषण

साक्षात्कार में एक महिला-अध्यापक ने यह कहते हुए अध्यापन में अपनी कठिनाइयों को व्यक्त किया कि 'वह सफल सहयोगियों की तुलना में, एक' मनोरंजन कर्त्ता (entertainer) की छवि नहीं रखती हैं। (1983:109) इस अवधारणा का इस्तेमाल करते हुए यह जानने के लिए कि वह क्या कहना चाहती हैं, दो अलग-अलग कोशों की सहायता से 'entertainer' के संबंध में विभिन्न परिभाषाएँ बनाई गईं। इसके बाद इस विवरण में जिस अध्यापक की विशेषताएँ उपयुक्त प्रतीत होती थीं, उन्हें साक्षात्कार में अध्यापक द्वारा दिए गए विवरणों में से छांटा गया और अनुच्छेद भी देखे गए। इन अनुच्छेदों में शामिल ऐसे सहयोगियों के विवरण के आधार पर व्याख्यात्मक वाक्यांश बनाया गयाः मनोरंजन कर्त्ता वह है जो बर्हिमुखी, स्फूर्तिवान, ज़िंदादिल और आत्मविश्वास से भरपूर मनुष्य है। (an entertainer type is somebody who play the part of an extroverted, spirited, sparkling and self-assured human being) (1983 : 74)। जिस संदर्भ में इस अवधारणा को इस्तेमाल किया गया है, उसपर इसे दोबारा लागू करते हुए इसकी व्याख्या की गई।

इकाई 27 के निष्कर्ष तक पहुँचने से पहले एक अभ्यास के द्वारा यह जाँचने का प्रयास किया जा सकता है कि क्या आपको विषय-वस्तु विश्लेषण संबंधी विचार पूरी तरह समझ आ गया है अथवा नहीं।

अभ्यास 27.3

सेरनटकोस (1998 : 280-281) के अनुसार, विषय-वस्तु विश्लेषण में अनुसंधान की अन्य पद्धतियों की भाँति एक-समान चरण शामिल हैं। इसका यह अर्थ है कि इसमें अनुसंधान के क्षेत्र को चुनना, अनुसंधान की डिजाइनिंग, आँकड़े संकलित करना और उनका विश्लेषण करना शामिल है। प्रत्येक चरण की विषय-वस्तु, अनुसंधान की अन्य पद्धतियों के विषय-वस्तु विश्लेषण से भिन्न है। विषय-वस्तु विश्लेषण में दस्तावेजों, पुस्तकों, शोध-पत्रिकाओं और अन्य प्रकार की लिखित सामग्री की विषय-वस्तु का (गुणात्मक अथवा मात्रात्मक) विश्लेषण किया जाता है। यह पता लगाने के लिए कि किन श्रेणियों के लोगों ने किन धारावाहिकों (सीरियल) के सभी एपिसोड देखें हैं और एक भी एपिसोड देखना नहीं छोड़ा है, टेलीविजन धारावाहिकों का अध्ययन विषय-वस्तु विश्लेषण का उदाहरण है। क्या आप अध्ययन के कम से कम पाँच और उदाहरण दे सकते हैं, जिनमें अनुसंधान के विषयों की अभिवृत्तियों, उद्देश्यों/प्रेरणाओं, और मूल्यों की खोज करने के लिए विषय-वस्तु विश्लेषण की पद्धति का इस्तेमाल किया जा सके।

MAADHYAM IAS

27.8 निष्कर्ष

इकाई 27 में आपको आँकड़ों को विश्लेषित करने और उनकी व्याख्या करने के बारे में कुछ महत्वपूर्ण पद्धतियों से परिचित कराया गया है। यदि आप अपने आँकड़ों को सटीक और परिशुद्ध विश्लेषण करेंगे और उन्हें अकाट्य रूप में प्रस्तुत करेंगे तो आँकड़े स्वयं समृद्ध और रोचक सिद्ध हो सकेंगे। स्ट्रॉस और कोर्बिन के दृष्टिकोण को उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत करते हुए इस इकाई में आपको बताया गया है कि अत्यधिक मात्रा में एकत्रित आँकड़ों को एकीकृत करने के लिए हम किस प्रकार चरणबद्ध तरीके से आगे बढ़ते हुए आधारभूत सिद्धांत तैयार करें जो यथार्थ की व्याख्या करने और अंदाजा लगाने में हमारी मदद कर सकें। गुणात्मक विषय-वस्तु विश्लेषण में बताया गया है कि अनुपयोगी और अनावश्यक प्रतीत होने वाले आँकड़ों को चुनने और संपादित करने के लिए पहले से ही विद्यमान श्रेणियों को आँकड़ों पर किस प्रकार लागू किया जाता है ताकि मुख्य अनुसंधान प्रश्नों को भली प्रकार से समझा जा सके और उन्हें भली प्रकार से उद्घाटित किया जा सके।

27.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Silverman, David. 1993. *Interpreting Qualitative Data: Methods for Analysing Talk, Text and Interaction*. Sage Publications: New Delhi (गुणवत्तापरक अनुसंधान के विभिन्न आयामों और तर्कों के साथ-साथ पाठों तथा साक्षात्कार आंकड़ों का विश्लेषण करने की तकनीकों के लिए)

Singleton, Royce A. and Bruce C. Strais. 1999. *Approaches to Social Research*. Oxford University Press: New York (उत्तरों को जानने में रुचि रखने वाले शोधार्थियों के लिए प्रश्न-बैंक)

MAADHYAM IAS

इकाई 28
गुणात्मक आंकड़ों का लेखन

इकाई की रूपरेखा

28.1 प्रस्तावना

28.2 लेखन की समस्याएँ

28.3 समझिए और फिर प्रस्तुत/व्यक्त कीजिए

28.4 अवलेखन और आलेखन

28.5 शीघ्र लिखें

28.6 लेखन शैलियाँ

28.7 प्रथम प्रारूप

28.8 निष्कर्ष

28.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा है कि आप इकाई 28 पढ़ने के बाद, अपने शोध परिणामों को लिखने के लिए निम्नलिखित आवश्यक निवेशों को समझ सकेंगे:

- उन समस्याओं को समझना जो अपने शोध परिणामों को लिखना आरंभ करते समय आपके समक्ष आने की संभावना है;
- सदैव यही बेहतर होता है कि पहले आप अपने मस्तिष्क में जो है, उसे समझें और फिर उसे लिखकर व्यक्त करने का प्रयास करें;
- लिखने के कार्य में विलंब न करें;
- विभिन्न लेखन शैलियों को समझें; तथा
- पहली बार में लिखी गई सामग्री केवल प्रारूप होता है।

28.1 प्रस्तावना

इकाई 28 मुख्यतः शोध विद्यार्थियों और समाजशास्त्रीय तथा सामाजिक मानव विज्ञान संबंधी शोध के क्षेत्र में नवदीक्षितों के लिए लिखी गई है। इस प्रकार का शोध लेखन अधिकतर गुणात्मक होता है। कुशल, सुप्रसिद्ध लेखकों के साथ, इसमें गुणात्मक शोध लेखन, शब्द जगत तथा प्रयिक्षुता जैसे मुद्दों पर चर्चा की गई है जिनपर अधिक लोगों ने नहीं लिखा है। इस इकाई में पाठ की रचना, लेख जो क्षेत्र शोध का उत्पाद होता है, की कार्य-प्रणाली पर चर्चा की गई है।

28.2 लेखन की समस्याएँ

किसी पाठ में "गुणात्मक शोध लेखन" अथवा शोध पद्धतियों पर गोष्ठी का मुद्दा कितना महत्वपूर्ण है? शायद, अधिक नहीं, जैसा कि शोध पद्धतियों पर लिखी अधिकांश पुस्तकों की विषयवस्तु अथवा क्षेत्र शोध स्तर के पूर्व और उत्तर पाठ्यक्रमों पर सरसरी दृष्टि डालने से पता लगता है। ये पुस्तकें और लेख अंतर्दर्शी रूप से मानते हैं कि लेखन कार्य में कोई समस्या नहीं है। जिस भाषा में पाठ लिखा जाता है, उस भाषा का जानकार तथा तकनीकी शब्दावली पर अच्छी पकड़ रखने वाला व्यक्ति लिख सकता है, यदि उसके पास आवश्यक

MAADHYAM IAS

तथ्य एवं सैद्धांतिक उपकरणों की जानकारी है। इस सोच के साथ, लेखन कोई समस्या नहीं है; महत्वपूर्ण बात यह है कि सामग्री/आंकड़े को एकत्रित तथा विश्लेषित कैसे किया जाए। यह सचमुच, गंभीर अध्ययन का विषय है। अब हम जानते हैं कि शोध पद्धतियों पर लिखी पुस्तकों का समग्र बल सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण की तकनीकों, विश्लेषण के तरीकों तथा सामग्री/आंकड़ें के प्रस्तुतीकरण पर क्यों होता है।

किंतु इसके ''शांत'' पक्ष पर नजर डालें– मैं इसे ''शांत'' इसलिए कहता हूँ क्योंकि शोधार्थी, लेखक और ग्रंथकार, प्रायः, कम से कम, सार्वजनिक रूप से इसके विषय में बात नहीं करते हैं। यदि लेखन कार्य इतना सरल है तो ऐसा क्यों होता है कि प्रश्नावली में खुले प्रश्न शिक्षित प्रतिवादियों द्वारा अनुत्तरित रह जाते हैं अथवा प्रायः ''लागू नहीं'' – इन दो शब्दों में उत्तर दे दिया जाता है; शोधार्थी, अपने प्रतिदर्श का आकार यह सोचकर बढ़ा देते हैं कि कुछ प्रतिवादी निश्चित रूप से प्रश्नों के उत्तर देंगे, अथवा खुले प्रश्नों के स्थान पर बंद प्रश्न डाल देते हैं क्योंकि इनका उत्तर देना अधिक सरल होता है। अन्यथा, जैसा कि प्रायः होता है, प्रश्नावली को निर्धारित रूप से दिया जाता है, जिसमें अन्वेषक, प्रतिवादी के समक्ष प्रश्न पढ़ता है और उसके उत्तर को शब्दशः लिख लेता है। प्रश्नावलियों तथा सूचियों के साथ कार्यरत रहे शोधार्थी बार-बार बताते हैं कि प्रतिवादियों को लिखने का कार्य बोझिल तथा कठिन लगता है। यद्यपि, उन्हें उन विषयों के बारे में बात करने में प्रसन्नता होती है, जिनपर शोधार्थी को जानकारी चाहिए, यदि वे विषय उनकी संस्कृति में वर्जित नहीं हैं। खुले प्रश्नों के अनुत्तरित रह जाने या लापरवाही से उत्तर दिए जाने का यह अर्थ नहीं है कि प्रतिवादी इनके उत्तर देना नहीं चाहता या उनका उत्तर देने के मामले में वह गंभीर नहीं है, बल्कि यह है कि उसे लिखना मुश्किल, बोझिल और तनावपूर्ण लगता है अथवा उससे उसकी शिक्षा के स्तर का खुलासा हो जाता है। उसे तथ्य लिखने में इसलिए भी भय हो सकता है क्योंकि ''लिखित रिकॉर्ड'' के वैधिक महत्व की पृष्ठभूमि में, लिखित सामग्री प्रमाण होती है जबकि मौखिक नहीं। किंतु यह भिन्न विषय है, जिसपर यहाँ बात नहीं की जाएगी।

MAADHYAM IAS

लेखन कार्य, शोधार्थियों के लिए परीक्षा तथा तकलीफ का दौर हो सकता है

बॉक्स 28.1: लेखन – विचारण और पीड़ा का दौर

यद्यपि मैं इस बात से तभी से अवगत हुं (1977) जब मैंने चीनी अध्ययन में एम फिल की डिग्री के लिए पढ़ा था, किंतु केंब्रिज में, सामाजिक मानव विज्ञान में डॉक्टरेट के शोध प्रबंध (1988 में) पर कार्य करते समय मैं, गुणात्मक शोध की समस्याओं तथा शोधार्थियों के कष्ट से पूर्णतः अवगत हुआ। क्षेत्र कार्य से लौटे लोगों के लिए, उन दिनों केम्ब्रिज सामाजिक मानव विज्ञान विभाग में 'गोष्ठी लेखन' शीर्षक से गोष्ठी होती थी, जिसमें डॉक्टरेट के विद्यार्थी अपने क्षेत्र कार्य के अनुभवों तथा अपने द्वारा लिखित शोध प्रबंध के अध्यायों को प्रस्तुत करते थे। चूँकि शिक्षकगण भी प्रायः इन गोष्ठियों में उपस्थित रहते थे, तो प्रस्तुत करने वाले प्रस्तुतकर्ता अत्यधिक घबराए रहते थे, किंतु वे अच्छी तरह जानते थे कि वरिष्ठ विद्वानों के शैक्षिक हस्तक्षेप से उन्हें बहुत लाभ मिलेगा। इस गोष्ठी समूह में विद्यार्थियों का अनौपचारिक सवाद इस पर केंद्रित रहता था कि 'लेखन कैसा हुआ है'। मैं उनके लेखन के अनुभवों को ध्यान से सुनता था और क्षेत्र कार्यकर्ताओं की भांति, उनके द्वारा अनुभव की जाने वाली 'लेखन समस्याओं' पर उनसे प्रश्न करता था। क्या वह तकनीकी शब्दों की बैटरी, शब्दावली थी? अथवा सही व्याकरण? या, सिद्धांत? अथवा, कोई अन्य हिचक? मानव विज्ञान संबंधी तथ्यों का जहाँ तक संबंध है, मुझे वे शोधार्थी आश्वस्त लगते थे क्योंकि मैं उनके साथ काफी समय रहकर उन्हें अच्छी तरह जान गया था। वास्तव में, केम्ब्रिज पर्यवेक्षक, कम से कम, एक वर्ष के आवास पर बल देते थे तथा दो वर्ष या अधिक अवधि तक वहाँ रहकर अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के उदाहरण क्षेत्र कार्य पूर्व गोष्ठियों में दिए जाते थे।

निश्चित रूप से, चीन, जापान, कोरिया, बांगलादेश, स्पेन, रूस, कुछ अफ्रीकी देशों तथा ईरान से आए विद्यार्थियों की अंग्रेजी कमजोर थी, जिसके कारण वे अपनी बात ठीक से व्यक्त नहीं कर पाते थे। कई बार उन्हें अंग्रेजी में भाववाचक आलेखों को लिखने और समझने में परेशानी होती थी। वे अपने शोध प्रबंध भी धीमी गति से लिखते थे। चूकिं वे आसानी से महंगी शिक्षा ले सकते थे इसलिए उनमें से कुछ लोग अंग्रेजी में निजी ट्यूशन के लिए जाते थे और व्यावसायिक संपादकों की सेवाएं लेते थे। इसलिए उपरी तौर पर गैर अंग्रेजी भाषा वाले विद्यार्थियों की समस्या अंग्रेजी भाषा पर उनकी अपर्याप्त पकड़ के कारण थी, जिसमें उन्हें अपने शोध प्रबंध लिखने पड़ते थे। यह जानने के लिए कि उनकी समस्या विदेशी भाषा में योग्यता के अभाव के कारण थी या किसी अन्य कारण से, मैं उनसे प्रायः पूछता था कि यदि उन्हें अपने शोध कार्य अपनी भाषा में लिखने होते तो वे कैसा लिखते? अधिकांश ने कहा कि वे अपनी मातृभाषाओं में पत्र तो लिख सकते थे किंतु शोध प्रबंध नहीं। यहाँ व्यक्ति यह सोच सकता है कि अंग्रेजी भाषा बोलने वालों के समक्ष 'लेखन बाधा' नहीं होती किंतु यह सत्य नहीं है। अन्य लोगों की भांति, उनके साथ अपने साक्षात्कारों से मैंने जाना कि वे भी लेखनकार्य को कठिन प्रक्रिया बताते थे, चाहे वह उनकी अपनी भाषा में हो अथवा किसी विदेशी भाषा में।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यद्यपि जिस भाषा में पाठ लिखा जाना है उस भाषा पर पकड़ होना महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है इसका अभाव, गुणात्मक शोध लिखने में एकमात्र बाधा नहीं है। चूँकि लेखन कार्य में लोगों के समक्ष वास्तविक समस्याएँ आती हैं, यह एक कारण हो सकता है कि उनमें से अनेक लोग साहित्यिक चोरी का मार्ग अपनाते हैं। मात्रिक तथ्यों से संबद्ध शोधार्थियों के समक्ष शायद वे समस्याएं नहीं आती जो गुणात्मक शोधार्थियों के सामने आती हैं, इस बिंदु पर मैं बाद में लौटूँगा। ऐसा देखा गया है कि कुछ निर्धारित प्रारूप–लघु अभिकल्पनाएँ–मात्रिक शोधों के लिए उपलब्ध होते हैं जो शोध के प्रत्येक अंश का मार्गदर्शन करते हैं। यद्यपि ऐसा गुणात्मक शोध के साथ नही होता है क्योंकि इसके प्रारूप अध्याय, भंग और उपभाग उस सामग्री/आंकड़े से प्राप्त होते हैं जो अनवेषक के पास उपलब्ध होता है। चूँकि प्रत्येक क्षेत्र कार्य विशिष्ट होता है, उसी प्रकार मानवजाति वर्णन का प्रत्येक अंश भी भिन्न होता है।

MAADHYAM IAS

अभ्यास 28.1 पूर्ण कीजिए और देखिए कि यदि आप शोधार्थी हों तो किस प्रकार की समस्याएँ सामने आएँगी।

> **अभ्यास 28.1**
>
> क्षेत्र शोध पर चार पृष्ठ लिखिए। लिखने के बाद, सामने आई समस्याओं पर विचार कीजिए। प्रत्येक समस्या के बारे में संक्षेप में लिखिए।

28.3 समझिये और फिर प्रस्तुत/व्यक्त दीजिए

"स्थूल विवरण" के विचार के समर्थन में लिखे अपने प्रसिद्ध लेख में (1973), क्लीफोर्ड गीट्र्ज कहता है कि क्षेत्र कार्यकर्ता पहले समझता है और उसके बाद कार्य करता है। समझने का कार्य कुछ तकनीकों और पद्धतियों द्वारा किया जाता है जो मानव विज्ञान के उपकरण हैं। मानव विज्ञान संबंधी अपनी मानक पाठ्य पुस्तकों में, पेल्टो (1970) लिखता है कि क्षेत्र कार्यकर्ता के पास किसी व्यवस्थित विशिष्ट रूप में तकनीकें नहीं होती हैं। उसे केवल अपने सैद्धांतिक प्रशिक्षण के दौरान सीखी गई विभिन्न प्रकार की क्षेत्र कार्य तकनीकों और पद्धतियों का ही ज्ञान होता है। किंतु, जैसा हम पहले बता चुके हैं, वह यह भी जानता है कि प्रत्येक क्षेत्र कार्य न केवल विशिष्ट होता है बल्कि, यह मूलभूत क्षेत्रकार्य तकनीकों और पद्धतियों के साथ प्रयोग भी होता है। किसी विशेष क्षेत्रकार्य परिस्थिति में, क्या कोई

विशिष्ट तकनीक या पद्धति उपयोगी होगी, यह उस समय अध्ययन का विषय समुदाय में मौजूद परिस्थितयों पर निर्भर करेगा। अध्ययन के संदर्भ के आधार पर, क्षेत्रकार्यकर्त्ता विभिन्न तकनीकों और पद्धतियों को मिला देगा। वह नई तकनीकों और पद्धतियों के साथ भी प्रयोग करेगा अथवा पहले से मौजूद उपकरणों में महत्वपूर्ण योगदान देगी। समाजशास्त्रीय आलेखों का एक महत्वपूर्ण अंश, क्षेत्रकार्य में तकनीकों और पद्धतियों पर रिपोर्ट से संबंधित अपने अनुभवों का विवरण होता है (बेटेली एवं मदान, सं. 1975; श्रीवास्तव, 1991; थापन, सं. 1988; श्रीनिवास आदि, सं. 2002)।

प्रस्तुतन (rendering) से आशय, शिक्षा जगत् को, जनता को तथा सभी संबद्ध लोगों को कुछ देना है। हम अनेक प्रकार के कार्यों द्वारा दे सकते हैं, जैसे, हम शैक्षिक रिपोर्ट, लेख, विनिबंध लिख सकते हैं; हम भाषण दे सकते हैं और अपने अध्ययनों पर गोष्ठी प्रस्तुतीकरण कर सकते हैं; हम अपने अध्ययन के दौरान लोगों पर बनाई स्लाइड्स, फिल्में, वीडियो दिखा सकते हैं; हम स्थानीय सामग्री सांस्कृतिक पुरातन वस्तुएँ प्रदर्शित करके उनका विवरण दे सकते हैं; हम किसी टी.वी. परिचर्चा में आकर अपने क्षेत्र अध्ययनों के बारे में बता सकते हैं; हम समाचार पत्रों और प्रसिद्ध पत्रिकाओं (Journals) के लिए लिख सकते हैं या किसी मानव जाति वर्णन संबंधी नाटक या कल्पना की कहानी लिख सकते हैं; या अपने अध्ययनों और उनसे संबंधित लोगों के विषय में क्लबों में केवल बात कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, ये सभी विकल्प संभव हैं और क्षेत्रकार्यकर्ता इन्हें प्रायः अपनाते हैं।

इन सभी में, सर्वाधिक महत्वपूर्ण और शैक्षिक रूप से उत्साहवर्द्धक प्रकाशन का जगत् है जिसमें पुस्तकें, लेख और विनिबंध आते हैं जो गंभीर शोध के अंश हैं। शिक्षा के क्षेत्र में, प्रकाशनों का कोई विकल्प नहीं है। एक समय था जब अपने क्षेत्रकार्य के परिणामों को प्रस्तुत करने का एकमात्र तरीका लेखनकार्य था। अब, अनेक तरीके हैं और हाल के वर्षों में हम कुछ वेबसाइटों के लिए लिखते हैं, हम ई-पुस्तकें लिखते हैं। पहले हम सामान्य लिपि अथवा टंकण मशीन पर लिखते थे। अब लेखन की तकनीक बदल गई है, हम कंप्यूटर पर लिखते हैं या डिक्टाफोन का प्रयोग करते हैं जिसमें टेप की गई सामग्री को बाद में लिपिबद्ध कर लिया जाता है। हम अपने भाषणों को टेप करके, उन्हें लिपिबद्ध, संपादित तथा प्रकाशित करते हैं। हम कक्षाओं तथा भाषण थिएटरों में अपने "कार्यक्षेत्र के योगदान" की रचना करते हैं तथा अन्य लोगों को उनके लाभ के लिए उसे लिखने देते हैं।

फिल्मों और तस्वीरों का महत्व है क्योंकि वे मानक मानवजाति वर्णन को बढ़ावा देते हैं किंतु वे उसका स्थान नहीं ले सकते हैं। एक तस्वीर अत्यंत अभिव्यक्तिपूर्ण हो सकती है, दस लाख शब्दों के बराबर हो सकती हैं; किंतु शब्दों का स्थान प्रथम है तथा तस्वीरें वैकल्पिक होती हैं (वॉल्कॉट 1995)। दर्जनों तस्वीरों और उनके शीर्षकों सहित, एक कॉफी-टेबल पुस्तक को, मानव जाति वर्णन या अपने अध्ययन से संबंधित लोगों पर विनिबंध नहीं माना जा सकता है (प्रकाशन हेतु लिखित पाठ में चित्रों के स्थान के लिए बॉक्स 28.2 देखें)।

बॉक्स 28.2: शब्द पहले आते हैं तथा चित्र वैकल्पिक हैं

श्रीवास्तव कहते हैं कि अंग्रेजी तथा अमरीकी विद्वानों द्वारा लिखी गई मानव विज्ञान संबंधी पाठ्य पुस्तकों में एक अंतर जो मैंने देखा है, वह यह है कि अंग्रेजों वाली पुस्तकों में चित्र लगभग नहीं है और अमरीकी पुस्तकों में बहुत चित्र हैं। उदाहरण, मानक ब्रिटिश पुस्तकों जैसे जॉन बेरी (1964) की ***'अदर कल्चर्स'*** अथवा लूसी मायर की ***'एन इंट्रोडक्शन टू सोशल एंथ्रोपोलोजी'*** को देख सकते हैं। चित्र परिशिष्ट में दिए गए हैं और भौतिक वस्तुएँ भी, जो संग्रहालय में जाती हैं। दृश्य मानव विज्ञान को गंभीरता से नहीं लिया जाता है। मुझे याद है कि यदि कैम्ब्रिज गोष्ठी में कोई वक्ता अधिक स्लाइड्स या फिल्में दिखाता था या

ऑडीयो सुनाता था तो दर्शक समझते थे कि उसने ठीक से लिखा नहीं है अथवा वह उनके साथ शब्दों को बाँटना नहीं चाहता है। मुझे बताया गया है कि अनेक विश्वविद्यालयों में, अपने शोध प्रबंध में चित्रों की संख्या की सीमा निर्धारित होती है। कुछ अन्य में, प्रत्येक चित्र को कुछ निश्चित शब्दों के समतुल्य माना जाता है (मान लीजिए, तीन सौ)। यदि शोध प्रबंध को शब्द-सीमा के भीतर रहना है तो लेखक को चित्रों के चुनाव के विषय में विवेकशील होना पड़ेगा क्योंकि चित्रों के कारण शब्दों की संख्या कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त, लेखक को चित्रों का कोई श्रेय नहीं मिलता है, चाहे वे कितनी भी अच्छी क्यों न हों। विद्यार्थी को डिग्री, चित्रों के लिए नहीं बल्कि शब्दों के लिए मिलती है। यहाँ क्लीफोर्ड द्वारा प्रायः प्रयुक्त उद्धकरण ध्यान आता है (1990: 2). 'लेखन कार्य अब सीमांत या रहस्यमयी आयाम नहीं है, वह मानव विज्ञानियों के लिए क्षेत्र में और उसके बाद भी अति महत्वपूर्ण हो गया है।'

उपरोक्त से स्पष्ट है कि शब्दों में उतारने से संबंधित मुद्दे, क्षेत्रकार्य, संबंध स्थापना और सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण की पद्धतियों और तकनीकों से संबंधित मुद्दों जितने ही महत्वपूर्ण और आवश्यक हैं। जहाँ यह काफी इस बात पर निर्भर है कि क्षेत्रकार्य किस प्रकार किया जाता था, लिखने के अपने अनुभवों, अपनी समस्याओं तथा "डेस्क कार्य" कहे जाने से संबंधित समस्या पर कुछ भी सामग्री उपलब्ध नहीं है। बेकर (1986) ने देखा है कि शिक्षक, विद्यार्थियों को नहीं बताते कि वे, जिन पाठ्य पुस्तकों और विनिबंधों को पढ़ते हैं, किस प्रकार लिखे जाते हैं। वह कहता है कि अधिकांश विद्यार्थियों को अपने शिक्षकों, व्यावसायिक लेखकों और रचनाकारों अथवा डेस्क कार्य पर कार्यरत शोधार्थियों को देखने का भी अवसर नहीं मिलता है तथा लेखक और रचनाकार भी किसी सामग्री के "लेखन पर अपने अनुभवों" पर कुछ नहीं लिखते हैं।

यद्यपि, पिछले दो दशकों में, कुछ लेखकों ने इस विषय को गंभीरता से लिया है। वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि लेखन के पक्षों पर अधिक से अधिक सम्भव स्पष्ट रूप से चर्चा करने की आवश्यकता है। निस्संदेह, कुछ शोधार्थी अन्य से बहुत अधिक रचनात्मक होते हैं तथा लेखन का उन्हें शौक होता है किंतु वस्तुनिष्ठ रूप से लिखने के मामले को देखा जा सकता है तथा लेखन में मौलिकता के अपने स्तर के बावजूद ध्यान में रखने योग्य बातों का उल्लेख किया जा सकता है। इन कार्यों में अनेक बार इस बात पर बल दिया गया है कि नियमित लेखन द्वारा अपनी मौलिक योग्यता को बढ़ाया जा सकता है। इस संबंध में, निम्नलिखित पाठ्य सामग्री का उपयोग करने की सलाह दी जाती है:

हॉवर्ड बेकर की *'राइटिंग फॉर सोशल साइंटिस्ट्स: हाउ टू फिनिश यॉर थीसिस, बुक और आर्टिकल'* (1986) तथा हेरी वॉल्कॉट की *'राइटिंग अप क्वालिटेटिव रिसर्च'* (1990)। वॉल्कॉट की *'दि आर्ट ऑफ फील्डवर्क'* (1995) में भी लेखन पर एक अध्याय है और लॉरल रिचर्डसन का कार्य (1994) *'राइटिंग: ए मैथड ऑफ इन्क्वायरी'* है जो पढ़ने योग्य है। अभ्यास 28.2 पूर्ण कीजिए, जिससे ज्ञान को संचार में रूपांतरित करने की वास्तविक प्रक्रिया का बोध हो सके।

अभ्यास 28.2

आप वही लिखते या कहते हैं जो आप जानते हैं। ये दोनों इस प्रकार संबंधित है कि आप वही लिख सकते हैं जिसकी आपको जानकारी है। ज्ञान को संचार में रूपांतरित करने के लिए आप अपनी सामग्री को व्यवस्थित करना चाहेंगे। चूँकि आप इग्नू के एक अध्ययन केंद्र पर पंजीकृत हैं, आपको इग्नू के खुले तथा पत्राचार पाठन के विषय में पता है। इग्नू के विषय में अपने परिवार को बताने के लिए आपको उस सामग्री को व्यवस्थित करना होगा, जो आपके पास है। अपने इस ज्ञान को व्यवस्थित कीजिए और फिर उसे संचार में रूपांतरित करिए। इस प्रक्रिया को पाँच सौ शब्दों में बताइए।

28.4 अदलेखन और आलेखन

शब्दों में उतारना वह प्रक्रिया है जिसमें जगत को शब्दों में रूपांतरित किया जाता है। "जगत" वह मानवजाति संबंधित भूदृश्य है जहाँ अन्वेषक कम से कम एक वार्षिक चर्क पूर्ण करता है और लोगों को उनके प्राकृतिक आवास में देखते हुए और साक्षात्कार करते हुए काफी समय व्यतीत करता है। क्षेत्रकार्य की इस अवधि के दौरान, अन्वेषक अध्ययन की "अन्य" वस्तुओं को देखता, महसूस करता, सुनता, सँघता तथा उनका स्वाद लेता है। वह इस "अन्य" के विषय में अनेक बातों की "कल्पना" करता/करती है, विभिन्न घटनाओं के संभावित स्पष्टीकरणों को देखता/देखती है, अपने पास उपलब्ध तथ्यों के आधार पर कुछ प्रसिद्ध सिद्धांतों की परीक्षा करता/करती है तथा सामग्री/आंकड़ें एकत्रीकरण पर अपने अनुभवों को कागज तथा मस्तिष्क दोनों में दर्ज करता/करती है। वह पर्यवेक्षकों, परियोजना निर्देशकों, संबंधियों तथा मित्रों को क्षेत्र से पत्र और अब ई-मेल लिखता-लिखती है। ये सभी उस "अन्य" को जानने के अनुभवों के प्रथम-सूचना विवरण, यानी सामग्री/आंकड़े का अंश होते हैं ("अन्य" शब्द के अर्थ के लिए बॉक्स 28.3 देखें)। मुरे वॅक्स (1980) कहता है कि लेखन, क्षेत्रकार्य का मात्र "निकटवर्ती" नहीं है बल्कि इसका "महत्वपूर्ण अंश" है।

अभ्यास 28.3

यहाँ 'अन्य' शब्द के अर्थ के विषय में संक्षिप्त स्पष्टीकरण की आवश्यकला है: 'अन्य' शब्द किसी बाहरी वस्तु के लिए प्रयुक्त होता है जिसपर अध्ययन केंद्रित है। वह भिन्न संस्कृतियों वाले लोग न होकर अपने ही लोग हो सकते हैं। यहाँ विचार यह है कि अपने समुदाय का भी, मानवविज्ञानियों द्वारा कहे जाने वाली 'अन्य संस्कृतियों' के अध्ययन में प्रयुक्त उसी विरक्ति के साथ अध्ययन किये जा सकते है। यहाँ महत्वपूर्ण बात यह है कि लेखन उसी पल आरंभ हो जाता है, जिस पल क्षेत्रकार्यकर्त्ता (अथवा मानवविज्ञानी) 'अन्य' के अध्ययन में उतरता है। यह शोध अभिकल्पना या प्रस्ताव की संरचना से आरंभ होता है।

MAADHYAM IAS

लेकिन यह लेखन, "देखी गई चीजों या साक्षात्कारों के अंश या टिप्पणियाँ लिखना" है; यह पाठ्य से पहले की अवस्था है। यह सामान को एकत्रित करके और उन्हें "पकवान" में परिवर्तित करने जैसा है, यदि पाक्-कला के आधार पर इसे देखा जाए। शोधार्थी जानते हैं कि "सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण" और "मानवजाति वर्णन सबंधी लेख", न केवल विश्लेषणात्मक रूप से पृथकीय हैं बल्कि उनमें अनेक अंतर भी होते हैं। यद्यपि, पहले (यानी, सामग्री/आंकड़े) के आधार पर दूसरे (यानी, मानवजाति वर्णन) को किया जाता है। हम "लिखते हैं"– सामान्य अभिव्यक्ति "दर्ज करना" है– अपनी नोटबुक और क्षेत्रडायरियों में तथ्य, जिनसे सामग्री/आंकड़े बनता है। हमारे द्वारा लिखे गए तथ्यात्मक विवरणों के अतिरिक्त, हमारे मस्तिषक और हमारी स्मृति में ऐसा बहुत कुछ है, जिनके लिए साइमन ऑटेनबर्ग (सांजेक, 1996 द्वारा उद्धरत) ने हेड नोट शब्द का प्रयोग किया है। हमारे मस्तिष्क में विद्यमान सूचना, लेखन क्रिया के दौरान उभर आती है। हमारे "हेड नोट" हमारे द्वारा एकत्रित किए गए सामग्री/आंकड़े को समझने तथा उसकी व्याख्या करने में हमारी मदद करती हैं। इसी कारण, जब कोई समाजशास्त्री, "किसी अन्य मानव विज्ञानी की टिप्पणियाँ पढ़ता है तो उसे समझने में कठिनाई होती है क्योंकि उसके पास उन्हें समझाने वाली शीर्ष टिप्पणियों का अभाव होता है" (श्रीनिवास 2004: 34)। जब हम कोई पाठ्य सामग्री लिख रहे होते हैं तो हमें एहसास होता है कि अपनी टिप्पणियों और डायरियों में एकत्रित सामग्री पूर्ण नहीं है क्योंकि ऐसा बहुत कुछ है जो हमारी स्मृति में रहता है तथा आवश्यक स्थान और समय पर उसका उपयोग किया जा सकता है।

हम क्षेत्र टिप्पणियों को "दर्ज करते" हैं किंतु मानवजाति वर्णन से संबंधित सामग्री को हम "लिखते" हैं। अब हम "दर्ज करने और लिखने" में अंतर को देखते हैं। अंग्रेजी भाषा के

रैण्डम हाऊस शब्दकोश (1986) के अनुसार, ''दर्ज करना'' रिकार्ड और टिप्पणियों को लिखना है। इसका एक अन्य अर्थ, ''लेखन में अपने प्रयासों को कम बुद्धिमान पाठक अथवा श्रोता तक निम्न स्तर की ओर दिशा देना है।'' यहाँ दिया गया उदाहरण है: ''वह जनता के लिए लिखता है''। ''लिखने'' का अर्थ ''संपूर्ण विवरण के साथ लिखना है''; यहाँ दिया गया उदाहरण है: ''एक रिपोर्ट लिखना'' (पृ. 1520)। इन अर्थों के संदर्भ में विचार करते हुए हम कह सकते हैं कि तथ्यों को दर्ज किया जाता है; उन्हें कागज पर लिखा जाता है और उनमें काँट-छाँट की जाती है। अपने लेखों में, मार्ग्रेट मीड ''खाका टिप्पणियों'' से क्षेत्र टिप्पणियों को लिखने में एक दिन का भी विलंब हो जाता है। वह क्षेत्रकार्यकर्ता के उस संतोष के बारे में भी बताती है जो उसे खाका और शीर्ष टिप्पणियां दर्ज करने में मिलता है (सांजेक, 1996; श्रीवास्तव, 2001; श्रीवास्तव, 2004: 33-5)। क्षेत्र से प्राप्त लिखित टिप्पणियों और अलिखित स्मृतियों की मदद से अन्वेषक एक गुणात्मक विवरण और मानवजाति वर्णनका एक अध्याय लिखता है।

''दर्ज करने'' और ''लिखने'' के बीच यह भेद गीट्र्ज द्वारा उसके एक साक्षात्कार में कही गई बात से स्पष्ट होता है (ऑलसोन 1991 देखें):

मैंने क्षेत्र में काफी समय व्यतीत किया है– दक्षिण पूर्वी एशिया और उत्तरी अफ्रीका में लगभग एक दर्जन वर्ष– जहाँ मैं कोई लेखन कार्य नहीं करता। मैं क्षेत्र में नहीं लिख सकता हूँ। मैं बहुत सारी क्षेत्र टिप्पणियाँ दर्ज करता हूँ किंतु मैं कुछ रचनात्मक नहीं लिख सकता.... आप जावा में दो या ढाई वर्ष क्षेत्र कार्य करते हैं जिसमें आपको केवल लोगों के साथ रहना होता है, सभी कुछ दर्ज करना होता है और यह जानना होता है कि वहाँ क्या हो रहा है) उसके बाद आप वापिस आते हैं और अपनी टिप्पणियों, स्मृतियों और क्षेत्र में हो रही गतिविधियों को दर्ज करते हैं। इसलिए कम से कम मेरे लिए यह अत्यधिक विभाजित जीवन है। मैं क्षेत्र में नहीं लिखता; मैं लौटने के बाद लिखता हूँ। अधिकांश रूप से मैं यहाँ लिखता हूँ और वहाँ शोध करता हूँ।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

''दर्ज करने'' से ''लिखना'', क्षेत्र कार्य से डेस्क कार्य तक और गतिविधि से भरपूर क्षेत्र से शांत कार्यकक्ष तक का परिवर्तन भी है (गीर्टज, 1988)। लिखने से, क्षेत्र के अनुभव पाठ, रिपोर्ट, विनिबंध अथवा किसी लेख में परिवर्तित हो जाते हैं। यहाँ पर हम एक प्रश्न पूछ सकते हैं: ''दर्ज करने'' से ''लिखने'' का यह परिवर्तन क्या उतरा सहज होता है जितना यह दिखता है? इसके अतिरिक्त रसोईघर की समतुल्यता को देखते हुए जिस प्रकार भिन्न रसोइए उसी सामग्री से भिन्न प्रकार के पकवान बनाते हैं उसी प्रकार भिन्न क्षेत्र कार्यकर्ता समान तथ्यों से भिन्न प्रकार के मानवजाति वर्णन तैयार करते हैं। यहाँ यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि समान मानवजाति वर्णन परिस्थिति से दो भिन्न क्षेत्र कार्यकर्ताओं द्वारा एकत्रित सामाजिक तथ्य कभी समान नहीं होते क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि भिन्न सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों से प्रभावित होती हैं (अभ्यास 28.3 पूर्ण करके यही बात जानिए)।

अभ्यास 28.3

अपने अध्ययन केंद्र पर एम.एस.ओ.-002 के छात्रों में से चार सदस्यों का एक दल बनाइए। दल के प्रत्येक सदस्य को 'अध्ययन केंद्र की गतिविधियों में प्रशिक्षुओं का योगदान' के विषय में सामग्री/आंकड़े एकत्रित करना है और एकत्रित सामग्री/आंकड़े के आधार पर इसी विषय पर एक पृष्ठ की टिप्पणी लिखनी है। टिप्पणियों की तुलना करिए और उनके समानताओं और अंतरों को खोजकर 200 शब्दों की एक संक्षिप्त टिप्पणी तैयार कीजिए।

28.5 शीघ्र लिखें

शब्द पहले आते हैं और उनको जोड़कर तर्कसंगत तथा सार्थक सामग्री तैयार करना चुनौतीपूर्ण तथा प्रायः कठिन कार्य होता है। मुझे याद है कि मैं अपने कमरे के एक कोने

में रखी मेज पर बैठता था और मेरे आसपास क्षेत्र टिप्पणियाँ, डायरियाँ, आवश्यक लेखों की प्रतिलिपियाँ, चिह्नकयंत्र (Marker) सहित महत्वपूर्ण पुस्तकें, हाथ में पेंसिल होती थी और मैं कागज पर सही वाक्य रचना करने की प्रतीक्षा में काटता और मिटाता रहता था, फिर रसोई में जाकर चाय बनाता था अथवा सिगरेट पीने बाहर चला जाता था और यह सब कुछ मैं अपने कार्य पर केंद्रित रहने के लिए करता था। कुछ दिन तक, घंटों यही परिदृश्य बना रहता जब मैं अपने विचारों को उपयुक्त और सही अभिव्यक्ति देने के लिए संघर्ष कर रहा था। ऐसे समय में हममें से अधिकांश लोग अधिक पढ़ने के लिए पुस्तकालय जाते हैं या क्षेत्र की ओर दौड़ते हैं, यदि वह नजदीक होता है और यह सोचते हैं कि हमने अधिक पढ़ा नहीं है अथवा अपने विवरण लिखने के लिए हमारे पास पर्याप्त जानकारी नहीं है। इसलिए हम लेखन कार्य को टालते रहते हैं, हम पुस्तकों और अधिकाधिक संदर्भों को एकत्रित करते रहते हैं। एक पुस्तक या लेख से दूसरी पुस्तक और फिर तीसरी, यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है।

चूँकि हम लिखना आरंभ नहीं करते, अत्यधिक तनाव के अतिरिक्त हम अपने विचारों को संयमित नहीं कर पाते हैं। अनेक पुस्तकें और दृष्टिकोण हमें उलझा देते हैं। लेखन समस्या इतनी सत्य तथा सही है कि मेरे प्रतिदर्श में युवा और अनुभवी दोनों प्रकार के शोधार्थी इस बात को मानते हैं कि वे नहीं लिखते अथवा अच्छा नहीं लिखने के तनावपूर्ण प्रभाव से गुजरे हैं। मुझे अपने शोध विद्यार्थी के दिन याद हैः कई घंटों तक मैं कुछ नहीं लिख पाता था अथवा जो कुछ लिखता था वह इतने बुरे स्तर का होता था कि मैं उसे किसी को दिखाना नहीं चाहता था। इन असफलताओं से मुझे तनाव तथा हीनता अनुभव होती थी जिसके कारण मैं अपने साथी शोधार्थीयों के साथ अधिक पढ़ता एवं चर्चा करता था किंतु मैं नहीं लिखने की चट्टान को तभी काट पाया जब अपनी कुर्सी पर बैठे रहकर मैंने बार-बार एक ही विचार को अभिव्यक्ति करने और लिखने का प्रयास किया और फिर धीरे-धीरे वाक्य बनने लगे, विचार बाहर आने लगे तथा मेरे कार्य का प्रथम प्रारूप जैसा कुछ उभरने लगा। एक बार जब मेरे कार्य का प्रारूप बन जाता तो न केवल मुझे अपनी योग्यता पर विश्वास हो जाता ("मैं कर सकता हूँ"), बल्कि अपने प्रारूप को मैं अन्य लोगों को पढ़ने और टिप्पणी करने, उसे संपादित करने, कुछ जोड़ने या काटने, तर्कों को अधिक सुदृढ़ करने, अन्य कार्यों का संदर्भ देने और उसमें "द्वितीपूर्ण उपकरण" (उद्‌भव, पाद टिप्पणियाँ, संदर्भित पुस्तकें) जोड़ने के लिए दे सकता हूँ। इस संदर्भ में मुझे वॉल्कॉट (1995:216) की याद आती है जिसने लिखाः

सहज रूप से कहा जाए तो नहीं लिखने का एकमात्र उपचार लिखना है। आप अपने लिखे को, अच्छी सामग्री को संपादित करके और शेष को छोड़कर सदैव सुधार सकते हैं। जब तक आपके सामने संपादित करने के लिए शब्द नहीं होंगे, विचार आपके मस्तिष्क में इस तरह इधर-उधर भागते हैं कि उन्हें न तो दूसरों तक पहुँचाया जा सकता है न ही अपनी संतुष्टि के लिए सुधारा जा सकता है।

कोशिश, परेशानी और तनाव का यह समय तब होता है जब हमारी कलम से (अथवा की की बोर्ड से) कुछ भी महत्वपूर्ण बाहर नहीं आता और इस अवधि को सकारात्मक तथा आशावादी दृष्टिकोण से देखना होता है क्योंकि यह परिवर्तन की अवस्था होती है।

इसके अतिरिक्त लेखन किसी भी अन्य कौशल या कला के समान है जिसमें सफलता प्राप्त करने के लिए नियमित अभ्यास आवश्यक है। गुणात्मक शोध के संदर्भ में जितनी जल्दी हम लिखना आरंभ करते हैं उतना ही बेहतर होता है। पहले ऐसा कहा जाता था कि "पाठ" लेखन उसी पल आरंभ हो जाता है जिस पल हम शोध प्रस्ताव लिखना आरंभ करते हैं; टेपरिकॉर्डर प्रयोग किए जाने की स्थिति में हम ऑडियो टेप को लिपिबद्ध करते हैं। शोध

विद्यार्थियों को यह सलाह दी जाती है कि लेखन कार्य को अपने शोध का अंतिम चरण न समझें जो कि ऐसी गतिविधि है जो सामग्री/आंकड़े एकत्रीकरण के बाद होती है। रिचर्डसन (1994) लिखता है कि लेखन को शोध परियोजना के अंत में 'सफाई कार्य' जैसा नहीं समझना चाहिए बल्कि इसे ज्ञान प्राप्ति खोज तथा विश्लेषण की पद्धति का तरीका समझना चाहिए। इसी प्रकार वॉल्कॉट लिखता है कि लेखन को शोध से जोड़कर देखना चाहिए; सब कुछ समाप्त होने के बाद इसे अंतिम सोपान के रूप में देखना गलत है (शीघ्र लिखने के संबंध में बॉक्स 28.4 देखें)

> **बॉक्स 28.4: शीघ्र लिखने के लाभ**
>
> शीघ्र लिखने के विशिष्ट लाभ होते हैं। लिखने पर हमें पता लगता है कि हम अपने अनुभव के विषय में क्या और कैसे कहना चाहते हैं। क्षेत्र अध्ययन से पूर्व और शोध प्रस्ताव समाप्त होने के बाद हमें लेखन कार्य पर विचार शुरू कर देना चाहिए। यह सर्वविदित है कि हमें अपना अध्ययन बिना किसी पूर्व मान्यताओं, पूर्वाग्रहों या मतों के आरंभ करने की सलाह दी जाती है किंतु हम अपने साथ क्षेत्र में अनेक सैद्धांतिक विचार लेकर चलते हैं। यदि हम इन विचारों के विषय में लिखें तो हम अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त हो सकते हैं।

जल्दी लिखने को अपनी विचारश्रृंखला को प्रभावित करने के रूप में ना देखकर इसे अपनी रुचियों और पूर्व मान्यताओं और विचारों के साथ आमने-सामने करने वाले माध्यम के रूप में देखना चाहिए। परिणामस्वरूप हम इनसे अधिक प्रभावी तरीके से निपट सकते हैं। समाजशास्त्र और सामाजिक मानवविज्ञान जैसी प्रशाखाओं में, व्यक्ति को समानुभूति (empathy) के उच्च स्तरों से जुड़ना होता है जो मानव विज्ञानी के अन्य लोगों के साथ अधिक समय तक (प्रायः कम से कम एक वर्ष) रहने से विकसित होती है। हम अपने 'अध्ययन के विषयों' को अपने 'साथीगण' के रूप में देखते हैं जबकि सामाजिक विज्ञान की अन्य प्रशाखाओं में अध्ययन के विषयों को वस्तुओं की तरह देखा जाता है जिनके साथ किसी भी प्रकार का प्रगाढ़ संबंध अथवा सहकर्मी के संबंध के लिए कोई स्थान नहीं होता है। समाजशास्त्रीय और सामाजिक मानवविज्ञान संबंधी कार्य की विशेष परिस्थितियों के कारण, हमारे लिए पूर्वाग्रह से ग्रसित होने की संभावना अन्य सामाजिक विज्ञानों की परिस्थितियों से अधिक होती है। इस पृष्ठभूमि में, अपनी रुचियों और अरुचियों, अपनी व्यक्तिनिष्ठता, लोगों के साथ संबंध और भागीदारों द्वारा देखी गई बातों के प्रति व्यक्ति को अधिक जागरूक बनाने में लेखन बहुत मदद करता है।

28.6 लेखन शैलियाँ

क्षेत्रकार्यकर्ता से मुख्य अपेक्षा केवल यही नहीं होती कि वह मानवजाति वर्णन लिखेगा बल्कि यह भी कि वह उसे अच्छा लिखेगा। वॉलकॉट (1995:209) लिखता है कि पाठकों को दोहरा लाभ होता है यदि मानवजाति वर्णन न केवल अंतर्दर्शी और तथ्यपूर्ण होता है बल्कि अच्छा लिखा हुआ भी होता है। कहना ना होगा कि अच्छे लिखे हुए कार्य पढ़े जाते हैं और उन्हें जितना अधिक पढ़ा जाते हैं वे उतने ही प्रचलित हो जाते हैं। हमारी सबसे बड़ी हार तब होती है जब हमारे ज्ञान के बावजूद हमारा क्षेत्रकार्य विवरण अपठित रह जाता है क्योंकि वह पाठकों का ध्यान आकर्षित नहीं कर पाता है। मेरे एम.फील. शोध प्रबंध के पर्यवेक्षक (supervisor) प्रोफेसर कृष्ण प्रकाश गुप्ता ने मुझे सिखाया कि लेखक को अपने पाठक को नहीं भूलना चाहिए और लिखने की प्रक्रिया के दौरान लेखक को पाठक की भूमिका निभाते हुए अपने द्वारा लिखित सामग्री को निष्पक्ष रूप से पढ़ना चाहिए। कोई संवेदनशील कवि अपनी रचनाओं (जो कभी-कभी हल्की, समझ में ना आने वाली और जटिल होती हैं) के विषय में जो भी कहे, जिन्हें वह सोचता है कि उसने अपने लिए और अपनी संतुष्टि के लिए लिखी है, यही बात क्षेत्र कार्य विवरण के लिए नहीं कही जा सकती।

ये विवरण दूसरों के लिए लिखे जाते हैं ताकि लोग इन्हें पढ़ें, समझे और इनकी प्रशंसा करें। हम कह सकते हैं कि हमारे द्वारा लिखा गया पहला प्रारूप हमारे लिए होता है लेकिन उसके बाद लिखे सभी प्रारूप हमारे पाठकों के लिए होते हैं।

यह देखा गया है कि अनेक युवा विद्यार्थी कुछ प्रसिद्ध लेखकों की लेखनशैली को अपनाने का प्रयास करते हैं। किसी विद्वान के लेखन का प्रशंसक होना और उसकी लेखनशैली की नकल करना दो अलग बातें हैं।

मैंने बोनिसलॉ मेलिनोस्की, ई.ई. ईवांस-प्रीचार्ड, मार्गरेट मीड, क्लॉड लेवी-स्ट्रास तथा क्लीफॉड गीट्र्ज जैसे मानवविज्ञानियों और टॅलकॉट पार्सन्स, रॉबर्ट के. मर्टन, एम.एन. श्रीनिवास, ऐंट्रे वेटेली तथा एंथोनी गिडन्स जैसे समाजशास्त्रियों के अनेक प्रशंसक देखे हैं। इन प्रशंसकों में से अनेक ने अपने पसंदीदा विद्वान की शैली की नकल करने का प्रयास किया किंतु अंत में उन्हें सफलता नहीं मिली। जिस प्रकार एक ही स्थान (अथवा तकनीकी रूप से कहा जाए तो "प्रस्थिति") पर एक अभिनेता का कार्य दूसरे से भिन्न होता है, उसी प्रकार प्रत्येक लेखक या रचयिता की अपनी शैली होती है जो अनेक दशकों के कठिन परिश्रम और कई अन्य अत्यधिक व्यक्तिगत कारणों जैसे विद्यालय में शिक्षा की गुणवत्ता, रुचियाँ, पढ़ने और लिखने का शौक आदि का परिणाम होती है। इसलिए मेरा कहना है कि हमें अपनी शैली विकसित करने का प्रयास करना चाहिए ताकि हम नकल करने के लिए ना जाने जाए बल्कि शब्द जगत में अपनी पद्धति और शैली के लिए जाना जाए। यद्यपि आप अन्य समाजशास्त्रियों/मानवविज्ञानियों की लेखनशैलियों की प्रमुख विशेषताओं को जानने के लिए उनके लेखनकार्य का अध्ययन कर सकते हैं। सम्पर्क स्थापित करने की उनकी क्षमता को आप आलोचनात्मक रूप से जाँच सकते हैं (अभ्यास 28.4 देखें)।

एक बार जब मैं विद्यार्थियों के एक समूह के साथ लेखनकला पर अपने विचार बाँट रहा था तो एक विद्यार्थी ने मुझसे पूछाः "लेकिन, क्या लिखा जाए?" हाँ, इसके लिए हमारे पास एक लेखन उद्देश्य होना चाहिएः शोध प्रबंध, पुस्तक, लेख, टिप्पणी, परियोजना रिपोर्ट, समीक्षा, क्षेत्र टिप्पणियाँ और डायरियाँ आदि। लिखना आरंभ करने से पूर्व हमें विषयवस्तु की एक प्रस्तावित रूपरेखा या तालिका बनानी चाहिए। हमें मूलभूत कहानी को भी ध्यान में रखना चाहिए और उस कहानी को बताने के लिए पृष्ठों की संख्या का भी ध्यान रखना चाहिए।

MAADHYAM IAS

क्षेत्रकार्यकर्ता जानते हैं कि एक साल में किए गए क्षेत्रकार्य में उन क्षेत्रों सहित काफी सामग्री/आंकड़े एकत्रित हो जाता है जो आरंभ में अन्वेषण के लिए नहीं चुने गए थे। सर्वेक्षण शोध और गहन क्षेत्रकार्य के बीच मुख्य अंतरों में से यह एक है। पहले वाले में सामग्री/आंकड़े केवल उन विषयों से संबंधित आता है जो सर्वेक्षण का हिस्सा होते हैं किंतु बाद वाले में इतना सामग्री/आंकड़े प्राप्त होता है कि अन्वेषक किसी समयावधि में एक नहीं बल्कि अनेक पाठ तैयार कर सकता है। पुस्तक अथवा लेख, जिसका किसी भी स्थिति में केंद्र होगा, के संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात अधिक से अधिक असंबद्ध सामग्री/आंकड़े को हटाना होता है ताकि सचमुच आवश्यक सामग्री/आंकड़े की मात्रा प्रबंधनीय, संक्षिप्त और संतोषजनक रूप से तर्कसंगत हो जाए। एक पाठ से बाहर रखे गए सामग्री/आंकड़े को किसी अन्य पाठ में प्रयोग किया जा सकता है। इसलिए हमें प्रत्येक अध्याय, भाग अथवा उपभाग की लगभग लंबाई को ध्यान में रखना होता है। हमें यह भी ध्यान रखना आवश्यक रूप से सीमित हो क्योंकि इसमें हमें पद्धतियों, सिद्धांत, साहित्य समीक्षा, विश्लेषण, व्याख्या, अनुशंसा और आशयों, उद्धृत संदर्भों तथा संदर्भित पुस्तकों (अथवा कभी-कभी व्याख्यात्मक संदर्भित पुस्तकों) पर अध्यायों में शामिल करना होता है।

गुणात्मक शोध लेखन पर शुरू में बताए गए पाठों द्वारा एक महत्वपूर्ण परामर्श यह मिलता है किः "व्यक्ति को प्रतिदिन लिखना चाहिए"। मनोविज्ञान गोष्ठी में लेखन पर एक भाषण

के दौरान, इस सुझाव पर एक स्त्री भागीदार की टिप्पणी यह थी कि बच्चों वाली और अनेक महत्वपूर्ण घरेलू कामकाज वाली अनेक विवाहित महिलाओं के लिए प्रतिदिन लेखनकार्य के लिए एक निश्चित समय निर्धारित करना कठिन होगा और अनेक मामलों में वे प्रतिदिन नहीं लिख पाएँगी। इस संदर्भ में वॉलकॉट का सुझाव (1990) देखा जा सकता है: हमें अपनी व्यस्त कार्यसूची में लेखन को "बीच में डालने" अथवा "लेखन दिवस" निर्धारित करने का प्रयास करना चाहिए। मुख्य बात यह है कि हमें लेखन के संदर्भ में एक प्रकार की नियमितता बनाने का प्रयास करना चाहिए। रीडर्स डाइजेस्ट (1998) के एक अंक में जेरेमी डेनियल नामक एक लेखक ने कहा: 300 पृष्ठ की पुस्तक लिखना कठिन कार्य है; प्रतिदिन दो पृष्ठ लिखना अत्यंत सरल है। इस कार्य को 150 बार दोहराइए और आपकी पुस्तक तैयार है। इस सिद्धांत को किसी भी कार्य पर लागू किया जा सकता है।

यदि मैं पाँच सौ शब्द प्रतिदिन लिखूँ तो वर्ष के अंत में मेरे नाम पर एक पुस्तक होगी। अपने एक साक्षात्कार में पीटर्स ने कहा कि वह प्रायः प्रतिदिन एक अनुच्छेद (पैराग्राफ) लिखती थी किन्तु वह किसी वाक्य या अनुच्छेद (पैराग्राफ) को तब तक नहीं छोड़ता था जब तक वह उससे संतुष्ट नहीं हो जाता था (ऑलसोन 1991 देखें)। मुझे बताया गया कि एडमंड लीच दिन का अपना लेखन कोटा समाप्त करने के बाद सुबह देर से अपने विभाग आता था। वॉलकोट (1990) लिखता है कि जब वह लिखने में व्यस्त होता था तो उसकी उत्तर देने वाली मशीन में निम्नलिखित संदेश टेप होता था: "माफ कीजिए, हैरी लिख रहा है; वह अभी आप से बात नहीं कर सकता"। लेखन नियम को बनाए रखने के लिए इस प्रकार की तपस्या आवश्यक है। यदि हम अपने लेखनकार्य को कई दिनों या सप्ताहों में नहीं बाँटते तो अंतिम तिथि समीप आने पर उसे समाप्त करने का दबाव बढ़ता जाता है। मेरे हिसाब से यह महत्वपूर्ण समय होता है क्योंकि कार्य पूरा करने के लिए हमारे मन में साहित्यिक चोरी अथवा अत्यधिक निम्न गुणवत्ता का कार्य करने का लालच पैदा हो जाता है।

MAADHYAM IAS

अभ्यास 28.4

कुशल क्षेत्रकार्यकर्ताओं द्वारा लिखे गए निम्नलिखित अंशों को पढ़िए और किसी विशिष्ट घटना के विवरण को देने के लाभ और हानियाँ दर्शाइए। यह अभ्यास आपको विवरणात्मक सामग्री/आंकड़े को प्रस्तुत करने के तरीके का बोध करवाएगा।

पहला कार्य है खूँटे को जमीन में घुसाना और फिर जानवर को उससे बाँधना... कभी-कभी जब शिकार को दाँव पर लगा दिया जाता है तो खूँटे पर या उसके तल में दूध, बीयर या पानी का घोल डाला जाता है (ईवांस-प्रीचार्ड, 1956:208)।

दोपहर के बाद एक और कार्य किया गया– डोंगे (canoe) का कवा। एक बड़ी भट्टी में से भोजन मुखिया के घर लाया गया, उस पर कई घोल डाले गए तथा बर्तन और मुखिया के देवताओं को प्रसाद चढ़ाया गया। लगभग एक दर्जन पुरुष भीतर उपस्थित थे किंतु विशेषज्ञ और कुछ कार्यकर्ताओं ने भीतर आने के निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया (फर्थ 1939: 123)।

इनमें से एक अंश की लेखनशैली अप्रत्यक्ष है जबकि दूसरे की शैली प्रत्यक्ष है। पहले यह देखिए कि दोनों में से किस अंश को आपने बेहतर समझा और फिर इसका कारण खोजिए। वह प्रारंभिक कार्य करने के बाद प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष शैलियों में लिखने के लाभ तथा हानि लिखिए।

28.7 प्रथम प्रारूप

जब कुछ नहीं लिखा गया हो तो उस बैठे रहने की अवस्था को पार करना सबसे बड़ी बाधा होती है तथा लेखन की गुणवत्ता से हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। यहाँ, हमें सदैव यह ध्यान रखना चाहिए कि जब हम अपनी स्वयं की टिप्पणियों तथा जिन्हें हमने अपना कार्य पढ़ने के लिए दिया है, उनके सुझावों की पृष्ठभूमि अपने प्रारूप पर बार-बार कार्य

करेंगे तो हमारे लेखन में सुधार हो जाएगा। यहाँ, मुझे अपने एक शिक्षक की बात याद आती है कि "आपको अपने आरंभिक कार्य को दूसरे को दिखाने में शर्माना नहीं चाहिए क्योंकि जो हम आरंभ में लिखते हैं तथा जो अंत में प्रकाशित होता है, वे दोनों बिल्कुल भिन्न प्रारूप होते हैं तथा प्रत्येक प्रारूप अपने पढ़ने और दूसरों की टिप्पणियों के साथ सुधरता जाता है" (लेखन के विभिन्न तरीकों के लिए बॉक्स 28.5 देखें)।

बॉक्स 28.5: क्या आपको सदैव प्रथम प्रारूप लिखना चाहिए?

यद्यपि, हमें यह नहीं मानना चाहिए कि सभी लेखक और रचनाकार इस पद्धति को अपनाते हैं और एक ही पाठ के अनेक प्रारूप लिखते हैं। उदाहरण के लिए, गीर्ट्ज कहता है कि वह प्रारूप नहीं लिखता है (ऑलसोन 1991 देखें)।

श्रीवास्तव कहते हैं, "मैं शुरू से अंत तक लिखता हूँ और जब वह समाप्त हो जाता है तो बस, कार्य पूर्ण हो जाता है। और मैं बहुत धीरे लिखता हूँ... अंत में कुछ छोटी-मोटी सफाई के अतिरिक्त, मैं केवल एक प्रारूप लिखता हूँ. कभी-कभी लोग मुझसे आरंभिक प्रारूप माँगते हैं किंतु वे भी प्रारूप नहीं होते... केवल एक रूपरेखा होती है, विशेषकर, यदि वह पुस्तक हो परंतु मैं बिल्कुल ध्यान नहीं देता हूँ। मैं उसे सावधानीपूर्वक कलाकारी की तरह बढ़ाता जाता हूँ और जब वह समाप्ति पर पहुँच जाता है तो समझो सच में खत्म हो गया। यह प्रक्रिया बहुत धीमी है। मैं प्रोफेसर ऐंद्रे बेटेली के विषय में भी जानता हूँ जिनका प्रथम प्रारूप, अंतिम प्रारूप होता है और वे कभी एक शब्द भी नहीं बदलते हैं क्योंकि वे कई दिनों और सप्ताहों तक अत्यंत सावधानीपूर्वक लिखते हैं। किंतु ये व्यक्तिगत शैलियाँ हैं जिनमें नियमित प्रयास के साथ काफी समय लगता है। किंतु यहाँ मुख्य बात यह है कि व्यक्ति को लिखते समय 'शब्दों को मूल्यवान मणियों' की तरह ध्यान से प्रयोग करना चाहिए (श्रीनिवास 1973:ix)।

प्रारूप समाप्त करने के पश्चात, मुझे पता होता है वह कहाँ पहुँच रहा है। वहाँ से, मैं "पाठ के साथ खेलना" आरंभ करता हूँ जिसका अर्थ है कि मैं उसे संपादित तथा संशोधित करता हूँ। साथी विद्वानों और पर्यवेक्षकों की टिप्पणियाँ, यदि हों तो, आनी आरंभ हो जाती हैं। मैं इन टिप्पणियों को विवेकपूर्णता के साथ जाँचता हूँ और अपने प्रारूप में परिवर्तन करता हूँ। मेरी भाषा भी सुधर जाती है और गलतियाँ भी ठीक हो जाती हैं। याद रखिए, "एक शब्द भी नहीं लिखा" होने की अवस्था में अब मेरे पास, प्रस्तुत करने हेतु एक पांडुलिपि है। अपना शोध-प्रबंध लिखने के दौरान, मुझे यह पता लगा और बाद में मैंने वॉल्कॉट की एक पुस्तक (1995) में देखा कि ऊँची आवाज में पढ़ने से व्यक्ति को अपने ही लिखे में विसंगतियों का पता लगता है। मैं अनेक अनावश्यक वाक्यों को हटा पाया तथा कुछ शब्दों के स्थान पर अधिक उपयुक्त शब्द प्रयोग कर पाया।

अतः जब तक हमारे सामने प्रारूप नहीं होता, हमारे विचार यहाँ-वहाँ भटकते रहते हैं। न तो वे संतोषजनक रूप से दूसरों तक पहुंचते हैं और न ही उनका अन्य विचारों के साथ संबंधों का पता लगता है। वॉल्कॉट (1995: 216) लिखता है:

मैं लिखने से पूर्व सोचता हूँ और अपने मस्तिष्क में आ रहे विचारों, वाक्यांशों और प्रश्नों को लिखता हूँ। किंतु मेरा उत्कृष्ट चिंतन, साहित्य में संबद्ध विचारों तथा आवश्यक उद्धरणों की मेरी खोज की भांति, कागज पर विचारों को लिखने के 'बाद' ही होता है, पहले नहीं।

लेखन प्रक्रिया के दौरान हमें, ऐसे अनेक विचारों का पता लगता है जिनपर हमने पहले नहीं सोचा होता है। मुझे याद है, 1992 में शोधार्थी होने के समय मैं अपना शोध-प्रबंध प्रस्तुत करने वाला था जब पूर्व-क्षेत्रकार्य गोष्ठी समूह के संयोजक से कहा कि मैं क्षेत्रकार्य में प्रतिवादियों को दिए जाने वाले भुगतान की भूमिका पर बोलूँगा। उस समय, मुझे यह नहीं पता था कि मैं क्या कहूँगा, मेरे तर्क की रूपरेखा क्या होगी, सिवाय इसके कि मैं अपने क्षेत्रकार्य के अनुभवों पर मनन करूँगा। इसे लिखने के दौरान (1992), मुझे ऐसे अनेक नए

के दौरान, इस सुझाव पर एक स्त्री भागीदार की टिप्पणी यह थी कि बच्चों वाली और अनेक महत्वपूर्ण घरेलू कामकाज वाली अनेक विवाहित महिलाओं के लिए प्रतिदिन लेखनकार्य के लिए एक निश्चित समय निर्धारित करना कठिन होगा और अनेक मामलों में वे प्रतिदिन नहीं लिख पाएँगी। इस संदर्भ में वॉलकॉट का सुझाव (1990) देखा जा सकता है: हमें अपनी व्यस्त कार्यसूची में लेखन को "बीच में डालने" अथवा "लेखन दिवस" निर्धारित करने का प्रयास करना चाहिए। मुख्य बात यह है कि हमें लेखन के संदर्भ में एक प्रकार की नियमितता बनाने का प्रयास करना चाहिए। रीडर्स डाइजेस्ट (1998) के एक अंक में जेरेमी डेनियल नामक एक लेखक ने कहा: 300 पृष्ठ की पुस्तक लिखना कठिन कार्य है; प्रतिदिन दो पृष्ठ लिखना अत्यंत सरल है। इस कार्य को 150 बार दोहराइए और आपकी पुस्तक तैयार है। इस सिद्धांत को किसी भी कार्य पर लागू किया जा सकता है।

यदि मैं पाँच सौ शब्द प्रतिदिन लिखूँ तो वर्ष के अंत में मेरे नाम पर एक पुस्तक होगी। अपने एक साक्षात्कार में पीटर्स ने कहा कि वह प्रायः प्रतिदिन एक अनुच्छेद (पैराग्राफ) लिखती थी किन्तु वह किसी वाक्य या अनुच्छेद (पैराग्राफ) को तब तक नहीं छोड़ता था जब तक वह उससे संतुष्ट नहीं हो जाता था (ऑलसोन 1991 देखें)। मुझे बताया गया कि एडमंड लीच दिन का अपना लेखन कोटा समाप्त करने के बाद सुबह देर से अपने विभाग आता था। वॉलकोट (1990) लिखता है कि जब वह लिखने में व्यस्त होता था तो उसकी उत्तर देने वाली मशीन में निम्नलिखित संदेश टेप होता था: "माफ कीजिए, हैरी लिख रहा है; वह अभी आप से बात नहीं कर सकता"। लेखन नियम को बनाए रखने के लिए इस प्रकार की तपस्या आवश्यक है। यदि हम अपने लेखनकार्य को कई दिनों या सप्ताहों में नहीं बाँटते तो अंतिम तिथि समीप आने पर उसे समाप्त करने का दबाव बढ़ता जाता है। मेरे हिसाब से यह महत्वपूर्ण समय होता है क्योंकि कार्य पूरा करने के लिए हमारे मन में साहित्यिक चोरी अथवा अत्यधिक निम्न गुणवत्ता का कार्य करने का लालच पैदा हो जाता है।

MAADHYAM IAS

अभ्यास 28.4

कुशल क्षेत्रकार्यकर्ताओं द्वारा लिखे गए निम्नलिखित अंशों को पढ़िए और किसी विशिष्ट घटना के विवरण को देने के लाभ और हानियाँ दर्शाइए। यह अभ्यास आपको विवरणात्मक सामग्री/आंकड़े को प्रस्तुत करने के तरीके का बोध करवाएगा।

पहला कार्य है खूँटे को जमीन में घुसाना और फिर जानवर को उससे बाँधना... कभी-कभी जब शिकार को दाँव पर लगा दिया जाता है तो खूँटे पर या उसके तल में दूध, बीयर या पानी का घोल डाला जाता है (ईवांस-प्रीचार्ड, 1956:208)।

दोपहर के बाद एक और कार्य किया गया– डोंगे (canoe) का कवा। एक बड़ी भट्टी में से भोजन मुखिया के घर लाया गया, उस पर कई घोल डाले गए तथा बर्तन और मुखिया के देवताओं को प्रसाद चढ़ाया गया। लगभग एक दर्जन पुरुष भीतर उपस्थित थे किंतु विशेषज्ञ और कुछ कार्यकर्ताओं ने भीतर आने के निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया (फर्थ 1939: 123)।

इनमें से एक अंश की लेखनशैली अप्रत्यक्ष है जबकि दूसरे की शैली प्रत्यक्ष है। पहले यह देखिए कि दोनों में से किस अंश को आपने बेहतर समझा और फिर इसका कारण खोजिए। वह प्रारंभिक कार्य करने के बाद प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष शैलियों में लिखने के लाभ तथा हानि लिखिए।

28.7 प्रथम प्रारूप

जब कुछ नहीं लिखा गया हो तो उस बैठे रहने की अवस्था को पार करना सबसे बड़ी बाधा होती है तथा लेखन की गुणवत्ता से हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। यहाँ, हमें सदैव यह ध्यान रखना चाहिए कि जब हम अपनी स्वयं की टिप्पणियों तथा जिन्हें हमने अपना कार्य पढ़ने के लिए दिया है, उनके सुझावों की पृष्ठभूमि अपने प्रारूप पर बार-बार कार्य

करेंगे तो हमारे लेखन में सुधार हो जाएगा। यहाँ, मुझे अपने एक शिक्षक की बात याद आती है कि "आपको अपने आरंभिक कार्य को दूसरे को दिखाने में शर्माना नहीं चाहिए क्योंकि जो हम आरंभ में लिखते हैं तथा जो अंत में प्रकाशित होता है, वे दोनों बिल्कुल भिन्न प्रारूप होते हैं तथा प्रत्येक प्रारूप अपने पढ़ने और दूसरों की टिप्पणियों के साथ सुधरता जाता है" (लेखन के विभिन्न तरीकों के लिए बॉक्स 28.5 देखें)।

बॉक्स 28.5: क्या आपको सदैव प्रथम प्रारूप लिखना चाहिए?

यद्यपि, हमें यह नहीं मानना चाहिए कि सभी लेखक और रचनाकार इस पद्धति को अपनाते हैं और एक ही पाठ के अनेक प्रारूप लिखते हैं। उदाहरण के लिए, गीर्ट्ज कहता है कि वह प्रारूप नहीं लिखता है (ऑलसोन 1991 देखें)।

श्रीवास्तव कहते हैं, "मैं शुरू से अंत तक लिखता हूँ और जब वह समाप्त हो जाता है तो बस, कार्य पूर्ण हो जाता है। और मैं बहुत धीरे लिखता हूँ... अंत में कुछ छोटी-मोटी सफाई के अतिरिक्त, मैं केवल एक प्रारूप लिखता हूँ.. कभी-कभी लोग मुझसे आरंभिक प्रारूप माँगते हैं किंतु वे भी प्रारूप नहीं होते... केवल एक रूपरेखा होती है, विशेषकर, यदि वह पुस्तक हो परंतु मैं बिल्कुल ध्यान नहीं देता हूँ। मैं उसे सावधानीपूर्वक कलाकारी की तरह बढ़ाता जाता हूँ और जब वह समाप्ति पर पहुँच जाता है तो समझो सच में खत्म हो गया। यह प्रक्रिया बहुत धीमी है। मैं प्रोफेसर ऐंद्रे बेटेली के विषय में भी जानता हूँ जिनका प्रथम प्रारूप, अंतिम प्रारूप होता है और वे कभी एक शब्द भी नहीं बदलते हैं क्योंकि वे कई दिनों और सप्ताहों तक अत्यंत सावधानीपूर्वक लिखते हैं। किंतु ये व्यक्तिगत शैलियाँ हैं जिनमें नियमित प्रयास के साथ काफी समय लगता है। किंतु यहाँ मुख्य बात यह है कि व्यक्ति को लिखते समय शब्दों को मूल्यवान मणियों की तरह ध्यान से प्रयोग करना चाहिए (श्रीनिवास 1973:ix)।

प्रारूप समाप्त करने के पश्चात, मुझे पता होता है वह कहाँ पहुँच रहा है। वहाँ से, मैं "पाठ के साथ खेलना" आरंभ करता हूँ जिसका अर्थ है कि मैं उसे संपादित तथा संशोधित करता हूँ। साथी विद्वानों और पर्यवेक्षकों की टिप्पणियाँ, यदि हों तो, आनी आरंभ हो जाती हैं। मैं इन टिप्पणियों को विवेकपूर्णता के साथ जाँचता हूँ और अपने प्रारूप में परिवर्तन करता हूँ। मेरी भाषा भी सुधर जाती है और गलतियाँ भी ठीक हो जाती हैं। याद रखिए, "एक शब्द भी नहीं लिखा" होने की अवस्था में अब मेरे पास, प्रस्तुत करने हेतु एक पांडुलिपि है। अपना शोध-प्रबंध लिखने के दौरान, मुझे यह पता लगा और बाद में मैंने वॉल्कॉट की एक पुस्तक (1995) में देखा कि ऊँची आवाज में पढ़ने से व्यक्ति को अपने ही लिखे में विसंगतियों का पता लगता है। मैं अनेक अनावश्यक वाक्यों को हटा पाया तथा कुछ शब्दों के स्थान पर अधिक उपयुक्त शब्द प्रयोग कर पाया।

अतः जब तक हमारे सामने प्रारूप नहीं होता, हमारे विचार यहाँ-वहाँ भटकते रहते हैं। न तो वे संतोषजनक रूप से दूसरों तक पहुंचते हैं और न ही उनका अन्य विचारों के साथ संबंधों का पता लगता है। वॉल्कॉट (1995: 216) लिखता है:

मैं लिखने से पूर्व सोचता हूँ और अपने मस्तिष्क में आ रहे विचारों, वाक्यांशों और प्रश्नों को लिखता हूँ। किंतु मेरा उत्कृष्ट चिंतन, साहित्य में संबद्ध विचारों तथा आवश्यक उद्धरणों की मेरी खोज की भांति, कागज पर विचारों को लिखने के 'बाद' ही होता है, पहले नहीं।

लेखन प्रक्रिया के दौरान हमें, ऐसे अनेक विचारों का पता लगता है जिनपर हमने पहले नहीं सोचा होता है। मुझे याद है, 1992 में शोधार्थी होने के समय मैं अपना शोध-प्रबंध प्रस्तुत करने वाला था जब पूर्व-क्षेत्रकार्य गोष्ठी समूह के संयोजक से कहा कि मैं क्षेत्रकार्य में प्रतिवादियों को दिए जाने वाले भुगतान की भूमिका पर बोलूँगा। उस समय, मुझे यह नहीं पता था कि मैं क्या कहूँगा, मेरे तर्क की रूपरेखा क्या होगी, सिवाय इसके कि मैं अपने क्षेत्रकार्य के अनुभवों पर मनन करूँगा। इसे लिखने के दौरान (1992), मुझे ऐसे अनेक नए

विचार मिले जिनका मैंने विस्तार किया। मुझे यहाँ हॉवर्ड बेकर (1986) का ध्यान आता है जो कहता है: लेखन चिंतन है।

पहले यह देखा गया कि मात्रिक शोधार्थी लेखन की उस समस्या का सामना नहीं करते जिनका सामना गुझात्मक शोधार्थियों को करना पड़ता है क्योंकि उनके लिए, सापेक्षत:, लेखन की कुछ निश्चित अभिकल्पनाएँ उपलब्ध होती हैं। उदाहरण के लिए, भौतिक मानव विज्ञान के लेख में, निम्नलिखित अध्याय होंगे: प्रस्तावना, साहित्य की समीक्षा, पदार्थ और पद्धतियाँ, परिणाम और चर्चा तथा सारांश और सिफारिशें। यह शोध-प्रबंध की वस्तु विषय की सूची भी हो सकती है। हालांकि, कुछ सीमा तक यह सत्य नहीं होगा, यह नहीं भूलना चाहिए कि संख्याओं और उनके बीच उन्हीं के द्वारा बनाए संबंधों का कोई अर्थ नहीं होता है। इनकी व्याख्या चाहिए होती है, जिसके लिए कल्पना की आवश्यकता होती है। इन व्याख्याओं को गुणात्मक संदर्भों में व्यक्त किया जाता है, जिसके लिए गुणात्मक शोध के लिए आवश्यक लेखन शैली की अपेक्षा होती है। इन व्याख्याओं को गुणात्मक संदर्भों में व्यक्त किया जाता है, जिसके लिए गुणात्मक शोध के लिए आवश्यक लेखन शैली की अपेक्षा होती है। गुणात्मक तथा मात्रिक शोध में प्रकार का नहीं, अपितु स्तर का अंतर होता है।

यद्यपि, अत्यधिक मात्रिक और अत्यधिक गुणात्मक पाठों में महत्वपूर्ण अंतर को यहाँ देखा जा सकता है। पहले में, निष्कर्ष (परिणाम) महत्वपूर्ण होते हैं और इन पाठों में जो महत्वपूर्ण नहीं होता, वह इन्हें लिखने का तरीका तथा इनकी शैली होती है। ये मुख्यत: "लेखक-आरंभिक" पाठ होते हैं और इनकी तुलना में, मानव जाति वर्णन तथा समाजशास्त्रियों और सामाजिक मानवविज्ञानियों द्वारा उत्पन्न गुणात्मक शोध "लेखक संपन्न" होते हैं। इन पाठों को पूरी तरह तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक पाठक को यह न पता लगे कि क्षेत्र कार्यकर्त्ता कौन था; उसकी मुख्य सामाजिक विशेषताएँ क्या थीं; और उसने अपना क्षेत्रकार्य किस प्रकार किया। क्षेत्रकार्यकर्त्ताओं की डायरियाँ मानव जाति वर्णन की विशिष्टता का अनुमान देने में अत्यंत महत्वपूर्ण होती हैं। अपनी चर्चा के अंत में, एक और अभ्यास पूर्ण करना अच्छा रहेगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अभ्यास 28.5

तुलनात्मक पद्धति पर चार पृष्ठ लिखिए और अगले दिन अपना लिखा हुआ पढ़िए। क्या आपको पाठ को परिवर्तित करने की आवश्यकता महसूस होती है? क्या आपको लगता है कि शब्दों और वाक्यों में फेर-बदल करने से पाठ पढ़ने में बेहतर लगेगा? क्या आपको लगता है कि थोड़ा और जोड़ने या किसी शब्द को यहाँ-वहाँ काटने अथवा कुछ अभिव्यक्तियों में परिवर्तन करने से आप जो कहना चाहते थे, उसे आप बेहतर तरीके से अभिव्यक्त कर पाएँगे? आप आगे बढ़कर परिवर्तन कर सकते हैं और अपने अध्ययन केंद्र के एमएसओ-002 के मित्रों/साथियों को प्राय: दे सकते हैं। उनसे प्रतिक्रिया लेने के बाद, आप शायद अपने पाठ में और परिवर्तन करना चाहेंगे। आह, आप लिखने लगे!

28.8 निष्कर्ष

अंत में, मैं यह कहना चाहता हूँ कि शोध प्रबंध लेखन में सिद्धांत की भूमिका पर मैंने चर्चा नहीं की हैं क्योंकि उसपर सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के अध्याय में अधिक सार्थक रूप से चर्चा की जा सकती है। किंतु, यहाँ ध्यान दिया जाए कि लेखक द्वारा प्रयुक्त तकनीकी शब्द उस सिद्धांत से निकलते हैं, जिसका वह अनुगमन करता है। मेरा मुख्यत: यह कहना है कि क्षेत्रकार्य की कला के लिए लिखना महत्वपूर्ण है। हमारे क्षेत्रकार्य, हमारे मानव जाति वर्णन संबंधी पाठों की "ईंटें" हैं; हमारी डायरी के पन्ने हमारे विनिबंधों में दिखाई देते हैं।

हमारे द्वारा जिन लोगों का अध्ययन होता है और जिस समुदाय का हम हिस्सा हैं, उनके प्रति हमारा मुख्य कर्त्तव्य यथाशीघ्र और यथासंभव सावधानीपूर्वक क्षेत्रकार्य विवरण लिखना है। इस पर बल देना आवश्यक है क्योंकि एक बात जो देखने में आती है, वह यह है कि अनेक क्षेत्र अध्ययन लिखित अथवा रिपोर्ट रूप में सामने नहीं आ पाते हैं (वॉल्कॉट 1995: 226; श्रीनिवास 1996:194)।

28.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

गेल्टंग, जे. 1967, *थिओरी एंड मेथड्स ऑफ सोशल रिसर्च,* जॉर्ज एलेन तथा अनविनः लंदन (लेखन के लिए सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के सभी पक्षों से संबद्ध)

मिल्स, सी. राइट 1959, *दि सोश्योलॉजिकल इमेजिनेशन,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड (सामाजिक पूछताछ तथा परिणाम प्रस्तुतीकरण पर शानदार व्याख्या के लिए)

सेलिज, सी., एम. जहोदा तथा एस. डब्ल्यू कुक 1966, *रिसर्च मेथड्स इन सोशल रिलेशन्स,* होलट, रिनेहार्ट तथा विन्सटनः न्यूयॉर्क (विशेषकर, शोध रिपोर्ट लेखन पर अध्याय)

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 29
इंटरनैट और शब्द संसाधक का प्रयोग

इकाई की रूपरेखा

29.1 प्रस्तावना

29.2 इंटरनैट क्या है और यह कैसे काम करता है?

29.3 इंटरनैट सेवाएं

29.4 वैब पर सुचनाएं ढूँढ़ना – खोज इंजन

29.5 इंटरनैट लाइन पर उपलब्ध सूचनाओं तक पहुँचना और उनका उपयोग करना

29.6 ऑन लाइन पर ही उपलब्ध जरनल और लिखित सामग्री

29.7 सांख्यिकीय संदर्भों की साइटें

29.8 सामग्री/आंकड़े स्रोत

29.9 शोध में ई-मेल सेवाओं का उपयोग

29.10 निष्कर्ष

29.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

आशा की जाती है कि इकाई 29 पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के योग्य हो जायेंगे–

- इंटरनैट पर उपलब्ध विभिन्न प्रकार के स्रोतों में अन्तर कर पाने;
- अपने सामाजिक शोध में सहायक साइटों की सूची बनाना प्रारम्भ कर सकने;
- सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के लिए सांख्यिकीय यंत्रेतर सामग्री (Software) के प्रयोग के संबध में प्रारंभिक समझ प्राप्त करना; तथा
- अपने शोध में इंटरनैट और शब्द संसाधक का प्रयोग करना।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

29.1 प्रस्तावना

खंड 7 की इकाइयों में हमने बताया था कि सूचना संचार प्रौद्योगिकी (इन्फॉर्मेशन कम्युनिकेशन टैक्नोलॉजी, आई सी टी) सामाजिक वास्तविकताओं का अध्ययन करने में रत समाजशास्त्री के लिए काफी सहायता प्रस्तुत कराती है। 29 इकाई बताती है कि नई प्रौद्योगिकी की विशेषताओं का किस प्रकार उपयोग किया जाये।

यह इकाई बताती है कि इंटरनैट क्या है और किस तरह यह कई प्रकार से शोधकर्ता की सहायता करती है। बहुत संभव है कि आपको पहले से ही इस प्रकार की सामग्री की उपलब्धता के विषय में जानकारी हो यदि ऐसा है तो आपको इस इकाई में सम्मिलित की गई सामग्री बहुत ही प्रारम्भिक लगेगी लेकिन उन लोगों के लिए, जिनको अभी इस क्रांतिकारी जानकारी से, इकाई 29 में दिए अनुसार परिचित होना है, यह काफी उपयोगी और लाभदायक होगी। कम खर्चीले निजी कम्पयूटरों की बढ़ती हुई उपलब्धता और सरकार के किफायती दरों पर इंटरनैट सुविधा उपलब्ध कराने के प्रयासों के परिणामस्वरूप आशा की जाती है कि भारत में अधिक से अधिक शोधकर्ता अपनी शोध सामग्री की रूपरेखा का निर्धारण और उसका संसाधन आई सी टी की सहायता से करेंगे।

सूचना संचार प्रौद्योगिकी (सामान्य रूप से आई सी टी के रूप में जानी जाने वाली) ने मानव जीवन के हर क्षेत्र में क्रांति ला दी है। लोकप्रिय संक्षिप्ताक्षर डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू

(www या world wide web) किसी के लिए भी सारी दुनिया के ज्ञान का द्वार है। वह दिन बीत गए जब पुस्तकालय का प्रयोग कर पाना अपने आप में एक महत्वपूर्ण घटना होती थी – पुस्तकालय का कार्ड बनवाने की अनुमति प्राप्त करने से लेकर अपेक्षित सामग्री को ढूँढ़ने तक का परिश्रम एक बड़ा कार्य होता था। पुस्तकालयों तथा देश के बाहर के ज्ञान स्रोतों तक पहुँच पाना एक सपना मात्र था। यह सब और इस सबसे भी बहुत अधिक अब हमारे डैस्क टॉप पर ही उपलब्ध है। एक बटन को क्लिक करके हमको वह सब जानकारी मिल सकती है जिसकी हमें आवश्यकता है बशर्ते कि हम कम्प्यूटर के प्रयोग और इन्टरनेट के प्रयोग की विधि जानते हों और उसमें कुशल हों।

29.2 इंटरनैट क्या है और यह कैसे काम करता है?

इंटरनैट विभिन्न परिपथजाल (Network) का एक नेटवर्क है जो कि किसी कम्प्यूटर को अन्य कम्प्यूटरों से जोड़ता है। यह किसी दूसरे कम्प्यूटर पर फाइलों में एकत्रित की गई सूचनाओं या दस्तावेजों तक पहुँचने के लिये प्रयोग में लाया जाने वाला एक यात्रा का साधन है। इसकी तुलना एक अंतर्राष्ट्रीय संचार सुविधा/उपयोगिता से की जा सकती है जो कि कम्प्यूटरों के लिये कार्य करती है। कभी-कभी इसकी तुलना एक विशाल अंतर्राष्ट्रीय नली/नलों की प्रणाली से की जाती है। फिर भी इंटरनैट में उसके स्वयं के पास कोई जानकारी निहित नहीं होती है। यह कहना गलत होगा कि कोई दस्तावेज विशेष इंटरनैट पर मिला। वास्तव में हमें कहना चाहिए कि वह इंटरनैट के माध्यम से या इंटरनैट का प्रयोग करके मिला है।

MAADHYAM IAS

इंटरनैट पर कम्प्यूटर निम्नलिखित में से एक या सभी सेवाओं का प्रयोग करते हैं–

- **इलैक्ट्रॉनिक मेल (ई-मेल)** – इसके माध्यम से कोई व्यक्ति किसी और को मेल भेज सकता है या उसकी मेल प्राप्त कर सकता है। यह ई-मेल के माध्यम से चर्चा/विचारविमर्श समूहों तक पहुँच भी उपलब्ध कराती है।
- **टैलनेट या रिमोट लॉगिन**– यह किसी व्यक्ति को दूसरे कम्प्यूटर पर लॉग ऑन करने और उसका उपयोग उसी प्रकार करने की सुविधा उपलब्ध कराता है जैसे वह उसी जगह पर उपस्थित हो।
- **एफ टी पी (या फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल)**– यह किसी एक कम्प्यूटर को शीघ्रता से जटिल फाइलों को पूरी की पूरी किसी दूर के कम्प्यूटर निकाल देखने या अपने कम्प्यूटर में सेव करने की सूविधा देता है।
- **वर्ल्ड वाइड वैब (डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू या "द वैब")** – यह इंटरनैट पर सबसे बड़ी और सबसे तेजी से इस्तेमाल होने वाली गतिविधि है।

इंटरनैट कैसे काम करता है?

प्रत्येक कम्प्यूटर जो कि इंटरनैट से जुडा हुआ है वह एक नैटवर्क का हिस्सा बन जाता है। उदाहरण के लिये आप एक मॉडेम का प्रयोग करके और एक स्थानीय नम्बर डायल करके एक इंटरनैट सेवा प्रदाता आई एस पी से सम्पर्क स्थापित करते हुैं।

अपने कार्यालय में आप एक लोकल एरिया नेटवर्क (लैन या एल ए एन) के भाग हो सकते हैं किन्तु संभवतः आप फिर भी किसी इंटरनैट से जुडे हुये होंगे जो कि किसी आई एस पी का जिसके साथ आपके संस्थान का करार होगा, प्रयोग कर रहा होगा। जब आप अपने आई एस पी से सम्पक्र स्थापित करते हैं तो आप उनके नैटवर्क का भाग बन जाते हैं। वह आई एस पी किसी और बडे नैटवर्क से सम्पर्क स्थापित करके उनके नैटवर्क का भाग बन सकता है। जैसा कि पहले बताया गया है इंटरनैट सामान्य रूप से नैटवर्को का नेटवर्क है।

एक वैबसाइट का पता विशेष या एक यू आर एल http:\\www.ignou.org के रूप में दिखाई देता है। इस नाम में http:\\ का अर्थ है कि कम्प्यूटर संचार के लिये Hyper Text Transfer Protocol का प्रयोग करेगा। www या world wide web वह स्रोत है जहां यह वैबसाइट स्थित होगी; ignou किसी वैबसाइट को दिया गया विशिष्ट नाम बताता है तथा वजह बताता है कि Domain Name Server कौन है जो कि इस अनुरोध को क्रियान्वित करने के लिये काम करेगा और माँगी गई वैबसाइट को उपलब्ध करायेगा।

(उदाहरण के लिये बॉक्स 29.1 को देखें)

बॉक्स 29.1: "इंटरनैट किस प्रकार काम करता है?" उदाहरण दें।

उदाहरण के लिये आप अपने ब्राउजर में http:\\www.ignou.org यू आर एल टाइप करते हैं। तब ब्राउजर DNS server से आई पी (इंटरनैट प्रॉविजन) प्राप्त करने के लिये सम्पर्क करता है। उसके बाद डी एन एस सर्वर किसी आई पी पते को ढूँढ़ने के लिये किसी एक रूट डी एन एस से सम्पर्क करके अपनी खोज शुरू करता हैं। रूट सर्वरों को सभी डी एन एस सर्वरों के, जो कि उच्च स्तर के डौमेनों को संभालते हैं, आई पी पते मालूम होते हैं (.com, .net, .org, आदि)। आपका डी एन एस सर्वर www.ignou.org के लिये रास्ता पूछेगा और रास्ता बतायेगा कि वह www.ignou.org का आई पी पता नहीं जानता है लेकिन वह उसे .org जो डी एन एस सर्वर का पता बता देगा। आपके नाम का सर्वर तब .org DNS सर्वर से प्रश्न करेगा कि क्या वह www.ignou.org का पता जानता है। Org domain के DNS सर्वर को उस नाम के आई पी पते के सर्वर था पता मालूम होता है जो कि www.ignou.org डौमेन को संभालता है और इसलिये वह उसे वह पता भेज देता है।

उसके बाद आपके नाम का सर्वर www.ignou.org के डी एन एस सर्वर से सम्पर्क करता है और पूछता है कि क्या वह www.ignou.org का पता जानता है। उसे वह पता वास्तव में मालूम होता है इसलिये वह उस आई पी पते को आपके डी एन एस सर्वर को वापिस भेज देता है जो कि उसे ब्राउजर को भेज देता है और उसके बाद www.ignou.org से web page प्राप्त करने के लिये सम्पर्क करता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इंटरनैट तक पहुँचना

वे व्यक्ति और कम्पनियाँ जो इंटरनैट पहुंच सेवाओं के इच्छुक होते हैं उनके लिये बहुत सारे विकल्प उपलब्ध है जो कि सेवा शर्तों गुणवत्ता तथा मूल्य में एक दूसरे से काफी भिन्न हैं। कई डायल करने पर (डायल अप) निःशुल्क इंटरनैट सेवा प्रदान करने वाले आई एस पी भी है जो प्रारम्भिक स्तर की इंटरनैट पहुँच निःशुल्क उपलब्ध कराते हैं। किसी एक कम्पनी के लिये जो कि उच्च बैंड विडथ के साथ बहुत अधिक ई-कॉमर्स के प्रयोग की इच्छुक हैं उसके लिये रेंज के दूसरी ओर भी एक विशेष समाधान की आवश्यकता होती है। कम्पनी एक क्षमता विशेष (जैसे 20 एम बी पी एस) की लाइन पट्टे पर लेगी जो कि व्यावसायिक रूप मे वैबसाइट रखेगी। इसमें विभिन्न ध्यान देने योग्य बाते हैं मूल्य कनैक्शन का प्रकार (डायल अप, तत्काल, उद्देश्यपरक), उपलब्ध सहायक सेवायें (वैबसाइट होल्डिंग, इंट्रानैट/एक्सट्रानैट प्रावधान, डॉमेन नेम सेवायें) डाउनलोड गति (वह गति जिससे सूचनाएं आप तक पहुँचती हैं) तथा अप लोड गति (गति जिससे आपके द्वारा भेजी गई सूचनाएं जाती हैं)।

सर्वाधिक प्रयोग में लाई जाने वाली इंटरनैट पहुँच प्रक्रियायें हैं–

- **डायल अप इंटरनैट :** यह व्यक्तियों व छोटे कारोबारों के लिये ई-मेल तथा वैबसाइट के साथ सबसे अधिक प्रयोग में लाई जाने वाली सेवा है। उस क्षेत्र में कई प्रकार के सेवा प्रदाता हैं जो कि राष्ट्रीय व स्थानीय सेवाएं, जिनमें से अधिकतर वैबसाइट होस्टिंग (कुछ मासिक एकसैस फीस में सम्मिलित) और हैल्प डैस्क सेवायें उपलब्ध

करा रहे हैं। इसके लिये एक मॉडेम व एक टेलीफोन लाइन की आवश्यकता होती है जिसके माध्यम से विषिष्ट प्रयोगकर्ता नम्बर (username) तथा पासवर्ड का प्रयोग करके इसे आई एस पी से जोडा जा सकता है।

भारत में डायल अप कनैकशनों के लिये प्रमुख इंटरनैट सर्विस प्रदाताओं में क्षेत्रीय स्तर के सेवा प्रदाताओं के साथ-साथ वी एस एन एल, एम टी एन एल (केवल दिल्ली व मुम्बई में), सत्यम, टचटेल, आदि प्रमुख सेवा प्रदाता हैं। आप उनमें से किसी भी इंटरनैट सेवा प्रदाता से अकाउन्ट खरीदतें हैं तो आपको डायल अप नम्बर के साथ एक विशिष्ट उपभोक्ता नाम (यूजर नेम) और एक पासवर्ड मिलता है जब आप टेलीफोन लाइन से मॉडेम कनैक्ट करके नम्बर डायल करते है तो वह उपयोक्ता नाम और पासवर्ड पूछता है जिसके बाद वह इंटरनैट सेवा प्रदाता से सम्पर्क जोड़ देता है जहाँ आप इंटरनैट तक पहुँच जाते हैं।

आई एस डी एन (ISDN) – इंटिग्रेटिड सर्विसेज डिजिटल नेटवर्क:

आई एस डी एन किसी उपभोक्ता को 64 के बी पी एस इंटरनैट सक्रिट और टेलीफोन/फैक्स लाइन तत्काल ही उपलब्ध कराता है या 128 के बी पी एस (128 kbps) तक की गति के एक डायल अप कनैकशन की अनुमति देता है। यह सेवा एक ऐसे व्यवसाय के लिये उपयोगी है जिसके एक ही समय सेवा का उपयोग करने वाले ऑन लाइन उपभोक्ताओं की संख्या कम हो या जिन्हें काफी बड़े आकार की फाइलों को (जैसे ग्रैफिक्स का) ट्रान्सफर करने की आवश्यकता होती है, जो कि ऑन लाइन कनैक्शन पर बहुत धीमी गति से हो पाती हैं। आई एस डी एन इंटरनैट (एक्सैस) पहुँच के अधिकतर मामलों में उपभोक्ता को आई एस डी एन लाइन अपने कार्यालय परिसर में ही उपभोक्ता को आई एस डी एन लाइन अपने कार्यालय परिसर में ही संस्थापित करनी होती है।

केबिल मॉडेम – विभिन्न प्रौद्योगिकियों का प्रयोग करते समय, यह दो उत्पाद "इन्सैटट कनैक्शन" आधार पर (किसी डायल अप की आवश्यकता नहीं) उच्च गति इंटरनैट एक्सैस उपलब्ध कराते हैं। डाउनलोड स्पीड 512 के बी पी एस से 2 एम बी पी एस के बीच तथा अप लोड स्पीड 128 से 740 के बी पी एस के बीच रहती है।

MAADHYAM IAS

इंटरनैट की कुछ खास विशेषताएं

शोध के पारम्परिक सूचना स्रोतों की तुलना में इंटरनैट निम्नलिखित अतिरिक्त संभावनाएं उपलब्ध कराता है–

- **अधिक अद्यतन** (up-to-date) **सामग्री – सरकारी प्रकाशन अधिकतर इंटरनैट पर पुस्तकालयों में पहुँचने से पहले ही प्रकाशित कर दिये जाते हैं तथा सूचना सेवायें समाचार पूरे दिन ही अद्यतन की जाती है।**
- **सामग्री तक पहुँच बढ़ती है** – किसी एक पुस्तकालय के लिये वैब पर उपलब्ध सारी सूचनाओं की कागजों पर मुद्रित प्रतियों उपलब्ध कराना असम्भव है। इसके अतिरिक्त इंटरनैट पर चौबीसों घंटे सूचनायें उपलब्ध रहती है।
- **पारस्परिक क्रिया** (Interactivity) – कुछ साइटों पर ई-मेल के माध्यम से चर्चा करने का मंच उपलब्ध कराया जाता है। इसमें आप विभिन्न विषयों पर विचार विमर्श कर सकते हैं और अपनी टिप्पणियाँ भेज सकते हैं।

आइये 29.1 का अभ्यास पूरा करें और सामाजिक शोध में आई सी टी द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सहायता को हम कितना समझ पाये हैं इसका मूल्यांकन करें –

अभ्यास 29.1

आई सी टी सामाजिक शोध में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि यह विश्लेषण के लिये पुस्तकों, पत्रिकाओं, सामग्री/आंकड़े तथा सॉफ्टवेयर के अपार स्रोत तक पहुँच उपलब्ध कराती है। पता लगाइये कि आपके अध्ययन केन्द्र (स्टडी सैंटर) में किस प्रकार की इंटरनैट सुविधा उपलब्ध है। यदि स्टडी सैंटर में कोई इंटरनैट सुविधा उपलब्ध नहीं है तो अपने स्थान के आस पास के साइबर कैफे में जाइये और साइबर कैफे के प्रभारी से बात करके पता लगाइये कि उस कैफे के पास निम्नलिखित में से किस प्रकार की इंटरनैट एक्सैस उपलब्ध है–

- डायल – अप इंटरनैट
- आई एस डी एन (इंटिग्रेटिड सर्विसेज डिजिटल नैटवर्क)
- केबिल मॉडेम

अपनी शोध परियोजना के लिये आवश्यक सूचनाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिये इस सुविधा का कम से कम एक बार उपयोग करके देखिये और उसके बाद दस लाइनों का एक नोट लिखकर बताइये कि सूचनायें प्राप्त करने की यह पद्धति उपयोगी है अथवा नहीं। इस प्रक्रिया में आई कठिनाइयों, यदि कोई हो, का भी उल्लेख कीजिये।

29.3 इंटरनैट सेवाएं

नीचे दिया जा रहा विवरण हमें इस समय सामान्य रूप से सभी शोधकर्ताओं और जनसमुदायों के लिये उपलब्ध विभिन्न प्रकार की इंटरनैट सेवाओं के संबंध में जानकारी उपलब्ध कराता है–

वर्ल्ड वाइड वैब (डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू)

www में सभी इंटरनैट सेवायें समाविष्ट हैं/सम्मिलित हैं आप इसमें से दस्तावेजों को निकाल सकते हैं, आकारों प्रतिरूपों, एनिमेशनों (चित्रों से जीवन्त बनाये स्वरूपों को) और वीडियो को देख सकते हैं, ध्वनि फाइलों को सुन सकते हैं, आवाज बोल और सुन सकते हैं और पूरे विश्व के किसी भी सॉफटवेयर से चलाये जा रहे कार्यक्रमों को देख सकते हैं बशर्ते कि आपके कम्प्यूटर में इसके लिये अपेक्षित हार्डवेयर व सॉफ़्टवेयर है।

जब आप नेटस्केप या माइक्रोसॉफ्ट का इंटरनैट एक्सप्लोरर या किसी अन्य ब्राउजर का प्रयोग करके इंटरनैट पर लॉग ऑन करते हैं तो आप वर्ल्ड वाइड वैब पर दस्तावेजों को देखते हैं। वर्तमान आधार, जिस पर आपका www काम करता है, HTML नामक प्रोग्राम भाषा है। HTML तथा HTML में निहित अन्य प्रोग्राम ही Hyepertext को संभव बनाते हैं। Hyepertext वह क्षमता है जिसमें वैबपृष्ठ (Wavepage) वह क्षेत्र, बटन या चित्र होते हैं जिन पर आप अपने माउस से क्लिक करके अपने कम्प्यूटर पर कोई दूसरा दस्तावेज खोलते हैं। हाइपरटैक्स्ट का प्रयोग करते हुये क्लिक करने की क्षमता ही वह विशेषता है जो कि वैब के संबंध में विशिष्ट व क्रॉंतिकारी है। प्रत्येक दस्तावेज़ (डॉकुमेंट) या फाइल या साइट या चलचित्र या ध्वनि फाइल या आपको वैब पर मिलने वाली किसी भी चीज का एक विशेष यू आर एल (यूनिफॉर्म रिसोर्सलोकेटर) होता है जो कि कम्प्यूटर पर उस चीज की, पहचान कराता है कि वह कहाँ है और उसका विशिष्ट फाइल नाम क्या है। जब आप किसी वैब पृष्ठ पर किसी भी प्रकार के क्लिक को क्लिक करते हैं तो आप विश्व के किसी कम्प्यूटर पर से डाकुमैंट विशेष को ढूँढकर निकालने का अनुरोध भेजते हैं जो कि अपने उस विशेष यू आर एल के नाम से जाना जाता है। यू आर एल वैब पेजों के पते जैसे होते हैं। इस प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकृत मानकों जैसे (टी सी पी/आई पी और एच टी एम एल) का समूह है। विश्व के किसी भी भाग से सूचना प्राप्त कर पाने की क्रिया को, जो कि राजनीतिक और भाषाई सीमाओं से परे है, संभव बनाता है।

MAADHYAM IAS

इलैक्ट्रॉनिक मेल या ई-मेल

इंटरनैट का सबसे प्रमुख तथा संभवतः सबसे उपयोगी भाग सबसे पहले आने वाला अर्थात इलैक्ट्रॉनिक मेल या ई-मेल है जो कि तीव्र गति से स्थानीय तथा वैश्विक सूचना का आदान प्रदान संभव बनाती है तथा उसने बहुत धीरे चलने वाली व्यक्तियों द्वारा इधर उधर भेजी जाने वाली मेल को सदा के लियें 'स्नेल मेल' से नामित कर दिया है। ई-मेल प्रभावी संचार माध्यम के रूप में न केवल मित्रों से मेल प्राप्त करने व भेजने का साधन है बल्कि व्यापारिक भागीदारों और साथ में काम करने वाले व्यक्तियों के समूहों के साथ भी सूचना के आदान प्रदान का प्रमुख साधन है। इसके द्वारा तेजी से प्रगति की अद्यतन जानकारी प्राप्त की जा सकती है तथा शीघ्र ही पूंछे जाने वाले प्रश्नों तथा प्राप्त दूसरों के लिये भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। एक दशक के अन्दर ही विभिन्न प्रकार के प्रतिस्पर्धी तथा स्वामिगत ई-मेल, विभिन्न अभिकलन आधारों (कम्प्यूटिंग प्लेटफार्मस) पर जो कि अधिकतर आपस में एक दूसरे से बात नहीं कर सकते थे, विकसित किये गये।

फिर भी जैसे-जैसे इंटरनैट का विस्तार हुआ तथा मानकों को क्रियान्वित किया गया जिससे कि विभिन्न ई-मेल प्रणालियाँ पारदर्शी रूप में एक दूसरे से सम्पर्क कर सकें। ई-मेल का प्रयोग बहुत अधिक बढ़ गया है। यह न केवल व्यापारों में आन्तरिक व उनके बीच के संचार का प्रमुख भाग बन गया है वरन इसका प्रयोग अब लगभग हर उस व्यक्ति द्वारा किया जाता है जिसके पास अपना व्यक्तिगत कम्प्यूटर (पी सी) है।

ई-मेल का प्रयोग

अब ई-मेल आपके ब्राउजर सॉफ्टवेयर के अभिन्न भाग उदाहरण स्वरूप आउटलुक एक्सप्रैस माइक्रोसॉफ्ट के इंटरनैट एक्सप्लोरर के साथ के रूप में ही आता है। अपना ब्राउजर सॉफ्टवेयर स्थापित करने पर आप को इंटरनैट सर्विस प्रोवाइडर के साथ अपना कनैक्शन स्थापित करने के लिये भी कहा जाता है। आपको अपना ई-मेल पता दर्ज करने के लिये कहा जायेगा। ई-मेल पते का पहला भाग आप के द्वारा पसंद किया गया होगा किन्तु यह आपके आई एस पी (इंटरनैट सर्विस प्रोवाइडर) के पास औरों से अलग होना चाहियेः उसके बाद "@" का चिन्ह आता है जिसके बाद आपके आई एस पी का नाम आता है। आपका आई एस पी आपको एक नया एकाउन्ट खोलने के लिये आवश्यक कोड उपलब्ध करायेगा। सॉफ्टवेयर आप से एक नाम उपलब्ध कराने के लिये भी कहेगा जिससे कि आप अपने अकाउन्ट द्वारा किसी को भेजी गई मेल में अपनी पहचान करवाना चाहेंगे। आपको अपने आईएसपी के साथ स्वीकृत करवाया गया अपना नाम और पासवर्ड भी देना होगा।

ई-मेल भेजना एक आसान काम है। आप अपना पत्राचार सीधे ही ई-मेल सॉफ्टवेयर में या किसी अन्य शब्द संसाधक कार्यक्रम में लिख सकते हैं और उसे ई मेल के साथ जोड़ कर भेज सकते हैं। जिससे आपके पत्र प्रारूप (formatting) वैसा ही बना रहे। यदि आप अपनी ई-मेल कई लोगों को भेजना चाहते हैं तो आप यह भी बड़ी आसानी से कार्बन कॉपी (सीसी) के विकल्प से कर सकते हैं। यदि आप ई-मेल प्राप्त करने वाले अन्य पार्टियों की पहचान गुप्त रखना चाहते हैं तो आप उनके पते ब्लाइंड कार्बन कॉपी फील्ड में लिख सकते हैं। एक बार यह काम पूरा हो जाने पर 'send' बटन को दबाइये और ई-मेल आपके कम्प्यूटर से चली जायेगी। आप सभी भेजी गई मेलों को प्रति 'सैन्ट बॉक्स' में रखने का विकल्प भी दे सकते है। जो कि भविष्य में संदर्भ के रूप में काम आ सकता है या अपनी भेजी गई व प्राप्त मेल को परियोजना या श्रेणी के आधार पर फाइलों में अपने मेल सॉफ्टवेयर के अन्दर ही व्यवस्थित कर सकते हैं। (ई-मेल किस प्रकार काम करती है यह देखने के लिये देखें बॉक्स 29.2)

MAADIYAM IAS

बॉक्स 29.2: ई-मेल कैसे काम करती है–

1) जब एक बार आपने ई-मेल लिख ली और send बटन दबा दिया, तब आपका ई-मेल प्रोग्राम आपके ई मेल को एस एम टी पी सर्वर को जहाँ कि आपका अकाउंट है, भेज देता है।

2) एसएमपीटी सर्वर पते को दो भागों में विभक्त करता है Someoneelse@theirdomain.com. someoneelse (अकाउन्ट का नाम) तथा theirdomain.com (डोमेन). एस एम टी पी तब डी एन एस सर्वर से सम्पर्क करता है और जहाँ उनका डॉमेन डॉट कॉम स्थित है उसका पता पूछता है।

3) डी एन एस सर्वर एस एम टी पी को पता वापस भेज देता है।

4) फिर एस एम टी पी सर्वर ई-मेल मैसेज को एस एम टी पी सर्वर को भेजता है जहाँ कि उनका डॉमेन theirdomain.com स्थित है।

5. दूसरा एस एम टी पी सर्वर ई-मेल संदेश को किसी और के (someoneelse) अकाउन्ट को पहुंचाता है।

6) कोई और (someoneelse) अपने कम्प्यूटर पर लॉग ऑन करता है अपने अकाउन्ट से अपने कम्प्यूटर पर ई-मेल का सॉफ्टवेयर खोल लेता है।

एक बार इसमें निपुण हो जाने और इसके बुनियादी नियम समझ लेने पर ई-मेल संचार का एक अद्भुत साधन बन जाता है। यद्यपि कोई भी स्पैम (Spam) या अनचाही मेल प्राप्त नहीं करना चाहता है जब तक कि उनको आपके संपर्कों या संभावित उपभोक्ताओं के नेटवर्क में अपने भाग के रूप में न चुना गया हो। स्पैम इंटरनैट पर विद्यमान एक हताश करने वाली वास्तविकता है और जो लोग उसको निरन्तर भेजते रहते हैं उन्हें अच्छा नेट नागरिक नहीं माना जाता। व्यक्तिगत तथा व्यापारिक संदेशों के लिये भेजने वालों (प्रयोग कर्ताओं) को परामर्श दिया जाता है कि "सैन्ड" बटन दबाने से पहले उन्हें अपनी ई-मेल को सावधानी से एक दो बार पढ़ लेना चाहिये क्योंकि जल्दबाजी में दिये गये उत्तरों से गलतफहमियाँ तथा अप्रिय स्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

29.4 वैब पर सूचनाएं ढूँढना – खोज इंजन

सामान्य वैब पर खोज इंजन वास्तव में डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू पर सीधे ही खोज प्रारम्भ नहीं कर देते हैं। प्रत्येक इंजन एक सामग्री/आंकड़ेबेस के पूरे वैब पेजों में से चुना गया होता है, खोज करता है। सर्च इंजन के सामग्री/आंकड़ेबेस स्पाइडर नामक कम्प्यूटर रोबो कार्यक्रम द्वारा चुने व तैयार किये जाते हैं। यद्यपि कहा जाता है कि स्पाइडर पृष्ठों की खोज में वैब पर "crawl" धीरे-धीरे चलते रहते किन्तु वास्तव में वे एक ही जगह पर स्थित रहते हैं और अपने सामग्री/आंकड़े बेस में उपलब्ध पृष्ठों के विद्यमान संपर्को (अर्थात जिनके विषय में उन्हें जानकारी होती है "know about") के आधार पर सामग्री/आंकड़े बेस में जोड़ने के लिये संभावित पृष्ठों की खोज करते है। वे ना ही किसी यू आर एल को टाइप कर सकते हैं और न ही किसी सूचना के लिये अपने विवेक से निर्णय लेकर वैब पर उसे ढूँढ सकते हैं। यद्यपि कम्प्यूटर बहुत ही परिष्कृत (sophisticated) होते हैं किन्तु फिर भी इनमें अपनी कोई बुद्धि नहीं होती है।

सर्च इंजनों का प्रयोग

वैब पर जानकारी ढूँढने का यह सबसे अधिक उपयोग में लाया जाने वाला तरीका है। अधिकतर सर्च इंजन अपेक्षित जानकारी के संबंध में महत्व के शब्दों (keywords) के प्रयोग से प्रश्न करके सामग्री प्राप्त करते हैं। महत्व के शब्द (keyword) वैब पेज पर

विद्यमान कोई भी शब्द हो सकता है। यह आवश्यक है कि प्रयोग किया जाने वाला महत्व का शब्द आपके द्वारा खोज के लिये चुने गये विषय के संबंध में संगत शब्द हो। कुछ शब्दों के योग को या कई शब्दों को भी मूल महत्व के शब्दों के रूप में प्रयोग किया जा सकता है और सर्च इंजन अपने सामग्री/आंकड़े बेस के आपके द्वारा प्रयुक्त महत्व के अधिकाधिक शब्दों से युक्त सभी पृष्ठों को दिखा देगा। उदाहरण के लिये यदि आप नेट पर से निःशुल्क डाउनलोड की जा सकने वाली स्टैटिस्टिकल सॉफ्टवेयर सामग्री के विषय में जानना चाहते हैं तो महत्व के शब्द (keywords) "स्टैटिस्टिक्स साफ्टवेयर फ्री" हो सकते हैं। ध्यान रखें कि कुछ सर्च इंजन प्रत्येक पृष्ठ पर प्रयुक्त शब्दों की सूची बना कर रखते हैं जबकि अन्य केवल डॉकुमैंट के एक भाग की ही सूची बनाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ सर्च इंजन upper case और lower case में अन्तर करते हैं। अन्य इंजन उसमें अन्तर न करते हुये सभी को एक समान रूप में स्टोर करते हैं।

महत्व के शब्दों के आधार पर की गई खोजों को एक ही स्पैलिंग के किन्तु अर्थ में भिन्न होने वाले शब्दों में अन्तर करने में बहुत कठिनाई का सामना करना पडता है (जैसे hard cider, a hard stone, a hard exam और आपके कम्प्यूटर की hard drive)। इसके परिणामस्वरूप कम्प्यूटर ऐसी सामग्री भी प्रदर्शित कर देता है जो कि आपको खोज से बिल्कुल संबंधित नहीं होती है। खोज इंजन आपके प्रश्नों के उत्तर में वह सामग्री भी उपलब्ध नहीं करा सकते जिनका अर्थ समान होता है किन्तु वह आपके द्वारा पूछे गये प्रश्न में सम्मिलित नहीं होती। जैसे हृदयरोग से संबंधित प्रश्न के उत्तर में इंजन उन डॉकुमैंटस को नहीं प्रस्तुत करेगा जिनमें "हार्ट" (Heart) के स्थान पर "कार्डिक" शब्द का प्रयोग किया गया होगा।

अधिकतर साइटें दो अलग प्रकार की खोजें उपलब्ध कराती हैं मूल या "बेसिक" और विकसित या "एडवांस"। एडवांस खोज विकल्प अलग-अलग खोज इंजनों में अलग-अलग प्रकार से होता है किन्तु कुछ सम्भानाओं में एक से अधिक शब्दों के प्रयोग की, किसी एक शब्द को अधिक महत्व देने व अन्य को कम महत्व देने तथा कुछ भ्रामक शब्दों को, जो कि खोज के परिणाम को प्रभावित कर सकते हो खोज से अलग रखने की क्षमता होती है। आप व्यक्ति, स्थानों के नाम पर, वाक्यांशों के आधार पर या ऐसे शब्दों के आधार पर, जो अन्य खोज शब्दों के आस-पास के हों, भी खोज कर सकते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

कई खोज इंजन आपको आपकी खोज के और सूक्ष्म बनाने के लिए Boolean operators के उपयोग की सुविधा भी देते हैं। यह तर्कपूर्ण शब्द AND, OR, NOT और आस-पास के स्थान ढूंढने वाले, NEAR FOLLOWED BY हैं।

- AND का अर्थ है कि आपके द्वारा निर्दिष्ट सभी शब्द डॉकुमैंट में आने चाहिये जैसे 'heart' AND 'attack'
- OR का अर्थ है कि आपके द्वारा निर्दिष्ट शब्दों में से कम से कम एक शब्द डॉकुमैंट में अवश्य हो। जैसे– bronchitis, acute OR chronic.
- NOT का अर्थ है कि आपके द्वारा निर्दिष्ट शब्दों में से कम से कम एक शब्द डॉकुमैंट में नहीं होना चाहिये जैसे statistics AND calculator, NOT Mathematics
- NEAR का अर्थ है कि आपके द्वारा दिये गये शब्द कुछ शब्दों के एक दूसरे से अन्तर के अन्दर अवश्य होने चाहिये।
- FOLLOWED BY का अर्थ कि बताया गया शब्द दूसरे के तुरन्त बाद अवश्य आना चाहिये।
- वाक्यांश (Phrases) किसी खोज इंजन के लिये वाक्यांश के आधार पर खोज कर पाने की क्षमता बहुत महत्वपूर्ण है। वे खोज इंजन, जिनमें यह क्षमता होती है, सामान्य रूप

से अपेक्षा करते हैं कि आप वाक्यांशों को उद्धरण चिन्हों के साथ लिखें जैसे "heart attack"

- सभी खोज इंजनों का खोज को सूक्ष्मतर बनाने का अपना अलग तरीका होता है। इनको सीखने का सबसे अच्छा तरीका है खोज इंजनों की साइटों पर उपलब्ध सहायता फाइलों को पढ कर उनका अभ्यास करना।

  कुछ बहुत अधिक प्रयोग में लाये जाने वाले खोज इंजन निम्नलिखित हैं–

- Google (http:// www.google.com)

  Google वैब पेजों से भी अधिक ढूँढ पाने की सुविधा प्रदान करता है। Google होम पेज पर सर्च बॉक्स के ऊपर आप सरलता से वैब में कहीं से भी आकृतियाँ प्राप्त कर सकते हैं, नेट का प्रयोग करने वाले समाचार समूहों की चर्चाओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, समाचारों की सूचनायें प्राप्त कर सकते हैं और वस्तुओं के संबंध में खोज कर सकते हैं। More संपर्क का प्रयोग व्यक्तियों द्वारा एकत्रित की गई मुक्त निदेशपुस्तिका (Open Directory), अनुसूची ढूँढ़ना (catalogue searching) व अन्य सेवाओं के प्रयोग की सुविधा प्रदान करता है।

- yahoo (http://www.yahoo.com)

  1994 में प्रारम्भ की गई याहू वैब की सबसे पुरानी "डायरैक्ट्री" है जहाँ मानव संपादक वैबसाइटों को श्रेणियों में व्यवस्थित करते हैं। अत्युत्तम खोज परिणामों के अतिरिक्त आप याहू के होमपेज में सर्च बॉक्स के ऊपर दिये गये टेबों की सहायता से आकृतियाँ, यलो पेज की सूचनायें प्राप्त कर सकते हैं या याहू के उत्तम शॉपिंग खोज इंजन के माध्यम से बाजार में उपलब्ध वस्तुओं के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं या याहू खोज के होम पेज पर जा सकते हैं जहाँ और अधिक विशिष्ट खोज के विकल्प दिये गये हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

- Ask Jeeves (http://www.askjeeves.com)

  Ask Jeeves ने प्रारम्भ में 1998 और 1999 में "स्वाभाविक भाषा" खोज इंजन के रूप में ख्याति अर्जित की जिसमें आपको सभी विषयों के लिये प्रश्न पूछ कर खोज करने की सुविधा देकर उनके सही उत्तर के साथ प्रत्युत्तर उपलब्ध कराया जाता था।

- All the Web.com (http://www.all_the_web.com)

  Yahoo द्वारा नियोजित All the Web.com आपको एक हल्का, उपभोक्ता की आवश्यकता के अधिक अनुरूप बनाया जा सकने वाला तथा स्वयं याहू की तुलना में और अच्छा केवल खोज का अनुभव प्रदान करने वाला खोज इंजन प्रतीत होगा। इसमें अधिक बल वैब खोज पर दिया गया है किंतु समाचार, आकृतियों, वीडियो, एमपी 3 तथा एफटीपी की खोजों को भी उपलब्ध कराया गया है।

- AOL Search (http://aolsearch.aol.com) (आन्तरिक) और http://search.aol.com (बाहय) ए ओ एल खोज प्रयोगकर्ताओं को गुगल की Crawler आधारित सूचियों में से संपादकीय सूचियाँ उपलब्ध कराता है। वास्तव में गुगल और ए ओ एल सर्च पर एक समान खोज बहुत मिलते-जुलते उत्तर प्रस्तुत करेंगे।

- Hot Bot (http://hotbot.com)

  Hot Bot वैब के तीन प्रमुख "Crawler" आधारित खोज इंजनों – याहू, गुगल तथा Teoma के लिये आसान पहुँच उपलब्ध कराते हैं। एक मेटा सर्च इंजन से भिन्न यह इन सभी Crawlers से प्राप्त परिणामों को आपस में मिला नहीं सकता किन्तु फिर भी

यह तीव्र गति का है, और विभिन्न वैब खोजों के मतों को एक ही स्थान पर उपलब्ध कराने का आसान तरीका है।

खोज इंजनों के कुछ अन्य विकल्प हैं–

Teoma (http://www.teoma.com)

Gigablast (http://www.gigablast.com)

Look Smart (http://www.looksmart.com)

Lycos (http://www.lycos.com)

MSN Search (http://search.msn.com)

Net scape search (http://search.netscape.com)

Open Directory (http://dmos.org)

About.com (http://www.about.com)

Britannica.com (http://www.britannica.com)

Excite (http://www.excite.com)

Iwon (http://www.iwon.com)

Pepe Search(http://www.pepesearch.com)

Search King (http://www.searchking.com)

अभ्यास 29.2 को पूरा कीजिये और पता लगाइये कि आप इस समय उपलब्ध आई सी टी सहायता का प्रयोग कर पा रहे हैं या नहीं।

MAADHYAM IAS

अभ्यास 29.2

पता लगाइये कि आपके स्टडी सैन्टर पर इंटरनैट के लिये किस प्रकार की पहुँच उपलब्ध है। यदि स्टडी सैन्टर में इन्टरनैट की कोई नहीं है तो अपने स्थान के आस पास के साइबर कैफे में जाकर निम्नलिखित कामों को कीजिये–

1) यदि आपका ई-मेल अकाउन्ट नहीं है तो ई-मेल अकाउन्ट खोलिये।
2) अपने मित्र को, जिसके पास ई-मेल अकाउन्ट हो और आपको उसका ई-मेल पता मालूम हो, ई-मेल भेजिये।
3) ऊपर बताये गये किसी भी खोज इंजन का प्रयोग करके अपना शोध परियोजना से संबंधित किसी विषय के लिये आवश्यक जानकारी प्राप्त कीजिये।
4) कुछ वैब साइटों पर जाकर, उदाहरण के लिये ऐसी वैबसाइट जहाँ पर इस समय उपलब्ध नौकरियों के संबंध में जानकारी हो अथवा जहाँ इस समय पूरे विश्व में आ रही प्राकृतिक विपदाओं के संबंध में जानकारी हो, सूचना प्राप्त कीजिये। उपकरणों के प्रयोग के ऊपर बताये कामों को पूरा करके आई सी टी लाभ व हानि पर एक संक्षिप्त नोट लिखिये।

29.5 इंटरनैट लाइन पर ही उपलब्ध सूचनाओं तक पहुँचना और उनका प्रयोग करना

यदि आप एक शोधकर्ता हैं और किसी सामाजिक विज्ञान से संबंधित शोध संदर्भ साइटों के प्रयोग में अधिक रुचि रखेंगे। नीचे उनके संबंध में जानकारी दी जा रही है–

सामाजिक शोध संदर्भ साइटें

सामान्य रूप से उपलब्ध खोज इंजनों (Google, Yahoo आदि) का प्रयोग इंटरनैट के माध्यम से सूचनायें प्राप्त करना प्रारम्भ करने का एक उत्तम व संसस्तुत तरीका नहीं होगा। खोज इंजनों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुये कई अन्य विकल्प भी उपलब्ध हैं जिनमें प्राप्त परिणाम कहीं अधिक उपयोगी और विषय से अधिक संबंधित होंगे। सामाजिक शोध से संबंधित खोज को निम्नलिखित दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

निर्देशिकाएं एवं गेटवेज़ (Directories and Gateways)

इनके माध्यम से आपको किसी चुने हुये विशेष विषय के उपलब्ध एक स्थान पर एकत्रित किये हुए स्रोतों का प्रवेश मार्ग मिल जाता है जिनसे आप खोज प्रारम्भ कर सकते हैं उन पर ब्राउज कर सकते हैं। खोज इंजनों, जो कि अपने आप ही विभिन्न साइटों की सूची, जो कि आपको खोज के आधार से मिलती है, एकत्रित कर देते हैं, से भिन्न निर्देशिकाएं (Directories) और गेटवेज़ आपके चुने हुये विषय पर अधिक लाभदायक खोज उपलब्ध करा सकते हैं। उच्च कोटि की इंटरनैट साइटें, जो कि विद्वतापूर्ण (academic) कार्य से संबंधित जानकारी उपलब्ध करा सकें, पता लगाने का सर्वोत्तम स्थान है। और का प्रयोग करने के कुछ लाभ निम्नप्रकार हैं–

गेटवेज़ में सूचना विद्वान शिक्षकों विशेषज्ञों (academy experts) तथा पुस्तकालय विशेषज्ञों द्वारा, विभिन्न विषयों के लिये वैब पर उपलब्ध जानकारी पर्याप्त समय लगा कर समीक्षा द्वारा एकत्रित की जाती है।

- गेटवेज़ (Gateways) व्यवस्थित और उपयोगी रूप में वर्गीकृत किये जाते हैं जिससे कि उपयोगकर्ता अधिक आसानी से उपलब्ध सामग्री का प्रयोग कर सके तक पहुँच सके।
- गेटवेज़ (Gateways) पर उपलब्ध सूचनाओं को निरन्तर अद्यतन बनाया जाता रहता है। सामाजिक विज्ञान के शोधकर्ताओं के लिये प्रभावी 'गेटवेज' के कुछ उदाहरण हैं–
- The Social Science Information Gateway (SOSIG) (http://www.sosig.ac.uk)

इस गेटवे के. संपर्क ऑनलाइन पेपरों, चर्चा सूनियों तथा पाठ्यक्रमों से हैं। इसमें विभिन्न विभागों तथा संगठनों के वैबपेज सम्मिलित हैं। इसमें सामाजिक शोध पद्धतियों के लिए, सांख्यिकीय तथा गुणात्मक दोनों स्रोतों सहित, एक पूरा खण्ड है।

- Sociosite: Research Methodology and Statistics(http://www.pscw. uva.nl/ sociosite /TOPICS/Research.html)

यह एक सामाजिकीय सूचना प्रणाली है जो कि इन्टरनेट पर समाजशास्त्र से संबंधित व्यापक तथा सभी अन्तर्राष्ट्रीय सूचना स्रोतों तक की पहुँच उपलब्ध कराती तथा इसमें शोध पद्धतियों तथा स्टैटिस्टिक की जानकारी का तथा इसमें शोध पद्धतियों तथा स्टैटिस्टिक की जानकारी का एक विशेष खण्ड है।

* Social Science: www.Virtual Library

(http://www.clas.ufl.edu/users/gthursby/socsci/index.htm) यह ऑन लाइन सामाजिक विज्ञान संबंधी सूचनाओं की World Wide Virtual Library के रूप में जानकारी रखता है।

लेखों के संदर्भ और सामग्री/आंकड़े डाटा बेसों से संक्षिप्त संदर्भ

सभी अपने विषय क्षेत्र में आने वाले अद्यतन प्रकाशनों की जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। इंटरनैट ऑनलाइन (कैटलॉग) पुस्तक सूची तथा संक्षिप्त संदर्भ के माध्यम से इनके

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संबंध में जानकारी उपलब्ध कराता है। इनमें से कुछ साइटों के लिये पहुँच निःशुल्क है किंतु कुछ के लिये प्रारम्भिक सदस्यता के लिये कुछ शुल्क लगता है जो कि सामान्यतः पुस्तकालयों और संस्थाओं को दी जाती है। संभव है आपकी संस्था (पुस्तकालय) के पास इनमें से कुछ सामग्री/आंकड़ेबेसों की सदस्यता हो और आप अपनी *संस्था/पुस्तकालय* से पासवर्ड प्राप्त करके इन सामग्री/आंकड़ेबेसों तक पहुंच प्राप्त कर सकें। कुछ लोकप्रिय सामग्री/आंकड़ेबेस हैं–

- Social Science Citation Index (SSCI) (http://www.isinet.com/products/citation/ssci/)

इसमें 50 सामाजिक विज्ञान विषयों से संबंधित लगभग 5000 पत्रिकाएं उपलब्ध हैं। लगभग सभी बड़े-बड़े जरनल इसमें सम्मिलित हैं जो कि 1973 तक की सामाजिक शोध पद्धतियों की समस्याओं को भी प्रस्तुत करते हैं। खोज द्वारा आप शीर्षक और आधे से अधिक लेखकों के संक्षिप्त संदर्भ प्राप्त कर सकते हैं। आप titles of citation के संदर्भ भी प्राप्त कर सकते हैं।

- International Bibliography of the Social Sciences (IBSS) (http: www.lsc.ac.uk/ibss/)

यह 1951 से लेकर अब तक के जरनलों में प्रकाशित लेखों, पुस्तक समीक्षाओं तथा मानोग्राफों के संदर्भों तक आसान पहुँच उपलब्ध कराता है।

- **समाजशास्त्रीय संक्षिप्त** (Sociological Abstracts) (http://www.socabs.org/detailsv3/socioabs.html)

यह कई प्रकाशित कार्यों में से सामाजिक शोध प्रणालियों पर इण्डेक्स व संक्षिप्त टिप्पणियाँ प्रस्तुत करता है।

MAADHYAM IAS

29.6 ऑनलाइन पर ही उपलब्ध जरनल और लिखित सामग्री

सामाजिक विज्ञान में अधिकांश जरनलों की वैबसाइट है जहाँ वर्तमान तथा पहले के शोध लेख और शोधपत्र पढ़ने तथा डाउनलोड करने के लिये उपलब्ध होते हैं। इनमें से अधिकांश ऑनलाइन जरनलों की पूरी लिखित सामग्री तक पहुँच प्राप्त करने के लिये सदस्यता शुल्क अपेक्षित होता है। सदस्यता प्राप्त कर लेने पर पूर्ण पहुँच के लिये एक पासवर्ड दे दिया जाता है। फिर भी इनमें से अधिकांश जरनल संक्षिप्त विवरण और/या विषय तालिका निःशुल्क उपलब्ध कराते हैं। कुछ ऐसी डायरैक्ट्रियाँ भी हैं जो कि इन इलक्ट्रॉनिक जरनलों की सूची और उनके सम्पर्क उपलब्ध कराती हैं। इस प्रकार की दो डायरैक्ट्रियाँ हैं–

- Directories of Electronic Journal (http://gort.used.edu/ejourn/dir.html)

इसमें पूरे विश्व के इलैक्ट्रॉनिक जरनलों और समाचारपत्रों के सम्पर्क सम्मिलित हैं।

- The Journal Locator in Psychology and the Social Sciences (http://www.wiso.uni-arrgsburg.de/socio/hartmann/psycho/journals.html)

इसमें 1600 ऑनलाइन जरनलों की सूची दी गई है तथा यह उनके होम पेजों के सम्पर्क उपलब्ध कराती है।

सामाजिक शोध पद्धतियों से संबधित ऑन लाइन जरनलों के उदाहरण–

* Sociological Research Online (http://www.socresonline.org.uk/)

यह एक ऑनलाइन जरनल है जो कि उच्च कोटि के व्यवहारिक समाज शास्त्र के लेखों के प्रकाशित करता है। जिनमें सैद्धान्तिक, ऐतिहासिक तथा पद्धति पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है।

* Social Research update (http://www.soc.surrey.ac.uk/sru.html)

यह एक त्रैमासिक इलैक्ट्रॉनिक जरनल है जो कि सामाजिक शोध से संबंधित नई गतिविधियों के संबंध में सूचना देता है। प्रत्येक अंक में गुणात्मक और सांख्यिकीय विषयों से लेकर कोई भी अलग शोध पद्धति विषय चुना जाता है।

जबकि उपर्युक्त जरनल से पूरी लिखित सामग्री से युक्त लेखों को निःशुल्क ब्राउज किया जा सकता है। नीचे दिये जा रहे जरनल केवल संक्षिप्त विवरणों और विषय सूची तक ही पहुँच उपलब्ध कराते हैं–

- International Journal of Social Research Methodology (IJSRM) (http://www.tandf.co.uk/journals/tf/13645579.html)

यह पद्धति संबंधी लेखों और व्यवसायों तथा सेवा स्थितियों से संबंधित शोध व्यवहारों संबंधी लेखों का एक नया जरनल है।

कुछ विषय विशेष में विशेषज्ञता प्राप्त साइटें भी हैं जिनमें कॉन्फ्रैंसों और सैमिनारों में प्रस्तुत किये गये शोध पत्रों को पूरा टेक्सट उपलब्ध कराती हैं। इस प्रकार की एक लाभदायक साइट है–

Education Online: Electronic Texts in Education and Training (http://www.leeds.ac.uk/educol/).

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

पुस्कालय पुस्तक सूची

विश्व के अनेकों पुस्तकालय अपनी पुस्तक सूची ऑनलाइन उपलब्ध कराते हैं। पुस्तकालय पुस्तक सूचियाँ कभी-कभी वैब पर OPAC के रूप में संदर्भित की जाती हैं। ओपैक का अर्थ है ऑनलाइन पब्लिक एक्सेस कैटेलॉग। कई बार इन पुस्तक सूचियों तक पासवर्ड के द्वारा भी पहुँचा जा सकता है जो कि साइटों पर निःशुल्क पंजीकरण करके मिल सकते हैं।

इस प्रकार की कुछ संबंधित साइटें हैं–

- The British Library Catalogue (http://blpc.bl.uk/)

यह विश्व के सबसे बडे पुस्तकालयों में से एक पुस्तकालय का प्रमुख संदर्भों एवं डॉकुमेंट आपूर्ति केन्द्रों के लिये सामग्री का एक ऑनलाइन स्रोत है।

- Worldwide Index of Library Catalogues (http://www.libdex.com).

इस वैबसाइट से, विशेषज्ञता प्राप्त खोज के द्वारा 18000 से अधिक पुस्तकालयों की पुस्तक सूचियों तक पहुँचा जा सकता है।

मिली जुली उपयोगी वैबसाइटें

- Glossary of Research Terms (http://www.mori.com/rmu/glossary.shtml)

यह शोधकर्ताओं के लिए विषयों की तथा तकनीकी शब्दों की व्याख्या उपलब्ध कराती है।

- Social Science Research Methods: Resources for Teachers (http://www.siu.edu/%7Ehawkes/methhome.html)

इसमें शोध पद्धतियों और शिक्षण सामग्री तथा अन्य उपयोगी सामग्री पर पाठ्यक्रमों के सम्पर्क उपलब्ध है।

- The Centre for Applied Social Surveys(CASS) (http:/www.socstats.soton.ac.uk/cass/)

सांख्यिकीय सर्वे से संबंधित सभी पक्षों सहित सामाजिक सर्वे पद्धतियों पर अल्पकालीन पाठ्यक्रमों की सूचना प्रदान करता है।

- Index to Theses (http://www.theses.com/registered_users/simple.html)

ग्रेट ब्रिटेन तथा आयरलैंड के विश्वविद्यालयों में 1970 के बाद से लेकर अब तक स्नातकोतर (M H) तथा आचार्य की उपाधि (Ph D) के लिये लिखे व स्वीकृत किये गये शोध लेखों के संक्षिप्त विवरण का खोज योग्य सामग्री/आंकड़ेबेस उपलब्ध कराता है।

अभ्यास 29.3

सदैव ही यह अच्छा रहता है कि पहले ही यह निश्चित कर लिया जाये और मोटे तौर पर इसकी पहचान कर ली जाये कि किस श्रेणी के अन्तर्गत आपकी शोध परियोजना से संबंधित सूचना मिल सकती है। इससे खोज को अपेक्षाकृत कम समय में उपयुक्त स्थान पर ही करने और अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने में सहायता मिलती है। यह सच है कि सामान्य खोज इंजन सामाजिक शोध के लिये सीमित सहायता ही उपलब्ध करा पाते हैं किन्तु सामाजिक शोध के लिए विशेष खोज इंजन निर्मित किये गये हैं।

ऊपर दिये गये स्रोतों में से किसी एक से अपनी शोध परियोजना से संबंधित जानकारी प्राप्त कीजिये और उसके बाद एक पृष्ठ में ही यह लिखिये कि आपने जानकारी कैसे प्राप्त की और आपको उसे प्राप्त करने में कितना समय लगा तथा अपने शोध में आप उस जानकारी का किस प्रकार प्रयोग करेंगे।

MAADHYAM IAS

29.7 सांख्यिकीय संदर्भों की साइटें

- Chest Directory (http://www.chest.ac.uk/chestdirectory/intro.html)

सामग्री/आंकड़े और सांख्यिकीय विश्लेषणों के यंत्रेत्तर सामग्री (Software) सहित चेस्ट डाइरेक्ट्री में बहुत सारे सॉफ्टवेयर हैं। कई अन्य विषय विशेष साइटें भी हैं (उदाहरण के लिये नृविज्ञान, मनोविज्ञान के लिये) जो कि सांख्यिकीय तथा गुणात्मक विश्लेषण के लिये अपेक्षित सॉफ्टवेयर तक निःशुल्क पहुँच उपलब्ध कराती हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं–

- Computer Assisted Qualitative Data Analysis Software (CAQDAS) Network (http://caqdas.soc.surrey.ac.uk/)
- Directory of Psychology Software (http://www.psychology.ltsn.ac.uk/)
- Free Statistical Soft¡re (http://members.aol.com/johnp71/javasta2.html)

सांख्यिकीय आंकड़ों के विश्लेषण के लिये यंत्रेतर सामग्री

कम्प्यूटर सॉफ्टवेयरों का प्रयोग किसी भी आकार के उपलब्ध सामग्री/आंकड़े के साथ किसी भी स्तर के जटिल सांख्यिकीय विश्लेषण के लिये किया जाता है। इन परीक्षणों को करने के लिए सॉफ्टवेयर प्राप्त करने के तीन तरीके हैं.

1) कम्पनियों से लाइसैंस प्राप्त सॉफ्टवेयर खरीदकर एस पी एस एस किसी भी स्तर के सांख्यिकीय विश्लेषण के लिये सबसे अधिक प्रयोग में लाया जाने वाला सॉफ्टवेयर है आप इस पैकेज के और इसके प्रयोग के विषय में इकाई 30 में और विस्तार से पढेंगे। एसपीएसएस के साथ व्यक्ति शीघ्रता से शक्तिशाली सांख्यिकीय सूचनाओं के साथ निर्णय लेने योग्य सूचनायें उपलब्ध करा सकता है, उन्हें समझ सकता है, प्रभावी

रूप से परिणामों को उच्च कोटि की तालिकाओं और ग्राफों के माध्यम से प्रस्तुत कर सकता है तथा प्राप्त परिणामों का विभिन्न रिपोर्टिंग पद्धतियों से कार्य करने वालों के साथ आदान-प्रदान कर सकता है। यह सब प्रयोगकर्ता को शीघ्रता से मुख्य तथ्यों, स्वरूपों तथा रूझानों को देखते हुए बुद्धिमानी पूर्ण निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करता है।

एसपीएसएस काफी महंगा है। सामान्यतः संस्थायें और संगठन यह सॉफ्टवेयर बहुप्रयोगी लाइसैंस के साथ लेते हैं और अपने विद्यार्थियों और कार्मिकों को इसके प्रयोग की सुविधा प्रदान करते हैं। एसपीएसएस को व्यक्तिगत प्रयोग के लिये खरीदना सामान्यतः आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं होता है किन्तु व्यक्तिगत प्रयोग के लिये बाजार में अन्य मध्यम या कम मूल्य के सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं। इस प्रकार का एक उपलब्ध सॉफ्टवेयर Stat Calc है। इससे सामान्य सांख्यिकीय गणनायें सरलता से की जा सकती हैं। यह अव्यवस्थित सामग्री/आंकड़ें का जिसे चाहें आप स्वयं एन्अर करें या स्प्रैड शीट का प्रयोग करके लें या सामग्री/आंकड़ें बेस से प्रस्तुत करें शीघ्रता से विश्लेषण करना संभव बनाता है। 30 दिन तक प्रयोग करके जाँचने के लिये प्रायोगिक रूप में यह सॉफ्टवेयर कम्पनी की वैबसाइट (http://www.acastat.com/prod Ol.html) पर उपलब्ध है।

2) इंटरनैट से निःशुल्क सॉफ्टवेयर डाउनलोड करके–

बहुत से समर्पित व्यवसायी ऐसे हैं जिनका लक्ष्य स्टैटिस्टिक्स को सरल और किफायती बनाकर लोकप्रिय बनाना है। इन लोगों ने ऐसे सॉफ्टवेयर बनाये हैं जिनसे कई प्रकार का स्टैटिस्टिकल विश्लेषण कम्प्यूटर की बहुत कम जानकारी के साथ भी किया जा सकता है। सॉफ्टवेयर को इंटरनैट से लगभग 30 से 90 मिनट में, इंटरनैट की उपयुक्त गति के साथ, डाउनलोड किया जा सकता है। इस प्रकार के सॉफ्वेयर का प्रयोग करने के लिये किसी प्रकार के लाइसेंस की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

इस प्रकार का एक उपयोगी व निःशुल्क सॉफ्टवेयर "Openstat" है। यह साफ्टवेयर देखने व कार्य करने में SPSS के समान ही है। यद्यपि यह उतना व्यापक नहीं है जितना कि SPSS है किन्तु यह सामाजिक शोधकर्ता के लिये अनेकों विकल्प प्रस्तुत करता है। यह काफी बड़े सामग्री/आंकड़ें के साथ काम कर सकता है, अन्य साफ्टवेयरों से सामग्री/आंकड़ें प्राप्त व उनको सामग्री/आंकड़े भेज सकता है तथा सामानय रूप से किये जानेवाले सभी सांख्यिकीय परीक्षणों को कर सकता है। कोई भी व्यक्ति जो से भली-भांति परिचित है वह प्रभावी रूप से SPSS का उसी प्रकार के सभी कामों के लिये प्रयोग कर सकता है। इसी प्रकार SPSS से परिचित व्यक्ति Openstat का प्रयोग कर सकता है। यह सॉफ्वेयर (http://www.statpages.org/miller/openstat/) यू आर एल (URL) से डाउनलोड किया जा सकता है।

3) ऑन लाइन वैब पेजेज

यह छोटी-छोटी सांख्यिकीय समस्याओं के शीघ्र प्राप्त समाधान हैं। इनमें से कुछ डाउन लोड किये जा सकते हैं किन्तु कुछ को डाउनलोड नहीं किया जा सकता किन्तु सभी पर पहुँच निःशुल्क है। इनमें से कई पृष्ठ सामग्री/आंकड़ें ले सकने के लिये वे विकल्प देते हैं। अधिकतर स्थितियों में यह सुलभता से प्रयोग किये जा सकने वाले वैज्ञानिक कैल्कुलेटरों की तरह कार्य करते हैं किन्तु निश्चित रूप में यह कैल्कुलेटरों से अधिक उन्नत होते है क्योंकि यह सामग्री/आंकड़ों की प्रविष्टि तथा चार्ट बनाने आदि के साथ अनेक बहुआयामी कार्य कर सकते हैं। इनमें से किसी भी कैल्कुलेटर पर क्लिक करने से पहले व्यक्ति को प्रस्तुत समस्या का अच्छी तरह से विश्लेषण करके प्रयोग में लाये जाने वाले उपयुक्त परीक्षण की पहचान कर लेनी चाहिये।

MAADHYAM IAS

वर्णनात्मक सांख्यिकी एवं चार्टो के लिये स्टैटिस्टिकल कैल्कुलेटर

1) **व्याख्यात्मक प्रतिदर्श ग्रहण सांख्यिकी (Descrpitve Sampling Statistics)** http://home.ubalt.edu/ntsbarsh/Business-stat/otherapplets/Descriptive .htm

यह पृष्ठ मूलभूत विवरणात्मक स्टैटिस्टिक्स जैसे मशीन, वैरियेंस, एसडी, सी वी, skewness तथा Kurtosis आदि की गणना कर सकता है। यह अधिक से अधिक 80 अंकों का विश्लेषण कर सकता है। वैब पेज पर प्रदर्शित होने वाली Matrix में Matrix के उपर वाले सभी कॉलमों में संख्याएं लिख कर कैलकुलेट बटन दबाने पर नीचे दी गई सभी गणनाएं दिखाई देगी। यदि Histogram की आवश्यकता हो तो कक्षा की चौड़ाई और 'कक्षाओं की संख्या' संबंधित बॉक्सों में देकर "Histogramming" बटन दबाने से Histogram चित्रित कर दिया जायेगा जिसे चुन कर व काटकर सम्हाल कर रख के बाद में किसी डॉकुमैंट पर चिपका कर प्रयोग में लाया जा सकता है।

इसी प्रकार के कई ऑन लाइन कैलकुलेटर इंटरनैट पर उपलब्ध हैं। कुछ और उदाहरणों के लिये निम्नलिखित सम्पर्को को देखा जा कसता है .

2) **वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descrpitve Statistics)** (mean, SD, SEM and C.I of mean)http://graphpad.com/quickcalcs/clmean.cfm)

इसमें अव्यवस्थित आंकड़ों को या तो प्रतिपर किया जा सकता है या चिपकाया जा सकता है या प्राप्त करने के लिये या तथा एन्अर किया जा सकता है।

3) **स्टैट कैल्क (Stat Calc)** (http://www.math.uc.edu/statistics/statbook/java/Stat Calc.html)

यह कैलकुलेटर एक वैरिये बल के लिये समरी स्टैटिस्टिक्स की गणना करता है, हल्काफुल्का हिस्टोग्राम रेखांकित कर सकता है तथा छांट सकता है। यदि मूल्यों के युग्म दे दिये जायें तो यह तथ्य की गणना कर सकता है। यह भी कर सकता है इसके लिये सामग्री/आंकड़े या तो सीधे ही एन्टर किया जा सकता है या अन्य वर्कशीट जैसे से किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

4) **Statiscope** (http://www.df.lth.se/»mikaelb/statiscope/statiscope.shtml)

इसका प्रयोग कैलकुलेटर में सीधे ही एन्टर किये जा सकने वाले नम्बरों के युग्मों से बहुत सारा वर्णनात्मक सांख्यिकी को प्रदर्शित करने और उसकी गणना करने के लिये किया जा सकता है।

अभ्यास 29.4

सांख्यिकीय विश्लेषणों के लिये बहुत सारे विकल्प उपलब्ध हैं। इनमें वैब पेजों के रूप में उपलब्ध ऑन लाइन कैलकुलेटर है जो कि शीघ्र ही गणना करके परिणाम प्रस्तुत कर देते हैं। बहुत सारे स्टैटिस्टिकल पैकेज भी हैं जिनको इंटरनैट पर से बिना किसी शुल्क के डाउनलोड किया जा सकता है तथा इनको लगभग सभी मूलभूत स्टैटिस्टिकल परीक्षणों के लिये प्रयोग में लाया जा सकता है।

आपको यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि आई सी टी और कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर पैकेज जिसकी वर्णनात्मक सामग्री/आंकड़े विश्लेषण में उपयोगिता सीमित है। चूँकि सभी सामाजिक शोधों में कुछ न कुछ संख्यात्मक सामग्री/आंकड़े का भाग होता है अतः हमारा सुझाव है कि आप अपने शोध से संबंधित संख्यात्मक सामग्री/आंकड़े के विश्लेषण के लिये ऊपर दिये गये मूलभूत साधनों का प्रयोग करने का प्रयत्न करें। यह प्रयत्न करने के बाद यह महत्वपूर्ण है कि आप अपनी शोध परियोजना रिपोर्ट में अपने शोध में प्रयोग किये गये सभी आई सी टी साधनों के विषय में अवष्य लिखें। आपके कार्य के मूल्यांकन में इसके ऊपर विशेष रूप से ध्यान दिया जायेगा।

29.8 सामग्री/आंकड़े स्रोत

कई वैबसाइट ऐसी हैं जो वास्तविक सामग्री/आंकड़े अव्यवस्थित तथा तालिका बद्व दोनों प्रकार का उपलब्ध कराती हैं। सामान्य रूप से इन वैबसाइटों से सामग्री/आंकड़े प्राप्त करना निशुल्क नहीं होता और उसके लिये सदस्यता की आवश्यकता पड़ती है।

Statistical Data on the Web (http://www.lib.umich.edu/govdocs/stforeig.html)

विश्व के विभिन्न देशों के कुछ चुने हुये सामाजिक आर्थिक सामग्री/आंकड़े तक पहुँच उपलब्ध कराता है। भारत के लिये सामग्री/आंकड़े उपलब्ध कराने वाली कुछ वैबसाइटे हैं–

- Census data online (http://www.censusindia.net/cendat/)
- India Stat.com (http://www.indiastat.com/)

सांख्यिकीय एवं शोध पद्वतियाँ

ऐसी बहुत सी साइटें हैं जो कि शोधकर्ताओं को शोध पद्वतियाँ और इन पद्धतियों को उन्नत बनाने में हो रहे अद्यतन विकासों के संबंध में शिक्षित करने व उनका मार्ग दर्शन करने के कार्य में ही लगी हुई है। उस श्रेणी की कुछ लोकप्रिय साइटें हैं–

सामाजिक शोध पद्धतियाँ [http://www.niwi.know.nl/nl/srm/srm.html]

इसमें शोध पद्धतियों और सामाजिक एवं व्यवहारिक विज्ञानों के लिये आंकड़ों के, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के खोज किये जा सकने वाले सामग्री/आंकड़े बेसों के स्रोत हैं।

समाजशास्त्रीय शोधपद्धतियाँ [http://www.blackwell.publishers.co.uk/journals/SM/contents.html]

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सामाजिक विज्ञानों में शोध पद्धतियों का एक वार्षिक प्रकाशन है। अमरीका की समाजशास्त्रीय समिति (अमरीकन सोशयोलॉजिकल एसोसियेशन) द्वारा प्रायोजित यह साइट सामाजिक और संबंधित विषयों उन्नत ऐतिहासिक शोध सामग्री प्रकाशित करती है।

गुणात्मक शोध [http://qrj.sagepub.com/]

यह साइट शोध पद्धतियों विशेष रूप से गुणात्मक शोध पर चर्चाओं के लिये एक मंच उपलब्ध कराती है।

[http://www.tandf.co.uk/journals/tf/13645579.html]

Public Opinion Quarterly (POQ)

[http://www.poq.oupjournals.org/]

जन विचार शोध के लिए अमेरीकन समिति (American Association for Public Opinion Research (AAPOR)) का यह एक सरकारी प्रकाशन है और यह मतों के शोध के संबंध में अपनाये जाने वाले सिद्धान्तों और पद्धतियों पर विशेष रूप से बल देता है अर्थात इसमें सर्वेक्षण की वैधता प्रश्नावली निर्माण, साक्षात्कार लेने तथा साक्षात्कार लेने वालों, प्रतिचयन तथा विश्लेषणात्मक तरीकों पर ध्यान दिया जाता है।

सीएएसएस प्रश्न बैंक (The CASS Question Bank)

प्रश्नों का यह बैंक सर्वे का प्रकार निश्चित करने में प्रमुख सामाजिक सर्वेक्षणों की प्रश्नावली से लेकर संबंधित टिप्पणियों तक की जानकारी के लिये निशुल्क पहुँच उपलब्ध कराता है।

29.9 शोध में ई-मेल सेवाओं के उपयोग

ई-मेल का शोध के साधन के रूप में प्रयोग करना शोधकर्ता को अनेकों संभावित लाभ, जैसे– विश्वभर के प्रतिदर्शों तक आसान पहुँच, कम प्रशासनिक व्यय वित्तीय व समय दोनों रूप में तथा उत्तर देने वाले के लिये व्यवधान रहित तथा मैत्रीपूर्ण होना आदि, उपलब्ध कराता है। फिर भी ई-मेल का, शोधसाधन के रूप में उपयोग, सभी तक इसके सीमित तथा वर्ग विशेष आयु, आय, लिंग व जाति के अर्थ में द्वारा ही प्रयोग में लाये जाने कारण कठिन है। ई-मेल द्वारा भेजी गई प्रश्नावलियों के उत्तर को दर उत्साहवर्धक है। इसे वितरित करना सरल है तथा उत्तर प्राप्त करने में समय भी कम लगता है किन्तु इसमें उत्तर देने वाले की गोपनीयता रख पाना लगभग असम्भव है। साक्षात्कार के साधन के रूप में ई-मेल का प्रयोग साक्षात्कार लेने वाले व देने वाले के बीच स्थान व समय की पारम्परिक कठिनाइयों से मुक्त है तथा निश्चित रूप में तैयार लिखित प्रश्नावली का व्यावहारिक लाभ प्रदान करता है। फिर ई-मेल द्वारा लिये गये साक्षात्कार में आपसी समझ और बातचीत की कमी रहती है।

ई-मेल की शोध साधन के रूप में प्रमुख विशेषता इसकी गति तथा तात्कालिकता है। इसमें शोधकर्ता तथा जानकारी देने वाले के बीच तत्काल बातचीत शुरू हो सकती है। विशेष रूप से इलैक्ट्रॉनिक साधन के माध्यम से बातचीत में विचारों का आदान-प्रदान अधिक स्वतंत्र वातावरण में हो सकता है जो कि पारम्परिक शोध पद्धतियों में संभव नहीं है। इसके अतिरिक्त ई-मेल द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाले स्थितियों का तालमेल बिठाये बिना ही शोध के लिये विचारों के आदान-प्रदान की संभावित सुविधा इसकी एक आकर्षक विशेषता है। इसमें उत्तर देने वाले के लिये उसी समय उत्तर देना आवश्यक नहीं होता वह बाद में अपनी सुविधानुसार जानकारी उपलब्ध करा सकता है। फिर भी जैसे-जैसे इलैक्ट्रॉनिक संचार व्यवस्था अधिक प्रयोग में लाई जाने लगेगी, इसमें बहुत अधिक सूचना उपलब्ध होने लगेगी और ई-मेल के माध्यम से शोध कार्य के एक प्रकार से इलैक्ट्रॉनिक जंक मेल बनने का खतरा उत्पन्न हो जायेगा। परिणामस्वरूप वास्तविक शोधकर्ताओं द्वारा ई-मेल से सूचनायें प्राप्त करने के अनिच्छित प्रयास दूसरे सिरे पर मेल प्राप्त करने वालों द्वारा अनदेखे किये जा सकते हैं।

MAADHYAM IAS

ई-मेल के विस्तार के साथ ई-मेल भेजने और इंटरनैट आधारित शोध करने में बढ़ती आसानी यह दर्शाती है कि निकट भविष्य में इलैक्ट्रॉनिक पद्धतियों की लोकप्रियता बढ़ती जायेगी। फिर भी जैसा कि पहले बताया जा चुका है सामाजिक विज्ञान शोध में ई-मेल के प्रयोग में काफी समस्याएं हैं। ई-मेल के तीव्र गति से विस्तार के बावजूद भी इसका शोध के साधन के रूप में प्रयोग ई-मेल का प्रयोग करने वालों के पूर्वाग्रहों को प्रदर्शित करेगा। इसमें उसी प्रकार की कठिनाइयाँ आयेंगी जैसी कि प्रारम्भिक टेलीफोन सर्वे में आई थीं जहाँ टेलीफोन सुविधा समाज के केवल एक वर्ग विशेष रूप के पास ही उपलब्ध थी और सर्वे उनके पूर्वाग्रहों से प्रभावित होते थे।

समाचार समूहों और ई-मेल सूचियों तक पहुँच

मान लीजिये आपके पास कोई ऐसा प्रश्न है जिसके विषय में आप जानते हैं कि किसी न किसी के पास उसका उत्तर अवश्य है लेकिन आप उस व्यक्ति का पता किस तरह लगायेंगे? इंटरनैट के साथ आप न केवल सूचना प्राप्त करने के लिये वैबसाइट पर खोज कर सकते हैं बल्कि उन व्यक्तियों से जिनसे आप कभी मिले भी नहीं, सम्पर्क करके अपने ऐसे अनजाने प्रश्नों के लिये जिनके उत्तर केवल वे ही दे सकते, जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं।

समाचार समूह जिन्हें 'फोरम' के नाम से भी जाना जाता है, इंटरनैट प्रारम्भ होने के साथ-साथ ही उदित हो गये। यह वैज्ञानिकों को आपस में अपने प्रश्न (और उत्तर) भेजने में सहायक होते हैं। आजकल समाचार समूह वास्तविक कॉफी हाउस जैसे हो गये हैं जहाँ व्यक्ति आपसी हित के विषयों पर चर्चा करने के लिए एकत्रित होते हैं। यहाँ अन्तर केवल इतना है कि इन समूहों में आपस में बातचीत मौखिक न होकर लिखित रूप में होती है। समाचार समूह खास विषयों जैसे गुणात्मक शोध में कम्प्यूटर द्वारा विश्लेषण की प्रभाविता आदि के इर्द गिर्द ही चलते रहते हैं। आप भी पढ़ सकते हैं कि औरों ने उनके विषय में क्या लिखा है और अपनी टिप्पणियाँ भी भेज सकते हैं।

वर्तमान में अनेकों समाचार समूह हैं जो कि लगभग सभी विषयों पर विचार विमर्श करते हैं। यह कम्प्यूटर, सामाजिक विषयों, साहित्य और विज्ञान से लेकर मनोरंजन, शौक, सामयिक विषय सब विषयों पर विचार करते हैं। समाचार समूहों में आप नौकरियों के संबंध में सूचना प्राप्त कर सकते हैं, व्यवसाहय और स्वास्थ्य के संबध में सूचना प्राप्त कर सकते हैं, विशेष आयोजनों के संबंध में घोषणायें प्राप्त कर सकते हैं, राजनीतिक, धार्मिक, संदर्भी चर्चाओं की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। आप तस्वीरें भी डाउनलोड कर सकते हैं। बॉक्स 29.3 देखें और पता लगायें कि आप समाचार समूह तक कैसे पहुँच सकते हैं।

बॉक्स 29.3: समाचार समूह तक कैसे पहुँचे–

किसी समाचार समूह तक पहुँचने के लिये आपको न्यूजरीडर प्रोग्राम की आवश्यकता होगी। अधिकांश इंटरनैट एक्सप्रेस में यह प्रोग्राम उनके साथ ही उपलब्ध कराया हुआ होता है। इसके बाद यह निश्चित कीजिये कि किन-किन समाचार समूहों में आपकी रुचि और फिर उनके सदस्य बन जाइये। यह ध्यान रहे कि एक समय था जब केवल यह समाचार समूह ही किसी विषय पर बारीकी से चर्चा का एकमात्र साधन थे, जहाँ कि संबंधित विषय एक साथ जोड़ दिये जाते थे। आज बहुत सी वैबसाइटों पर चर्चा समूहों की जानकारी दी जाती है। जब आप किसी चर्चा समूहों के सदस्य बनने का विचार कर रहे हों तो वैब साइटों और समाचार समूहों दोनों को देखें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

मेलिंग सूची (लिस्ट)

मेलिंग लिस्ट अपनी अलग कार्यनीति अपनाती हैं। प्रत्येक संदेश को एकत्रित करके अपनी प्रमुख जगह पर प्रदर्शित करने की अपेक्षा यह प्रत्येक संदेश को एक ई-मेल संदेश के रूप में अपनी सूची के सभी सदस्यों को भेज देती है। मेलिंग लिस्ट का लाभ यह है कि इसमें आपको किसी समाचार समूह को संदेश भेजने के लिये अलग सॉफ्टवेयर प्रोग्राम की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसका नुकसान यह है कि आपको कभी-कभी किसी मेलिंग लिस्ट से दर्जनों, कभी-कभी सौ-सौ संदेश भी प्राप्त हो सकते हैं।

समाचार समूह और मेलिंग लिस्ट दिन भर में आश्चर्यजनक मात्रा में लिखित सामग्री भेजते हैं। उनमें से कुछ में भेजनेवालों, जो कि रुचि रखने वाले सामान्य नागरिकों से लेकर किसी विषय विशेष के प्रतिष्ठित विशेषज्ञ तक हो सकते हैं, द्वारा दिया गया घटनाओं और विषयों का विस्तृत विश्लेषण हो सकता है। यदि आप मेलिंग लिस्ट के सदस्य बनते हैं तो आप दिन भर में प्राप्त संदेशों की संख्या 'डाइजेस्ट' कमांड का प्रयोग करके कम कर सकते हैं। यह कमांड मेलिंग लिस्ट भेजने वाले कम्प्यूटर को एक ही संदेश में बहुत सारे संदेश सम्मिलित करके भेजने के लिये कहती है। आप 'डाइजेस्ट' कमांड को प्रयोग करने का तरीका मेलिंग लिस्ट चलाने वाले कम्प्यूटर को विषय वाली लाइन में हेल्प शब्द द्वारा संदेश भेजकर सीख सकते हैं। ध्यान रहे कि संदेश कम्प्यूटर के प्रमुख पते पर भेजें न लिस्ट को।

यदि आप किसी सामयिक विषय या घटना संबंधी शोध परियोजना पर काम कर रहे हैं तो आप उपयुक्त समाचार समूह और मेलिंग लिस्ट का पता गुगल ग्रुप में www. google. co.in या Deja News Website में http:www.dejanews.com पर या Yahoo की समाचार समूहों की डायरैक्ट्री और समाचार समूह पोस्टों में http:www.yahoo. com/ News_and_Media/ Usenet/ Newsgroup_Listings/ पर जाकर लगा सकते हैं। किसी विषय विशेष की मेलिंग लिस्ट ढूँढ़ने के लिये लिस्ट वैबसाइट को http://www.list. com पर या Catalist Website को http://ww lsoft.com/catalist.html पर देखिये। यदि आप किसी लिस्ट चर्चा का विश्लेषण करना चाहते हैं या संदेशों के क्रम को फिर से देखना चाहते हैं तो List की ई-मेल लिस्ट List Archives Search को http://www.lisst. com/read/ पर देखिये।

शोध में लगे समाचार समूहों के विषय में और अधिक जानकारी के लिये आप पारस्परिक क्रिया वाले प्रदर्शनों Limiting a Search with Publication Information को देखिये जो कि Deja News Website पर ढूँढ़ने के लिये एक प्रदर्शन उपलब्ध कराती है। Deja News, जो कि वैब पर http://www.dejanews.com पर स्थित है, इंटरनैट पर उपलब्ध समाचार समूहों के विषयों के ऊपर प्रकाश डालती है।

अभ्यास 29.5

अभ्यास 29.4 में हमने बताया था कि आईसीटी और कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर पैकेजिज का गुणात्मक सामग्री/आंकड़ें विश्लेषण में उपयोग सीमित है किन्तु इसमें एक ऐसा स्रोत है जो आपकी शोध परियोजना के गुणात्मक पहलू में भी आपकी सहायता कर सकता है। http:/ /qrj.sagepub.com चर्चाओं के लिये एक ऐसा मंच उपलब्ध कराता है जहाँ शोध पद्धतियों, विशेष रूप से गुणात्मक शोध की पद्धतियों के विषय में चर्चा की जा सकती है। इस वैबसाइट को एक्सैस करिये और पता लगाइये कि यहाँ से आपको आपकी शोध परियोजना के लिये कोई सहायता मिल सकती है या नहीं। अपनी सकारात्मक या नकारात्मक उपलब्धियों पर एक संक्षिप्त नोट लिखिये।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

29.10 निष्कर्ष

यदि शोधकर्ता अपने शोध की आवश्यकताओं के विषय में स्पष्ट है तो सूचना एवं संचार प्रद्यौगिकी (ICT) को सामाजिक विज्ञान के किसी भी शोध विषय के संबंध में पूरे विश्व में कहीं से भी सूचनायें प्राप्त करने के लिये प्रभावी रूप से इस्तेमाल किया जा सकता है। प्राद्यौगिकी (Technology) के और उन्नत हो जाने से सांख्यिकीय सूचनाओं का प्रयोग भी कठिन नहीं रह गया है। अब इसके प्रयोग के लिये दुरूह गणितीय कौशलों की आवश्यकता नहीं होती है तथा इनको उपलब्ध विभिन्न यंत्रेतर सामग्री संवेष्टनों (Software Packages) के माध्यम से सरलता से प्रयोग में लाया जा सकता है। सूचना एवं संचार तकनीक आंकड़ों के प्रबन्धन, भंडारण तथा पुनः निकाल कर प्रयोग करने तथा एक ही समय पर कई व्यक्तियों द्वारा उसका उपयोग कर सकने के उत्कृष्ट और विश्वसनीय विकल्प उपलब्ध कराता है। सूचनाओं का आदान-प्रदान तेजी से और तुरन्त होता है तथा विश्व वास्तविक रूप में कहीं भी विद्यमान कितनी भी सूचनाओं को इसके द्वारा एक्सैस कर पाना संभव होता है। सूचना एवं संचार प्राद्यौगिकी में सामाजिक शोध के लिये प्रयोग किये जा सकने की असंख्य संभावनायें विद्यमान हैं और यदि इसका उपयोग ठीक से किया जाये तो इससे काफी समय, शक्ति तथा अन्य साधनों की बचत की जा सकती है। और जैसे-जैसे इंटरनैट का प्रयोग प्रारम्भ किया जाने लगता है वैसे-वैसे शोध कार्य के लिये इसकी नई-नई संभावनायें सामने आने लगती है। इंटरनैट सूचनायें सामग्री/आंकड़ें तथा विषय की समझ एकत्रित करने के बहुत सारे अवसर उपलब्ध कराता है।

29.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

मैकफारलेन, ए. 1977, *Reconstructing Historical Communities,* Cambridge University Press: Cambridge (especially p. 207-214).

Nie N.H., C.H. Hull, J.G. Jenkins, K. Stein brenner and D.H. Bent 1979. *Statistical Package for the Social Sciences*, McGraw Hill: New York

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 30
आंकड़े विश्लेषण के लिये एसपीएसएस का प्रयोग

इकाई की रूपरेखा

30.1 प्रस्तावना

30.2 एस पी एस एस को शुरू करना और बन्द करना

30.3 सामग्री/आंकड़े फाइल बनाना

30.4 एकचर विश्लेषण

30.5 द्विचर विश्लेषण

30.6 बहुचर विश्लेषण

30.7 अर्थो के परीक्षण

30.8 निष्कर्ष

30.9 कुछ उपयोगी पुस्तके

अध्ययन के उद्देश्य

यह आशा की जाती है कि इकाई 30 पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के योग्य हो जाएंगे:

- अपने सामग्री/आंकड़े विश्लेषण में एस पी एस एस के प्रयोग;
- एस पी एस एस प्रोग्राम को खोलने व बन्द करने के;
- एस पी एस एस के सामग्री/आंकड़े सम्पादक (Editor) में सामग्री/आंकड़े प्रविष्ठ करने के; तथा
- एक्सैल प्रोग्राम से सामग्री/आंकड़े की फाइल "इम्पोर्ट" (import) करने के।

MAADHYAM IAS

30.1 प्रस्तावना

SPSS समाजविज्ञानों के लिए सांख्यिकीय संवेष्टन (Statistical Package for Social Sciences) कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर प्रोग्राम व्यापक पैमाने पर सामग्री/आंकड़े व्यवस्थापन और सांख्यिकीय विश्लेषण प्रक्रियाओं तक पहुंच उपलब्ध कराता है। यह प्रोग्राम तालिकायें बनाने सहित सामग्री/आंकड़े विश्लेषण, सांख्यिकीय विश्लेषण तथा सामग्री/आंकड़े को ग्राफ के रूप में प्रस्तुत करने संबंधी कई प्रकार के काम कर सकता है। इसके साथ ही SPSS सैम्पल सर्वे शोध के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है।

यहाँ हम यह मानकर चलेंगे कि आपको सांख्यिकीय विश्लेषण की मूल धारणाओं और तकनीकों (देखें पुस्तक 2 में ब्लॉक 5 की इकाई) की जानकारी है। आप यह भी सीख चुके हैं कि विश्लेषण के लिये सामग्री/आंकड़े को किस प्रकार संग्रहित, संपादित और कोड़ करेंगे। इकाई 30 में आप सीखेंगे कि सामग्री/आंकड़े के विश्लेषण के लिये SPSS का प्रयोग किस प्रकार करें।

आप SPSS कार्यक्रम को Windows (95, 98, 2000, XP या NT) operating system के अन्तर्गत व्यक्तिगत कम्प्यूटर पर चला सकते हैं। चूँकि यह विन्डोज आधारित कार्यक्रम है। इसलिये आप इस कार्यक्रम को बिना किसी कठिनाई के चला सकते हैं और Word, Excel या Power Point कार्यक्रमों के साथ भी अधिक पारस्परिक क्रियाओं के साथ इसका प्रयोग कर सकते हैं। इस इकाई में दिए गये कमांड निर्देश तथा दिखाये गये उदाहरण SPSS के विन्डोज आधारित स्वरूप 11.5 के हैं।

कृपया नोट करें कि इकाई 30 में बॉक्सों में कोई सूचना नहीं दी गई हैं क्योंकि इसमें बहुत सारे चित्र हैं जिनकी सहायता से आप बिना बॉक्सों की सहायता के ही इसे समझ सकते हैं। Reflection और Action अभ्यासों के लिये यहाँ आपके लिये कुछ सीधे प्रश्न दिये गये

हैं जिनका आपको उत्तर देना होगा क्योंकि अभ्यास का Reflection वाला भाग चित्रों के साथ आपके विषय को पढ़ने के दौरान चलता रहेगा। आपके लिये अच्छा रहेगा यदि आप इन चित्रों को बार-बार जितनी बार हो सके देखें और आसान-आसान कामों से शुरू करके बाद में कठिन कामों को करने के लिये भी इनके प्रयोग का अभ्यास करें।

30.2 एस पी एस एस को शुरू करना और बन्द करना

सामान्यतः SPSS कार्य आपके पी सी के प्रोग्राम (Programme) नामक फोल्डर में स्थित होगा।

1) SPSS को शुरू करने के लिये माउस के बाँयें हाथ के बटन को Start बटन पर, जो कि स्क्रीन के बाईं ओर नीचे को होगा, क्लिक कीजिये। स्क्रीन पर बहुत सारे कार्यक्रमों की सूची दिखाई देगी।

2) इनमें से Programms को चुनिये। कार्यक्रमों (Programms) की प्रसूची (menu) खुल जायेगी।

3) कार्यक्रमों (Programms) प्रसूची (menu) में से SPSS for windows को चुनिये और उसके बाद SPSS के menu में से SPSS 11.5 for Windows को चुनिये। चिन्हों के रूप में यह आपके पी सी में Start बटन से निर्देश (Command) देकर आगे दिये अनुसार दिखाये जाते हैं:

   Select Start → Programs → SPSS for Windows→ SPSS 11.5 for Windows (इस इकाई में व इकाई 32 में हम → चिन्ह का प्रयोग यह दिखाने के लिये करेंगे कि यहाँ आपको अपने Cursor को माउस के साथ प्रयोग में लाना है।

MAADHYAM IAS

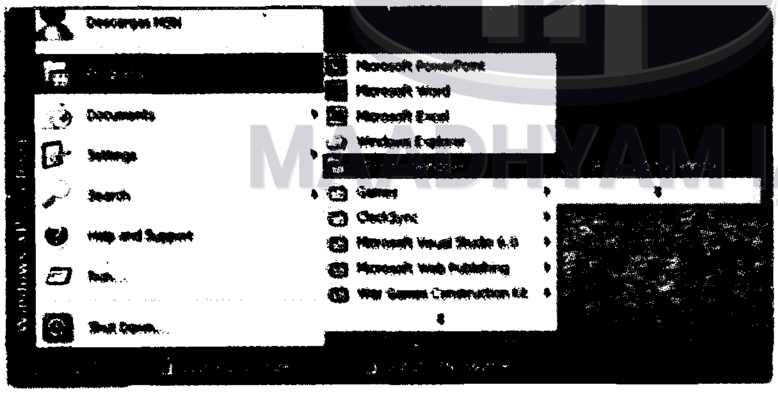

चित्र 30.1: विंडो के लिए एसपीएसएस

4) कुछ क्षणों के उपरान्त आपको **SPSS for Windows** menu के साथ dialog box **Data Editor** window dialog box दिखाई देगा जो आपसे पूछेगा कि आप क्या करना चाहते हैं।

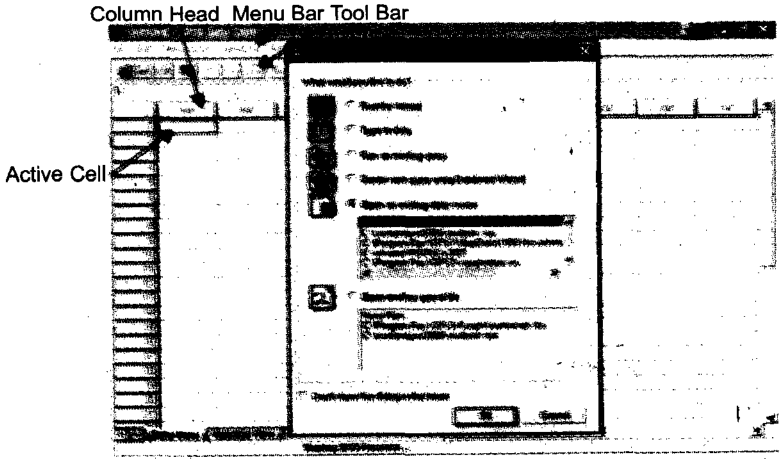

चित्र 30.2: आंकड़ा सम्पादक के लिए एसपीएसएस

SPSS Data Editor से बाहर आना– जब भी आप SPSS का काम खत्म कर चुके हों और उसे बन्द करना चाहते हों तो File सलैक्ट कीजिये और menu bar पर Exit की कमांड दे दीजिये।

30.3 सामग्री/आंकड़े फाइल बनाना

सामान्यतः सबसे पहली चीज जो आप करना चाहेंगे वह सामग्री/आंकड़े फाइल बनाना होगा। इसके लिये | Type in data बॉक्स पर चिन्ह लगायें और फिर SPSS for Windows में मीनू के डॉयलॉग बॉक्स पर OK का बटन दबायें मीनू डॉयलॉग बॉक्स वहाँ पर स्क्रीन से हट जायेगा और वहाँ सामग्री/आंकड़े एडीटर स्क्रीन पर रह जायेगा।

सामग्री/आंकड़े एडिटरः सामग्री/आंकड़ा सम्पादक (Data Editor) आपकी निम्नलिखित में सहायता करता है–

1) आपके द्वारा आंकड़े/सामग्री विश्लेषण के लिये एक क्रम विशेष में तैयार किये गये सामग्री/आंकड़े को उसी क्रम में प्रविष्ट करने में

2) किसी पहले से ही विद्यमान फाइल को खोलने में

3) सामग्री/आंकड़े के सम्पादन में

4) अन्य सामग्री/आंकड़े फाइलों को सामग्री/आंकड़े फाइलों में रूपान्तरित करने में

5) आपके SPSS के सामग्री/आंकड़े प्रविष्ट करने और सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के लिये प्रयोग के दौरान यह पूरे समय सक्रिय रहेगा।

सामग्री/आंकड़ा सम्पादक बहुत सारी लाइनों और कॉलमों से बनी वर्कशीट की तरह दिखाई देता है। लाइनों और कॉलमों के एक दूसरे को काटने से बनी जगहों को 'सैल' कहते हैं। सैलों में संख्यायें भी लिखी जा सकती हैं और शब्द (text) भी सैलों में कई संख्यायें या शब्द हो सकते हैं। प्रत्येक कॉलम में प्रत्येक चर के लिये सूचना या सामग्री/आंकड़े होगा। इसी प्रकार, प्रत्येक लाइन में प्रत्यके केस के बारे में सूचना या सामग्री/आंकड़े होगा।

MAADHYAM IAS

प्रत्येक सैल की पहली लाइन, जो कि हर कोष्ठ में सबसे ऊपर स्थित होती है, में हल्का सा Var रंग होता है और एक हल्का सा लिखा होता है। इन सैलों में चरों के नाम होते हैं। इसी प्रकार पहले नम्बर पर आने वाले हल्के से रंग किये हुये कॉलम में संख्यायें (1,2,3...) होती हैं इन्हें केस नम्बर कहा जाता है।

सामग्री/आंकड़े एडीटर डायलॉग बॉक्स में विन्डो के सबसे ऊपर एक मीनू बार होती है। मीनू बार SPSS की विशेषताओं की बड़ी-बड़ी श्रेणियों को वर्गीकृत करती है। इन्हें कमांड कहते हैं। यह मीनू बार कमाँड को चुनने और परिभाषित करने में आपकी मदद करती है।

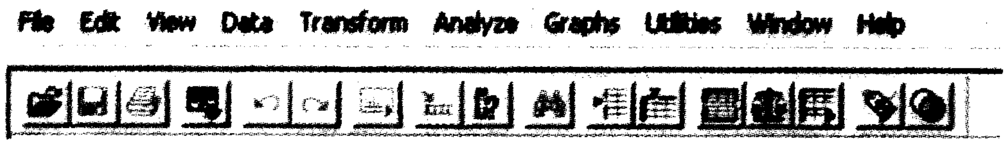

चित्र 30.3: एसपीएसएस आंकड़ा सम्पादक मीनू बार और टूल बार

मीनू बार के नीचे टूलबार होती है और यह SPSS की मूलभूत कमांडों को एक्सैस करने की अनुमति देती हैं। संबंधित बटनों पर क्लिक करके आप अपने अधिक काम में आने वाली कुछ कमांडों को एक्सैस कर सकते हैं।

लाइन 1 (केस 1) के और कॉलम 1 (Var I) के एक दूसरे को काटने वाली जगह को, जिसके चारों तरफ मोटी लाइन से बार्डर बना है, देखिये। मोटी लाइनों के बार्डर वाला सैल

दिखाता है कि यह सैल इस समय प्रयोग में लाया जा रहा है। आप इस सैल में सामग्री/आंकड़े एन्टर कर सकते हैं या सैल में विद्यमान सामग्री/आंकड़े को सम्पादित कर सकते हैं। आप वर्कशीट के किसी भी सैल को, वहाँ पर माउस कर्सर ले जाकर एक बार क्लिक करके, सक्रिय बना सकते हैं।

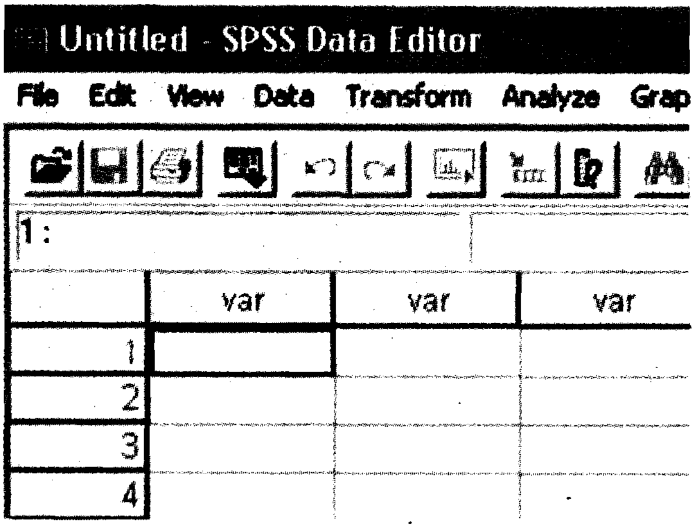

चित्र 30.4: शीर्षकहीन एसपीएसएस डाटा व्यू

सामग्री/आंकड़े सम्पादक में से दो दृश्य उपलब्ध है: सामग्री/आंकड़े व्यू तथा वैरियेबल व्यू सामग्री/आंकड़े व्यू में आप सामग्री/आंकड़े को उसी रूप में देख सकते हैं जिस रूप में आपने उसे टाइप किया है तथा वैरियेबल व्यू में आप हर वैरियेबल को परिभाषित विशेषता के रूप में देख सकते हैं। इन व्यूओं को एक्सैस करने के लिये संबंधित बटनों को जो कि आंकड़ा सम्पादक दृश्यपटल (Screen) के बांये हाथ पर बिल्कुल नीचे स्थित हैं, क्लिक कीजिये।

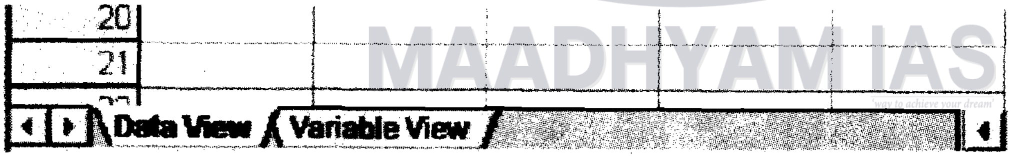

MAADHYAM IAS

चित्र 30.5: शीर्षक हीन एसपीएसएस वैरिएबल व्यू

आंकड़ा सम्पादक (Data Editor) में आंकड़े प्रविष्ट करना

जैसा कि आप पहले सीख चुके हैं आपके सामग्री/आंकड़े में एक से अधिक चर हो सकते हैं चरों के उदाहरण हैं लिंग (पुल्लिंग, स्त्रीलिंग) वैवाहिक स्थिति (विवाहित, अविवाहित, विधुर आदि), आय, रहन सहन व्यवहार का तरीका (जैसे पसन्दें, नापसन्दें, कोई स्कोर आदि) इसके अतिरिक्त प्रत्येक चर के आपके कई तरह के प्रेक्षण जो कि केसिज (Cases) कहलाते हैं, हो सकते हैं। आपने एक पहले इकाई में यह भी सीखा है कि गुणात्मक सामग्री/आंकड़े किस प्रकार कोड दिये जायें। उदाहरण के लिये, आपके पास ऐसे सामग्री/आंकड़ो का समुच्चय हो सकते हैं जिनमें लिंग वितरण, आयु, वैवाहिक स्थिति और आय पर 30 व्यक्तियों के संबंध में सूचना हो। आपने आंकड़ों के समुच्चय (Data Set) के लिये निम्नलिखित कोड भी निर्धारित कर दिये–

लिंग वितरण : पुरुष= 1, स्त्री= 2

वर्षो में आयु

वैवाहिक स्थिति : विवाहित= 1, अविवाहित= 2, विधुर= 3

आय रुपयों में

आपके द्वारा एकत्रित सामग्री/आंकड़े निम्नानुसार दिखाई दे सकता है:

तालिका 30.1: 30 व्यक्तियों की आय सैक्स, आयु एवं वैवाहिक स्थिति का डाटा

केस संख्या	लिंग	आयु	वैवाहिक स्थिति	आय (रुपए)
1	2	24	1	150000
2	1	52	1	345000
3	2	65	3	45000
4	1	35	3	245000
5	1	42	1	23000
6	1	25	1	670000
7	2	23	2	345000
8	2	63	1	156000
9	1	41	2	65300
10	2	48	1	150000
11	1	34	2	354000
12	2	55	3	23000
13	1	28	1	452000
14	1	43	2	120000
15	1	23	2	456000
16	2	65	1	765000
17	2	67	3	235000
18	2	32	2	54000
19	1	30	2	200000
20	2	25	2	180000
21	1	47	1	210000
22	2	36	3	350000
23	2	70	1	42000
24	1	67	3	175000
25	2	24	2	45000
26	1	32	1	234000
27	1	20	2	125000
28	2	25	1	36000
29	2	40	3	560000
30	2	45	1	234000

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सामग्री/आंकड़ा सम्पादक में सामग्री/आंकड़े प्रविष्ट की प्रक्रिया में चार मूल चीजें होती हैं–

1) चरों को परिभाषित करना
2) नामपत्रों (lables) को परिभाषित करना
3) छुटे हुये मूल्यों को परिभाषित करना
4) सैलों में सामग्री/आंकड़ें प्रविष्ट करना

हम इनको हमारे पहले दिये गये उदाहरण के सामग्री/आंकड़े की सहायता से स्पष्ट करेंगे। इसके लिये आप अपने कर्सर को आंकड़ा सम्पादक के बाँयें सिरे में बिल्कुल नीचे

ले जाइये और चर बटन पर क्लिक कीजिये, यदि सामग्री/आंकड़े एडीटर पहले से ही चर व्यू में नहीं है तो–

पहला कदमः चर को परिभाषित करें (Define Variables) चर को नाम देने के लिये परिभाषित करना होगा, सामग्री/आंकड़ें के प्रकार को निर्दिष्ट कीजिये (गुणात्मक, संख्यात्मक, कितने दशमलव प्वाइंट तक आदि), चरों को और सामग्री/आंकड़े को लेबल कीजिये, छुटे हुये को परिभाषित कीजिये और आपके स्तर (nominal, ordinal, interval/ratio scale) निर्धारित कीजिये। इनके अतिरिक्त आप कॉलम का स्वरूप भी निर्धारित कर सकते हैं। इसके लिये

1) पहले कॉलम में सैल को उसके ऊपर क्लिक करके सक्रिय बनाइये।

2) चर व्यू **Variable View** बटन पर क्लिक कीजिये। ग्रिड नीचे दिखाये गये नये स्वरूप में परिवर्तित हो जायेगी। आपको प्रत्येक चर को, जो कि आपने निर्मित किये हैं, सभी या अधिकतर कॉलमों के शीर्षक के माध्यम से वर्णित करना होगा।

3) पहली लाइन के पहले सैल को नाम शीर्षक के अन्तर्गत चर का नाम बदलने के लिये सक्रिय बनाइये। चर का नाम टाइप कीजिये – मान लीजिये इसे (लिंग) नाम दिया – और उसके बाद एन्टर बटन दबा दीजिये आप देखें कि वैरियेबल का अपने आप आ रहा Var नाम बदल कर Sex हो जायेगा और पहली लाइन के अन्य सैलों में चर के अन्य गुण अपने आप दिखाई देने लगेंगे –

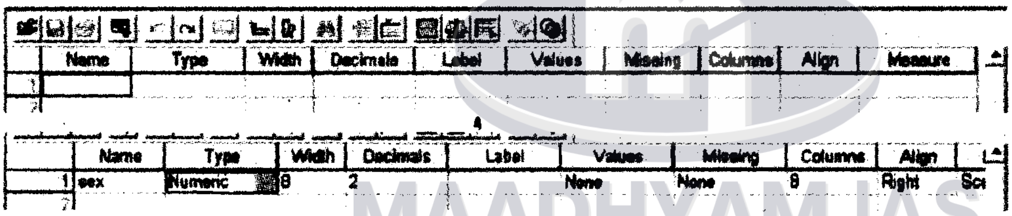

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 30.6: आंकड़ों के ग्रिड और चर में परिवर्तन

ध्यान रहे कि चर का नाम अधिक से अधिक 8 अक्षरों का हो सकता है जिसमें खाली अक्षर या अक्षर और संख्या दोनों हो सकते हैं। चर का नाम, जब उसमें संख्यायें भी हों तो, अक्षर से ही शुरू होना चाहिये। यहाँ पर कोई विशिष्ट चिन्ह (जैसे &, ?, !, ', *) चर के नाम में नहीं होने चाहिये। इसके साथ ही एक सामग्री/आंकड़े की फाइल में दो चरों का एक ही नाम भी नहीं होना चाहिये।

4) चर का प्रकार बदलने के लिये कर्सर को पहली लाइन के दूसरे सैल पर टाईप (Type) शीर्षक के नीचे ले जाइये। एक छोटा सा सलेटी रंग का बटन जिसमें तीन बिन्दियाँ होंगी, दिखाई देगा। उसके उपर क्लिक कीजिये। दृश्यपटल (स्क्रीन) पर **Variable Type** डायलॉग बॉक्स आ जायेगा। आप देखेंगे कि Default (अपने आप ही आने वाला) चर टाइप संख्यात्मक है। यदि आपके पास उस चर के लिये केवल संख्यात्मक आंकड़े हैं (जैसे लिंग चर) तो संख्यावाचक बॉक्स में चैक निशान लगा दें। आप संख्याओं के अंक Width text बॉक्स में दे सकते (Default Width आठ अंकों की होती है)। कभी-कभी आपको संख्याओं को दशमलव के साथ एन्टर करने की आवश्यकतायें पड़ सकती है। कितने अंकों तक दशमलव चाहिये इसको Decimal places के text box में लिखिये। (Default मे) अपने आप केवल दो अंकों तक दशमलव आयेंगे। यदि आपके सामग्री/आंकड़े में केवल integer values 'o' हैं तो Decimal places & text बॉक्स में टाइप करें। यदि आपके चर में लड़ी में आने वाली सूचना (जैसे व्यक्तियों के नाम, जगहों के नाम आदि) है तो चर का प्रकार संवाद

बाक्स में String बटन पर चैक चिन्ह करें और उसमें विषयों की अधिकतम, संख्या, जितनी कि वह स्ट्रिंग चर सम्भल सके, एन्टर कीजिये। इसी प्रकार सामग्री / आंकड़े चर के अन्य प्रकार जैसे तारीख, देश विशेष की मुद्रा आदि भी परिभाषित किये जा सकते हैं।

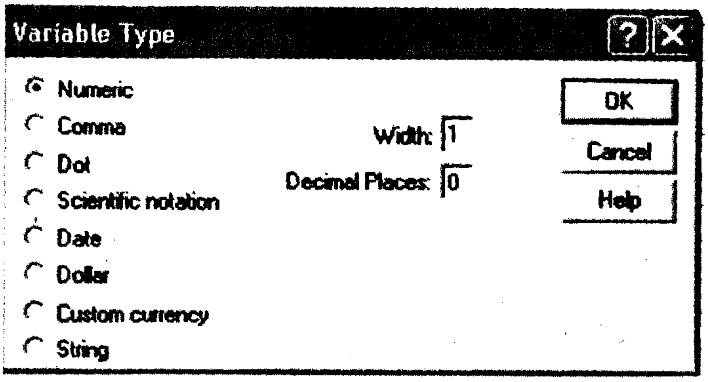

चित्र 30.7: चरों के प्रकार

5) चर के माप का स्तर भी (उदाहरण के लिये Sex एक नाम मात्र का चर है) Measure कॉलम शीर्षक के अंतर्गत संबंधित सैल को क्लिक करके निर्दिष्ट कीजिये।

दूसरा कदम: लेबल परिभाषित करना

अब कोड निर्धारित चर की सूचनाओं को शाब्दिक लेबल दिया जा सकता है। चर लेबल चर का एक बड़ा विवरण होता है जो कि चर के पहले परिभाषित नाम में सम्मिलित किया जा सकता है। चर का नाम केवल आठ अक्षरों तक का ही हो सकता है। अत: बाद में चर की विशिष्टताओं को समझने के लिये यह आवश्यक होगा। लेबल को परिभाषित करने के लिये –

1) नामपत्र (Label) का नाम **Label** शीर्षक वाले कॉलम के अन्तर्गत टाइप कीजिये (जैसे लिंग के आधार पर व्यक्तियों का वितरण)।

2) उसके बाद **Values** शीर्षक वाले कॉलम के सैल पर जाइये। सलेटी रंग वाले, जिसमें तीन बिन्धियाँ है, बॉक्स को क्लिक कीजिये। स्क्रीन पर **Value Labels** का डायलॉग बॉक्स आ जायेगा। जिस बॉक्स पर **Value** लिखा है वहाँ पर उस लेबल को दी गई संख्यात्मक सूचना टाइप कीजिये और उस सूचना के लिये लेबल का नाम **Value Label** के अन्तर्गत text box में टाइप करिये। उदाहरण के लिये आप Value text box में 1 और Value Label text box में Male टाइप कर सकते हैं। लेबल की सूचना सम्मिलित करने के लिये **एड** बटन को क्लिक कीजिये। फिर से Value text box में 2 टाइप कीजिये और Value Label text box में Female टाइप कीजिये और फिर एड बटन को क्लिक कर दीजिये।

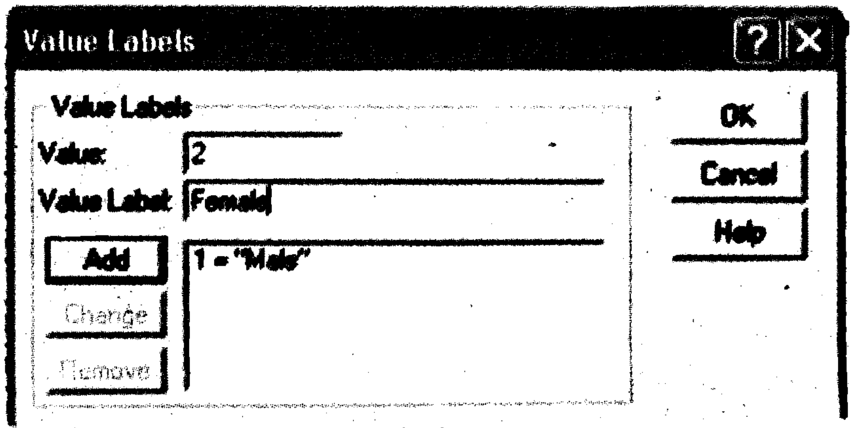

चित्र 30.8: चरों के नामपत्र

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

3) यह प्रक्रिया तब तक जारी रखिये जब तक कि आप सारी उनके संबंधित लेबलों सहित एड न कर लें।

4) Value Label संवाद बॉक्स को बन्द करने के लिये ओके बटन को क्लिक करें।

ध्यान रहे कि आपको केवल स्पष्ट (निर्धारित) सामग्री/आंकड़े के लिये ही Value Label परिभाषित करने होते हैं। लगातार चलते रहने वाले सामग्री/आंकड़े के लिये इसकी आवश्यकता नहीं होती।

कदम तीसराः अनुपस्थित मूल्य (Missing Values) को परिभाषित करनाः कई बार अनेकों कारणों से आपके सामग्री/आंकड़े में कुछ सूचनायें अप्राप्य रह जाती है। यदि आवश्यक हो तो उसके लिये missing values निर्धारित कर दीजिये। उदाहरण के लिये यदि किसी व्यक्ति की लिंग श्रेणी उपलब्ध नहीं है तो आप उस अप्राप्य सूचना के लिये कोई भी मूल्य निर्धारित कर सकते हैं। यहाँ हम इसे 9 मान लेते हैं। SPSS को अनुपस्थित मूल्य यह बताती है कि उत्तर उपलब्ध नहीं है तथा इसे सामग्री/आंकड़े विश्लेषण में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिये। किसी चर के लिये अनुपस्थिति मूल्य निर्धारित करने के लिये–

1) Missing शीर्षक के कॉलम में क्लिक कीजिये। स्क्रीन पर missing value डॉयलॉग बॉक्स दिखाई देगा।

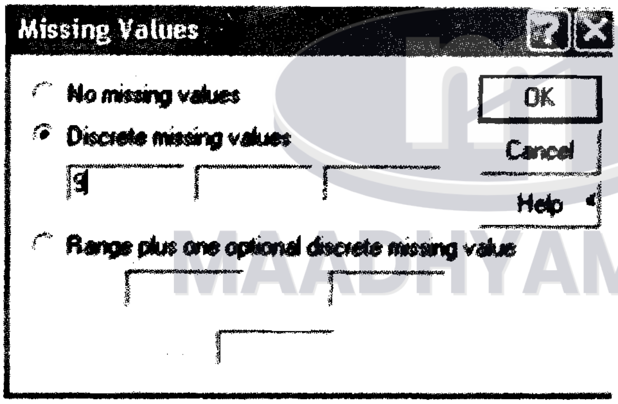

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 30.9: अनुपस्थित मूल्य

2) यदि चर में कोई missing values नहीं है तो No missing value के खाने में निशान लगाने के लिये क्लिक कीजिये। अन्यथा Discret Missing Value को चैक मार्क करने के लिये क्लिक कीजिये। इसके लिये आप मिसिंग वैल्यू के लिये निर्धारित कोई भी संख्या टाइप कर सकते हैं। उदाहरण के लिये यदि व्यक्ति की लिंग श्रेणी उपलब्ध नहीं है तो उसके लिये आप '9' का अंक निर्धारित कर सकते हैं। यदि आपने मिसिंग वैल्यू के लिये चैक मार्क कर दिया है तो निर्धारित मिसिंग वैल्यू अंक (9) टाइप कर दीजिये।

3) डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये **ओके** (OK) पर क्लिक कीजिये।

ध्यान रहे कि आपके द्वारा चर के लिए निर्धारित missing value सामग्री/आंकड़े फाइल में उनकी निर्धारित स्थिति में विद्यमान रहती हैं।

आप प्रत्येक कॉलम की चौड़ाई **Column** शीर्षक के अन्तर्गत आने वाले सैल के कॉलम में भी निर्धारित कर सकते हैं और सैल में उनकी जगह (सीधे हाथ को, उल्टे हाथ को या बीच में) भी **Align** शीर्षक के कॉलम में निर्धारित कर सकते हैं। **Measure** शीर्षक के अन्तर्गत आने वाले सैल में measure का प्रकार निर्दिष्ट कीजिये।

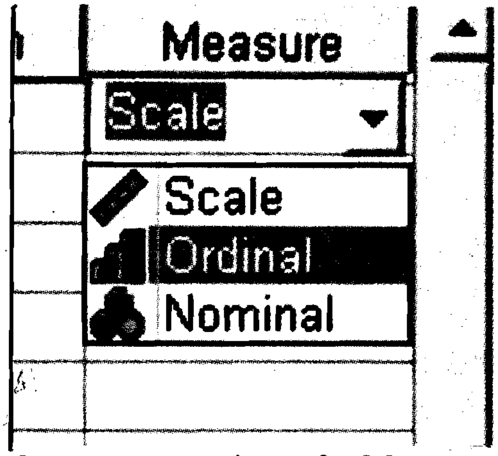

चित्र 30.10: मापन के अन्तर्गत विशिष्टकरण

अब आपने चर से संबंधित सारी सूचनायें परिभाषित कर दी हैं। अब दूसरी लाइन पर (आयु चर को परिभाषित करने के लिये), तीसरी लाइन पर (वैवाहिक स्थिति के चर को परिभाषित करने के लिये) ..... आदि अन्य शेष चरों को इसी क्रम में परिभाषित करने के लिए आगे बढ़िये।

	Name	Type	Width	Decimals	Label	Values	Missing	Column	Align	Measure
1	sex	Numeric	1	0	Sex distributio	{1, Male}...	9	8	Right	Nominal
2	age	Numeric	1	0	Age in years	None	99	8	Right	Scale
3	marital	Numeric	1	0	Marital status	{1, Married}...	9	8	Right	Nominal
4	income	Numeric	6	0	Income in Rs.	None	99	8	Right	Scale
5										

चित्र 30.11(क): सभी चरों को परिभाषित करना

एक बार सारे चरों को परिभाषित कर देने के बाद आप दी गई वैरिएबलों की परिभाषाओं को देखना चाहेंगे। इसके लिये मीनू बार में यूटिलिटिज को सलैक्ट करके **File Info** कमाँड दीजिये। इससे आउटपुट विन्डो में फाइल की पूरी सूचना आ जायेगी। इसको आप प्रिंट भी कर सकते हैं यदि आपको भविष्य में संदर्भ के लिये इसकी आवश्यकता हो।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

फाइल सूचना

वर्किंग फाइल पर चरों की सूची

नाम

स्थिति

सैक्स **व्यक्तियों का सैक्स वितरण**

1) मापन स्तरः नाममात्र

कालम चौड़ाईः 8 एलाइनमेंटः राइट

प्रिंट फारमेटः एफ1

राइट फारमेटः एफ1

मिसिंग वेल्यूजः 9

वेल्यू	**लेबल**
1	पुरुष
2	महिला

आयु **आयु वर्षों में**

2) मापन स्तरः नाममात्र

कालम चौड़ाईः 8 एलाइनमेंटः राइट

प्रिंट फारमेटः एफ1

राइट फारमेटः एफ1

मिसिंग वेल्यूजः *

वैवाहिक **वैवाहिक स्थिति**

1) मापन स्तरः नाममात्र
कालम चौड़ाईः 8 एलाइनमेंटः राइट
प्रिंट फारमेटः एफ1
राइट फारमेटः एफ1
मिसिंग वेल्यूजः 9

वेल्यू	लेबल
1	विवाहित
2	अविवाहित
3	विधवा/विधुर

आयु **आय रुपए में**

1) मापन स्तरः नाममात्र
कालम चौड़ाईः 8 एलाइनमेंटः राइट
प्रिंट फारमेटः एफ6
राइट फारमेटः एफ6
मिसिंग वेल्यूजः 99

चौथा कदमः सैलों में सामग्री/आंकड़े प्रविष्ट करनाः जब आपकी सामग्री/आंकड़े फाइल के लिये सभी चर परिभाषित कर दिये गये हों तो सामग्री/आंकड़ें सीधे ही सैलों में प्रविष्ट किया जा सकता है। इसके लिये सबसे पहले व्यू को सामग्री/आंकड़े व्यू में, सामग्री/ आंकड़े व्यू बटन को क्लिक करके, बदलिये।

	sex	age	marital	income	var
1	2	24	1	150000	
2	1	52	1	345000	
3	2	65	3	45000	
4	1	35	3	245000	
5	1	42	1	23000	
6	1	25	1	670000	
7	2	23	2	345000	
8	2	63	1	156000	
9	1	41	3	65300	
10	2	48	1	190000	
11	1	34	2	354000	
12	2	56	3	23000	
13	1	28	1	452000	
14	1	43	2	120000	
15	1	23	2	456000	
16	2	65	1	766000	
17	2	67	3	236000	
18	2	32	2	54000	
19	1	29	2	200000	
20	2	26	2	180000	
21	1	47	1	210000	
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	

Data View / Variable View

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 30.11(ख): प्रत्येक चर के लिए मूल्य प्रविष्टि

1) चर (sex, लिंग) के सैल को सक्रिय बनाने के लिये पहले सैल पर क्लिक कीजिये।

2) चर से संबंधित वैल्यू (जैसे 2) टाइप कीजिये और फिर प्रविष्ट की दबाइये।

अब आप देखेंगे कि पहले सैल में '2' दिखाई देगा और (उसके नीचे का सैल) सैल 2 सक्रिय हो जायेगा।

3) 1 टाइप करें और एन्टर की दबायें। इसका अर्थ है केस 2 के लिये भी लिंग सूचना एन्टर हो गई है। जब तक तीसों केसों के लिये **लिंग** चर की सूचना एन्टर न हो जाये यही प्रक्रिया अपनाते जाइये।

4) अब आयु (age) चर के नीचे पहले सैल को क्लिक करके सक्रिय बनाइये और उस वैरियल के लिये सूचनायें प्रविष्ट करें। यही प्रक्रिया अपनाते रहिये जब तक कि आपको सारे केसों का सभी चरों से संबंधित सामग्री/आंकड़े प्रविष्ट न हो जाये।

जब सामग्री/आंकड़े प्रविष्ट हो जाये तो सामग्री/आंकड़े को एक फाइल में सेव कर लिया जाना चाहिये। इससे न केवल सामग्री/आंकड़े को बार-बार प्रविष्ट करने की आवश्यकता से बचा जा सकेगा बल्कि भविष्य में सामग्री/आंकड़े के प्रयोग के लिये भी यहाँ से

सामग्री/आंकड़े लिया जा सकेगा। दो तरह की फाइलों में अन्तर करता है। सामग्री/आंकड़े फाइल (.sav विस्तार के साथ) तथा आउट पुट फाइल (.spo विस्तार के साथ)। सामग्री/आंकड़े फाइलों में वह सामग्री/आंकड़े होता है जो आपने प्रविष्ट किया है और फाइलों में आपके द्वारा किये गये सामग्री/आंकड़े के विश्लेषण के आधार पर प्राप्त सूचनायें होती हैं। यदि आपको भविष्य में इन फाइलों के प्रयोग की आवश्यकता हो तो आपको इन फाइलों को सेव कर लेना चाहिये। किसी सामग्री/आंकड़े फाइल को सेव करने करे लिये:

1) फाइल को चुनिये। मीनू बार में **सेव** एज निर्देश दीजिये। स्क्रीन पर **छोटा** डायलॉग बॉक्स दिखाई देगा।

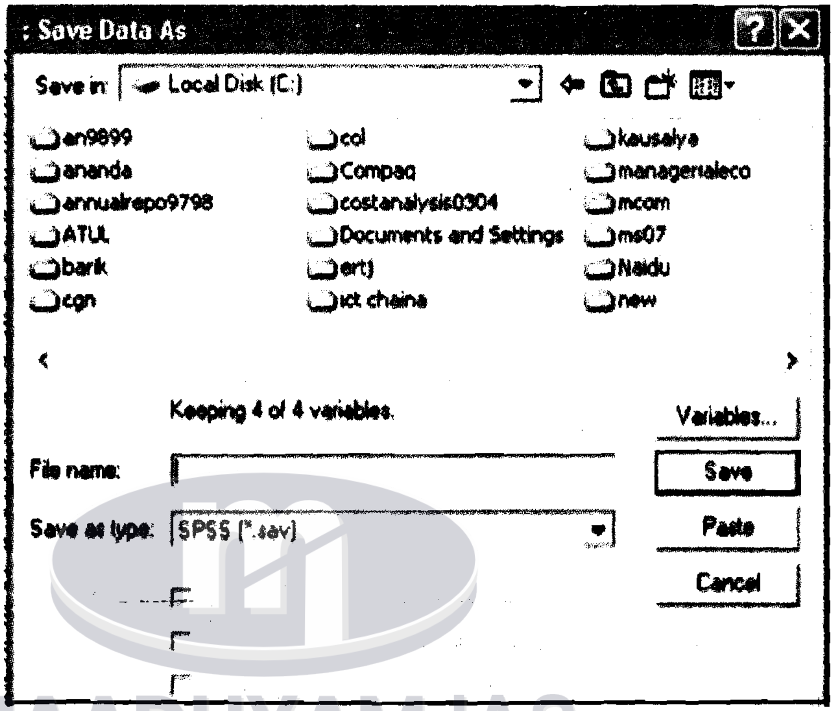

MAADHYAM IAS

चित्र 30.12: आंकड़ों की फाइल को सुरक्षित करना

2) जिस ड्राइव और फोल्डर में आप अपनी सामग्री/आंकड़ें फाइल संचित करना चाहें उसे चुनिये (सलैक्ट) कीजिये।

3) **फाइल नेम** बॉक्स के अन्तर्गत आने वाले फाइल नेम के टेक्सट बॉक्स में फाइल का नाम टाइप कीजिये और सेव का बटन क्लिक कीजिये।

एक्सैल वर्कशीट से सामग्री/आंकड़े फाइल इंपोर्ट करना

कई बार हो सकता है कि आपने अपना सामग्री/आंकड़े एक्सैल वर्कशीट में एन्टर किया हो और उसी सामग्री/आंकड़ें सैट का प्रयोग करके आप एस पी एस एस से उसका विश्लेषण करना चाहते हों। एस पी एस एस आसानी से एक्सैल सामग्री/आंकड़ेफाइल तथा कुछ अन्य प्रकार की सामग्री/आंकड़ें फाइलों को खोल सकता है। एक एक्सैल सामग्री/आंकड़ेफाइल को खोलेने के लिये,

1) **Start→ Programme** की माइक्रासॉफ्ट एक्सैल कमांड को अपने पी सी पर **स्टार्ट** बटन से सलैक्ट कीजिये। कुछ ही क्षणों में एक्सैल वर्कशीट डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर दिखाई देगा।

2) फाइल ओपन **(File→ Open)** ... कमॉंड सलैक्ट कीजिए। ओपन फाइल डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा। जिस ड्राइव और फोल्डर में आपने अपनी सामग्री/आंकड़ें फाइल स्टोर की है उसे सलैक्ट कीजिये। फाइल का नाम सलैक्ट या टाइप कीजिये और बटन पर क्लिक कीजिये। एक्सैल सामग्री/आंकड़े फाइल नीचे दिखाये अनुसार खुलेगी।

आप देखेंगे कि चरों के नाम ऊपर की पहली लाइन में है। आइये मान लेते हैं कि वक्रशीट एक्सैल (.xls विस्तार के साथ) फाइल, जो कि प्रोफाइल कहलाती है, के रूप में सेव हुई है।

3) SPSS Data Editor के डायलॉग बॉक्स में फाइल सलैक्ट करके **ओपन सामग्री/आंकड़े** कमांड दीजिये। **Look in** बॉक्स में ठीक डाइरेक्ट्री और फोल्डर चुनिये। उसके बाद **File of type** बॉक्स में Excel(+ .xls) चुनिये। **फाइल नेम** बॉक्स में Profile.xls सलैक्ट कीजिये।

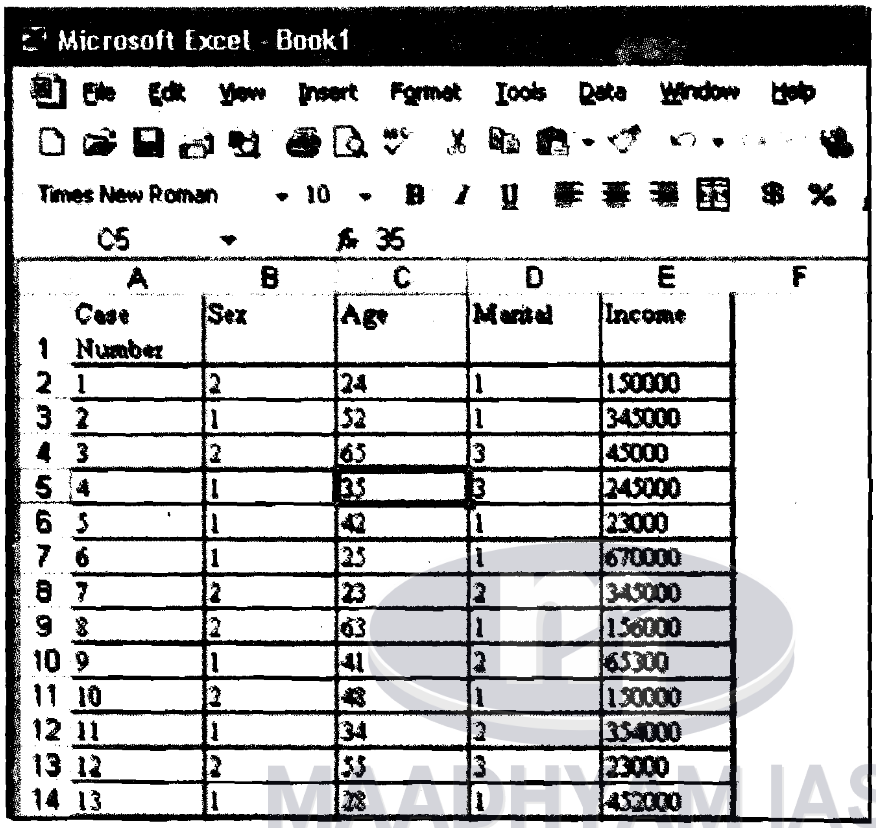

Case Number	Sex	Age	Marital	Income
1	2	24	1	150000
2	1	52	1	345000
3	2	65	3	45000
4	1	35	3	245000
5	1	42	1	23000
6	1	25	1	670000
7	2	23	2	345000
8	2	63	1	156000
9	1	41	2	65300
10	2	48	1	150000
11	1	34	2	354000
12	2	55	3	23000
13	1	28	1	452000

MAADHYAM IAS

चित्र 30.13: माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल–पुस्तक 1

आप देखेंगे कि चरों के नाम सबसे ऊपर की पंक्ति में हैं। आइये मान लेते हैं कि वर्कशीट ऐक्सेल (.xls विस्तार के साथ) फाइल, जो कि प्रोफाइल कहलाती है, के रूप में सुरक्षित की हुई है।

4) एस.पी.एस.एस. डाटा एडिटर डायलॉग बॉक्स में फाइल→ओपन डाटा... कमांड सलैक्ट कीजिए। फाइल ऑफ टाइप बॉक्स में एक्सल (*.xls) ' फाइल नाम बॉक्स में फाइल नाम प्रोफाइल .xls को सलैक्ट कीजिए'

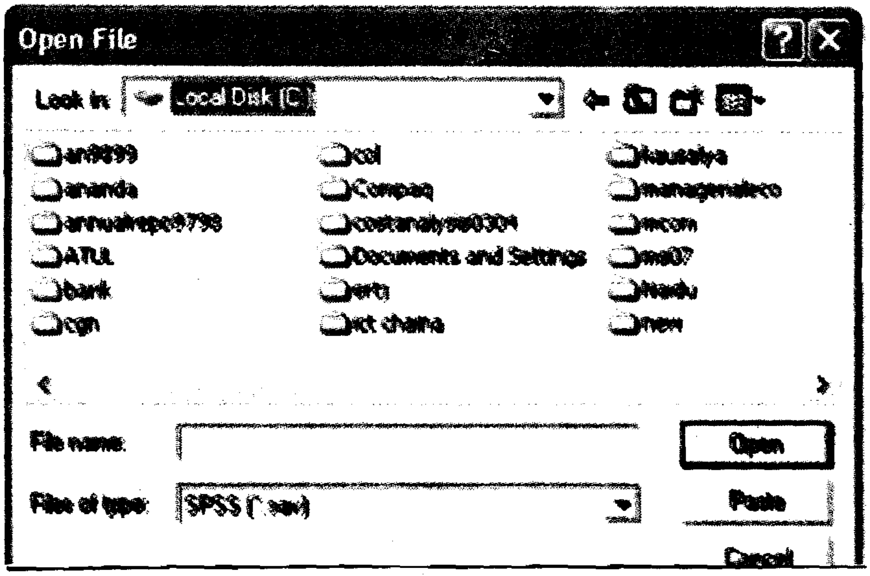

चित्र 30.14: खुली हुई फाइल

5) ओपन फाइल डायलॉग बॉक्स में ओपन टैब को क्लिक कीजिये। स्क्रीन पर **Opening Excel Data Source** डायलॉग बॉक्स आ जायेगा। यदि आपकी एक्सैल फाइल में चरों के नाम भी दिये गये हैं तो **Read variable names from the rist row of the data** के बॉक्स को चैक मार्क कीजिये। यदि आप रेंज बॉक्स को खाली छोड़ देंगे तो SPSS Excel worksheet में उपलब्ध सारे सामग्री/आंकड़े को पढ़ेगा। यदि आप चाहते हैं कि यह केवल कुछ पंक्तियों और कॉलमों को ही पढ़े तो कोई **रेंज** टाइप करिये। उदाहरण के लिये आप पहले चार कॉलमों (A, B, C और D) और 30 लाइनों को सलैक्ट (1 से 30) करने के लिये **A1: D30** टाइप करते हैं। अब **ओपनिंग एक्सैल सामग्री/आंकड़े** सोर्स डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये ओके बटन क्लिक कीजिये और सामग्री/आंकड़े एडीटर डायलॉग बॉक्स पर वापिस आ जाइये। आप देखेंगे कि सामग्री/आंकड़े एस पी एस एस सामग्री/आंकड़े एडीटर में आ गया है। एस पी एस एस सामग्री/आंकड़े फाइल को सुरक्षित (Save) कर लीजिये।

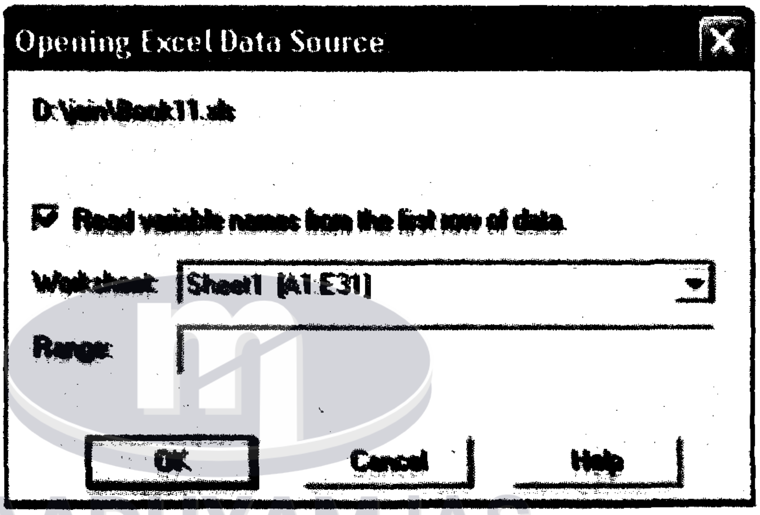

MAADHYAM IAS

चित्र 30.15: एक्सैल आंकड़े के स्रोत को खोलना

अभ्यास 30.1

ऊपर दी गई विषय वस्तु को पढ़कर और चित्रों को देखकर नीचे के दो प्रश्नों का उत्तर दीजिये। इन प्रश्नों को पूछने के पीछे मंशा यह सुनिश्चित करने की है कि आप प्रक्रियाओं को समझ गये हैं–

1) एक सामग्री/आंकड़ें फाइल को बनाने में अपनाये जाने वाले विभिन्न कदमों को संक्षेप में बताइये।
2) एस पी एस एस सामग्री/आंकड़े एडीटर और आउटपुट एस पी एस एस व्यूयर के अन्तर को स्पष्ट कीजिये।

30.4 एकचर विश्लेषण (Univariable Analysis)

सामग्री/आंकड़े का कई तरह से विश्लेषण किया जा सकता है। आप सामग्री/आंकड़े को साधारण निरंतरता सारणी (Frequency Table) के रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं या सांख्यिकीय तकनीकें अपना सकते हैं। सामग्री/आंकड़े के विश्लेषण के लिये सामग्री/आंकड़े फाइल को पहले खोला जाना चाहिए। यदि सामग्री/आंकड़े फाइल पहले से ही खुली हुई नहीं है तो मीनू बार से फाइल ओपन की कमांड दीजिये। ओपन फाइल डायलॉग बॉक्स दिखाई देगा। फाइल की लोकेशन चुनिये और सामग्री/आंकड़े फाइल का नाम और ओके का बटन क्लिक कीजिये। अब सामग्री/आंकड़ें सामग्री/आंकड़े एडीटर स्क्रीन में दिखाई देगा।

एस पी एस एस सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के लिये बहुत सारे टूल्स उपलब्ध्ध कराता है। यह टूल्स मीनू बार पर कमांड से चुने जाते हैं। इस भाग में आप सीखेंगे कि किस प्रकार निरंतरता सारणी (Frequency Table) बनाई जायें और एक चर (Univariable) की सांख्यिकी

की गणना की जाये।

याद रखें कि आप एस पी एस एस में एक ही सांख्यिकी (Statistics) की गणना अलग-अलग तरह से कमांड देकर कर सकते हैं।

Frequence tables (निरंतरता सारणी)

फ्रीक्वेंसी टेबुल बनाने के लिये

1) मीनू बार से **Analyze→Descriptive Statistics→Frequencies** कमांड सलैक्ट करें। स्क्रीन पर फ्रीक्वेंसीज का डायलॉग बॉक्स दो बड़े फ्रीक्वेंसी सलैक्ट करने और फ्रीक्वेंसी हटाने के बॉक्सों के साथ दिखाई देगा।

   ध्यान से देखिये कि बांये हाथ वाले बॉक्स में उन चरों की, जिनके लिये सामग्री/आंकड़ें एन्टर किया गया है, एक सूची है। सीधे हाथ वाले बॉक्स में आपके द्वारा विश्लेषण में सम्मिलित किये जाने वाले वैरियेबलों के लिए एक खाली बॉक्स है।

2) बायें हाथ वाले बॉक्स में से फ्रीक्वेंसी टेबुल बनाने के लिये चर को चैक मार्क करके चुना कीजिये। दोनों बॉक्सों के बीच के Arrow के निशान को क्लिक कीजिये। चुना किया गया चर सीधे हाथ वाले बॉक्स में दिखाई देने लगेगा। जब तक आपके द्वारा सामग्री/आंकड़े विश्लेषण में सम्मिलित किये जाने वाले सभी चर सीधे हाथ वाले बॉक्स में न आ जायें यही प्रक्रिया दोहराते जाइये।

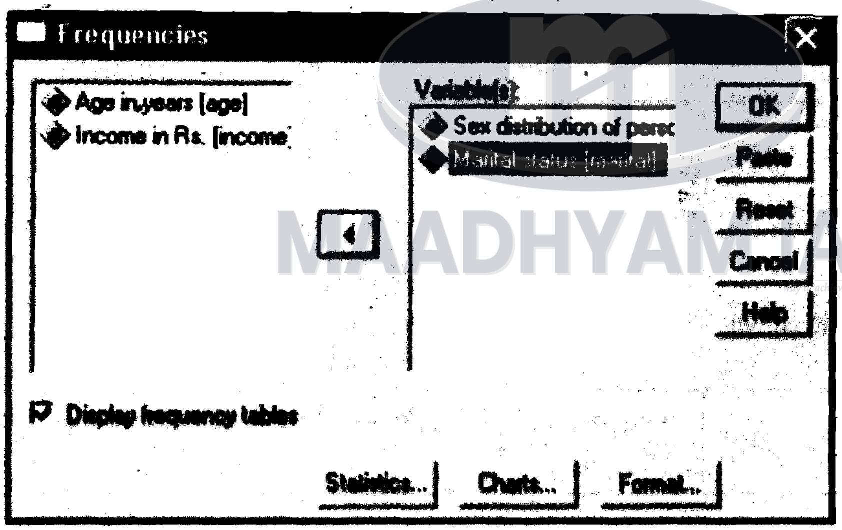

MAADHYAM IAS

चित्र 30.16: बारम्बारताएं

3) जब पहला चर सीधे हाथ वाले बॉक्स में ले जाया जाता है तो दोनों बॉक्सों के बीच में एक ऐरो उल्टी दिशा में दिखाई देता है। यदि आप गलती से गलत वैरियेबल चुन लेते हैं तो इस ऐरो के चिन्ह को क्लिक करके उसे पहले की (मूल) सूची में वापिस भेज सकते हैं।

   याद रखिये कि निरंतरता का यह टूल केवल निर्धारित सामग्री/आंकड़े के लिये (जैसे हमारे उदाहरण में लिंग, वैवाहिक स्थिति आदि) ही उपयुक्त है। इसलिये कोई भी निरन्तर बदलते रहने वाला चर (जैसे हमारे उदाहरण में आयु, आय) मत चुनिये।

4) सामग्री/आंकड़े विश्लेषण में सम्मिलित किये जाने वाले सारे चर चुन लेने के बाद बटन को क्लिक कर दीजिये। Output SPSS Viewer Window में अब आप देखेंगे कि आउटपुट नीचे दिखाई दे रहा है।

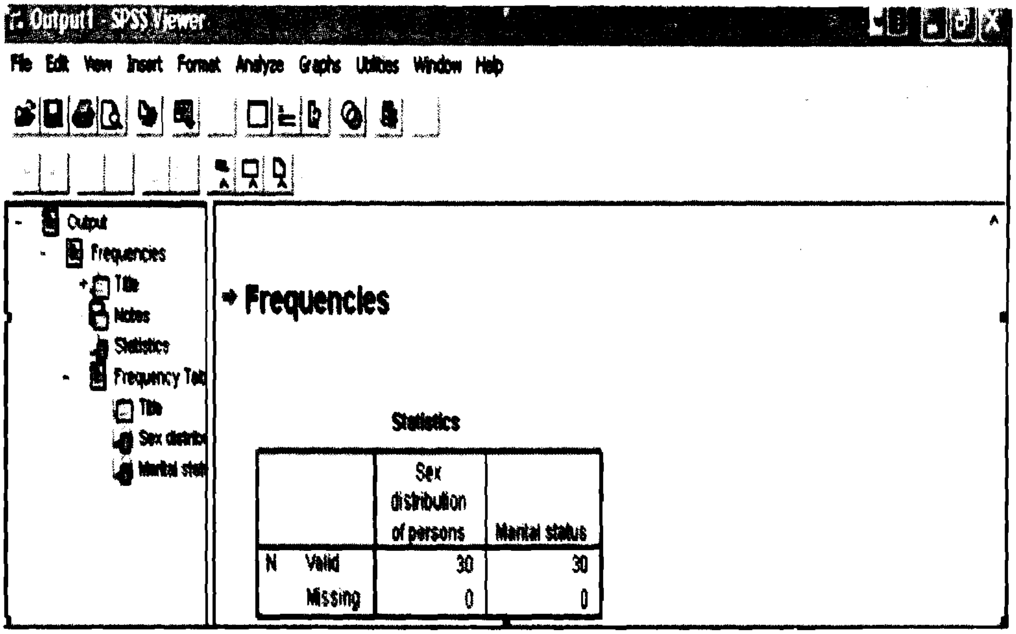

चित्र 30.17: आउटपुट एसपीएसएस व्यूवर

बारम्बारताएं

नीचे दो तालिकाएं हैं (तालिका 30.4 और 30.5 क्रमशः लोगों के लिंग/वितरण और वैवाहिक प्रस्थिति पर है।

तालिका 30.2: लोगों का सैक्स/वितरण

सांख्यिकी

		लोगों का सैक्स वितरण	वैवाहिक स्थिति
N	वैध	30	30
	मिसिंग	0	0

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

तालिका 30.3: वैवाहिक स्थिति

बारंबारता तालिका

वैयक्तियों का सैक्स/वितरण

		बारंबारता (Frequency)	प्रतिशत	वैध प्रतिशत	संचयी प्रतिशत
वैध	पुरुष	14	46.7	46.7	46.7
	महिला	16	53.3	53.3	100.0
	कुल	30	100.0	100.0	

तालिका 30.4: वैवाहिक स्थिति

वैवाहित स्थिति

		बारंबारता (Frequency)	प्रतिशत	वैध प्रतिशत	संचयी प्रतिशत
वैध	विवाहित	13	43.3	43.3	43.3
	अविवाहित	10	33.3	33.3	76.7
	विधवा/विधुर	7	23.3	23.3	100.0
	कुल	30	100.0	100.0	

आप देखेंगे कि टेबिलों में वह सब जानकारी सम्मिलित है जो कि आपको चाहिये। साथ ही आपके पास प्रत्येक चर के लिये अनुपस्थित केसों की सूचना भी है। आपके पास तीन तरह के प्रतिशत भी हैं– एक मिसिंग केसों सहित सभी केसों के लिये (Percent शीर्षक के अन्तर्गत), दूसरा Valid Percent शीर्षक के अन्तर्गत सभी पुष्ट (सही) मामलों के लिये तथा तीसरा Cumulative Percent शीर्षक के अन्तर्गत Cumulative प्रतिशत।

प्रिंटिंग/सेविंग आउटपुट

अब आप संभव है इस Output SPSS Viewer में उपलब्ध आउटपुट को कागज पर प्रिन्ट करना चाहेंगे या इस पूरे आउटपुट या इसके किसी भाग को किसी फाइल में सुरक्षित करना चाहेंगे।

1) आउटपुट को किसी फाइल में सुरक्षित रखने के लिये सामग्री/आंकड़े फाइल सेव करने के लिये दिये गये निर्देशों को अपनाइये।

2) सारे आउटपुट को प्रिन्ट करने के लिये स्क्रीन पर उल्टे हाथ की तरफ स्थित Outline pane पर कहीं भी क्लिक कीजिये। मीनू बार से File→Print चुनिये और ओके बटन क्लिक करिये।

3) आउटपुट के केवल किसी भाग को प्रिन्ट करने के लिए कर्सर को, जिस भाग का आप प्रिन्ट लेना चाहते हैं उसके अन्त तक ले जाइये। की बोर्ड पर शिफ्ट की दबाइये और माउस का बांये हाथ का बटन क्लिक कीजिये। आप देखेंगे कि आप के द्वारा चुना गया भाग अलग दिखाई दे रहा है। मीनू बार में File→Print कमांड चुनिये और ओके बटन क्लिक कर दीजिये।

Recode Data: कई कारणों से आप अपने सामग्री/आंकड़े को रिकोड करना (नया कोड/नाम देना) चाह सकते हैं। उदाहरण के लिये आयु चर के मूल्य लगातार बदलने वाले हैं। अब आप उनको नीचे दिये अनुसार वर्गीकृत करना चाहते हैं। जैसे–

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सारणी 30.5: आंकड़ों का मूल्य

Old Value	New Value
Less than 19	1
20-30	2
30-39	3
40-49	4
50-59	5
60 and above	

किसी वैरियेबल को फिर से कोड करने के लिए मीनू बार से Transform→Recode→Into Different Variables कमांड सलैक्ट कीजिये।

स्क्रीन पर Recode into Different Variables का डायलॉग बॉक्स दिखाई देगा। जिस चर को आप नये नाम के चर से बदलना चाहते हैं, उसे बाँये हाथ के बॉक्स में सलैक्ट कीजिये। उसे दोनों बॉक्सों के बीच में स्थित ऐरो टैब का प्रयोग करके दाँये हाथ वाले बॉक्स में ले आइये। चर का नाम Name वाले textbox में और लेबल का नाम Label वाले textbox में टाइप कीजिये–

Old and New Values के बटन को Recode into Different Variables के डायलॉग बॉक्स में दबा दीजिये। Recode into Different Variables: Old and New Values का

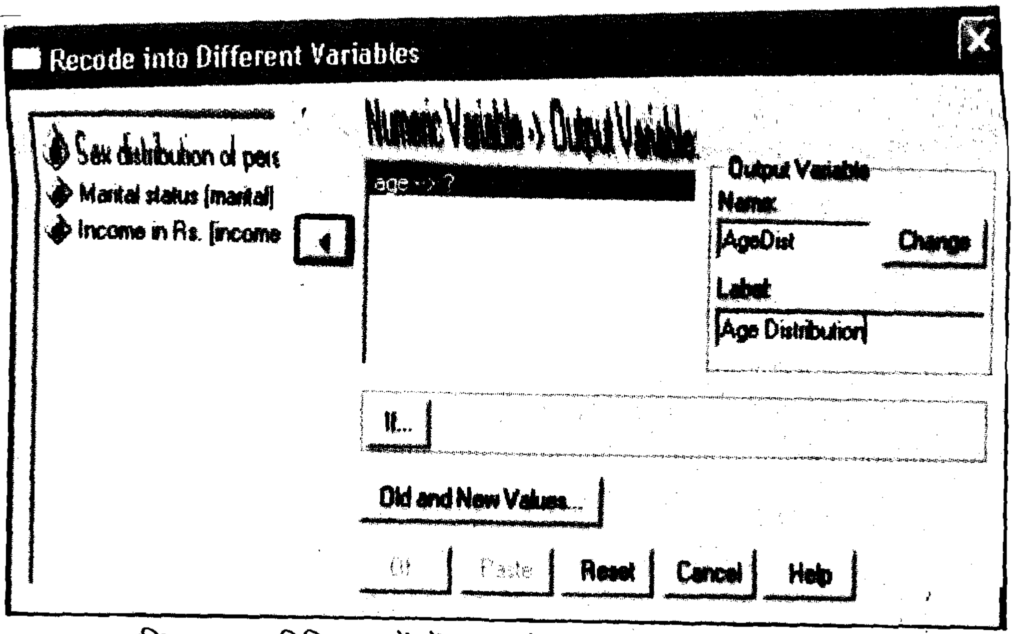

चित्र 30.18: विभिन्न चरों में पुनः कोड करना: पुराने और नये मूल्य

डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर दिखाई देगा। अब Range वाले बटन पर चैक मार्क लगायें। पहली रेंज को रेंज शीर्षक के अन्तर्गत आने वाले बॉक्स में टाइप करें। New Name शीर्षक के अन्तर्गत आने वाले Value बटन पर चैक मार्क लगायें। एड बटन को पुरानी व नई Values को परिभाषित करने के लिए दबाये। Recode into Different Variables डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये Continue का बटन दबायें और Recode into Different Variables के डायलॉग बॉक्स में वापिस आ जायें।

MAADHYAM IAS

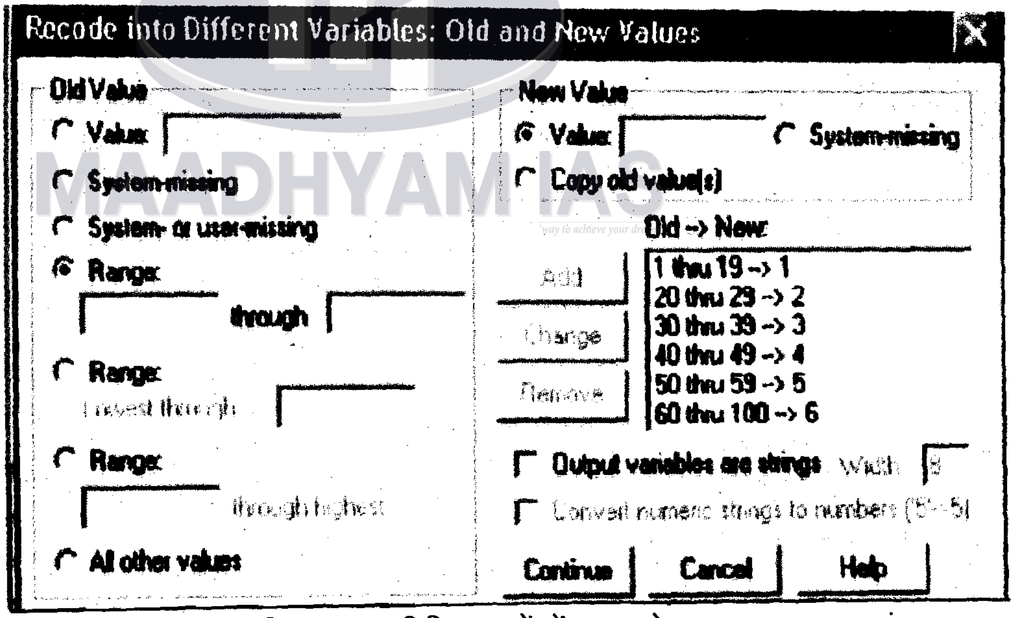

चित्र 30.19: विभिन्न चरों में पुनः कोड करना

यदि आप एक से अधिक वैरियेबलों को परिभाषित करना चाहते हैं तो इन्हीं steps को प्रत्येक वैरियेबल के लिये दोहराइये अन्यथा Recode into Different Variables के डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये ओके का बटन दबाइये।

एकचर सांख्यिकी (Univariate statistics)

आपके सामग्री/आंकड़ें सैट के प्रत्येक एकचर सांख्यिकी के लिये आप निम्नलिखित गणनायें करे सकते हैं:

a) Measures of central tendency: Mean, Median, and Mode.
b) Dispersion: Standard deviation, Variance, Range, Standard Eroor of Mean, etc.
c) Distribution: Kurtosis and Skewness

ध्यान रहे कि एस पी एस एस में केन्द्रीय प्रवृत्ति (मीन, मीडियन और मोड) को चुनने में, जिनको किसी भी सामग्री/आंकड़े सैट के लिये गणना की जा सकती है, कुछ प्रतिबन्ध है। माध्य (मीडियन) और/या मोड का विकल्प आपके द्वारा चुने हुये चर की गणना तक ही सीमित है। यदि किसी वैरियेबल के लिये माप का स्तर **नॉमिनल** है तो आप केवल 'मोड' की ही गणना कर सकते हैं। यदि वैरियेबल के माप का स्तर Ordinal है तो आप केवल मोड और/या मीडियन की ही गणना कर सकते हैं। यदि किसी चर के माप का स्तर interval/ratio है तो आप मोड, मीडियन या/और मोड की ही गणना कर सकते हैं।

एकचर सांख्यिकी स्टैटिस्टिक्स की गणना करने के लिये,

1) **Analyse→Descriptive Statistics→Frequencies** का मीनू बार पर/से सलैक्ट कीजिये। बारम्बारता का डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा।

2) जिस वैरियेबल पर आप सामग्री/आंकड़े विश्लेषण करना चाहते हैं उसको बाँये हाथ के बॉक्स से दाँये हाथ के बॉक्स में (जैसा कि आपने पहले frequency analysis के लिये किया था) ले जाइये।

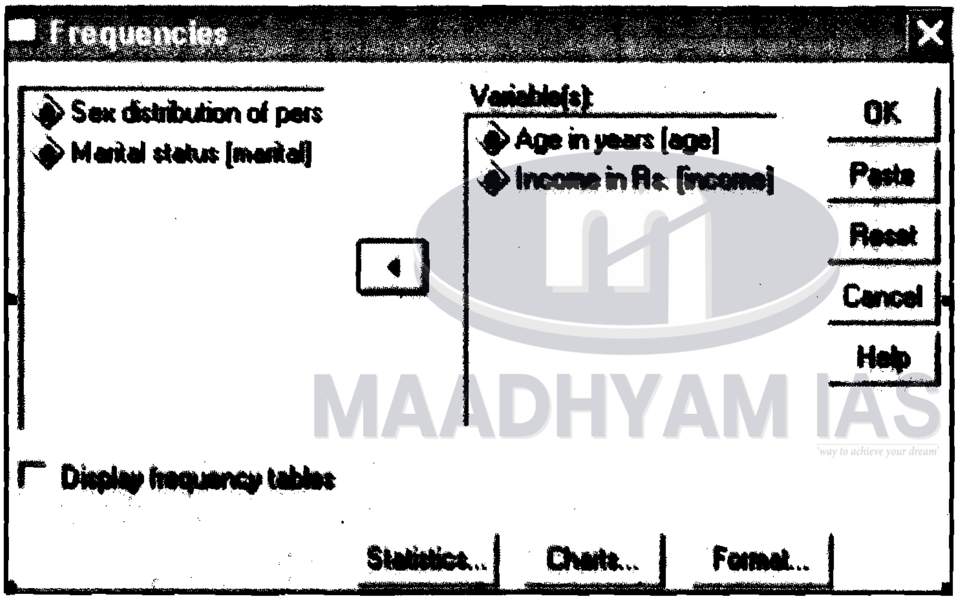

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 30.20: बारम्बारताओं का विश्लेषण

3) यदि आप बारंबारता (frequencies) को प्रदर्शित नहीं करना चाहते हैं तो Display frequency table बटन पर क्लिक करके वहाँ चैक मार्क हटा दीजिये। वहाँ SPSS for windows का डायलॉग बॉक्स आ जायेगा और आपसे उस विन्डो को बन्द करने के लिये पूछेगा। ओके बटन पर क्लिक करके उस विन्डो को बन्द कर दीजिये।

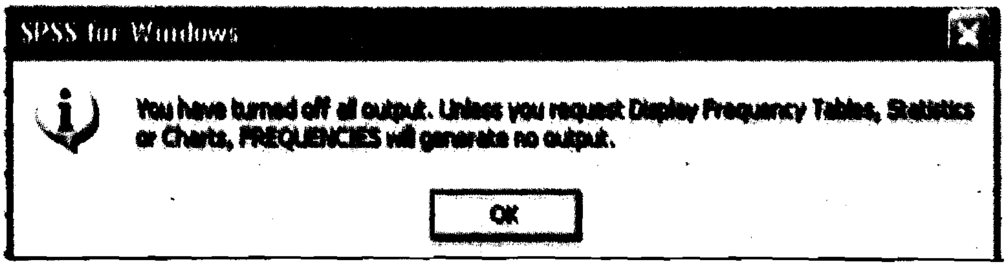

चित्र 30.21: विंडो के लिए एसपीएसएस बंद करना

4) Frequencies के डायलॉग बॉक्स के बटन पर क्लिक कीजिये। Frequencies: Statistics का डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा।

5) Central Tendency के अन्तर्गत आने वाली जगह में मीन, मीडियन और/या मोड की गणना के लिये उपयुक्त बटन पर चैक मार्क लगाइये।

6) परिक्षेपण (Dispersion) के अन्तर्गत आने वाली जगह में Standard deviation, Variance, Range, Standard error या Mean आदि की गणना करने के लिये उपयुक्त बटन पर चैक मार्क लगाइये।

7) परिक्षेपण (Distribution) के अन्तर्गत आने वाली जगह में skweness और/या Kurtosis की गणना करने के लिए उपयुक्त बटन पर चैक मार्क लगाइये।

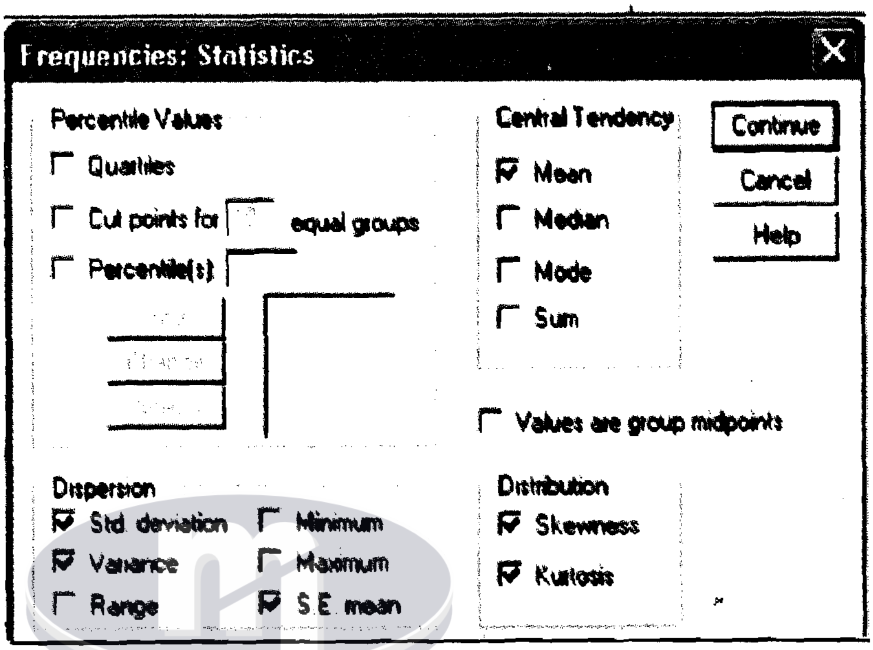

चित्र 30.22: बारम्बारता सांख्यिकी

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

8) **Frequencies: Statistics** के डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये कन्टीन्यू बटन पर क्लिक कीजिये। डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये बटन पर क्लिक कीजिये।

9) **Frequencies** डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये ओके बटन को क्लिक कीजिये। देखिये कि अब आउटपुट वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descriptive Statistics) है।

तालिका 30.6: सांख्यिकीय

		आयु (वर्षों में)	आय (रुपयों में)
एन	वैध	30	0
	मिसिंग	30	0
Mean		40.83	234810.00
Std. Error of Mean		2.891	35206.370
Std. Deviation		15.836	192833.232
Variance		250.764	37184655414
Skewness		.531	1.182
Std. Error of Skewness		.427	.427
Kurtosis		-1.012	1.059
Std. Error of Kurtosis		.833	.833

ध्यान रखिये कि आपको केवल उपयुक्त स्टैटिस्टिक्स का ही विकल्प देना है। उदाहरण के लिये लिंग वैरियेबल के लिये मीन की गणना करने का विकल्प देने का कोई अर्थ ही नहीं है क्योंकि लिंग वितरण के मीन जैसी कोई चीज ही नहीं है।

अभ्यास 30.2

आपने अभी Univariate के विश्लेषण के विषय में पढ़ा है जिसमें आपने Frequency tables और univariate statistics पर काम किया। इस जानकारी के संदर्भ में निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये–

1) SPSS के menu bar पर frequency data analysis करने के लिए क्या कमांड है?

2) एक बार सामग्री/आंकड़ें को कोड करने और उसको SPSS Data Editor में एन्टर करने के बाद क्या सामग्री/आंकड़ें को फिर से कोड करना संभव है? यदि हाँ तो फिर से कोड करने के लिये क्या कमांड है?

3) आपने किसी वैरियेबल के लिये measurement level को ordinal परिभाषित किया है। क्या SPSS का प्रयोग करके उस वैरियेबल के लिये केन्द्रीय प्रवृत्ति (Central Tendencys) के सभी measures की गणना करना संभव है। जिस केन्द्रीय प्रवृत्ति की आप गणना कर सकते हैं उसका नाम बताइये।

30.5 द्विचर विश्लेषण (Bivariate Analysis)

कई बार आप सामग्री/आंकड़े के दो समुच्चयों या चरों का आपस में संबंध जानने के लिये उनकी तुलना करने में रुचि रख सकते हैं। इस भाग में, आप सीखेंगे कि सामग्री/आंकड़े का पारस्परिक सारणीकरण (cross tabulate), सह संबंधों का गुणांक (coefficient of correlation), रैखिक समाश्रयण linear regression तथा गुणांकित (coefficient) कैसे करें जिससे कि दो चरों की तुलना की जा सके।

आकड़ों का पारस्परिक सारणीकरण (Cross Tebulation of Data)

निर्धारित सामग्री/आंकड़े के साथ measure किये गये दो वैरियेबलों के बीच संभव किसी प्रकार के संबंध को जानने के लिये आप द्विचर तालिका का प्रयोग कर सकते हैं जिसे cross tabulation के नाम से भी जाना जाता है। दो परस्पर सारणीकृत चरों (cross tabulate) चरों को करने के लिए नीचे दिये अनुसार कार्य कीजिये–

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

1) menu bar से Analyse Descriptive Statistics Crosstabs ... की कमांड सलैक्ट कीजिये। स्क्रीन पर Crosstabs का डायलॉग बॉक्स आ जायेगा।

2) स्रोत लिस्ट (बायें हाथ के बॉक्स) में से चर पर, जो कि सारणी की पंक्तियां बन जायेंगी, क्लिक कीजिये। इस चर को arrow key का प्रयोग करते हुये Row(s) के नीचे वाले बॉक्स में ले जाइये।

3) इसी प्रकार सारणी (Table) का स्तम्भ (Colum) बनाने वाले चर को स्रोत सूची से कॉलम के नीचे वाले बॉक्स में ले जाइये।

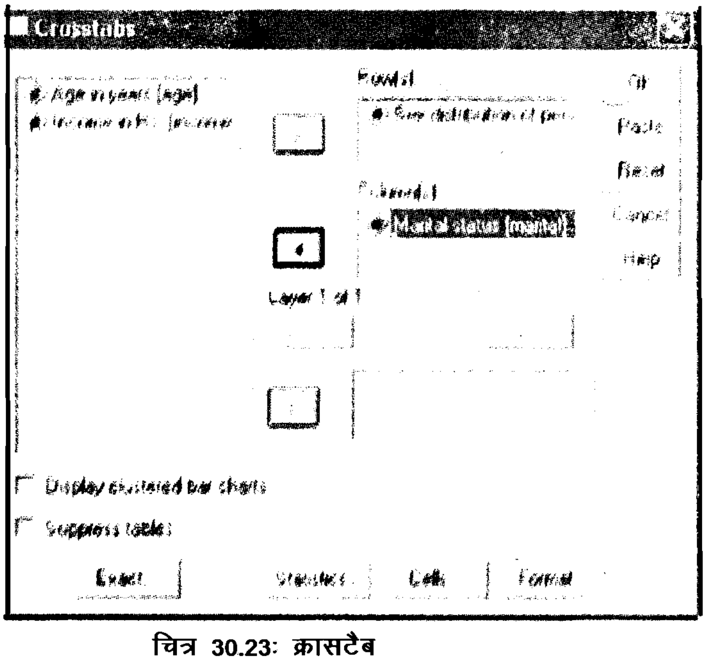

चित्र 30.23: क्रासटैब

4) ओके बटन क्लिक कीजिये आपको सारणी Output viewer window में ही मिल जायेगी।

तालिका 30.7: केस प्रोसेसिंग सारांश

	मामले					
	वैध		मिसिंग		कुल	
	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत
व्यक्तियों का सैक्स/ ◎ वैवाहिक स्थिति	30	100.0%	0	.0%	30	100.0%

काउन्ट

तालिका 30.8: व्यक्तियों की वैवाहिक स्थिति क्रॉस टेबुलेशन का सैक्स/वितरण

		वैवाहिक स्थिति			
		वैवाहिक	अवैवाहिक	विधवा/विधुर	कुल
व्यक्तियों सैक्स/वितरण	पुरुष	6	6	2	14
	महिला	7	4	5	16
	कुल	13	10	7	30

कभी आप किसी सारणी में पंक्ति/स्तम्भ/कुल प्रतिशत की गणना करने में रुचि ले सकते हैं। इसके लिये ऊपर Step-4 के पहले के Crosstabs के डायलॉग बॉक्स में Cells के tab पर क्लिक कीजिये। स्क्रीन पर Crosstabs; Cell display डायलॉग बॉक्स आ जायेगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

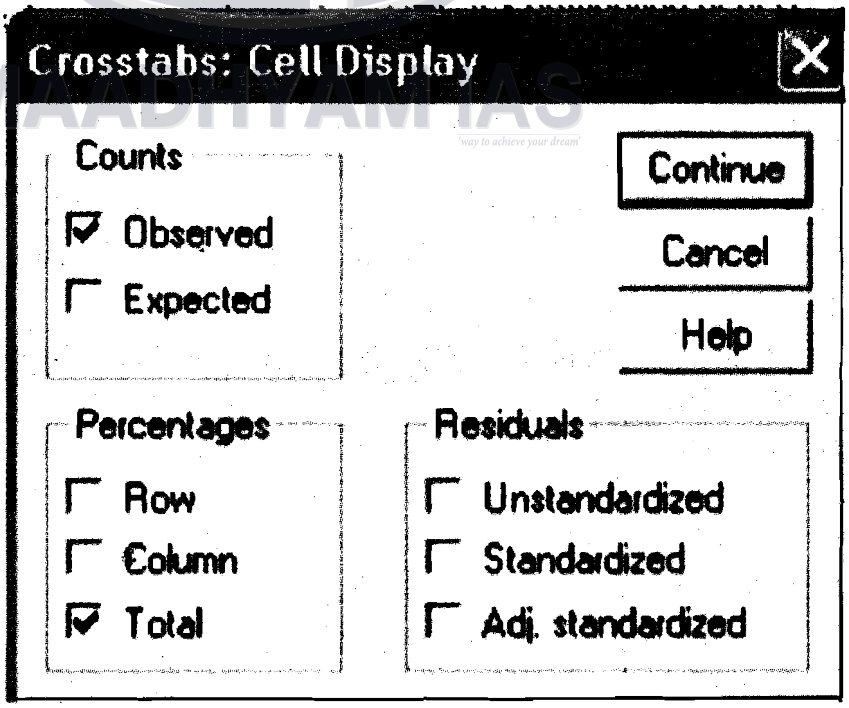

चित्र 30.24: क्रासटैब: सैल डिस्प्ले

उपयुक्त (लाइन, कॉलम और/या टोटल) बटन Percentages की जगह में चैक मार्क कीजिये। Crosstabs: Cell Display डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये Continue बटन को क्लिक कीजिये। Output देखने के लिये Crosstabs के डायलॉग बॉक्स के ओके बटन को क्लिक कीजिये। (देखें तालिका 30.9 और तालिका 30.10)

Crosstab

तालिका 30.9: केस प्रोसेसिंग सारांश: आउटपुट

	मामले					
	वैध		मिसिंग		कुल	
	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत
व्यक्तियों* का सैक्स/ वैवाहिक स्थिति	30	100.0%	0	.0%	30	100.0%

तालिका 30.10: व्यक्तियों की वैवाहिक स्थिति क्रॉस टेबुलेशन का सैक्स/वितरण आउटपुट

			वैवाहिक स्थिति			
			वैवाहिक	अवैवाहिक	विधवा/विधुर	कुल
व्यक्तियों का सैक्स/वितरण	पुरुष	कुल का	6	6	2	14
		प्रतिशत	20.0%	20.0%	6.7%	46.7%
	महिला	कुल का	7	4	5	16
		प्रतिशत	23.3%	13.3%	16.7%	53.3%
		कुल का	13	10	7	30
		प्रतिशत	43.3%	33.3%	23.3%	100.0%

द्विचर सांख्यिकी (Bivariate Statistics)

कई बार आपके द्वारा दो चरों की तुलना के लिये प्रयोग में लाया जाने वाला टूल प्रसरण गुणांक (Coefficient of variance), सहसंबंध (correlation) और रैखिक समाग्रयण (linear regression) हो सकता है।

सहसंबंधों का गुणांक (Coefficient of variance)

MAADHYAM IAS

जैसा कि आप जानते हैं सहसंबंधों का गुणांक (Coefficent of variance) (CV) मीन के प्रतिशत के रूप में दिखाया गया standard deviation है।

सीवी = 'स्टैंडर्ड डेवियेशन'/'मीन'× 100(CV=Standard deviation/mean × 100)

दुर्भाग्यवश SPSS में सामग्री/आंकड़ें फाइल के किसी चर के लिये coefficient of variance पूरा करने की कोई कमांड नहीं है। हमारा आपको यह परामर्श है कि आप पहले बताये अनुसार वर्णनात्मक डायलॉग बॉक्स का प्रयोग करके चर के क्रमश: मीन और स्टैंडर्ड डैवियेशन की गणना कीजिये और उसके बाद हाथ से ही CV की गणना कर लीजिये जो कि बहुत आसान है।

सहसंबंध गुणांक (Correlation Coefficient)

दो प्रकार के Correlation coefficients प्रयोग में लाये जाते हैं– Pearson' का Correlation coefficient और Spearman का rank correlation coefficients. जब हमारे पास interval/ratio सामग्री/आंकड़े होता है तो Pearson का Correlation coefficient उपयुक्त रहता है और प्रयोग में लाया जाता है। जब आपके पास दो ordinal scales के साथ बहुत सारी values होती हैं अथवा एक ordinal और दूसरा interval/ratio स्केल होता है तो Spearman का rank correlation coefficient लागू किया जाता है।

अपने सामग्री/आंकड़े सैट के लिये उपयुक्त Correlation coefficient का की गणना करने के लिये नीचे दिये गये निर्देशों का पालन कीजिये

1) **Analyze→ Correlate→ Bivariate** कमांड को menu bar में से सलैक्ट कीजिये। स्क्रीन पर Bivariate Correlations का डायलॉग बॉक्स आ जायेगा।

2) उल्टे हाथ वाले बॉक्स से चरों को सलैक्ट करके Variables के नीचे वाली जगह में ले जाइये।

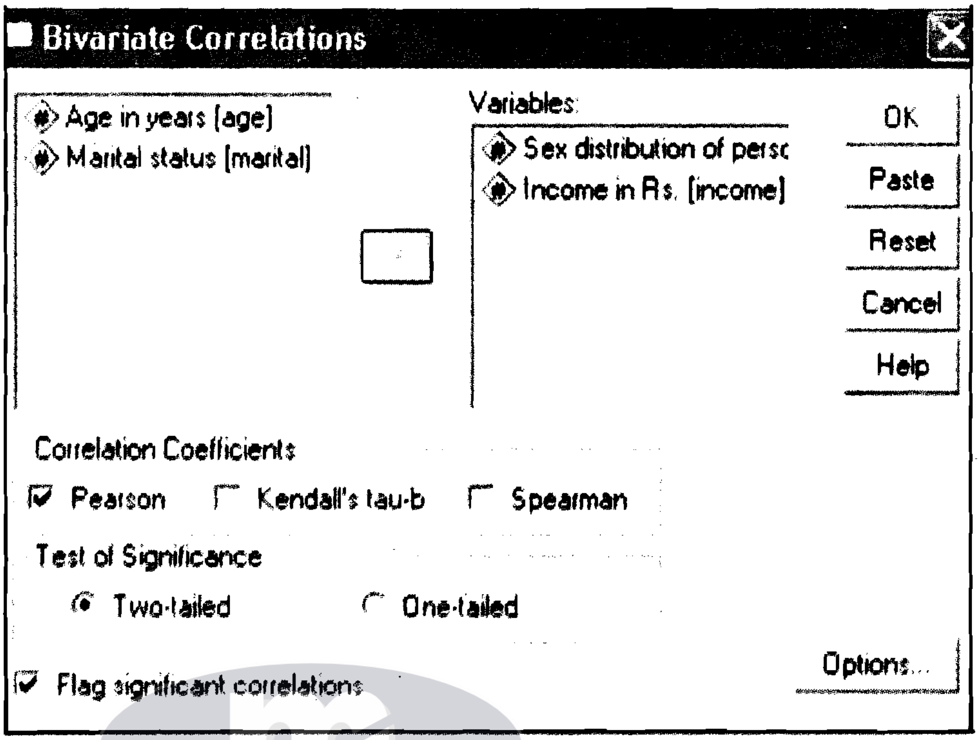

चित्र 30.25: द्विचर सहसंबंध

MAADHYAM IAS

3) उपयुक्त (Pearson and/or Spearman) बटन को Correlatkon Coefficient की जगह में अपेक्षित correlation coefficent का प्रकार चुनने के लिये चैकमार्क कीजिये।

4) यदि आप संबंधित महत्व के परीक्षण करना चाहते हैं तो Test of significance की जगह के अन्तर्गत उपयुक्त (two tailed or one tailed) बटन को चैकंमार्क कीजिये। परिणाम आपको Outpur Viewer Window में दिखाई देंगे।

Correlations

तालिका 30.11: दो चरों के बीच सहसंबंध

		व्यक्तियों का सैक्स/वितरण	आय (रुपयों में)
व्यक्तियों का सैक्स/वितरण	व्यक्ति सहसंबंध	1	–.136
	Sig (2-tailed)	.	.472
	N	30	30
आय (रुपयों में)	व्यक्ति सहसंबंध	–.136	1
	Sig (2-tailed)	.472	.
	N	30	30

रेखीय समाश्रयण (Linear Regression): रेखीय समाश्रयण Linear Regression तकनीक का प्रयोग (अ) दो चरों के बीच के संबंधों के अनुमान की जाँच के लिये, (ब) संबंध की विशेष प्रवृत्ति का पता लगाने के लिये तथा स) स्वतंत्र चर की values का पता होने पर आश्रित चरों की values का अनुमान लगाने के लिये Linear Regression प्रक्रिया के लिये नीचे दिये अनुसार कार्य कीजिये:

1) Menu bar में से Analyse →Regression → Linear कमांड चुनिये। Linear Regression डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर दिखाई देगा।

2) बाँये हाथ के बॉक्स में dependent variable के चर नाम पर क्लिक कीजिये। Dependent Variable को arrow tab का प्रयोग करते हुये dependent की जगह के नीचे वाले बॉक्स में ले जाइये।

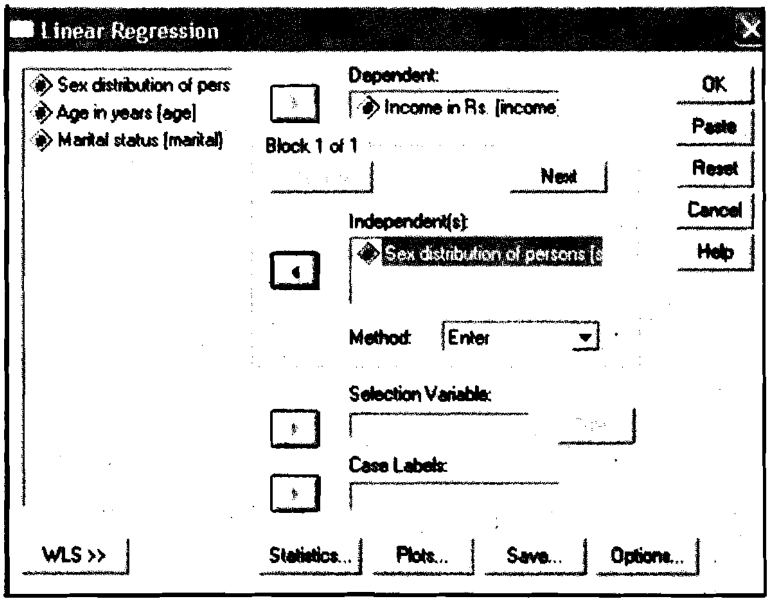

चित्र 30.26: रेखीय समाश्रयण

3) उल्टे हाथ वाले बॉक्स में स्वतन्त्र चर के चर नाम पर क्लिक कीजिये। arrow tab की सहायता से स्वतन्त्र चर को Independent(s) की जगह के नीचे वाले बॉक्स में ले जाइये।

4) ओके का बटन क्लिक कीजिये। परिणाम आपको Output viewer window में दिखाई देंगे।

आप देखेंगे कि Output में 4 चीजें शामिल हैं; (1) regression में इस्तेमाल चर की तालिका; (2) माडल समीक्षा; (3) ANOVA तालिका; (4) coefficients की तालिका। Output को चुनने की प्रक्रिया के बारे में हम अगली इकाई, जो रिपोर्ट लिखने के लिए SPSS के इस्तेमाल के बारे में है, में पढ़ेंगे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

समाप्रयण (Regression)

तालिका 30.12: प्रविष्ट/हटाए गए चर

मॉडल	प्रविष्ट	हटाए गए चर	विधि
1	व्यक्तियों का सैक्स/वितरण		एंटर

क) अनुरोध किए गए सभी चर

ख) आश्रित चर आय (रुपयों में)

तालिका 30.13: मॉडल सारांश

मॉडल	आर	आर वर्ग	समायोजित आर वर्ग	आकलन की मानक त्रुटि
1	.136	.019	−0.16	19413.110

क) प्रेडिक्टर्स: (कॉस्टेंट), व्यक्तियों का सैक्स वितरण

तालिका 30.14: ANOVA[B]

	मॉडल	वर्गों का योग	df	माध्य वर्ग	F	Sig.
1	Regration	2.01E+10	1	2.005E+10	0.531	.472a
	Residual	1.06E+12	28	3.780E+10		
	Total	1.08E+12	29			

तालिका 30.15: गुणांक[a]

मॉडल	अमानवीकृत गुणांक		मानकीकृत गुणांक		
	B	Std. Eror	Beta	t	Sig.
1 सामश्रयण	314275.0	114722.6	-.136	2.739	.011
अवशिष्ट	-51825.0	71147.913		-.728	.472

30.6 बहुचर विश्लेषण[©] (Multivariate Analysis)

संभव है कई बार आप दो से अधिक चरों के बीच होने वाले जटिल संबंधों के विषय में और अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहते हों। इस भाग में आप सीखेंगे कि किस तरह दो से अधिक चरों के बीच के संबंध का विश्लेषण करने के लिये अपने सामग्री/आंकड़ें को cross tabulate करें। इसी प्रकार किस प्रकार बहुविध समाश्रयण विश्लेषण (multiple regression analysis) की जाये इसकी भी जानकारी यहाँ दी गई है।

पारस्परिक सारणी (Cross tables) के विषय में और अधिक जानकारी

पहले भाग में आपने दो चरों की cross table के विषय में जानकारी प्राप्त की। आप दोनों में से किसी एक चर में एक उपसमूह बना कर इसमें एक तीसरा चर और जोड़ सकते हैं। यह नियंत्रण चर के रूप में एक चर जोड़ कर किया जा सकता है। एक नियंत्रण चर सामग्री/आंकड़े को नियंत्रण चर की श्रेणियों के आधार पर उप समूहों में विभाजित कर देता है। अपने cross tabulation में एक नियंत्रण चर जोड़ने के लिये नीचे दिये अनुसार काम कीजिये

MAADHYAM IAS

1) Menu bar में से Analyse→Descriptive Statistics→ Crosstabs कमांड सलैक्ट कीजिये। स्क्रीन पर डायलॉग बॉक्स आ जायेगा।

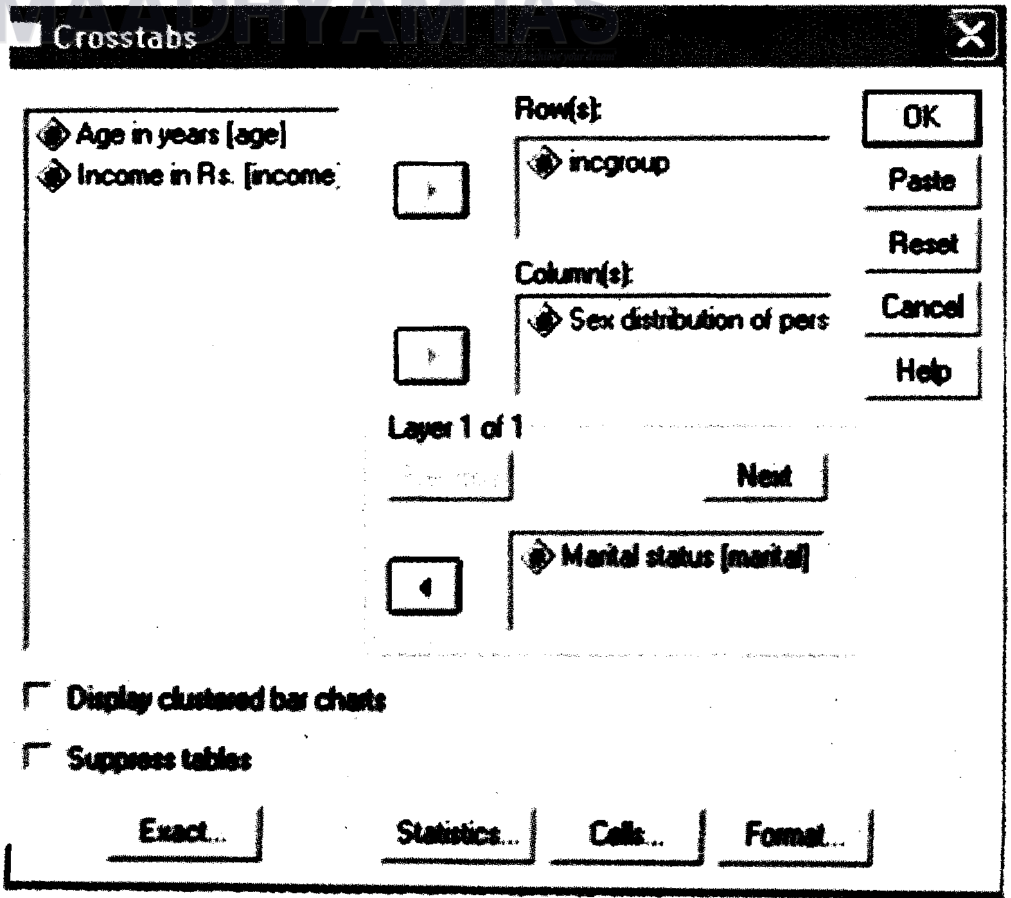

चित्र 30.27: क्रॉस टैब पंक्ति/कालम/प्रतिशत की कम्प्यूटिंग के लिए सैल डिस्प्ले

2) स्रोत सूची में से, जो कि टेबिल की लाइनें बनायेगी, चर पर क्लिक कीजिये। इस चर को arrow बटन का प्रयोग करते हुए Row(s) के नीचे दिये गये बॉक्स में ले जाइये।

3) इसी प्रकार स्रोत सूची में से टेबिल का कॉलम बनाने वाले चर को arrow बटन की सहायता से Column(s) हटा कर के नीचे दिये गये बॉक्स में ले जाइये।

4) नियंत्रण चर 1 (यह चर तीसरे कदम पर चुने गये चर को उप समूहों में विभक्त कर देगा) के रूप में काम करने वाले चर को क्लिक कीजिये। नियंत्रण वैरियेबल को arrow बटन का प्रयोग करते हुए Layer 1 of 1 के नीचे दिये गये बॉक्स में ले जाइये।

5) टेबिल में लाइन/कॉलम/कुल प्रतिशतों की गणना के लिये Cells... वाले tab पर क्लिक कीजिये। Crosstabs: Cell Display डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर दिखाई देगा। Percentages की जगह पर उपयुक्त बटन (लाइन, कॉलम, और/या कुल) पर क्लिक कीजिये। Crosstabs: Cell Display डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये Continue बटन को क्लिक कीजिये (चित्र 30.27 देखिए)।

6) Crosstabs डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये ओके का बटन क्लिक कीजिये।

Crosstabs **तालिका 30.16: केस प्रोसेसिंग सारांश**

	मामले					
	वैध		मिसिंग		कुल	
	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत
आयु ग्रुप *व्यक्तियों का सैक्स/वितरण *वैवाहिक स्थिति	30	100.0%	0	.0%	30	100.0%

तालिका 30.17 को देखिए तो आय समूह और व्यक्तियों के वैवाहिक प्रस्थिति के लिंग वितरण को दर्शाता है। इसमें आप विवाहित, अविवाहित तथा विधवा/विधुर व्यक्तियों के आय समूहों के आधार पर लिंग वितरण के Crosstabulation को पाएंगे। इस उदाहरण व इसी तरह के अन्य उदाहरणों का प्रयोग आप अपने शोध में भी कर सकते हैं।

तालिका 30.17: आय वर्ग और व्यक्तियों की वैवाहिक स्थिति क्रॉसटेब्यूलेशन का सैक्स वितरण

वैवाहिक स्थिति				व्यक्तियों का सैक्स वितरण		
				पुरुष	महिला	कुल
विवाहित	आयु ग्रुप	50000 रुपए से कम	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 7.7%	2 15.4%	3 23.1%
		100001-200000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	0 .0%	3 23.1%	3 23.1%
		200001-400000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	3 23.1%	1 7.7%	4 30.8%
		400001रुपए से अधिक	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	2 15.4%	1 7.7%	3 23.1%
	कुल		कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 46.2%	2 53.8%	3 100.0%

अविवाहित	आयु ग्रुप	50000 रुपए से कम	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	0 .0%	1 10.0%	1 10.0%
		500001-100000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 10.0%	1 10.0%	2 20.0%
		100001-200000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	3 30.0%	1 10.0%	4 40.0%
		200001-400000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 10.0%	1 10.0%	2 20.0%
		400000रुपए से अधिक	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 10.0%	0 .0	1 10.0%
कुल			कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 60.0%	0 .0%	1 10.0%
विधवा/ विधुर	आयु ग्रुप	50000 रुपए से कम	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	0 .0%	2 28.6%	2 28.6%
		100001-200000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 14.3%	0 .0%	1 14.3%
		200001-400000 रुपए	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	1 14.3%	2 28.6%	3 14.3%
		400000रुपए से अधिक	कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	0 .0%	1 14.3%	1 42.9%
कुल			कुल अंकों के प्रतिशत का हिसाब	2 28.6%	5 71.4%	7 100.3%

MAADHYAM IAS

बहुविध समाश्रयण (Multiple Regression)

दो चरों के रेखीय समाश्रयण (Linear Regression) में आपने एक स्वतन्त्र चर और एक आश्रित चर का प्रयोग किया। बहुविध (Multivariate Regression) का प्रयोग एक अकेले आश्रित चर पर दो या उससे अधिक स्वतंत्र चरों के बीच संबंध का पता लगाने के लिये किया जाता है। बहुचर समाश्रयण के लिये सांख्यिकी की गणना करने की प्रक्रिया वहीं है जो कि दो चरों के रेखीय समाश्रयण (Linear Regression) की गणना के लिये बताई गई थी। इसमें अन्तर केवल इतना है कि यहाँ आपके पास रेखीय समाश्रयण (Linear Regression) डायलॉग बॉक्स में Independent(s) के नीचे की जगह में एक चर के स्थान पर अधिक चर हैं।

1) Mene bar में से Analyze→Regression-Linear कमांड सलैक्ट कीजिये। स्क्रीन पर Linear Regression डायलॉग बॉक्स आ जायेगा।

2) बाँये हाथ के बाक्स में से आश्रित चर के नाम पर क्लिक कीजिये। arrow बटन का प्रयोग करते हुये इसे Dependent की जगह के नीचे वाले बॉक्स में ले जाइये।

3) बाँये हाथ वाले बॉक्स में से स्वतन्त्र रहने वाले चर के नाम पर क्लिक कीजिये। इस चर को Independent की जगह के नीचे वाले बॉक्स में ले जाइये। जब तक सभी वांछित स्वतन्त्र चर चुन न लिये जायें यही प्रक्रिया अपनाते जाइये।

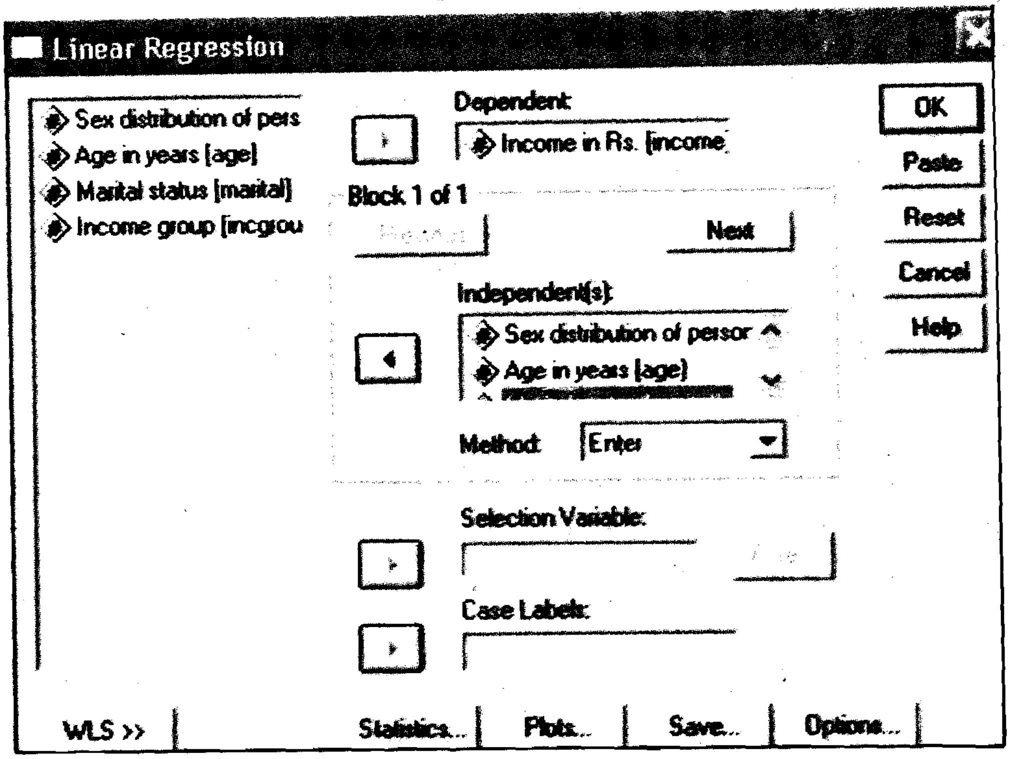

चित्र 30.28: रेखीय समाश्रयण संवाद बाक्स

4) ओके बटन क्लिक कीजिये। Output Viewer Window में परिणाम दिखाई देंगे।

Regression

तालिका 30.18: प्रविष्ट/हटाए गए चर

समाश्रयण	प्रविष्ट चर	हटाए गए चर	विधि
1	वैवाहिक स्थिति, व्यक्तियों का सैक्स/वितरण, आयु वर्षों में		एंटर

क) अनुरोध किए गए सभी चर

ख) आश्रित चर आय (रुपयों में)

तालिका 30.19: मॉडल सरांश

मॉडल	आर	आर वर्ग	समायोजित आर वर्ग	आकलन की मानक त्रुटि
1	.168	.028	–0.84	200774.054

क) प्रेडिक्टर्स: (कॉस्टेंट), वैवाहिक स्थिति, व्यक्तियों का सैक्स वितरण, आयु वर्षों में

तालिका 30.20: ANOVA[b]

	मॉडल	वर्गों का योग	df	माध्य वर्ग	F	Sig.
1	Regration	3.03E+10	3	1.010E+10	0.250	0860[a]
	Residual	1.05E+12	26	4.031E+10		
	Total	1.08E+12	29			

क) प्रेडिक्टर्स: (कॉस्टेंट), वैवाहिक स्थिति, व्यक्तियों का सैक्स वितरण, आयु वर्षों में

ख) आश्रित चर: आय रुपयों में

MAADHYAM IAS

तालिका 30.21: गुणांक[a]

मॉडल	अमानवीकृत गुणांक		मानकीकृत गुणांक		
	B	Std. Eror	Beta	t	Sig.
1 (कंस्टेंट)	362849.3	153394.2		2.365	0.26
व्यक्तियों का सैक्स वितरण	-44008.8	75727.227	-.116	-.581	.566
आयु वर्षों में	-680.236	2431.316	-.056	-.280	.782
विवाहित स्थिति	-18212.7	46773.389	-.076	-.389	.700

क) आश्रित चर: आय रुपयों में

30.7 अर्थों के परिक्षण (Tests of Significance)

इस भाग में आप 'मीन' के लिये one sample t-Test* और 'मीनों' की समानता के लिये two sample t-Test और independence के लिए Chi-square Test सीखेंगे–

एक प्रतिदर्श टी टैस्ट (One Sample t-Test)

One samle t-test sample के मीन की तुलना जनसंख्या के 'मीन' से, t के वितरण की तुलना का मानक मानकर करता है।

1) menu bar से Analyse →Compare Means → One Sample T Test... कमांड को सलैक्ट कीजिये। One Sample T Test डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा।

2) बाँये हाथ के बॉक्स में से उस चर के नाम पर क्लिक कीजिये जिस पर आप t-Test करना चाहते हैं। इस चर को Test variable (s) की जगह के नीचे के बॉक्स में ले जाइये।

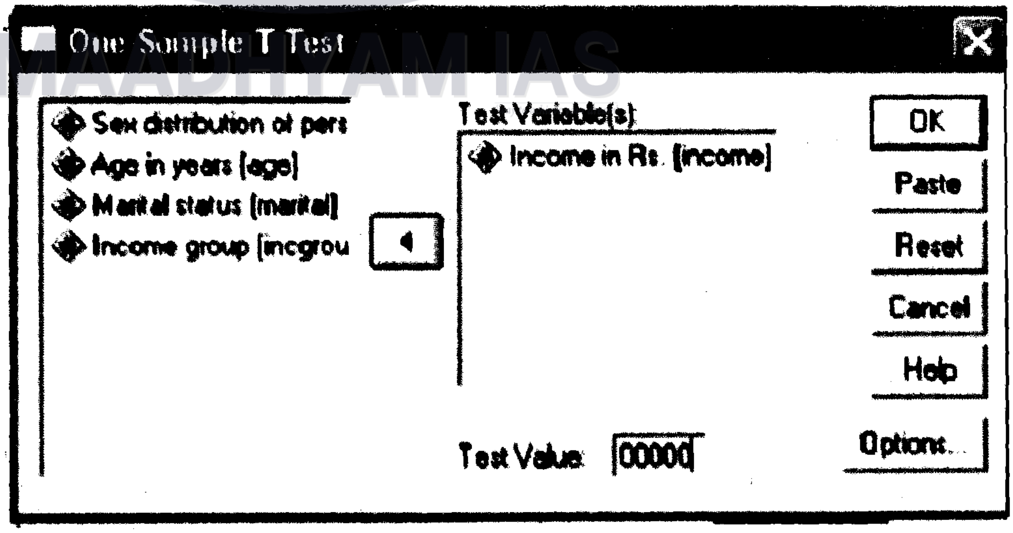

MAADHYAM IAS

चित्र 30.29: एक प्रतिदर्श परीक्षण

3) मान लीजिये आपने आय चर को t- Test के लिए चुना है और यह मानकर चल रहे हैं कि जनसंख्या की मीन आय 200000 रु. है। Test Value के बराबर वाले टैस्ट बॉक्स में 200000 टाइप कीजिये।

4) ओके बटन क्लि कीजिये। Output Viewer Window में आप निम्नलिखित आउटपुट देखेंगे

टी टैस्ट

तालिका 30.22: एक प्रतिदर्श सांख्यिकी

	एन	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि माध्य
आय रुपयों में	30	234810.00	192833.232	35206.370

तालिका 30.23: परीक्षण मूल्य के साथ एक प्रतिदर्श परीक्षण

	परीक्षण मूल्य = 200000					
					95% विश्वस्यता अंतराल अंतर	
	t	df	sign (2-tailed)	माध्य अंतर	लोवर	अपर
आय रुपयों में	.989	29	.331	34810.00	−37195.11	106815.11

दो प्रतिदर्श टी-टैस्ट (Two Sample T-Test)

कभी-कभी हमारा सामग्री/आंकड़े विश्लेषण जनसंख्या के दो स्पष्टतः अलग-अलग समूहों पर ध्यान देता है या हो सकता है हम दो जनसंख्याओं की उनके संबंधित मीन के रूप में तुलना करना चाहें। Two Sample t- test के लिए किया गया । इसमें आपकी सहायता करेगा।

1) Menu bar में से Analyze→ Compare Means→ Indpendent Samples T Test कमांड को सलैक्ट कीजिये। Indpendent Samples T Test का डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा।

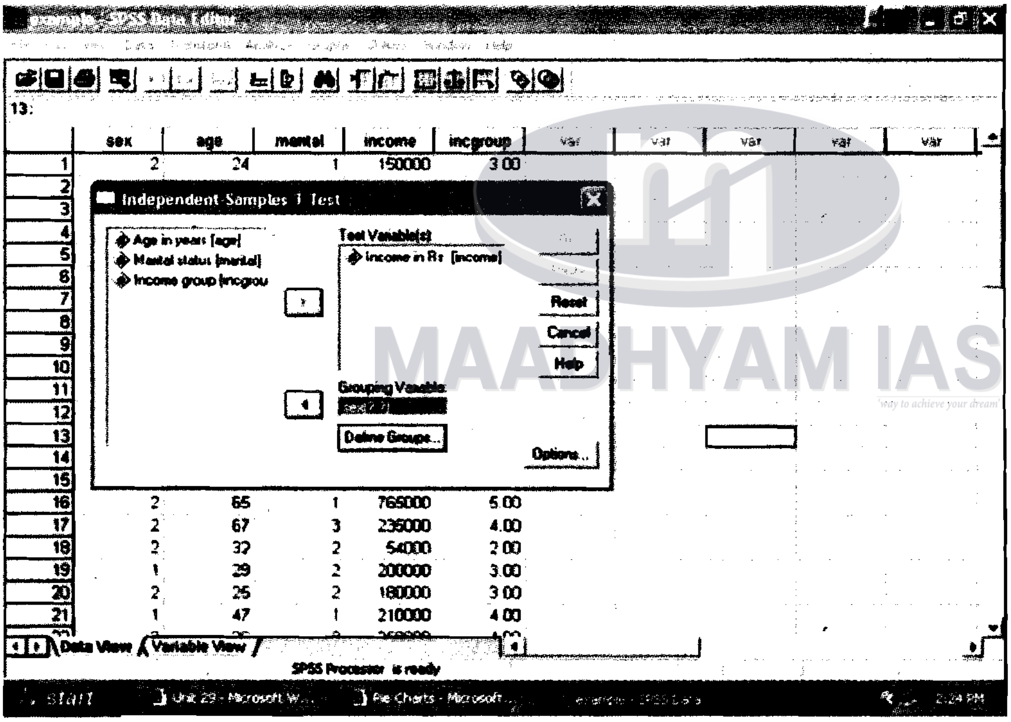

चित्र 30.30: उदाहरण एसपीएसएस आंकड़ा सम्पादक: आय चर

2) बाँई तरफ के बॉक्स में उस चर के नाम पर क्लिक कीजिये जिसको आप t-test के लिये सम्मिलित करना चाहते हैं। मान लीजिये आप आय चर को सम्मिलित करना चाहते हैं तो इस चर को arrow बटन की सहायता से सीधी हाथ की तरफ दी गई Test Variable (s) के नीचे की जगह के बॉक्स में ले जाइये।

3) जिस चर को आप समूहित करना चाहते हैं उस पर क्लिक कीजिये। मान लीजिये आप पुरुष और महिलाओं के बीच के आय के अन्तर की जाँच करना चाहते हैं तो इस चर को बटन का प्रयोग करके Grouping Variable के नीचे आने वाले बॉक्स में ले जाइये।

4) Define Groups बटन पर क्लिक कीजिये। स्क्रीन पर का डायलॉग बॉक्स आ जायेगा। Group I वाले बॉक्स में 1 टाइप कीजिये। Group 2 वाले बॉक्स में 2 टाइप कीजिये और Define Groups डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये कन्टीन्यू बटन पर क्लिक कीजिये।

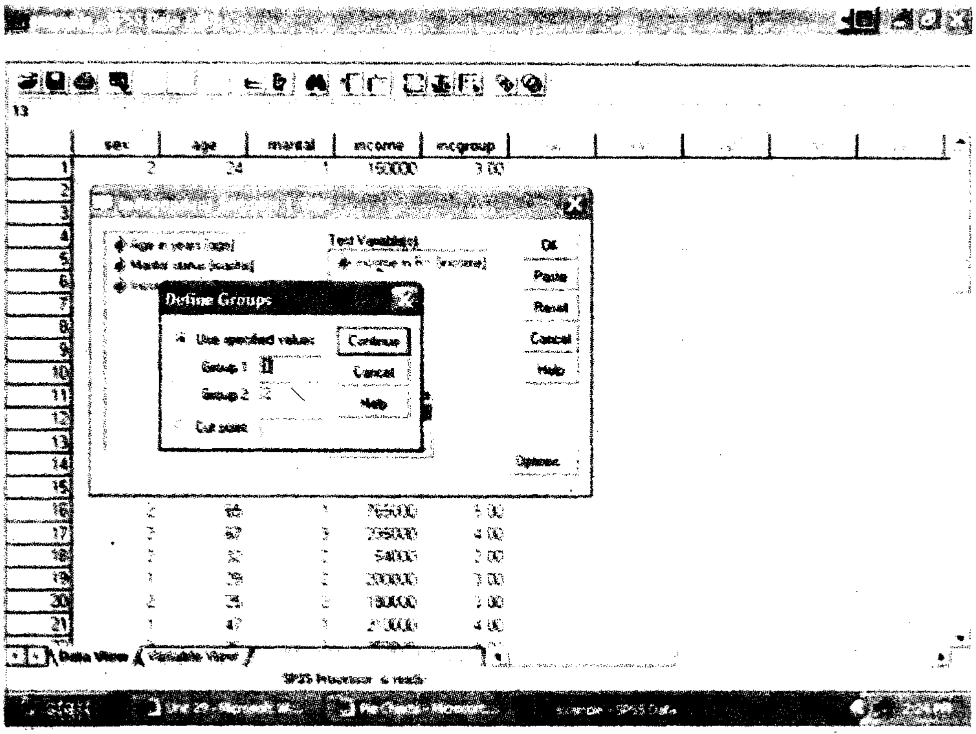

चित्र 30.31: उदाहरण एसपीएसएस आंकड़ा सम्पादकः समूहीकरण चर

5) Independent Samples T-Test का डायलॉग बॉक्स बन्द करने के लिये ओके बटन पर क्लिक कीजिये। नीचे की टेबिल आउटपुट प्रस्तुत करेगी।

MAADHYAM IAS

तालिका 30.24: समूह सांख्यिकी

व्यक्तियों का सैक्स वितरण		एन	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि माध्य
आय रुपए में	पुरुष	14	262450.00	176610.187	47201.058
	महिला	16	210625.00	208616.994	52154.248

तालिका 30.25: स्वतंत्र प्रतिदर्श परीक्षण

		आय रुपए में	
		माने गए समान प्रसरण	न माने गए प्रसरण
लेविनिज टेस्ट फॉर इक्यूलिटी ऑफ वेरिएंसिस	F	.118	
	Sig.	.734	
टी-टेस्ट फॉर इक्यूलिटी ऑफ मीन्स	t	.728	.737
	df	28	27.978
	Sig.(2-tailed)	.472	.467
	माध्य अंतर	51825.00	51825.00
	मानक त्रुटि अंतर	71147.913	70342.061
	95 विश्वस्यता अंतराल निम्न	−93914.893	−2269.306
	अंतर ऊपरी	197564.893	195919.306

स्वतंत्रता के लिये काई स्क्वेयर परीक्षण (Chi-Square Test for Independence) विशेषताओं की स्वतंत्रता की जाँच के लिये उपलब्ध कराया गया। Chi-Square Test Cross Tabulation में व्यवस्थित निर्धारित सामग्री/आंकड़े के लिये है। Chi-Square Test क्रॉस टेबुलेशन प्राप्त करने की प्रक्रिया में ही एक विकल्प के रूप में दिखाई देता है। Chi-Square Test के लिये किये जाने वाले कार्यों का क्रम वही है जो Cross Tabulation के लिये किये जाने हैं। यहाँ पर केवल सैलों में अपेक्षित संख्या देनी होती है और tistics के अन्तर्गत Chi-S uare जोड़ना होता है।

1) Menu bar में से Analyze → Descriptive Statistics → Crosstabs... कमांड दीजिये। Crosstabs का डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा।

2) एक चर Row(s) के व एक चर Column(s) के अन्तर्गत सलैक्ट कीजिये। मान लीजिये आपने आय स्तर (जो कि आय के निम्न या उच्च स्तर सहित एक निश्चित चर है को चर के अन्तर्गत चुना है और लिंग चर को Column(s) के अन्तर्गत चुना है।

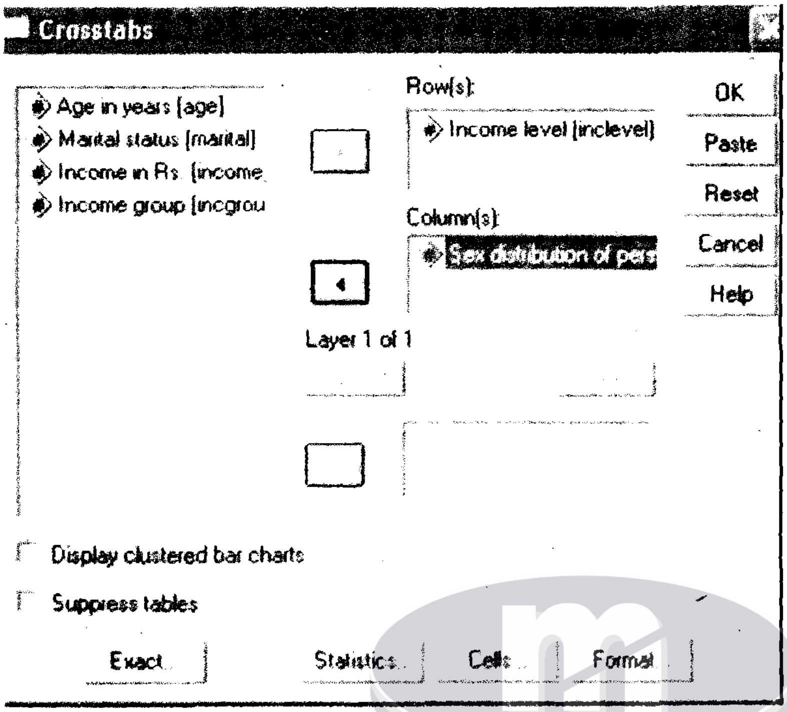

चित्र 30.32: दुतरफा: आय स्तर

MAADHYAM IAS

3) Crosstabs डायलॉग बॉक्स में Statistics के बटन पर क्लिक कीजिये। Crosstabs: Statistics डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा। ChiSquare बटन को चैकमार्क कीजिये। Crosstabs: Statistics डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिए कन्टीन्यू को क्लिक कीजिये।

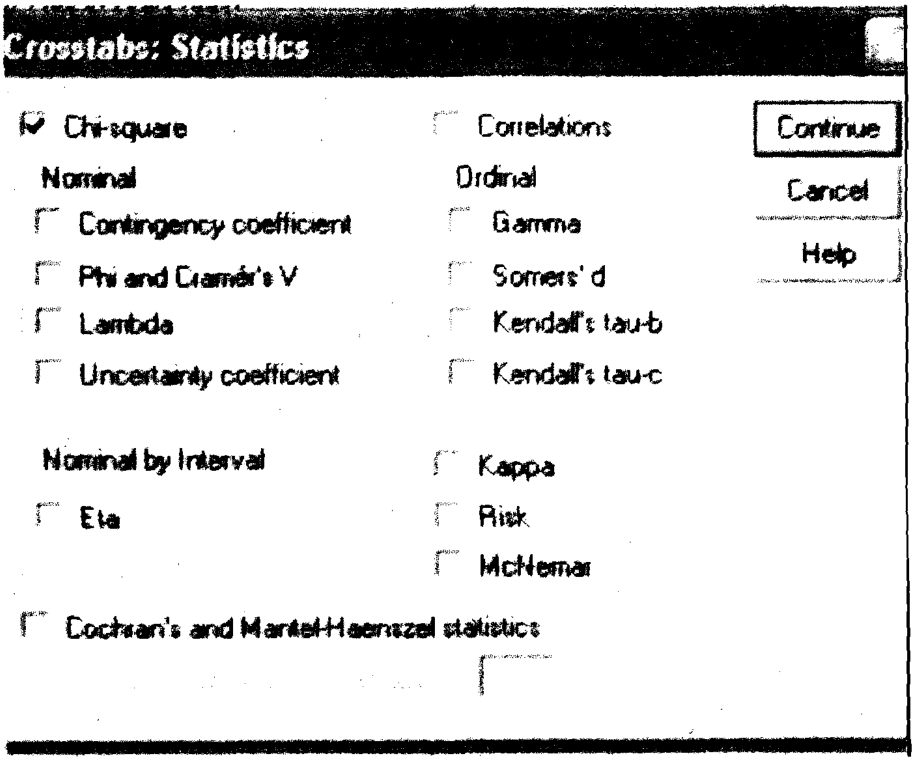

चित्र 30.33: परस्पर सारणी: सांख्यिकी

4) Crosstabs डायलॉग बॉक्स में Cells... के बटन पर क्लिक कीजिये। Crosstabs: Cell Display डायलॉग बॉक्स स्क्रीन पर आ जायेगा। Counts के अन्तर्गत Observed बॉक्स को (यदि वह पहले से ही चैक मार्क नहीं है तो) तथा Expected बॉक्स को चैकमार्क कीजिये। Crosstabs: Cell Display डायलॉग बॉक्स को बन्द करने के लिये कन्टीन्यू बटन पर क्लिक कीजिय।

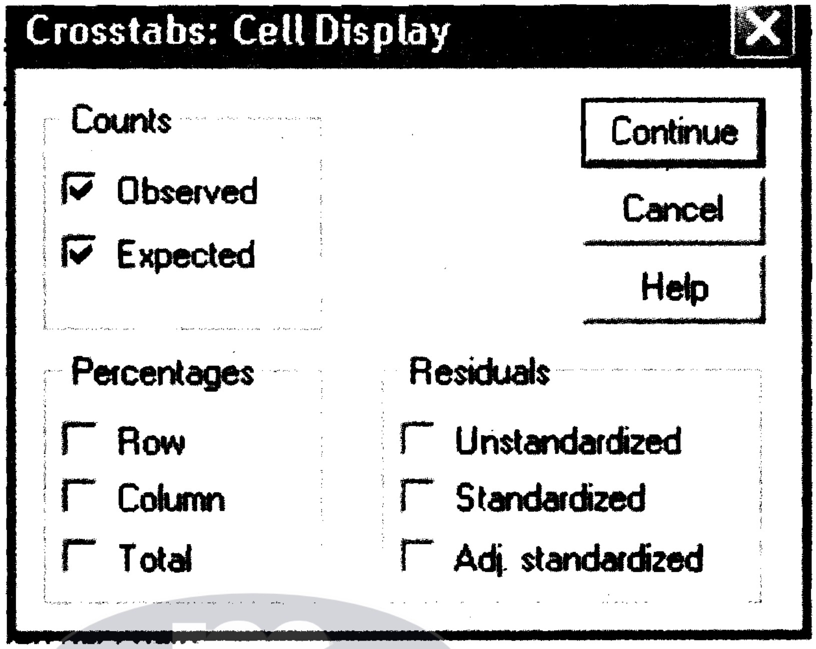

चित्र 30.34: क्रॉसटैब: सैल डिस्प्ले

5) Crosstabs डायलॉग बॉक्स में ओके बटन पर क्लिक कीजिये। प्राप्त आउटपुट नीचे दिखाया जा रहा है।

MAADHYAM IAS

तालिका 30.26: केस प्रोसेसिंग सारांश

	मामले					
	वैध		मिसिंग		कुल	
	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत	एन	प्रतिशत
आय वर्ग *व्यक्तियों का सैक्स वितरण	30	100.0%	0	.0%	30	100.0%

तालिका 30.27: आय स्तर आधारित *व्यक्ति क्रॉसटेब्यूलेशन का सैक्स वितरण

			व्यक्तियों का सैक्स वितरण		
			पुरुष	महिला	कुल
आय स्तर	निम्न	गणना	4	8	12
		प्रत्याशित गणना	5.6	6.4	12.0
	उच्च	गणना	10	8	18
		प्रत्याशित गणना	8.4	9.6	18.0
कुल		गणना	14	16	30
		प्रत्याशित गणना	14.0	16.0	30.0

तालिका 30.28: काई–वर्ग परीक्षण

	Value	df	Asymp. Sig (2-tailed)	Exact Sig. (2-tailed)	Exact Sig. (1-sided)
पर्सन काई स्कवेयर	1.429[b]	1	.232		
कंटीन्यूटी कॉरेकेशंस	.675	1	.411		
लाइकलीहुड रेशो	1.448	1	.229		
फिशर्स एक्सऐक्ट टेस्ट				.284	.206
लिनियर बाई लिनियर एसोसिएशन	1.381	1	.240		
एन ऑफ वेलिड केसिस	3				

क) 2 × 2 तालिका के लिए परिकलित

ख) 0 सेल्स (.0%) 5 से कम काउंट अपेक्षित है। न्यूनतम प्रत्याशित काउंट 5.60 है।

अभ्यास 30.3

आपने जो कुछ अभी-अभी पढ़ना समाप्त किया है उसके आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिये

सामग्री/आंकड़े एडीटर में कौन से विभिन्न विचार उपलब्ध हैं प्रश्नों का उत्तर दीजिये–

- SPSS सामग्री/आंकड़े एडीटर में कौन से विभिन्न विचार उपलब्ध हैं?
- बतायें कि इनमें से प्रत्येक विचार का आप कब प्रयोग करेंगे?

30.8 निष्कर्ष

इस इकाई में आपने SPSS प्रोग्राम का एक सामग्री/आंकड़े की फाइल में सामग्री/आंकड़े प्रविष्ट करने के लिये प्रयोग करना और इस सामग्री/आंकड़े की फाइल का सामग्री/आंकड़े विश्लेषण के लिये प्रयोग करना सीखा है। संभव है आपने सामग्री/आंकड़े आधारित प्रोग्राम, जैसे Excel की सहायता ली हो। इस प्रकार की सामग्री/आंकड़े फाइलों का SPSS सामग्री/आंकड़ें फाइलों में रूपान्तरित करना बहुत आसान है।

यह इकाई SPSS का परिचय प्रदान करता है। आप इससे बहुत सारे सांख्यिकीय विश्लेषण कर सकते हैं। साधारण दुतरफा तालिकाकरण से लेकर अधिक जटिल तकनीकों तक का प्रयोग, शोधकर्ता की आवश्यकतानुसार इस प्रोग्राम द्वारा किया जा सकता है। यद्यपि हमने यहाँ पर कुछ सरल निर्देशों (commands) और सांख्यिकीय यंत्रों (statistical tools), जो कि सामाजिक शोध में अधिक लोकप्रिय हैं, के प्रयोग के विषय में बताया है। हम SPSS की पूरी विशेषताओं की जाँच करना और उनका पता लगाना विद्यार्थी के ही ऊपर छोड़ देते हैं।

30.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Nie, N.H., C.H. Hull, J.G. Jenkins, K. Steinbrenner and D.H. Bent 1979. *Statistical Package for the Social Sciences*. McGraw Hill: New York

MAADHYAM IAS

इकाई 31
रिपोर्ट लेखन में एस.पी.एस.एस. का प्रयोग

इकाई की रूपरेखा

31.1 प्रस्तावना

31.2 एस.पी.एस.एस. का उपयोग क्यों किया जाए?

31.3 आरेख (चार्ट)

31.4 एस.पी.एस.एस. आउटपुट पर काम करना

31.5 एस.पी.एस.एस.आउटपुट को एम.एस. वर्ड डॉक्यूमेंट में कॉपी करना

31.6 निष्कर्ष

31.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह अपेक्षा की जाती है कि इकाई 31 को पढ़ने के बाद आपः

- रिपोर्ट लेखन में अपनी जरूरत के अनुसार एस.पी.एस.एस.सामग्री तालिकाओं को संपादित कर सकेंगे;
- अपने आँकड़ों के विश्लेषण को ग्राफिक रूप में प्रस्तुत करने के लिए आरेख बना सकेंगे और उन्हें संपादित कर सकेंगे; तथा
- एस.पी.एस.एस.संपादित तालिकाओं और आरेखों को अपनी रिपोर्ट में सीधे कॉपी कर सकेंगे।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

31.1 प्रस्तावना

इकाई 29 में आपने एस.पी.एस.एस. के बारे में पढ़ा है और अब इकाई 31 में आप यह पढ़ेंगे कि रिपोर्ट लेखन की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एस.पी.एस.एस. में तैयार की गई तालिकाओं को किस प्रकार संशोधित अथवा संपादित किया जाता है। आरेख बनाने और उन्हें संपादित करने को इस इकाई में इस आधार पर शामिल किया गया है ताकि आपके रिपोर्ट-प्रस्तुतीकरण कौशलों में बढ़ोत्तरी हो सके। इसके अलावा आप यह भी पढ़ेंगे कि संपादित तालिकाओं और आरेखों को एम.एस.वर्ड डॉक्यूमेंट (जहाँ आपकी रिपोर्ट की मुख्य फाइल है) में किस प्रकार कॉपी किया जा सकता है।

31.2 एस.पी.एस.एस. का उपयोग क्यों किया जाए?

एस.पी.एस.एस. में जब आप सांख्यिकीय कार्यविधि शुरू करते हैं तो उसके परिणाम विंडो में देखे जा सकते हैं। इसे 'व्यूअर' (Viewer) कहते हैं। इन सांख्यिकीय परिणामों को अपनी रिपोर्ट में शामिल करते समय आप रिपोर्ट को व्यावसायिक रूप से प्रस्तुत करने की भी सोच सकते हैं ताकि रिपोर्ट में शामिल सामग्री के बारे में जल्दी से और आसानी से पता चल सके। एस.पी.एस.एस. की शक्तिशाली गणना और फॉर्मेट करने की क्षमता से आपको क्रॉस-टेबुलेशन जैसी अपनी उच्च विशेषीकृत रिपोर्टें बनाने के बारे में पता चल सकेगा। फोंट, रंग, शैली, कॉलम का आकार, पंक्ति का आकार (row size) और संरेखन को बदलने के लिए आप आरूपण यंत्रों (formatting tools) का इस्तेमाल कर सकेंगे। स्टाइल शीट में पहले से ही लिपिबद्ध किये हुए आरूपण के इस्तेमाल से प्रत्येक नई रिपोर्ट में दोबारा से आरूपित करने की जरूरत नहीं होती है।

अधिकांशतः आँकड़ों को प्रभावशाली ढंग से आरेखों (चार्ट) में प्रस्तुत किया जाता है।

आरेखों को ग्राफ भी कह दिया जाता है। आरेखों के माध्यम से आँकड़ों की प्रमुख विशेषताएँ साफ तौर पर उभरकर नजर आती हैं। एस.पी.एस.एस. का इस्तेमाल करते हुए आप अपने आँकड़ों के लिए आरेख बना सकते हैं और उन्हें संपादित भी कर सकते हैं।

अपनी रिपोर्ट को टाइप करने के लिए आप सामान्यतः एम.एस.वर्ड में अथवा इसी प्रकार के अन्य शब्द संसाधन कार्यक्रम (वर्ड प्रोसेसिंग प्रोग्राम) का इस्तेमाल कर सकते हैं। अपने विश्लेषण के पक्ष में आप अपनी रिपोर्ट में एस.पी.एस.एस. द्वारा तैयार की गई तालिकाओं और आरेखों को शामिल कर सकते हैं। एम.एस.वर्ड के कॉपी और पेस्ट का इस्तेमाल करते हुए एस.पी.एस.एस. द्वारा तैयार की गई तालिकाओं और आरेखों को एस.पी.एस.एस. आउटपुट विंडो से कॉपी कर सकते हैं और नई तालिकाएँ एवं आरेख बनाए बिना उन्हें वर्ड विंडो में डाल सकते हैं।

31.3 आरेख (Charts)

आरेख, आँकड़ों का आरेखीय (graphical) प्रस्तुतीकरण है। आरेख बनाने से पहले आप निम्नलिखित को ध्यान में अवश्य रखें :

क) **शीर्षक** (टाइटल) आरेख की पहचान है। इसलिए आरेख को समुचित शीर्षक दीजिए।

ख) **एक्स श्रेणी अक्ष** (Category X axis) उन आँकड़ों को दर्शाता है जिन्हें क्षैतिज एक्स-अक्ष में डाला जाता है। एक्स अक्ष श्रेणी में तिथि, व्यक्ति, स्थान, समूह आदि जैसी श्रेणियाँ आती हैं। इसलिए चर की श्रेणियों को स्पष्ट रूप से निर्धारित कीजिए और उन्हें समुचित श्रेणी अक्ष शीर्षक दीजिए।

ग) **वाई श्रेणी अक्ष** (Category Y axis) उन आँकड़ों को दर्शाता है जिन्हें लंबवत वाई-अक्ष में डाला जाता है। वाई-अक्ष श्रेणी में संख्याएँ, मुद्रा का मूल्य, प्रतिशत आदि जैसी श्रेणियाँ आती हैं। इसलिए मूल्य को स्पष्ट रूप से निर्धारित कीजिए और उन्हें उपयुक्त मूल्य शीर्षक दीजिए।

MAADHYAM IAS

घ) **लेख** (Legends) आरेखित सूचना को दर्शाते हैं। लीजेंड इस सूचना को पहचानने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि कौन सी सूचना किस वर्ग से संबंधित है।

कुछ विशिष्ट प्रकार की सूचना को प्रस्तुत करने के लिए अनेक प्रकार के आरेख वृत्ताकार आरेख (pie-charts), दंड आरेख (bar diagram), आयातचित्र (histogram) आदि उपलब्ध हैं। इसलिए आप जिस सूचना को अभिव्यक्त करना चाहते हैं उसके लिए सही प्रकार के आरेख को चुनिए।

एस.पी.एस.एस. में उपलब्ध कई आरेख सामान्यतः दो विभिन्न फॉर्मेटों में आते हैं — (क) मानक आरेख (Standard chart); और (ख) अंतर्क्रियात्मक आरेख (Interactive chart)। मानक आरेखों को मुख्य ग्राफ मेन्यू बार से अथवा सांख्यिकीय प्रक्रियाओं से बनाया जा सकता है। अंतर्क्रियात्मक आरेखों को ग्राफ मेन्यू बार के अन्तर्क्रियात्मक (Interactive) सब-मेन्यू से और आरेखों को प्रधान तालिकाओं (pivot tables) से बनाया जा सकता है। किंतु, इस इकाई में हम केवल मानक आरेख बनाने और संपादित पर ही चर्चा करेंगे।

वृत्ताकार आरेख आँकड़ों के माप नामिक (nominal), वर्गीय (ordinal), मध्यवर्ती (interval), अथवा अनुपात (ratio)) के किसी भी स्तर का इस्तेमाल करते हुए बनाया जा सकता है। नामिक, वर्गीय, मध्यवर्ती अथवा अनुपात (पृथक चरों/discrete variables) का इस्तेमाल करते हुए दंड आरेख (bar-chart) बनाया जा सकता है। मध्यवर्ती/अनुपात (विच्छिन्न चरों) आँकड़ों का इस्तेमाल करते हुए आयातचित्र बनाए जा सकते हैं। बहुभज (Polygon) आरेख मध्यवर्ती / अनुपात आंकड़ों का प्रयोग करके बनाया जा सकता है।

मानक आरेख (Standard Chart) बनाना

इस इकाई में हम सरल वृत्ताकार आरेख (simple pie chart) और उसके बाद दंड आरेख (bar chart) बनाने पर ही विचार करेंगे।

वृत्ताकार आरेख : इसे माप के सभी स्तरों के लिए बनाया जा सकता है।

वृत्ताकार आरेख बनाने के लिए, निम्नलिखित निर्देशों का पालन कीजिए :

1) **डाटा एडिटर** विंडो में मेन्यू बार से **ग्राफ्स→पाई**..... कमांड का चयन कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर नजर आने वाले पाई चार्ट्स डायलॉग बॉक्स में आपसे यह पूछा जाएगा कि चर (variable) अथवा अलग-अलग चरों (variables) में केसों को परिभाषित कीजिए :

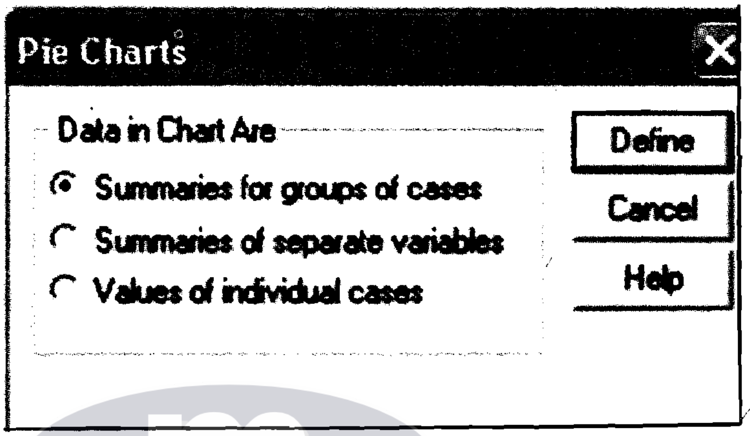

चित्र 31.1: पाई चार्ट डायलाग बॉक्स

क) यदि आप उसी चर (variable) में उपलब्ध समूहों की प्रत्येक श्रेणी के मामलों में सारांश (संख्या, प्रतिशत आदि) चाहते हैं तो आपको **Summaries for groups of cases** बटन को दबाना होगा। उदाहरण के लिए, वृत्ताकार आरेख में प्रत्यर्थियों की संख्या का लिंग के अनुसार वर्गीकरण (sex variable : number of males and female respondents) दर्शाना हैं।

ख) यदि आप वृत्ताकार आरेख में विभिन्न चरों के सारांश (कुल संख्या, प्रतिशत, औसत, गणना आदि) चाहते हैं तो आपको **Summaries of separate variables** बटन को दबाना होगा।

ग) यदि आप प्रत्येक केस की वृत्ताकार आरेख के रूप में केवल मूल्य आँकना चाहते हैं तो आपको **Values of Individual Cases** बटन दबाना होगा। उदाहरण के लिए, आपने संभवतः केस-1 के रूप में पुरुष प्रत्यर्थियों की संख्या '25' और 'लिंग' चर में केस-2 के सामने महिला प्रत्यर्थियों की संख्या '30' लिखी हो।

ऊपर दिए गए अपने उदाहरण में हमने **Summaries for groups of cases** बटन को चुना है क्योंकि लिंग उप-समूह (पुरुष और महिला) लिंग चर में हैं।

2) पाई चार्ट्स डायलॉग बॉक्स में समुचित बटन को चयनित करने के बाद डायलॉग बॉक्स को बंद करने के लिए आपको **Define** बटन को दबाना होगा। ऐसा करने पर स्क्रीन पर डायलॉग बॉक्स पर **Define Pie: Summary for Groups of Cases** लिखा हुआ नजर आएगा। वृत्ताकार आरेख का प्रत्येक अंश केस की संख्या को दर्शाता है। यदि पहले से नहीं मार्क किया गया है तो N of cases को मार्क करना होगा। यदि आप केसों की संख्या के स्थान पर केसों के प्रतिशत के बारे में जानना चाहते हैं तो % of cases बटन को दबाना होगा। आप जिस चर/चरों में वृत्ताकार आरेख चाहते हैं

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

तो **Define Series by** बॉक्स के भीतर वैरिएबल बॉक्स को दाएँ से बदला जा सकता है। इसके लिए तीर के निशान वाली कुँजी (Arrow key) का इस्तेमाल करना होगा।

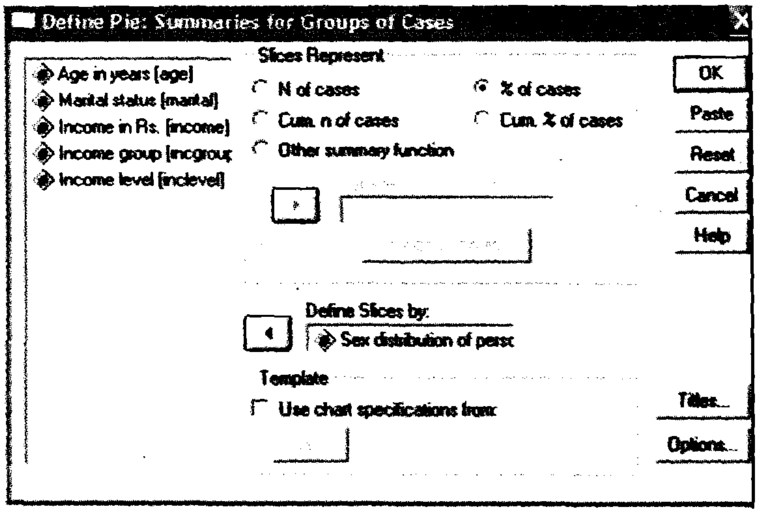

चित्र 31.2: पाई की परिभाषा: अध्ययनों के समूह के लिए संक्षेपीकरण

कृपया यह याद रखिए कि जब आरेख सृजित (create) कर लिए जाते हैं, वे missing cases श्रेणी को डिफॉल्ट के रूप में नहीं दर्शाता है। आँकड़ा विश्लेषण के लिए एस.पी.एस.एस. के उपयोग से संबंधित इकाई 30 में आप इस बारे में पहले ही पढ़ चुके हैं। यदि आप इस श्रेणी मार्क को डिस्पले करना चाहते हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि missing values वाले केस बहुत अधिक न हों। missing values दर्शाने और उन्हें परिभाषित करने के लिए **Options** बटन को दबाइए। ऐसा करने पर ऑप्शन्स डायलॉग बॉक्स नजर आएगा। उसमें **Display groups defined by missing values** बटन को देखिए और उसके बाद **Continue** बटन को क्लिक कीजिए। वृत्ताकार आरेख सृजित करने के लिए डायलॉग बॉक्स में Define Pie..... में OK बटन को क्लिक कीजिए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अभ्यास 31.1

मानक आरेख सृजित करने के बारे में निम्नलिखित सामग्री को ध्यान से पढ़िए और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

भारत में लिंग-वितरण के बारे वृत्ताकार आरेख बनाने के संदर्भ में अपना उत्तर लिखिए।

1) एस.पी.एस.एस. में आरेख बनाते समय किन महत्वपूर्ण बिंदुओं को ध्यान में रखना आवश्यक होगा?

2) ऊपर बताए गए विषय पर वृत्ताकार आरेख बनाने के विभिन्न चरणों की चर्चा कीजिए।

ग्राफ : चित्र 31.3 देखिए जो भारत में लिंग वितरण दर्शाने के लिए एक संपूर्ण वृत्ताकार आरेख (pie-chart) का उदाहरण है।

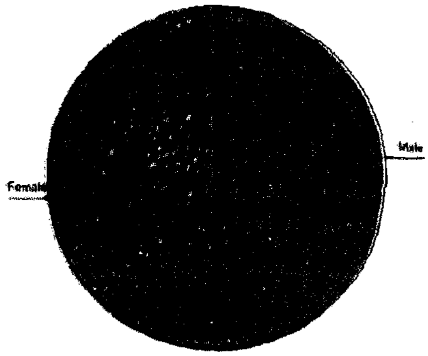

चित्र 31.3: भारत में लिंग वितरण पर एक सम्पूर्ण वृत्ताकार आरेख का उदाहरण

दंड आरेख (Bar charts): दंड आरेख बनाने के लिए डाटा एडिटर विंडो की मेन्यू बार से 'Graphs Bar...... ' कमांड को चयन कीजिए। ऐसा करने पर कंप्यूटर स्क्रीन पर बार आरेख डायलॉग बॉक्स नजर आएगा। इस डायलॉग बॉक्स में आपको तीन विकल्प नजर आएँगे : (क) Simple Bar Chart, (ख) Clustered bar charts; और (ग) Stacked bar chart। इनमें से आपको जिस विकल्प को चुनना हो, उसे चुनिए। जैसा कि आपने वृत्ताकार आरेख में किया था, उसी प्रकार बार आरेख डायलॉग बॉक्स में Data in Chart Are में 'Summary for groups of cases' अथवा 'Summary of separate variables' अथवा 'Values of individual cases' में से किसी एक को क्लिक कीजिए।

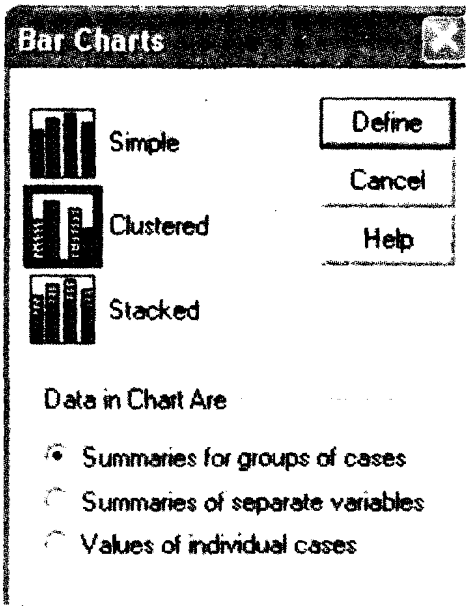

चित्र 31.4: बार चार्ट

हमने जो उदाहरण लिया है, उसके अनुसार हम 'Summaries for groups of cases' को चुनेंगे क्योंकि लिंग चर में 'पुरुष' और 'महिला' लिंग उप-समूह है।

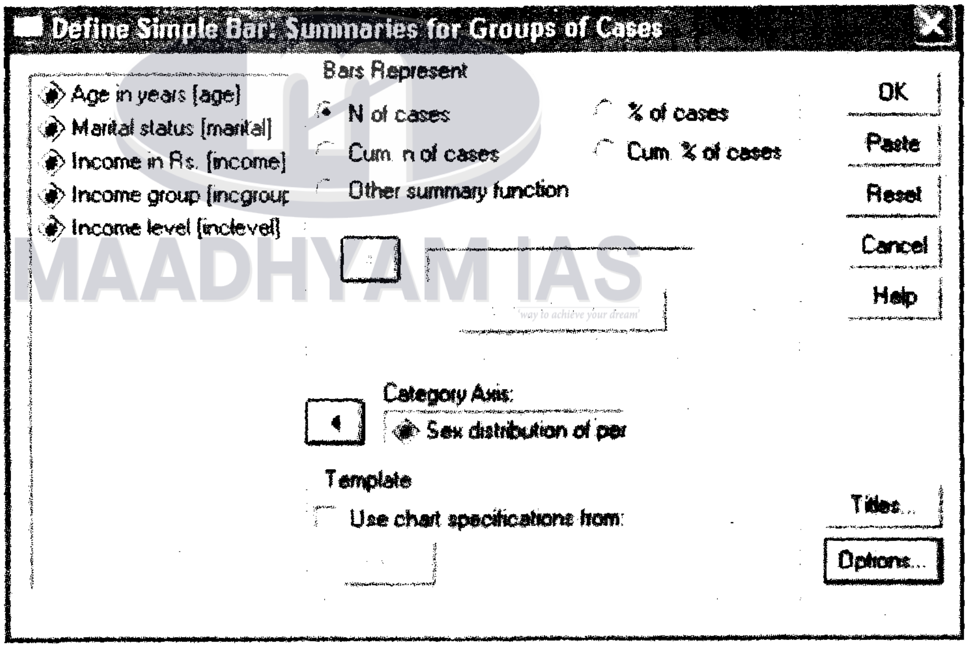

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 31.5: सिम्पल बार की परिभाषा: अध्ययनों के समूह के लिए संक्षेपीकरण

दंड आरेख डायलॉग बॉक्स को बंद करने के लिए 'Define' बटन को क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर डायलॉग बाक्स 'Define Simple Bar: Summary for Groups of Cases' नजर आएगा। यह 'Define Pie' डायलॉग बॉक्स के समान होगा। तीर के निशान वाली कुँजी (Arrow key) का इस्तेमाल करते हुए लेफ्ट वेरिएबल बॉक्स से 'Category Axis' बॉक्स के अंतर्गत उस चर अथवा उन चरों में ट्रांसफर कीजिए जिसमें आप दंड आरेख चाहते हैं। दंड आरेख का प्रत्येक आयात (rectangle) के लिए डिफाल्ट सेटिंग केसों की संख्या को दर्शाती है। यदि पहले से ही चेक मार्क नहीं किया हुआ है तो मार्क की गई केसों की संख्या ('N of cases') की जाँच कीजिए। यदि केसों की संख्या के स्थान पर प्रतिशतता की आवश्यकता है तो आप '% of cases' बटन को भी देख सकते हैं। आउटपुट व्यूअर विंडो में दंड आरेख बनाने के लिए 'OK' बटन को क्लिक कीजिए।

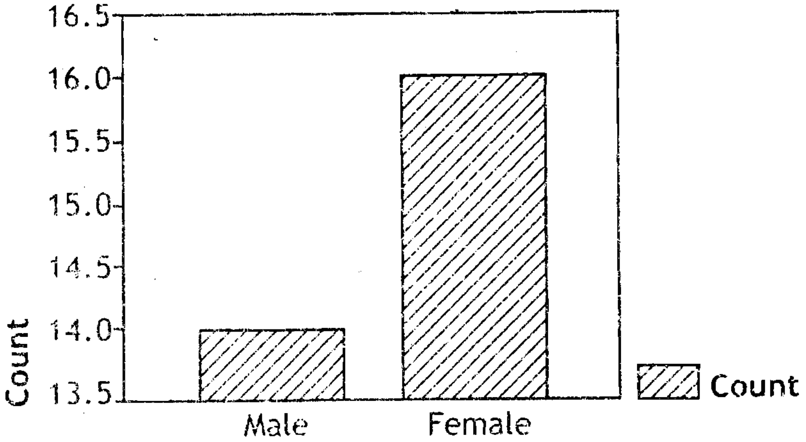

चित्र 31.6: व्यक्तियों के लिंग विषयक वितरण पर पूर्ण-बार चार्ट का उदाहरण

बनाए गए आरेख का संपादन (Editing Chart Output)

ग्राफ बनाने की मूलभूत एस.पी.एस.एस. क्रियाविधि से आरेख के बारे में न्यूनतम जानकारी ही प्राप्त होती है। आपको आरेख की प्रत्येक स्लाइस में शीर्षक, अथवा संख्या, अथवा प्रतिशतता की जानकारी प्राप्त नहीं होगी। वृत्ताकार आरेख बनाते समय आप डायलॉग बाक्स में 'Define Pie…..' को अथवा बार आरेख बनाते समय डायलॉग बॉक्स में 'Define simple bar…..' को 'Titles' बटन को क्लिक करके ग्राफ का शीर्षक (Title) बनाया होगा। किंतु एस.पी.एस.एस. में ग्राफ में सुधार करने के अनेक विकल्प उपलब्ध होते हैं। ये सुधार आप एस.पी.एस.एस. चार्ट एडिटर की सहायता से कर सकते हैं।

1) आरेख में कहीं पर भी दो बार क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर मेन्यू बार के साथ 'चार्ट एडिटर' (Chart Editor) डायलॉग बॉक्स नजर आएगा। तब आरेख में सुधार करने के लिए उपलब्ध विकल्पों में से इच्छित विकल्प को चुन सकते हैं अथवा एक प्रकार के आरेख के स्थान पर दूसरे प्रकार के आरेख में बदल सकते हैं।

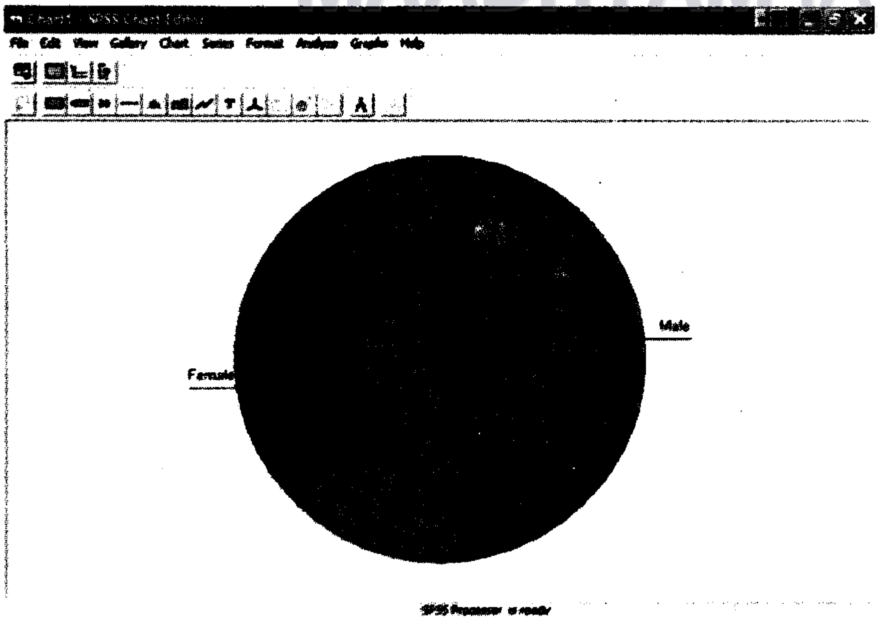

चित्र 31.7: एस.पी.एस.एस.चार्ट एडिटर

2) **अलग प्रकार के आरेख में बदलना :** वृत्ताकार आरेख को दंड आरेख में बदलने के लिए, चार्ट एडिटर में मेन्यू बार से 'Gallery → Bar' कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर 'Bar Charts' डायलॉग बॉक्स नजर आएगा। इसमें आपको तीन विकल्प (Simple, Clustered or Stacked) नजर आएगा। आरेख प्रकार को (simple) दंड आरेख में बदलने के लिए 'Replace' बटन को क्लिक कीजिए।

MAADHYAM IAS

3) **अपने आरेख में शीर्षक जोड़ना:** आरेख में शीर्षक शामिल करने के लिए चार्ट एडिटर में मेन्यू बार से 'Chart → Title' कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर टाइटल्स डायलॉग बॉक्स नजर आएगा। Title 1 और/अथवा Title 2 बॉक्स में आरेख के शीर्षक को टाइप कीजिए। इसके बाद डायलॉग बॉक्स को बंद करने और शीर्षक को शामिल करने के लिए 'OK' बटन को क्लिक कीजिए।

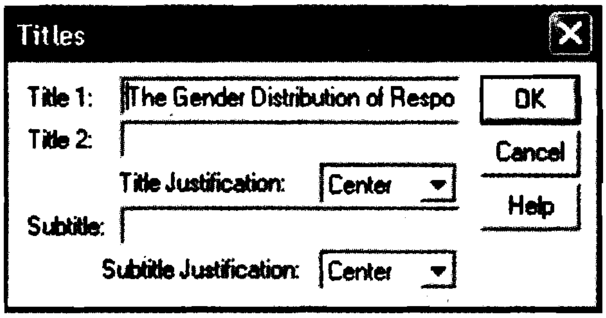

चित्र 31.8: शीर्षक

4) **पादटिप्पणी (फुटनोट जोड़ना):** आरेख में फुटनोट शामिल करने के लिए चार्ट एडिटर में मेन्यू बार से 'Chart Footnote' कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर 'Footnotes' डायलॉग बॉक्स नजर आएगा। आरेख में शामिल किए जाने वाले फुटनोट को Footnote 1 और/अथवा Footnote 2 बॉक्स में टाइप कीजिए। 'फुटनोट जस्टीफिकेशन बॉक्स' विकल्प को चयनित करके आप फुटनोट को एलाइन (बीच में, दाईं ओर, बाईं ओर) भी कर सकते हैं।

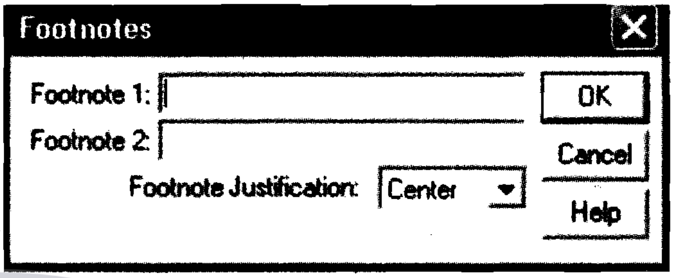

चित्र 31.9: पाद टिप्पणी

MAADHYAM IAS

5) **विकल्प (Options) :** वृत्ताकार आरेख के प्रत्येक हिस्से में शामिल सूचना को बदलने के लिए चार्ट एडिटर में मेन्यू बार से 'Chart Options' कमांड को चयनित कीजिए। जैसा कि हमने आरेख बनाने के बारे में बताते हुए देखा है, वृत्ताकार आरेख का प्रत्येक हिस्सा टेक्स्ट लेबल (पुरुष/महिला आदि) की डिफॉल्ट सेटिंग को दर्शाता है। टेक्स्ट लेबल के साथ प्रत्येक स्लाइस की निरपेक्ष (संख्या) और सापेक्षिक (प्रतिशत) बारंबारता को शामिल करने के लिए 'Values' और 'Percents' बॉक्सों पर ऑप्शन्स डायलॉग बॉक्स को क्लिक कीजिए। 'Format' बटन को क्लिक करके आप शून्य अथवा अन्य अपेक्षित संख्या में अंकों के दशमलव स्थान को भी निर्धारित कर सकते हैं।

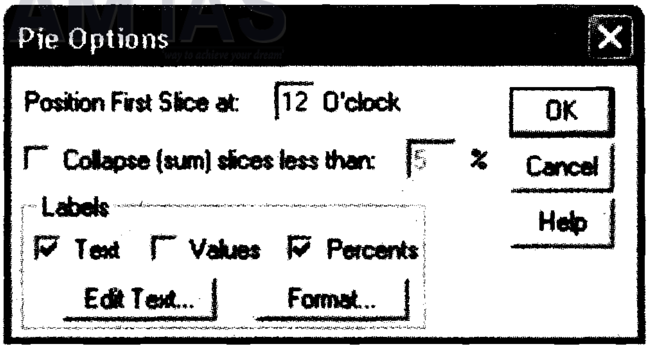

चित्र 31.10: पाई विकल्प

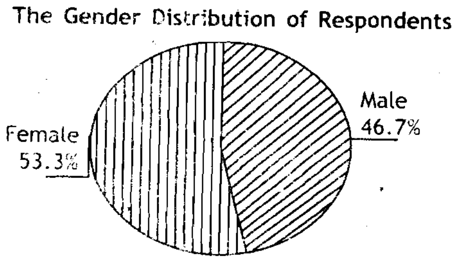

चित्र 31.11: प्रत्यर्थियों का लिंगवार विभाजन का वृत्ताकार आरेख

आप चार्ट एडिटर में विभिन्न निर्देशों/features का इस्तेमाल करते हुए पहले से ही बनाए हुए दंड आरेख को संपादित भी कर सकते हैं। निम्नलिखित संशोधित दंड आरेख को देखिए :

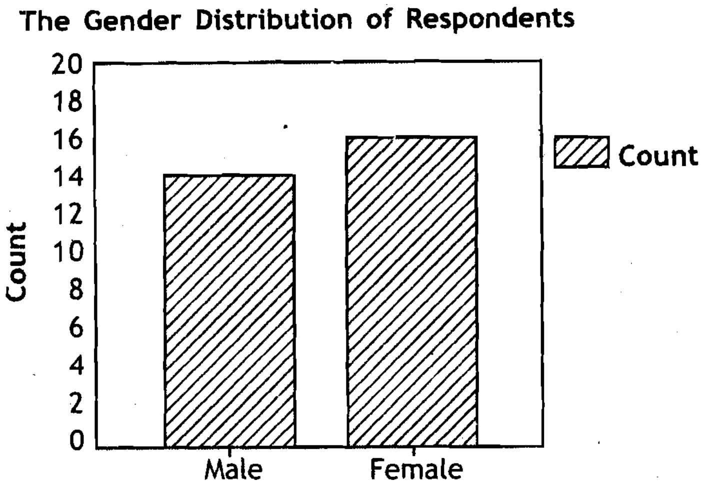

प्रत्यर्थियों का लिंगवार विभाजन

चित्र 31.12: व्यक्तियों का लिंग-विभाजन

> **अभ्यास 31.2**
>
> आरेख को संपादित करते समय आप आरेख के बारे में कोई और सूचना जोड़ सकते हैं अथवा आरेख में शामिल सूचना को निकाल भी सकते हैं। ऐसा करने के लिए कौन से विकल्प (Options) उपलब्ध होते हैं? निम्नलिखित आरेख को अलग प्रकार के आरेख में बदलने, उसमें शीर्षक और फुटनोट शामिल करने के संदर्भ में विकल्पों (Options) की चर्चा कीजिए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

31.4 एस.पी.एस.एस. आउटपुट पर काम करना

सांख्यिकीय और आरेखीय क्रियाविधि को अपनाते हुए तैयार की गई सामग्री एस.पी.एस.एस. व्यूअर विंडो पर नजर आएगी। आपको एक ही सेशन में नई क्रियाविधि को चलाना होगा, तैयार सामग्री को पिछली क्रियाविधि की सामग्री के अंत में शामिल करना होगा।

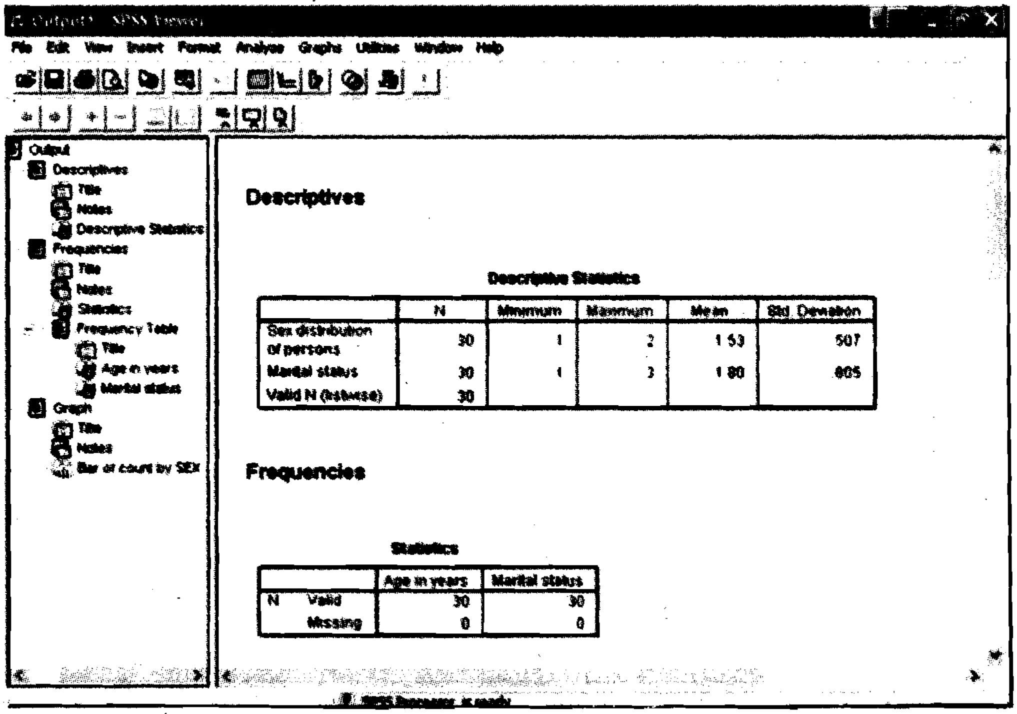

चित्र 31.13: आउटपुट 1: एसपीएसएस व्यूअर

यदि आउटपुट व्यूअर विंडो बंद है और अन्य क्रियाविधि चल रही है तो नई आउटपुट व्यूअर विंडो अपने आप बन जाएगी। व्यूअर विंडो के दो घटक हैं — (क) 'Outline Pane'; और (ख) 'Contents' Pane। इनमें से पहला घटक (Outline Pane) आउटपुट व्यूअर विंडो के बाईं ओर बना होता है और यह मदों (items) की सूची के रूप में आउटलाइन व्यू के रूप आउटपुट को दर्शाता है। दूसरा घटक (Content Pane) आउटपुट व्यूअर विंडो के दाईं ओर बना होता है और यह आउटपुट की वास्तविक मदों (actual contents) (तालिकाएँ, आरेख और मूल पाठ) को दर्शाता है।

आउटलाइन पेन (कंटेंट्स पेन) के बॉर्डर को क्लिक और ड्रेग करके आप आउटलाइन पेन (कंटेंट्स पेन) की चौडाई को बढ़ा सकते हैं। इसी प्रकार, कंटेंट्स पेन के बॉर्डर को क्लिक और ड्रेग करके कंटेन्ट्स पेन की चौडाई को भी बढ़ा सकते हैं। और इस तरह संबंधित व्यूअर पेन में अपेक्षाकृत अधिक स्थान मिल जाता है।

परिणामों को ब्राउस करना (Brousing Results): परिणामों को ब्राउस करने के लिए आप स्क्रॉल बार्स (scroll bars) (क्षैतिज और लंबवत, दोनों) (both vertical and horizontal) का इस्तेमाल कर सकते हैं। यदि आप तालिका/आरेख/पाठ विशेष में जाना चाहते हैं तो आप आउटलाइन पेन में उससे संबंधित मद के शीर्षक (कैप्शन) को क्लिक कीजिए।

आप निम्नलिखित कार्यों के लिए आउटपुट व्यूअर विंडो का इस्तेमाल कर सकते हैं :

- परिणामों के द्वारा ब्राउस
- चयनित की गई तालिकाओं/पाठ/आरेखों को दर्शाने अथवा छिपाने
- चयनित की गई आइटमों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर परिणामों के प्रदर्शन क्रम में परिवर्तन
- सरल पाठ आउटपुट (simple text output) के लिए ड्राफ्ट व्यूअर का इस्तेमाल
- कॉलमों, पंक्तियों और परतों को दोबारा व्यवस्थित करने के लिए प्रधान तालिका (पिवेट टेबल) (Pivot Table) एडिटर का इस्तेमाल
- एम.एस.वर्ड जैसे अन्य अनुप्रयोगों के लिए मदों (items) की कॉपी करना
- चयनित की गई तालिकाओं/पाठ/आरेखों को हटाना (Delete)
- व्यूअर में मद को जोड़ना
- आउपुट को प्रिंट करना।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

एस.पी.एस.एस. से संबंधित पिछली इकाई में आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि आउटपुट को किस प्रकार प्रिंट किया जाता है। इस इकाई के इस भाग में आप यह पढ़ेंगे कि मदों (आइटमों) को एम.एस. वर्ड में किस प्रकार कॉपी किया जाता है।

आउटपुट को छिपाना और दर्शाना (Hiding and Showing Output): व्यूअर में, आप प्रत्येक पाठ/तालिका/आरेख को छिपा भी सकते हैं और दर्शा भी सकते हैं। छिपाई गई मदों (पाठ/तालिका/आरेख) को कंप्यूटर स्क्रीन पर देखा नहीं जा सकता, उसकी नकल नहीं की जा सकती और न ही अन्य सामग्री के साथ उसका प्रिंट ही लिया जा सकता है। तालिका/पाठ/आरेख को छिपाने (हाइड करने) के लिए व्यूअर के आउटलाइन पेन में उसकी ओपन बुक आइकन् को डबल क्लिक कीजिए। ओपन बुक आइकन को क्लोज़्ड बुक आइकन में बदलना आइटम-विशेष की क्रियाविधि के छिपाव को दर्शाता है। क्रियाविधि-विशेष से सभी परिणामों को छिपाने के लिए आउटलाइन पेन में प्रोज़िजर नेम (procedure name) के बाईं ओर के बॉक्स को क्लिक करना होगा। इससे सभी परिणाम (Item) क्रियाविधि से छिप जाएँगे और आउटलाइन व्यू पर कुछ नजर नहीं आएगा।

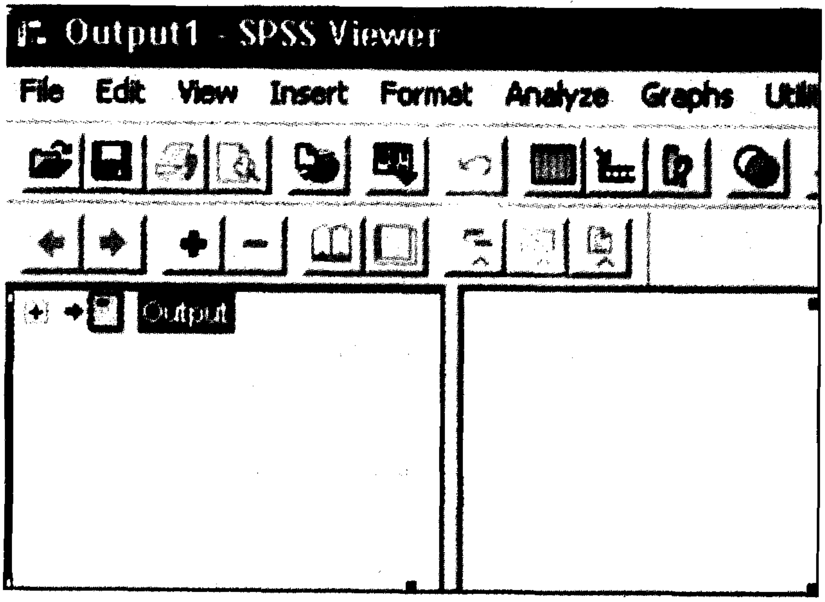

चित्र 31.14: आउटपुट 1: मदों को छुपाता एसपीएसएस व्यूअर

छिपी हुई आइटम/आइटमों को दर्शाने/नजर आने के लिए बुक आइकन पर दो बार क्लिक करना होगा।

आइटमों की प्रदर्शन (Display) क्रम को बदलना : अगर आप चाहें तो उस क्रम को भी बदल सकते हैं, जिस क्रम में आउटपुट डिस्पले है। इसके लिए, आउटलाइन पेन में उस आइटम को क्लिक करना होगा जिसे आप बदलना चाहते हैं। चयनित की गई आइटम को ड्रेग कीजिए (ड्रेग करते समय माउस बटन को दबाए रखना होगा) और फिर माउस को नई जगह पर ले जाकर बटन को छोड़ देना होगा। आप कंटेंट पेन को ड्रेग करते हुए आइटमों को क्लिक और ड्रेग करके बदल भी सकते हैं या फिर Edit → Cut कमांड को चयनित करते हुए ऐसा किया जा सकता है और उसके बाद मेन्यू बार पर Edit → Paste After कमांड को चयनित करना होगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

मदों (Items) को हटाना : मदों को चयनित करने के लिए आउटलाइन पेन अथवा कंटेंट पेन में आइटम-विशेष को क्लिक कीजिए। उसके बाद कुंजी पटल पर Delete कुंजी को दबाइए। ऐसा करने पर आइटम हट जाएगी।

आइटम के संरेखण को बदलना : डिफाल्ट करने की वजह से सभी परिणाम शुरू में बाईं ओर एलाइन होंगे। आप चयनित की गई आइटम की एलाइनमेंट को बदल सकते हैं। इसके लिए आप आउटलाइन पेन अथवा कंटेंट पेन में से किसी में भी आइटम-विशेष को क्लिक कीजिए। बाईं ओर की संरेखण करने के लिए Format → Align Left चयनित कीजिए। इसी प्रकार दाईं ओर की संरेखण करनी है तो Format→ Align Right चयनित कीजिए और यदि संरेखण बीच में करना है तो Format→ Align Centre को चयनित करना होगा।

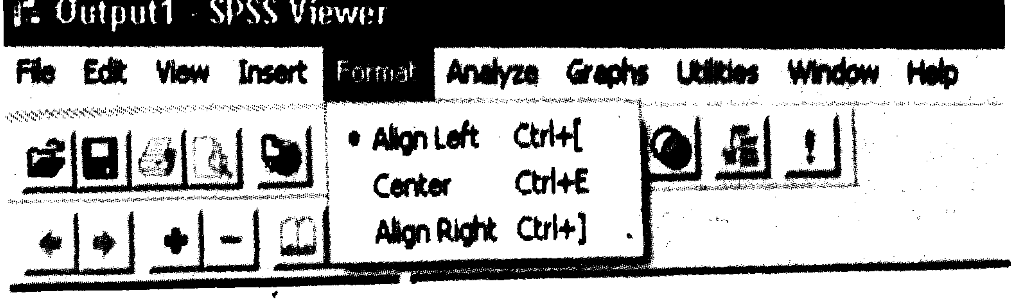

चित्र 31.15: आउटपुट 1: मदों के संरेखण को बदलता एसपीएसएस व्यूअर

आंकड़ों का विश्लेषण और शोध निष्कर्षों का प्रस्तुतीकरण

मदों को जोड़ना (Adding Items) : वर्ड अथवा एक्सैल जैसे अन्य अनुप्रयोगों से आप पाठ, आरेख अथवा अन्य सामग्री आउटपुट व्यूअर में जोड़ भी सकते हैं। तालिका से गैर-संबंधित पाठ अथवा आरेख को व्यूअर में जोड़ा जा सकता है। इसके लिए पाठ, तालिका अथवा आरेख को क्लिक करना होगा जिससे जोड़े जाने वाला शीर्षक अथवा पाठ नजर आएगा। तब मेन्यू बार से Insert New Title कमांड अथवा Insert New Text कमांड को चयनित करना होगा। नई वस्तु को डबल क्लिक कीजिए। इस स्थिति में आप जो पाठ/शीर्षक जोड़ना चाहते हैं, उसे प्रविष्ट कीजिए।

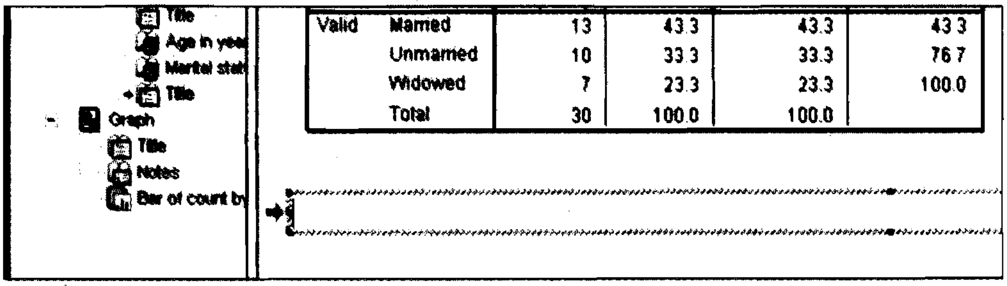

चित्र 31.16: आउटपुट 1: मदों को जोड़कर एसपीएसएस व्यूअर

आउटपुट व्यूअर में टेक्स्ट फाइल को डालने के लिए तालिका, आरेख अथवा पाठ-सामग्री को क्लिक कीजिए। मेन्यू बार से Insert → Text File..... कमांड का चयन कीजिए। जोड़ी जाने पाठ फाइल को चयनित कीजिए। उसके बाद यह देखिए कि क्या टेक्स्ट फाइल जुड़ गई है अथवा नहीं। पाठ को संपादित करने के लिए आइटम को डबल क्लिक कीजिए।

ड्राफ्ट व्यूअर (Draft Viewer)

जब क्रियाविधि को चलाया जाता है तो ड्राफ्ट व्यूअर मसौदा रूप में परिणामों को दर्शाता है। ड्राफ्ट व्यूअर में टेक्स्ट आउटपुट को संपादित किया जा सकता है और आरेखों के आकार में संशोधन-परिवर्धन किया जा सकता है। इसके अलावा, पाठ और आरेखों को एम.एस. वर्ड जैसे अन्य प्रयोगों में कॉपी भी किया जा सकता है। किंतु, आरेखों को संपादित नहीं किया जा सकता और प्रधान तालिकाओं की अंतर्क्रियात्मक विशेषताएँ ड्राफ्ट व्यूअर में उपलब्ध नहीं हैं। इसका यह अभिप्राय है कि यदि आप अंतर्क्रियात्मक प्रधान तालिकाओं के स्थान पर सिम्पल टेक्स्ट आउटपुट में काम करेंगे तो आप ड्राफ्ट व्यूअर का इस्तेमाल कर सकेंगे।

MAADHYAM IAS

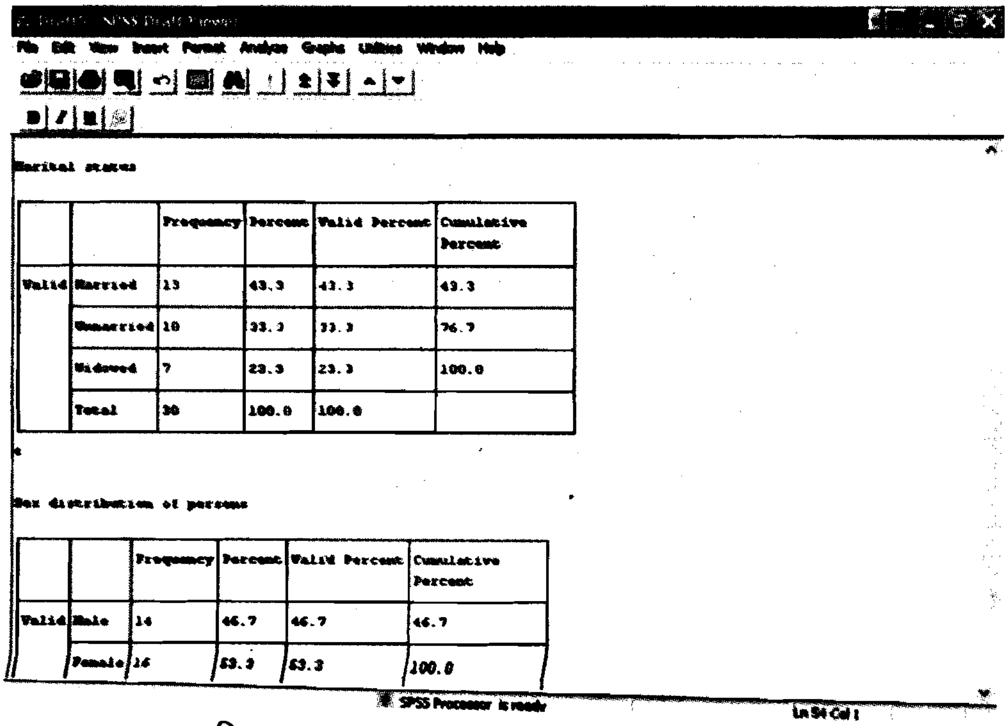

चित्र 31.17: ड्राफ्ट 5: एसपीएसएस ड्राफ्ट व्यूअर

ड्राफ्ट आउटपुट तैयार करने के लिए डाटा एडिटर विंडो में फाइल न्यू ड्राफ्ट आउटपुट (File→ New→ Draft Output) को चुनिए और ड्राफ्ट व्यूअर विंडो (Draft Viewer Window) की क्रियाविधि को शुरू कीजिए।

आरूपण (Format) को नियंत्रित करना : ड्राफ्ट व्यूअर में प्रधान तालिकाओं (पिवेट टेबलों) पर नज़र आने वाले आउटपुट को टेक्स्ट आउटपुट में कंवर्ट किया जाता है। कंवर्ट की गई पिवेट टेबल आउटपुट के लिए डिफाल्ट सेटिंग में निम्नलिखित शामिल है :

क) सारणी में प्रत्येक कॉलम को उस कॉलम लेबल की चौड़ाई पर सेट किया जाता है। इसलिए, कॉलम लेबलों को अनेक पंक्तियों में लपेटा (wrapped) नहीं किया जा सकता।

ख) टैब के स्थान पर, एलाइनमेंट को स्पेस के आधार पर नियंत्रित किया जाता है।

ग) एस.पी.एस.एस. मार्किट सेट से बॉक्स कैरेक्टरों को पंक्तियों और कॉलमों को अलग करने वालों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यदि बॉक्स कैरेक्टर छोड़ना हो तो कॉलमों को अलग करने के लिए लंबवत पंक्ति कैरेक्टरों (|) और डैश (–) का इस्तेमाल पंक्ति अलग करने के लिए किया जा सकता है।

क्रियाविधि को शुरू करने से पहले ऑप्शन्स डायलॉग बॉक्स का इस्तेमाल करते हुए टेबल आउटपुट के फॉर्मेट को आप नियंत्रित कर सकते हैं। इसके लिए आपको क्रियाविधि चलाने से पूर्व मेन्यू बार में **'सम्पादन विकल्प'** (Edit→ Options) निर्देश को चुनना होगा। ऐसा करने पर स्क्रीन पर **'ऑप्शन्स'** डायलॉग बॉक्स नज़र आएगा। तब **'ड्राफ्ट व्यूअर'** बटन को क्लिक करना होगा। टेबलों की चौड़ाई को कम करने के लिए लांग टेबल वाली कॉलम की चौडाई को कम करके टेबलों की चौड़ाई को कम कर सकते हैं। ऑप्शन्स डायलॉग बॉक्स में **'कॉलम विड्थ'** (column width) एरिया में **'मैक्सीमम'** (Maximum) पर क्लिक कीजिए। बॉक्स में कॉलम चौड़ाई में आने वाले कैरेक्टरों में से सबसे अधिक कैरेक्टरों को टाइप कीजिए। निर्धारित चौड़ाई से अधिक लंबे लेबलों को कॉलम की अधिकतम चौड़ाई तक किया जा सकता है। आप पंक्ति और कॉलम बॉर्डरों के लिए डिफॉल्ट बॉक्स कैरेक्टरों को बदल सकते हैं। यदि आप नहीं चाहते कि पंक्ति और कॉलमों को चिह्नित (मार्क)

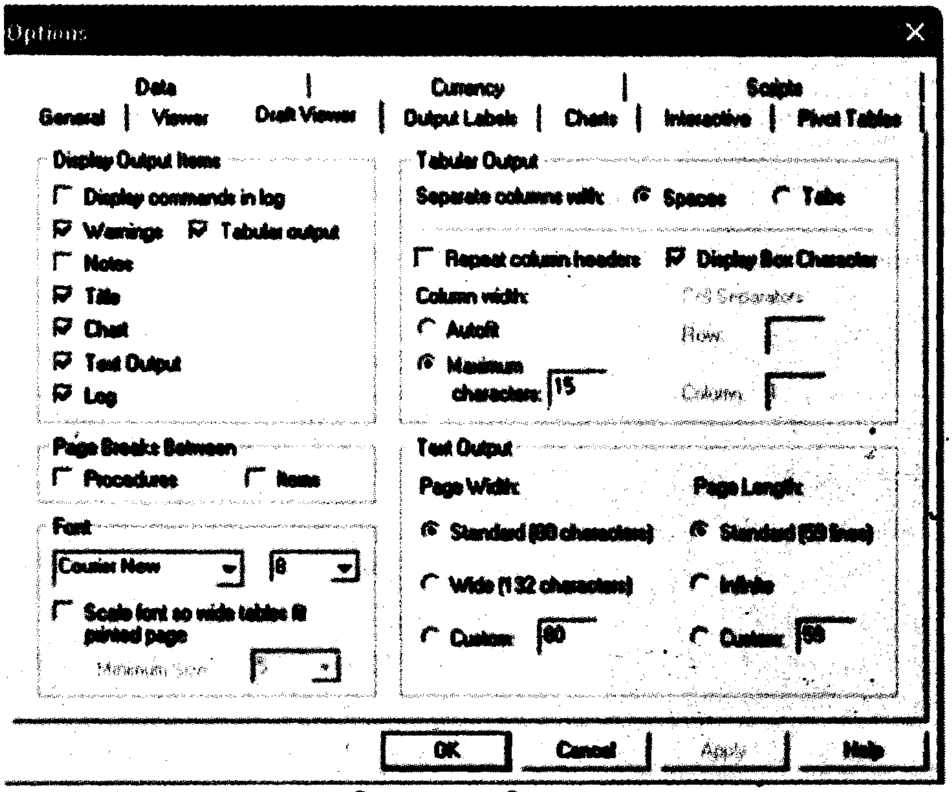

चित्र 31.18: विकल्प

करने के लिए किसी कैरेक्टर का प्रयोग किया जाए तो आप अलग-अलग सैल सेपरेटरों का विशेष रूप से उल्लेख कर सकते हैं या खाली स्थान में प्रविष्ट कर सकते हैं। ऐसा करने के लिए ऑप्शन डायलॉग बॉक्स के **डिस्प्ले बॉक्स कैरेक्टर** में जो चैक मार्क (जाँच का निशान) है उसे हटा दीजिए। फिर उस कैरेक्टर को (जिसे आप रो सेपेरेटर के रूप में चाहते हैं) **सैल सेपरेटर्स (Cell Separators)** क्षेत्र के अंतर्गत पंक्ति के सामने वाले बॉक्स में टाइप कीजिए। इसी तरह आप कैरेक्टर को (जिसे आप कॉलम सेपेरेटर के रूप में चाहते हैं) उसे सैल सेपरेटर्स क्षेत्र के अंतर्गत कॉलम के सामने टाइप कीजिए। पंक्तियों और/अथवा कॉलमों में स्पेस केरेक्टर टाइप करने से खाली बॉर्डरों के संगत एक तालिका बन जाएगी:

एक निर्धारित पिच फोंट (pitch font) में स्पेस सेपरेटिड आउटपुट प्रदर्शित करने के लिए ड्राफ्ट व्यूअर बनाया गया है। यदि आप आउटपुट को किसी अन्य अनुप्रयोग में कॉपी करना चाहते हैं (जैसे एम.एस. वर्ड डॉक्यूमेंट को किसी अन्य अनुप्रयोग में कॉपी करना) तो कॉलम सेपेरेटर के लिए टैब्स को चुनिए। इसके लिए ऑप्शन्स डायलॉग बॉक्स में सेपरेट कॉलम्स विथ के सामने वाले टैब्स बटन को चैक मार्क कीजिए। इसे चुनकर एम.एस. वर्ड जैसे अनुप्रयोगों में आप अपनी पसंद के फोंट का प्रयोग कर सकते हैं और आउटपुट को उचित रूप से एक कतार में (align) करने के लिए टैब्स को सैट कर सकते हैं। वैसे टैब सेपरेटिड आउटपुट, ड्राफ्ट व्यूअर में उपयुक्त रूप से एक कतार में (एलाइन) नहीं होगी। आप ऑप्शन्स डायलॉग बॉक्स में फोंट का प्रयोग कर उनके आकारों में भी बदलाव कर सकते हैं। इसके लिए फोंट सूची वाले बॉक्स में से फोंट के प्रकार को चुनिए और बाद में अगली सूची बॉक्स में से आकार का चयन कीजिए। ड्राफ्ट आउटपुट को प्रिंट या सेव करने के लिए एस.पी.एस.एस. संबंधी पिछली इकाई में बताए गए चरणों का पालन कीजिए।

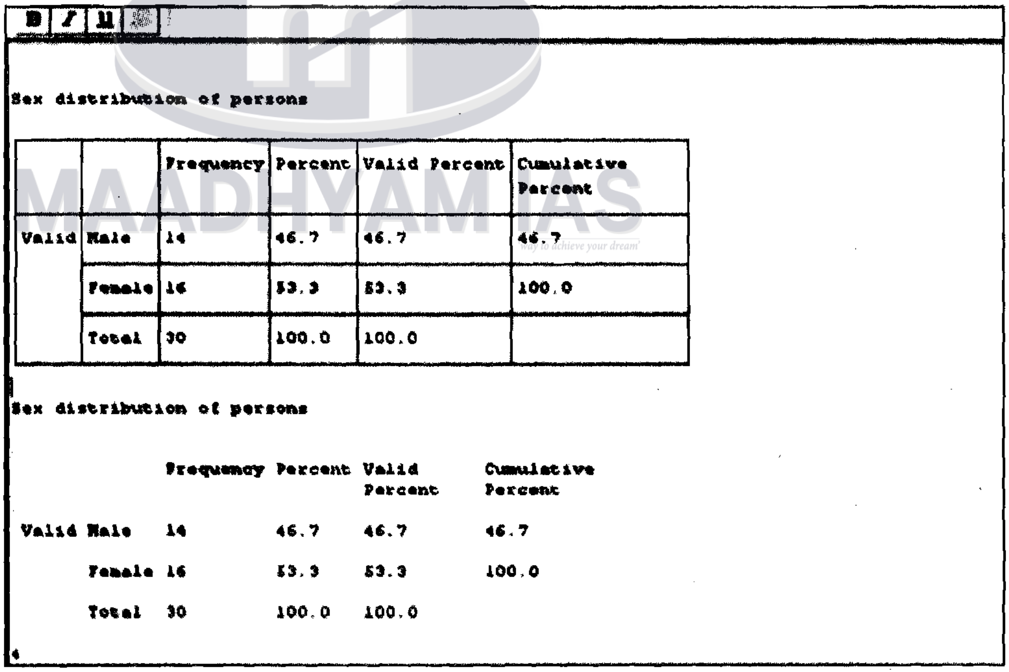

Sex distribution of persons

		Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Male	14	46.7	46.7	46.7
	Female	16	53.3	53.3	100.0
	Total	30	100.0	100.0	

Sex distribution of persons

		Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	Male	14	46.7	46.7	46.7
	Female	16	53.3	53.3	100.0
	Total	30	100.0	100.0	

MAADHYAM IAS

चित्र 31.19:सैल सेपरेटर्स और कॉलम विथ सैट करने से पहले और बाद में ड्राफ्ट आउटपुट

प्रधान तालिकाएँ (Pivot Tables)

एस.पी.एस.एस. में सांख्यिकीय क्रियाविधियों से प्राप्त होने वाले कई निष्कर्ष डिफाल्ट प्रधान तालिकाओं में प्रदर्शित किए जाते हैं। हालांकि प्रदर्शित डिफाल्ट लेबल सूचना को उतनी स्पष्टता और साफ-सफाई से प्रस्तुत नहीं कर सकते। प्रधान तालिकाओं से आप पंक्ति, कॉलम और लेयर्स को दोबारा व्यवस्थित कर सकते हैं। प्रधान तालिका को संशोधित/परिवर्तित करने संबंधी कुछ विकल्प इस प्रकार हैं :

- पंक्तियों और कॉलमों को परस्पर बदलना (पंक्ति के स्थान पर कॉलम और कॉलम के स्थान पर पंक्ति को लाना)

- पंक्ति और कॉलम को ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ करना
- बहुआयामी लेयर (multidimensional layers) बनाना
- पंक्ति और कॉलमों का समूह बनाना और उन्हें अलग-अलग करना
- सैल (cells) को दर्शाना और छिपाना
- पंक्ति और कॉलम लेबलों को घुमाना
- प्रयुक्त शब्दों की परिभाषाएँ जानना

आउटपुट डेफीनेशन्स तक पहुँचना (Accessing Output Definitions) : आउटपुट में कई सांख्यिकीय शब्दों को प्रदर्शित किया जाता है। इन शब्दों की परिभाषाओं तक सीधे ही आउटपुट व्यूअर में पहुँचा जा सकता है। उदाहरण के लिए, **'Case Processing Summary'** प्रधान तालिका को दो बार क्लिक करें। **Valid** को दाएँ क्लिक करें और पॉप-अप में मेन्यू से **What's this?** चुनिए। देखें कि **Valid** की परिभाषा पॉप-अप विंडो में दिखाई देगी।

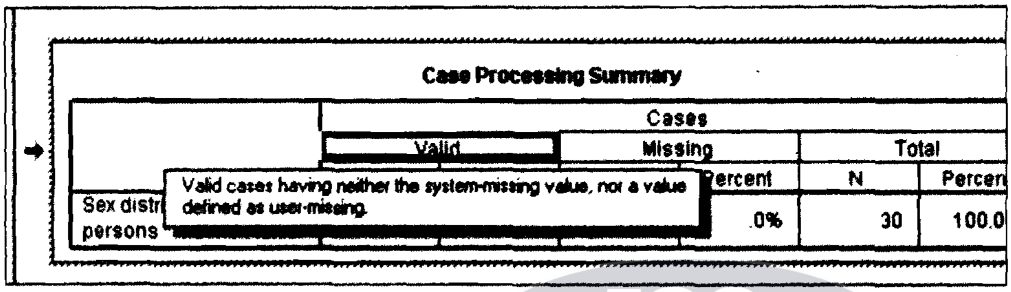

चित्र 31.20: केस संसाधन सारांश

MAADHYAM IAS

प्रधान तालिका का संपादन (Editing of Pivot Table)

प्रधान तालिका का संपादन करने के लिए, आपको सबसे पहले उस तालिका को डबल क्लिक करके ऐक्टिवेट करना होगा जिसे आप संपादित करना चाहते हैं। जिस लेबल अथवा टेक्स्ट अथवा संख्या को आप संपादित करना चाहते हैं, उसे क्लिक कीजिए। संपादन तालिका विशेषताओं के लिए उपयोगी कमांडों को दर्शाने के लिए मेन्यू बदल जाएगा। इसके अलावा, तालिका विशेषताओं को बदलने के लिए तालिका दंड **(Table Tool Bar)** और पिवेटिंग ट्रे डायलाग बॉक्स (Pivoting Tray Dialog Box) नज़र आएगा:

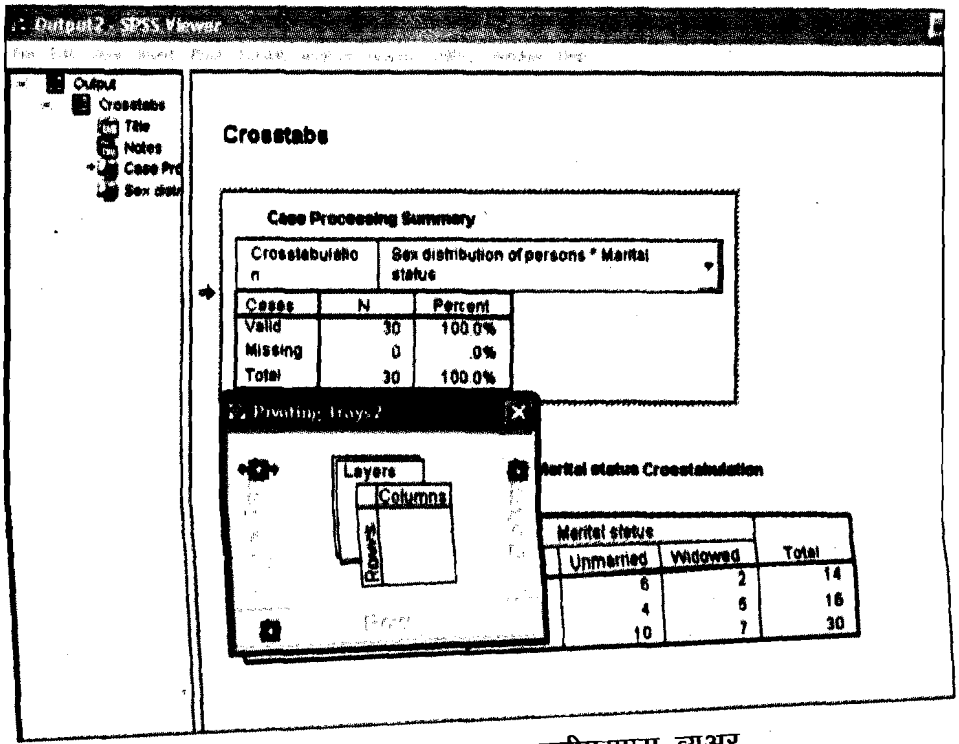

चित्र 31.21: आउटपुट 2: एसपीएसएस व्यूअर

यदि स्क्रीन पर पिवेटिंग ट्रे नज़र नहीं आती है तो मेन्यू बार से Pivot Pivoting Trays कमांड को चयनित कीजिए। पिवेट टेबल पंक्तियों, कॉलमों और लेयरों में आँकड़ों को बदलने का तरीका उपलब्ध कराती है। पिवेट टेबल में तीन पिवेट आइकन्स (three pivot icons) होते हैं जो लेयर, कॉलम और पंक्ति को दर्शाते हैं। पिवेट आइकन्स पर कर्सर को यह देखने के लिए ले जाएँ कि यह क्या दर्शाता है। टेबल में छायांकित क्षेत्र (shaded area) यह दर्शाता है कि जब आप पिवेट आइकन को दूसरी जगह ले जाना (मूव करना) चाहते हैं तो वहाँ क्या जाएगा। साथ ही, जब आप कर्सर को पिवेट आइकन पर मूव करेंगे तो पॉप अप लेबल (pop-up label) नज़र आएगा जो यह दर्शाएगा कि वह आइकन, टेबल में क्या दर्शाता है। आइकन को एक ट्रे से दूसरी ट्रे में खीचिए (Drag)। तब तत्काल ही टेबल में व्यवस्था बदल जाएगी। उदाहरण के लिए, यदि आप लिंग-श्रेणी को पंक्ति के स्थान पर कॉलम में रखना चाहते हैं तो आइकन को पंक्ति (रो) ट्रे से कॉलम ट्रे में लेकर जायें।

पंक्ति कॉलम को एक-दूसरे में बदलना (Transposing Rows and Columns) : तालिका को दो बार क्लिक करके एक्टीवेट कीजिए। मेन्यू बार (Menu Bar) में Pivot → Transpose Rows and Columns कमांड पर जाकर चयनित कीजिए। इससे सभी कॉलम पंक्तियों में और पंक्तियाँ कॉलमों में परिवर्तित हो जाएँगी।

व्यक्तियों का सैक्स वितरण * वैवाहिक स्थिति क्रॉसटेब्यूलेशन गणना

गणना		वैवाहिक स्थिति			
		विवाहित	अविवाहित	विधवा/विधुर	कुल
व्यक्तियों का सैक्स वितरण	पुरुष	6	6	2	14
	महिला	7	4	5	16
कुल		13	10	7	30

MAADHYAM IAS

व्यक्तियों का सैक्स वितरण * वैवाहिक स्थिति क्रॉसटेब्यूलेशन गणना

		व्यक्तियों का सैक्स वितरण		कुल
		पुरुष	महिला	
वैवाहिक स्थिति	विवाहित	6	7	13
	अविवाहित	6	4	10
	विधवा/विधुर	2	5	7
कुल		14	16	30

चित्र 31.22: लाइन एवं खाने का ट्रांसपोजिंग

पंक्तियों और कॉलमों को दिखाने के क्रम में परिवर्तन करना (changing the display order of rows and columns) : पिवेट आइनकों की डाइमेंशन (पंक्ति, कॉलम, परतें) ट्रे (dimension tray) का क्रम पिवेट टेबल के डिस्पले ऑर्डर के सभी अंशों को दर्शाता है। हर ट्रे में से संबंधित सभी आइकनों को अपनी ज़रूरत के क्रम की दिशा से लाइए (बाएँ से दाएँ या ऊपर से नीचे)।

पंक्ति और कॉलम का स्थान बदलना : पिवेट टेबल को डबल क्लिक करते हुए सक्रिय (ऐक्टिवेट) कीजिए। जिस पंक्ति अथवा कॉलम का आप स्थान बदलना चाहते हैं, उसके लिए लेबल को क्लिक कीजिए। नई स्थिति के लिए लेबल को क्लिक और ड्रेग कीजिए। पॉप-अप मेन्यू से Insert Before या Swap को चयनित कीजिए।

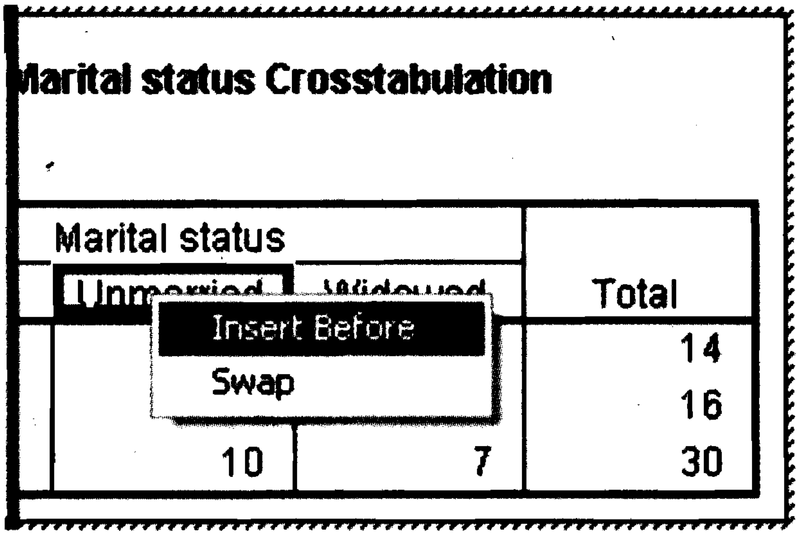

चित्र 31.23: पंक्तियों और कॉलम को मूव करना

पंक्तियों और कॉलम का समूहीकरण : समूह (ग्रुप) लेबल को इंसर्ट करते हुए टेबल में पंक्तियों और कॉलमों की संख्या का समूह बनाया जा सकता है। इसके लिए, टेबल को दो बार क्लिक करते हुए सक्रिय कीजिए। आप जिन कॉलमों अथवा पंक्तियों का समूह बनाना चाहते हैं, उसे चयनित कीजिए। जहाँ आप पंक्तियों और कॉलमों के समूह शीर्षक को शामिल करना चाहते हैं पंक्ति शीर्षक अथवा कॉलम-शीर्षक वाले बहुलित सैलों (Multiple Cells) को चुनने के लिए माउस को क्लिक और ड्रेग कीजिए। मेन्यू बार पर Edit? Group कमांड को चयनित कीजिए। ग्रुप लेबल अपने आप ही इंसर्ट हो जाएगा। लेबल टेक्स्ट को संपादित करने के लिए ग्रुप लेबल को दो बार क्लिक कीजिए। यदि आप वर्तमान समूह में नई पंक्ति अथवा कॉलम को शामिल करना चाहते हैं तो सबसे पहले समूह में शामिल मदों (items) को समूह-विहीन (ungroup) करना होगा और उसके बाद नया समूह बनाना होगा (create group)। स्वाभाविक है कि उस नए सृजित समूह में नई मदें भी होंगी ही। पंक्ति अथवा कॉलम को समूह-विहीन करने के लिए समूह नामपत्रों को भी हटाना होगा। पंक्तियों अथवा कॉलमों को आप समूह-विहीन करने के लिए समूह नामपत्र में कहीं पर भी क्लिक करके समूह नामपत्र को चयनित कीजिए। मेन्यू बार पर delete and add Edit→ Ungroup कमांड को चयनित कीजिए। इससे समूह नामपत्र अपने आप ही हट जाएगा।

MAADHYAM IAS

नामपत्रों को घुमाना : आप सबसे अधिक अंदर वाले कॉलम लेबलों अथवा सबसे अधिक दूर पंक्ति नामपत्रों को घुमा सकते हैं। इसके लिए मुख्य सारणी को सक्रिय करना होगा। आप सबसे अधिक अंदर वाले कॉलम को घुमाने के लिए **Format→ Rotate Inner Column Labels** को चयनित कीजिए अथवा सबसे अधिक दूर पंक्ति लेबलों को घुमाने के लिए **Format→ Rotate Outer Row Labels** को सक्रिय (ऐक्टिवेट) करना होगा।

व्यक्तियों का सैक्स वितरण * वैवाहिक स्थिति क्रॉसटेब्यूलेशन गणना

गणना		वैवाहिक स्थिति			
		विवाहित	अविवाहित	विधवा/विधुर	कुल
व्यक्तियों का सैक्स वितरण	पुरुष	6	6	2	14
	महिला	7	4	5	16
कुल		13	10	7	30

व्यक्तियों का सैक्स वितरण * वैवाहिक स्थिति क्रॉसटेब्यूलेशन गणना

गणना		वैवाहिक स्थिति			
		विवाहित	अविवाहित	विधवा/विधुर	कुल
व्यक्तियों का सैक्स वितरण	पुरुष	6	6	2	14
	महिला	7	4	5	16
कुल		13	10	7	30

चित्र 31.24: घूर्णीय नामपत्र (Rotating Labels)

लेयरें बनाना और उनका प्रदर्शन (Creating and displaying Layers): सूचनाओं को कई वर्गों में विभाजित करने वाली बड़ी तालिकाओं के लिए लेयर्स उपयोगी होते हैं। लेयरों वाली तालिका देखने में सरल होती है और उसे पढ़ना भी आसान होता है। लेयरें बनाना उस स्थिति में उपयोगी रहता है यदि कम से कम तीन चर हों। टेबल को डबल क्लिक करते हुए सक्रिय कीजिए। रो ट्रे अथवा कॉलम ट्रे से आइकन को लेयर ट्रे में खींचकर लाइए (ड्रेग कीजिए)। प्रत्येक लेयर आइकन में दाएँ और बाएँ तीर के निशान (ऐरो) होते हैं। नज़र आने वाली तालिका, टॉप लेयर के लिए तालिका है। विभिन्न लेयरों को देखने के लिए आप या तो लेयर आइकन पर तीरों के निशान को क्लिक कीजिए या फिर तालिका में ड्राप-डाउन सूची में से लेयर को चयनित कीजिए।

हाइडिंग सैल (Hiding Cells) : आप तालिका में कई प्रकार सैल छिपा सकते हैं :

क) आयाम लेबल (Dimension labels)

ख) डाटा सैल को छिपाए बिना श्रेणी लेबल

ग) पंक्ति या कॉलम में लेबल सैल और डाटा सैल

घ) फुटनोट, शीर्षक और कैप्शन्स (captions)

MAADHYAM IAS
achieve your dream

तालिका में पंक्ति और कॉलम को छिपाने के लिए पिवेट टेबल मेन्यू बार पर View Hide को चयनित कीजिए अथवा pop-up मेन्यू को दर्शाने के लिए हाइलाइट की हुई पंक्ति या कॉलम को दाएँ क्लिक कीजिए और उसके बाद pop-up मेन्यू से हाइड श्रेणी को चयनित कीजिए।

छिपी हुई पंक्ति और कॉलम को दर्शाने के लिए ठीक उसी प्रकार अन्य लेबल चयनित कीजिए जिस प्रकार पंक्ति अथवा कॉलम को छिपाया गया था। उदाहरण के लिए, लिंगवार विभाजन में पुरुष श्रेणी को हाइड किया हुआ है तो महिला श्रेणी को क्लिक कीजिए। मेन्यू बार पर **View → Show All Categories in Gender** कमांड को चयनित कीजिए। या फिर मेन्यू बार पर **View → Show All** निर्देश को चयनित कीजिए। इस कमांड से तालिका के सभी छिपे हुए सैल नज़र आ जाएँगे।

आयाम लेबल को छिपाने (अथवा दर्शाने) के लिए पिवेट टेबल को सक्रिय कीजिए। आयाम के भीतर से ही आयाम लेबल अथवा कोई अन्य श्रेणी लेबल को चयनित कीजिए। चयनित करते समय **Dimension Label** (आयाम लेबल) को छिपाने (अथवा दर्शाने) के लिए मेन्यू बार पर **View → Hide** (अथवा Show) निर्देश को चयनित कीजिए।

तालिका में पादटिप्पणी (Footnote) को छिपाने (अथवा दर्शाने) के लिए मेन्यू बार पर **View Hide** (अथवा Show) निर्देश को चयनित कीजिए।

टेबललुक (Tablelook): आप टेबल प्रॉपर्टीज़ को बदलकर या फिर चालू करके तालिका की दिखावट को बदल सकते हैं। प्रत्येक टेबललुक में सामान्य दिखावट, फुटनोट प्रॉपर्टीज़, सैल प्रॉपर्टीज़, और बॉर्डर सहित तालिका प्रॉपर्टीज़ का संकलन शामिल है। अपनी तालिका में आप पहले से ही बनी टेबललुक को चयनित कर सकते हैं। इसके अलावा, आप अपनी भी टेबललुक बना सकते हैं। पहले से बनी टेबललुक को अपनी तालिका पर लागू करने के लिए तालिका को दो बार क्लिक करके पिवेट टेबल को सक्रिय कीजिए। मेन्यू बार पर आप **Format → TableLooks**...... कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर **TableLook Files** के अंतर्गत फाइलों में से टेबललुक चयनित कीजिए। चुनी हुई पिवेट टेबल को शामिल करने के लिए OK बटन को क्लिक कीजिए।

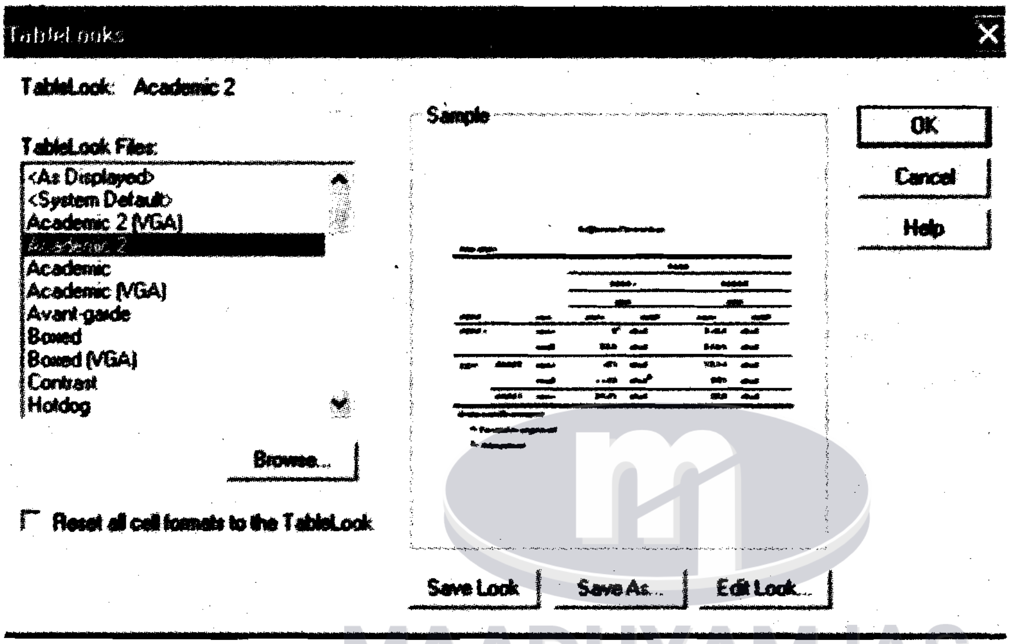

चित्र 31.25: टेबल लुक

MAADHYAM IAS

चयनित हुई अथवा अपनी बनाई टेबललुक को संपादित करने के लिए, जैसा कि ऊपर बताया गया है, फाइलों की सूची में से टेबललुक को चयनित कीजिए। **Edit Look....** बटन को क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर **Table Properties** डायलॉग बॉक्स नज़र आएगा। जिन विशेषण पदों (attributes) को आप शामिल करना चाहते हैं तो टेबल प्रॉपर्टीज़ को व्यवस्थित करने के लिए मेन्यू में समुचित विकल्प को चयनित कीजिए। इसके बाद टेबल प्रॉपर्टीज़ डायलॉग बॉक्स में OK बटन को क्लिक कीजिए। संपादित टेबललुक को सेव करने के लिए **Save Look** क्लिक कीजिए या फिर उसे नई टेबललुक के रूप में सेव करने के लिए **Save As** कीजिए। कृपया यह ध्यान दीजिए कि टेबललुक में संपादन से केवल चुनी हुई पिवेट टेबल पर ही प्रभाव पड़ता है। संपादित टेबललुक किसी उस टेबललुक में इस्तेमाल अन्य लेवलों पर लागू नहीं होती है। यह केवल उन्हीं तालिकाओं पर लागू होगी जिन्हें आप चुनेंगे और टेबललुक को दोबारा शामिल करेंगे।

टेबल डायलॉग बॉक्स तालिका से सामान्य प्रॉपर्टीज़ को सैट किया जा सकता है, तालिका के विभिन्न हिस्सों के लिए सैल स्टाइल को सैट किया जा सकता है, और उन प्रॉपर्टीज़ को टेबललुक के रूप में सेव किया जा सकता है।

टेबल प्रॉपर्टीज़ डायलॉग बॉक्स पर जनरल टेब का इस्तेमाल करते हुए आप तालिका की छिपी हुई खाली पंक्तियों अथवा कॉलमों जैसी जनरल प्रॉपर्टीज़ को नियंत्रित कर सकते हैं और प्रिंटिंग प्रॉपटीज को व्यवस्थित कर सकते हैं।

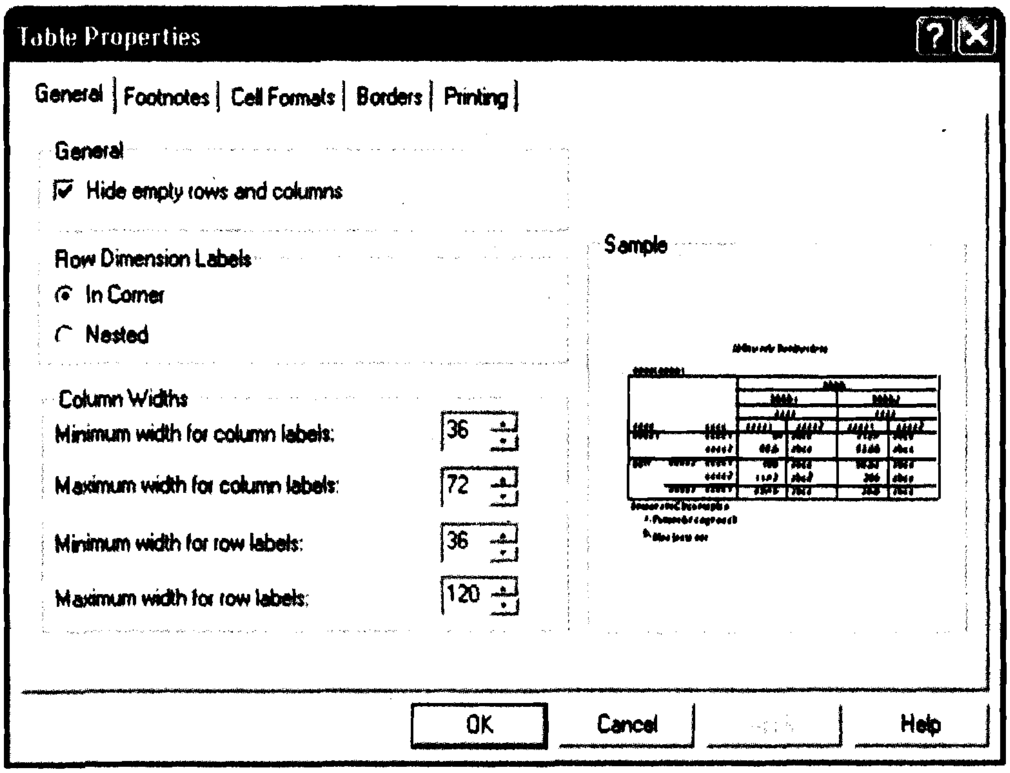

चित्र 31.26: टेबल प्रापर्टीज

फॉर्मेटों और पादटिप्पणी के अंकित की स्थिति को नियंत्रित करने के लिए **Footnotes** टेब को क्लिक कीजिए।

डाटा एरिया, पंक्ति और कॉलम लेबलों तथा तालिका के अन्य क्षेत्रों में सैलों के लिए विशिष्ट फॉर्मेट निर्धारित करने के लिए **Cell Formats** टेब को क्लिक कीजिए।

तालिका के प्रत्येक क्षेत्र के बॉर्डरों को बनाने के लिए पंक्तियों की चौड़ाई (width) और कॉलम को नियंत्रित करने के लिए बॉर्डर्स टेब (Border tab) को क्लिक कीजिए।

मुद्रण संबंधी विशि-टता को नियंत्रित करने के लिए प्रिंटिंग टेब को क्लिक कीजिए।

MAADHYAM IAS

अभ्यास 31.3

आपने अभी पढ़ा है कि एस.पी.एस.एस. आउटपुट के साथ काम करते हुए परिणामों के द्वारा ब्राउस करना, चुनी हुई तालिका/पाठ/आरेख आदि को दर्शाना या छिपाना जैसे कई कार्य कर पाना संभव है। निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए :

तालिका की पंक्तियों और कॉलमों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर आप किस प्रकार रखेंगे? इसे करने के विभिन्न चरण बताइए।

क्या एस.पी.एस.एस. आउटपुट व्यूअर को हटाए बिना कुछेक परिणामों को छिपाना संभव है? यदि ऐसा हो सकता है तो चुने हुए परिणामों को छिपाने संबंधी विभिन्न चरण बताइए।

पिवेट टेबल की दिखावट को बदलने में किस डायलॉग बॉक्स से सहायता मिलती है। इस डायलॉग बॉक्स का इस्तेमाल करके आप किन सामान्य प्रॉपर्टीज़ को नियंत्रित कर सकते हैं?

31.5 एस.पी.एस.एस.आउटपुट को एम.एस. वर्ड डॉक्यूमेंट में कॉपी करना

एस.पी.एस.एस. द्वारा तैयार की गई उन सभी अथवा उनमें से कुछ तालिकाओं और आरेखों को यदि आप अपनी रिपोर्ट में शामिल करना चाहते हैं तो उसे एस.पी.एस.एस. व्यूअर विंडो

से कॉपी करके वर्ड डॉक्यूमेंट में शामिल कर सकते हैं। डाटा एडिटर से आँकड़ों को कॉपी करने की प्रक्रिया ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार आउटपुट व्यूअर विंडो से पाठ, तालिकाओं और आरेखों को कॉपी किया जाता है।

1) एस.पी.एस.एस. आउटपुट व्यूअर विंडो से विंडो क्लिपबोर्ड पर पाठ, तालिका अथवा आरेख को कॉपी कीजिए। अथवा एस.पी.एस.एस. डाटा एडिटर से विंडो क्लिपबोर्ड (windows clipboard) पर आँकड़ों को कॉपी कीजिए।

2) कॉपी किए हुए आँकड़ों/पाठ/तालिका/आरेख को विंडो क्लिपबोर्ड से वर्ड डॉक्यूमेंट में शामिल कीजिए।

इसका अर्थ यह है कि आँकड़ों/आउटपुट को कॉपी और शामिल करने के दौरान संबंधित कार्यक्रम/प्रोग्राम खुला रहता है।

एस.पी.एस.एस. डाटा व्यूअर से आँकड़ों को कॉपी करना

एस.पी.एस.एस. एडिटर से वर्ड डॉक्यूमेंट में आँकड़ों को कॉपी करने के लिए निम्नलिखित चरण अपनाइए :

1) एस.पी.एस.एस. प्रोग्राम को चालू कीजिए। आंकड़ा सम्पादक (डाटा एडिटर) का इस्तेमाल करते हुए आँकड़ा फाइल (.sav extension सहित) खोलिए। जिन कॉलमों अथवा पंक्तियों को आप कॉपी करना चाहते हैं उन्हें चयनित कीजिए।

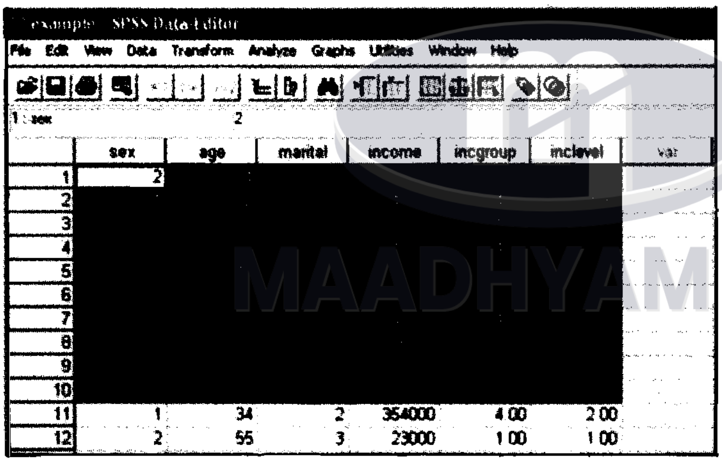

चित्र 31.27: उदाहरण: एसपीएसएस आंकड़ा सम्पादक

2) एस.पी.एस.एस. डाटा एडिटर विंडो से मेन्यू बार से **Edit Copy** को चयनित कीजिए और आँकड़े विंडो क्लिपबोर्ड पर कॉपी कीजिए।

3) विंडो प्रोग्राम को शुरू कीजिए। जहाँ पर आप अपनी रिपोर्ट टाइप कर रहे हैं और जहाँ आप चयनित किया हुआ डाटा कॉपी करना चाहते हैं, वह वर्ड विंडो खोलिए। पृष्ठ और पैराग्राफ (paragraph) चयनित कीजिए। जहाँ पर आँकड़ों को शामिल करना है, उस स्थल पर माउस को क्लिक कीजिए।

4) वर्ड विंडो के मेन्यू बार से **Edit → Paste** कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर आपके आँकड़े विंडो क्लिपबोर्ड से आपके वर्ड डॉक्यूमेंट में रिपोर्ट में शामिल किए जाने वाले स्थान पर कॉपी हो जाएँगे।

अथवा

वर्ड विंडो के मेन्यू बार से **Edit → Paste Special** कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर **Paste Special** डायलॉग बॉक्स नज़र आएगा। **As:** के अंतर्गत **Unformatted Text** को चयनित कीजिए और **OK** बटन दबाइए। ऐसा करने पर आपके आँकड़े विंडो क्लिपबोर्ड से कॉपी होकर वर्ड डॉक्यूमेंट में आँकड़े शामिल किए जाने वाले स्थल पर कॉपी हो गए हैं।

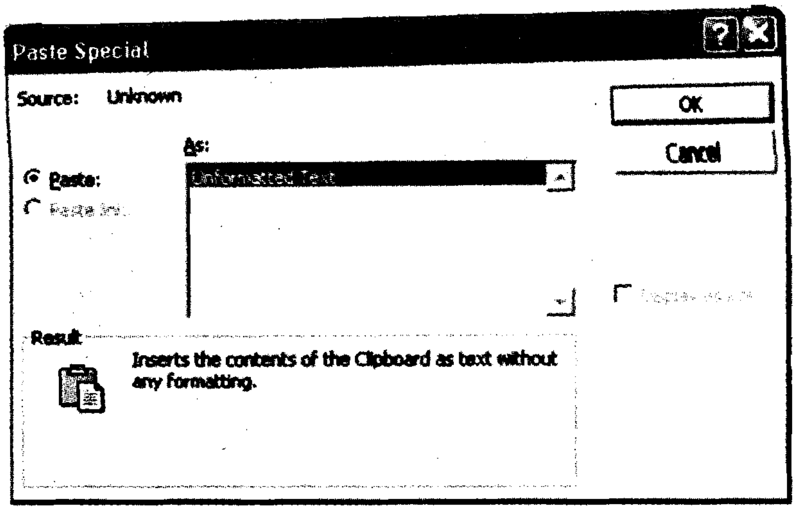

चित्र 31.28: पेस्ट स्पेशल

यदि आवश्यक है तो आप आँकड़ों को संपादित कर सकते हैं अथवा उसकी दोबारा फॉर्मेटिंग भी कर सकते हैं।

एस.पी.एस.एस. डाटा एडिटर से वर्ड डॉक्यूमेंट में कॉपी किए गए आँकड़े

2	24	1	150000	3.00	1.00
1	52	1	345000	4.00	2.00
2	65	3	45000	1.00	1.00
1	35	3	245000	4.00	2.00
1	42	1	23000	1.00	1.00
1	25	1	67000	5.00	2.00
2	23	1	345000	4.00	2.00
2	63	1	156000	3.00	2.00
1	41	2	653000	2.00	1.00
2	48	1	150000	3.00	1.00

MAADHYAM IAS

चित्र 31.29: एस.पी.एस.एस.आउटपुट व्यूअर से पाठ अथवा तालिकाओं को कॉपी करना

यहाँ हम जिन तीन प्रकार के फॉर्मेटों की व्याख्या करेंगे, वे हैं — (क) चित्र (pictures) (ख) फॉर्मेट किया हुआ पाठ (RTF), और (ग) फॉर्मेट नहीं किया हुआ पाठ (unformatted text)। और अधिक स्पष्टता के लिए हम तीन चरणों में शामिल चरणों की भी व्याख्या करेंगे — (1) चयन (selection), (2) कॉपी, और (3) शामिल करना (paste)। साथ ही आप एक अथवा उससे अधिक मदों को कॉपी करने के बारे में भी जान सकेंगे।

चरण-1 : एस.पी.एस.एस. आउटपुट विंडो से मद (पाठ/तालिकाएँ/आरेख) चुनना

एस.पी.एस.एस. प्रोग्राम को शुरू कीजिए। डाटा एडिटर का इस्तेमाल करते हुए (.sav एक्सटेंशन के साथ) आँकड़ा फाइल को खोलिए। आउटपुट बनाने के लिए सांख्यिकी प्रक्रिया को अपनाइए। जैसा कि आपने पिछली इकाई में देखा है, एस.पी.एस.एस. आउटपुटर व्यूअर विंडो में आप आउटपुट तैयार कर सकते हैं।

यदि आप पहले से ही आउटपुट तैयार कर चुके हैं और (.sav एक्सटेंशन के साथ) आउटपुट फाइल में सुरक्षित कर चुके हैं तो आपको एस.पी.एस.एस. आंकड़ा संपादक (डाटा एडिटर) के मेन्यू बार पर **File → Open → Output**..... निर्देश को चयनित करते हुए उस आउटपट को खोलना होगा।

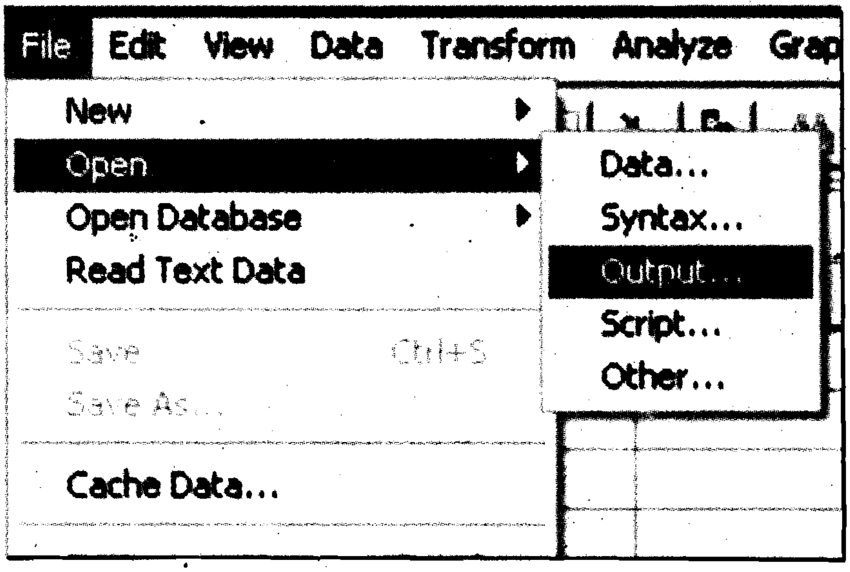

चित्र 31.30: एसपीएसएस विंडो के मीनू बार से मदों का चयन करना

आउटपुट व्यूअर विंडो के आउटलाइन पेन में से जिसे आप कॉपी करना चाहते हैं उनमें से एक (तालिका/पाठ/आरेख) या फिर एक से अधिक मदों (तालिकाओं/ पाठों/आरेखों) को चुनते हुए उन पर क्लिक कीजिए। अब तालिका/तालिकाओं/पाठ/ आरेख/आरेखों को कॉपी किया जा सकता है।

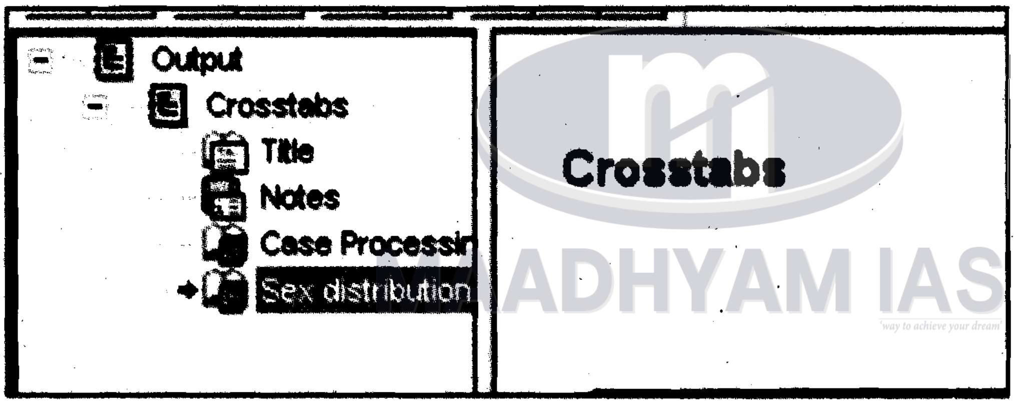

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 31.31: एसपीएसएस विंडो के मीनू बार से एक मद को चयन करना

चरण-2: एस.पी.एस.एस. आउटपुट विंडो से मदों (पाठ/तालिका/तालिकाओं/ आरेख/ आरेखों) को कॉपी करना

एकल मद (Single Item) को कॉपी करना: एकल मद को कॉपी करने के लिए तालिका/ पाठ/आरेख में से कॉपी किए जाने वाले आँकड़ों को चुनने के बाद एस.पी.एस.एस. आउटपुट विंडो को मेन्यू बार में से **Edit Copy** कमांड को चयनित कीजिए। अब चुनी हुई मद को विंडोज़ क्लिपबोर्ड पर कॉपी कीजिए।

एकाधिक मदों (Multiple Items) को कॉपी करना: एकाधिक मदों (तालिकाओं/पाठों/ आरेखों में से) को कॉपी करने के लिए कॉपी किए जाने वाले आँकड़ों को चुनने के बाद एस.पी.एस.एस. आउटपुट विंडो को मेन्यू बार में से **Edit → Copy Objects** कमांड को चयनित कीजिए। अब चुनी हुई मदों को विंडोज़ क्लिपबोर्ड पर कॉपी कीजिए।

चरण-3 : वर्ड डॉक्यूमेंट में मद/मदों (पाठ/तालिका/तालिकाओं/आरेख/आरेखों) को पेस्ट करना

वर्ड कार्यक्रम को शुरू कीजिए। जहाँ पर आप अपनी रिपोर्ट टाइप कर रहे हैं और जहाँ आप चयनित किया हुआ डाटा कॉपी करना चाहते हैं, वह वर्ड विंडो खोलिए। पृष्ठ और पैराग्राफ

चयनित कीजिए। जहाँ पर आँकड़ों को शामिल करना है, उस स्थल पर माउस को क्लिक कीजिए।

क) **एकल मदों को चिपकाना (Pasting Single Items)**

पाठ मद (Text Item): यदि आपकी शामिल की जा रही सामग्री Text item है तो मेन्यू बार पर **Edit → Paste** कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर टैक्स्ट आइटम विंडो क्लिपबोर्ड से टाइप की गई सामग्री में शामिल करने वाली जगह पर आपके कंप्यूटर पर कॉपी हो चुका होगा। आप टैक्स्ट आइटम को संपादित कर सकते हैं।

तालिका मद (Table Item): यदि आपकी शामिल की जा रही सामग्री तालिका मद (Table Item) है तो मेन्यू बार पर Edit Paste Special कमांड को चयनित कीजिए। ऐसा करने पर स्क्रीन पर **Paste Special** डायलॉग बॉक्स नज़र आएगा। अब आपको डायलॉग बॉक्स में तीन विकल्प नज़र आएँगे।

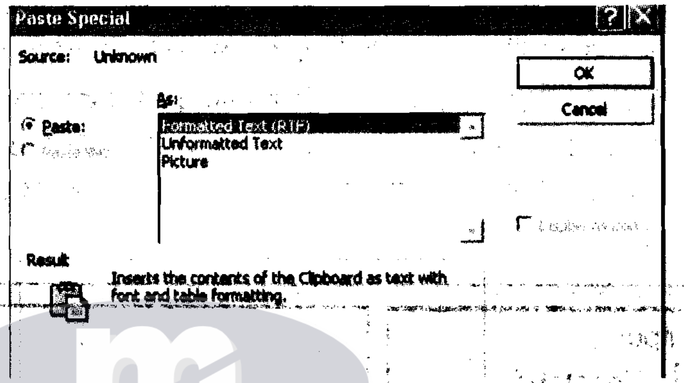

चित्र 31.32: तालिका को पेस्ट करने के लिए पेस्ट

आरूपित मूलपाठ (आर.टी.एफ) के रूप में तालिका: डायलॉग बॉक्स में As: बॉक्स के अंतर्गत **Formatted Text (RTF)** को चयनित कीजिए। OK बटन क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर टैक्स्ट आइटम विंडो क्लिपबोर्ड से टाइप की गई सामग्री में शामिल करने वाली जगह पर आपके कंप्यूटर पर कॉपी हो चुका होगा। तालिकाओं को formatted text के रूप में कॉपी करने का यह लाभ रहता है कि आप अपने वर्ड डॉक्यूमेंट में तालिका को संपादित कर सकते हैं अथवा सैटिंग को दोबारा से फॉर्मेट कर सकते हैं। किंतु यदि आप टेबललुक में सुधार करना चाहते हैं तो आपको कुछ सैटिंग करनी होगी।

MAADHYAM IAS

वर्णनात्मक सांख्यिकी

	सं.	न्यूनतम	अधिकतम	माध्य	मानक विचरण
लोगों का लिंग वितरण	30	1	2	1.53	.507
वैवाहिक	30	1	3	1.80	.805
वैध सं. (सूची अनुसार)	30				

चित्र 31.33: आरूपित सामग्री में वर्णनात्मक साख्यिकी

फॉर्मेट नहीं की हुई टैक्स्ट के रूप में टेबल : डायलॉग बॉक्स में As: बॉक्स के अंतर्गत **Unformatted Text** को चयनित कीजिए। OK बटन क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर टैक्स्ट आइटम विंडो क्लिपबोर्ड से टाइप की गई सामग्री में शामिल करने वाली जगह पर आपके कंप्यूटर पर कॉपी हो चुका होगा। यदि आवश्यक हो तो आप तालिका को संपादित भी कर सकते हैं। वैसे, कॉलमों को भली प्रकार से एलाइन करने के लिए आपको tabs को व्यवस्थित करना होगा।

वर्णनात्मक सांख्यिकी

	सं.	न्यूनतम	अधिकतम	माध्य	मानक विचरण
लोगों का लिंग वितरण	30	1	2	1.53	.507
वैवाहिक प्रास्थिति	30	3	1.80	.805	
वैध सं. (सूची अनुसार)	30				

चित्र 31.34: अनारूपित सामग्री में वर्णनात्मक सांख्यिकी

चित्र के रूप में तालिका (Table as Picture): डायलाग बॉक्स में As: बॉक्स के अंतर्गत **Picture** को चयनित कीजिए। OK बटन क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर टैक्स्ट आइटम विंडो क्लिपबोर्ड से टाइप की गई सामग्री में शामिल करने वाली जगह पर स्वतंत्र ग्राफिक क्लिप के रूप में आपके कंप्यूटर पर कॉपी हो चुका होगा। चूँकि तालिका स्वतंत्र ग्राफिक के रूप में कॉपी हुई है, इसलिए तालिका का टैक्स्ट आप वर्ड डॉक्यूमेंट में संपादित नहीं कर सकते। लेआउट (layout), फोंट साइज, स्टाइल और कोई भी बॉक्स कैरेक्टर अपने आप ही संरक्षित हो जाता है। ग्राफिक का आकार और स्थिति वर्ड डॉक्यूमेंट के भीतर ही पृष्ठ पर दोबारा व्यवस्थित किया जा सकता है। किंतु जब वर्ड में ग्राफिक का संपादन किया जाता है तो सूचना समाप्त हो जाती है। इसलिए,यदि आप टैक्स्ट/तालिका के शीर्षकों अथवा लेबलों को बदलना चाहते हैं या अन्य फॉर्मेटिंग करना चाहते हैं तो उसे भाग 32.3 में दी गई जानकारी के अनुसार एस.पी.एस.एस. आउटपुट व्यूअर विंडो में करना ही बेहतर रहेगा।

वर्णनात्मक सांख्यिकी

	सं.	न्यूनतम	अधिकतम	माध्य	मानक विचरण
लोगों का लिंग वितरण	30	1	2	1.53	.507
वैवाहिक प्रास्थिति	30	3	1.80	.805	
वैध सं. (सूची अनुसार)	30				

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चित्र 31.35: चित्र के रूप में वर्णनात्मक सांख्यिकी

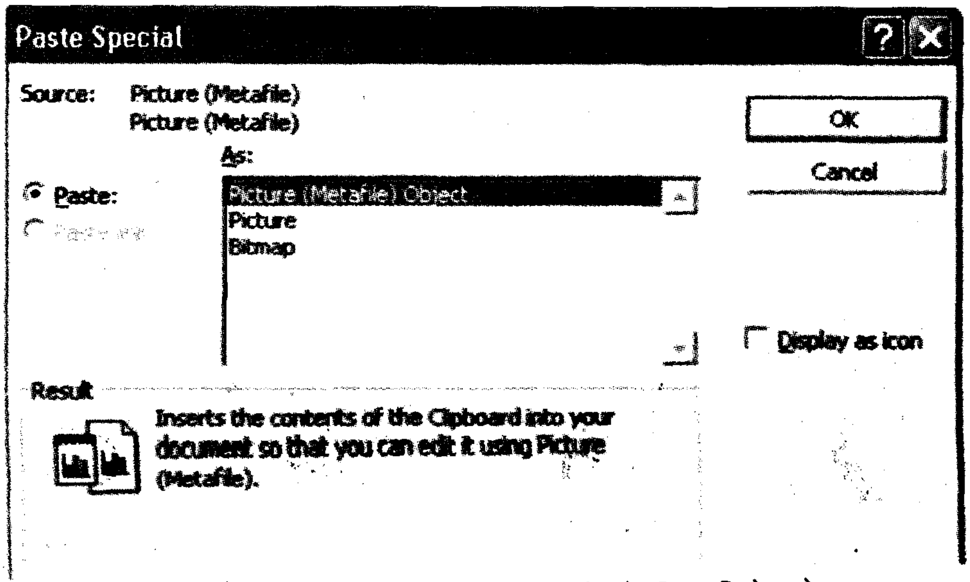

चित्र 31.36: मद के चार्ट में पेस्ट करने के लिए विशेष पेस्ट

आरेख मद : यदि आप आरेख मद पेस्ट करना चाहते हैं तो मेन्यू बार पर **Edit Paste Special** को चयनित कीजिए। स्क्रीन पर **Paste Special** डायलॉग बॉक्स नज़र आएगा। उस डायलॉग बॉक्स में आपको तीन विकल्प नज़र आएँ Picture (Metafile) Object, Picture और Bitmap। भले ही आप किसी भी विकल्प का चयन करें, किंतु वर्ड डॉक्यूमेंट में आकार को दोबारा व्यवस्थित करने के अलावा आप कोई भी संपादन नहीं कर सकते हैं। इसलिए हम इस इकाई में केवल पिक्चर के रूप में पेस्टिंग की ही व्याख्या कर रहे हैं।

चित्र के रूप में आरेख (Chart as Picture)

डायलॉग बॉक्स में As: बॉक्स के अंतर्गत Picture को चयनित कीजिए। OK बटन क्लिक कीजिए। ऐसा करने पर टैक्स्ट आइटम विंडो क्लिपबोर्ड से टाइप की गई सामग्री में शामिल करने वाली जगह पर आपके कंप्यूटर पर कॉपी हो चुका होगा। ऐसा करने पर आरेख, स्वतंत्र ग्राफिक के रूप में कॉपी हो गया है, इसलिए तालिका में शामिल आँकड़ों को आप वर्ड डॉक्यूमेंट में संपादित नहीं कर पाएँगे। लेआउट, फोंट साइज, स्टाइल और कोई भी बॉक्स कैरेक्टर अपने आप ही संरक्षित हो जाते हैं। ग्राफिक का आकार और स्थिति वर्ड डॉक्यूमेंट के भीतर ही पृष्ठ पर दोबारा व्यवस्थित किया जा सकता है। किंतु जब वर्ड में ग्राफिक का संपादन किया जाता है तो सूचना समाप्त हो जाती है। इसलिए, यदि आप टैक्स्ट/तालिका के शीर्षकों अथवा लेबलों को बदलना चाहते हैं या अन्य फॉर्मेटिंग करना चाहते हैं तो उसे भाग 32.3 में दी गई जानकारी के अनुसार एस.पी.एस.एस. आउटपुट व्यूअर विंडो में करना ही बेहतर रहेगा।

एकाधिक मदों को शामिल करना (Pasting Multiple Items) : एकाधिक मदों को शामिल करने के लिए सबसे पहले चरण-1 में बताई गई विधि के अनुसार एकाधिक मदों को चयनित कीजिए और फिर चरण-2 में बताई गई विधि के अनुसार उन्हें कॉपी कीजिए, वर्ड विंडो के मेन्यू बार से Edit → Paste कमांड को चयनित कीजिए। चयनित की हुई मदें विंडो क्लिपबोर्ड से वर्ड डॉक्यूमेंट में सामग्री शामिल किए जाने वाले स्थल पर कॉपी हो जाएगी।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चूँकि पाठ मदें (Text items) Formatted text के रूप में कॉपी की हुई होंगी इसलिए आप पाठ मदों को संपादित कर सकते हैं। किंतु प्रत्येक तालिका और/अथवा आरेख मद को अलग-अलग वस्तु (पिक्चर) के रूप में पेस्ट करना होगा। प्रत्येक वस्तु (पिक्चर) के आकार और स्थिति को वर्ड डॉक्यूमेंट के पृष्ठ पर दोबारा व्यवस्थित किया जा सकता है। किंतु जब ग्राफिक को वर्ड में संपादित किया जाता है तो सूचना समाप्त हो जाती है। इसलिए, यदि आप टैक्स्ट/तालिका के शीर्षकों अथवा लेबलों को बदलना चाहते हैं या अन्य फॉर्मेटिंग करना चाहते हैं तो उसे भाग 32.3 और 32.3 में दी गई जानकारी के अनुसार एस.पी.एस.एस. आउटपुट व्यूअर विंडो में करना ही बेहतर रहेगा।

अभ्यास 31.4

भाग 31.5 में यह व्याख्या की गई है कि आपकी रिपोर्ट में एस.पी.एस.एस. द्वारा बनाई गइ मदों को एम.एस. वर्ड में किस प्रकार कॉपी किया जाता है। निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए :

एस.पी.एस.एस. से वर्ड डॉक्यूमेंट में एस.पी.एस.एस. को कॉपी करने के तीन प्रमुख चरण क्या हैं?

मान लीजिए आप एस.पी.एस.एस. आउटपुट विंडो से वर्ड डॉक्यूमेंट में आरेख को कॉपी करना चाहते हैं। इसके लिए आप किन चरणों को अपनाएँगे?

31.6 निष्कर्ष

एस.पी.एस.एस. सांख्यिकीय प्रक्रियाओं का इस्तेमाल करते हुए आपने जिन पाठों, तालिकाओं और आरेखों का अपनी रिपोर्ट में प्रस्तुतीकरण किया है, वह बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसका कारण यह है कि इससे आपकी रिपोर्ट अपेक्षाकृत अधिक पठनीय, विश्लेषणात्मक और पाठक/श्रोता को बेहतर तरीके से समझ में आने योग्य हो सकेगी। आँकड़ों का आरेखीय प्रस्तुतीकरण (graphical presentation), सूचना को और बेहतर ढंग से विश्लेषित करने का एक उपयोगी तरीका है। एस.पी.एस.एस. का इस्तेमाल करके आप कई प्रकार के आरेख बना सकते हैं। इस इकाई में हमने आपको यह बताया है कि आप सरल वृत्ताकार आरेख और दंड आरेख को कैसे बना और संपादित कर सकते हैं। आपके शब्द संसाधक (वर्ड प्रोसेसर) प्रोग्राम की भाँति एस.पी.एस.एस. में भी अधिक निर्देश (कमांड) बहुत सरल, अंतर्क्रियात्मक और नियमित प्रकृति के हैं। अन्य आरेखों को बनाने की कोशिश करके आप एस.पी.एस.एस. प्रोग्राम में दक्ष हो सकते हैं।

आउटपुट व्यूअर विंडो का इस्तेमाल करते हुए आप अपनी तालिकाओं को संपादित कर सकते हैं और उसे आकर्षक बनाने के लिए उसमें सुधार कर सकते हैं। आप तालिकाओं के क्रम को बदल सकते हैं, नए पाठ को शामिल कर सकते हैं, मदों को हटा अथवा जोड़ सकते हैं और उनको एम.एस. वर्ड में अपने रिपोर्ट डॉक्यूमेंट में कॉपी भी कर सकते हैं। ड्राफ्ट व्यूअर विंडो का इस्तेमाल करने और सुधारने के लिए क्रियाविधि को चलाने से पहले आपको अपनी आवश्यकता के अनुसार, पहले से ही निर्धारित टेबललुक को बदलने का विकल्प अपनाना होगा। पिवेट टेबल अपेक्षाकृत अधिक अंतर्क्रियात्मक होती हैं। प्रधान तालिकाओं (पिवेट टेबलों) की सहायता से आप तालिकाओं में प्रयुक्त सांख्यिकीय शब्दों की परिभाषा तक पहुँच सकेंगे। इससे सांख्यिकी परिणामों की व्याख्या करने में मदद मिलेगी। पंक्तियों और कॉलमों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर तालिकाओं को दोबारा संपादित करने, पंक्तियों और कॉलमों की क्रम-व्यवस्था को बदलने, सैलों को दर्शाने अथवा छिपाने, कॉलमों और पंक्ति लेबलों को समूह बनाकर या हटाकर आप तालिकाओं को दोबारा फॉर्मेट भी कर सकते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

एस.पी.एस.एस. आउटपुट व्यूअर ने आपके एम.एस. वर्ड डॉक्यूमेंट में पाठ/तालिका/आरेख को कॉपी करने से संबंधित भाग से आपको अपने परिणामों की कॉपी को दोबारा टाइप न करके अपनी रिपोर्ट में सीधे शामिल करने में मदद मिलेगी। इससे आपके समय की काफी बचत होगी और आपकी रिपोर्ट में टाइप से होने वाली गलतियों में भी कमी आएगी।

आप इस बात का ध्यान रखें कि एस.पी.एस.एस. में आधारभूत से लेकर उन्नत किस्म की कई सांख्यिकीय क्रियाविधियाँ हैं। हमने उन सभी क्रियाविधियों के बारे में आपको नहीं बताया है। इसका मूल कारण यह है कि विद्यार्थियों को केवल एस.पी.एस.एस. के बारे में परिचित कराना ही इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य है।

31.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Davis, J. 1984. Data into Text. IN R.F. Ellen (ed.) *Ethnographic Research: A Guide to General Conduct*. Academic Press: London, pp.295-318 (विशेष रूप से भाग 9.4 से 9.4.5, पृष्ठ 308 से 314)

इकाई 32
सारणीयन और ग्राफिक प्रस्तुतीकरण — केस अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

32.1 प्रस्तावना

32.2 शोध परिणामों के प्रस्तुतीकरण के लिए संरचना

32.3 आँकड़ा प्रस्तुतीकरणः संपादन, कोडीकरण और लिप्यंतरण

32.4 केस अध्ययन

32.5 कंप्यूटर सॉफ्टवेयर के माध्यम से गुणवत्तापरक आँकड़ा विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण

32.6 अनुसंधान के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के आई.सी.टी.

32.7 निष्कर्ष

32.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह अपेक्षा की जाती है कि इकाई 32 को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के बारे में समझ सकेंगे :

- शोध परिणामों के प्रस्तुतीकरण के लिए सामान्य संरचना;
- शोध परिणामों के प्रस्तुतीकरण में आई.सी.टी. की भूमिका;
- केस अध्ययन के द्वारा आई.सी.टी. उपकरणों का अनुप्रयोग; तथा
- रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण के विभिन्न चरण।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

32.1 प्रस्तावना

इकाई 31 में हमने रिपोर्ट लेखन, ग्राफ बनाने तथा उन्हें संपादित करने के साथ-साथ एकचर (univariable), द्विचर (bivariate) और बहुचर (multivariate) सांख्यिकी का इस्तेमाल करते हुए आँकड़ों को विश्लेषित करने में एस.पी.एस.एस. की प्रमुख विशेषताओं की चर्चा की है। इकाई 32 में हम सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (Information and Communication Technology – ICT) की सहायता से रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण की संरचना की चर्चा करेंगे।

हम अच्छी गुणवत्ता वाले आँकड़ों के विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण के श्रव्य (ऑडियो) और सॉफ्टवेयर की सहायता से शोध परिणामों के कुछ केस-उदाहरण भी प्रस्तुत करेंगे। इन उदाहरणों से आपको प्रक्रिया समझने में मदद मिलेगी। कृपया ध्यान दीजिए कि इकाई 32 व्यावहारिक अभ्यास वाली है और इसमें अनेक ग्राफिक्स हैं। इन केस-उदाहरणों से आपको आई.सी.टी. उपकरणों का इस्तेमाल करने की प्रक्रिया को समझने के कई अवसर प्राप्त होंगे। इस कारण इस इकाई में अनुपूरक सामग्री उपलब्ध कराने वाला कोई भी बॉक्स नहीं है। इस इकाई में आपको कोई अभ्यास करने की आवश्यकता भी नहीं होगी क्योंकि आपको अपने शोध परिणामों को प्रस्तुत करने के लिए नए उपकरणों को लागू करने की कला में निष्णात बनाने के लिए प्रत्येक केस-अध्ययन का अनुसरण करने का प्रयास करना होगा।

32.2 शोध परिणामों के प्रस्तुतीकरण के लिए संरचना

अपनी शोध परियोजना को लिखने के लिए आपको जिस प्रकार का लेखन-कार्य करना है, उसके आपको वर्तमान प्रकाशनों के लेखन – शैली, आकार और ढाँचे को ध्यान से

देखना जरूरी है। शोध परिणामों को कंप्यूटर के द्वारा प्रस्तुत करने में निम्नलिखित संरचना आपके लिए सहायक सिद्ध होगी :

शोध परियोजना प्रस्तुतीकरण के लिए संरचना

(1) सार	(2) अनुसंधान की पृष्ठभूमि	(3) संबंधित सामग्री की समीक्षा
(4) शोध पद्धतियाँ	(5) शोध परिणाम	(6) विश्लेषण
(7) चर्चा	(8) निष्कर्ष	(9) सारांश और सुझाव
(10) संदर्भ	(11) शब्दावली	(12) परिशिष्ट (appendix)

चित्र 32.1 : शोध परियोजना रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण की संरचना

अपने शोध परिणामों को प्रस्तुत करने से पहले आपको निम्नलिखित के बारे में जाँच कर लेनी चाहिए :

- कंप्यूटर की उपलब्धता और उपयुक्तता
- **बिजली के प्वाइंट की उपलब्धता**
- **सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर के बारे में जानकारी**
- **यदि आवश्यक हो तो आप तकनीकी सहायता प्राप्त करें**
- **आँकड़े एकत्रित करने के साधन की जाँच**
- एकत्रित आँकड़ों का भली प्रकार से भंडारण (storage) करने और उनमें सुधार करने की प्रणाली (retrieval system) सुनिश्चित करना आदि।

आपके शोध परिणामों का प्रस्तुतीकरण आपके अपेक्षित लक्ष्य समूह (intended target group) पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, शोध पत्रिकाओं और अन्य पत्रिकाओं के लिए शोध-पत्र अथवा आलेख को पुस्तक के अध्यायों अथवा अंतिम अनुसंधान रिपोर्ट की तुलना में अलग तरीके के फॉर्मेट में प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए अपने शोध परिणामों को प्रस्तुत करने के आरूप के बारे में आपको स्वयं ही निर्णय लेना होगा। अपने विषय-क्षेत्र के बारे में अनुसंधान रिपोर्ट की संरचना के बारे में जानने के लिए आप इंटरनेट पर http://www.sociology.org.uk/rrocr1.pdf वेबसाइट देख सकते हैं।

32.3 आँकड़ा प्रस्तुतीकरण : संपादन, कोडीकरण और लिप्यंतरण

विशुद्ध अनुसंधान परिणामों को प्रस्तुत करने के लिए संपादन, कोडीकरण और लिप्यंतरण की प्रक्रिया बड़ी महत्वपूर्ण होती है। यदि प्राथमिक आधार आँकड़ों (अर्थात प्रश्नावली) द्वारा शोध-अध्ययन किया जाता है तो निम्नलिखित चरण बहुत महत्वपूर्ण हैं :

- अशुद्धियों और संपूर्णता के लिए प्रत्युत्तरों को भली प्रकार से छाँटा जाना चाहिए
- जिन व्यक्तियों के उत्तर ठीक अथवा सामान्य नजर नहीं आते हैं उनके उत्तरों की वैधता के लिए उनसे दोबारा संपर्क करना
- आँकड़ों को प्रविष्ट करने के लिए खुले प्रश्नों को भली प्रकार से वर्गीकृत किया जाए अथवा उन पर सही नंबर लिखे जाएँ और गुणवत्तापरक तथा मात्रात्मक प्रश्नों के उत्तर कोडीकृत हों

सर्वेक्षण अनुसंधान से संबंधित खंड 6 की इकाइयों में विस्तार से यह बताया गया है कि इन पक्षों पर कैसे काम किया जाता है।

MAADHYAM IAS

मूल आँकड़ों का संपादन करना बड़ा जटिल कार्य है। वास्तविकता यह है कि इसके लिए बड़े कौशल और अनुभव की आवश्यकता होती है। आँकड़े पूर्ण, सुसंगत, विशुद्ध और समरूप होने चाहिए। मूल आँकड़ों को प्रस्तुत करने के लिए कुछ प्रमुख चरण इस प्रकार हैं

क) **संपूर्ण आँकड़े (Complete data)**: आपको यह देखना होगा कि क्या प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दिया गया है अथवा नहीं। यदि कुछ प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए गए हैं तो आपको वहाँ यह लिखना होगा कि 'बताया नहीं' (Not reported - NR)।

ख) **सुसंगत आँकड़े (Consistent data)**: आपको यह देखना होगा कि प्रश्नों के उत्तरों में कोई विरोधाभास न हो। यदि उत्तरों में विरोधाभास है तो आपको प्रश्नावली को दोबारा देखकर या फिर व्यक्ति-विशेष से दोबारा संपर्क करके सही उत्तर प्राप्त करना होगा।

ग) **विशुद्ध आँकड़े (Accurate data)**: यदि आँकड़े सही नहीं हैं तो उनमें सुधार किया जाना चाहिए। किंतु प्रत्यर्थियों द्वारा बताई गई आय और आयु-वर्ग जैसे कई मामलों में आँकड़ों में सुधार करना बड़ा कठिन होता है। ऐसी स्थिति में हमें उन्हीं आँकड़ों को स्वीकार करना होगा जो प्रत्यर्थियों ने उपलब्ध कराए हैं।

घ) **समरूप आँकड़े (Homogenous data)**: आपको यह देखना होगा कि प्रत्यर्थियों ने जो आँकड़े उपलब्ध कराए हैं वे समरूप हों। यदि ऐसा नहीं है तो उनकी तुलना नहीं की जा सकेगी।

अब आपको यह पता चल गया है कि आँकड़े किस प्रकार एकत्रित और संपादित किए जाते हैं। इस इकाई के अगले भाग में हम शोध परिणामों के प्रस्तुतीकरण के कुछ केस और उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। इनमें से कई केसों को इंटरनैट और डिजिटल माध्यम के साथ कंप्यूटर की सहायता से प्रस्तुत किया गया है।

32.4 केस अध्ययन

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

केस 1 : प्रश्नावली कोडीकरण

निम्नलिखित बॉक्स 'हरियाणा के ग्रामीण लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति' (The Socio-Economic Profile of Rural People of Haryana) पर अध्ययन करने के लिए तैयार की गई प्रश्नावली के उत्तरों को दर्शाता है। प्रश्नावली कोड पहचान संख्या 0412 है। आँकड़ों को सुविधाजनक ढंग से प्रविष्ट करने के लिए चुने गए व्यक्तियों को चार अंकों की संख्या में प्रस्तुत किया गया है। पहली संख्या (04) जिला कोड अर्थात् कुरुक्षेत्र को दर्शाती है। अगले दो अंक अर्थात 1 और 2 तहसील और गाँव के कोड को दर्शाती है। प्रश्नावली के साथ कोष्ठक में दिए गए अंक, प्रश्नों के कोडीकरण को दर्शाते हैं।

इस प्रश्नावली को इसलिए तैयार किया गया है ताकि आपको कोडीकरण के बारे में मोटी जानकारी प्राप्त हो जाए। यह केवल प्रश्नावली के एक भाग से संबंधित है।

प्रश्नावली

प्रश्न कोड	0	4	1	2

हरियाणा के ग्रामीण लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति

प्र.1 परिवार के सदस्य: (क) 3-4 (1), (ख) 5-6 (2), (ग) 7-8 (3), (घ) 9-10 (4), (च) 10 से अधिक (5)

प्र.2 आयु वर्ग : (क) 20 से कम (1), (ख) 20-25 (2), (ग) 26-30 (3), (घ) 31-35 (4), (च) 36-40 (5), (छ) 41-50 (6), (ज) 50 से अधिक (7)

प्र.3 लिंग : (क) पुरुष (1) (ख) महिला (2)

चित्र 32.2 : प्रश्नावली कोडीकरण

इन आँकड़ों का कोडीकरण करने के बाद आपको इसे तालिका (तालिका 32.1 देखिए) और ग्राफ के आरूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। आपको इन आँकड़ों को स्प्रैड शीट में डालना होगा और कुछ बटनों को दबाने के बाद विभिन्न प्रकार के चार्टों और ग्राफों में से सबसे अच्छे लगने वाले चार्ट और ग्राफ में इन आँकड़ों को प्रस्तुत करना आपके लिए संभव हो सकेगा (चित्र 32.3 देखिए)। उदाहरण के लिए कंप्यूटर के एक्सैल प्रोग्राम में कॉलम, बार, लाइन, पाई और अन्य प्रकार की प्रस्तुतियाँ संभव हैं जिनकी सहायता से चार्ट-ग्राफ आदि तैयार कर सकते हैं और उसे रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण में इस्तेमाल कर सकते हैं।

प्रश्नावली आँकड़ों का कोडीकरण

प्रश्न कोड	प्र.1	प्र.2	प्र.3
0412	2	4	1
0413	3	3	0
0414	4	3	2
0415	1	3	1
0416	1	1	2
0417	3	3	1
0418	4	3	1
0419	5	0	2
0420	4	3	0
0421	3	3	2
0422	2	3	1
..	1	4	2
..	4	4	1
..	3	3	1
..	1	4	1
..	1	1	2
N=(230)	230	230	230

चित्र 32.3 : प्रश्नावली आँकड़ों का कोडीकरण

तालिका 33.1 : प्रत्यर्थियों का लिंगानुसार विभाजन

लिंग	संख्या	प्रतिशत
0	4	1.73
1	82	35.49
2	144	64.01
कुल	230	100.00

अब आप कोडीकरण को शब्दों में बदल सकते हैं और आपकी अंतिम तालिका कुछ इस प्रकार होगी :

तालिका 32.2 : प्रत्यर्थियों का लिंगवार विभाजन

लिंग	संख्या	प्रतिशत
कोई उत्तर नहीं	4	1.73
पुरुष	82	35.49
महिला	144	64.01
कुल	230	100.00

इसी प्रकार, उंपर्युक्त परिणामों को आप वृत्तारेख (Pie diagram) में निम्न प्रकार से प्रस्तुत कर सकते हैं :

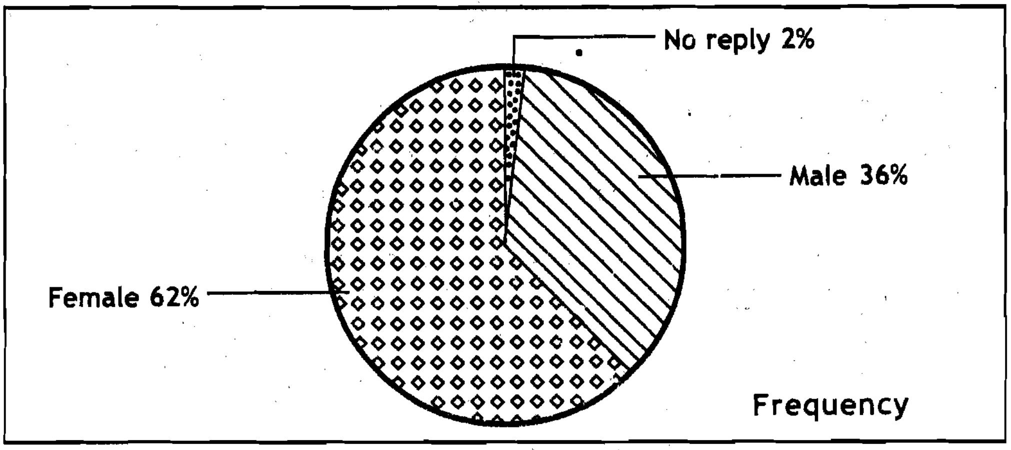

तालिका 32.4 : प्रत्यर्थियों का लिंगवार विभाजन

विण्डोज़ से आँकड़ों को क्लिपबोर्ड की सहायता से आपके कंप्यूटर में आपकी रिपोर्ट में डाला जा सकता है। जब आप एक्सैल से वर्ड में आँकड़े डाल रहे हैं तो वे आँकड़े बेसिक वर्ड टेबल के रूप में पहले से आरूपण किए हुए होते हैं जिसके आकार को आप घटा अथवा बढ़ा सकते हैं। एक्सैल से ग्राफ को क्लिपबोर्ड की सहायता से कट और पेस्ट का इस्तेमाल करते हुए उसे आप अपनी रिपोर्ट में डाल सकते हैं।

केस-II : कैसेट के द्वारा आँकड़े एकत्रित करना और उनका प्रस्तुतीकरण

हम यहाँ कैसेट के द्वारा आँकड़े एकत्र करने और उन्हें प्रस्तुत करने से संबंधित अपने अनुभव को प्रस्तुत कर रहे हैं। अपनी शोध के लिए हमने बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने वाले साठ विद्यार्थियों का साक्षात्कार लिया। प्रत्यर्थियों के फोन नंबर प्राप्त किए और उनसे संपर्क करने के बाद उनके घरों में जाकर आमने-सामने बैठकर उनका साक्षात्कार रिकॉर्ड किया। उनसे संपर्क करने के बाद हम उनकी सुविधा के अनुसार उनके घरों में गए और पहले से ही तैयार की गई साक्षात्कार अनुसूची के अनुसार उनके उत्तरों को रिकॉर्ड कर लिया।

हमने उनके उत्तरों को टेपरिकॉर्डर की सहायता से रिकॉर्ड किया और उन उत्तरों का अनुवाद लगभग पचास पृष्ठों में किया। एक साक्षात्कार लगभग एक पृष्ठ में लिप्यंतरित (transcript) हुआ। इन साक्षात्कारों के लिप्यंतरण में हमने अनेक कठिनाइयाँ अनुभव कीं क्योंकि प्रत्येक प्रत्यर्थी ने साक्षात्कार अनुसूची से संबंधित मुद्दों पर तो बातचीत की किंतु निश्चित क्रम में नहीं।

आँकड़ों को लिप्यंतरित करने के बाद हमने टेपों शायद ही दोबारा सुना। मूल लिप्यंतरित संस्करण में साक्षात्कारकर्ता की झिझक, खांसी और व्यक्तिगत तथा अप्रासंगिक चर्चा भी दर्शाई होती है। हालाँकि परिणामों के अंतिम प्रस्तुतीकरण में इनका इस्तेमाल नहीं किया जाता है, फिर भी हमने टेप दोबारा सुनें तो कुछ भिन्न ही पता चला। गहन अध्ययन के लिए (अथवा स्नातकोत्तर कार्यक्रम के लघु शोध निबंध के लिए) यह गंभीरतापूर्वक विचार करना उपयुक्त रहेगा कि क्या टेप की गई सारी सामग्री को पूरी तरह से लिखना आवश्यक है अथवा नहीं। वैसे अध्ययन के लिए विशेष रूप से जरूरी भागों के लिए उनका अवश्य लिप्यंतरण किया जाए। लिंप्यंतरित की गई सामग्री को रिकॉर्ड की गई सामग्री से मिलाकर देखना चाहिए ताकि उनकी परिशुद्धता, उपयुक्तता और प्राथमिकता का मिलान किया जा सके। रिकॉर्ड किए गए आँकड़े को चार और क्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया जिसे तालिका 32.3 में प्रस्तुत किया जा रहा है :

MAADHYAM IAS

तालिका 32.3 : बीच में ही पढ़ाई छोड़ने के कारक

स्थितिपरक कारक	चित्तवृत्ति संबंधी कारक
• कार्यालय में काम का दबाव (5)	• सी.आई.सी. कार्यक्रम को द्वितीय प्राथमिकता (1)
• पारिवारिक उत्तरदायित्व (3)	• जब अपने से छोटे कक्षाओं में जाते हों तो कक्षाओं के दौरान स्वयं को हीन भावना से ग्रस्त महसूस करना (1)
• प्रैक्टिकल कक्षाओं का समय अनुकूल नहीं (2)	• परीक्षा तालिका के बारे में जानकारी नहीं होना (1) संस्थागत कारक पाठ्यक्रम से संबंधित कारक
• विवाह हो जाना (3)	
• एक ही तिथि में अलग-अलग परीक्षाएँ होना (9)	
• परीक्षा के समय तबियत ठीक न होना (1)	
• अन्य कार्यक्रम में प्रवेश (4)	
• पति का स्थानांतरण (1)	
स्थितिपरक कारक	**चित्तवृत्ति संबंधी कारक**
• विस्तृत परिवार के कारण (1)	
• हाल टिकट न मिलना (1)	• पाठ्यक्रम सरल था (1)
• अध्ययन केंद्र बदल गया (5)	• पाठ्यक्रम मुश्किल था (1)
• कक्षाओं के बारे में क्षेत्रीय केंद्र से कोई जानकारी नहीं (4)	• भाषा मुश्किल थी (1)

स्रोत : पांडा और अन्य (2004) **स्टडी ऑन प्रोग्राम कम्पलीशन एंड लर्नर परसिस्टेंस एंड ड्रॉपआउट इन डिस्टेंस एडूकेशन,** इग्नू, नई दिल्ली

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

केस-III : ऑनलाइन केस अध्ययन

व्यक्तियों को ई-मेल भेजकर या फिर वेब पृष्ठ पर प्रश्नावली डालकर भी आभासी (virtual) माध्यम से शोध कार्य किया जा सकता है। इस पद्धति से जल्दी प्रतिपुष्टि (feedback) प्राप्त हो जाती है और भौगोलिक रूप से दूर रह रहे प्रत्यर्थियों तक तुरंत पहुँच पाना संभव होता है। इसके अलावा, ऑनलाइन साक्षात्कार और ई-मेल संदेशों से सभी साक्षात्कारों और पत्र-व्यवहारों को 'अपने आप पाठ रूप में प्रस्तुत करना' (automatic text transcripts) भी संभव होता है।

निम्नलिखित उदाहरणों में आप देखेंगे कि शोध आँकड़ों को किस प्रकार आभासी (virtual) अथवा डिजिटल माध्यम से प्रस्तुत किया गया है :

चित्र 32.5 : शोध परिणामों का आभासी माध्यम के द्वारा प्रस्तुतीकरण

चित्र 32.6 : इंटरनैट के द्वारा आँकड़ों को संपादित करता हुआ शोधार्थी

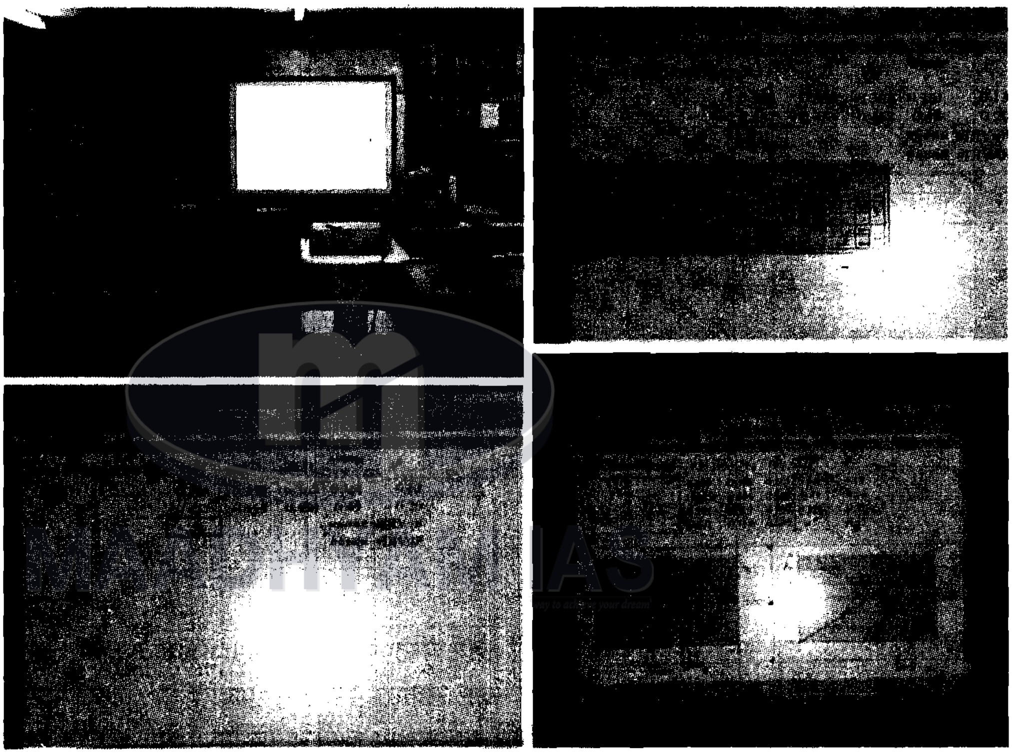

चित्र 32.7: मल्टी मीडिया के माध्यम से शोध निष्कर्षों का प्रस्तुतीकरण

शोध प्रस्तुतीकरण के उपर्युक्त माध्यमों के अलावा, आप सॉफ्टवेयर/सी.डी.रॉम का इस्तेमाल करते हुए स्व-निर्देशित अध्ययन (self-paced learning) और स्व-मूल्यांकन (self-assessment) कर सकते हैं।

केस-IV : शोध परिणामों का सी.डी.रॉम में प्रस्तुतीकरण

हमने सी.डी.रोम में आँकड़ों का विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण का केस अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस इकाई के साथ हम आपको एक सी.डी. दे रहे हैं जिसमें आप देखेंगे कि आँकड़ों को किस प्रकार कोडीकृत किया जाता है, उनका विश्लेषण किस प्रकार किया जाता है और उन्हें किस प्रकार सी.डी. में प्रस्तुत किया जाता है। शोधार्थी ने 'Pre-Testing Self-Instructional Material' (पूर्व-जाँच स्व-निर्देशात्मक सामग्री) पर शोध-अध्ययन किया है। शोधार्थी ने दस प्रत्यर्थियों से रू-ब-रू प्रतिपुष्टि (feedback) प्राप्त की, उसका विश्लेषण किया और अपने आँकड़ा शोध परिणामों को प्रस्तुत किया।

इसके अलावा, आप पॉवर प्वाइंट और इंटरेक्टिव व्हाइटबोर्ड (interactive whiteboard) का इस्तेमाल करते हुए भी अपने प्रयोग आँकड़ों अथवा शोध परिणामों को प्रस्तुत कर सकते

हैं। आप वेब का इस्तेमाल करते हुए शोध आँकड़ों को एकत्र कर सकते हैं और उन्हें प्रचारित (disseminate) भी कर सकते हैं। किंतु अपने शोध परिणामों की इंटरनेट द्वारा प्रस्तुतीकरण के लिए आपको इंटरनेट और अनुसंधान कौशल से सम्पन्न होना चाहिए।

32.5 कंप्यूटर सॉफ्टवेयर के माध्यम से गुणवत्तापरक आँकड़ा विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण

एक्सैल (Excel), एस.पी.एस.एस. (SPSS) और एस.ए.एस.(SAS) के अलावा, अन्य सॉफ्टवेयर पैकेज भी उपलब्ध हैं जिन्हें गुणवत्तापरक आँकड़ा विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। जैसे, गुणवत्तापरक आँकड़ा विश्लेषण के लिए कंप्यूटर-साधित पद्धतियाँ (computer-aided methods for qualitative data analysis –CAQDAS)। सी.ए.क्यू.डी.ए.एस. में NUD-IST (non-numerical, unstructured data indexing-searching theorizing) और 'नए तथा कल्पनाशक्ति सम्पन्न कंप्यूटर सॉफ्टवेयर अनुप्रयोग' (ATLAS.ti) जैसे दो प्रोग्राम हैं। इन प्रोग्रामों का उद्देश्य अनुसंधान अध्ययन में आँकड़ों का गुणात्मक विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण करना है। इन प्रोग्रामों को गहन अनुसंधान अध्ययन (जिसमें साक्षात्कार आँकड़े सीमित होते हैं) तक में इस्तेमाल में लाया जा सकता है। आप इस सॉफ्टवेयर को http://www.scolari.co.uk से निःशुल्क डाउनलोड कर सकते हैं।

NUD-IST (non-numerical, unstructured data indexing-searching theorizing): इस प्रोग्राम में अपेक्षाकृत अधिक जटिल विशेषताएँ हैं। उपयोगकर्ता के इस सॉफ्टवेयर से परिचित होने के साथ-साथ इन जटिल विशेषताओं को सीखा अथवा नजरअंदाज किया जा सकता है। मूल-पाठ विषयक आँकड़ों को NUD-IST में अलग डॉक्यूमेंट के रूप में डाला जाता है। इन आँकड़ों को कोडीकृत किया जाता है ताकि आँकड़ों का रूप प्राप्त कर सकते हैं। इस श्रेणी (अथवा कोड) में सभी आँकड़ों में सुधार किया जा सकता है और उन्हें अलग डॉक्यूमेंट का रूप दिया जा सकता है। और अधिक विवरण के लिए आप इस सॉफ्टवेयर का introductory tutorial (प्रारंभिक शिक्षकीय) पढ़ सकते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

विनमैक्स (WinMax) : कुछ पैकेज, कंप्यूटर में सीधे डाले जा सकते हैं जबकि कुछ पैकेज इम्पोर्टिड फाइलों के साथ ही काम करते हैं। कुछ पैकेजों में शामिल की जाने वाली बाहरी फाइलों में वीडियो और अन्य सामग्री को इंडैक्स करना पड़ता है। इससे कार्यक्रम अपेक्षाकृत अधिक जटिल हो जाता है। 'विन मैक्स' के उपयोगकर्ताओं के लिए अपेक्षाकृत अधिक सरल प्रोग्राम है। इसे सीखना सरल है। इसका टेक्स्ट फाइलों पर कोड-और-रिट्राइव (code-and-retrieve) कार्य-संचालन से सीधे इस्तेमाल किया जा सकता है। साथ ही, आधारभूत सिद्धांत के अपेक्षाकृत अधिक जटिल दृष्टिकोणों और केस-उन्मुखी परिमाणन (case oriented quantification) के लिए भी इस प्रोग्राम को सीधे इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे आपको गुणवत्तापरक और मात्रात्मक आँकड़ों पर साथ-साथ काम करने में भी मदद मिलेगी।

ATLAS.ti : यह एक नया और कल्पनाशक्ति सम्पन्न कंप्यूटर सॉफ्टवेयर अनुप्रयोग है। इससे पाठ को पढ़ा जा सकता है और उसका विश्लेषण किया जा सकता है। पाठ का साक्षात्कार लिप्यंतण हो सकता है। आपको अतिरिक्त कोडिंग जोड़नी होगी ताकि तुलनात्मक अध्ययन के लिए इसे सरलता से श्रेणीबद्ध किया जा सके अथवा कोड शॉर्ट और लांग टैक्स्ट सेगमेंटस कर सकें। और अधिक जानकारी के लिए आप www.atlasti.de/demo.shtml वेबसाइट देखिए। आप टेप पर रिकॉर्ड किए गए साक्षात्कार आँकड़ों के परिणामों को भी प्रस्तुत कर सकते हैं। इस सॉफ्टवेयर की सहायता से आप ऑडियो के लिप्यंतरित पाठ का विश्लेषण भी कर सकते हैं।

CAQDAS : इस प्रोग्राम की सहायता से अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध आँकड़ों का विश्लेषण किया जा सकता है। इस प्रोग्राम की यह विशेषता है कि आँकड़ों का कोडीकरण और सुधार बहुत तीव्र गति से और प्रभावी ढंग से होता है।

32.6 अनुसंधान के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के आई.सी.टी.

खंड 8 की पिछली इकाइयों में आपने सामाजिक विज्ञान अनुसंधान में सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों (Information and Communication Technologies - ICTs) के बारे में पढ़ा है। इकाई के इस भाग में आप शोध कार्यों में इस्तेमाल होने वाली विभिन्न प्रकार की सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के बारे में पढ़ेंगे। ये हैं :

- ऑनलाइन सर्वेक्षण (Online survey)
- ई-मेल अथवा कंप्यूटर-माध्यम कॉन्फ्रेंसिंग के द्वारा खुले अथवा पाठ-आधारित पूर्व-निर्धारित साक्षात्कार आयोजित करना
- रियल टाइम नेट-आधारित वीडियो, ऑडियो कॉन्फ्रेंसिंग अथवा एसिंक्रोनस (asynchronous) कंप्यूटर कॉन्फ्रेंसिंग का इस्तेमाल करते हुए समूहों पर फोकस
- नेट-आधारित टेलीफोन साक्षात्कार
- अध्ययन अथवा सामाजिक कार्यकलापों के पाठ लिप्यंतरणों (text transcripts) का विश्लेषण
- आभासी यथार्थ परिवेश (virtual reality environments) में समाज व्यवहार का विश्लेषण
- ऑनलाइन मूल्यांकन और/अथवा कार्य-निष्पादन अथवा ज्ञान का मूल्यांकन, वेब कैम (Online assessment and/or evaluation of performance or knowledge, web cams)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

शोधार्थी अपने विचारों को विभिन्न प्रकार की सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी.) के द्वारा प्रस्तुत कर सकता है और शोध कार्यों में इस्तेमाल के लिए पूर्ण संसाधन बनने के लिए अपने विचार विकसित कर सकता है। आई.सी.टी. शोधार्थी को चर्चा में शामिल होने में भी सहायक होता है ताकि शोधार्थी अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सके और सहयोगात्मक शोध कार्यों (collaborative research activities) में शामिल हो सके। उदाहरण के लिए, DEOS-L@LISTS.PSU.EDU। आप अपने शोध-परिणामों को आई.सी.टी. के उपयुक्त माध्यम में प्रस्तुत कर सकते हैं ताकि श्रोता-दर्शक अपनी पसंद के फॉर्मेटों में इंटरनेट पर पूरे पाठ को देख-पढ़ सकें।

आपके शोध-परिणामों के विश्लेषण और प्रस्तुतीकरण के लिए पहले से ही तैयार (ready made) प्रोग्राम/सॉफ्टवेयर नहीं हैं। उस समय कई बातों को ध्यान में रखना पड़ता है जब यह मिलान किया जा रहा हो कि आपके शोध अध्ययन और आँकड़ा-आधार (डाटाबेस) के प्रकार के लिए कौन-सा सॉफ्टवेयर सबसे अधिक उपयुक्त है।

सही प्रोग्राम का चुनाव डाटाबेस के आकार पर निर्भर करता है। यदि आपने केवल चार-पाँच लोगों का ही साक्षात्कार लिया है और पाठ को लिप्यंतिरत किया है तो CAQDAS प्रोग्राम अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होगा। यह पैकेज, काफी अधिक मात्रा में आँकड़ों को विभिन्न फाइलों में अपेक्षाकृत अधिक तेजी से निपटा सकता है। जबकि अगर आप स्वयं उसी काम

को करें तो ज्यादा समय लगेगा। इस सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल करने के लिए कम से कम 15 केस होने चाहिए। यदि दस्तावेजों, अवलोकनों, प्रश्नावलियों और ऑडियो-वीडियो जैसे अनेक स्रोतों से सामग्री एकत्रित की गई है तो कुछ सॉफ्टवेयर कुछ विशिष्ट प्रकार के आँकड़ों पर कार्रवाई कर सकते हैं जबकि सभी प्रकार के आँकड़ों पर नहीं। कुछ पैकेजों में मूल-पाठ आँकड़ा आधार (टैक्स्ट डाटाबेस) में संशोधन करना सरल होता है जबकि अन्य पैकेजों संशोधन करने में ज्यादा समय लगता है। उदाहरण के लिए, CAQDAS से इम्पोर्ट की गई फाइल में कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इसके लिए वर्ड में परिवर्तन करने होंगे और उसके बाद फाइल को रि-इम्पोर्ट करना होगा।

इसलिए सॉफ्टवेयर का चुनाव आँकड़ा-आधार (डाटाबेस) के आकार, आँकड़ों की प्रकृति (अर्थात पूर्व-निर्धारित अथवा अनिश्चित), शोधार्थी का तकनीकी ज्ञान, समय और लागत पर निर्भर करता है।

इसी प्रकार, आपके शोध परिणामों के प्रस्तुतीकरण के लिए आई.सी.टी. का चुनाव भी इन कारकों और दर्शक-श्रोता वर्ग को उपलब्ध प्रौद्योगिकी-विशेष पर निर्भर करता है।

एडोब रीडर (Adobe Reader) सॉफ्टवेयर द्वारा विभिन्न प्रकार के आधारों और युक्तियों का इस्तेमाल करते हुए आपके शोध दस्तावेज को देखने, प्रिंट लेने और अपेक्षाकृत अधिक सावधानी के साथ शेयर करने में मदद मिलती है। और अधिक जानकारी के लिए आप http://www.adobe.com वेबसाइट देख सकते हैं। कई ऐसे वेब पृष्ठ उपलब्ध हैं जो आपके शोध परिणामों को शामिल करने के लिए मुफ्त स्थान उपलब्ध कराते हैं। उदाहरण के लिए, www.yahoo.com देखिए।

32.7 निष्कर्ष

MAADHYAM IAS

प्रस्तुत विवरणों से आपको अपने शोध परिणामों को विभिन्न प्रकार के सूचना और संचार प्रौद्योगिकी स्रोतों के द्वारा प्रस्तुत करने के उदाहरणों का पता चला। यह चर्चा और सूचना इस मान्यता पर आधारित है कि आपको लेखन कौशल और सांख्यिकीय पैकेज के बारे में मूलभूत जानकारी है। इस इकाई में हमने शोध परिणामों को आई.सी.टी. के द्वारा प्रस्तुत करने और प्रचारित करने के बारे में बताया है। इस इकाई में यह भी बताया गया है कि शोध आँकड़ों को किस प्रकार कोडीकृत किया जाता है, उन्हें कैसे संपादित किया जाता है और किस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है। इसके अलावा, यह भी बताया गया है कि टेपरिकॉर्डर से किस प्रकार आँकड़े प्राप्त किए जाते हैं और उसे पाठ के रूप में किस प्रकार लिप्यंतरित किया जाता है।

32.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Gentleman, Jane F. 2004, *The National Health Interview Survey.* In National Health Interview Surey Presentations of the 2004. Listing of Selected Presentations at http://www.cdc.gov/nchs/howto/events/duc2004/presentations 2004.htm

इकाई 33
शोध परियोजना कार्य के लिए दिशा-निर्देश

इकाई की रूपरेखा

33.1 प्रस्तावना

33.2 अनुसंधान पद्धतियों और विधियों का सिंहावलोकन (एम.एस.ओ-002)

33.3 अनुसंधान परियोजना के उद्देश्य

33.4 अनुसंधान परियोजना के लिए तैयारी

33.5 अनुसंधान परियोजना के चरण

33.6 अनुसंधान परियोजना के दौरान पर्यवेक्षण

33.7 अनुसंधान परियोजना जमा कराना

33.8 अनुसंधान परियोजना मूल्यांकन की प्रविधि

33.9 निष्कर्ष

33.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अध्ययन के उद्देश्य

यह अपेक्षा की जाती है कि इकाई 33 को पढ़ने के बाद आपको एम.एस.ओ-002 के एक सत्रीय कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करने में निम्नलिखित दिशा-निर्देश प्राप्त हो सकेंगे:

- एम.एस.ओ.-002 की पाठ्यक्रम सामग्री का सिंहावलोकन (Overview) प्राप्त करना;
- अनुसंधान परियोजना करने के उद्देश्यों को समझना;
- अनुसंधान परियोजना की योजना बनाने और उसे करने की तैयारी शुरू करना;
- अनुसंधान के विभिन्न चरणों को तैयार करना;
- अनुसंधान के दौरान यदि कोई समस्या आती है तो सहायता प्राप्त करना; तथा
- अनुसंधान परियोजना जमा कराने और उसके मूल्यांकन की प्रविधि के बारे में पता होना।

MAADHYAM IAS

33.1 प्रस्तावना

मुझे आशा है कि आपने खंड 1 में एम.एस.ओ.-002 की प्रस्तावना को पढ़ा होगा। प्रस्तावना में पृष्ठ xii पर बताया है कि एम.एस.ओ.-002 के पहले अध्यापक जाँच सत्रीय कार्य में एम.एस.ओ.-002 की सत्रीय कार्य पुस्तिका में बताए गए विषयों में से किसी एक विषय में क्षेत्र कार्य-आधारित लघु शोध परियोजना पर 5000 शब्दों में एक रिपोर्ट शामिल है। इसके अलावा, आप अपनी पसंद के शोध विषय को भी चुन सकते हैं। इकाई 33 का उद्देश्य आपको अनुसंधान परियोजना सत्रीय कार्य करने के लिए कुछ दिशा-निर्देश देना है। वैसे इस विषय में आप अपने अध्ययन केंद्र के अपने शैक्षिक परामर्शदाता से भी परामर्श कर सकते हैं।

33.2 अनुसंधान पद्धतियों और विधियों का सिंहावलोकन (एम.एस.ओ.-002)

एम.एस.ओ.-002 की पाठ्यक्रम सामग्री के संगठन के बारे में आप खंड 1 में पढ़ चुके हैं। किंतु यहाँ उसे दोहराना उपयोगी रहेगा। इससे आप एम.एस.ओ.-002 की सामग्री का सिंहावलोकन कर सकेंगे और साथ ही आपसे यह भी अपेक्षा की जा सकती है कि

एम.एस.ओ.-002 की पाठ्यक्रम सामग्री में आपने जो कुछ पढ़ा है उसे अब आप व्यवहार में ला सकेंगे। जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, विद्यार्थियों को अपने आसपास के सामाजिक यथार्थ का अच्छा शोधार्थी और जाँचकर्ता बनाना एम.एस.ओ.-002 का उद्देश्य है।

सामाजिक अनुसंधान को वैज्ञानिक ढंग से करने की वैधता में परिप्रेक्ष्य की स्पष्टता अथवा अभिविन्यास का होना शामिल है। इस अभिविन्यास के द्वारा व्यक्ति को तथ्यों को एकत्रित करने संबंधी दिशा-निर्देश शामिल हैं। जहाँ तक परिप्रेक्ष्य की स्पष्टता का संबंध है, यह तभी सार्थक है जब तथ्यों को एकत्रित करने और उनका विश्लेषण/व्याख्या करने के लिए वैज्ञानिक विधियाँ एवं तकनीकें अपनाई जाएँ। इसके बाद तकनीकी ढंग से व्याख्याओं अथवा रिपोर्टों अथवा शोध प्रकाशनों के लिए व्यक्ति द्वारा किया जाने वाले विश्लेषण को लिखना और उसका प्रस्तुतीकरण करना आता है। इस क्रम का पालन करते हुए इग्नू के एम.ए. (समाजशास्त्र) के दूसरे पाठ्यक्रम को जिन तीन खंडों में विभाजित किया गया है, वे हैं :

- **पुस्तक 1, शोध पद्धतियाँ** : पुस्तक 1 में सामाजिक अनुसंधान क्षेत्र में प्रचलित वर्तमान पद्धतियों के दार्शनिक आधारों को खोजना और इनकी अवधारणाओं के बारे में स्पष्ट बोध कराने के लिए अपने विद्यार्थियों द्वारा इनके बारे में आलोचनात्मक ढंग से देखना शामिल है। तीन खंडों में विभाजित इस पुस्तक में कुल ग्यारह इकाइयाँ हैं।
- **पुस्तक 2, मात्रात्मक तकनीक और सर्वेक्षण पद्धतियाँ**: पुस्तक 2 में जिनके अध्ययन के बारे में बताया गया हैं, वे हैं — (क) सामाजिक परिघटना को समझने के एक तरीके के रूप में अनुसंधान पद्धतियाँ; और (ख) एकत्रित किए गए आँकड़ों को सांख्यिकीय और सर्वेक्षण पद्धतियों से एकत्रित करना, उन्हें व्यवस्थित करना और उनका विश्लेषण करना।
- **पुस्तक 3, गुणात्मक पद्धति और शोध निष्कर्षों का प्रस्तुतीकरण**: पुस्तक 3 अनुसंधान की गुणवत्तापरक तकनीकों और अनुसंधान संबंधी निष्कर्षों को लिखने से संबंधित है। इसके अलावा, इसमें समाज वैज्ञानिक शोधार्थियों को अपने अनुसंधान आँकड़ों का विश्लेषण करने और उसे प्रस्तुत करने के लिए उपलब्ध अनुसंधान पद्धतियाँ पाठ्यक्रम के विलक्षण उपकरण के रूप में सूचना प्रौद्योगिकी जैसे अनुप्रयोग के उपकरण को भी शामिल किया गया है।

एम.एस.ओ.-002 की तीन पुस्तकों की इकाइयों को पढ़ने के बाद आप सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न दृष्टिकोणों, पद्धतियों और तकनीकों को आलोचनात्मक ढंग से देखने के बारे में पूरी तरह से परिचित हो गए होंगे। अब आप उस स्थिति में पहुँच गए हैं कि आप भले ही सीमित ही सही, किंतु स्वयं क्षेत्र-कार्य कर सकें। आशा है, इस अध्ययन से आप समाजशास्त्रीय अनुसंधान के यथार्थ जीवन अनुभव के द्वारा जाँचने की भावना से सम्पन्न हो गए होंगे।

33.3 अनुसंधान परियोजना के उद्देश्य

एम.एस.ओ.-002 की तीनों पुस्तकों से प्राप्त अपने ज्ञान का इस्तेमाल करने और कौशल को लागू करने का अवसर प्रदान करना अनुसंधान परियोजना का उद्देश्य है ताकि आप सामाजिक विज्ञान में एम.फिल. और पी-एच.डी. जैसी शोध उपाधियाँ प्राप्त करने और अपने काम के क्षेत्र में सामाजिक विज्ञान अनुसंधान पद्धतियाँ और विधियों का इस्तेमाल कर सकें। अपनी अनुसंधान परियोजना के विषय को ध्यान में रखते हुए आपको तीनों पुस्तकों की विषय-वस्तु को विस्तार से पढ़ना चाहिए। अपने आँकड़े प्राप्त करने के लिए आपको क्षेत्र अनुसंधान करने हेतु उपयोगी सैद्धांतिक आधारों, समुचित विधियों और तकनीकों का गहराई से अध्ययन करना चाहिए। इस प्रक्रिया में, आपको अपनी शोध परियोजना के किसी

MAADHYAM IAS 'way to achieve your dream'

भी चरण में दिक्कतें आ सकती है। आपको इन दिक्कतों को पार पाना होगा और अपने अनुसंधान के निष्कर्षों को पाँच हजार शब्दों में प्रस्तुत करना है। इस मुद्दे पर यानी अनुसंधान परियोजना को तैयार करने के बारे में इस इकाई के अगले भाग में चर्चा की जा रही है।

33.4 अनुसंधान परियोजना के लिए तैयारी

यहाँ हम अनुसंधान परियोजना के प्रमुख चरणों के बारे में संक्षेप में बता रहे हैं। इकाई के अगले भाग में इनके बारे में आप विस्तार से पढ़ेंगे।

i) **नियोजन चरण**

जब आप एम.एस.ओ.-002 के लिए नामांकित हो जाते हैं तभी यह चरण शुरू हो जाता है। यदि आप काम को सुव्यवस्थित ढंग से करेंगे तो आप अपनी अनुसंधान परियोजना में पूरे तौर से जुड़ सकेंगे। आपकी जानकारी के लिए हम यहाँ कुछ वे चरण बता रहे हैं जिनका आपको पालन करना होगा। ये हैं :

क) पूरी अनुसंधान परियोजना के दौरान आप जो कार्य करेंगे और प्रक्रिया अपनाएँगे उसे व्यवस्थित ढंग से दर्ज करने के लिए डायरी अथवा लॉगबुक लिखना शुरू करना।

ख) जब आपको एम.एस.ओ.-002 की अध्ययन सामग्री मिल जाए तो तीनों पुस्तकों को मोटे तौर पर पढ़ने के बाद छह से दस सप्ताह के भीतर अपनी अनुसंधान परियोजना के विषय को पहचानिए और निर्धारित कीजिए।

ग) अपनी डायरी/लॉगबुक में प्रविशिष्टियाँ करना शुरू कीजिए। इससे आपको अपने अनुसंधान के बाद के चरण में मदद मिलेगी।

घ) अपने शैक्षिक परामर्शदाता से परामर्श कीजिए और अपनी शोध करने के लिए उसकी साध्यता (feasibility) पर चर्चा कीजिए।

च) अपने अनुसंधान विषय को बदलने के लिए स्वयं को कुछ हद तक तैयार रखिए। यह परिवर्तन आपके समय और उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखते हुए ही होगा।

छ) आपको जिन समाजविज्ञानियों के बारे में बताया जा चुका है, उनकी पुस्तकों को पढ़ने के लिए अपने घर के आसपास के पुस्तकालयों में जाइए।

अपनी शोध परियोजना को शुरू करने के लिए ये चरण पर्याप्त हैं। अब आप अपने अनुसंधान के दूसरे चरण के लिए तैयार होंगे।

ii) **अनुसंधान परियोजना पर काम करना**

क) द्वितीयक (secondary) आँकड़ों की समीक्षा करते हुए अनुसंधान परियोजना पर एक दृष्टिपात करना।

ख) अपनी अनुसंधान परियोजना के उद्देश्यों के साथ प्रासंगिक सामान्य अवलोकन करना।

ग) यदि कोई है तो केस अध्ययन परियोजना के विवरण

घ) मुख्य कार्यकर्ता/सूचना प्रदान करने वालों/सहभागियों और उनके सामाजिक तंत्रों की पहचान करना।

च) आँकड़े एकत्रित करने और उनका विश्लेषण करने की पद्धति/पद्धतियों को चुनना।

छ) आँकड़ों का विश्लेषण करना।

ज) परिणाम निकालना।

अनुसंधान परियोजना पर काम करने के बाद परियोजना लेखन का चरण आता है। या आ
... आपकी सामग्री को लिखना होगा।

MAADHYAM IAS

iii) **अनुसंधान परियोजना रिपोर्ट**

क) रिपोर्ट को लिखना या टाइप करना

ख) रिपोर्ट के आरूप को चुनना

ग) आँकड़ों और उसके विश्लेषण को प्रस्तुतीकरण के अनुसार व्यवस्थित करना।

अनुसंधान परियोजना के इन तीनों चरणों को पढ़ने के बाद अब आपमें सामाजिक अनुसंधान करने की क्षमता विकसित हो गई होगी। इकाई के अगले भाग में अब हम इन चरणों सहित अनुसंधान के सभी चरणों के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे।

33.5 अनुसंधान परियोजना के चरण

इकाई के इस भाग में अनुसंधान परियोजना के चरणों की चर्चा करने का उद्देश्य आपको दिशा-निर्देश देना है ताकि आप असफलता की आशंका अथवा भय के बिना, व्यवस्थित ढंग से और पूरे आत्म-विश्वास के साथ अनुसंधान कर सकें। आइए अब हम पहले चरण से शुरू करते हैं।

चरण 1 : नियोजन चरण (Planning Stage)

नियोजन चरण में आपको निम्नलिखित चार काम ध्यान से करने होंगे। इससे आपकी अनुसंधान करने संबंधी योजना अच्छी बन सकेगी और आपको यह स्पष्ट बोध हो सकेगा कि आपको क्या करना है।

i) एम.एस.ओ.-002 की तीन पुस्तकों का पठन पूरा करने के लिए समय-सारणी बनाइए। इस काम के साथ-साथ अपने सभी सत्रीय कार्यों को पूरा करने के लिए भी समय-सारणी बनाइए और निर्धारित योजना के अनुसार अपनी कार्य की प्रगति को बनाए रखने का प्रयास कीजिए। अपनी समय-सारणी में अनुसंधान परियोजना के लिए कुछ समय अवश्य निश्चित कीजिए।

MAADHYAM IAS

ii) व्यक्तिगत अनुसंधान परियोजना हेतु विकल्प तलाशने के लिए निम्नलिखित चरण अपनाइए :

  क) सत्रीय कार्य पुस्तिका में सूचीबद्ध किए गए विषयों में से समुचित विषय के लिए विकल्प तलाशने की आवश्यकता है। पढ़ाई के अलावा समय की सीमा और नौकरी, पारिवारिक दायित्व आदि जैसे अन्य उत्तरदायित्वों के चलते आपके लिए सबसे अधिक उपयुक्त यह रहेगा कि पहले आप अपनी रुचि के क्षेत्र को घर या कार्य से संबंधित क्षेत्र में से चुनें। पर्यावरण, पारिस्थितिकी, प्राकृतिक संसाधन, शिक्षा, अल्पसंख्यक समुदाय, सामाजिक रूप से हाशिए पर रह रहे वर्ग, लड़कियाँ, कामकाजी महिलाएँ, परिवार, विवाह और नातेदारी आदि हो सकते हैं। इसके अलावा, और भी विषय हो सकते हैं।

  ख) अपनी रुचि का क्षेत्र अथवा विषय को चुनने के बाद आपको अपने अनुसंधान की प्रकृति और स्थान को निर्धारित करने की दिशा में आगे बढ़ना होगा। अपनी सुविधा के अनुसार आप इस तरह से क्षेत्र अनुसंधान करें ताकि आप पर समय, ऊर्जा और संसाधनों का अधिक बोझ न पड़े क्योंकि इग्नू में अध्ययन के दौरान आपको अन्य कई काम भी करने हैं।

  ग) सामाजिक प्रक्रियाओं को वर्तमान स्थिति में समझने में आपके अनुसंधान विषय के बारे में विपुल आधार सामग्री हो सकती है। इसलिए उपलब्ध द्वितीयक (secondary) आँकड़ों का विस्तार, गुणवत्ता और प्रकार को निर्धारित करना

आपका अगला काम है। इसके लिए आपको विभिन्न स्रोतों से द्वितीयक आँकड़े एकत्रित करने होंगे। सामाजिक स्थिति की वर्तमान प्रस्थिति के बारे में स्पष्ट जानकारी प्राप्त करने के लिए आपको पर्याप्त आँकड़ों की आवश्यकता होगी ताकि आप अपनी अनुसंधान परियोजना को प्रासंगिक अथवा उपयोगी बना सकें।

iii) अपने अनुसंधान पर चर्चा करने के लिए या फिर अनुसंधान करते समय आपको कोई कठिनाई महसूस हो रही है तो उसके बारे में अपने अध्ययन केंद्र के शैक्षिक परामर्शदाता से सलाह अथवा मदद प्राप्त करने की व्यवस्था करना।

iv) अनुसंधान प्रस्ताव तैयार करना। प्रस्ताव में निम्नलिखित शीर्षकों के अनुसार संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करना होगा :

क) अनुसंधान परियोजना का शीर्षक

ख) अनुसंधान का उद्देश्य

ग) अनुसंधान पद्धतियाँ

घ) समय-अनुसूची (Time Frame)

आप अपने शैक्षिक परामर्शदाता से अनुसंधान प्रस्ताव पर चर्चा कीजिए और अनुसंधान को पूरा करने में लगने वाले समय तथा उपलब्ध संसाधनों पर एक बार फिर से विचार कीजिए। यदि आवश्यक हो तो इस चरण में आकर आप सुधार कर सकते हैं। किंतु जब आप काम करना शुरू कर दें तो उसका योजना के अनुसार कड़ाई से अनुपालन कीजिए। यदि आप बार-बार परिवर्तन करेंगे तो इससे कुछ भी अतिरिक्त प्राप्त किए बिना आपके समय, ऊर्जा और संसाधनों की बरबादी ही होगी। इस सत्रीय कार्य के मूल्यांकन में आपके द्वारा किए गए प्रयासों पर ज्यादा ध्यान दिया जाएगा न कि आपकी प्रभावशाली रिपोर्ट पर। इसे आप समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर कार्यक्रम को पूरा करने के बाद भी कर सकते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चरण 2 : वास्तव में अनुसंधान करना

निम्नलिखित संबंधी ज्यादातर विवरण इस बात पर निर्भर करते हैं कि आपकी शोध का प्रकार कौन-सा है। अनुसंधान योजना को सम्पन्न करने के लिए आपको यहाँ पाँच चरण बताए जा रहे हैं :

i) **आँकड़ा आवश्यकताओं का निर्धारण**

आपको जिन आँकड़ों की आवश्यकता होगी, वे निम्नलिखित से संबंधित हो सकते हैं :

क) आपके शोध-विषय से संबंधित अधिनियम अथवा नीतियाँ, यदि कोई हैं तो।

ख) मानचित्र और अन्य दृश्य सामग्री

ग) अनुसंधान के सामान्य/विशेष क्षेत्र के लोगों की गणना

घ) लोगों के बारे में परिचयात्मक जानकारी तैयार करने के लिए नमूना लोगों का सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण

च) सहभागी विधियों के द्वारा सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक मुद्दों को पहचानना।

छ) संस्थागत संरचना, कार्यविधियाँ और प्रक्रियाएँ।

ज) सामाजिक परिवर्तन और/अथवा संघर्ष को प्रदर्शित करने का केस-अध्ययन अथवा विस्तारित पद्धति रिपोर्ट।

) आँकड़े एकत्रित करने की तैयारी

आपको यह देखना होगा कि क्या आपके अनुसंधान से संबंधित विषय के बारे में कोई आँकड़े उपलब्ध तो नहीं हैं। और यदि ये आँकड़े उपलब्ध हैं तो क्या वे आपकी अनुसंधान परियोजना के लिए उपयुक्त हैं अथवा नहीं। यह निर्धारित करना और रिकॉर्ड आवश्यक है कि आँकड़ों को किसने एकत्रित किया, ये कब एकत्रित किए गए और सूचना कहाँ तक विश्वसनीय है। आपने जिस सूचना का भी इस्तेमाल किया है, उसके बारे में आपको निम्नलिखित जानकारी याद रखने की आवश्यकता होगी :

क) दस्तावेज, पुस्तक, शोध पत्रिका, मानचित्र आदि का पूरा शीर्षक

ख) दस्तावेज, पुस्तक, शोध पत्रिका, मानचित्र आदि को तैयार करने वाला लेखक, विभाग और एजेंसी

ग) दस्तावेज, मानचित्र आदि तैयार करने की तिथि/वर्ष

घ) दस्तावेज, पुस्तक, शोध पत्रिका, मानचित्र के प्रकाशन की तिथि/वर्ष

च) पुस्तकों और आलेखों के प्रकाशक का नाम, प्रकाशन का स्थान और प्रकाशन वर्ष।

इस आरंभिक कार्य के बाद, अपनी शोध के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मूलभूत और द्वितीयक आँकड़ों से संबंधित अतिरिक्त आँकड़ों को प्राप्त करने के लिए यदि कोई विशेष अपेक्षाएँ हों तो उन्हें निर्धारित कीजिए।

iii) द्वितीयक आँकड़ा स्रोतों को पहचानना

समाचार-पत्र, पुस्तकें और आलेखों से लेकर आम जीवन में आपकी शोध के विषय से संबंधित आम जीवन के विशेषज्ञ, प्रशासनिक नौकरशाही (bureaucracy) और इंटरनैट के ढूंढ़ने के विकल्प (Search Option) जैसे स्रोत शामिल हैं।

MAADHYAM IAS

iv) आँकड़ा एकत्रीकरण और पद्धतियाँ

मूल आँकड़ों के लिए जो जरूरी आवश्यकताएँ आपने निर्धारित की हैं, उनकी समीक्षा आँकड़े एकत्रित करने से पहले कीजिए और इन्हें एकत्रित करने की आवश्यकता के बारे में अपने शैक्षिक परामर्शदाता से विचार-विमर्श कीजिए। आपको यह स्पष्ट होना चाहिए कि आपको क्या चाहिए और किस उद्देश्य के लिए चाहिए। इसके बाद आँकड़ों को एकत्र करने संबंधी सबसे अधिक उपयुक्त पद्धति को निर्धारित कीजिए। आपकी अनुसंधान परियोजना में विश्लेषित आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण भली प्रकार से हो सके, इसके लिए आपको निम्नलिखित चरणों को ध्यान से पढ़ना आवश्यक है। इसके लिए आपको निम्नलिखित की व्याख्या करनी होगी :

क) सर्वेक्षण प्रश्नावली (survey questionnaire) रूप का डिजाइन अथवा विशिष्ट आँकड़ों को एकत्रित करने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सहभागी तकनीक (participatory technique) अथवा उपकरणों का चुनाव और उसकी उपयुक्तता।

ख) आपके अनुसंधान में मदद करने के लिए पहचाने गए लोग और सर्वेक्षण कार्य में मदद करने के लिए उन्हें किस प्रकार बताया जाएगा/प्रशिक्षित किया जाएगा सहित क्षेत्र कार्य की पद्धति को सुनिश्चित करना।

ग) क्षेत्र पर्यवेक्षण (field supervision) और/अथवा रिकॉर्ड करने, उसकी जाँच करने और गुणवत्ता नियंत्रण करने के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया।

घ) क्या किसी प्रकार के कंप्यूटर सॉफ्टवेयर पैकेज का इस्तेमाल किया जाना है सहित यह विचार करना कि आँकड़ों को किस प्रकार संसाधित किया जाएगा और उन्हें किस प्रकार विश्लेषित किया जाएगा।

आंकड़ों का विश्लेषण और शोध निष्कर्षों का प्रस्तुतीकरण

चरण 3 : अनुसंधान परियोजना रिपोर्ट

जब आप आँकड़े एकत्रित कर लें और उनका विश्लेषण कर लें तो आपको निम्नलिखित चरणों के अनुसार अपने काम को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने के लिए रिपोर्ट तैयार करनी होगी :

i) **रिपोर्ट के घटक (Report Components)**

अनुसंधान परियोजना रिपोर्ट के निम्नलिखित दो घटक हैं :

क) रिपोर्ट को वास्तविक रूप में तैयार करने के एक साधन के रूप में आपके द्वारा बनाई गई लॉगबुक अथवा डायरी (यह केवल आपके अनुसंधान को व्यवस्थित ढंग से सम्पन्न करने का प्रमाण है)

ख) लिखित पाठ, वीडियो फिल्म, फोटोग्राफ आदि सहित आपकी पसंद के माध्यम में लिखित रिपोर्ट और उसका प्रस्तुतीकरण।

ii) **रिपोर्ट आरूप और क्रम-व्यवस्था**

रिपोर्ट का आरूपण करने और उसे लिखने के लिए आपको निम्नलिखित संरचना को अपनाना होगाः

क) कवर पृष्ठ : रिपोर्ट के पहले पृष्ठ पर अनुसंधान परियोजना का शीर्षक, नाम और उस स्थान के नाम का उल्लेख हो जहाँ क्षेत्र-कार्य किया गया है।

ख) दूसरे पृष्ठ पर आपकी शोध परियोजना का 300 से कम शब्दों में सार (summary) होना चाहिए।

ग) तीसरे पृष्ठ पर आभारोक्ति (acknowledgement) होनी चाहिए।

घ) चौथे पृष्ठ पर संक्षिप्ताक्षरों (abbreviations) की वर्णक्रम के अनुसार सूची हो।

च) पाँचवे पृष्ठ पर तालिकाओं, मानचित्रों और चित्रों/उदाहरणों की सूची सहित विषय-अनुक्रमणिका हो।

छ) छठे पृष्ठ से आपको अपनी अनुसंधान परियोजना की प्रस्तावना और चुनी गई शोध परियोजना को निर्धारित करने वाले प्रमुख मुद्दों सहित उसके दृष्टिकोण को प्रस्तुत करना होगा।

ज) उसके बाद, प्रस्तुतीकरण के क्रम में आँकड़ों को एकत्रित करने और उनका विश्लेषण करने के लिए अपनाई गई तकनीकों अथवा पद्धतियों का विवरण दिया जाए।

झ) इसके बाद आपकी शोध परिणामों (findings) का उल्लेख हो।

ट) परिणामों का उल्लेख करने के बाद आपको निष्कर्ष (conclusion) लिखना होगा।

ठ) अंत में, आपको संदर्भ ग्रंथ (reference(s)) सूची देनी होगी। यह सूची उसी प्रकार होगी जिस प्रकार एम.एस.ओ-002 की तीन पुस्तकों में दी गई हैं। इसका यह अभिप्राय है कि सूची में सबसे पहले लेखक के कुलनाम (surname) का उल्लेख हो, उसके बाद पहला नाम अथवा आद्यक्षर (forename(s)) और पुस्तक/लेख/अन्य दस्तावेज के प्रकाशन का वर्ष और दस्तावेज का पूरा शीर्षक (जिसे तिरछे शब्दों में लिखा हो)। अनुसंधान परियोजना सत्रीय कार्य में आँकड़ों अथवा उद्धरण के स्रोत (क्या उन्हें पुस्तक, शोध पत्रिका, अन्य प्रकाशित अथवा अप्रकाशित दस्तावेज) और संदर्भित वेबसाइट के पते को ध्यान से लिखना होगा। कृपया ध्यान रखिए कि आपकी अनुसंधान परियोजना सत्रीय कार्य का यह महत्वपूर्ण पक्ष है और अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए इस ओर पर्याप्त ध्यान देना होगा।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ड) कृपया यह ध्यान रखें कि यदि लिखित पाठ में किसी संगठन, शब्दों आदि के नामों का संक्षिप्ताक्षर आ रहा है तो उसका जब सबसे पहली बार उल्लेख किया जाए तो उसे संक्षिप्त रूप में ही न लिखकर उसको पूरा लिखिए और कोष्ठक में उसका संक्षिप्त रूप लिखिए। इसके बाद संक्षिप्ताक्षर का इस्तेमाल किया जाए। पाठ में शामिल सभी संक्षिप्ताक्षरों को उनके पूरे रूपों सहित रिपोर्ट के चौथे पृष्ठ पर सूचीबद्ध किया जाए।

iii) **भाषा और संपादन**

आपने जिस भाषा में एम.एस.ओ-002 पाठ्यक्रम को पूरा करना है उसी भाषा में अनुसंधान परियोजना रिपोर्ट भी लिखनी होगी। फोटोग्राफ, फिल्म आदि जैसी समस्त रिपोर्ट सामग्री उसी भाषा लिपि में हो। बेहतर यह रहेगा कि आप पहले रिपोर्ट का एक मसौदा तैयार कर लें और फिर बाद में उसका भाषा और विषय-वस्तु की दृष्टि से संपादन करें। आप उसे एम.एस.ओ-002 के अपने सहपाठियों को भी दिखा सकते हैं ताकि वे उसपर अपने सुझाव दे सकें और उन सुझावों के आधार पर आप रिपोर्ट में संशोधन कर सकें। अपने सहपाठियों द्वारा तैयार की जाने वाली रिपोर्टों को भी इसी प्रकार पढ़ें और एक-दूसरे को अपने सुझाव दें। इससे आपको अपनी रिपोर्ट के प्रस्तुतीकरण में सुधार करने में मदद मिलेगी।

33.6 अनुसंधान परियोजना के दौरान पर्यवेक्षण

आप मूलतः अपनी अनुसंधान परियोजना पर काम कर रहे हैं किंतु आप अपने अध्ययन केंद्र के शैक्षिक परामर्शदाता और सहपाठियों से चर्चा कर सकते हैं। एम.एस.ओ.-002 के इस व्यावहारिक कार्य के पर्यवेक्षण की कोई औपचारिक व्यवस्था नहीं है। आपको मुख्य रूप से एम.एस.ओ. 002 की सामग्री को पढ़ना होगा और अपने अनुसंधान को संतुलित ढंग से करना होगा ताकि इससे आपको यह पता चल सके कि अनुसंधान कार्य किस प्रकार किया जाता है। इस कार्य पर ज्यादा समय लगाने और इसे लंबा अभ्यास बनाने की आवश्यकता नहीं है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

33.7 अनुसंधान परियोजना जमा कराना

लिखित रिपोर्ट को ए-4 आकार के कागज पर डबल स्पेस में टाइप करवाकर और जिल्दबंद रूप में प्रस्तुत करना होगा। परिशिष्टों और अन्य दस्तावेज़ों के अलावा रिपोर्ट, पाँच हजार शब्दों में लिखी होनी चाहिए।

रिपोर्ट को उसी प्रकार अध्ययन केंद्र पर जमा करना होगा जिस प्रकार आप अन्य सत्रीय कार्य जमा कराते हैं। रिपोर्ट की एक प्रति अपने पास रखना मत भूलिए। अध्ययन केंद्र पर रिपोर्ट जमा कराने के बाद उसकी प्राप्ति-रसीद अवश्य प्राप्त कीजिए।

यदि आप अपने अनुसंधान कार्य रिपोर्ट को अपने अन्य सहपाठियों की रिपोर्टें जमा कराने के लिए नकल करने देते हैं तो आप तथा नकल करने वाले अन्य विद्यार्थियों को अनुत्तीर्ण घोषित कर दिया जाएगा। ऐसी स्थिति में आपको सारा काम दोबारा करना पड़ेगा और अन्य विषय पर काम करना होगा।

33.8 अनुसंधान परियोजना मूल्यांकन की प्रविधि

अनुसंधान परियोजना रिपोर्ट की मूल्यांकन प्रविधि इस प्रकार है :

अध्ययन केंद्र पर जो मूल्यांकक एम.एस.ओ.-002 के अन्य सत्रीय कार्यों का मूल्यांकन करता है, वही अनुसंधान परियोजना का भी मूल्यांकन करेगा। समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि कार्यक्रम के अन्य पाठ्यक्रमों के सत्रीय कार्य 1 के जितने अंक हैं उतने ही अंक इस

अनुसंधान परियोजना सत्रीय कार्य के भी हैं। इस सत्रीय कार्य के कुल अंकों का प्रतिशत का वितरण बॉक्स 33.1 में दर्शाए गए अनुसार होगा।

बॉक्स 33.1: अनुसंधान परियोजना के सत्रीय कार्य के कुल अंकों का वितरण

i) क्षेत्रकार्य-आधारित अनुसंधान की प्रक्रिया का डायरी अथवा लॉगबुक के रूप में लेखन — 20 प्रतिशत

ii) विषय, भाषा, सुसंगतता (coherence), शैली आदि की स्पष्टता — 20 प्रतिशत

iii) उद्देश्यों, शोध प्रविधि और पद्धतियों की स्पष्टता — 20 प्रतिशत

iv) क्षेत्रकार्य आधारित अनुसंधान की समझ और व्यवहार — 20 प्रतिशत

v) एम.एस.ओ-002 की तीन पुस्तकों में से प्रत्येक के पठन उद्देश्य अनुसंधान परियोजना रिपोर्ट के मुख्य भाग में किस हद तक नजर आ रहे हैं — 20 प्रतिशत

33.9 निष्कर्ष

इकाई 33 में एम.एस.ओ.-002 के सत्रीय कार्यों के रूप में लघु शोध परियोजना करने संबंधी दिशा-निर्देश दिए गए हैं। इस इकाई में शामिल की गई सामग्री संतुलित आकार का क्षेत्र-कार्य आधारित अनुसंधान करने के लिए पर्याप्त है।

इस सत्रीय कार्य को पूरा करने में आपको यदि कोई कठिनाई होती है तो आप अपने शैक्षिक परामर्शदाता और/अथवा नई दिल्ली के मैदान गढ़ी में स्थित इग्नू मुख्यालय में एम.एस.ओ.-002 के संयोजक से परामर्श कर सकते हैं।

इस सत्रीय कार्य को करने और एम.एस.ओ.-002 पाठ्यक्रम को पूरा करने की मेरी ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

33.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अपनी लघु शोध परियोजना को एक बार फिर से पढ़िए और भाषा, शैली एवं उसकी विषय-वस्तु (content) में सुधार लाने का प्रयास कीजिए।

शब्दावली

(शब्दावली (शब्दों) की व्याख्या इंटरनेट और अन्य स्रोतों से उपलब्ध जानकारी की सहायता से तैयार की गई है।)

सजीवता (Animations): शब्द से आशय है, किसी में जीवन डालने या उसे गति प्रदान करने की प्रक्रिया या ऐसी कार्रवाई जिससे कोई जीवंत बन जाए। एम एस ओ -002 पुस्तक के संदर्भ में इसका अर्थ चालित व्यंग्य चित्र बनाने की प्रक्रिया या कला से है।

छद्मनाम देना (Anonymisation): इसका अर्थ है व्यक्तियों/स्थानों को छद्मनाम देने की प्रक्रिया ताकि उनकी मूल पहचान को छिपाया जा सके। यह सामाजिक विज्ञानियों में काफी प्रचलित है जो संवेदनशील विषयों पर बात करते हैं और ऐसे वास्तविक व्यक्तियों/स्थानों की पहचानों को खोलते हैं जो कुछ मामलों में नैतिक किस्म की समस्याओं को उत्पन्न कर सकते हैं और ऐसी परिस्थितियों में छद्मनाम या उपनाम देना जरूरी बन जाता है।

बार चार्ट (Bar Chart): वृत्तारेख की तरह बार चार्ट आंकड़ों के समूहों या वर्गों की तुलना करने के लिए उपयोगी होते हैं। बार चार्टों में वर्ग या समूह आंकड़ों की एकल श्रेणी में हो सकते हैं या इन्हें अधिक गूढ़ अध्ययन के लिए बहु श्रेणियों में तोड़ा जा सकता है। अधिकांश लोग बार चार्टों से परिचित होते हैं और अपने द्वारा अपेक्षित सूचना के आधार पर इनकी व्याख्या करते हैं। आप शायद अपेक्षा करते हो:

- सबसे लम्बे बार की
- सबसे छोटे बारे की
- समय के साथ बार की वृद्धि या इसके संकुचन को समझना
- एक बार की दूसरे बार से तुलना
- समान श्रेणी को विविध तरीकों से दर्शाने में बार में होने वाले परिवर्तन
- वर्ग

MAADHYAM IAS

असंगत स्केल पर ध्यान दें। यदि आप दो या अधिक चार्टों की तुलना कर कर रहे हैं तो सुनिश्चित हो कि समान स्केल का प्रयोग किया जा रहा है। यदि समान स्केल नहीं हैं तो अंतरों के प्रति जागरूक हों और देखें कि ये किस प्रकार आपको भ्रमित करते हैं। यह सुनिश्चित करें कि आपके सभी वर्ग समान हैं। हफ्तों, महीनों, वर्षों और अर्ध वर्षों या नव निर्मित श्रेणियों को उनके साथ न मिलाएं जिनके पीछे आंकड़ों की लीक है। ध्यान रखें कि वर्गों के बीच का अंतराल सुसंगत है। जैसे, यदि आप ऐसे मौजूदा आंकड़ों की तुलना करना चाहते हैं जो महीने दर महीने ऐसे पुराने आंकड़ों की तरफ बढ़ते हैं तो प्रत्येक छह महीने के लिए ही उपलब्ध हों, या तो प्रत्येक छह महीने के लिए मौजूद आंकड़ों का प्रयोग करें या अज्ञात महीनों के लिए पुराने आंकड़ों को खाली स्थान से दर्शाएँ। बार चार्ट में प्रत्येक बार के लिए निम्नलिखित सांख्यिकी उपयोगी है:

माध्य	सभी बारों की औसत ऊँचाई
अधिकतम	श्रृंखला में अधिकतम मान (सबसे बड़ा बार)
न्यूनतम	श्रृंखला में न्यूनतम मान (सबसे छोटा बार)
प्रतिदर्श आकार	श्रृंखला में मानों (बार) की संख्या
रेंज	अधिकतम मान (-) न्यूनतम मान
मानक विचलन	दर्शाता है कि आंकड़ों को किस तरह विस्तृत रूप से माध्य के ईर्द-गिर्द फ़ैलाया जाता है।

द्विचर (Bivariate): इसका अर्थ है दो चरों की प्राप्ति करना जैसे द्विचर द्विपद बंटन

बूलीय (Boolean) : चर आधारित तार्किक संयोजक पद्धति जैसे कंप्यूटर लौजिक तत्व और अभिज्ञप्तियाँ, AND, OR, NOT और XOR ऑपरेटर आधारित ऐसा ब्राऊजर जो बूलीय सर्च को सहयोग देता है। प्रोग्रामिंग भाषा में यह डेटा टाइप या ऐसे चर से जुड़ा है जो गलत या सही हो सकता है।

इस शब्द का नाम जार्ज बूले के नाम पर रखा गया।

ब्राऊजर या वेब ब्राऊजर: यह ऐसा प्रोग्राम है जो इंटरनेट पर वेब के संदर्भ में आपके फ्रंट एंड के रूप में काम करता है। साइट देखने के लिए आप ब्राऊजर के लोकेशन फील्ड में इसका पता (यू आर एल) टाइप करते हैं, जैसे www.computerlanguage.com और उस साइट का होम पेज डाउनलोड कर दिया जाता है। उस साइट पर होम पेज अन्य पेजों का इन्डैक्स है जिसे आप रेखांकित हाइपरलिंग या आइकॉन को क्लिक करके प्राप्त कर सकते हैं। उस साइट पर लिंक करने से यह आपको अन्य संबद्ध साइटों पर भी ले जा सकती है।

ब्राऊजर में बुकमार्क या फेवरेट फीचर होता है जो आपको आपकी मनपसंद साइट पर उपयोगी बातों को स्टोर करने देता है। यू आर एल में टाइप करने की बजाय या साइट पर दुबारा जाने के लिए आप बुकमार्क का चयन करते हैं। इसकी शुरुआत मोजेक से हुई। मोजेक ब्राऊजर ने 1993 में वेब को नक्शे में रखा लेकिन 1990 के मध्य तक नेटस्केप नेवीगेटर (आमतौर पर जिसे "नेटस्केप") कहते हो, का 80 प्रतिशत का बाजार था। टॉप स्पॉट की होड़ में नेटस्केप और माइक्रोसाफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरल (आई ई) ने निरंतर नई विशेषताओं और प्रकार्यों को शामिल किया जिससे वेबसाइट को होड़ शिविरों में विखंडित कर दिया। आज आई ई जो कि प्रत्येक विंडो पी सी में शामिल है का लगभग 90 प्रतिशत का बाजार है। नेटस्केप अपने प्रशंसकों में अभी भी लोकप्रिय है और इसने मोजिला और फायरफॉक्स को समाप्त कर दिया। फायरफॉक्स को जब 2004 में शुरू किया गया तो इसने काफी ध्यान आकृष्ट किया। सफारी मैक ओ एस X के लिए ब्राऊजर है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

जब साइट "best viewed by Netscape" या "best viewed by internet explorer" कहती है तो इसका अर्थ है कि उस विशिष्ट ब्राऊजर के लिए पृष्ठों को प्रोग्रामित किया गया था। मोजेक, ओपेटा, मोजिला, फायरफॉक्स, सफारी, हाइपरलिंक, वर्ल्ड वाइड वेब्, एच टी एम एल और माइक्रोब्राऊजर देखें।

काई-स्क्वैयर परीक्षण (Chi-Square test): यह ऐसा परीक्षण है जो सैद्धांतिक बारंबारता बंटन और प्रेक्षित आंकड़े के बारंबारता बंटन के बीच के संतुलन का परीक्षण करने के लिए काई-स्क्वैयर प्रतिदर्शज का प्रयोग करता है और जिसके लिए प्रत्येक प्रेक्षण विविध वर्गों में से किसी एक में हो सकता है।

क्लिक एबिलिटी (Click ablity): यह ऐसे आन लाइन संगठनों से जुड़े हैं जो आमदनी जनित करना चाहते हैं, लागत कम करना चाहते हैं और अपने श्रोताओं के साथ संबंध मजबूत करना चाहते हैं। उपयोगकर्ता अंतःक्रिया को बढ़ाने, विषयवस्तु को नियंत्रित करने और मार्गनिर्देशन को बेहतर बनाने के लिए यह समाधान और साधन प्रदान करता है।

कोड (Code): संज्ञा के रूप में कोड का अर्थ ऐसी सामग्री है जो साफ्टवेयर लेखक स्रोत रूप में या संकलनकर्ता द्वारा अनूदित होने के बाद लिखता है। इसका प्रयोग अक्सर "डेटा" के विपरीत किया जाता है और जो सामग्री है जिसे कोड काम में लाता है। हैकर्स में यह व्यापक संज्ञा है जैसे कि "How much code does it take to do a bubble sort" या "The code is loaded at the high end of RAM" वैज्ञानिक प्रोग्रामरों में यह कई बार "प्रोग्राम" के समतुल्य होता है अतः वे बहुबचन में "कोड" के बारे में बात कर सकते हैं। यदि

कोई साफ्टवेयर को "साफ्टवेर कोड" कहता है तो यह शायद न्यूबाइ या सूट (suit) हो सकता है।

संचार में कोड किसी सूचना को अन्य रूप जैसे अक्षर शब्द या कहावत) में दर्शाने या परिवर्तित करने का नियम है।

कूटलेखन विद्या के इतिहास में एक समय में कोड संप्रेषण की गोपनीयता को सुनिश्चित करते , यद्यपि अब बजाय इसके साइफर का प्रयोग किया जाता है। सम्प्रेषण में कोड का प्रयोग किसी बात को संक्षिप्त रूप से कहने के लिए किया जाता है। कोड का प्रयोग संक्षिप्तता के लिए किया जा सकता है। जब तीव्र लम्बे दूर शिक्षा सम्प्रेषण में टेलीग्राफ संदेशों का प्रयोग सर्वाधिक आधुनिक तकनीक के रूप किया जाता था, सुस्पष्ट व्यावसायिक कोड जो एकल शब्दों में पूर्ण वाक्यांश को खोल देते थे (आमतौर पर पाँच अक्षरों के समूहों) को विकसित किया गया ताकि टेलीग्राफर 'BYOXO, LIOUY, BMULD या AYYLU जैसे शब्दों से परिचित हो सके। विविध कारणों के लिए कोड शब्दों का चान कि जाता था जैसे लम्बाई, उच्चारण संबंधी योग्यता। शब्दों का चयन विचारित आवश्यकताओं, व्यावसायिक समझौते आदि के लिए किया गया। जैसे सैन्य कोड के लिए सैन्य शब्दावली, राजनयिक कोडों के लिए राजनयिक शब्दावली।

संकेतीकरण (Coding): संकेतीकरण का अर्थ कोड में (नियमों एवं विनियमों) को क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित करना है। कंप्यूटर विज्ञान में संकेतीकरण का अर्थ कंप्यूटर प्रोग्राम को लिखना या दोहराना है। संचार एवं सूचना प्रक्रम में संकेतीकरण ऐसी प्रक्रिया है जिससे स्रोत सूचना को आंकड़ों में परिवर्तित करता है जिसे तब प्राप्तकर्ता (प्रेषक) को भेजा जाता है जैसे आंकड़ा संसाधन पद्धति। विसंकेतन (decoding) इससे विपरीत किस्म की प्रक्रिया है।

संकेतीकरण का एक कारण है सम्प्रेषण को ऐसे स्थानों के योग्य बनाना जहाँ सामान्य उच्चरित या लिखित भाषा कठिन या असंभव प्रतीत होती है। जैसे केबल कोड (जैसे समुद्री जहाज या बीजक) शब्दों को अपेक्षाकृत छोटे शब्दों में बदलता है जिससे सूचना अधिक तेजी से और विशेष रूप से सस्ते ढंग से गिने चुने संकेतो में भेज दी जाती है।

MAADHYAMIAS 'way to achieve your dream'

सुसंगति (Consistency): सामग्री का आपसी तालमेल या आपसी सुदृढ़ता। एमएसओ - 002 की इकाइयों के संदर्भ में इसका अर्थ है बिना किसी वाद विवाद या करारनामे के एक दूसरे से जुड़े रहना।

विषयवस्तु विश्लेषण(Content analysis): इसे शाब्दिक विश्लेषण भी कहते हैं। यह संप्रेषण (संचार) विषयवस्तु के विषय पर सामाजिक विज्ञान में एक मानक कार्यविधि है। हैरोल्ड लास्वेल ने विषयवस्तु विश्लेषण के मूल प्रश्नों को सूत्रबद्ध किया जैसे -- कौन, क्या, किसी, क्यों, किस हद तक और किस प्रकार के साथ कहता है? ओले होल्स्टी (1969 : 14) विषयवस्तु विश्लेषण की विस्तृत परिभाषा प्रस्तुत करता है। संदेश की विशिष्ट विशेषताओं की वस्तुगत और क्रमबद्ध दृष्टि से निष्कर्ष निकालने की तकनीक। विषयवस्तु, विश्लेषण की विधि शोधकर्ता को बड़ी मात्रा में शाब्दिक सूचना को शामिल करने और इसके गुणधर्मों को क्रमबद्ध ढंग से पहचानने के योग्य बनाती है जैसे सर्वाधिक प्रयुक्त संकेत शब्दों (KWIC - संदर्भ में संकेत शब्द) की बारंबारताएं जिनकी प्राप्ति इनके संप्रेषण विषयवस्तु, की अधिक महत्वपूर्ण संरचनाओं का पता लगाकर की जाती है। लेकिन ऐसी शाब्दिक सूचना की प्रमात्रा किसी निश्चित सैद्धांतिक ढाँचे के अनुरूप वर्गीकृत की जानी चाहिए जो कि सूचना विश्लेषण के अंत में अर्थपूर्ण विषयवस्तु प्रदान करेगी। डेविड राबर्टसन (1976 : 73-75) ने उदाहरण के तौर पर एक संकेतन ढाँचे का निर्माण किया ताकि ब्रिटिश और अमेरिकी पक्षों के बीच होड़ के माध्यमों की तुलना की जा सके। इसे आगे 1979 में मेनीफेस्टो रिसर्च ग्रुप ने राजनीतिक दलों की नीति स्थितियों पर तुलनात्मक विषयवस्तु– वैश्लेषिक उपागम को लक्ष्य बनाते हुए विकसित किया। इस वर्गीकरण योजना का प्रयोग

1989 और 1994 में ब्राजीलियाई पार्टी ब्रॉडकास्ट और मैनीफेस्टो (एफ.कार्बेलो) के बीच तुलनात्मक विश्लेषण की पूर्ति के लिए भी किया गया। संकेतन ढाँचे की सृजना निजी रूप से ऐसे सृजनात्मक (चर) उपागम से जुड़ी हुई है जो शाब्दिक विषयवस्तु पर अपना प्रभाव छोड़ते हैं। राजनीतिक विश्लेषण में ऐसे चर, राजनीतिक लोकापवाद, सार्वजनिक राय चुनाव का प्रभाव, बाहरी राजनीति, मुद्रा स्फीति आदि में होने वाली आकस्मिक घटनाएं हो सकते हैं। एफ. कारवैलो द्वारा सृजित अनुकारी अभिसरण जलो कि फ्री-टू-एयर टेलिविजन पर इलैक्ट्रोल प्रतिज्ञप्तियों के तुलनात्क विश्लेषण से संबंधित है, विषयवस्तु विश्लेषण में चरों के सृजनात्मक उच्चारण का उदाहरण है। कार्य पद्धति आकस्मिकताओं के तर्क से शामिल हो कर, गतिशील परिप्रेक्ष्य से टी वी पर दीर्घकालिक दल संबंधी होड़ के दौरान दल पहचानों के निर्माण की व्याख्या करती है। यह विधि पार्टी प्रसारणों में निहित विषयवस्तुओं की पुनरावृत्ति और नवीन बातों पर ध्यान केंद्रित करके निर्वाचन संबंधी अभियानों में ग्रेक्षित आकस्मिक तर्क पर पकड़ बनाने पर लक्षित है। ऐसे उत्तर संरचनात्मक परिप्रेक्ष्य के अनुसार जिससे निर्वाचन होड़ का विश्लेषण किया जाता है, दल इस बात की पहचान करता है कि "असली" मध्यस्थता के बिना बात नहीं कर सकता क्योंकि दल संरचना के अर्थ को निर्धारित करने का कोई स्वाभाविक केंद्र बिंदु नहीं है। बजाय इसके यह तदर्थ उच्चारण पर निर्भर करता है। इसके परे कोई आनुभविक वास्तविकता नहीं है। वास्तविकता ऐसी शक्ति संघर्ष का परिणाम है जो आकस्मिक मध्यस्थता के परिणाम के रूप में सामाजिक संरचना के विचारों को आपस में जोड़ता है। ब्राजील में ये आकस्मिक हस्तक्षेप अपसारी और गुटों में विभाजित होने की बजाय अनुकारी और अभिसारी सिद्ध किए गए हैं।

विषयवस्तु विश्लेषण की प्रक्रिया

क्लास क्रिपेनडोर्फ (1980 और 2004) के अनुसार प्रत्येक विषयवस्तु विश्लेषण में छह प्रश्नों पर अवश्य ही ध्यान दिया जाना चाहिए:

- कौन से आँकड़ों को विश्लेषित किया जाता है?
- इन्हें कैसे परिभाषित किया जाता है?
- कौन-सी समष्टि है जिससे इन्हें लिया गया है?
- वह कौन सा संदर्भ है जिसे ध्यान में रखकर आंकड़ों को विश्लेषित किया जाता है?
- विश्लेषण की सीमाएँ कौन-सी हैं?
- निष्कर्षों का लक्ष्य क्या है?

MAADHYAM IAS

जिस नियम के अनुसार अवधारणा है कि अक्सर जिन शब्दों और वाक्यांशों का उल्लेख किया जाता है वे हैं जो प्रत्येक संप्रेषण में चिंता के महत्वपूर्ण मुद्दों पर अपनी छाप छोड़ते हैं। इसलिए परिमाणात्मक विषयवस्तु, विश्लेषण, शब्द बारंबारताओं, स्पेस का माप (समाचार पत्रों के मामलों में कॉलम सेंटीमीटर), टाइम काउंट (रेडियो और टेलीविजन समय के लिए) और संकेत शब्द बारंबारताओं के साथ, अपनी शुरुआत करता है। हालांकि विषयवस्तु विश्लेषण साधारण शब्द काउंटों से परे तक जाता है जैसे KWIC नेमी शब्दों को उनके विशिष्ट संदर्भ में विश्लेषित किया जाता है, उन्हें स्पष्ट करना है। समानार्थक और भिन्नार्थक शब्दों को भाषा के भाषावादी गुणधर्मों के अनुरूप पृथक किया जा सकता है। गुणात्मक रूप से यह किसी भी विश्लेषण को शामिल कर सकता है जहाँ संप्रेषण विषयवस्तु (भाषा, लिखित सामग्री साक्षात्कार, छवि) को श्रेणीबद्ध एवं वर्गीकृत किया जाता है। 19वीं शताब्दी के अंत में जहाँ पहले समाचार पत्रों के साथ इसकी शुरुआत हुई थी, तब पंक्ति एवं जगह, जैसे समाचार पत्र पर हाथ से माप लेकर ऐसा किया गया था। पी सी जैसी सामान्य कंप्यूटिंग सुविधाओं के उदय के साथ विश्लेषण की कंप्यूटर आधारित विधियाँ लोकप्रियता के साथ बढ़ती जा रही हैं। मुक्तोत्तर प्रश्नों के उत्तर, समाचार लेख, राजनीतिक दल

अभिव्यक्तियाँ, मेडिकल रिकार्ड या प्रयोगों में क्रमबद्ध प्रेक्षण अर्थात ये सभी शाब्दिक आंकड़ों के क्रमबद्ध विश्लेषण के अधीन हैं। मशीनी पठनीय सामग्री के रूप में उपलब्ध संप्रेषण की विषयवस्तु की प्राप्ति करके, जरूरी सूचना को बारंबारताओं के लिए विश्लेषित किया जाता है और निष्कर्ष निर्माण के लिए श्रेणियों में कोड के रूप में रखा जाता है। वेबर (1990 : 12-14) का मानना है कि "पाठ्य सामग्री से वैध निष्कर्षों के निर्माण के लिए जरूरी है कि वर्गीकरण विधि के सुसंगत होने के रूप में विश्वसनीय हो। अलग-अलग लोगों को समान पाठ्य सामग्री को समान तरीके से कोड करना चाहिए। वैधता, अंतर-कोडर विश्वसनीयता और अंतरा-कोडर विश्वसनीयता वर्षों से चले आ रहे कार्यपद्धतीय शोध प्रयासों को प्रबल करते हैं।

(संप्रेषण की) अभिव्यक्ति विषयवस्तु और इसके प्रच्छन्न अर्थ के बीच एक और अंतर है। "मैनीफेस्ट" (अभिव्यक्त) उस बात को स्पष्ट करता है जिसे (लेखक या वक्ता) ने निश्चित रूप से लिखा है जबकि प्रच्छन्न अर्थ स्पष्ट करता है जो लेखक कहना/लिखना चाहता है। आमतौर पर विषयवस्तु विश्लेषण सिर्फ अभिव्यक्त (मेनीफेस्ट) विषयवस्तु अर्थात शब्द, वाक्य, पाठ्य सामग्री पर ही लागू किया जा सकता है।

विश्लेषण का अगला चरण है, शब्दकोश आधारित (परिमाणात्मक) उपागमों और गुणात्मक उपागमों के बीच का अंतर। शब्दकोश आधारित उपागमों ने शब्दों की बारंबारता सूची से व्युत्पन्न श्रेणियों की सूची स्थापित की और शब्दों के वितरण के नियंत्रण और पाठ्यसामग्री पर उनकी संबद्ध श्रेणियों की सूची स्थापित की । जहाँ इस तरीके से परिमाणात्मक विषयवस्तु विश्लेषण में विधियां गुणात्मक सांख्यिकीय आंकड़ों में मौजूद श्रेणियों के प्रेक्षणों को परिवर्तित करती है, वहीं गुणात्मक विषयवस्तु विश्लेषण स्वातिगता (intentionaling) पर अधिक ध्यान केंद्रित करता है।

कॉपीकैट (Copycat): जो दूसरे की काफी घनिष्ठता से नकल मारे। जब विश्लेषण के रूप में प्रयोग किया जाता है तो शब्द का अर्थ दूसरे का गहराई से अनुसरण करना या उसकी नकल मारना जैसे सफल उत्पाद का कॉपीकैट रूपांतर, कॉपीकैट अपराध

MAADHYAM IAS

कर्सर (Cursor): कंप्यूटर विज्ञान में इसका अर्थ है चमकीला टिमटिमाता हुआ डिस्प्ले पर गतिशील सूचक। जिसे प्रविष्ट, संशोधित या मिटाना होता है, उस पर इसे लाकर क्लिक किया जाता है।

साइबर कैफे (Cyber Cafe): ऐसा कैफे जहाँ से उपभोक्ता इंटरनेट तक पहुँच स्थापित कर सकते हैं। इसे चैटरूम भी कहते हैं।

डेटाबेस (Database): सर्च और रिट्राइवल की सुविधा और गति के लिए व्यवस्थित आंकड़ों का संग्रहण। इसे डेटा बैंक भी कहते हैं।

कार्य की पुनः संक्षिप्त प्रस्तुति (Debriefing): कार्य को पूरा करने के बाद उस पर विचार व्यक्त करना।

जनांकिकीविद् (Demographers): ऐसे व्यक्ति जो मानव समष्टि की विशेषताओं जैसे आकार, वृद्धि, घनत्व, बंटन और जीवन/मृत्यु सांख्यिकी के अध्ययन में जुटा रहता है।

द्वंद्वतर्क (Dialectic): द्वंद्व तर्क शब्द का इतिहास स्वयं दर्शनशास्त्र के इतिहास को गठित करता है। प्लूटो के दर्शनशास्त्र मं "द्वंद्वतर्क" शब्द की भूमिका का विशेष महत्व है जहाँ जिरह की सुकरात संबंधी द्वंद्वात्मक विधि में यह दर्शनशास्त्र की तार्किक विधि के रूप में नजर आता है। इस शब्द को हेगल ने नई जान दी जिसके प्रकृति और इतिहास के द्वंद्वात्मक गतिशील मॉडल ने वास्तविकता की प्रकृति का मूलभूत पहलू बना दिया। 19वीं शताब्दी के मध्य में "द्वंद्वतर्क" की संकल्पना को मार्क्स ने अपनाया (देखें, जैसे दास कैपिटल, 1987 में प्रकाशित) और एन्जल्स और गैर-आदर्शवादी तरीके में पुनःनिर्मित द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के

उनके दर्शनशास्त्र में यह महत्वपूर्ण धारणा बन गई। इस तरह वर्ल्ड स्टेज और विश्व इतिहास में यह संकल्पना एक महत्वपूर्ण रूप में उभरी। आज "द्वंद्वात्मक" शब्द एक ऐसी समझ भी है कि हम किस प्रकार विश्व (ज्ञानमीमांसा) को समझते हैं। बुनियादी रूप से यह तार्किक वाद-विवाद के आदान-प्रदान द्वारा सच्चाई तक पहुंचने की कला या व्यवहार है।

डायलॉग (Dialog): का अर्थ है पहला कमर्शल ऑन लाइन सूचना रिट्राइवल सिस्टम। इसे रोजर समिट ने 1967 में सृजित किया और 1972 में सेवा के रूप में इसका शुभारंभ किया गया। इसने ऑन लाइन उपलब्ध सूचना के सर्वाधिक एकल संग्रहण की प्रस्तुति की है और व्यवसाय, विज्ञान, वित्त और विधि जैसे क्षेत्रों में इसके 900 से अधिक डेटाबेस हैं। सर्चिंग निशुल्क है लेकिन परिणाम देखने के लिए शुल्क लगता है। वेब या अलग डायल-अप नंबरों से पहुंच स्थापित की जाती है। डायलॉग सर्चेबल कंटेंट को डीप वेब के भाग के रूप में देखा जाता है।

डिजिटल मॉड (Digital Mode): डिजिटल शब्द का आमतौर पर कंप्यूटिंग में प्रयोग किया जाता है। डिजिटल सिस्टम है जो मानों की सतत मानावली की बजाय विविक्त मूल्यों का प्रयोग करता हैः एनालॉग से तुलना। यह शब्द डिजिट शब्द से बना है जो कि अंगुलियों पर गिनना अर्थात अंगुलि के लिए लेटिन शब्द है। इसका प्रयोग विविक्त गणना के लिए किया जाता है।

डिजिटल बनाम एनालॉग का अर्थ आंकड़ा भंडारण और हस्तांतरण और यंत्र की अंदरुनी कार्य पद्धति और एक किस्म का डिस्प्ले है। विविक्त मानों पर आधारित सिस्टम को डिजिटल मोड से जुड़ा हुआ माना जाएगा।

प्रोक्ति विश्लेषण (Discourse analysis): इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 1952 में जेलिग हैरिस द्वारा प्रकाशित शोध पत्र में किया गया। वाक्य या वाक्यांश स्तर से परे भाषा प्रयोग के विश्लेषण के लिए यह उपागमों की कोई भी संख्या है। यहां भाषा का अर्थ लिखित या उच्चरित पाठ्य सामग्री या पाठ्य सामग्रियों की पद्धतियाँ हो सकती है।

MAADHYAM IAS

प्रोक्ति विश्लेषण की संकल्पना को भाषाविज्ञान, मानव विज्ञान, समाजशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान समेत बहुत से विषयों में लिया गया है। इनमें से प्रत्येक विषय की अपनी निजी अवधारणाएँ एवं कार्यपद्धतियाँ हैं। निम्नलिखित भाषावादी प्रोक्ति विश्लेषण में प्रयुक्त कुछ विशिष्ट सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य एवं वैश्लेषिक उपागम हैं —

- अंतःक्रियात्मक समाज-भाषायी
- संचार का नृजाति वर्णन
- अर्थ क्रियाकलाप, विशेष रूप से वाग्व्यापार सिद्धांत
- वार्तालाप विश्लेषण जो कि हार्वे सैक्स के सिद्धांतों पर आधारित है
- विविधता विश्लेषण
- विमर्शात्मक मनोविज्ञान विशेष रूप से जानथन पौटर द्वारा विकसित

समीक्षात्मक प्रोक्ति विश्लेषण, प्रोक्ति विश्लेषण और समीक्षात्मक सिद्धांत (विशेष रूप से फैंकफर्ट विचारधारा और माइकल फोकाल्ट और इसके साथ-साथ जूलिया क्रिस्टेवा, रोलैंड बार्थस और जैकस लेकन संबंधी शाब्दिक, संकेतविज्ञान और मनोवैश्लेषिक प्रभाव), ताकि भाषायी प्रोक्ति विश्लेषण की राजनीतिक रूपी किस्म को सृजित किया जा सके।

यद्यपि प्रत्येक उपागम भाषा प्रयोग के विविध पहलुओं पर जोर देता है। ये सभी भाषा को सामाजिक अंतःक्रिया के रूप में देखते हैं और ऐसे सामाजिक संदर्भों से जुड़े हुए हैं जिसमें प्रोक्ति जड़ी गई है। सामाजिक विज्ञान में प्रोक्ति विश्लेषण का विशेष महत्व है।

लाना (Elicitory): इसका अर्थ किसी छिपे हुए भाग को प्रकाश में लाना है। इसका एक अन्य अर्थ तर्क द्वारा सच्चाई तक पहुंचना भी है।

नृजातिविद् (Ethnographer): यह व्यक्ति है जो मानवशास्त्र की शाखा से जुड़कर विशिष्ट मानव संस्कृतियों की वैज्ञानिक व्याख्या का अध्ययन करता है।

नृजाति प्रणाली विज्ञान (Ethnomethodology): समाजशास्त्र की ऐसी शाखा जो कोड और कन्वेंशन से संबंधित है जो कि रोजाना की सामाजिक अंतःक्रिया और गतिविधियों का आधार है।

क्षेत्र कार्य (Fieldwork): विशिष्ट क्षेत्र में किया जाने वाला कार्य। एम एस ओ-002 की इकाइयों के संदर्भ में इसका अर्थ क्षेत्र समाजशास्त्रीय या मानवजाति संबंधी आंकड़ों को एकत्र करना है।

लोकवार्ताकार (Folklorist): ऐसा व्यक्ति जो पारंपरिक रीति-रिवाजों, कथाओं या वाक्यांशों के अध्ययन में जुटा हुआ है जो कि जन में मौखिक रूप से संरक्षित है। लोक गाथा ऐसा तुलनात्मक विज्ञान है जो लोगों के जीवन और उनकी उमंगों की छानबीन करता है जैसा कि उनकी लोक कथाओं में उभारा गया है।

पाद टिप्पणी (Foot note): ऐसी टिप्पणी जो पुस्तक या पांडुलिपि के पृष्ठ के तले पर लिखी जाती है जिसमें कि अध्ययन सामग्री के निर्दिष्ट भाग के लिए उल्लिखित बातों पर टिप्प्णी दी जाती है।

फोकाल्ट (Foucault): फोकाल्ट, माइकल (1926 - 1984) फ्रांसीसी दर्शनशास्त्री और इतिहासकार जिसने ज्ञान की रूपरेखा बनाने में शक्ति की भूमिका की खोज की। उसकी रचनाओं में मैडनस एंड सिविलाइजेशन (1961) और मल्टी वाल्यूम हिस्ट्री ऑफ सैक्सुएलिटी (1976-1986) का समावेश है। वे कालेज डि फ्रांस (1970-84) में प्रोफेसर थे।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ग्राउंडिड थ्योरी (Grounded theory): दो समाजशास्त्री बार्ने ग्लेजर और स्ट्रॉस द्वारा विकसित व्यवहारगत विज्ञान के लिए यह एक सामान्य शोध विधि है। बार्ने को परिमाणात्मक समाजशास्त्र में पॉल लजारफेल्ड द्वारा प्रशिक्षित किया गया जबकि स्ट्रॉस (1916-1996) को हरबर्ट ब्लूमर द्वारा सांकेतिक अंतःक्रियात्मकता में प्रशिक्षित किया गया। अस्पतालों में होने वाली मृत्यु पर शोध ग्लेजर और स्ट्रॉस का सफल मेलमिलाप स्थिर तुलनात्मक विधि या ग्राउंड थ्योरी (जी टी) के रूप में विकसित हुआ। यह नाम आंकड़ों से सिद्धांत के निर्माण को रेखांकित करता है। जी टी, डेटाबेस सर्च (गुगल, मेडलाइन, CINAHL, Psyclit, Econlit) के अनुसार विश्व में गुणात्मक आंकड़ा अध्ययन करने की शोधकर्ताओं द्वारा अंगीकृत सर्वाधिक भावात्मक विधि है।

पहली जी टी कार्य पद्धति "द डिस्कवरी ऑफ ग्राउंडिड थ्योरी" के अंधिकांश अध्याय ग्लेजर द्वारा लिखित हैं जो कि मैथोडोलॉजी जनरेशन में प्रशिक्षित था। ग्लेजर ने अकेले ही दूसरी शोध पद्धति "थ्योरीटिकल सैनस्टीविटी" (ग्लेजर 1978) की रचना की और तभी से विधि पर पाँच अन्य पुस्तकों की रचना की और जी टी लेख और निबंधों के संग्रहण के साथ पाँच रीडरों का संपादन किया। ग्राउंडिड थ्योरी रिव्यू फीयर-रिव्यूड जर्नल है जो कि जी टी संबंधी विविध पहलुओं पर ग्राउंडिड थ्योरीज और अभिलेखों का प्रकाशन कर रहा है। स्ट्रॉस और ज्यूलियट कोर्बिन (स्ट्रॉस एंड कोर्बिन 1990) जी टी को विविध दिशाओं में ले गए जिसे ग्लेजर ने सैद्धांतिक संवेदनशीलता और 1967 पुस्तक में रेखांकित किया था। खोजकर्ताओं के बीच विचारों के लेकर झड़प हो गई और 1992 में ग्लेजन ने स्ट्रॉस और कोर्बिन के विरुद्ध तर्क देते हुए एक पुस्तक (चैपटर बाइ चैपटर) की रचना की। इस तरह जी टी स्ट्रॉस और कोर्बिन की विधि में विभाजित हो गया और ग्लेजर का 1967 से 1978 तक मूल विचारों वाला जी टी अभी भी प्रचलित है।

हार्डवेयर और साफ्टवेयर (Hardware and Software): आम भाषा में हार्डवेयन का अर्थ है, धातु की वस्तुएँ और बर्तन जैसे ताले, औजार, और खाने के बर्तन। लेकिन कंप्यूटर विज्ञान में हार्डवेयर का अर्थ है कंप्यूटर और संबद्ध भौतिक उपकरण जो कि सीधे आंकड़ा-संसाधन या संप्रेषण प्रकार्यों के निष्पादन में शामिल हैं। सॉफ्टवेयर का अर्थ प्रोग्राम और सांकेतिक भाषाएँ हैं जो हार्डवेर की कार्यप्रणाली को नियंत्रित करती है और इसके परिचालन को निदेशित करती है।

आयत चित्र (Histogram): बारंबारता बंटन का बार ग्राफ जिसमें बार की चौड़ाई ऐसे वर्गों के समानुपात में होती है जिसमें चरों को विभाजित किया गया है और बारों की ऊँचाई वर्ग बारंबारताओं के समानुपात में होती है। यह एक चार्ट के रूप में होता है जो क्षैतिज या ऊर्ध्वाधर बारों को दर्शाता है। बारों की लंबाई जिन आंकड़ा मदों के मानों को दर्शाते हैं उनमें समानुपात में होती है। इमेज की चमक को दर्शाने के लिए बहुत से डिजिटल कैमरा आयत चित्रों का प्रयोग करते हैं।

एच टी एम एल (HTML): पाठ्य सामग्री और बहु माध्यम दस्तावेजों को संरचित करने में प्रयुक्त मार्क अप भाषा और इससे दस्तावेजों के बीच में हाइपरटैक्सर लिंक स्थापित किए जाते हैं । वर्ल्ड वाइड वेब पर विस्तृत रूप से प्रयुक्त और यह हाइपर टैक्स्ट मार्क आप लैंगुएज के लिए परिवर्णी शब्द है।

निर्मूल्य (Imponderabillia): इसका अर्थ उससे है जिसका सटीक मूल्यांकन नहीं हो सकता, निर्मूल्य समस्याएँ।

प्रथाएँ (Institution): एम एस ओ-002 की इकाइयों के संदर्भ में श्ब्द का अर्थ है, समुदाय या समाज के जीवन में विशिष्ट रीति-रिवाज, व्यवहार, संबंध या व्यवहारगत प्रतिरूप। जैसे विवाह और परिवार की प्रथाएँ। सामान्य भाषा में इसका अर्थ है सुस्थापित संगठन या आधारशिला विशेष रूप से जो शिक्षा, सार्वजनिक सेवा या संस्कृति को समर्पित हो।

MAADHYAM IAS

व्याख्यात्मक सामाजिक विज्ञान (Interpretative Social Science): सांस्कृतिक विज्ञान की शज (Schutz) के सिद्धांत की दूसरी विषयवस्तु हैः विज्ञान की "बुनियादी संकल्पनाओं" या श्रेणियों का स्पष्टीकरण। यह दर्शाने के लिए यह क्या है इसके लिए शज अफबो (Aufbav) की व्याख्यात्मक समाजशास्त्र की बुनियादी संकल्पनाओं के प्रथम पृष्ठ की सूची को उद्धृत करना बेहतर होगा जिसे वह अपनी पुस्तक "द इंटरप्रेटेशन ऑफ वन्स ऑन एंड अदर्स एक्सपीरियेंसिज, मीनिंग एस्टैबलिशमेंट एंड मीनिंग-इंटरप्रेटेशन, सिम्बल एंड सिम्पटम, मोटिव एंड प्रोजेक्ट, मीनिंग एडिक्वेसी एंड कैजुअल ऐडिक्वेशी एंड अबव आल, द नेचर ऑफ आइडियन — टीपिकल कान्सेप्ट फार्मेशन" में स्पष्ट करने का प्रयास करता है।

व्याख्यात्मक समाजशास्त्र या वर्सटीहेन (Interpretative Sociology or verstehen): व्याख्यात्मक समाजशास्त्र या वर्सटीहेन (समझ के लिए प्रयुक्त जर्मन शब्द) का प्रयोग मैक्स वेबर ने ऐसी प्रक्रिया को स्पष्ट करने के लिए किया जिसमें संस्कृति के बाहरी प्रेक्षक (मानवशास्त्री) प्रेक्षक की निजी शर्तों पर देसी लोगों से जुड़ते हैं। इस संकल्पना को बाद के सामाजिक विज्ञानियों ने और अधिक खोला और इसकी आलोचना की। प्रतिपादक इसे सिर्फ ऐसे साधनों के रूप में लेते हैं जिससे एक संस्कृति के शोधकर्ता दूसरी संस्कृति में व्यवहारों की जाँच कर सकते हैं और उन्हें व्यक्त कर सकते हैं। जहाँ वर्सटीहेन का अभ्यास यूरोप में समाज विज्ञानियों में अधिक प्रचलित रहा है जैसे जर्गन हैबरमेस, वहीं वर्सटीहेन को प्रभावी ढंग से मैक्स वेबर के अमेरिकी अनुयायी तालकोट पार्सन द्वारा अमेरिका में पेश किया गया। पार्सन ने अपनी 1937 रचना, *द स्ट्रक्चर ऑफ सोशल एक्शन* में इस संकल्पना को शामिल किया। मिखेल बखरिन और डीन मैककैनल जैसे वर्सटीहेन के आलोचक खंडन करते हैं कि एक संस्कृति में जन्में व्यक्ति के लिए दूसरी संस्कृति को पूरी तरह समझ पाना

असंभव है और दूसरी (बेहतर) संस्कृति के माध्यम से अपनी संस्कृति के संकेतों के महत्व को स्पष्ट करना मिथ्यागर्व प्रयास है।

आई पी पता (IP adddress): आई पी पता, इंटरनेट प्रोटोकाल पते के लिए परिवर्णी शब्द है। यह आई पी नेटवर्क (टी सी पी/आई पी नेटवर्क) से जुड़ी युक्ति का पता है। प्रत्येक नेटवर्क कनैक्शन के लिए हर ग्राहक, सर्वर और नेटवर्क युक्ति (device) के पास एक अलग आई पी पता अवश्य होना चाहिए।

पुनरावृत्ति आगमनात्मक शोध (Iterative-inductive research): आइटरेटिव शब्द का अर्थ है जिसमें पुनरावृत्ति शामिल हो और इनडक्टिव का अर्थ है तार्किक वैधता का अनुप्रयोग। पुनरावृत्ति-आगमनात्मक शोध ऐसा शोध है जो ऐसी वैज्ञानिक विधियों या प्रक्रमों को लागू करता है जो वैज्ञानिक समुदायों द्वारा भौतिक साक्ष्यों के आधार पर नये ज्ञान की प्राप्ति और वैज्ञानिक अन्वेषण के संदर्भ में बुनियादी बिंदु माना जाता है। वैज्ञानिक प्राकृतिक परिघटनाओं के लिए अनंतिम व्याख्याओं को प्रस्तावित करने के लिए प्रेक्षणों और तर्कों का प्रयोग करते हैं और जिसे परिकल्पना कहते हैं। इन परिकल्पनाओं से उत्पन्न पूर्वानुमानों की विविध प्रयोगों द्वारा जाँच की जाती है और ऐसी सत्यापित परिकल्पना को सिद्धांत कहते हैं और नये पूर्वानुमान इस पर आधारित होते हैं। कोई त्रुटिपूर्ण पूर्वानुमान या आंतरिक दोष या अव्यक्त परिघटना नयी परिकल्पना की उत्पत्ति का काम शुरू कर देती है और जिनकी स्वतः जाँच हो जाती है। कोई भी परिकल्पना जो पूर्वानुमान बनाने के लिए इस तरह तर्कशील हो, उसकी जाँच इस तरीके से की जा सकती है।

यानी की असत्यापित परिकल्पना इसके सत्यापन के पूर्वानुमान या इसकी वैधता या इसकी क्षमता के आधार पर जानकारों में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त कर सती है, यद्यपि यह औपचारिक रूप से तब तक स्वीकृत नहीं होगी जब तक कि प्रायोगिक प्रमाण यह साबित न कर दें। सामान्य सापेक्षता का सिद्धांत ऐसा ही एक उदाहरण है। वैज्ञानिक विधि के अनुसार नयी प्रौद्योगिकियों का विकास, ज्ञान के विकास में उलझा हुआ है और यह निहित विचारों की वैधता के भावी परीक्षण और नए साधनों के लिए स्रोत के रूप में काम कर सकता है जिससे ज्ञान की प्राप्ति को उन्नत किया जा सकता है और ऐसा प्रेक्षणों की गुणवत्ता को बेहतर बना कर किया जाता है। इसके अलावा, प्रौद्योगिकी को विकसित करने में कुछ प्राकृतिक परिघटनाओं को समझने की आवश्यकता, वैज्ञानिक छानबीन को उस परिघटना की प्रकृति की ओर प्रेरित कर सकती है।

सामान्य दृष्टिकोण हैः वैज्ञानिक व्यवहारों के निहित तर्क के रूप में वैज्ञानिक विधियों को लेना जैसे कार्ल पॉपर। हालांकि निहित तर्क पर जोर देना, उन जोर देने वाले समाजशास्त्रीय पहलुओं से विवादास्पद बना हुआ है। वैज्ञानिक विधियाँ ऐसे साधन हैं जो कि हमारे प्राकृतिक विश्व की साक्ष्य-आधारित समझ को बनाने के लिए वैज्ञानिक समुदायों द्वारा प्रयोग में लाए जाते हैं। ऐसी समझ के विविध पहलुओं के बारे में वैज्ञानिक समुदायों में अक्सर वाद-विवाद चलते रहते हैं।

ककुदता (Kurtosis): इससे आशय है, बंटन के माध्य के निकट सांख्यिकीय बारंबारता वर्क के सामान्य रूप का परिमाणात्मक सूचक।

पौराणिक (Legends): पिछले समय से चली आ रही विशेष रूप से ऐतिहासिक किस्म की असत्यापित कथा। इसका अर्थ ऐसी कथाओं का समूह या संग्रहण या आधुनिक समय की प्रचलित मिथक कथाएं भी है। इसका प्रयोग ऐसे के लिए भी होता है जो पौराणिक यश की प्राप्ति करे और ऐसी प्रेरणा दें।

MAADHYAM IAS

लॉगबुक (Logbook): इसका अर्थ है समुद्री जहाज या वायुयान की अधिकारिक रिकॉर्ड बुक। इस पुस्तक के संदर्भ में इसका अर्थ है, सावधिक प्रविष्टियों वाली रिकार्ड बुक

ल्यूपस ऐरिथीमाटोसस (Lupus erythematosus): इसका अर्थ है विविध संबद्ध ऊत्तक विकार विशेष रूप से सिस्टमिक ल्यूपस ऐरिथीमाटोसस जो माँ बनने की उम्र वाली महिलाओं को मूल रूप से प्रभावित करता है। इससे त्वचा लाल शल्की नजर आती है। इसके नैदानिक स्वरूप विविध किस्म के हैं।

मेटाडेटा (Metadata): इसका अर्थ है ऐसे आंकड़े जो आंकड़ों को व्यक्त करें। "मेटोडेटा" शब्द का प्रयोग विस्तृत रूप से "डेटा के लिए डेटा" के रूप में होता है।

कार्य-प्रणाली (Modus Operandi): इसका अर्थ है व्यक्ति के काम करने का तरीका

मोनोग्राफ (Monograph): इसका अर्थ है किसी विशिष्ट सीमित विषय पर निबंध या पुस्तक के रूप में बौद्धिक लेखन।

बहुचर (Multivariate): एक से अधिक चरों वाला जैसे बहुचर सांख्यिकीय विश्लेषण।

नदेम्बू (Ndembu): जाम्बिया का सेंट्रल अफ्रीकी समाज 1950-1954 के दौरान विक्टर डब्ल्यू टर्नर ने इस समाज में विस्तृत क्षेत्र कार्य किया।

उत्पादन (Output): इसका अर्थ है वस्तु के निर्माण की प्रक्रिया अर्थात उत्पादन जैसे निश्चित समय में विनिर्मित या निर्मित उत्पादन की मात्रा। जैसे बौद्धिक या सर्जनात्मक उत्पादन को बौद्धिक उत्पादन कहा जा सकता है। कंप्यूटर विज्ञान में इसका अर्थ है, कार्यक्रम द्वारा निर्मित सूचना क्रिया के रूप में इसका अर्थ निश्चित समय के दौरान कुछ निर्मित करना है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

काँचफलक (Pane): खिड़की या दरवाजे का फ्रेम किया भाग जो कि आमतौर पर काँच की शीट या पारदर्शक सामग्री या ऐसे भाग में प्रयुक्त कोई पारदर्शक सामग्री से भर दिया जाता है।

समकक्ष समूह (Peer): इसका अर्थ है एक ही रैंक, वर्ग या आयु के व्यक्ति जो अपने साथ वालों के समान हैं।

वृत्तारेख (Pie charts): वृत्ताकार ग्राफ जहाँ रेडियान, वृत्त को कोणों और प्रतिदर्शित परिमात्राओं के सापेक्षिक आकार के समानुपात के आधार पर कुछ निश्चित भागों में बांटती है। इन्हें वृत्तारेख भी कहते हैं। ऐसे चार्ट सूचना के आरेखीय निरूपण हैं जिसमें आंकड़े की इकाई को वृत्त के पाई आकार के टुकड़े के रूप में दर्शाया जाता है।

परिशुद्धता (Precision): इसका अर्थ है परिशुद्धता की अवस्था या गुणवंत्ता

प्रेस्ट्रोइका (Prestroika): इसका अर्थ है 1980 के मध्य में शुरू होने वाले सोवियत अर्थव्यवस्था और नौकरशाही की पुनः संरचना।

प्राथमिक आंकड़े (Primary data): प्रश्नावली, अनुसूची, प्रेक्षण या इंटरव्यू या इन विधियों में से दो या अधिक का प्रयोग करके एकत्र किए जाने वाले आंकड़े।

अव्यवहारिक (Quixotic): अच्छाइयाँ वाले कामों में पड़ जाना और अलभ्य लक्ष्यों का पीछा करना।

घनिष्ठता (Rapport): आपसी भरोसा या संवेदनात्मक नातेदारी वाले संबंध।

पुर्नावृत्ति (Repeatability): किसी कार्य को दोहराना

रोबो (Robot): मशीनी युक्ति जो मानव जैसी लगती है और बहुत से मानव संबंधी जटिल कार्यों को करने के योग्य है। इसकी पहले प्रोग्रामिंग की जाती है। यह स्वतः या रिमोट कंट्रोल से काम करता है। इसका अर्थ ऐसे व्यक्ति से भी है जो मूल विचारों के बिना मशीनी ढंग से काम करता है। विशेष रूप से वह जो दूसरों के इशारों पर स्वतः प्रतिक्रिया करता है।

द्वितीयक आंकड़े (Secondary data): ऐसे आंकड़े जो पहले किसी और के द्वारा एकत्र किए जाते हैं। ऐसे आंकड़ों को पहले संग्रहित किया जाता है और ऐसे आंकड़े अक्सर सभी प्रश्नों का उत्तर नहीं देते । ऐसे आंकड़े पहले मूल अध्ययन और आंकड़ों का उनके उद्देश्य, स्रोत, समयावधि और विधि की दृष्टि से मूल्यांकन करते हैं।

वैषम्य (Skewness): प्रसामान्य बंटन के संदर्भ में स्थिति की असममितता को व्यक्त करने में प्रयुक्त सांख्यिकीय शब्द। धनात्मक स्क्यू बंटन के दायें पुच्छ की ओर के झुकाव को व्यक्त करता है जबकि ऋणात्मक स्क्यू बंटन के बायें पुच्छ की ओर के झुकाव को स्पष्ट करता है।

स्नोबालिंग (Snowballing): तेजी से बढ़ना या फैल जाना

स्प्रेडशीट (Spreadsheet): स्तंभों और पंक्तियों वाला कागज जो तुलनात्मक विश्लेषण के लिए वित्तीय आंकड़ों को रिकॉर्ड करता है। कंप्यूटर विज्ञान में इसका अर्थ ऐसा लेखांकन प्रोग्राम है जो स्क्रीन पर आंकड़ों की पंक्तियों और स्तंभों में दर्शाता है।

संरचनावादी प्रतिरूप (Structuralist model): अपने इस मॉडल में इटजोनो (1964) का तर्क है कि वेबर और मैक्स दोनों मिलकर संरचनात्मक सिन्थेटिक मॉडल के लिए आधार गठित करते हैं। इस नजरिए से कामगार और प्रबंधकों में हमेशा द्वंद्व कायम रहता है और सभी कामगारों को उनके श्रम से विमुख कर दिया जाता है (क्योंकि उत्पादन के साधन उनके अपने नहीं हैं)। नियंत्रण, संगठनों की संकल्पना का केंद्र बिंदु है। इटजोनी संगठनात्मक प्रतिस्थितियों में सत्ता के वितरण पर ध्यान केंद्रित करते हुए वेबर जैसे बुद्धिसंगत विचारकों की ओर देखता है। बर्नार्ड जैसे प्राकृतिक विचारक इस बात पर जोर देते हैं कि शक्ति पृथक करती है जब तक कि अधीनस्थों को नियंत्रण संरचना स्वीकार्य न हो। इटजोनी यह भी प्रस्तावित करते हैं कि उसका संरचनात्मक मॉडल, औपचारिक और अनौपचारिक संरचनाओं, सामाजिक और भौतिक पारितोषकों और संगठन और इसके परिवेश के बीच की अंतःक्रिया को समान महत्व देता है। लेकिन वह प्रबंध और कामगार, वैयक्तिक और कार्पोरेट आवश्यकताओं, तर्कसंगतता और गैर-तर्कसंगतता को भी स्वीकृत करता है। समग्र रूप संरचनावादी दृष्टिकोण स्वाभाविक और तर्कसंगत पद्धतियों को समान सच्चाई के दो पहलुओं के रूप में देखता है। ये एक दूसरे से टकराते हैं क्योंकि जिन मूल तत्वों को ये व्यक्त करते हैं वे भी एक दूसरे से टकराते हैं।

व्यक्तिपरकता (Subjectivity): यह बाहरी जगत की बजाय व्यक्ति के मस्तिष्क में पनपती है जैसे व्यक्तिपरक निर्णय। मनोविज्ञान में इसका अर्थ है जो सिर्फ अनुभवकर्ता के मस्तिष्क में मौजूद रहती है। चिकित्सीय क्षेत्र में यह अर्थ ऐसे लक्षण या दशा है जिसे रोगी महसूस करता है न कि जाँच करने वाला।

स्वैप (Swap): इसका अर्थ है एक वस्तु को देकर इसके बदले में कुछ और ले लेना या वस्तु विनिमय करना।

प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद (Symbolic internactionism): यह सामाजिक परिप्रेक्ष्य है । दूसरों के साथ की जाने वाली अंतःक्रिया के माध्यम से निजी पहचान बनाने पर ध्यान केंद्रित

MAADHYAM IAS

करते हुए यह इस बात की जाँच करता है कि व्यक्ति और समूह किस तरह अंतःक्रिया करते हैं। इसमें मुख्य बात व्यक्ति विशेष क्रियाओं और समूह दबावों के बीच का संबंध है। यह परिप्रेक्ष्य ऐसे विचार की जाँच करता है कि व्यक्तिपरक अर्थ सामाजिक रूप से निर्मित किए जाते हैं और ये व्यक्तिपरक अर्थ विषयगत क्रियाओं के साथ अंतःसंबंध स्थापित करते हैं। इससे संबंधित प्रमुख विचारकों में हरबर्ट ब्लूमर और एर्विंग गौफमैन के नाम शामिल हैं। जॉर्ज हरबर्ट को प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद का पूर्वज माना जाता है।

एककालिक (Synchronic): यह परिघटना के अध्ययन से संबंधित है जैसे भाषायी विशेषताएं या किसी विशेष समय की घटनाएँ जिनमें इनके ऐतिहासिक संदर्भ का हवाला नहीं दिया गया हो।

टैबुला रासा (Tabula rasa): अनुभव से उत्पन्न प्रभाव प्राप्त करने से पूर्व मस्तिष्क की अवसा जॉन लॉक के दर्शनशास्त्र में इसका अर्थ नीरस मन (मस्तिष्क) से है।

प्रतिलिपि (Transcript): लिखित, टाइपलिखित या मुद्रित प्रति के रूप में किन्हीं दस्तावेजों की नकल जैसे कोर्ट-प्रमाण, शैक्षणिक प्रतिलिपि। जीवविज्ञान में इसका अर्थ प्रतिलेखन द्वारा निर्मित आर एन ए का अनुक्रम है।

त्रिभुजन (Triangulation): इसका अर्थ ऐसे अवयवों के माप से है जो त्रिभुजों के नेटवर्क का निर्धारण करने में जरूरी है जिसमें धरती की सतह के किसी भी भाग को सर्वेक्षण करने के संदर्भ में विभाजित किया जाता है। समाजशास्त्र में इस विधि का प्रयोग दो स्थायी बिंदुओं (पृथक ज्ञात दूरी) से दिक्कोण के मध्यपदों द्वारा स्थिति का पता लगाने के लिए किया गया है।

टी-परीक्षण (T-test): इसका अर्थ स्टूडेंट परीक्षण से है। टी-परीक्षण ऐसा कोई भी सांख्यिकीय परिकल्पना परीक्षण है जिसमें यदि निराकरणीय परिकल्पना सही हो टेस्ट प्रतिदर्शज का स्टूडेंट (टी) बंटर होता है।

निराकरणीय परिकल्पना का सांख्यिकीय परीक्षण है कि दो प्रसामान्य बंटित समष्टियों का माध्य समान है। ऐसे सभी परीक्षणों को आमतौर पर स्टूडेंट टी-परीक्षण के रूप में देखा जाता है लेकिन कड़े शब्दों में इस नाम का प्रयोग तभी किया जाना चाहिए यदि दो समष्टियों के प्रसरणों को भी बराबर के रूप में माना जाए। टी-परीक्षण के विविध रूपांतर हैं जो इस बात पर निर्भर करते हैं कि दो प्रतिदर्श एक दूसरे से अलग हैं या युग्मित हैं ताकि एक प्रतिदर्श के प्रत्येक सदस्य की अन्य प्रतिदर्श के किसी विशिष्ट सदस्य से अनूठा संबंध स्थापित हो जैसे पति और पत्नी का आई क्यू टेस्ट स्कोर।

दो बार अनुमंत्रित (Twice-blessed): अनुमंत्रित का अर्थ है खुशियाँ प्राप्त करना और कुल मिलाकर इसका अर्थ ढेर खुशियाँ प्राप्त करना है।

एकविचर (Univariate): एकचर वाला

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

संदर्भ

(कृपया नोट कर लें कि संदर्भ सूची में वे सभी स्रोत शामिल हैं, जिनका इकाई लेखकों ने इकाइयों में उल्लेख किया है। इसमें पुस्तक 2 की सभी इकाइयों के अंत में दी गई कुछ उपयोगी पुस्तकें भी शामिल हैं।)

आर्डनर, शिर्ले 1984. इन आर एफ एल्लेन (एडी.) *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जर्नल कंडक्ट.* अकेडमिक प्रेसः लंदन, पीपी.

बॉबी, ई. 1998. *द प्रैक्टिस ऑफ सोशल रिसर्च.* वड्र्सवर्थ ,पब्लिशिंगः बेलमाँट, सीए

बर्नेस, जे.ए., 1947. *द कलेक्शन ऑफ जेनेलोजीसः* ह्यूमन प्रॉब्ल्म्स इन ब्रिटिश सेंट्रल अफ्रीका. *होड्स-लिविंगस्टोन जर्नल* 5 : 48-55.

बर्नेस, जे.ए., 1961. फिजिकल एंड सोशल किनशिप. *फिलोसॉफी आफ साइंस* 28 : 296-299. (जेनेलोजिकल मैथड के बारे में)

बर्नेस, जे.ए. 1979. *हू शुड नो व्हाट? सोशल साइंस, प्राइवेसी एंड एथिक्स.* पेंगुइन बुक्सः हर्मंड्सवर्थ.

बर्नेस, जे.ए. 1981. *एथिकल एंड पॉलिटिकल कम्प्रोमाइज इन सोशल रिसर्च.* एएसएस, एफ/1/322/2 जून 1981. ए डच वर्सन केन बी फाउंड अंडर द टाइटल, एटिच एन पॉलिटिके कम्प्रोमेजेन इन सासिआल ओंडरजोक. इन होइ वीट जे डट? वेगेन वान सोसिआल यूइटजेवरजी डे अर्बेड्सपर्स/वेटेनचापेलिजके युइटजेवेजरिजः अमस्टर्डम, 1982

बेटेइ, जॉन 1964. *अदर कल्चर्स.* कोहेन एंड वेस्टः लंदन

बेकर, हावार्ड एस. 1986. *राइटिंग फार सोशल साइंटिस्ट्सः हाउ टु स्टार्ट एंड फिनिश योर थेसिस, बुक, और आर्टिकल.* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेसः शिकागो।

बेकर हॉवर्ड एस. एंड बी. गीर 1957. *ह्यूमन आर्गेनाइजेशन* 16 : 28-32

बर्ग, ब्रूस, एल.2001. *क्वालिटेटिव रिसर्च मैथड्स फॉर द सोशल साइंस.* एलाइन एंड बेकनः बोस्टन.

बेरेमन, जी.डी. 1966. *ऐन एमिक ऐंड एमेटिक एनालाइसिस इन सोशल एंथ्रोपोलॉजी.* अमेरिकन एंथ्रोपोलोजिस्ट 68 : 346-354.

बेरेमन, जी.डी. 2004. *एंथ्रोपोलॉजीः मैथड एंड प्रोडक्ट.* इन वी.के. श्रीवास्तव (एडी.) मैथडोलॉजी एंड फील्डवर्क. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली.

बेतई, आंद्रे 1975. *द ट्रिबुलेशंस ऑफ फील्डवर्क.* इन आंद्रे बतई एंड टी एन मदन (एडी.) *एनकाउंटर एंड एक्सपीरियेंसः पर्सनल अकाउंट्स ऑफ फील्डवर्क.* दिल्लीःविकास.

बोस, फ्रांज 1920. द मैथड्स ऑफ एथनोलॉजी. *अमेरिकन एंथ्रोपोलोजिस्ट* 22(4):311-321.

बोगडन 1974. *बीइंग डेफरेंटः द ऑटोबायोग्राफी ऑफ जेन फ्राई.* विलीः न्यूयार्क

ब्रेवर, जॉन डी. 2000. *एथनोग्राफी.* ओपन यूनिवर्सिटी प्रेसः बकिंगम.

बर्गेस, रॉबर्ट जी. 1982. *फील्ड रिसर्चः ए सोर्सबुक एंड फील्ड मैनुअल.* अनविन ह्यूमनःलंदन.

कन्नेल, सी एफ. एंड कहन, आर एल. 1968. एंटरव्यूइंग. इन जी. लिंडजे एंड ई ऑरोंसन (एडी.) *हैंडबुक ऑफ सोशल साइकोलॉजी.* एडिसन-विसलेः रीडिंग, एमए. वाल्यूम 2, पेज 526-595.

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

चैम्बर्स, रॉबर्ट 1992. *रैपिड अप्राइजलः रैपिड, रिलैक्स्ड एंड पार्टिसिपेटरी.* डिसकशन पेपर नं. 311. इंस्टीट्यूट आफ डेवलपमेंट स्टडीजःसुसेक्स.

क्लाम्मेर, जॉन 1984. अप्रोचेज टु एथनोग्राफिक रिसर्च. इन आर एफ एल्लेन (एडी.) *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जर्नल कंडक्ट।* एकेडेमिक प्रेसः लंदन, पीपी. 63-86.

ई.मर्कस (एडी.), *राइटिंग कल्चर, द पोइटिक्स एंड पॉलिटिक्स आफ एथनोग्राफी.* दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (पीपी. 1-26).

क्लिफोर्ड, जेम्स 1997. *स्पाटियल प्रैक्टिसेसः फील्डवर्क, ट्रेवल , एंड द डिसिपिलिनिंग ऑफ एंथ्रोपोलोजी.* इन ए. गुप्ता एंड जे. फरगुसन (एडी.) *एंथ्रोपोलॉजिकल लोकेसंस,* यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेसः बर्कले. पीपी.185-192.

क्लिफोर्ड जेम्स एंड जॉर्ज ई. मर्कस (एडी.) 1986. *राइटिंग कल्चर, द पाइटिक्स एंड पॉलिटिक्स ऑफ एंथ्रोपोलॉजी.* दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

कुन, स्टेंले एंड लॉरी टेलर 1978. एस्केप अटेम्प्ट्सः द थ्योरी एंड प्रैक्टिस ऑफ रेजिस्टेंस टु एवरीडे लाइफ. पेंगुइन बुक्स लिमि., लंदन.

डेनियर जेरेमी, 1998. टेक द हैपीनेस टेस्ट, *रीडर्स डाइजेस्ट,* 153 (918) : 16

दास, वीना 1999. कंटेम्पोरेरी मैथड्स इन नैरेटिव एनालाइसेस. इन आर.एल. कपूर (एडी.) *क्वालिटेटिव मैथड्स इन मेंटल हेल्थ रिसर्च.* नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीःबेंग्लूर.

डेविस, जे. 1984. डेटा इन टु टैक्स्ट. इन आर एफ एल्लेन (एडी.) *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जर्नल कंडक्ट.* अकेडेमिक प्रेसःलंदन.

डेंजिन, एन.के (एडी.) 1970. *सोसियोलॉजिकल मैथड्सः ए सोर्सबुक. बटरवर्थ्सः* लंदन.

डेंजिन, एन.के (एडी.) 1978. *दि रिसर्च एक्टः ए थ्योरोटिकल इंट्रोडक्शन टु सोसियोलॉजिकल मैथड.* बटरवर्थ्सः लंदन एंड मैक ग्रा हिलः न्यूयार्क (सेकंड एडीशन).

डे, इयान 1993. *क्वालिटेटिव डेटा एनालाइसेसः ए यूजर-फ्रेंडली गाइड फॉर सोशल साइंटिस्ट्स.*

डौल्बी-स्थाल 1989. *वर्किंग ऑन ए लाइन.* फेस्टिवल ऑफ अमेरिकन फाल्क्लाइफ प्रोग्राम. स्मिथसोनियन इंस्टिट्यूटः वाशिंगटन डी.सी. पीपी. 55-59.

डु बौले जूलियट एंड रॉरी विलियम्स 1984. कलक्टिंग लाइफ हिस्ट्रीज. इन आर.एफ एल्लेन (एडी.) *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जनरल कंडक्ट.* एकेडेमिक प्रेसः लंदन, पीपी. 247-257 (फार लाइफ हिस्ट्रीज मैथड).

दुबे, लीला 1975. वूमेंस वर्ल्ड्स - थ्री एंकाउंटर्स. इन आंद्रे बतई एंड टी.एन. मदन (एडी.) 1975. *एनकाउंटर एंड एक्सपीरेंसः पर्सनल अकाउंट आफ फील्डवर्क.* दिल्लीः विकास.

एस्थोप, जी. 1974. *ए हिस्ट्री आफ सोशल रिसर्च मैथड्स.* लॉगमैनःलंदन

एल्लेन. आर. एफ. 1984. *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जनरल कंडक्ट.* एकेडेमिक प्रेसःलंदन.

एमरसन, आर.एम. 1981. आब्जर्वेशनल फील्डवर्क. एनुअल रिव्यू ऑफ सोसियोलॉजी 7: 351-378.

एरलेंडसन, डेविड ए., हेर्रिस, एडवर्ड एल., स्किपर, बारबरा एल. एंड एल्लेन, स्टीव डी. 1993. *डूइंग नेचुरलिस्टिक एनक्वायरीः ए गाइड टु मैथड्स.* सेजः न्यूबरी पार्क.

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ईवंस प्रिचर्ड, ई.ई. 1965. *न्यूर रिलीजन,* क्लारेंडन प्रेसः ऑक्सफोर्ड.

फेयराबेंड, पी. 1975. *अगेंस्ट मैथडः आउटलाइन ऑफ एन एनार्किस्ट थ्योरी ऑफ नॉलेज.* न्यू लेफ्ट बुक्सः लंदन.

फर्थ, रेमंड 1939. *प्रिमिटिव पॉलीनेसियन इकोनॉमी.* रूटलेज एंड कीगन पॉलः लंदन.

फ्लिक, यू. 1998. *एन एंट्रोडक्शन टु क्वालिटेटिव रिसर्च.* सेज पब्लिकेशंसः न्यू दिल्ली.

फोंटाना, ए. एंड फ्रे, जे.एच. 1994. इंटरव्यूइंगः द आर्ठ ऑफ साइंस. इन एन.के. डेंजिन ऐंड वाई एस लिंकोल (एडी.) *हैंडबुक ऑफ क्वालिटेटिव रिसर्च.* सेजः थाउजेंड ओक्स, सीए.

फॉर्टेस, एम. 1949. *द वेब ऑफ किनशिप अमंग द टैलेंसी.* ऑक्सफोर्ड यूनिविर्सिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड.

फोस्टर जे. 2003. क्वालिटेटिव रिसर्च. *सोसियोलॉजी रिव्यू* 12 (4)

फोका, मिखाइल 1973. *द आर्डर ऑफ थिंग्सः एन आर्केलाजी ऑफ ह्यूमन साइंसेस.* वेंटेजः न्यूयार्क.

फ्रीमैन, जेम्स एम. 1978. कलक्टिंग लाइफ हिस्ट्री ऑफ एन इंडियन अनटचेबल. इन सिल्विया वतुक (एडी.) अमेरिकन्स् स्टडीज इन द एंथ्रोपॉलॉजी आफ इंडिया. मनोहरः नई दिल्ली.

गल्तुंग, जे. 1967. *थ्योरी एंड मैथड्स आफ सोशल रिसर्च.* जॉर्ज अलेन एंड अनविनः लंदन.

ग्रीट्र्ज, सी. 1973ए. *द इंटरप्रीटेशन ऑफ कल्चर्सः सलेक्ड एसेज.* बेसिक बुक्सः न्यूयार्क, हचिंसनः लंदन.

ग्रीट्र्ज, क्लिफोर्ड 1973बी. *थिक डिसक्रिप्टशनः टुवार्ड्स एन इंटरप्रेटिव थ्योरी ऑफ कल्चर.* इन द इंटरप्रेटेशन आफ कल्चर. बेसिक बुक्सः न्यूयार्क.

ग्रीट्र्ज, क्लिफोड 1988. *वर्क्स एंड लाइव्सः द एंथ्रोपोलोजिस्ट क आथर.* पालिटीः कैम्ब्रिज.

जेंटलमैन, जेन एफ. 2004. *द नेशनल हेल्थ इंटरव्यू सर्वे.* इन नेशनल हेल्थ इंटरव्यू सर्वे प्रेजेंटेशंस आफ द 2004 लिस्टिंग ऑफ सलेक्टेड प्रेजेंटेशंस एट http//www.cdd.gov/nchs/howto/events/duc2004/ducpresentations 2004.htm.

ग्लेसर, बी.जी. 1978. *थ्योरेटिकल सेंसिटिविटीः एडवांसेस इन मेथेडोलॉजी ऑफ ग्राउंडेड थ्योरी.* द सोसियोलॉजी प्रेसः मिल वैली, कैलिफोर्निया

ग्लेसर, बी.जी., ए.एल. स्ट्रास 1967. *द डिस्कवरी ऑफ ग्राउंडेड थ्योरीः स्ट्रेटेजीज फार क्वालिटेटिव रिसर्च.* एल्डाइनः न्यूयार्क.

ग्लुकमैन, मैक्स, 1961. एथनोग्राफिक डेटा इन ब्रिटिश सोशल एंथ्रोपोलॉजी. *द सोसियोलोजिकल रिव्यू* 9 : 5-17.

गोर्डन, आर.एल. 1992. *बेसिक इंटरव्यूइंग स्किल्स.* पीकॉक पब्लिशर्सः इथाका, आईएल

हैड्डन, ए.सी. 1905. साउथ अफ्रीकन एथनोलॉजी. *नेचर* 72 : 471-479.

हमेल,जे., एस डुफोर, एस. एंड डी फोर्टिन 1993. *केस स्टडी मैथड.* सेजः थाउजेंड ओक्स, सीए.

हार्वी, ली एंड एम मैक डोनाल्ड 1993. *डूइंग सोसियोलॉजीः ए प्रैक्टिकल गाइड.* मैक मिलनः बसिंग्स्टॉक.

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

हॉब्सन, ए. 2000. 1. मल्टिपल मैथड्स इन सोशल रिसर्च. सोसियोलॉजी रिव्यू 10(2).

जैन, शोभिता 1999. 1. *पार्टिसिपेटरी अप्रोचेज; 2. टाइप्स ऑफ पार्टिसिपेशन; 3. कंस्ट्रेंट्स एंड प्रॉब्लम्स ऑफ पार्टिसिपेशन; 4. द हेटोरिक ऑफ पार्टिसिपेशन; 5. लेवलिंग द पेइंग फील्ड्सः रिकगनाइजिंग लोकल नो-हाउ; इन पार्टिसिपेटरी फारेस्ट मैनेजमेंट,* इंदिरा गांधी नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली.

जैन, शोभिता एंड नीति भार्गव 2001. 1. *पार्टिसिपेशनः फिलोसॉफी, नेचर एंड अप्रोच; 2. ऑप्रेशनलाइजेशन ऑफ पार्टिसिपेटरी प्रोसेसेस; 3. डेटा-क्लेकशन टेकनीक फॉर मोबिलाइजिंग पार्टिसिपेशन; 4. टेकनीक्स ऑफ डेटा एनालाइसिस एंड मॉड्स ऑफ एनालाइसेस, यूनिट्स इन एमआरआर 02 ऑफ पार्टिसिपेटरी मैनेजमेंट ऑफ डिस्पलेसमेंट, रिसेटेलमेंट एंड रिहैविलिटेशन,* इंदिरा गांधी राष्ट्रीय ओपन यूनिवर्सिटी.

जोन्स, ई.एल. 1964. द कर्टसी बायस इन साउथ-ईस्ट एशियन सर्वेज. *इंटरनेशनल सोशल साइंस* जर्नल 16 : 63-69.

केम्प, जे.एच. एंड आर एफ. एल्लेन 1984. इनफारमल इंटरव्यूइंग. इन आर.एफ. एल्लेन (एडी.) *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जनरल कंडक्ट.* एकेडेमिक प्रेसः लंदन, पीपी.229-236.

काइडर, लुइस एच एंड जड्ड, चार्ल्स एम. 1986. *रिसर्च मैथड्स इन सोशल रिलेशंस.* टोकियाः सीबीएस पब्लिशिंग जापान लिमि.

किर्क, जे. एंड मिल्लर, एम.एल. 1986. *रिलायबिलिटी एंड वैलिडिटी इन क्वालिटेटिव रिसर्च.* सेजः बेवर्ली हिल्स.

कुन, टी.एस. 1970. *द स्ट्रक्चर ऑफ साइंटिफिक रिवोल्यूशंस.* यूनिवर्सिटी आफ शिकागो प्रेसः शिकागो.

कावेले, स्टेनर 1996. *इंटरव्यूजः एन इंट्रोडक्शन टु क्वालिटेटिव रिसर्च इंटरव्यूइंग.* सेजः लंदन (फॉर इंटरव्यू मैथड, स्पेशियल पीपी. 1-10).

लिंकोल्न, वाई.एस. गुबा, ई.जी. 1985. *नेचुरलिस्टिक एनक्वायरी.* लंदनःसेज.

मैक फारलेन, ए. 1977. *रिकंस्ट्रक्टिंग हिस्टोरिकल कम्युनिटीज.* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः कैम्ब्रिज (स्पेशियल पीपी. 207-214).

मेज, जे. 1963. *द आरिजिन ऑफ साइंटिफिक सोसियोलॉजी.* टाविस्टॉकः लंदन.

मेर, लकी 1965. *एन इंट्रोडक्शन टु सोशल सोसयोलॉजी.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड

मेलिनोवस्की, ब्रोनिसलॉ 1922ए. *द अर्गोनाट्स ऑफ वेस्टर्न पैसिफिकः एन अकाउंट आफ नेचर इंटरप्राइज एंड एडवेंचर इन द आर्कीपेलागोस ऑफ मेलेनेसियन न्यू गूनिया.* रूटलेज एंड कीगन पॉलः लंदन.

मेलिनोवस्की, ब्रोनिसलॉ 1922बी. *एथनोलॉजी एंड द स्टडी आफ सोसायटी.* इकोमोमिका 2:208-219

मेरिंग, पी.1983. *क्वालिटेटिव कंटेंट एनालाइसेसः रिसर्च इंस्ट्रूमेंट ऑर मॉडल आफ इंटरप्रेटेशन.* इन द रोल ऑफ द रिसर्चर इन क्वालिटेटिव साइकोलॉजी नेक्सेस ॥. इंगेबोर्ग हुबर वर्लगः तुबिंगेन.

मिल्स, सी. राइट 1959. *द सोसियोलॉजिकल इमेजिनेशन.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः ऑक्सफोर्ड.

MAADHYAM IAS
achieve your dream

मुखर्जी, एन. 1993. *पार्टिसिपेटरी रूरल अप्राइजल - मेथेडोलॉजी एंड एप्लीकेशंस.* कंसेप्टः न्यू दिल्ली (फार पीआरए एंड पीआरए टेक्नीक्स).

नेई, एन.एच. हुल्ल, जे.जी. जेंकिंस, के. स्टेनब्रेन्नर एंड डी.एच. बेंट 1979. *स्टेटिस्टिकल पैकेज फार द सोशल साइंसेस.* मैकग्रा हिलः न्यूयार्क.

ओ रेल्ली, करेन 2005. *एथनोग्राफिक मैथड्स.* रूटलेजः लंदन एंड न्यूयार्क

आकले, एन्न 1981. *इंटरव्यूइंग वूमेनः ए कंट्राडिक्शन इन टर्म्स. इन एच.रॉबर्ट्स* (एडी.) डूइंग फिमिनिस्ट रिसर्च. रूटलेज एंड कीगन पॉलः लंदन.

ओल्सन, ग्रे ए. 1991. *क्लिफोर्ड ग्रीट्र्ज ऑन एथनोग्राफी एंड सोशल कंट्रक्शन* जेएसी 11.2.http://www.jac.gsu.edu/jas/11.2/articles/geertz.htm

पेल्टो, पेर्टी जे. 1970. *एंथ्रोपोलोजिकल रिसर्चः द स्ट्रक्चर ऑफ इनक्वायरी.* न्यूयार्कः हार्पर एंड रो।

फिलिप्स, डी.एल. 1973. *एबंडनिंग मैथड.* जोसी-बासः सेन फ्रांसिसस्को.

पोलानी, एम. 1958. *पर्सनल नॉलेजः टुवड्र्स ए पोस्ट-क्रिटिकल फिलोसॉफी.* हार्पर एंड रोः न्यूयार्क.

पुंच, एम. 1986. *द पालिटिक्स एंड एथिक्स ऑफ फील्डवर्क,* सेजः न्यूबरी पार्क, सीए

रेडक्लिफ ब्राउन, ए.आर. 1922. *द अंडमान आयरलैंडर्स.* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः कैम्ब्रिज.

रेनबो, पी. 1977. *रेफलेक्शंस ऑन फील्डवर्क इन कारोक्को.* यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेसः बर्कले.

रिसचर्डसन, लौरेल, 1994. राइटिंगः मैथड ऑफ इन्क्वायरी. इन नॉरमैन के डेंजिन एंड योन्न एस लिंकोल्न (एडी.) *हैंडबुक आफ क्वालिटेटिव रिसर्च.* सेज पब्लिकेशंसः लंदन, पीपी. 516-529

रिवर्स, डब्ल्यू.एच.आर. 1906. *द टोडाज.* मैकमिलनः लंदन.

रुबिन एच.जे. ऐंड रुबिन, आई.एस. (1977) *क्वालिटेटिव इंटरव्यूइंगः द आर्ट आफ हीयरिंग डेटा,* सेजः थाउजेंड ओक्स, सीए

सेक्स, एच 1992. *लेक्चर्स ऑन कंवर्सेशंस* (जी.जेफरसन, एडी.; वाल्यूम 1) ब्लैकवेलः ऑक्सफोर्ड

संजेक, रोजर, 1986. एथनोग्राफी. इन एलन बर्नार्ड एंड जोनाथन स्पेंसर (एडी.), *एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल एंड कल्चरल एंथ्रोपोलॉजी.* रूटलेजः लंदन.

सरनटकोस, एस. 1998. *सोशल रिसर्च.* मैकमिलनः लंदन.

चोनहथ, मिखाइल 2002. *नेगोसिएटिंग विद नॉलेज एट डेवलपमेंट इंटरफेसः एंथ्रोपोलॉजी एंड द क्वेस्ट फॉर पार्टिसिपेशन.* इन पॉल सिलिटो, एलन बिकर एंड जॉन पौटी (एडी.) पार्टिसिपेटिंग इन डेवलपमेंटः एप्रोचेज टु इंडिजिनियस नॉलेज. एएसए मोनोग्राफ 39. रूटलेजः लंदन एंड न्यूयार्क. पीपी 139-161

सेलिगमैन, सी जी एंड बी जेड सेलिगमैन 1911. *द वेदाज.* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः कैम्ब्रिज.

सेलिट्ज़, सी., एम.जहोडा, एंड एस डब्ल्यू कुक 1966. *रिसर्च मैथड इन सोशल रिलेशंस.* हॉल्ट, रिनेहर्ट एंड विंस्टनः न्यूयार्क.

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

शर्मा, उरसुला 1981. *मेल बायस इन एंथ्रोपोलॉजी.* साउथ एशियन रिव्यू 2 34-39.

शॉ, क्लिफोर्ड आर. 1930. *द जेक रोलरः ए डेलिंक्वेंट ब्वायज ओन स्टोरी.* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेसः शिकागो.

शा, एम. एंड आर विड्डाकफील्ड 2003. *एथिक्स एंड डूइंग ल्थ रिसर्च. सोसायोलॉजी रिव्यू* 12(4).

सिल्वरमैन, डेविड. 1993. *इंटरप्रेटिंग क्वालिटेटिव डेटाः मैथड्स फॉर एनालाइजिंग टाल्क, टेक्स्ट एंड इंटरएक्शन.* सेज पब्लिकेशंसः न्यू दिल्ली.

साइमेल, जी. 1950. *द सोसियोलॉजी आफ़ जॉर्ज साइकेल.* ट्रांसलेटेड एंड एडिटेड बाई कुर्ट ए. वोल्फ. फ्री प्रेसः ग्लेनको.

सिंगलटन, राइस ए एंड ब्रूस सी. स्ट्रेट्स 1999. *एप्रोचेज टु सोशल रिसर्च.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः न्यूयार्क.

स्प्राडी, जे.पी. (1979) द *एथनोग्राफिक इंटरव्यू.* हाल्ट, राइनहर्ट एंड विंस्टनः न्यूयार्क.

श्रीनिवास, एम.एन. 1966. *सोशल चेंज इन माडर्न इंडिया.* यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेसः बर्कले.

श्रीनिवास, एम.एन. 1973. इंट्रोडक्शन. इन एम.एन श्रीनिवास (एडी.) *मैथड इन सोशल एंथ्रोपोलॉजी,* सलेक्टेड एसेज बाई ए आर रेडक्लिफ-ब्राउन. एशिया पब्लिशिंग हाउसः न्यू दिल्ली, पीपी. ix-xviii

श्रीनिवास, एम.एन 1996. *विलेज, कास्ट, जेंडर एंड मैथडः एसेज इन इंडियन सोशल एंथ्रोपोलॉजी.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली.

श्रीनिवास, एम.एन., ए.एम. शाह, एंड ई.ए. रामास्वामी (एडी.) 2002. *द फील्डवर्क एंड द फील्ड प्रॉब्लम्स एंड चैलेंज इन सोसियोलॉजिकल इंवेस्टिगेशन.* दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

श्रीवास्तव, विनय कुमार. 1991. द एथनोग्राफर एंड द पीपलः रेफलेक्शंस ऑन फील्ड वक, *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* XXVI (22$ 23):1408-11, 1413-14 & XXVI (24):1475-81

श्रीवास्तव, विनय कुमार, 1992. एथनोग्राफर्स एंड पेमेंट्स टु रेस्पॉंडेंट्स. *गुरु नानक जर्नल ऑफ सोसियोलॉजी,* 13 (2) 85-95.

श्रीवास्तव, विनय कुमार, 2001. *मार्गेट मीड ऑन फील्डवर्क.* अनपब्लिश्ड पेपर प्रेजेंटेड इन वन डे सेमिनार ऑन मार्गेट मीड इन हर बर्थ सेनेटरी ईयर, 19 नवम्बर, 2001, डिपार्टमेंट ऑफ एंथ्रोपोलॉजी, यूनिवर्सिटी ऑफ दिल्ली.

श्रीवास्तव, विनय कुमार, 2004. इंट्रोडक्शन. इन विनय कुमार श्रीवास्तव (एडी.) *मैथेडोलॉजी एंड फील्डवर्क.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली पीपी. 1-50.

श्रीवास्तव, विनय कुमार, (एडी) 2004. *मैथेडोलॉजी एंड फील्डवर्क.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली

स्ट्रास, अंसेल्म एल. 1987. *क्वालिटेटिव एनालाइसेस फॉर सोशल साइंटिस्ट.* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेसः कैम्ब्रिज.

स्ट्रास, अंसेल्म एल. एंड जूलियट कॉर्बिन 1990. *बेसिक्स ऑफ क्वालिटेटिव रिसर्च ग्राउंडेड थ्योरी प्रोसीजर्स एंड टेकनीक.* सेजः लंदन.

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सुथरलैंड, एडवर्ड 1937. द *प्रोफेशनल थीफ.* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागा प्रेसः शिकागो.

थपन, मीनाक्षी (एडी.) 1998. *एंथ्रोपोलॉजिककल जर्नीजः रेफलेक्शंस ऑन फील्डवर्क.* न्यू दिल्लीः ओरिएंट लॉगमैन.

द रेंडम हाउस डिक्शनरी ऑफ द इंगलिश लाँग्वेज. 1986. एडिटेड बाई लारेंस उरदंग एंड स्ट्राट बर्ग फलेक्स्नर. एलाइड पब्लिशर्स लिमि.

थॉमस विलियम एंड फ्लोरियन ज़नेकी. 1958. (ऑर्जिनली पब्लिश्ड इन 1920) द *पोलिश पीजेंट इन यूरोप एंड अमेरिका.* डोवरः न्यूयार्क

टोलमिन, एस. 1990. कॉस्मोपोलिशः द हिडन एजेंडा ऑफ मॉडर्निटी. फ्री प्रेसः न्यूयार्क

टर्नर, विक्टर डब्ल्यू. 1957. *शिजम एंड कंटिन्यूटी इन अफ्रीकन सोसायटी.* मैनचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेसः मैनचेस्टर.

टर्नन, विक्टर डब्ल्यू. 1961. *निडेम्बु डाइविनेशनः इट्स सिम्बोलिज्म एंड टेक्नीक्स.* होड्स लिविंग्स्टन पेपर नं. 31.

टर्नन, विक्टर डब्ल्यू. 1967. आजपेक्ट्स आफ सओरा रिचुअल एंड शामानिज्म. इन एल.एल. एपिस्टन (एडी.) द *क्राफ्ट आफ सोशल एंथ्रोपोलॉजी.* सोशल साइंस पेपरबैक्सः लंदन. पीपी. 181-204.

यूर्री, जेम्स 1984. ए हिस्ट्री आफ फील्ड मैथड्स. इन आर. एफ. अल्लन (एडी.) *एथनोग्राफिक रिसर्चः ए गाइड टु जर्नल कंडक्ट.* एकेडेमिक प्रेसः लंदन, पीपी. 35-61.

वान वेल्सन 1967. द एक्सटेंडेड-केस मैथड एंड सिचुऐशनल एनालाइसेस. इन ए.एल. एपिस्टन (एडी) द *क्राफ्ट आफ सोशल एंथ्रोपोलॉजी.* साइंस पेपरबैक्सः लंदन (फॉर केस स्टीडीज मैथड)

विश्वेश्वरन, कमला 1996. *फिक्शन आफ फेमिनिस्ट एथनोग्राफी.* न्यू दिल्लीःऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

वेक्स, मुरे एल. 1980. पैराडॉक्सेस ऑफ 'कंसेंट' टु द प्रैक्टिस ऑफ फील्डवर्क. सोशल प्राब्लम्स 27 : 272-83.

वेक्स, आर.एच. 1971. *डूइंग फील्डवर्क, वार्निंग्स एंड एडवाइस.* द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेसः शिकागो.

विंच, पी. 1958. द *आइडिया आफ सोशल साइंस एंड इट्स रिलेशन टु फिलोसॉफी.* रूटलेज एंड कीगन पॉलः लंदन.

विंस्टन, टी. 1990. *एन इंट्रोडक्शन टु केस स्टडीः द क्वालिटेटिव रिपोर्ट* 3 (2). http://www.nova.edu/ssss/QR/QR-2/tellis1.html पर उपलब्ध

वाल्कट, हेरी एफ. 1990. *राइटिंग अप क्वालिटेटिव रिसर्च.* पब्लिकेशंसः लंदन

वाल्कट, हेरी एफ. 1995. द *आर्ट आफ फील्डवर्क.* अल्टामिरा प्रेस

वीन, आर के 1994. *केस स्टडी रिसर्चः ऑरिजिन एंड मैथड्स.* सेजः बेवरली हिल्स, सीए.